(C)

Charge	प्रभार
Charges	प्रभार, शुल्क
Currency Chest	मुद्रा तिजोरी
Clearing House	समाशोधन गृह
Contra	प्रतिपक्षी
Collateral	संपार्श्विक
Confirmation	पुष्टिकरण
Confidential	गोपनीय
Corporate Sector	कम्पनी क्षेत्र
Conversion	परिवर्तन
Credential	प्रत्यय पत्र
Coverage	सुरक्षा, व्यापकता
Crossing	रेखांकन
Credit	ऋण/साख
Clause	शर्त वाक्यांश
Cash Certificate	नकदी पत्र
Ceilling	उच्चतम सीमा
Client	ग्राहक
Clean Bill	निर्बंध बिल
Collection	संग्रह वसूली
Courier Service	वाहक व्यवस्था
Creation of Charge	प्रभार का निर्माण

[D]

Dead Account	निष्क्रिय खाता
Deed	विलेख
Debenture	ऋण-पत्र
Deflation	अवस्फीति
Deferred	आस्थगन
Depreciation	मूल्य ह्रास
Deposit Mabilisation	जमा संग्रह
Devaluation	अवमूल्य
Detrimental	अहितकर
Disbursement	वितरण
Directives	निर्देश
Discharge	विमुक्ति, अदा करना, हस्ताक्षर करना
Diversification	विविधीकरण
Discretionary power	विवेकाधीन शक्तियाँ
Document of Title	हक विलेख, स्वत्व प्रलेख
Drawee	अदाकर्ता
Drawer	आहर्ता

Duplicate	अनुलिपि
Duly Signed	विधिवत् हस्ताक्षरित
Delegate	प्रतिनिधि
Documentation	प्रलेखन
Deposits, Memorandum of	जमा ज्ञापन

[E]

Endorsement	पृष्ठांकन
Endorsee	पृष्ठांकिती, पृष्ठांकिकी
Evaluation	मूल्यांकन
Excess	अतिरिक्त आधिक्य
Exchange Rate	विनिमय दर
Excise duty	उत्पादन कर
Exofficio	पदेन
Execution	निष्पादन/क्रियान्वन
Export Oriented	निर्यात उन्मुख
Export Promotion	निर्यात संवर्धन
Extend	विस्तार
Expiry	समाप्ति
Ex-parte	एकपक्षीय
Estate	संपदा

[F]

Food Loan	खाद्य ऋण
Floating Fund	चल निधि
Fiscal	राजकोषीय
Facility	सुविधा
Fraudulent	कपटपूर्ण
Forward Contract	वायदा ठेका
Feasibility	संभाव्यता
Fully paidup	पूर्णतःप्रदत्त
Funding	निधीयन
Follow up	अनुवर्ती

[G]

Goodwill	साख ख्याति
Godown	गोदाम
Genuine	वास्तविक विशुद्ध
Gap	अन्तर
Guidelines	मार्गदर्शी
Guide	मार्गदर्शन
Gilt Edged Securities	श्रेष्ठ प्रतिभूतियाँ

Gross misconduct	घोर दुर्व्यवहार
Gross Value	सकल मूल्य
Guarantee	प्रत्याभूति गारण्टी
Garnishee	गारनिशि कुर्की

[H]

Handicraft	दस्तकारी, हस्तशिल्प
Heir	उत्तराधिकारी
Hypothecation	दृष्टिबन्धक प्राधीयन

[I]

Identification	पहिचान, परिचय
Immediate	तत्काल, आसन्न
Imperative	आदेशक, अनिवार्य
Indigeneous Banker	देशी बैंकर, साहूकार
Indosement	पृष्ठांकन
Indirect	परोक्ष
Investment	निवेश, विनियोग
Inflation	मुद्रास्फीति
Insolvent	दिवालिया
Investigation	अन्वेषण
Instalment	किश्त
Insurance	बीमा
Inter Bank	अंतर बैंक
Inspection	निरीक्षण
Insurable Interest	बीमित हित
Interest	ब्याज
Injunction	व्यादेश
Invoke	मांगना

[J]

Joint Hindu Family	संयुक्त हिन्दू परिवार
Joint Owner	संयुक्त स्वामी
Journal	जर्नल

[L]

Lapse	चूक, बीत जाना
Law	विधि
Land Tenure	पट्टेदारी
Liquidity	अर्थसुलभता/तरलता
Limitation	परिसीमा
Loan	ऋण, कर्ज
Liquidation	परिसमापन

ability	देयता, देनदारी
evel peak	उच्चस्तर
ending	उधार देना
ease	पट्टा
Lay off	जबरी छुट्टी
Land Holding	जोत
Legitimate	वैध
Lead Bank	अग्रणी बैंक
Limits	ऋण सीमायें
Letter of Credit	साख पत्र
Letter of Indemnity	क्षतिपूरक बांड
Letter of Lien	लियन पत्र
Letter of Undertaking	वचन पत्र

[M]

Mail Transfer	डाक अन्तरण
Maintenance	रखरखाव
Majority	वयस्कता
Moratorium	स्थगन
Mortgage	बंधक
Multiple Finance	बहुविध वित्त
Multiple Banking	बहु बैंकिंग
Margin	मार्जिन
Mandate	अधिदेश
Mobile	गतिशील
Minor	अवयस्क

[N]

Negative Lien	नकारात्मक लियन/निषेधात्मक लिय
Notary Public	नोटरी पब्लि
Nursing Programme	पोषण कार्य
Notic of Dishonour	अस्वीकृत सू
Negotiable Instruments	परक्राम्य
Noting	टि
Net Worth	शुद्ध स्वा
Notified	अधि
Notified Bank	अधिसूचि
Nominal	ना
Nominee	मनोनीत
Non Food	
Nomination	

Net Income	शुद्ध आय
Neglected	उपेक्षित

[O]

Off Shore Banking	अपतटीय बैंकिंग
Overdue	अतिदेय
Overlapping	अतिव्यापी
Operative	प्रवर्ती, कार्यकारी
On Demand	मांग पर देय
Operate	परिचालन
Octroi	चुंगी
Overvaluation	अधिमूल्य
Overdraft	ओवर ड्राफ्ट, अधिविकर्ष

[P]

Packing Credit	पैकिंग ऋण
Participation Certificate	सहभागिता प्रमाणपत्र
Partnership Deed	साझेदारी विलेख
Payable to order	आदेश पर देय
Payment in Due Course	यथासमय/यथाविधि भुगतान
Per quisites	अनुलाभ
Power of Attorney	मुख्तारनामा
Payee	आदाता पाने वाला
Performance Guarantee	निष्पादन गारन्टी
Periodical	आवधिक
Penalty	जुर्माना
Penal Interest	दंडात्मक ब्याज
Placement	स्थानन, क्रम स्थान
Pledgee	गिरवीग्राही
Pledge	गिरवी
Pledger	गिरवीकर्ता
Preview	पूर्व संवीक्षा, समीक्षा
Prime facie	प्रत्यक्षतः

R,

Recovery	वसूली
Red Clause	महत्वपूर्ण खंड
Reimburse	प्रतिपूर्ति करना
Resale	पुनर्विक्रय
Revival	पुन प्रवर्तन
Revision	पुनरीक्षण, संशोधन

habilitate	पुनः स्थापित
enewal	नवीकरण
epay	चुकाना, अदा करना
eturn	विवरणी, प्रतिफल
Review	समीक्षा, पुनरीक्षण
Refinance	पुनर्वित्त

[S]

Satelite Banking	अनुषंगी बैंकिंग
Season Busy	व्यस्त अवधि
Season, Slack	मन्द अवधि
Security	प्रतिभूति
Segments	खण्ड
Selective Credit Control	चयनात्मक ऋण नियन्त्रण
Supervision	पर्यवेक्षण
Suffix	प्रत्यय
Seal	मुहर, सील
Sick Unit	बीमार यूनिट/इकाई
Specimen	नमूना
Statutory	सांविधिक
Stock	स्टाक
Sub Mortgage	उपबन्धक
Supply Bill	पूर्ति बिल
Swap	विनिमय
Subrogation	प्रस्थाप

[T]

Transfer	अन्तरण, स्थानान्तरण हस्तांत
Transferee	हस्तांतरी, स्थानां
Trust	न्यास,
Turnover	आवर्त कुल

[U]

Ultra Vires	शा
Usance	अवधि

[V]

Validity	प्रामा
Valuation	
Voucher	
Viability	
Verification	
Variable	

1 बैंक का आशय एवं कार्य
(MEANING AND FUNCTION OF BANK)

आधुनिक युग में बैंकों का महत्व सर्वव्यापी है। बैंक देश के आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। बैंक ही एक मात्र ऐसी संस्था है जिसके माध्यम से धन का विकेन्द्रीकरण सम्भव होता है। बैंक जनता से वह निक्षेप स्वीकार करते हैं जो उनके पास अतिरिक्त धन के रूप में जमा है तथा इस धन का प्रयोग बैंक द्वारा उन संसाधनों मे किया जाता है जहाँ पर रुपये की आवश्यकता है। इसी प्रकार बैंक सामाजिक स्तर में सुधार के उद्देश्य से समाज के विभिन्न वर्गों को आवश्यकतानुसार वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवाते हैं। भारतवर्ष एक विकासशील राष्ट्र है। भारतवर्ष की लगभग 38 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा (Poverty Line) से नीचे निवास करती है। इस स्थिति में, भारतवर्ष में बैंकों का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। यहाँ बैंको पर सामाजिक उत्तरदायित्व अधिक है। बैंकों को अपने कुल ऋण योग्य जमा धन का 40 प्रतिशत भाग प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में लगाना पड़ता है जिसमे कृषि एवं लघु स्तरीय उद्योगों के विकास को बढ़ावा दिया जाता है। अतः भारतवर्ष मे, बैंकों का महत्वपूर्ण स्थान है।

बैंकों का उद्गम
(Origin of Banks)

बैंकिंग प्रणाली का उद्गम अत्यन्त प्राचीन है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि आज से हजारों वर्ष पूर्व भी बैंकिंग प्रणाली का प्रचलन था। उस काल मे, बैंकिंग प्रथा आज की आधुनिक बैंकिंग प्रणाली से भिन्न थी। प्राचीन बैंकिंग प्रथा के अन्तर्गत, प्रारम्भ में, जनता द्वारा, केवल रुपये जमा किये जाते थे और उनके बदले में, उन्हें रसीदें दी जाती थीं। ये रसीदें विनिमय साध्य का कार्य करती थीं। समय के साथ-साथ इनका प्रचलन बढ़ता गया और बैंकिंग प्रथा का विकास प्रारम्भ हुआ। धीरे-धीरे रसीद देने वाले व्यक्ति जमा धनराशि पर ब्याज देने लगे एवं रुपया ब्याज पर उधार देने लगे। इस प्रकार, रुपया उधार देने वाले व्यक्ति प्राचीन साहूकार के रूप में प्रसिद्ध हुये। परन्तु ये साहूकार बैंकर नहीं थे चूंकि इनका उद्देश्य केवल रुपये पर ब्याज कमाना था। वास्तव में, बैंकिंग प्रणाली का जन्म बेबीलोन मे हुआ जहाँ से, यह प्रथा अन्य देशों में विकसित की गयी। प्राचीन बैंकिंग प्रथा के उद्गम के फलस्वरूप, धीरे-धीरे बैंकिंग व्यवसाय का स्वरूप बढ़ता गया और व्यापार गृहों एवं बैंकिंग गृहों की स्थापना की गयी। ये संस्थान व्यवसाय के लिये ऋण प्रदान करने का कार्य करते थे। परन्तु इनका प्रमुख कार्य साहूकारों एवं राजाओं को ऋण देना था।

प्रशासन में आमूलचूल परिवर्तन के कारण वैंकिग गृहों को विकट समस्या का सामना करना पड़ा। इनके ऋणों का भुगतान रोक दिया गया। इसके परिणाम-स्वरूप, वैंकिग प्रणाली में शिथिलता आ गई। परन्तु 18वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप, वैंकिग व्यवसाय को पुनः जीवन प्राप्त हुआ। बड़े पैमाने पर उद्योगों की स्थापना की गयी जिनके लिये विशाल ऋण राशि की आवश्यकता अनुभव की गयी। अतः इस युग में वैंकों का महत्वपूर्ण विकास हुआ। आधुनिक वैंकिग प्रथा के रूप में सर्वप्रथम स्पेन में, वैंक की स्थापना की गयी। धीरे-धीरे इनका महत्व बढ़ता गया और आज विश्व के समस्त देशों की आर्थिक अर्थव्यवस्था में, वैंक अपना अमूल्य सहयोग प्रदान कर रहे हैं।

भारतवर्ष में, वैंकिग प्रथा का प्रचलन साहूकारों के रूप में अत्यन्त प्राचीन है। परन्तु 1935 में सेन्ट्रल वैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना की गई और साहूकारों पर नियन्त्रण किया जाने लगा। भारतवर्ष में, पश्चिमी पद्धति पर आधारित वैंकों की स्थापना 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुई। इनकी स्थापना संयुक्त पूंजी कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत की गई। परन्तु 1949 में बैंकिग कम्पनी अधिनियम की पृथक स्थापना की गयी और भारतवर्ष में स्थापित वैंक, इसी अधिनियम के अन्तर्गत सम्मि-लित किये गये। सर्वप्रथम, भारतवर्ष में बंगाल बैंक, बैंक ऑफ मद्रास तथा बैंक ऑफ बम्बई की स्थापना की गई जो भारत सरकार की मदद किया करते थे। परन्तु इसके पश्चात्, धीरे-धीरे वैंकों की संख्या बढ़ती गई और मार्च 1984 तक व्यापारिक वैंकों की कुल संख्या लगभग 44 580 तक पहुँच गयी। इनमें 24,770 शाखायें अर्थात् 55·6 प्रतिशत शाखायें ग्रामीण विकास के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में खोली गयी हैं। प्रति वैंक राष्ट्रीय औसत जनसंख्या 1969 में 65,000 थी तथा मार्च 1985 तक प्रति वैंक राष्ट्रीय औसत जनसंख्या 17,000 करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। मार्च 1985 में, व्यापारिक वैंकों की संख्या लगभग 50,750 तक पहुँचने का अनुमान है। जिसमें लगभग 39837 शाखायें ग्रामीण क्षेत्र में हैं।

बैंक का आशय
(Meaning of Banks)

वैंक शब्द से आशय ऐसे संस्थान से है जहाँ पर रुपये के लेन-देन का कार्य किया जाता है।

वैंक विभिन्न प्रकार के खातों में अपने ग्राहकों से रुपया स्वीकार करते हैं तथा इस रुपये को ऋण स्वरूप प्रदान करते हैं। वैंक शब्द को परिभाषित करने के लिये विभिन्न विद्वानों द्वारा अनेक परिभाषायें दी गयी हैं। **ऑक्सफोर्ड शब्दकोष** के अनुसार, वैंक वह संस्था है जो अपने ग्राहकों से अथवा उनकी ओर से प्राप्त धन की रक्षा करता है। इसका मुख्य कार्य अनेक चैकों का भुगतान करना है। उसे लाभ उस

धन के उपयोग द्वारा उत्पन्न होते हैं जिसे उपयोग न करते हुए ग्राहकों ने बैंक में जमा करा दिया है।"[1]

उपरोक्त परिभाषा में बैंक को ग्राहकों का ऐसा रुपया जमा करने की संस्था समझा गया है जिस रुपये का प्रयोग ग्राहकों द्वारा नहीं किया जाता है तथा बैंक इसके प्रयोग से लाभ अर्जित करता है।

बैंकिंग विनियम अधिनियमन 1949 के अनुसार, "बैंकिंग कम्पनी वह कम्पनी है जो बैंकिंग का कार्य करती हो और बैंकिंग शब्द का अर्थ उधार देने अथवा विनियम करने के लिये जनता से मुद्रा के निक्षेपों को, जो माँग पर अथवा धनादेश, विकर्ष, आदेश द्वारा शोधनीय होते हैं, स्वीकार करने से है।"[2]

बैंकिंग विनियमन अधिनियम 1949 के अनुसार, बैंक को रुपया जमा करने तथा उधार देने वाली संस्था समझा गया है जो जमा रुपया माँगने पर भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होती है। इसमें उस संस्था को बैंक समझा गया है जो बैंकिंग प्रकृति का व्यवसाय करती है अर्थात् इसमें बैंक के कार्यों को स्पष्ट किया गया है।

सेयर्स के अनुसार, "बैंक केवल मुद्रा के व्यापारी ही नहीं हैं वरन् एक महत्वपूर्ण अर्थ में मुद्रा के उत्पादक भी हैं।"[3]

हार्ट के अनुसार, "बैंकर वह व्यक्ति है जो अपने साधारण व्यवसाय के अन्तर्गत लोगों का रुपया जमा करता है तथा उन व्यक्तियों के धनादेशों का, जिन्होंने इसे जमा किया है अथवा जिनके खातों में जमा किया गया है, भुगतान करके चुकाता है।"[4]

किनले के अनुसार, "बैंक एक ऐसी संस्था है जो ऋण की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुये, ऐसे व्यक्तियों को जिन्हें उसकी आवश्यकता है, रुपया उधार देती है और

---

1. An Establishment for custody of money received from or on behalf of its customers. It is essential duty to pay their drafts on it. Its profits arise from the use of money left unemployed by them.

—The Shorter Oxford English Dictionary

2. "Banking means the accepting for the purpose of lending or investment of deposits of money from the public repayable on demand or otherwise and withdrawal by cheque, draft, order or otherwise."

—Sec 5 (B) Banking Regulation Act. 1949

3. "Banks are not merely traders in money but also in an important sense, manufacturers of money." —Sayers

4. "A banker is one who, in the ordinary course of his business, receivesmoney which he repays by honouring cheques of persons from whom or on whose accounts, he receives it." —Hart

जो व्यक्तियों का फालतू रुपया अपने पास जमा हेतु लेती है।"[1]

प्रो० किनले के अनुसार बैंक को एक ऐसी संस्था समझा गया है । जो उन व्यक्तियों से रुपया स्वीकार करती है। जिन्हें रुपये की आवश्यकता नहीं है तथा इस रुपये को ऋण स्वरूप उन व्यक्तियों को प्रदान करती है। जिन्हें रुपये की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में, यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि बैंक ऋण प्रदान करते समय सुरक्षा के दृष्टिकोण का विशेष ध्यान रखते हैं। अतः प्रो० किनले ने बैंक एक ऐसी संस्था को माना है जो धन का विकेन्द्रीकरण करने का कार्य करती है।

सर जॉन पैगट के अनुसार, "किसी व्यक्ति अथवा नियमित या अन्य प्रकार की संस्था को बैंकर नहीं कहा जा सकता है, यदि वह अपने ग्राहकों के लिये (1) जमा खाते नहीं खोलता, (2) चालू खाते नहीं खोलता, (3) चैक जारी और भुगतान नहीं करता और (4) रेखांकित और बिना रेखांकित चैकों की उगाही नहीं करता।"[2]

अतः सर जॉन पैगट ने अपनी परिभाषा में बैंक उस व्यक्ति अथवा संस्था को माना है जो उपरोक्त चार प्रकार के कार्य करता है। परन्तु आधुनिक समय में, बैंक का कार्य क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत हो गया है तथा बैंक अपने ग्राहकों के लिये अनेक अमूल्य सेवायें प्रदान करते हैं।

उपरोक्त समस्त परिभाषाओं में बैंक के कार्यों पर विशेष बल दिया गया है। संक्षेप में, बैंक से आशय ऐसे संस्थान से है जो मुद्रा का व्यवसाय करता है। बैंक ग्राहकों का रुपया जमा करता है और इस रुपये का भुगतान आवश्यकतानुसार करता है। बैंक अन्य व्यक्तियों को भी उधार रुपया देने का कार्य करता है। इसी के माध्यम से, बैंक साख का निर्माण करता है।

बैंकों के कार्य
(Functions of Banks)

व्यवहार में बैंक विभिन्न प्रकार के महत्वपूर्ण कार्य करता है। बैंक का प्रमुख व्यवसाय जनता से रुपया स्वीकार करना एवं उस धन को आवश्यकतानुसार ऋण स्वरूप प्रदान करना है। बैंकिंग विनियमन अधिनियम की धारा 6 में बैंकों के कार्यों का वर्णन किया गया है। इसके अनुसार, बैंकों के कार्यों को निम्नलिखित दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—

(A) मुख्य कार्य (Main Functions)—बैंकों के मुख्य कार्यों के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यों को सम्मिलित किया गया है—

(1) रुपया जमा करना (To Deposit Money)—बैंक अपने ग्राहकों से

1. "Bank is an establishment which makes to individuals such advance of money as may be required and safely made and to which individuals entrust money when not required by them for use." —Kinley

2. "No person or body, corporate or otherwise, can be a banker who does not (1) take deposit accounts, (2) take current accounts, (3) issue and pay cheques and (4) collect cheques crossed or uncrossed, for his customers." —Sir John Paget

रुपया जमा करते हैं। इसके लिये वे ग्राहकों को विभिन्न प्रकार की प्रेरणायें देते हैं। बैंक में रुपया जमा करने के लिये ग्राहकों को अनेक सुविधायें दी जाती हैं । ग्राहक अपना रुपया बचत खाते (Saving Bank Account) चालू खाते (Current Account) अथवा सावधि निक्षेप खाते (Fixed Deposit) में जमा कर सकते हैं। प्रत्येक खाते में विभिन्न प्रकार की सुविधायें उपलब्ध हैं। बचत खाता उन व्यक्तियों के लिये उपयुक्त रहता है जो छोटी-छोटी रकम जमा करके अपनी बचत करना चाहते हैं तथा जिन्हें रुपये की नियमित आवश्यकता नही रहती है । व्यावसायी वर्ग लिये चालू खाता उपयुक्त रहता है चूंकि इसमें ग्राहक द्वारा अनेक बार रुपया निकाला जा सकता है । इस खाते में ग्राहक द्वारा रुपया निकलवाने पर प्रतिबन्ध नहीं होता है । सावधि-निक्षेप खाते में रुपया लम्बी अवधि के लिये जमा किया जाता है तथा इस पर देय ब्याज बचत खाते की तुलना में अधिक होता है । इसके अतिरिक्त, प्रत्येक माह निश्चित राशि जमा करने के लिये बैंक द्वारा आवृत्ति जमा खाते (Recurring Deposit Account) की सुविधायें भी उपलब्ध करावायी जाती हैं।

(2) रुपया उधार देना (To Lend Money)—बैंकों का मुख्य कार्य रुपया उधार देना है। यदि कोई बैंक रुपया उधार नही देता है तब उसकी आय के स्रोत सीमित होंगे और उसके दीर्घकालीन जीवन की कल्पना करना भ्रम होगा। व्यवसाय का स्वरूप आय पर आधारित होता है। अतः बैंक रुपया उधार देकर आय प्राप्त करते हैं और उससे अपना व्यापार चलाते हैं। बैंक सावधि ऋण (Term Loan), नकद साख (Cash Credit), अधिविकर्ष (Overdraft) अथवा विपत्रों को भुनाकर (Discounting of Bills) रुपया उधार देते हैं। बैंक द्वारा सावधि ऋण की सुविधा साधारणतः स्थायी सम्पत्ति क्रय करने के उद्देश्य से प्रदान की जाती है । इसमें ऋण का भुगतान साधारणतः 3 वर्ष से लेकर 7 वर्ष की अवधि में देय होता है । नकद साख की सुविधा कार्यशील पूंजी को उपलब्ध कराने के उद्देश्य से प्रदान की जाती है। इसमें ऋण का भुगतान मांग पर देय होता है तथा यह सुविधा एक वर्ष की अवधि के लिये उपलब्ध करायी जाती है। इसके पश्चात, इसका नवीनीकरण करवाया जा सकता है। अधिविकर्ष की सुविधा अल्पकालीन ऋण की आवश्यकता की पूर्ति के लिये प्रदान की जाती है तथा इसमें रुपये का भुगतान मांग पर देय होता है। इसमें ऋण असुरक्षित समझा जाता है। विपत्रों को भुनाने की सुविधा भी अल्पकालीन ऋणस्वरूप प्रदान की जाती है तथा इसमें विपत्रों की प्रत्याभूति (Guarantee) पर ऋण प्रदान किया जाता है। ये विपत्र माल के हक विलेख होते हैं जिनका भुगतान अथवा स्वीकृत होने पर माल की सुपुर्दगी प्राप्त की जा सकती है। इस स्थिति में, भुगतान के विरुद्ध विपत्रों की दशा में सुरक्षित ऋण [illegible] है तथा विपत्रों की स्वीकृति की स्थिति में ऋण उस समय तक [illegible] जाता है जब तक विपत्र स्वीकार नहीं किये जाते हैं। विपत्र स्वीकार [illegible] माल के हक विलेख स्वीकारकर्त्ता को प्रदत्त कर दिये जाते हैं [illegible]

सुपुर्दगी प्राप्त कर लेता है। अतः इस स्थिति में वैंक का ऋण असुरक्षित ऋण समझा जाता है। रुपया उधार देते समय ऋणी की आर्थिक स्थिति तथा उसके कार्यों को ध्यान में रखा जाता है। ऋण उत्पादन कार्यों के लिये ही दिया जाना चाहिये।

(B) **सहायक कार्य** (Subsidiary Functions)—वैंकों के सहायक कार्यों के अन्तर्गत, वे समस्त कार्य सम्मिलित किये जाते हैं जो वैंक उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त अपने ग्राहकों के लिये करते हैं। इसके अन्तर्गत **निम्नलिखित कार्य सम्मिलित किये गये** हैं—

(i) वैंक ग्राहकों को **यात्री चैक** (Traveller's Cheque), **ऋण कार्ड** (Credit Card), **उपहार चैक** (Gift Cheque), **ऋण-पत्र** (Letter of Credit) की सुविधायें प्रदान करते हैं।

(ii) वैंक अपने ग्राहकों के **विनिमय विपत्र** (Bill of Exchange) स्वीकार करना, भुनाना तथा उनके क्रय-विक्रय करने का कार्य करते हैं।

(iii) वैंक ग्राहकों के लिये **अंश, ऋण-पत्र, बॉण्ड** (Shares, Debentures, Bond etc.) आदि क्रय-विक्रय करने का कार्य करते हैं।

(iv) वैंक अपने ग्राहकों की कीमती वस्तुयें **संरक्षण** (Safe Custody) में रखते हैं अथवा ग्राहकों को **सुरक्षित जमा कक्ष** (Safe Deposit Vault) की सुविधायें प्रदान करते हैं।

(v) वैंक सरकार अथवा अपने ग्राहक के लिये **ऐजेन्सी** (Agency) **सम्बन्धी कार्य** करते हैं जिनके अन्तर्गत वे ग्राहक का रुपया एक स्थान से दूसरे स्थान पर हस्तांतरित करते हैं और ग्राहक के आदेशानुसार बीमा किश्त आदि का भुगतान करते हैं।

(vi) वैंक ग्राहकों की ओर से वित्तीय एवं निष्पादित **जमानत** देने (Guarantee) देने का कार्य तथा, उनकी सम्पत्ति के क्रय-विक्रय का कार्य करते हैं।

(vii) वैंक सरकार अथवा अन्य सरकारी संस्थाओं के लिये अंश ऋण-पत्र आदि के **अभिगोपन** (Under Writing) का कार्य करते हैं।

(viii) वैंक ग्राहकों को **महत्वपूर्ण सूचनायें** (Information) उपलब्ध कराते हैं।

(ix) वैंक को अपना व्यापार चलाने के लिये **स्थायी सम्पति प्राप्त करने** (Acquisition of Fixed Assets) का अधिकार है। इसके अतिरिक्त वह किसी अन्य कम्पनी का व्यापार क्रय कर सकते हैं जो कि, वैंकिग प्रकृति का व्यापार करती है।

(x) वैंक ग्राहकों के चैंक विनिमय विपत्र अथवा प्रतिज्ञा पत्र. संग्रहण (Collection) करने का कार्य करते हैं।

(xi) वैंक ग्राहकों को धन विनियोजन के लिये सलाह, अभिगोपन अथवा स्टाक एक्सचेंज की सहायता प्रदान करते हैं।

(xii) बैंक आँकड़े एकत्र करने; सामाजिक उत्थान करने एवं अपनो बैंक के रूप में महत्वपूर्ण सेवायें प्रदान करते हैं।

अतः बैंक के सहायक कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं। इनकी सहायता से बैंक अपने निक्षेपों की वृद्धि करने में समर्थ होते हैं। वर्तमान समय में, सहायक कार्यों का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है।

बैंक के वर्जित कार्य
(Prohibited Functions of Banks)

बैंकिंग विनियमन अधिनियम की धारा 5 (b) तथा 6 (1) में बैंक के विभिन्न कार्यों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। परन्तु, बैंकों के लिये बैंकिंग अधिनियम की धारा 8 व 9 के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य वर्जित किये गये हैं—

(1) बैंकों को, किसी भी ऐसे व्यापारिक कार्य को करने का अधिकार प्राप्त नहीं है जिसमें जोखिम हो और उससे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में, आय प्राप्त होती हो। परन्तु बैंकों को उन प्रतिभूतियों को आवश्यकता पड़ने पर, बेचने का अधिकार प्राप्त है जिन्हें, उन्होंने जमानतस्वरूप अपने पास रखा हुआ है। इसके अतिरिक्त, बैंक वसीयत निष्पादन अथवा उगाही (Collection) के लिये प्राप्त विनिमय विपत्रों के सम्बन्ध में सम्पत्ति का क्रय-विक्रय करने का अधिकार रखता है।

(2) बैंको को अचल सम्पत्ति प्राप्त करने के लिये वर्जित किया गया है परन्तु वे व्यक्तिगत प्रयोग के लिये अचल सम्पत्ति खरीद सकते हैं। किसी अन्य अचल सम्पत्ति की दशा में, बैंक को 7 वर्ष तक, सम्पत्ति अपने पास रखने का अधिकार है जिसे रिजर्व बैंक 12 वर्ष तक की अवधि तक बढ़ा सकता है अर्थात् रिजर्व बैंक 5 वर्ष की अवधि और बढ़ा सकता है।

(3) अधिनियम की धारा 19 व 20 के अनुसार, कोई भी सहकारी बैंक अन्य सहकारी संस्था के अंश नहीं खरीदेगा और न ही वह अपने अंशों के विरुद्ध ऋण प्रदान करेगा परन्तु वर्ष 1983 में धारा 19 में संशोधन किया गया जिसके परिणामस्वरूप कोई भी बैंकिंग कम्पनी अन्य बैंकिंग कम्पनी को (जो बैंकिंग विनियम अधिनियम की धारा 6 के अन्तर्गत बैंकिंग का कार्य करती है एवं ऐसा कार्य रिजर्व बैंक की पूर्व अनुमति से भारत में करती है एवं ऐसा कार्य जनहित में आवश्यक है अथवा उपयोगी है) सहायक कम्पनी बना सकती है। इस स्थिति में, बैंकिंग कम्पनी दूसरी कम्पनी के 51 प्रतिशत से अधिक अंश (Shares) प्राप्त करती है।

बैंकों द्वारा प्रदत्त विशेष सेवायें
(Special Services Offered by Banks)

बैंक अपने ग्राहकों को अनेक बहुमूल्य सेवायें प्रदान करते हैं। इन सेवाओं में निम्नलिखित प्रमुख सेवायें बैंकों द्वारा प्रदान की जाती हैं—

बैंक ड्राफ्ट
(Bank Draft)

बैंक ड्राफ्ट एक- बैंक की एक शाखा द्वारा अपनी अन्य शाखा को *निश्चित*

रकम भुगतान करने का आदेश है। विनिमय साध्य विलेख अधिनियम की धारा 85A के अनुसार, बैंक ड्राफ्ट एक ही बैंक की, एक शाखा द्वारा दूसरी शाखा को निश्चित धनराशि मांग पर भुगतान करने का आदेश है।[1] बैंक ड्राफ्ट का भुगतान ड्राफ्ट के प्रापक (Payee) को दिया जाता है तथा यह भुगतान मांग पर देय होता है। बैंक ड्राफ्ट के अन्तर्गत तीन पक्ष होते हैं—

(1) जारी करने वाली शाखा अथवा आहर्ता (Drawer)
(2) प्रापक अथवा आदाता (Payee)
(3) जिस पर शाखा देय हो अथवा अदाकर्त्ता (Drawee)।

प्रत्येक व्यक्ति बैंक में रुपया जमा करके बैंक से ड्राफ्ट प्राप्त कर सकता है। बैंक इस सेवा के लिये कमीशन के रूप में कुछ शुल्क प्राप्त करता है। ड्राफ्ट प्राप्त करने वाला व्यक्ति ड्राफ्ट का क्रेता (Purchaser) समझा जाता है।

ड्राफ्ट की सांविधिक स्थिति (Legal Status of a Draft)—विनिमय साध्य विलेख अधिनियम के अन्तर्गत **1947** में परिवर्तन करके **धारा 131A** संलग्न की गयी, जिसके अनुसार ड्राफ्ट को कुछ दशाओं में चैक के समान समझा जायेगा। इससे पूर्व, ड्राफ्ट के सम्बन्ध में बैंकों को कोई संरक्षण नहीं था।[2] परन्तु **धारा 131A** के अनुसार, बैंकों को ड्राफ्ट भुगतान अथवा ड्राफ्ट के रेखांकन के सम्बन्ध में **धारा 131** के अन्तर्गत संरक्षण दिया जायेगा।

बैंक ड्राफ्ट को कुछ दशाओं में विनिमय विपत्र (Bill of Exchange) समझा गया है। विनिमय विपत्र के अन्तर्गत एक निश्चित व्यक्ति को निश्चित धनराशि भुगतान करने का आदेश दिया जाता है। यह आदेश लिखित एवं शर्तरहित होता है जिस पर धारक के हस्ताक्षर होते हैं। इसी प्रकार ड्राफ्ट के अन्तर्गत, उपरोक्त समस्त विशेषतायें पायी जाती हैं। अतः बैंक ड्राफ्ट को विनिमय विपत्र समझा जाना चाहिये।

ड्राफ्ट का भुगतान रोकना (Stopping Payment of Bank Draft)—ड्राफ्ट की धनराशि प्राप्त करने का अधिकार प्रापक को होता है। अतः अन्य किसी भी व्यक्ति को बैंक ड्राफ्ट के भुगतान को रोकने (Stopping Payment) का अधिकार नहीं है। यदि ड्राफ्ट का क्रेता भुगतान रोकने की प्रार्थना करता है तब बैंक को उसकी प्रार्थना स्वीकार नहीं करनी चाहिये चूंकि वास्तविक अधिकारी प्रापक होता है और उसे भुगतान करने से मना नहीं किया जा सकता है। मालिक बरकत अली बनाम इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया नामक विवाद[3] में इस तथ्य की पुष्टि की गयी है

1. "Where any draft, that is an order to pay money, drawn by one office of a bank upon another office of the same bank for a sum of money payable to order on demand." —Sec 85A—Negotiable Instrument Act
2. Sanyasilingam Vs. Exchange Bank of India and Africa.
3. Malik Barkat Ali Vs. Imperial Bank of India.

कि यदि ड्राफ्ट के क्रेता द्वारा, ड्राफ्ट प्रापक को भेज दिया जाता है तथा बाद में, दोनों पक्षों के बीच कोई विवाद होता है तब उस विवाद का समझौता पृथक से किया जायेगा। ड्राफ्ट के क्रेता को, ड्राफ्ट का भुगतान रोकने का कोई अधिकार नहीं है। परन्तु यदि क्रेता ने ड्राफ्ट प्रापक को नहीं दिया है तब उसे ड्राफ्ट रद्द (Cancel) कराने का अधिकार है। इस निर्णय की पुष्टि सिद्ध नाथ शुक्ला बनाम पंजाब नेशनल बैंक नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमें सिद्ध नाथ शुक्ला ने श्री आर० एन० शुक्ला के हित में पंजाब नेशनल बैंक की लखनऊ शाखा पर देय ड्राफ्ट क्रय किया। ड्राफ्ट प्रापक को सुपुर्द करने से पूर्व, ड्राफ्ट के क्रेता ने बैंक से ड्राफ्ट रद्द करने की प्रार्थना की। बैंक द्वारा भुगतान न करने पर, क्रेता ने वाद प्रस्तुत किया। इलाहाबाद हाईकोर्ट ने क्रेता के हित में निर्णय दिया और स्पष्ट किया कि ड्राफ्ट के प्रापक को भुगतान रोकने का अधिकार नहीं है चूँकि क्रेता द्वारा ड्राफ्ट की सुपुर्दगी प्रापक को नहीं की गयी है। ड्राफ्ट का परक्रामण उसी स्थिति में समझा जाता है जबकि क्रेता द्वारा ड्राफ्ट की सुपुर्दगी प्रापक को कर दी जाती है। अतः इस स्थिति में प्रापक को ड्राफ्ट का परक्रामण नहीं समझा जायेगा। क्रेता को ड्राफ्ट का भुगतान रोकने अथवा भुगतान वापिस प्राप्त करने का अधिकार उस समय तक प्राप्त होता है जब तक कि ड्राफ्ट की सुपुर्दगी प्रापक को नहीं की जाती है तथा ड्राफ्ट जारी करने वाला बैंक क्रेता का देनदार होता है और माँग पर रुपया भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है। परन्तु ड्राफ्ट की सुपुर्दगी प्रापक को करने पर क्रेता का भुगतान रोकने अथवा भुगतान वापिस करने का अधिकार समाप्त हो जाता है तथा इस स्थिति मे बैंक प्रापक की सहमति से ही क्रेता का ड्राफ्ट का भुगतान कर सकता है।

अतः बैंक ड्राफ्ट के क्रेता के प्रति उत्तरदायी ठहराया गया है।

ड्राफ्ट का खोना (Lost of Draft)—ड्राफ्ट खो जाने (Lost) की स्थिति में, बैंक इसकी सूचना भुगतान करने वाली शाखा के पास भेज देता है और वह शाखा ड्राफ्ट का भुगतान उस समय तक के लिये रोक देती है जब तक कि प्रापक (Payee) के पृष्ठांकन (Endorsement) की जाँच नहीं कर ली जाती है। ऐसी स्थिति में ड्राफ्ट का भुगतान, उचित सावधानी रखते हुए वास्तविक धारक को किया जाता है। क्रेता द्वारा ड्राफ्ट खो जाने की स्थिति मे, बैंक क्रेता को ड्राफ्ट की अनुलिपि (Duplicate) निम्नलिखित शर्तें पूरी करने पर जारी करता है—

(i) मूल ड्राफ्ट का भुगतान नहीं किया गया है,

(ii) क्रेता द्वारा क्षतिपूरक बाँड (Indemnity Bond) भरने पर।

ड्राफ्ट का रद्द अथवा निरस्तीकरण करना (Cancellation of Draft)—ड्राफ्ट का क्रेता ड्राफ्ट प्रापक को हस्तारित करने से पूर्व, ड्राफ्ट का निरस्तीकरण करा सकता है। इस स्थिति में बैंक, ड्राफ्ट की राशि उसके क्रेता को वापिस कर देता है। इसके विपरीत यदि ड्राफ्ट प्रापक को दिया जा चुका है तब बैंक प्रापक की

1. S. N. Shukla Vs. Punjab National Bank (A. I. R. 1960)

सहमति से ही ड्राफ्ट का निरस्तीकरण कर सकता है। अतः क्रेता को ड्राफ्ट निरस्तीकरण कराने का अधिकार नहीं होता है। यदि ड्राफ्ट प्रापक के अधिकार में पहुँच जाये तथा उनके पश्चात दोनों पक्षों में कोई विवाद हो, तब क्रेता ड्राफ्ट का निरस्तीकरण नहीं करा सकता है।

बैंक ड्राफ्ट और यात्री चैक में अन्तर
(Difference between Draft and Travellers Cheque)

बैंक ड्राफ्ट और यात्री चैक बैंक द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान के लिये धन का हस्तांरण करने के उद्देश्य से जारी किये जाते हैं। इनमें निम्नलिखित अन्तर पाये जाते हैं—

(1) भुगतान (Payment)—ड्राफ्ट का मुगतान एक निश्चित शाखा पर देय होता है जबकि यात्री चैक का भुगतान क्रेता द्वारा किसी भी बैंक की शाखा पर प्राप्त किया जा सकता है।

(2) खोना (Lost) ड्राफ्ट खोने की स्थिति में ड्राफ्ट का क्रेता अथवा प्रापक ड्राफ्ट की अनुलिपि (Duplicate Copy) प्राप्त करने का अधिकारी होता है इसके विपरीत, यात्री चैक खोने की स्थिति में यात्री चैक का क्रेता केवल रुपया वापिस प्राप्त करने का अधिकार रखता है। उसे अनुलिपि चैक जारी नहीं किये जाते हैं।

(3) हस्ताक्षर (Signature)—ड्राफ्ट पर जारी करने वाली शाखा के अधिकारी के हस्ताक्षर नहीं होते हैं तथा उसके मुख पर ग्राहक के हस्ताक्षर नहीं होते हैं। इसके विपरीत, यात्री चैक पर बैंक के अध्यक्ष के हस्ताक्षर होते हैं तथा ग्राहक के हस्ताक्षर नमूने के हस्ताक्षर स्वरूप चैक के मुख पर प्राप्त किये जाते हैं।

(4) तिथि (Date)—ड्राफ्ट पर ड्राफ्ट जारी करने वाली तिथि लिखि जाती है जबकि यात्री चैक पर भुगतान की तिथि लिखी जाती है।

(5) रकम (Denomination)—यात्री चैक प्रत्येक रकम के लिये पृथक-पृथक होते हैं जबकि ड्राफ्ट किसी भी राशि का जारी किया जा सकता है। उदाहरणार्थ यात्री चैक 50, 100, 200 अथवा 10,000 रुपये के हो सकते हैं जबकि ड्राफ्ट किसी भी राशि के लिये जारी किया जा सकता है।

अतः ड्राफ्ट एवं यात्री चैक में विभिन्न अन्तर पाये जाते हैं।

डाक अन्तरण
(Mail Transfer)

डाक अन्तरण की सुविधा रुपया एक स्थान से दूसरे स्थान पर अन्तरण करने हेतु प्रदान की जाती है। इसके अन्तर्गत, कोई भी व्यक्ति उस व्यक्ति के नाम में रुपया भेज सकता है जिस व्यक्ति का उस बैंक में खाता है जिसके माध्यम से रुपया भेजा जा रहा है। रुपया भेजते समय, रुपया भेजने वाले व्यक्ति को बैंक की शाखा का नाम (जहाँ रुपया भेजना है), व्यक्ति का नाम (जिसके खाते में रुपया जमा

करवाता है) तथा उस व्यक्ति के खाते के नम्बर के सम्बन्ध में सूचनायें देनी पड़ती हैं। इसके पश्चात बैंक अपनी शाखा को (जिसे रुपया भेजा जा रहा है) निश्चित धनराशि अमुक व्यक्ति के खाते में जमा करने का निर्देश देता है। बैंक द्वारा यह सूचना डाक द्वारा भेजी जाती है। विशेष परिस्थितियों में बैंक उस व्यक्ति के हित मे डाक अन्तरण जारी कर सकता है जिसका उसकी शाखा में खाता नहीं है। इस स्थिति में, बैंक अपनी शाखा को डाक अन्तरण भेजता है जिसमें उस बैंक का नाम जिसके पास हितग्राही का खाता है तथा हितग्राही का नाम होता है इसके पश्चात, अदाकर्त्ता (Drawee) शाखा अमुक बैंक के हित में भुगतान आदेश जारी करती है कि अमुक राशि का भुगतान अमुक व्यक्ति के खाते में किया जाये। उदाहरणार्थ—अ का खाता स्टेट बैंक में है तथा 'ब' पंजाब नेशनल बैंक (मेरठ) से अ के खाते में दिल्ली शहर स्टेट बैंक की जनकपुरी ब्रान्च मे रुपया डाक अन्तरण द्वारा भेजने की प्रार्थना करता है। इस स्थिति में पंजाब नेशनल बैंक अपनी दिल्ली स्थित शाखा को स्टेट बैंक के खाते में 'अ' के हित मे डाक अन्तरण भेजेंगे। पंजाब नेशनल बैंक की दिल्ली स्थित शाखा स्टेट बैंक जनकपुरी ब्रान्च के हित में भुगतान आदेश (Pay Order) जारी करेगी कि 'अ' के खाते मे अमुक राशि क्रेडिट की जाये।

इस प्रकार रुपया भेजने में पर्याप्त विलम्ब होती है। यह सुविधा बैंक केवल विशेष परिस्थितियों मे ही प्रदान करते हैं।

तार अन्तरण
(Telegraphic Transfer)

तार अन्तरण की सुविधा भी रुपया एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने के लिये प्रदान की जाती है। परन्तु तार अन्तरण के अन्तर्गत बैंक द्वारा अपनी शाखा को तार द्वारा सूचना दी जाती है जिससे रुपया ग्राहक के खाते में शीघ्र ही जमा हो जाये। इसके अन्तर्गत, बैंक रुपया भेजने वाले व्यक्ति से तार शुल्क अतिरिक्त लेता है।

भुगतान आदेश
(Pay Order)

भुगतान आदेश बैंक ड्राफ्ट के समान विनिमय साध्य विलेख अथवा परक्राम्य प्रपत्र है। परन्तु, भुगतान आदेश के अन्तर्गत, विपत्र का भुगतान उसी शाखा से किया जाता है जो शाखा भुगतान आदेश जारी करती है। यह बैंक का प्रतिज्ञा पत्र (Promissory Note) होता है जिसके अन्तर्गत बैंक निश्चित धनराशि (जो पहले प्राप्त की जा चुकी है) ग्राहक अथवा उसके आदेशानुसार अन्य व्यक्ति को भुगतान करने का वचन देता है।

साख पत्र जारी करना
(Issue Letter of Credit)

इसके अन्तर्गत बैंक यात्री चैक (Traveller's Cheque) तथा साख पत्र

(Letter of Credit) जारी करते हैं। यह सुविधा प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध है। यात्री चैक प्राप्त करते समय, प्राप्त करने वाला व्यक्ति उन पर हस्ताक्षर करता है और ये चैक प्रत्येक रकम (Denomination) के लिये उपलब्ध होते हैं। इनका भुगतान जारी करने वाले बैंक की प्रत्येक शाखा पर प्राप्त किया जा सकता है। भुगतान प्राप्त करते समय चैक के क्रेता को यात्री चैक पर पुनः हस्ताक्षर करने पड़ते हैं।

यदि यात्री चैक धोखे से चुरा लिया जाये अथवा खो जाये और उन्हें जाली हस्ताक्षर करके बैंक से भुना लिया जाये तब बैंक उनके लिये उत्तरदायी होगा। परन्तु यदि चैकों पर क्रेता ने अपनी त्रुटि से दूसरे हस्ताक्षर पहले ही कर रखे हैं और बाद में चैक चोरी होने पर बैंक से भुनाये जाते हैं, तब बैंक उत्तरदायी नहीं होगा। इसकी पुष्टि अमरसन बनाम अमेरिकन एक्सप्रैस कम्पनी नामक विवाद[1] में की गई। इस विवाद में यात्री चैक के क्रेता ने चैकों पर अपने प्रति हस्ताक्षर (Counter Sign) पहले ही कर रखे थे तथा चैक खोने की सूचना तुरन्त बैंक को नहीं दी गयी। चैक के क्रेता ने बैंक पर दोषपूर्ण भुगतान के लिये वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय द्वारा चैक के क्रेता को लापरवाही का दोषी ठहराया गया जिससे यात्री चैक जारी करने वाला बैंक अपनी समस्त शाखाओं को यात्री चैक खोने की सूचना उचित समय पर भेजने में असमर्थ रहा है। अतः न्यायालय द्वारा वादी का वाद खारिज कर दिया गया।

यात्री चैक के समान ही यात्री साख-पत्र जारी किये जाते हैं। यात्री साख-पत्र किसी एक बैंक द्वारा अपनी शाखा पर अथवा अन्य बैंक पर जारी किये जाते हैं। इसके अन्तर्गत जारी करने वाला बैंक अपनी शाखा अथवा अन्य बैंक को निश्चित धन-राशि, साख पत्र के धारक को भुगतान करने की प्रार्थना करता है। साख पत्र के संलग्न, जारी करने वाला बैंक, धारक का परिचय पत्र (Identity Cord) भी जारी करता है जिसके आधार पर भुगतान करने वाला बैंक साख पत्र का भुगतान करता है और भुगतान की गयी राशि का विवरण उस साख पत्र में लिखता है। साख पत्र धारक को निश्चित धन-राशि जमा करने पर ही जारी किये जाते हैं। यदि धारक धनराशि के स्थान पर जमानत (Guarantee) देता है, तब इन साख पत्रों को 'जमानती साख-पत्र' Guarantee (Letter of Credit) कहा जाता है।

साख पत्र (Letter of Credit) की सुविधा बैंकों द्वारा विदेशी व्यापार के अन्तर्गत भी प्रदान की जाती है। इसके अन्तर्गत, साख पत्र जारी करने वाला बैंक आयातक (Importer) की ओर से निर्यातक (Exporter) को निश्चित धनराशि की सीमा तक माल के बिलों का भुगतान करने का आश्वासन देते हैं। परन्तु यह सुविधा निर्धारित शर्तों के आधीन प्रदान की जाती है। इसी प्रकार साख पत्र के अन्तर्गत गश्ती पत्र अथवा संचलन नोट (Circular Notes) जारी किये जाते हैं जिसमें गश्ती पत्र की पीठ पर

1. Emerson Vs. American Express Company.

धारक का नाम तथा धारक को जारी परिचय पत्र का नम्बर लिखा होता है । इस स्थिति में धारक को पृथक से परिचय पत्र जारी किया जाता है । इसके अन्तर्गत गश्ती पत्र जारी करने वाला बैंक अपनी दूसरी शाखा अथवा अभिकर्ता को निश्चित धनराशि भुगतान करने का आदेश देता है । यह धनराशि जारी करने वाले बैंक के देश की मुद्रा (Currency) अथवा करेन्सी में देय होती है ।

बहुमूल्य वस्तुओं का संरक्षण
(Accepting Valuables for Safe Custody)

इसके अन्तर्गत. ग्राहक अपनी बहुमूल्य वस्तुयें बैंक में संरक्षण के लिये जमा करवाता है । इन्हें विशेष उद्देश्य के लिये जमा किया जाता है । जिन पर बैंकों को ग्रहणाधिकार (Lien) प्राप्त नहीं होता है । इसके अन्तर्गत, ग्राहक बैंक को अपनी वस्तुयें जमा करवाते हैं जिनका विवरण एक रजिस्टर में रखा जाता है और उस माल की जमा रसीद ग्राहक को दी जाती है । वस्तु वापिस प्राप्त करते समय, ग्राहक को रसीद बैंक में जमा करनी पड़ती है । यदि रसीद खो जाये, तब मूल रसीद के स्थान पर, क्षतिपूरक बांड (Indemnity Bond) के आधार पर, अनुलिपि (Duplicate) रसीद जारी की जाती है ।

यदि संरक्षण में रखी जाने वाली वस्तु के विवरण ग्राहक द्वारा नहीं बतलाये जाते हैं, तब बैंक को उस बॉक्स (Box) का विवरण लिखना चाहिये जिसमें ये वस्तुयें दी गई हैं । इसके अन्तर्गत, ग्राहक एवं बैंक की स्थिति निक्षेपकर्ता (Bailor) तथा निक्षेपग्रहीता (Bailee) की होती है। बैंक के दायित्व निक्षेपग्रहीता के समान ही विस्तृत होते हैं । यदि बैंक वस्तु की देख-रेख करने में असमर्थ रहता है, जैसा कि एक सामान्य व्यक्ति अपनी वस्तु की करता है, तब बैंक असावधानी का दोषी होगा और ग्राहक की क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होगा ।

इसके अतिरिक्त, यदि बैंक के किसी कर्मचारी द्वारा गबन अथवा बैंक द्वारा त्रुटिपूर्ण ढंग से किसी अन्य व्यक्ति को माल सुपुर्द किये जाने पर, संरक्षण में रखी हुई वस्तु को कोई क्षति होती है, तब बैंक उसकी क्षति-पूर्ति के लिये भी पूर्ण उत्तरदायी है । इस निर्णय की पुष्टि नेशनल बैंक ऑफ लाहौर बनाम सोहनलाल सहगल व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी है । इस विवाद में सोहनलाल सहगल ने बैंक से लॉकर प्राप्त किया जिसमें बैंक प्रबन्धक द्वारा लॉकर खोल कर कुछ बहुमूल्य वस्तुयें प्राप्त कर ली गयी । लॉकर किराये पर प्राप्त करने वाले व्यक्ति, सोहन लाल ने बहुमूल्य वस्तुओं की क्षतिपूर्ति के लिये वाद प्रस्तुत किया । न्यायालय द्वारा बैंक को प्रबन्धक के कार्य के लिये उत्तरदायी ठहराया गया तथा बैंक को क्षतिपूर्ति का उत्तरदायी बतलाया गया ।

इसमें बैंक द्वारा नामांकन की सुविधा भी प्रदान की जाती है ।

---

1. National Bank of Lahore Vs. Sohanlal Sehgal and Others.

सुरक्षित लॉकर सुविधा जमा कक्ष
(Safe Deposit Vault)

इस सुविधा के अन्तर्गत, बैंक ग्राहक की वस्तुयें लॉकर में रखते हैं जिसकी एक चाबी (Key) ग्राहक के पास होती है और एक बैंक के पास। इसके लिये बैंक ग्राहक से कुछ कमीशन अथवा किराया (Commission or Locker Rent) प्राप्त करते हैं। यह सुविधा कोई भी व्यक्ति प्राप्त कर सकता है, परन्तु बैंक व्यवहार में, यह सुविधा अपने ग्राहकों को ही प्रदान करते हैं। लॉकर एक अथवा एक से अधिक व्यक्तियों के नाम में लिया जा सकता है। यदि यह एक से अधिक व्यक्तियों के नाम में है तब, बैंक को चाहिये कि वह उन व्यक्तियों से निर्देश प्राप्त करे कि लॉकर के परिचालन (Operate) का अधिकार किन-किन व्यक्तियों को है। इस स्थिति में, यदि कोई नया निर्देश अथवा परिवर्तन किया जाता है, तब वह निर्देश समस्त धारकों को सहमति से दिया जाना चाहिये।

बैंक अपनी पुस्तकों में लॉकर रजिस्टर (Locker Register) रखते हैं जिसमें लॉकर एवं लॉकर के धारक के सम्बन्ध में समस्त विवरण लिखा जाता है। लॉकर का संचालन करने से पूर्व, इस रजिस्टर में ग्राहक के हस्ताक्षर होने अत्यन्त आवश्यक हैं। यदि लॉकर की चाबी खो जाती है, तब उस लॉकर को उसके धारक के समक्ष तोड़ा जायेगा और उसके पश्चात् उस लॉकर को पुन. किराये पर देने के लिये नया ताला (New Lock) लगवाया जायेगा। यही स्थिति, ग्राहक द्वारा लॉकर छोड़ने (Surrender) की स्थिति में उत्पन्न होती है। इस सुविधा के अन्तर्गत, ग्राहक और बैंक के सम्बन्ध पट्टाकर्त्ता (Lessee) एवं पट्टाग्रहीता (Lessor) के होते हैं।

बैंकों को लॉकर में रखी गयी वस्तुओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु, निम्नलिखित परिस्थितियों में बैंकों को लॉकर में रखी गयी वस्तुओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक होता है—

(i) जब लॉकर के धारक की मृत्यु हो जाती है तथा उसके विधिक उत्तराधिकारी लॉकर में रखी गयी वस्तुओं की मांग करते हैं। ऐसी स्थिति में बैंकों को मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों का परिचय प्राप्त करना चाहिये तथा लॉकर में रखी वस्तुओं की गणना गवाहों (Witnesses) के समक्ष करनी चाहिये।

(ii) बैंकों को धारक द्वारा किराया न चुकाने की स्थिति में लॉकर खाली करवाना है। इस स्थिति में बैंक को दो स्वतन्त्र गवाहों के समक्ष लॉकर में रखी वस्तुओं की जांच एवं गणना करनी चाहिये।

(iii) जब विधिक रूप में अधिकृत अधिकारी लॉकर की जांच करना चाहता है तथा लॉकर में रखी वस्तुओं को कब्जे में, प्राप्त करना चाहता है तब स्वतन्त्र गवाह के समक्ष लॉकर खोलना चाहिये और बैंक को भी प्राप्त वस्तुओं की सूची का अध्ययन करके उस पर हस्ताक्षर करने चाहियें।

अतः लॉकर सुविधा प्रदान करते समय बैंकों को विशेष सावधानियां ध्यान में रखनी चाहियें।

व्यापारी बैंकिंग

(Merchant Banking)

व्यापारी बैंकिंग पाश्चात्य देशों की देन है। भारतवर्ष में इसका प्रयोग नवीनतम है। इसके अन्तर्गत बैंक अपने स्वभाव के अनुरूप कार्य नहीं करते हैं अर्थात् बैंक रुपया जमा करने और ऋण देने के अतिरिक्त ग्राहकों को सलाहकारी (Advisory) सुविधायें भी प्रदान करते हैं। इसमें बैंक नये उद्योगों की स्थापना तथा वर्तमान स्थापित उद्योगों के विस्तार के लिये उन्हें सलाह देने एवं वित्तीय सहायता प्रदान करने का कार्य करते हैं। व्यापारी बैंकिंग के अन्तर्गत बैंक निम्नलिखित कार्य करते हैं —

(1) बैंक नये संस्थानों को स्थापना कराने में सहायता करते हैं। वे उपक्रम की संरचना, स्थानीयकरण एवं वित्त सम्बन्धी समस्याओं का समाधान करने के लिये अपनी अमूल्य सेवायें प्रदान करते हैं।

(2) बैंक सरकार से अनुमति लेने का कार्य करते हैं। यदि किसी उपक्रम की स्थापना से पूर्व सरकार को सहमति आवश्यक है तब यह कार्य बैंक करते हैं।

(3) बैंक विदेशों में संयुक्त उपक्रम की स्थापना कराने में मदद करते हैं। वे विदेशी आवश्यकताओं के सम्बन्ध में सूचनायें प्रदान करते हैं।

(4) बैंक व्यापारी संस्थानों के लिये स्थायी पूँजी एवं कार्यशील पूँजी (Working Capital) को जुटाने का प्रबन्ध करते हैं। इसके लिये, वे अंश ऋण-पत्रों को जारी करने अथवा अभिगोपन (Under Writing) करने का प्रबन्ध करते हैं।

(5) बैंक उपक्रमों की स्थापना में तकनीकी एवं आर्थिक पहलू पर अपनी सलाह प्रदान करते हैं।

(6) बैंक संस्थानों को दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध कराने में सहयोग देते हैं।

इस प्रकार विदित होता है कि व्यापारी बैंकिंग के अन्तर्गत बैंक ग्राहकों को नये उपक्रम की स्थापना में सहायता प्रदान करते हैं तथा पूर्व स्थापित उपक्रमों के विस्तार में सहयोग देते हैं। भारतवर्ष में इस बैंकिंग प्रथा का प्रयोग कम मात्रा में विकसित है। यहाँ पर, स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ही यह सुविधा प्रदान करता है। नि:सन्देह, भविष्य में व्यापारी बैंकिंग अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर सकती है।

निविदा बॉण्ड एवं निष्पादित गारन्टी

(Bid Bond and Performance Guarantee)

आधुनिक बैंकिंग प्रणाली के अन्तर्गत बैंक अपने ग्राहकों को अमूल्य सेवायें प्रदान करते हैं। निविदा बॉण्ड (Bid Bond) से आशय ऐसी गारन्टी से है जिसके अन्तर्गत बैंक ग्राहक की ओर से निविदा पर दी जाने वाली राशि के स्थान पर अपनी जमानत देते हैं कि अमुक व्यक्ति अनुबन्ध पूरा करने में समर्थ है। जब व्यापारी

अनुबन्ध अथवा ठेका लेता है तब उसे प्रारम्भ में कुछ नकद राशि निविदा (Tender) के रूप में जमा करानी पड़ती है। परन्तु आधुनिक युग में बैंक अपने ग्राहक की ओर से जमानत देते हैं जिसे निविदा बॉड़ कहा जाता है। यह राशि साधारणतया अनुबन्ध के कुल मूल्य का **2** से **5** प्रतिशत होती है।

निष्पादित गारन्टी (Performance Guarantee) से आशय ऐसी गारन्टी से है जो कि बैंक द्वारा ग्राहक की ओर से अनुबन्ध पूरा करने हेतु दी जाती है। जब व्यापारी का अनुबन्ध स्वीकार हो जाता है तब व्यापारी से कुछ प्रतिशत धन अग्रिम रूप में लिया जाता है ताकि व्यापारी अपना अनुबन्ध शर्तों के अधीन पूरा कर सके। बैंक इस धन के स्थान पर, अपनी गारन्टी देते हैं जिसमें ग्राहक द्वारा अनुबन्ध पूरा किया जाने का आश्वासन होता है। यदि ग्राहक अपना अनुबन्ध पूरा करने में असमर्थ रहता है तब बैंक उत्तरदायी होते हैं और उन्हें अपनी गारन्टी की सीमा तक, धन का भुगतान करना पड़ता है। इस सुविधा का सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि व्यापारी को नकद रुपया नहीं जमा करना पड़ता है। विदेशी व्यापार के अन्तर्गत, माल की सुपुर्दगी के सम्बन्ध में बैंक द्वारा दी जाने वाली निष्पादित गारन्टी निर्यात ऋण एवं गारन्टी निगम (Export Credit and Guarantee Corporation) के माध्यम से दी जानी चाहिये। इसके अन्तर्गत, बैंक का **90** प्रतिशत जोखिम निगम द्वारा वहन किया जाता है।

बैंक द्वारा निष्पादित गारन्टी दिये जाने पर, बैंक ग्राहक से कुछ प्रतिशत राशि नकद अथवा माल के रूप अपने पास जमा करवाते हैं। परन्तु यदि ग्राहक की आर्थिक स्थिति सन्तोषजनक है तब बैंक मार्जिन राशि (Margin Money) की माँग नहीं करते हैं। चाहे अनुबन्ध पूरा न होने का कोई भी कारण हो, परन्तु बैंक अपनी गारन्टी के लिये बाध्य हैं। इसकी पुष्टि **स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया नामक विवाद**[1] में की गयी। प्रस्तुत वाद में स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ने टैक्सटाइल मशीनरी कारपोरेशन (TEXMACO) की ओर से स्टेट ट्रेडिंग निगम को निष्पादित गारन्टी प्रदान की जिसमें स्टेट बैंक को बिना किसी विवाद के निगम की गारन्टी की राशि माँग पर देय थी। टैक्सटाइल मशीनरी कारपोरेशन ने कलकत्ता हाईकोर्ट में अपील प्रस्तुत की कि बैंक निगम को प्रत्याभूति की राशि भुगतान न करे, इस आशय का आदेश पारित किया जाये। परन्तु उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में स्पष्ट किया कि बैंक निगम को गारन्टी की राशि भुगतान करने के लिये बाध्य है तथा बैंक का स्टेट ट्रेडिंग निगम एवं टैक्सटाइल मशीनरी कारपोरेशन के विवाद से सम्बन्ध नहीं रखता है।

अतः यदि निष्पादित प्रत्याभूति में इस आशय का प्रावधान है कि बैंक पक्षकारों के विवादास्पद मामले में प्रत्याभूति की राशि भुगतान करने के लिये बाध्य हैं तब बैंक प्रत्याभूति की राशि का भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है।

---

1. TEXMACO Ltd. Vs. State Bank of India (A. I. R. 1979)

(SOLVED PROBLEMS)

1. एक व्यक्ति 5,000 रुपये का ड्राफ्ट शाखा में प्रस्तुत करता है जो कि उसी बैंक की विदेशी शाखा द्वारा जारी किया गया है। ग्राहक इसके नकद भुगतान की प्रार्थना करता है। ड्राफ्ट रेखांकित नहीं है। वह व्यक्ति जो ड्राफ्ट का प्रापक होने का दावा करता है, उसी बैंक के खाताधारी से अपना परिचय (Identification) करवाता है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A person calls at a branch office and presents a demand draft for Rs. 5,000 issued by up country branch of the same bank and request for payment a cross the counter in cash. The D. D. is uncrossed. The person who claims to be payee of the D. D. offers to provide introduction/identification from an account holder of the same branch. *(C. A. I. I. B. May, 1984)*

हल—इस समस्या के अन्तर्गत बैंक को ड्राफ्ट का भुगतान काउन्टर (Counter) पर करना होगा चूंकि ड्राफ्ट रेखांकित नही है। ड्राफ्ट एक आदेश पत्र है जिसका भुगतान प्रापक के आदेशानुसार किया जाता है। प्रस्तुत समस्या के अन्तर्गत प्रापक अपना परिचय बैंक के खाताधारी द्वारा करवाता है। अत: बैंक को ड्राफ्ट का भुगतान करना चाहिये।

2. एक ड्राफ्ट बैंक की अन्य शाखा द्वारा 50,000 रुपये का जारी किया गया। जिसे समाशोधन (Clearing) में प्रस्तुत किया गया। ड्राफ्ट के भुगतान की जाँच करते समय पाया गया कि ड्राफ्ट पर जारी करने वाली शाखा के मैनेजर अथवा लेखाकार के हस्ताक्षर नहीं हैं। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A demand draft drawn by another branch of your bank for Rs. 50,000 (Fifty thousand only) is presented for payment in the clearing. When you are scrutinising the draft for payment you noticed that subject demand draft does not bear any signature neither of the manager nor of the accountant of the issuing branch.

How will you deal with this demand draft ?

(C. A. I. I. B. Nov. 1983)

हल—प्रस्तुत समस्या के अन्तर्गत ड्राफ्ट पर मैनेजर अथवा लेखाकार के हस्ताक्षर नहीं हैं। अत: बैंक इस ड्राफ्ट का भुगतान करने से रोक सकता है। ड्राफ्ट का भुगतान करते समय रिजर्व बैंक के निर्देशों के अधीन, ड्राफ्ट पर अधिकृत हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं। परन्तु, यदि बैंक चाहे तब वह जारी करने वाली शाखा से सम्पर्क स्थापित करके, इस ड्राफ्ट का पुष्टिकरण (Confirmation) करवा सकता है एवं ड्राफ्ट का भुगतान कर सकता है। यह उसी स्थिति में सम्भव है जबकि जारी करने

वाली शाखा से सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है अन्यथा समाशोधन के माध्यम से प्रस्तुत ड्राफ्ट को उसी दिन वापिस करना पड़ता है।

3. एक ड्राफ्ट 50,000 रुपये का क्रय किया जाता है जो वैंक की बम्बई शाखा पर देय है। कुछ दिन बाद ड्राफ्ट का क्रेता वैंक को सूचना देता है ड्राफ्ट मार्ग में खो गया है। अतः वह वैंक से दूसरे ड्राफ्ट की अनुलिपि जारी करने की प्रार्थना करता है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A demand draft for Rs. 50,000 was purchased payable on Bombay Branch. After some days it was reported by the purchaser of draft that draft had been lost in transit. Therefore, he requests the Bank to issue a duplicate draft. Please advice accordingly.

हल—इस स्थिति में, सर्वप्रथम वैंक सूचना प्राप्त करते ही अपनी अदाकर्त्ता शाखा को वैंक ड्राफ्ट खोने (Lost) की सूचना भेजेगा एवं ड्राफ्ट का भुगतान न होने की स्थिति में भुगतान न करने का निर्देश देगा। इसके पश्चात्, जब अदाकर्त्ता शाखा से ड्राफ्ट के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त हो जायेगी कि ड्राफ्ट का भुगतान नहीं हुआ है, तब जारी करने वाली शाखा, ड्राफ्ट के क्रेता से, क्षतिपूरक बांड (Indemnity Bond) पर जमानत लेगी कि प्रत्येक हानि के लिये वह स्वयं उत्तरदायी होगा और इसके पश्चात् वह ड्राफ्ट की अनुलिपि (Duplicate) जारी कर सकती है।

4. 5 अगस्त 1981 को एक वैंक की दिल्ली शाखा से एक ड्राफ्ट 51,000 रुपये का रूप चन्द गुप्ता के पक्ष में, बम्बई शाखा पर जारी किया गया। 6 अगस्त 1981 को प्रापक द्वारा ड्राफ्ट खिड़की पर भुगतान के लिये प्रस्तुत किया गया। परिचय के उद्देश्य से उस व्यक्ति ने अपने हस्ताक्षर (दिल्ली शाखा के उस अधिकारी द्वारा प्रमाणित कराये हुये) प्रस्तुत किये, जिस अधिकारी ने, ड्राफ्ट पर हस्ताक्षर किये हुये हैं। ये दोनों हस्ताक्षर समान हैं परन्तु बम्बई शाखा के पास रखे हुये रिकार्ड से अधिकारी के हस्ताक्षर नहीं मिलते हैं। बम्बई शाखा द्वारा ड्राफ्ट की सूचना (Advice) प्राप्त नहीं हुयी है। प्रापक तुरन्त भुगतान की मांग करता है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A demand draft for Rs. 51,000 in favour of Rupchand Gupta was issued on 5th August 1981 by Delhi branch of a bank on its Bombay office. The draft is presented on 6th August 1981 for cash payment at the counter by the payee. For identification he presented his signature on the letter-head of the Delhi branch duly verified by the officer who signed the draft along with the rubber stamp of the branch. Although the signatures on the letter-head and the draft are identical, they differ considerable from the specimens on record of the Bombay branch. The advice for the issue of the draft is not

received by the branch. The payee insists on immediate payment How will you deal in this condition.

(C. A. I. I. B. Nov. 1981)

हल—प्रस्तुत समस्या मे प्रापक के हस्ताक्षर प्रमाणित हैं। अतः इसका भुगतान किया जा सकता था परन्तु चूंकि ड्राफ्ट पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी के हस्ताक्षर भुगतान करने वाली शाखा के पास रखे नमूने के हस्ताक्षर (Specimen Signature) से मिलान नही करते हैं। अतः बैंक को चाहिये कि वह जारी करने वाली शाखा से टेलीफोन पर सम्पर्क स्थापित करे और इस ड्राफ्ट का पुष्टिकरण (Confirmation) प्राप्त करे। यदि यह सम्भव नही है तब ड्राफ्ट का भुगतान नहीं करना चाहिए।

5. X द्वारा बैंक एक पार्सल प्राप्त करता है, जिसे भुगतान पर Y को दिया जाना है। Y भुगतान करके पार्सल प्राप्त कर लेता है। Y तुरन्त बैंक आता है और बतलाता है कि पार्सल में पत्थर आदि हैं, अत. प्रार्थना करता है कि—

(i) बैंक X को धन नहीं भेजे,

(ii) यदि धन बैंक ड्राफ्ट द्वारा भेजा जा चुका है, तब उस ड्राफ्ट का भुगतान रोक दिया जावे।

You have received a parcel from a customer X to be delivered to Y against payment. Y makes the payment and takes the delivery of the parcel. Y immediately comes to the bank branch and states that on opening the parcel, he has found stones and asks you—

(i) Not to remit the amount to X,

(ii) If the amount is already remitted by a demand draft to stop payment of the draft. *(C. A. I. I. B. May. 1977)*

हल—बैंक केवल प्रपत्रो (Documents) में व्यवहार करता है। उसका माल से कोई सम्बन्ध नही होता है। उपरोक्त स्थिति में, बैंक X का भुगतान नहीं रोक सकता है। यदि उसने ड्राफ्ट द्वारा धन भेज दिया है तब भी, वह ड्राफ्ट का भुगतान नहीं रोक सकता है चूंकि ड्राफ्ट के क्रेता को ड्राफ्ट का भुगतान रोकने का अधिकार नही है। ड्राफ्ट का वास्तविक धारक प्रापक (Payee) होता है। अतः प्रापक ही ड्राफ्ट का भुगतान रोक सकता है अथवा भुगतान प्राप्त कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि तुकाराम बापूजी निकम बनाम बेलगांव बैंक लिमिटेड नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमे स्पष्ट किया गया कि ड्राफ्ट के क्रेता एवं बैंक के बीच देनदार एवं लेनदार के सम्बन्ध होते हैं तथा ड्राफ्ट का क्रेता ड्राफ्ट प्रापक को सुपुर्द करने से पूर्व किसी भी समय भुगतान प्राप्त कर सकता है। परन्तु क्रेता द्वारा ड्राफ्ट प्रापक को सुपुर्द करने के उद्देश्य से डाक द्वारा भेजने पर, डाकघर ड्राफ्ट के प्रापक का अभिकर्ता समझा जाता है तथा बैंक ड्राफ्ट का भुगतान उस समय तक नही रोक सकता है जब तक कि उसे प्रस्तुतकर्ता पर सन्देह नही है।

1. Tukaram Bapuji Vs Belgaum Bank Ltd. (A. I. R. 1976).

अत: वैंक को 4 की प्रार्थना स्वीकार नहीं करनी चाहिए।

6. आकस्मिक बाढ़ के कारण एक बैंक की शाखा कुछ दिनों तक बाढ़ के पानी में रहती है। जब बाढ़ समाप्त होती है तथा सफाई का कार्य किया जाता है तब ज्ञात होता है कि—

(i) जल लॉकर के अन्दर चला गया है और लॉकरधारियों द्वारा रखी गयी वस्तुयें खराब हो गयी हैं।

(ii) यह भी ज्ञात प्राप्त हुआ है कि एक ग्राहक द्वारा सील पैकेट जो संरक्षण के लिये प्रदान किया गया था, त्रुटि से किसी अन्य व्यक्ति को प्रदान कर दिया गया गया है।

कृपया दोनों परिस्थितियों में बैंक का दायित्व स्पष्ट कीजिये।

On account of unprecedented floods, premises of a branch of a bank were under water for a few days. When floods receded and work of clearing up was taken on hand, following was noticed—

(i) Water had entered into safe deposit lockers and articles deposited by locker holders were damaged.

(ii) It was also incidentally noticed that one sealed. packet deposited by a customer for safe custody had been erroneously delivered to a wrong person.

Please discuss Bank's liability in both cases.

(C. A. I. I. B. Part II Nov. 1979)

हल—(i) उपरोक्त स्थिति में वैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है चूंकि बाढ़ आने की घटना असामान्य (Abnormal) प्रकृति की है जो वैंक के नियन्त्रण से वाहर है। इस स्थिति में वैंक तथा ग्राहक के सम्वन्ध निक्षेपी व निक्षेपकर्त्ता (Bailee and Bailor) के होते हैं जिसमें वैंक केवल लापरवाही के कारण हुयी क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है। अतः वैंक उत्तरदायी नहीं है।

(ii) इस स्थिति में, वैंक क्षतिपूर्ति के लिये पूर्ण उत्तरदायी है। इसमें बैंक ने संरक्षित वस्तु त्रुटिपूर्ण ढंग में किसी अन्य व्यक्ति को सुपुर्द की है जिसके परिणामस्वरूप वैंक लापरवाही का दोषी है। अत: वैंक ग्राहक के प्रति उत्तरदायी है।

7. मिस्टर A एक सीलड पैकेट संरक्षण में जमा के लिये बैंक को देता है। पैकेट A की पुत्री के नाम में है जो A की मृत्यु के 3 वर्ष बाद पुत्री को सुपुर्द किया जाना है। बैंक पैकेट एवं निर्देश स्वीकार कर लेता है। A की मृत्यु पर उसकी वसीयत के अनुसार नियुक्त निष्पादक बैंक से पैकेट का दावा करता है। बैंक की क्या स्थिति है?

Mr. A deposits a sealed packet for safe custody in a Bank. The packet is addressed to his daughter and it is to be handed over

to his daughter three years after his death. Bank accepts the item **and the instructions. On the death of A Executor appointed under his will claim this item from the Bank. What is the position of the Bank ?**

हल—उपरोक्त स्थिति मे, बैंक को संरक्षण के लिये वस्तु प्राप्त नही करनी चाहिए थी चूंकि इसमे 'अ' ने वस्तु पर अधिकार अपनी मृत्यु के तीन वर्ष बाद अपनी पुत्री को प्रदान करने के लिये निर्देश दिया है। सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम (Transfer of Property Act) के अनुसार, कोई भी सम्पत्ति बिना स्वामित्व के नहीं रहनी चाहिए और यदि इस प्रकार कोई अन्तरण किया जाता है तब वह अन्तरण अवैध (Illegal) होगा। अतः उपरोक्त स्थिति में, सम्पत्ति का स्वामित्व मृत्यु के पश्चात् तीन वर्ष तक नही रहेगा। इसके अतिरिक्त, बैंक नामांकन (Nomination) सम्बन्धी निर्देश प्राप्त नहीं करता है। इसके लिये न्यायालय सेव वसीयत (Will) ही मान्य होती है। अतः बैंक को पैकेट स्वीकार नही करना चाहिए था। वसीयत के आधीन नियुक्त *निष्पादक को बैंक से पैकेट वापिस प्राप्त करने का अधिकार है। वर्तमान समय मे,* नामांकन की सुविधायें बैंकों मे प्रदान की जाने लगी हैं। जिसमें बैंक मृत्यु के पश्चात् वस्तु की सुपुर्दगी किसी नामांकित व्यक्ति को कर सकता है। परन्तु उपरोक्त निर्देश स्वीकार्य नही हो सकता है।

8. निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे ?

What will you do in the following conditions—

(i) A safe deposit locker has been rented out to Mr. 'A' on 1st March 1985. Mr. A' comes to operate the locker. He leaves the office and in a hurry he forgets to lock the locker and leave the key in locker itself. This is noticed by the peon of the branch and he reports this matter to you.

(ii) Mr. 'S' Purchased a draft of Rs. 50,000 in favour of Mr. 'B' and he sent this draft by a registered post to Mr. B. You *are now informed that the draft has been lost in transit and there-*fore you are requested to stop the payment of the draft when presented for payment and you are further requested to issue to him a duplicate draft for the same amount.

हल—(i) उपरोक्त स्थिति मे चपरासी द्वारा सूचना मिलते ही बैंक का उत्तरदायी अधिकारी बैंक के किसी अन्य सम्मानित ग्राहक के समक्ष सुरक्षित जमा कक्ष (Locker) का ताला बन्द करेगा तथा उस कक्ष की चाबी (Key) बैंक के उत्तरदायी अधिकारी के पास ही सुरक्षित रहेगी। इसके पश्चात् सुरक्षित जमा कक्ष के स्वामी (Owner) को इस सम्बन्ध में सूचित किया जायेगा। कक्ष के स्वामी को कर

उसे कक्ष की चाबी सुपुर्द की जायेगी परन्तु इससे पूर्व उससे इस समस्त कार्यवाही के सम्बन्ध में एक लिखित पत्र लिया जायेगा कि कक्ष में समस्त वस्तुयें सुरक्षित स्थिति में प्राप्त की हैं।

(ii) ड्राफ्ट के क्रेता द्वारा ड्राफ्ट खोने की सूचना मिलते ही बैंक अदाकर्त्ता (Drawee) शाखा को इस आशय की सूचना भेजेगा तथा अदाकर्त्ता शाखा से ड्राफ्ट के भुगतान न होने का पुष्टिकरण प्राप्त करने पर बैंक द्वारा क्रेता से क्षतिपूरक बन्धक (Indemnity Bond) प्राप्त करके अनुलिपि ड्राफ्ट (Duplicate Draft) जारी किया जा सकता है।

9. X तथा Y एक बॉक्स के संयुक्त स्वामी हैं जिसे B बैंक में संरक्षण के लिये जमा किया गया है। X बैंक को लिखता है कि यह बॉक्स किसी अन्य बैंक को संरक्षण के लिये सुपुर्द कर दिया जाये। आप B बैंक को किस प्रकार सलाह देंगे ?

X and Y being the joint owner of a box leave the box with a bank B for safe custody. X alone then writes to bank B to deliver the box to another bank for safe custody. How will you advise to bank B ? *(C. A. I. I. B. Part II Nov., 1981)*

हल—उपरोक्त स्थिति में, X की प्रार्थना स्वीकार नहीं की जायेगी चूंकि संरक्षण में रखी गयी वस्तु संयुक्त नाम में है। अतः कोई भी निर्देश संयुक्त रूप में दिया जाना चाहिए। इस स्थिति में, Y द्वारा सहमति प्रदान नहीं की गयी है। अतः X की प्रार्थना स्वीकार नहीं की जायेगी।

निम्नलिखित स्थिति में आप क्या करेंगे ?

What will you do in the following situation—

(i) On 27th August 1985, a D. D. No. 56789 dated 16 th August 1985 for Rs. 5,000 drawn on ABC Bank Ltd., Fort Barnch is received (by the drawee BR) through clearing.

The Department reports to the Manager that earlier a letter was received from issuing BR stating that the subject D.D. No. 56789 is stolen and utmost caution should be exercised if and when the D. D. is presented. The issuing Branch had also telephoned on the previous day to remind and caution the drawee BR.

It is not possible to reach the presenting BRANCH/BANK situated in distant suburb as its telephone is not working nor through a messenger.

The Manager of drawee BR. is faced with a dilemma as payment of Demand Draft cannot be stopped under law and particularly when presenting Bank had certified that "Payee's a/c is

credited". On the other hand if the D. D. is paid after repeated caution and warning complications can arise. Under Clearing House rules decision is required to be taken in good time. Please state briefly in two or three sentences what decision the Manager of ABC Bank Ltd. Fort Branch (the drawee branch) should take regarding the subject Demand Draft presented through clearing.

(C. A. I I. B. Sept. 1985)

(ii) 'A' the beneficiary of a draft request the bank to issue a duplicate draft for the reason that original has been lost in the transit.

(iii) 'A' the purchases of a draft for Rs. 2,000/- favouring 'Muncipal Corporation A/c A wants to cancel the same as his tender has not been accepted and the draft has been returned. Bank find on the reverse the rubber stamp of Muncipal Corporation affixed without any signature.

(iv) A draft favouring X and Y presented for payment but only Y's signature is indentified.

(v) A draft favouring XYZ Ltd Co. presents for cash payment by a Director who duly discharged the draft on behalf of Company.

(vi) A draft favouring ABC Company presents by its partner for cash payment. Draft is discharged by the said partner on behalf of Company.

हल—(i) उपरोक्त स्थिति में, अदाकर्ता शाखा के प्रबन्धक को ड्राफ्ट वापिस करना चाहिए तथा वापसी का कारण 'ड्राफ्ट खोया गया सूचित किया हुआ है' (Draft Reported Lost) होना चाहिए।

(ii) उपरोक्त स्थिति में, ड्राफ्ट का प्रापक (Payee) ड्राफ्ट का हितग्राही होता है। ड्राफ्ट का वास्तविक स्वामी प्रापक ही होता है। प्रापक के आवेदन पर ड्राफ्ट की दूसरी प्रति जारी की जा सकती है परन्तु इससे पूर्व बैंक को ड्राफ्ट के क्रेता की सहमति प्राप्त करनी चाहिए। इस आशय के लिये बैंक को क्रेता को सूचित करना चाहिए कि ड्राफ्ट के प्रापक द्वारा ड्राफ्ट की अनुलिपि (Duplicate Copy) के लिये आवेदन किया गया है और यदि क्रेता को कोई आपत्ति है तब बैंक को तुरन्त सूचित करे। क्रेता की सहमति प्राप्त होने पर ड्राफ्ट की दूसरी प्रति जारी की जा सकती है।

(iii) उपरोक्त स्थिति में A को ड्राफ्ट रद्द कराने का अधिकार नहीं है चूंकि ड्राफ्ट के प्रापक द्वारा पूर्ण उन्मुक्ति (Discharge) नहीं की गयी है। ड्राफ्ट पर निगम के अधिकारी के हस्ताक्षर नहीं हैं। अतः इसे उचित उन्मुक्ति नहीं समझा जा सकता है। यदि बैंक द्वारा ड्राफ्ट का भुगतान कर दिया जाता है तब वह लापरवाही का दोषी समझा जायेगा। यद्यपि ड्राफ्ट का क्रेता प्रापक की सहमति के अभाव में ड्राफ्ट रद्द करा सकता है परन्तु क्रेता को यह अधिकार उस समय तक होता है जब तक कि ड्राफ्ट की सुपुर्दगी प्रापक को नहीं की गयी है। उपरोक्त स्थिति में ड्राफ्ट के पीछे प्रापक की मोहर है जो इस तथ्य को प्रगट करती है कि ड्राफ्ट प्रापक को सुपुर्द किया गया है। अतः बैंक को प्रापक से उचित उन्मुक्ति प्राप्त करनी चाहिए।

(iv) उपरोक्त स्थिति में ड्राफ्ट संयुक्त नाम में जारी किया गया है। इसमें दोनों व्यक्तियों के हस्ताक्षर प्रमाणित होने चाहिए। बैंक के पास Y के हस्ताक्षर प्रमाणित हैं। अतः बैंक को Y से X के हस्ताक्षर प्रमाणित करवाने चाहिए तथा इसके पश्चात् ड्राफ्ट का भुगतान किया जा सकता है।

(v) इस स्थिति में ड्राफ्ट कम्पनी के नाम में जारी किया गया है। अतः इसका भुगतान कम्पनी के खाते के माध्यम से ही किया जाना चाहिए अन्यथा बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन (Conversion) का दोषी समझा जायेगा।

(vi) इस स्थिति में ड्राफ्ट फर्म के नाम में जारी किया गया है तथा ड्राफ्ट के भुगतान की मांग फर्म के साझेदार द्वारा फर्म की ओर से की गयी है। साझेदार द्वारा ड्राफ्ट की नकद भुगतान की मांग करने पर, बैंक द्वारा भुगतान किया जा सकता है चूंकि फर्म एवं साझेदारों का समान अस्तित्व होता है तथा साझेदार को फर्म की ओर से रुपया निकालने का अधिकार होता है। परन्तु, यदि साझेदार द्वारा उपरोक्त ड्राफ्ट अपने खाते में जमा किया जाता है तब बैंक को पूर्ण सावधानी बरतनी चाहिए और इसकी सूचना फर्म के अन्य साझेदारों को भेजनी चाहिए।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बातें
(Important Points to the Remembered)

(1) बैंक का अभिप्राय उस संस्था से है जो निक्षेप स्वीकार करने एवं ऋण प्रदान करने का कार्य करती है।

(2) बैंकों के मुख्य कार्यों में निक्षेप स्वीकार करना एवं रुपया उधार देना सम्मिलित किया जाता है।

(3) बैंकों के सहायक कार्यों में चैकों का संग्रहण, एजेन्सी सम्बन्धी कार्य, ट्रस्टी के रूप में कार्य, धन का हस्तांतरण एवं अंश व ऋणपत्रों का अभिगोपन आदि सम्मिलित किये जाते हैं।

प्रश्न
(Questions)

1. बैंक की परिभाषा दीजिये। आधुनिक वाणिज्य बैंकों के प्रमुख व सहायक कार्य विस्तार पूर्वक समझाइये।

Define Bank. Discuss in detail, the main and subsidiary functions of Modern Commercial Banks. *(Delhi B. Com.)*

2. बैंक और लॉकर लेने वाले व्यक्ति के बीच वैधानिक स्थिति का वर्णन कीजिये। लॉकर खोलने के लिए अपनायी जाने वाली पद्धति का वर्णन कीजिये।

What is the legal relationship between the bank and the person who hire safe deposit locker from the bank. Describe the procedure to be followed in regard to safe deposit locker transactions. *(C. A. I. I. B. Nov. 1979)*

3. बैंक अपने ग्राहकों को रुपया प्राप्त करने एव रुपया उधार देने के अतिरिक्त अन्य सहायक सेवायें भी प्रदान करता है। किन्ही महत्वपूर्ण चार कार्यों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।

Besides accepting deposit and making advances, Bank render certain subsidiary services to their customer. Describe four of the most important services. *(C. A. I. I. B. Nov. 1981)*

4. बैंकों के कार्य एवं उनके द्वारा प्राप्त होने वाली सेवाओं का वर्णन कीजिये।

Discuss the functions and services that are rendered by Banks. *(Gorakhpur B. Com. 1983)*

5. बैंक ड्राफ्ट एवं यात्री चैक में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

Distinquish between Bank Draft and Traveller's Cheque.
(C. A.-I. I. B. Aug. 1976)



2 भारतीय बैंकिंग पद्धति
(INDIAN BANKING SYSTEM)

राष्ट्र के बहुमुखी विकास के लिये नियोजित अर्थव्यवस्था अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। नियोजित अर्थव्यवस्था की सफलता राष्ट्र के संसाधनों पर आश्रित होती है। प्रत्येक राष्ट्र के संसाधनों में वित्तीय स्रोत विशिष्ट महत्व रखते हैं। राष्ट्र के वित्तीय स्रोत, उसके पूंजी बाजार पर निर्भर होते हैं। अतः राष्ट्र का विकास सुदृढ़ पूंजी बाजार पर निर्भर करता है।

भारतवर्ष में मुद्रा बाजार में बैंकिंग पद्धति का विशेष योगदान है। भारतीय बैंकिंग पद्धति में संगठित एवं असंगठित क्षेत्र सम्मिलित हैं। भारतीय जनसंख्या का लगभग 70 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी असंगठित बैंकिंग पद्धति पायी जाती है। जिसमें साहूकार एवं देशी बैंकरों का आधिपत्य है। वे इनकी नीतियां एवं नियम पृथक-पृथक होते हैं तथा ये ग्रामीण क्षेत्र में ऊँची ब्याजदरों पर रुपया प्रदान करके, भारतीय ग्रामीण जनसंख्या का शोषण करते हैं। इसके विपरीत, संगठित मुद्रा बाजार में व्यापारिक बैंक, सहकारी बैंक तथा क्षत्रीय ग्रामीण बैंक अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं। इन संस्थाओं पर नियन्त्रण एवं नियमन का कार्य देश के केन्द्रीय बैंक द्वारा किया जाता है। केन्द्रीय बैंक की स्थापना वर्ष 1934 में रिजर्व बैंक अधिनियम के आधीन की गयी तथा बैंक ने 1 अप्रैल, 1935 से अपना कार्य सचालन प्रारम्भ कर दिया। बैंक का मुख्य कार्य सरकार के अभिकर्त्ता एवं बैंकों के बैंक के रूप में सेवायें प्रदान करता है। रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों पर नियन्त्रण करता है तथा देश की अर्थव्यवस्था नियन्त्रित करने के उद्देश्य से साख नियन्त्रण एवं साख विस्तार का कार्य करता हैं।

भारत सरकार द्वारा संगठित मुद्रा बाजार का सुनियोजित विकास करने हेतु विभिन्न कार्य किये गये हैं। देश में आर्थिक औद्योगिक एवं कृषि का विकास करने के लिये, प्रत्येक क्षेत्र में पृथक-पृथक वित्तीय संस्थाओं का विकास किया गया है। औद्योगिक क्षेत्र में तीव्र गति से विकास करने हेतु सावधि ऋण प्रदान करने के लिये विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं का निर्माण किया गया है। उदाहरणार्थ—औद्योगिक विकास बैंक (IDBI), औद्योगिक वित्त निगम (IFCI), औद्योगिक ऋण एवं विनियोग निगम (ICICI), राज्य वित्त निगम (SFC), राज्य औद्योगिक विकास निगम (SIDC) तथा भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण निगम (IRCI)। ये संस्थायें औद्योगिक वित्त प्रदान करने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती हैं।

भारतवर्ष में कृषि क्षेत्र का विकास करने हेतु विभिन्न योजनायें लागू की

गयी हैं। कृषि क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में रियायती ब्याज दरों पर वित्त उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से विभिन्न वित्तीय संस्थाओं को प्रोत्साहन दिया गया है। इस क्षेत्र में व्यापारिक बैंकों (Commercial Banks) द्वारा प्रशंसनीय भूमिका अदा की गयी है। व्यापारिक बैंक अपने कुल ऋणों का लगभग 16 प्रतिशत भाग कृषि क्रियाओं के विकास के लिये प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त कृषि ऋण विकास के लिये पृथक वित्तीय संस्थाओं का निर्माण किया गया है। उदाहरणार्थ—सहकारी बैंक (Co-operative Banks), सहकारी साख संस्थायें (Co-operative Credit Institutions) भूमि विकास बैंक (Land Development Banks), क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (Regional Rural Banks), कृषि पुनर्वित एवं विकास निगम (Agriculture Refinance & Development Corporation) तथा राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (NABARD)। ये वित्तीय संस्थायें केवल कृषि कार्यों के लिये वित्त को प्रोत्साहन देती हैं।

देश में आयात-निर्यात को बढ़ावा देने के उद्देश्य से आयात-निर्यात बैंक (EXIM Bank) की स्थापना की गयी है जिसका प्रमुख कार्य विदेशों में निर्यात के लिये भारतीय उद्योगों को सहायता प्रदान करना है। विदेशी व्यापार को बढ़ावा देने के लिये निर्यात ऋण एवं गारन्टी निगम (Export Credit and Guarantee Corporation) की स्थापना की गयी है जो विदेशी व्यापार के जोखिमों को प्रत्याभूति प्रदान करती है।

भारतीय मुद्रा बाजार में, बैंकों के अतिरिक्त, जीवन बीमा निगम (LIC), सामान्य बीमा निगम (General Insurance Corporation) तथा यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया (UTI) भी बचतों को प्रोत्साहन देने का कार्य करती हैं।

अतः स्पष्ट होता है कि भारतीय बैंकिंग पद्धति का स्वरूप अत्यन्त व्यापक है। इसमें विभिन्न वित्तीय संस्थायें कार्य करती है। भारतीय बैंकिंग पद्धति को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से सर्वप्रथम वर्ष 1969 में 14 बड़े व्यापारिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया है। इससे भारतीय मुद्रा बाजार को नयी दिशा प्राप्त हुई है तथा बैंकों का सामाजिक दायित्व बढ़ा है।

बैंकों का राष्ट्रीयकरण
(Nationalisation of Banks)

प्रत्येक राष्ट्र के लिये यह आवश्यक है कि उसकी अर्थव्यवस्था नियोजित हो और राष्ट्र के विकास के लिये सुनियोजित कार्यक्रम हो। बैंक राष्ट्र के आर्थिक विकास में बहुमूल्य योगदान प्रदान करते हैं। बैंक सरकार द्वारा नियोजित कार्यक्रमों को सक्रिय रूप प्रदान करते हैं। भारतवर्ष में बैंकों का उद्‌गम 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ। इस युग में बैंकों का महत्व काफी कम था। परन्तु धीरे-धीरे बैंकों का विकास होता गया। इसके साथ बैंकों का महत्व भी बढ़ने लगा। परन्तु भारतीय बैंकिंग प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह था कि इसका लाभ सीमित वर्ग के लोगों को प्राप्त होता था एवं इनमें अनेक कुरीतियाँ पनप रही थी।

जुलाई 1969 को स्वर्गीय प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा 14 बड़े व्यापारिक वैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। राष्ट्रीयकरण के निम्नलिखित प्रमुख कारण थे—

(1) कृषि एवं लघु उद्योगों की उपेक्षा (Neglect of Agriculture and Small Industries)—राष्ट्रीयकरण से पूर्व केवल बड़े उद्योगों को वित्त प्रदान किया जाता था जिनमें वैंकों को अधिक लाभ प्राप्त होता था। इससे कृपि एवं लघु उद्योगों की उपेक्षा होती थी चूंकि इन उद्योगों में पर्याप्त मात्रा में जोखिम होता था और वैंक को उचित प्रतिभूति भी प्राप्त नहीं हो पाती थी। अतः वैंक इन उद्योगों में वित्त प्रदान नहीं करते थे।

(2) कुरीतियाँ (Malpractices)—वैंक के शीर्ष प्रवन्ध (Top Management) में बड़े व्यापारियों एवं उद्योगपतियों का हाथ होता था। अतः वैंक की नीति निर्धारण में उनका स्वार्थ निहित होता था। इस कुरीति को दूर करना नितान्त आवश्यक था। इस दोष को दूर करने के लिये बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया।

(3) शाखाओं का विस्तार (Expansion of Branches)—राष्ट्रीयकरण से पूर्व शाखाओं का विस्तार पर्याप्त मात्रा में नहीं था। उस समय भारतवर्ष में कुल लगभग 8,300 वैंक कार्यालय एवं उनकी शाखायें थीं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में शाखाओं का विस्तार अत्यधिक कम था। केवल 22 प्रतिशत शाखायें ग्रामीण क्षेत्र में स्थित थीं जबकि भारतीय जनसंख्या का लगभग 75 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्र में निवास करता था। अतः वैंकों का उपयोग कम व्यक्तियों द्वारा किया जाता था।

(4) पूंजी का केन्द्रीयकरण (Centralisation of Resources)—राष्ट्रीयकरण से पूर्व, वैंकों की पूंजी का महत्वपूर्ण भाग कुछ ही व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित होता था। ये व्यक्ति बड़े उद्योगपति एवं व्यापारी थे जिन्हें वैंकों के ऋणों में काफी महत्वपूर्ण भाग प्रदान किया जाता था। वैंकों की पूंजी एवं धन का प्रयोग कुछ सीमित व्यक्तियों द्वारा ही किया जाता था। अतः वैंकों का राष्ट्रीयकरण आवश्यक बन गया था।

(5) परिवर्तन की आवश्यकता (Need of Change)—भारतीय नियोजित अर्थव्यवस्था के लिये यह आवश्यक था कि वैंक, सरकार की नीतियों का पालन करें। इसी की सहायता से राष्ट्र का आर्थिक विकास सम्भव था। राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिये आवश्यक है कि राष्ट्र के पास पर्याप्त मात्रा में पूंजी हो और पूंजी का निर्माण निक्षेप (Deposit) पर निर्भर करता है अतः यह आवश्यक था कि जनता के पास से निक्षेप अधिक मात्रा में जमा किये जा सकें। इसके अतिरिक्त, लघु उद्योगों एवं कृषि के विकास के लिये यह आवश्यक था कि वैंकों की सुविधायें ग्रामीण क्षेत्र में विकसित की जायें।

(6) सामाजिक महत्व (Social Importance)—राष्ट्रीयकरण किये जाने

का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी था कि बैंकों का सामाजिक दृष्टिकोण से न्याय हो सके अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति को समान सुअवसर प्राप्त हो सकें और बैंक के साधनों का इच्छित क्षेत्रों में प्रयोग किया जा सके।

अतः व्यापारिक बैंक राष्ट्रीयकरण से पूर्व ऋण की सुरक्षा एवं ऋण पर आय को ही महत्व प्रदान करते थे। इससे बैंकों द्वारा केवल सीमित वर्ग को ही ऋण प्रदान करने का कार्य किया जाता था। परिणामस्वरूप देश के स्रोतो का प्रयोग सीमित वर्ग द्वारा ही किया जाता था। सरकार द्वारा सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण से वर्ष 1968 में सामाजिक नियन्त्रण (Social Control) पर विशेष बल दिया गया जिसमे बैंको से क्षेत्रीय असन्तुलन कम करने, कमजोर वर्गों को ऋण प्रदान करने, उत्पादक कार्यों के लिये ऋण प्रदान करने के लिये आग्रह किया गया। परन्तु, सामाजिक नियन्त्रण के माध्यम से वांछित उपलब्धियाँ प्राप्त नहीं की जा सकी। अतः वर्ष 1969 में बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। राष्ट्रीयकरण के प्रमुख उद्देश्यों में क्षेत्रीय असन्तुलन मे कमी, लघु स्तरीय उद्योगो का विकास, कृषि क्रियाओं के लिये वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवाना, उत्पादक कार्यों के लिये ऋण तथा सट्टे के लिये ऋणों पर रोक लगाना प्रमुख थे।

उपरोक्त उद्देश्यो को ध्यान में रखते हुये ही 1969 में बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। इसके पश्चात् सन् 1980 मे पुनः 6 बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। इसका उद्देश्य बैंकों पर, सरकार का उचित नियन्त्रण रखना है। इसके अतिरिक्त, बैंकों के साधनों का सामाजिक कल्याण में उपयोग करके उन्हे अधिकतम अवसर प्रदान कराना तथा ग्रामीण एवं लघु उद्योगों का विकास कराने की भावना को लेकर ही अन्य 6 बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया है।

राष्ट्रीयकरण के पश्चात् प्राप्त की गई उपलब्धियाँ

राष्ट्रीयकरण के पश्चात्, बैंकों ने अपने क्षेत्र मे महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। जिन उद्देश्यों के लिये बैंको का राष्ट्रीयकरण किया गया था उन्हें पूरा कर लिया गया है, आज के युग में बैंक राष्ट्र के निर्माण मे अपना अमूल्य सहयोग प्रदान कर रहे हैं। राष्ट्रीयकरण के पश्चात्, राष्ट्र का विकास हुआ है एवं लोगों को समान अवसर प्राप्त हुये हैं। इससे सामाजिक न्याय को बढ़ावा मिला है। संक्षेप में, राष्ट्रीयकरण के पश्चात् निम्नलिखित उपलब्धियाँ प्राप्त की गयी हैं—

(1) शाखा विस्तार (Branch Expansion)—राष्ट्रीयकरण के समय भारत वर्ष में 65,000 व्यक्तियों पर एक शाखा थी एवं कुल मिलाकर लगभग 8,321 शाखायें थी। परन्तु पिछले दशक मे, यह संख्या 5 गुनी बढ़ गयी है। वर्ष 1983 तक भारतवर्ष में लगभग 43,219 शाखायें खुल चुकी हैं एवं अब 16,000 व्यक्तियों पर एक शाखा है तथा मार्च 1984 तक कुल मिलाकर देश में व्यापारिक बैंकों की शाखायें बढ़कर लगभग 44,580 हो गयी है जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों मे 24.770 [illegible] प्रतिशत शाखायें खोली गयी हैं। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापारिक

अत्याधिक विस्तृत है। मार्च 1985 में कुल बैंकों की संख्या लगभग 50,750 होने का अनुमान है।

(2) निक्षेपों में वृद्धि (Increase in Deposits)—वर्ष 1969 में बैंकों की कुल जमा धनराशि 3,897 करोड़ रुपये थी। बैंकों में निक्षेपों की वृद्धि दर 16 प्रतिशत से 25 प्रतिशत तक रही है। बैंकों के निक्षेपों में ग्रामीण योगदान पूर्व वर्षों में बढ़ा है। वर्ष 1984 में, निक्षेप वृद्धि की दर 14 प्रतिशत रही है तथा निक्षेपों में 8,578 करोड़ रुपये की वृद्धि हुयी है। दिसम्बर 1984 में कुल जमा निक्षेप 69,804 करोड़ रुपये के थे तथा सितम्बर, 1985 तक कुल निक्षेप बढ़कर लगभग 77,910 करोड़ रुपये के हो गये हैं। इसमें 13,833 करोड़ रुपये के निक्षेप माँग पर देय हैं तथा 64,077 करोड़ रुपये के निक्षेप सावधि निक्षेप हैं। अतः राष्ट्रीयकरण के पश्चात् बैंकों के निक्षेपों में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है।

(3) ऋणों में वृद्धि (Increase in Credit)—राष्ट्रीयकरण के बाद, बैंकों की ऋण नीति में परिवर्तन हुआ है। ग्रामीण एवं लघु उद्योगों पर विशेष ध्यान दिया गया है। सरकार के 20 सूत्रीय कार्यक्रम एवं ग्रामीण उत्थान के अन्य कार्यक्रम में बैंकों ने विस्तार में ऋण प्रदान किये हैं। वर्ष 1983 तक लगभग 43,000 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये जा चुके हैं। इस ऋण राशि में प्राथमिकता के आधार पर 38·9 प्रतिशत ऋण दिया गया है। वर्ष 1984 में बैंक ऋणों में वृद्धि की दर लगभग 16 प्रतिशत है जो वर्ष 1983 की तुलना में 0·4 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 1984 में कुल मिलाकर लगभग 6,484 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये हैं। कुल ऋण का 40 प्रतिशत भाग प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। जिसका पुनः 40 प्रतिशत भाग कृषि (Agriculture) क्रियाओं के लिये प्रदान किया जायेगा। कृषि के 40 प्रतिशत भाग का 50 प्रतिशत भाग कमजोर वर्ग को प्रदान किया जायेगा। इस प्रकार राष्ट्रीयकरण के पश्चात् ऋण नीति निर्धारण में कमजोर वर्गों एवं कृषि विकास कार्यों को विशेष प्राथमिकता प्रदान की गयी है। सितम्बर, 1985 तक कुल ऋण 50,180 करोड़ रुपये के प्रदान किये गये हैं जिसमें खाद्य ऋण 6031 करोड़ रुपये के तथा खाद्येतर ऋण (Non Food Credit) 44,149 करोड़ रुपये के प्रदान किये गये हैं। खाद्य ऋण (Food Credit) कुल ऋणों का 12·02 प्रतिशत हैं।

(4) आर्थिक विकास (Economic Growth)—राष्ट्रीयकरण की सहायता से देश की आर्थिक अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है। देश की आर्थिक विकास दर 5 प्रतिशत है। राष्ट्रीयकरण के पश्चात्, बैंकों द्वारा सरकार की नीतियों का समुचित पालन किया गया है जिससे देश में औद्योगिक एवं ग्रामीण विकास हुआ है और लघु उद्योगों को बढ़ावा मिला है। इन उद्योगों को पर्याप्त मात्रा में पूंजी उपलब्ध करायी गयी जिससे देश का आर्थिक विकास तीव्र गति से आगे बढ़ा है।

अतः राष्ट्रीयकरण के बाद, बैंकों ने महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। बैंकों ने आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया है। राष्ट्रीयकरण के पश्चात् बैंकों की सुविधायें सामान्य जनता को उपलब्ध होने लगी एवं ऋण की सुरक्षा की तुलना में ऋण के उद्देश्यों को महत्व प्रदान किया गया। इससे कृषि विकास को विशेष प्रोत्साहन मिला है एवं प्राकृतिक स्रोतों का प्रयोग साधारण जनता द्वारा सम्भव हो सका है। बैंकों द्वारा स्वरोजगार एवं बेरोजगार युवक कार्यक्रम (Self Employment and Unemployed Youth Programme), एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, 20 सूत्रीय कार्यक्रम एवं विभेदित ब्याज दरों वाले ऋण के कार्यक्रम हेतु ऋण प्रदान किये जाते हैं।

भारतीय स्टेट बैंक
(State Bank of India)

भारतवर्ष में सर्वप्रथम बैंक ऑफ बंगाल, बैंक ऑफ मद्रास तथा बैंक ऑफ बम्बई की स्थापना की स्थापना की गयी थी। इन तीनों बैंकों को वर्ष 1921 में मिलाकर इम्पीरियल बैंक की स्थापना की गयी। वर्ष 1955 में स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया अधिनियम के अधीन इम्पीरियल बैंक को स्टेट बैंक के रूप में स्थापित किया गया। पुनः वर्ष 1959 में स्टेट बैंक में 8 अन्य बैंकों को मिला दिया गया जिसमें स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र स्टेट बैंक ऑफ पटियाला, स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर, स्टेट बैंक ऑफ जयपुर स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर आदि प्रमुख थे। वर्ष 1963 में स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर व जयपुर को संयुक्त रूप में मिला दिया गया। अतः वर्ष वर्तमान समय में स्टेट बैंक के 7 सहायक बैंक हैं। स्टेट बैंक का स्वामित्व रिजर्व बैंक एवं जनता (Public) में निहित है। स्टेट बैंक उन स्थानों पर रिजर्व बैंक के एजेन्ट के रूप में कार्य करता है जहाँ पर रिजर्व बैंक का कार्यालय नहीं है। स्टेट बैंक की ग्रामीण क्षेत्र में विशिष्ट भूमिका रही है। बैंक द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में कृषि क्रियाओं के लिये अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण प्रदान किये जाते हैं।

जून 1972 में स्टेट बैंक ने 'कृषि विकास शाखायें' खोलने की एक नई योजना आरम्भ की है। इस प्रकार की प्रथम शाखा 10 जून 1972 को बिहार में स्थापित की गई। वर्ष 1982 के अन्त तक 429 कृषि विकास शाखायें स्थापित की जा चुकी थी। ये शाखायें कृषि को वित्त प्रदान करने के अतिरिक्त तकनीकी विशेषज्ञों की सेवायें भी उपलब्ध कराती हैं। प्रत्येक शाखा 5,000 से 10,000 किसानों को लाभान्वित करती है। इन शाखाओं द्वारा 12 3 लाख से अधिक कृषकों को 482 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता प्रदान की गई।

ग्रामों को गोद लेने की योजना (Adoption of Villages)—कृषि की गहन वित्त व्यवस्था के लिये स्टेट बैंक ने ग्रामों को गोद लेने की योजना प्रारम्भ की है। इस योजना के अन्तर्गत गोद लिये गये ग्राम के सभी कृषि कार्यक्रमों के लिये वित्त की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है।

अत: स्टेट बैंक द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के विस्तार के लिये विशेष योगदान प्रदान किया गया है।

सहकारी बैंक
(Co-operative Banks)

सहकारी बैंकों की स्थापना प्रत्येक राज्य के अधीन सहकारी समिति अधिनियम के अन्तर्गत की जाती है। बैंक राज्य सरकार की संस्था के रूप में कार्य करते हैं। इनका कार्य-क्षेत्र जिलों के आधार पर वितरित होता है। ग्रामों में इनका विशेष योगदान होता है। बैंक कृषि एवं उससे सम्बद्ध क्रियाओं के लिये वित्त प्रदान करते हैं। बैंकों के ऊपर रिजर्व बैंक का आंशिक नियन्त्रण होता है। सहकारी बैंकों को रिजर्व बैंक से रियायती दरों पर सहायता प्राप्त होती है। सहकारी बैंक जनता से निक्षेप स्वीकार करते हैं एवं ग्रामीण क्षेत्रों में वित्त प्रदान करते हैं। बैंक व्यापारिक बैंकों के समान ही कार्य करते हैं परन्तु इनकी संरचना एवं स्वामित्व व्यापारिक बैंकों की तुलना में पृथक होता है।

सहकारी साख संस्थायें
(Co-operative Institutions)

1904 में सहकारी कानून पास किया गया जिसका 1912 में संशोधन हुआ। भारत में इन संस्थाओं का संगठन तीन स्तर पर है—ग्रामीण स्तर पर प्राथमिक सहकारी साख समितियाँ, जिला स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंक तथा प्रान्तीय स्तर पर राज्य सहकारी बैंक हैं। ये संस्थायें अल्पकालीन व मध्यकालीन ऋण की सुविधायें देती हैं। 30 जून, 1981 को देश में 94,000 प्राथमिक सहकारी साख समितियाँ, 337 केन्द्रीय सहकारी बैंक तथा 27 राज्य सहकारी बैंक थे।

(i) प्राथमिक सहकारी समितियाँ (Primary Co-operative Credit Institutions)—ग्राम के कोई भी 10 व्यक्ति मिलकर प्राथमिक सहकारी साख समिति की स्थापना कर सकते हैं। इनका कार्यक्षेत्र प्रायः एक ग्राम होता है। इनकी कार्यशील पूंजी सदस्यों से शुल्क, जमा, अंश पूंजी तथा केन्द्रीय सहकारी बैंकों से ऋण आदि के रूप में प्राप्त होती है। इन समितियों द्वारा प्रदान की गई अल्प और मध्यकालीन ऋण की राशि 1951-52 में 24·21 करोड़ रुपये थी जो बढ़कर 1980-81 में 1,656 करोड़ रुपये हो गई। अदत्त ऋण की राशि 2,508 करोड़ रुपये थी।

(ii) केन्द्रीय अथवा जिला सहकारी बैंक (Central or District Co-operative Bank)—1950-51 से इनकी संख्या 505 थी जो घटकर 30 जून, 1981 को 337 रह गई। इनके सदस्य प्राथमिक सहकारी साख समितियाँ होती हैं। इनके द्वारा 1980-81 में, 3,216 करोड़ रुपये का ऋण दिया गया।

(iii) प्रादेशिक सहकारी बैंक (Regional Co-operative Bank)—राज्य

स्तर पर इनकी संख्या 27 है। इनके द्वारा 1980-81 में 3,792 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये।

वर्ष 1950-51 में ये समितियाँ कृषि वित्त की 3·1 प्रतिशत माँग को पूरा करती थीं। परन्तु, अब 36 प्रतिशत माँग को पूरा करने लगी हैं। ग्रामीण क्षेत्र में सहकारी बैंकों की भूमिका प्रशंसनीय है। सहकारी बैंक राज्य सहकारी बैंकों को ऋण प्रदान करते हैं तथा राज्य सहकारी बैंक जिला सहकारी बैंक को ऋण प्रदान करते हैं। प्राथमिक सहकारी साख संस्थायें जिला स्तर के सहकारी बैंकों से ऋण प्राप्त करके कृषकों को ऋण प्रदान करती हैं। परन्तु, भ्रष्टाचार एवं प्रेरणाओं की कमी के कारण सहकारी संस्थायें प्रभावी ढंग से कार्य करने में असमर्थ हैं। वर्तमान समय में, व्यापारिक बैंकों की भूमिका प्रशंसनीय है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक
(Regional Rural Banks—RRBs)

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना का सुझाव अनेक कार्यकारी समितियों (Working Groups) ने दिया जिनके आधार पर 1975 में ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधायें बढ़ाने के लिये इनकी स्थापना की गयी। इनकी अधिकृत पूँजी (प्रत्येक बैंक के लिये) 1 करोड़ रुपये निश्चित की गयी तथा प्रार्थित पूँजी की न्यूनतम सीमा 25 लाख रुपये निश्चित की गयी। इनकी पूँजी का 50 प्रतिशत सरकार 15 प्रतिशत सम्बद्ध राज्य सरकार तथा 35 प्रतिशत यह व्यापारिक बैंक प्राप्त करेगा जिसने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की घोषणा की है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक व्यापारिक बैंक द्वारा निर्देशित नीति पर कार्य करते हैं, ये इनके सहायक बैंक के रूप में कार्य करते हैं। इनका उद्देश्य उन पिछड़े स्थानों में बैंकिंग सुविधायें विकसित करना है जहाँ पर व्यापारिक बैंक नहीं हैं। 1955 तक सहकारी बैंक ग्रामीण आवश्यकताओं का बहुत कम भाग पूरा करने में समर्थ थे। पूर्व दशक में सहकारी बैंकों के कुल ऋण का 18 प्रतिशत भाग ग्रामीण एवं लघु क्षेत्र में उपयोग किया गया है।

सहकारी बैंक ग्रामीण आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहे हैं। अतः क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना इसी उद्देश्य से की गयी है कि छोटे व्यापारियों, सीमान्त कृषकों (Marginal Farmers) (जिनकी आय 2,500 रुपये प्रति वर्ष से कम हो) एवं कृषि क्रियाओं के विकास के लिये सरलता से ऋण प्रदान किये जा सकें। इसके लिये 1975 में एक अधिनियम लागू किया गया। इनके द्वारा दिये जाने वाले ऋणों की ब्याज दर, सहकारी बैंकों की ब्याज दर से अधिक नहीं हो सकती है।

दिसम्बर 1983 तक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या 148 है जिनकी कुल शाखायें 6,458 थीं। इनके कुल निक्षेप (Deposit) 518 करोड़ रुपये के हैं। जबकि इनके द्वारा 623·7 करोड़ रुपये के ऋण दिये जा चुके हैं। 30 जून, 1984 तक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या 8,360 पहुँच चुकी है। बैंकों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य पिछड़े वर्ग का उत्थान करना है। इसके लिये कुल ऋण का 50 प्रतिशत पिछड़ों आदि को प्रदान करना आवश्यक है। परन्तु, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लिये यह विकट समस्या है कि राज्य सरकारें ऋणों का भुगतान (Recovery) रोक देती हैं। इससे बैंकों का कार्य कुशलतापूर्वक नहीं चलता है चूँकि उनके वित्त कम हो जाते हैं। अतः क्षेत्रीय

अतः स्टेट वैंक द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के विस्तार के लिये विशेष योगदान प्रदान किया गया है।

सहकारी वैंक
(Co-operative Banks)

सहकारी वैंकों की स्थापना प्रत्येक राज्य के अधीन सहकारी समिति अधिनियम के अन्तर्गत की जाती है। वैंक राज्य सरकार की संस्था के रूप में कार्य करते हैं। इनका कार्य-क्षेत्र जिलों के आधार पर वितरित होता है। ग्रामों में इनका विशेष योगदान होता है। वैंक कृषि एवं उससे सम्बद्ध क्रियाओं के लिये वित्त प्रदान करते हैं। वैंकों के ऊपर रिजर्व वैंक का आंशिक नियन्त्रण होता है। सहकारी वैंकों को रिजर्व वैंक से रियायती दरों पर सहायता प्राप्त होती है। सहकारी वैंक जनता से निक्षेप स्वीकार करते हैं एवं ग्रामीण क्षेत्रों में वित्त प्रदान करते हैं। वैंक व्यापारिक वैंकों के समान ही कार्य करते हैं परन्तु इनकी संरचना एवं स्वामित्व व्यापारिक वैंकों की तुलना में पृथक होता है।

सहकारी साख संस्थायें
(Co-operative Institutions)

1904 में सहकारी कानून पास किया गया जिसका **1912** में संशोधन हुआ। भारत में इन संस्थाओं का संगठन तीन स्तर पर है—ग्रामीण स्तर पर **प्राथमिक सहकारी साख समितियाँ**, जिला स्तर पर **केन्द्रीय सहकारी वैंक** तथा प्रान्तीय स्तर पर **राज्य सहकारी वैंक** हैं। ये संस्थायें अल्पकालीन व मध्यकालीन ऋण की सुविधायें देती हैं। **30 जून, 1981** को देश में **94,000** प्राथमिक सहकारी साख समितियाँ, **337** केन्द्रीय सहकारी वैंक तथा **27** राज्य सहकारी वैंक थे।

(i) प्राथमिक सहकारी समितियाँ (Primary Co-operative Credit Institutions)—ग्राम के कोई भी **10** व्यक्ति मिलकर प्राथमिक सहकारी साख समिति की स्थापना कर सकते हैं। इनका कार्यक्षेत्र प्रायः एक ग्राम होता है। इनकी कार्यशील पूँजी सदस्यों से शुल्क, जमा, अंश पूँजी तथा केन्द्रीय सहकारी वैंकों से ऋण आदि के रूप में प्राप्त होती है। इन समितियों द्वारा प्रदान की गई अल्प और मध्यकालीन ऋण की राशि **1951-52** में **24·21** करोड़ रुपये थी जो बढ़कर **1980-81** में **1,656** करोड़ रुपये हो गई। अदत्त ऋण की राशि **2,508** करोड़ रुपये थी।

(ii) केन्द्रीय अथवा जिला सहकारी वैंक (Central or District Co-operative Bank)—**1950-51** से इनकी संख्या **505** थी जो घटकर **30 जून, 1981** को **337** रह गई। इनके सदस्य प्राथमिक सहकारी साख समितियाँ होती हैं। इनके द्वारा **1980-81** में, **3,216** करोड़ रुपये का ऋण दिया गया।

(iii) प्रादेशिक सहकारी वैंक (Regional Co-operative Bank)—राज्य

स्तर पर इनकी संख्या 27 है। इनके द्वारा 1980-81 में 3,792 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये।

वर्ष 1950-51 में ये समितियाँ कृषि वित्त की 3·1 प्रतिशत माँग को पूरा करती थी। परन्तु, अब 36 प्रतिशत माँग को पूरा करने लगी हैं। ग्रामीण क्षेत्र में सहकारी बैंकों की भूमिका प्रशंसनीय है। सहकारी बैंक राज्य सहकारी बैंकों को ऋण प्रदान करते हैं तथा राज्य सहकारी बैंक जिला सहकारी बैंक को ऋण प्रदान करते हैं। प्राथमिक सहकारी साख संस्थायें जिला स्तर के सहकारी बैंकों से ऋण प्राप्त करके कृषकों को ऋण प्रदान करती हैं। परन्तु, भ्रष्टाचार एवं प्रेरणाओं की कमी के कारण सहकारी संस्थायें प्रभावी ढंग से कार्य करने में असमर्थ हैं। वर्तमान समय में, व्यापारिक बैंकों की भूमिका प्रशंसनीय है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक
(Regional Rural Banks—RRBs)

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना का सुझाव अनेक कार्यकारी समितियों (Working Groups) ने दिया जिनके आधार पर 1975 में ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिग सुविधायें बढ़ाने के लिये इनकी स्थापना की गयी। इनकी अधिकृत पूँजी (प्रत्येक बैंक के लिये) 1 करोड़ रुपये निश्चित की गयी तथा प्रार्थित पूँजी की न्यूनतम सीमा 25 लाख रुपये निश्चित की गयी। इनकी पूँजी का 50 प्रतिशत सरकार 15 प्रतिशत सम्बद्ध राज्य सरकार तथा 35 प्रतिशत वह व्यापारिक बैंक प्राप्त करेगा जिसने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की घोषणा की है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक व्यापारिक बैंक द्वारा निर्देशित नीति पर कार्य करते हैं, ये इनके सहायक बैंक के रूप में कार्य करते हैं। इनका उद्देश्य उन पिछड़े स्थानों में बैंकिग सुविधायें विकसित करना है जहाँ पर व्यापारिक बैंक नहीं हैं। 1955 तक सहकारी बैंक ग्रामीण आवश्यकताओं का बहुत कम भाग पूरा करने में समर्थ थे। पूर्व दशक में सहकारी बैंकों के कुल ऋण का 18 प्रतिशत भाग ग्रामीण एवं लघु क्षेत्र में उपयोग किया गया है।

क्षेत्रीय
सीमान्त
कम हो

इसके लिये 1975 में एक अधिनियम लागू किया गया। इनके द्वारा दिये जाने वाले ऋणों की ब्याज दर, सहकारी बैंकों की ब्याज दर से अधिक नहीं हो सकती है।

दिसम्बर 1983 तक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या 148 है जिनकी कुल शाखायें 6,458 थी। इनके कुल निक्षेप (Deposit) 518 करोड़ रुपये के हैं। जबकि इनके द्वारा 623·7 करोड़ रुपये के ऋण दिये जा चुके हैं। 30 जून, 1984 तक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या 8,360 पहुँच चुकी है। बैंकों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य पिछड़े वर्ग का उत्थान करना है। इसके लिये कुल ऋण का 50 प्रतिशत पिछड़े [illegible] प्रदान करना आवश्यक है। परन्तु, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लिये यह विरुद्ध [illegible] कि राज्य सरकारें ऋणों का भुगतान (Recovery) रोक देती हैं। इनके [illegible] कार्य कुशलतापूर्वक नहीं चलता है चूँकि उनके वित्त कम हो जाते हैं।

बैंक अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में असफल रहते हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण बैंक रिजर्व बैंक से पुनर्वित्त प्राप्त करने पर निर्भर रहते हैं। बैंकों के कार्यविधि के सम्बन्ध में 1977 में प्रोफेसर दन्तवाला की अध्यक्षता में एक का गठन किया गया।

भूमि विकास बैंक
(Land Development Bank)

भारतवर्ष में भूमि विकास बैंक दीर्घकालीन ऋण प्रदान करते हैं। बैंक प्रत्येक राज्य में दो स्तरों पर कार्य करते हैं। प्रथम भूमि विकास बैंक राज्य स्तर पर कार्य करते हैं। बैंक राज्य सरकार द्वारा सहायता प्राप्त होते हैं। 1980-81 तक इनके द्वारा प्रदत्त ऋणों की राशि 439 करोड़ रुपये थी। द्वितीय, राज्य भूमि विकास बैंक के सहायक बैंक के रूप में प्राथमिक भूमि विकास बैंक (Primary Land Development Bank) होते हैं। ये बैंक उन राज्यों में कार्य करते हैं जहां पर राज्य बैंक नहीं होते हैं। बैंकों की पूंजी एवं ऋण-पत्र (Debentures) आदि राज्य सरकार, व्यापारिक बैंक, सहकारी बैंक तथा स्टेट बैंक द्वारा प्राप्त की जाती है। इनके द्वारा जारी किये गये ऋणों पर सम्बद्ध राज्य सरकार की प्रतिभूति होती है।

भूमि विकास बैंक का प्रमुख कार्य भूमि को वन्धक रखकर ऋण प्रदान करना है। बैंक ऋण दीर्घकालीन होते हैं तथा इन ऋणों का उद्देश्य मशीनरी, ट्रैक्टर (Tractor) भूमि में सुधार, पुराने ऋणों का भुगतान एवं कृषि कार्यों में सहायता प्रदान करना होता है। रिजर्व बैंक के निर्देशों के अधीन भूमि विकास बैंक के ऋणों का 90 प्रतिशत उत्पादन कार्य में प्रयोग किया जाना चाहिये।

भूमि विकास बैंकों के समक्ष अनेक समस्यायें हैं। प्रथम, भूमि विकास बैंक केवल बड़े कृपकों को ऋण प्रदान करते हैं जिनके पास पर्याप्त मात्रा में भूमि होती है जिसे वन्धक (Mortgage) के रूप में रखा जा सकता है। इससे छोटे कृपक, बेरोजगार कारीगर एवं सीमान्त कृषक (Marginal Farmer) ऋण की सुविधायें प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं। द्वितीय, भूमि विकास बैंकों में अन्य तकनीकी एवं कुशल कर्मचारियों का अभाव है। तृतीय, भूमि विकास बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋणों बकाया (Over Due) राशि बड़ी मात्रा में देय रहती है। इससे बैंक नये ऋण प्रदान करने में असमर्थ रहते हैं उन्हें पुनर्वित्त की सुविधायें प्राप्त नहीं हो पाती हैं।

भविष्य में इनके उत्थान के लिये सरकार द्वारा विभिन्न कार्यक्रम निर्धारित किये गये हैं। इनके लिये लघु सिंचाई कार्यक्रमों का क्षेत्र विस्तृत किया गया है। अन्तर्गत 50 प्रतिशत ऋण भूमि विकास बैंक प्रदान करेंगे।

भारतीय औद्योगिक विकास बैंक
(Industrial Development Bank of India)

भारतीय औद्योगिक बैंक की स्थापना 1 जुलाई 1964 को की। इसकी अधिकृत पूंजी 50 करोड़ रुपये है जिसमें से 30 करोड़ रुपये निर्गमित पूंजी (Capital) है। बैंक पूर्णतया रिजर्व बैंक द्वारा अधिकृत है। 1976 में, बैंक द्वारा ले लिया गया एवं 1976 से औद्योगिक विकास बैंक स्वायत बैंक के रूप में स्थापित हो गया। औद्योगिक विकास बैंक

उद्योगों के विकास के लिये सहायता प्रदान करता है। यह प्रत्यक्ष सहायता के अन्तर्गत, उद्योगों को ऋण, उनके अंशों व ऋण-पत्रों का अभिगोपन एवं उद्योगों द्वारा लिये जाने वाले ऋणों की प्रतिभूति देता है। बैंक औद्योगिक गृहों के प्रतिज्ञा-पत्र अथवा विनिमय विपत्र को भुनाने (Discounting) का कार्य भी करते हैं। अप्रत्यक्ष सहायता के अन्तर्गत, औद्योगिक विकास बैंक उन वित्तीय संस्थाओं को ऋण प्रदान करता है जो संस्थायें औद्योगिक गृहों को दीर्घकालीन ऋण देने का कार्य करती हैं। इसके अतिरिक्त, बैंक विशेष कोष द्वारा उन उद्योगों को विशेष सहायता प्रदान करता है जिनको बाजार में ऋण प्राप्त करने में कठिनाई होती है। इन सब कार्यों के साथ-साथ औद्योगिक बैंक सर्वेक्षण एवं प्रशासन का कार्य करता है।

औद्योगिक विकास बैंक 1984–85 तक लगभग 15,400 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान कर चुका है। इसके द्वारा प्रदत्त सहायता का विश्लेषण निम्नलिखित साधनों में किया गया है—

(1) पिछड़े क्षेत्रों को सहायता (Assistance to Backward Areas)—इनके लिये बैंक ने रियायती दर पर लम्बी अवधि के लिये ऋण प्रदान करने की घोषणा की है। 1980–81 के अन्तर्गत, पिछड़े क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों को 416 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये थे।

(2) पुनर्वित्त एवं सुलभ ऋण सुविधा (Refinance and Soft Loan Scheme)—बैंक उन वित्तीय संस्थाओं को ऋण प्रदान करता है जो संस्थायें उद्योगों को वित्त प्रदान करती हैं। निगम द्वारा उद्योगों के विस्तार के लिये पुनर्वित की सुविधायें प्रदान की जाती हैं। इसमें उद्योगों को सावधि ऋण प्रदान करने पर निम्नलिखित शर्तों के अधीन पुनर्वित की सुविधायें प्रदान की जाती हैं—

(i) अधिकतम सावधि ऋण की राशि 5 करोड़ रुपये होनी चाहिये।

(ii) सावधि ऋण प्राप्त करने वाली इकाई पूर्व के 4 वर्षों से कार्यरत है तथा पिछले 2 वर्षों से लाभ अर्जित कर रही है। इसके अतिरिक्त, इकाई अपने वर्तमान ऋणों का नियमित भुगतान कर रही है।

(iii) पुनर्वित की अधिकतम सीमा एक इकाई के लिये 5 करोड़ रुपये निर्धारित की गयी है जिसमें वर्तमान एवं प्रस्तावित ऋण सीमा सम्मिलित की जायेगी। इस ऋण सीमा में विदेशी मुद्रा के ऋण (FCNR Loan) तकनीकी विकास कोष के अन्तर्गत प्राप्त ऋण, आधुनिकीकरण अथवा पुनरुत्थान के लिये ऋण, विपत्र भुनाने की योजना में ऋण तथा औद्योगिक विकास बैंक से सबन्ध पुनर्वित योजना के अन्तर्गत प्राप्त ऋण सम्मिलित नहीं किये जाते हैं।

उपरोक्त सावधि ऋण के लिये पुनर्वित की योजना 1 सितम्बर 1985 से लागू की गयी है। इस योजना में इकाई के लिये ऋण क्षमता अनुपात (Debt Equity Ratio) का निर्धारण भी किया गया है जिसमें लघु स्तर के उद्योगों के लिये 2·5 : 1 तथा मध्यम स्तर के उद्योगों के लिये 1·5 : 1 अनुपात निर्धारित किया गया है।

इसके अतिरिक्त, बैंक कुछ विशेष उद्योगों को उदाहरणार्थ सीमेन्ट, [illegible] उद्योग, जूट, चीनी एवं इन्जीनियरिंग उद्योगों को) विशेष सुविधायें रियायती दरो [illegible]

प्रदान करता है। इनके लिये व्याज दर 7·5 प्रतिशत होती है। इसके अन्तर्गत, 1981 तक प्रदत्त ऋणों की राशि लगभग 700 करोड़ रुपये थी।

(3) आधुनिकीकरण एवं पुनः स्थापना के लिये ऋण (Loan for Modernisation and Rehabilitation)—वैंक ने 1984 में छोटे एवं वड़े उद्योगों के आधुनिकीकरण एवं पुनः स्थापना के लिये विशेष योजना की घोपणा की है। इसके अन्तर्गत, लघु उद्योगों को आधुनिकीकरण के लिये 11·5 प्रतिशत व्याज दर तथा पुनः स्थापना के लिये 10 प्रतिशत व्याज दर पर ऋण प्रदान करने की घोषणा की गयी है। वर्ष 1984–85 तक वैंक के 525 करोड़ रुपये के ऋण वीमार इकाइयों को देय हैं।

भारतीय औद्योगिक वित्त निगम
(Industrial Finance Corporation of India)

भारतीय औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना वर्ष 1948 में की गयी। इसकी अधिकृत पूंजी 10 करोड़ रुपये थी। परन्तु अव यह पूंजी वढ़कर 20 करोड़ रुपये कर दी गयी है। भारत सरकार द्वारा समस्त पूंजी की प्रतिभूति है जिस पर वार्षिक लाभांश $2\frac{1}{2}$ प्रतिशत की गारन्टी है। निगम अपने वित्तीय साधनों की पूर्ति ऋणपत्र एवं वन्धक जारी करके करती है। निगम को 10 करोड़ की राशि तक जनता से निक्षेप स्वीकार करने का अधिकार है परन्तु निक्षेप 5 वर्ष से अधिक की अवधि के लिये होने चाहियें। इसके अतिरिक्त, निगम विश्व वैंक से ऋण प्राप्त कर सकता है।

निगम के कार्य (Functions of Corporation)—निगम औद्योगिक संस्थाओं को ऋण देने एवं उनके ऋणपत्रों को क्रय करने का कार्य करती है। निगम संस्थाओं द्वारा लिये गये ऋणों की जमानत का कार्य करती है। इससे अतिरिक्त, औद्योगिक संस्थाओं द्वारा जारी किये गये अंश व ऋणपत्रों के अभिगोपन का कार्य भी निगम द्वारा सम्पन्न किया जाता है। निगम को केवल सार्वजनिक अथवा सहकारी संस्थानों को ऋण प्रदान करने का अधिकार है। निगम औद्योगिक संस्थानों को दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती है। निगम की स्थापना का उद्देश्य इनको व्यापारिक वैंकों की सहायक संस्था के रूप में स्थापित करना था। निगम द्वारा प्रारम्भ में, निजी संस्थानों को ऋण नहीं दिया जाता था परन्तु अव निगम को यह अधिकार दे दिया गया है। निगम किसी संस्था को 1 करोड़ रुपये की राशि तक ऋण प्रदान करने के लिये अधिकृत है तथा इससे अधिक ऋण प्रदान करने के लिये सरकार की पूर्व अनुमति आवश्यक है। निगम द्वारा दिये गये ऋण की अवधि 25 वर्ष से अधिक नहीं हो सकती है। निगम 11·25 प्रतिशत व्याज दर पर ऋण प्रदान करती है।

निगम ऋण देते समय प्रतिभूति की प्रकृति, प्रवन्धकों की योग्यता, संस्था की राष्ट्रीय विकास में महत्ता, उत्पाद की किस्म (Quality of Product) एवं कच्चे माल की नियमित पूर्ति आदि तत्वों का ध्यान रखती है। निगम को संस्था में अपने दो संचालक मनोनीत करने का अधिकार है।

1976 से निगम ने उदार ऋण नीति (Soft Loan Scheme) को प्रारम्भ किया। जिसमें जूट, कपड़ा, चीनी एवं अन्य इन्जीनियरिंग संस्थाओं को रियायती दर

पर ऋण प्रदान करने की सुविधायें दी जाती हैं। इसके अन्तर्गत 7·5 प्रतिशत ब्याज लिया जाता है। मार्च 1981 तक इस नीति के अन्तर्गत, 261 उपक्रमों को 141 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये। तथा वर्ष 1984-85 के दौरान इस नीति में 63 12 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये हैं। निगम द्वारा इसी अवधि में 27 69 करोड़ रुपये के विदेशी मुद्रा के ऋण भी प्रदान किये गये हैं।

निगम द्वारा वर्ष 1984-85 में लगभग 225 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकार किये गये हैं तथा लगभग 150 करोड़ रुपये के ऋण वितरित किये गये हैं।

अतः स्पष्ट है कि निगम औद्योगिक वित्त प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। परन्तु इसके माध्यम से समस्त वित्त आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव नहीं है। अतः औद्योगिक विकास के लिये अनेक नयी संस्थायें खोली गयी हैं।

भारतीय औद्योगिक ऋण एवं निवेश (विनियोग) निगम
(Industrial Credit and Investment Corporation of India ICICI)

भारतीय औद्योगिक ऋण एवं विनियोग निगम की स्थापना वर्तमान उद्योगों का आधुनिकीकरण एवं विस्तार करने के उद्देश्यों से की गयी। निगम की स्थापना वर्ष 1955 में कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत की गयी। इसकी अधिकृत पूंजी 25 करोड़ रुपये है परन्तु जारी की गयी पूंजी (Issued Capital) 5 करोड़ रुपये है। निगम की पूंजी भारतीय बैंकों, बीमा कम्पनी, विदेशी कम्पनियों एव भारतीय जनता द्वारा प्राप्त की गयी है। निगम को सरकार से अथवा विश्व बैंक से ऋण प्राप्त करने का अधिकार है।

निगम की स्थापना वर्तमान उद्योगों में नयी तकनीक का प्रयोग एवं उनके विस्तार करने के उद्देश्य से की गयी है। इसके लिये, निगम औद्योगिक संस्थानों को मध्य एवं दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती है। निगम उपक्रमों के ऋणपत्र एवं अंश आदि अभिगोपन करती है तथा उन्हें तकनीकी एवं प्रबन्धकीय सलाह प्रदान करती है। निगम द्वारा मुख्यतः कागज (Paper), रासायनिक (Chemicals), सीमेन्ट, ताँबा आदि निर्माण करने वाली संस्थाओं को ऋण दिया गया है। परन्तु वर्तमान समय में, निगम ने लघु उद्योगों एवं पिछड़े क्षेत्र में स्थापित उद्योगों को भी ऋण प्रदान करना प्रारम्भ कर दिया है। निगम औद्योगिक संस्थानों को प्रत्यक्ष ऋण उपलब्ध करवाता है। इसके अतिरिक्त निगम भारतीय उद्योगों को विदेशों से पूंजीगत माल (Capital Goods) उपलब्ध करवाता है।

निगम द्वारा वर्ष 1984-85 में लगभग 347 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकार किये गये हैं जिसमें से निगम ने लगभग 190 करोड़ रुपये के ऋण वितरित किये गये हैं।

राज्य वित्त निगम
(State Financial Corporation)

राज्य वित्त निगम की स्थापना प्रत्येक राज्य में की गयी है। इसका उद्देश्य

प्रदान करता है। इनके लिये ब्याज दर 7·5 प्रतिशत होती है। इसके अन्तर्गत, 1981 तक प्रदत्त ऋणों की राशि लगभग 700 करोड़ रुपये थी।

(3) आधुनिकीकरण एवं पुनः स्थापना के लिये ऋण (Loan for Modernisation and Rehabilitation)—बैंक ने 1984 में छोटे एवं बड़े उद्योगों के आधुनिकीकरण एवं पुनः स्थापना के लिये विशेष योजना की घोषणा की है। इसके अन्तर्गत, लघु उद्योगों को आधुनिकीकरण के लिये 11·5 प्रतिशत ब्याज दर तथा पुनः स्थापना के लिये 10 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण प्रदान करने की घोषणा की गयी है। वर्ष 1984–85 तक बैंक के 525 करोड़ रुपये के ऋण बीमार इकाइयों को देय हैं।

भारतीय औद्योगिक वित्त निगम
(Industrial Finance Corporation of India)

भारतीय औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना वर्ष 1948 में की गयी। इसकी अधिकृत पूंजी 10 करोड़ रुपये थी। परन्तु अब यह पूंजी बढ़कर 20 करोड़ रुपये कर दी गयी है। भारत सरकार द्वारा समस्त पूंजी की प्रतिभूति है जिस पर वार्षिक लाभांश 2½ प्रतिशत की गारन्टी है। निगम अपने वित्तीय साधनों की पूर्ति ऋणपत्र एवं बन्धक जारी करके करती है। निगम को 10 करोड़ की राशि तक जनता से निक्षेप स्वीकार करने का अधिकार है परन्तु निक्षेप 5 वर्ष से अधिक की अवधि के लिये होने चाहियें। इसके अतिरिक्त, निगम विश्व बैंक से ऋण प्राप्त कर सकता है।

निगम के कार्य (Functions of Corporation)—निगम औद्योगिक संस्थाओं को ऋण देने एवं उनके ऋणपत्रों को क्रय करने का कार्य करती है। निगम संस्थाओं द्वारा लिये गये ऋणों की जमानत का कार्य करती है। इससे अतिरिक्त, औद्योगिक संस्थाओं द्वारा जारी किये गये अंश व ऋणपत्रों के अभिगोपन का कार्य भी निगम द्वारा सम्पन्न किया जाता है। निगम को केवल सार्वजनिक अथवा सहकारी संस्थानों को ऋण प्रदान करने का अधिकार है। निगम औद्योगिक संस्थानों को दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती है। निगम की स्थापना का उद्देश्य इनको व्यापारिक बैंकों की सहायक संस्था के रूप में स्थापित करना था। निगम द्वारा प्रारम्भ में, निजी संस्थानों को ऋण नहीं दिया जाता था परन्तु अब निगम को यह अधिकार दे दिया गया है। निगम किसी संस्था को 1 करोड़ रुपये की राशि तक ऋण प्रदान करने के लिये अधिकृत है तथा इससे अधिक ऋण प्रदान करने के लिये सरकार की पूर्व अनुमति आवश्यक है। निगम द्वारा दिये गये ऋण की अवधि 25 वर्ष से अधिक नहीं हो सकती है। निगम 11·25 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण प्रदान करती है।

निगम ऋण देते समय प्रतिभूति की प्रकृति, प्रबन्धकों की योग्यता, संस्था की राष्ट्रीय विकास में महत्ता, उत्पाद की किस्म (Quality of Product) एवं कच्चे माल की नियमित पूर्ति आदि तत्वों का ध्यान रखती है। निगम को संस्था में अपने दो संचालक मनोनीत करने का अधिकार है।

1976 से निगम ने उदार ऋण नीति (Soft Loan Scheme) को प्रारम्भ किया। जिसमें जूट, कपड़ा, चीनी एवं अन्य इन्जीनियरिंग संस्थाओं को रियायती दर

पर ऋण प्रदान करने की सुविधायें दी जाती हैं। इसके अन्तर्गत 7·5 प्रतिशत ब्याज लिया जाता है। मार्च 1981 तक इस नीति के अन्तर्गत, 261 उपक्रमों को 141 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये। तथा वर्ष 1984-85 के दौरान इस नीति में 63 12 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये हैं। निगम द्वारा इसी अवधि में 27 69 करोड़ रुपये के विदेशी मुद्रा के ऋण भी प्रदान किये गये हैं।

निगम द्वारा वर्ष 1984-85 में लगभग 225 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकार किये गये हैं तथा लगभग 150 करोड़ रुपये के ऋण वितरित किये गये हैं।

अतः स्पष्ट है कि निगम औद्योगिक वित्त प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। परन्तु इसके माध्यम से समस्त वित्त आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव नहीं है। अतः औद्योगिक विकास के लिये अनेक नयी संस्थायें खोली गयी हैं।

भारतीय औद्योगिक ऋण एवं निवेश (विनियोग) निगम
(Industrial Credit and Investment Corporation of India ICICI)

भारतीय औद्योगिक ऋण एवं विनियोग निगम की स्थापना वर्तमान उद्योगों का आधुनिकीकरण एवं विस्तार करने के उद्देश्यों से की गयी। निगम की स्थापना वर्ष 1955 में कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत की गयी। इसकी अधिकृत पूंजी 25 करोड़ रुपये है परन्तु जारी की गयी पूंजी (Issued Capital) 5 करोड़ रुपये है। निगम की पूंजी भारतीय बैंकों, बीमा कम्पनी, विदेशी कम्पनियों एवं भारतीय जनता द्वारा प्राप्त की गयी है। निगम को सरकार से अथवा विश्व बैंक से ऋण प्राप्त करने का अधिकार है।

निगम की स्थापना वर्तमान उद्योगों में नयी तकनीक का प्रयोग एवं उनके विस्तार करने के उद्देश्य से की गयी है। इसके लिये, निगम औद्योगिक संस्थानों को मध्य एवं दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती है। निगम उपक्रमों के ऋणपत्र एवं अंश आदि अभिगोपन करती है तथा उन्हें तकनीकी एवं प्रबन्धकीय सलाह प्रदान करती है। निगम द्वारा मुख्यतः कागज (Paper), रासायनिक (Chemicals), सीमेन्ट, तांबा आदि निर्माण करने वाली संस्थाओं को ऋण दिया गया है। परन्तु वर्तमान समय में, निगम ने लघु उद्योगों एवं पिछड़े क्षेत्र में स्थापित उद्योगों को भी ऋण प्रदान करना प्रारम्भ कर दिया है। निगम औद्योगिक संस्थानों को प्रत्यक्ष ऋण उपलब्ध करवाता है। इसके अतिरिक्त निगम भारतीय उद्योगों को विदेशों से पूंजीगत माल (Capital Goods) उपलब्ध करवाता है।

निगम द्वारा वर्ष 1984-85 में लगभग 347 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकार किये गये हैं जिसमें से निगम ने लगभग 190 करोड़ रुपये के ऋण वितरित किये गये हैं।

राज्य वित्त निगम
(State Financial Corporation)

राज्य वित्त निगम की स्थापना प्रत्येक राज्य में की गयी है। इसका उद्देश्य

सम्बद्ध राज्य में बड़े उद्योगों को वित्त प्रदान करना है। इनकी स्थापना सरकार द्वारा पारित राज्य वित्त अधिनियम 1951 के अन्तर्गत की गयी। राज्य वित्त निगमों की अधिकृत पूंजी 50 लाख से 5 करोड़ की सीमा के अन्तर्गत निर्धारित की गयी। इनकी पूंजी राज्य सरकार, वित्तीय संस्थायें, व्यापारिक बैंक, रिजर्व बैंक प्राप्त करेंगे। राज्य वित्त निगमें अतिरिक्त धन प्राप्त करने के लिये निक्षेप प्राप्त करना, बन्धक व ऋणपत्र जारी करना एवं औद्योगिक विकास बैंक से पुनर्वित्त (Refinance) प्राप्त करने का कार्य करती हैं।

राज्य वित्त निगम के कार्य (Functions of S. F. C.)—राज्य वित्त निगमें अपने राज्यों में छोटे एवं बड़े उद्योगों को वित्त उपलब्ध कराती हैं। इसके लिये निगम, व्यापारिक गृहों के उन ऋणों की प्रतिभूति देती हैं जिनका भुगतान 20 वर्षों के अन्तर्गत देय है तथा इनके अंश व ऋण पत्रों के अभिगोपन का कार्य करती हैं। निगमें व्यापारिक संस्थाओं को प्रत्यक्ष ऋण उपलब्ध कराती हैं।

वर्तमान समय में, 18 राज्य वित्त निगमें कार्य कर रही हैं।

राज्य औद्योगिक विकास निगम
(State Industrial Development Corporation)

प्रत्येक राज्य में औद्योगिक विकास के लिये राज्य औद्योगिक विकास निगम की स्थापना की गयी। इनकी स्थापना प्रत्येक राज्य की सरकार, अपने राज्य में करती है। वर्तमान समय में 18 निगमें कार्य कर रही हैं। निगम राज्य में उद्योगों के विकास को प्रोत्साहन देती हैं तथा उद्योगों को वित्त प्रदान करती हैं। इनका प्रमुख उद्देश्य पिछड़े क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों एवं लघु उद्योगों को प्रोत्साहित करना है। इस दिशा में, निगम ने प्रशंसनीय कार्य किये हैं।

भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण निगम ✓
(Industrial Reconstruction Corporation of India)

भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण निगम की स्थापना 1971 में कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत की गयी। निगम की अधिकृत पूंजी 25 करोड़ रुपये है परन्तु दत्त पूंजी 2·5 करोड़ रुपये है। निगम की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य उद्योगों की पुनः स्थापना (Rehabilitation) के लिये वित्त प्रदान करना है। इसके अतिरिक्त, निगम बीमार इकाइयों (Sick Units) के लिये उन्हें वित्त सुविधायें प्रदान करती है एवं उनका प्रबन्ध अपने हाथों में लेकर, उनकी पुनः स्थापना में सुविधायें प्रदत्त करती है। निगम की ब्याज दर 8·5 प्रतिशत है परन्तु लघु उद्योगों को 7·5 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण प्रदान करती है। निगम द्वारा वर्ष 1984-85 में लगभग 37·8 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकृत किये गये हैं तथा कुल 21·6 करोड़ रुपये के ऋण वितरित किये गये हैं।

भारतवर्ष में वित्त प्रदान करने वाली संस्थाओं ने महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं।

आयात निर्यात बैंक
(Export Import Bank EXIM Bank)

विदेशी व्यापार बढ़ाने के उद्देश्य से 1 जनवरी, 1982 को आयात-निर्यात बैंक की स्थापना की गयी। बैंक की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य आयात-निर्यात में लगे व्यापारियों को सहायता प्रदान करना है। बैंक वित्तीय संस्थाओं एवं व्यापारिक बैंकों को पुनर्वित्त की सुविधायें प्रदान करता है। बैंक विदेशों में संयुक्त उपक्रमों की स्थापना के लिये वित्त प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, बैंक मशीनरी, औजार आदि आयात-निर्यात एव विदेशों में संयुक्त उपक्रमों की पूंजी प्राप्त करने के लिये ऋण प्रदान करता है। बैंक व्यापारी बैंकिंग (Merchant Banking) के कार्य भी सम्पन्न करता है अर्थात् वह अश व ऋण-पत्रों का अभिगोपन,तकनीकी सलाह आदि का कार्य भी करता है। बैंक की दत्त पूंजी 20 करोड़ रुपये है जो भारत सरकार द्वारा प्रार्पित है। बैंक अपने वित्त साधनों को बन्धक पत्र जारी करके, रिजर्व बैंक से ऋण प्राप्त करके अथवा भारतवर्ष के बाहर से ऋण लेकर पूरा कर सकता है।

संक्षेप में, आयात-निर्यात बैंक विदेशी व्यापार से सम्बन्धित क्रियाओं के लिये वित्त उपलब्ध करवाता है तथा व्यापारिक बैंकों को विदेशी व्यवहारों के सम्बन्ध में, महत्वपूर्ण निर्देश देता है। बैंक औद्योगिक विकास बैंक एव निर्यात साख एवं प्रतिभूति निगम (E. C. G. C.) को, विदेशों में सम्बन्ध स्थापित करने में, सहायता प्रदान करता है।

कृषि वित्त निगम
(Agriculture Finance Corporation)

कृषि वित्त निगम की स्थापना 1968 में भारतीय बैंक संघ (Indian Bank's Association) द्वारा की गयी। इसकी स्थापना का प्रमुख उद्देश्य, व्यापारिक बैंकों को कृषि वित्त प्रदान कराने में, सहायता प्रदान करना है तथा निगम कृषि विकास के लिए स्वयं कार्य करती है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात् निगम का कार्यभार काफी बढ़ गया है और निगम कृषि वित्त की सुविधायें उपलब्ध करवाती है। इसके अतिरिक्त, निगम व्यापारिक बैंकों को कृषि सम्बन्धी समस्याओं के लिए सलाहकारी सुविधायें प्रदान करती हैं। निगम उन क्षेत्रों की खोज करती है जिनमें विनियोग लगाया जा सकता है। निगम उपक्रमों के तकनीकी एवं आर्थिक पहलुओं का सर्वेक्षण करती है तथा उसके सम्बन्ध में व्यापारिक बैंकों को सूचनायें प्रदत्त करती है। सक्षेप में, निगम कृषि के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम
(Agriculture Refinance and Development Corporation)

कृषि पुनर्वित्त निगम की स्थापना 1963 में की गई। निगम की अधिकृत पूंजी 25 करोड़ रुपये है तथा प्रार्पितपूंजी 5 करोड़ रुपये थी। वर्ष 1975 में पुनर्वित्त

निगम का पुनर्गठन किया गया तथा इसका नाम बदलकर कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम कर दिया गया है। वर्तमान समय में इसकी पूंजी 100 करोड़ रुपये है। इसके अतिरिक्त निगम अपनी पूंजी का 20 गुना ऋणस्वरूप प्राप्त कर सकती है। निगम की पूंजी वित्तीय संस्थाओं, रिजर्व बैंक, व्यापारिक बैंक, बीमा कम्पनी आदि संस्थाओं द्वारा प्रार्पित है। निगम ऋण प्रदान करने का कार्य अन्य संस्थाओं के माध्यम से करती है। 1980-81 के अन्तर्गत, निगम ने भूमि विकास बैंक के माध्यम से कुल ऋणों का 40 प्रतिशत भाग ऋणस्वरूप प्रदान किया। निगम व्यापारिक बैंकों के माध्यम से भी अपने ऋण उपलब्ध करवाती है। विश्व बैंक द्वारा भारतीय कृषि में वित्तीय योगदान का कार्य, निगम द्वारा ही सम्पन्न किया जाता है। 1980 तक 37 कृषि उपक्रमों में विश्व बैंक द्वारा निगम के माध्यम से ऋण सहायता प्रदान की गयी। निगम का प्रमुख उद्देश्य पिछड़े क्षेत्रों में कृषि क्रियाओं के लिए वित्त उपलब्ध करवाना है।

निगम का कार्य (Working of the Corporation)—निगम का प्रमुख कार्य दीर्घकालीन पुनर्वित्त की सुविधायें उपलब्ध करवाना है। निगम कृषि विकास, भूमि विकास, आधुनिकीकरण, सिंचाई आदि के लिए ऋण प्रदान करवाती है। निगम वित्तीय संस्थाओं को पुनर्वित्त की सुविधायें, सहकारी संस्थाओं को ऋण एवं पूंजीगत वस्तुओं के क्रय के लिए स्थगित भुगतान की प्रतिभूति देने का कार्य करती है। संक्षेप में निगम कृषि सम्बन्धी समस्त क्रियाओं के लिये दीर्घकालीन वित्त प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त निगम मुर्गी पालन (Poultry Farming), मत्स्य पालन (Fisheries), बागबानी (Plantation), गोदामों की स्थापना, फसलों के बचाव के लिये वित्त सुविधायें प्रदान करती है। कृषि वित्त प्रदान करने वाली संस्थाओं में, कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम का महत्वपूर्ण स्थान है। निगम समस्त कृषि क्रियाओं में लगी संस्थाओं को पुनर्वित्त की सुविधायें उपलब्ध करवाती है।

निगम की प्रगति (Progress of Corporation)—निगम ने 30 जून 1982 तक कुल 19,611 परियोजनाओं के लिये लगभग 4,650 करोड़ रुपये की सहायता स्वीकृत की गयी जिसमें से 2,878 करोड़ रुपये की ऋण सहायता वितरीत की गयी है। वर्ष 1982 में निगम का राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (NABARD) में पूर्णतः समाविष्ट कर दिया गया है।

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक
(National Bank for Agriculture and Rural Development)

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र का विकास करना है। बैंक कृषि वित्त समस्याओं एवं ग्रामीण विकास के लिये ही कार्य करता है। बैंक कृषि एवं उसकी सहायक क्रियाओं के लिये अल्पकालीन मध्यकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण प्रदान करता है। बैंक की स्थापना वर्ष 1982 में की गयी। बैंक की अधिकृत पूंजी 500 करोड़ रुपये है। परन्तु दत्त पूंजी

100 करोड़ रुपये है जो रिजर्व बैंक एवं भारतीय सरकार द्वारा बराबर अनुपात (Equal Ratio) में प्राप्त की गयी है। बैंक की स्थापना में, कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम तथा रिजर्व बैंक के दीर्घकालीन कृषि कोषों (Long Term Operations) को सम्मिलित किया गया है अर्थात् कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम को इस बैंक में पूर्णतया मिला दिया गया है।

बैंकों के कार्य
(Functions of Bank)

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक कृषि विकास के लिये निम्नलिखित कार्य करने के लिये अधिकृत है—

(1) निरीक्षण (Inspection)—बैंक को सहकारी बैंकों एवं व्यापारिक बैंकों का निरीक्षण करने का अधिकार नहीं है। बैंकों द्वारा ऋण के लिये भेजे गये प्रस्तावों का अध्ययन राष्ट्रीय बैंक करता है एवं उन पर स्वीकृति प्रदान करता है। यह बैंक कृषि वित्त प्रदान करने हेतु नये क्षेत्रों की खोज करता है तथा व्यापारिक एवं सहकारी बैंकों को उचित निर्देश देता है बैंकों द्वारा भेजे गये प्रस्तावों पर, यह बैंक अपनी आर्थिक एवं तकनीकी सलाह प्रदान करता है।

(2) ऋण प्रदान करना (Granting Loans)—राष्ट्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों एवं सहकारी बैंकों को ऋण प्रदान करता है। ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक उन क्रियाओं एवं संस्थानों की जाँच करता है जिनके लिये ऋण लिया जा रहा है। इसके पश्चात् बैंक अपनी सलाह एवं निर्देश देता है। ऋण देते समय बैंक निम्नलिखित सिद्धान्तों को ध्यान में रखता है—

(i) ऋण की शर्तें स्पष्ट हों।

(ii) ऋण प्राप्त करने वाले व्यक्ति द्वारा किया गया कार्य उत्पादकता बढ़ाता हो एवं कार्य कुशलतापूर्वक किया जाये।

(iii) कार्य तकनीकी विज्ञान पर आधारित है।

(iv) ऋणी द्वारा ऋण एवं ब्याज का भुगतान नियमित रूप में किया जाना चाहिये।

राष्ट्रीय बैंक पुनर्वित्त की सुविधायें उपलब्ध करवाता है। कारीगर, लघु उद्योगों एवं दस्तकारी (Handicrafts) उद्योगों के दिये गये ऋणों पर बैंक पुनर्वित की सुविधायें देता है। *वर्ष 1982–83 के लिये बैंक द्वारा 1,425 करोड़ रु० का* ऋण स्वीकार किया गया है।

बैंक द्वारा कृषि एवं सहायक क्रियाओं के विकास के लिये पुनर्वित की सुविधायें उपलब्ध करवायी जाती हैं। बैंक ने 150 करोड़ रुपये की पुनर्वित की सुविधा व्यापारिक बैंकों एवं भूमि विकास बैंकों को प्रदान करने का निश्चय किया गया है। इसमें ट्रैक्टर के क्रय के लिये प्रदत्त ऋण का 50 प्रतिशत ग्रामीण विकास बैंक से पुनर्वित के रूप में प्राप्त किया जा सकता है। इसी प्रकार निगम बोइओगेस (Biogas) के विकास के लिये पुनर्वित की सुविधा प्रदान करता है।

(3) निर्यात संवर्द्धन (Export Promotion)—राष्ट्रीय बैंक विशिष्ट वस्तुओं के निर्यात को बढ़ावा देने के लिये वित्त सुविधायें प्रदान करता है। इसके लिये, बैंक उन उद्योगों की स्थापना के लिये भी वित्त उपलब्ध करवाता है। जिनमें निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का निर्माण किया जाता है।

उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त, राष्ट्रीय एवं ग्रामीण विकास बैंक ग्रामीण उत्थान के लिये अनुसन्धान का कार्य सम्पन्न करता है। बैंक मुख्यतः कमजोर वर्ग एवं छोटे तथा लघु कृपकों को वित्त सुविधायें उपलब्ध करवाता है।

अग्रणी बैंक योजना
(Lead Bank Scheme)

अग्रणी बैंक योजना की स्थापना आधुनिक बैंकिंग पद्धति की देन है। इसके अन्तर्गत एक निश्चित बैंक को विशिष्ट क्षेत्र के अन्तर्गत अग्रणी बैंक घोषित कर दिया जाता है। यह बैंक सरकार द्वारा निर्धारित नीतियों के क्रियान्वन में सहायता प्रदान करता है। यह बैंक विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में सर्वेक्षण करता है एवं उन उपक्रमों का पता लगाता है जिनके विकास के लिये ऋण प्रदान किया जा सकता है। अग्रणी बैंक अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है तथा अपने क्षेत्र की समस्याओं का ज्ञान प्राप्त करता है। अग्रणी बैंक सामाजिक एवं आर्थिक पहलुओं के सर्वेक्षण का कार्य करता है तथा अपने क्षेत्र में स्थित बैंकों को ऋण प्रदान कराने के लिये सूचनायें उपलब्ध करवाता है। अग्रणी बैंक अपने क्षेत्र में नयी शाखायें खोलने के लिये, स्थान का चुनाव करने में मदद करता है। इसके अतिरिक्त, बैंक उन क्षेत्रों को प्रमाणित करता है जिनमें लघु उद्योगों की स्थापना की जा सकती है।

अग्रणी बैंक योजना का **प्रारम्भ वर्ष 1979** में किया गया। इसकी स्थापना के लिये, अनेक समितियों द्वारा सुझाव प्रस्तुत किये गये। इन समितियों के सुझावों के आधार पर, कि देश के साधनों का ग्रामीण क्षेत्रों में प्रयोग बढ़े एवं बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार ग्रामीण क्षेत्र में हो, प्रत्येक क्षेत्र के लिये एक अग्रणी बैंक की घोषणा की गयी। यह बैंक अपने क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करता है। **संक्षेप में, अग्रणी बैंक निम्नलिखित कार्य करता है—**

(1) सहायक वित्तीय संस्थाओं को सुविधा प्रदान करना।

(2) प्राथमिकता के आधार पर दिये गये ऋणों के लिये ऋणियों (Borrowers) को सलाह देना, जाँच करना तथा इसके लिये कर्मचारियों की भर्ती एवं प्रशिक्षण देना।

(3) उन क्षेत्रों की जांच करना जिनमें साधनों को लगाया जा सकता है।

(4) उन उद्योगों की खोज करना जो बैंकिंग सुविधाओं पर आधारित नहीं हैं एवं उनको बैंकिंग सुविधायें उपलब्ध करवाना।

(5) कृषि उत्पाद के लिये बाजार की खोज, भण्डार गृहों की स्थापना के लिये क्षेत्र का चुनाव एवं वित्त प्रदान करना।

अतः विदित होता है कि अग्रणी बैंक अपने क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा

करता है। अग्रणी बैंक अन्य व्यापारिक बैंकों का मार्गदर्शन करता है तथा उन्हें ऋण प्रदान करने वाले क्षेत्रों से अवगत करवाता है। इस परियोजना में अग्रणी बैंक का कार्य दो स्तरों पर निर्धारित किया गया। प्रथम स्तर पर, अग्रणी बैंक अपने क्षेत्र में सर्वेक्षण (Supervision) का कार्य करता है तथाअपने क्षेत्र की विभिन्न आवश्यकताओं पर रिपोर्ट तैयार करता है द्वितीय स्तर पर, अग्रणी बैंक जिला साख योजना (District Credit Plans) तैयार करता है तथा योजना क्रियान्वयन के लिये नीतियाँ निर्धारित करता है। जिला साख नियोजन का कार्य 2 वर्ष से लेकर 3 वर्ष की अवधि के लिये किया जाता है। इसके अन्तर्गत अग्रणी बैंक विशिष्ट क्षेत्र के लिये ऋण नियोजन, ऋण की राशि एवं उस क्षेत्र मे नयी शाखायें खोलने की नीति निर्धारित करता है। नयी शाखायें जिला सहकारी समिति की सहमति से खोली जाती हैं तथा जिला सहकारी समिति मे अग्रणी बैंक आफिसर नियुक्त होता है। अतः अग्रणी बैंक नयी शाखायें खोलने मे अपनी अनुमति प्रदान करता है।

अग्रणी बैंक स्कीम में निम्नलिखित कमियाँ पाई गई हैं—

(1) अग्रणी बैंक आर्थिक व तकनीकी जाँच करने मे असमर्थ हैं।

(2) कुछ क्षेत्रो मे अग्रणी बैंक का कार्य उन बैंको को दिया गया है जिनमे उनका प्रभुत्व नहीं है। इससे उनके सर्वेक्षण व नियन्त्रण मे कठिनाई होती है।

(3) अग्रणी बैंक विभिन्न वित्तीय संस्थाओ के बीच समन्वय स्थापित करने में असमर्थ रहे हैं।

(4) अग्रणी बैंक के उद्देश्य एवं नीतियाँ स्पष्ट नहीं हैं तथा यह योजना उन क्षेत्रों में प्रभावहीन है जिनमे आधारभूत संरचना का अभाव पाया जाता है।

अग्रणी बैंक स्कीम को प्रभावी बनाने के लिये 1982 मे एक समिति (Committee) का गठन किया गया। समिति ने निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये हैं—

(1) अग्रणी बैंक के पास पर्याप्त आंकड़ों (Datas) का अभाव होता है जिसके परिणामस्वरूप जिला साख आयोजन (District Credit Plans) तथा वार्षिक कार्य आयोजन (Annual Action Plans) तैयार करने में कठिनाइयाँ होती हैं। अतः राज्य सरकार को आंकड़े प्रदान करने मे सहायता प्रदान करनी चाहिये।

(2) वार्षिक कार्य आयोजन के लिये समस्त जिलों में समान अवधि (Uniform Period) की नीति अपनाई जानी चाहिये।

(3) प्रत्येक खण्ड मे अग्रणी बैंक आफिसर (Lead Bank Officer) की नियुक्ति करनी चाहिये जिसके पास प्रशासन सम्बन्धी कार्य नहीं होना चाहिये। वह व्यक्ति अनुभवी तथा ग्रामीण समस्याओं का ज्ञाता होना चाहिये तथा उसे तकनीकी एवं आर्थिक समस्याओं का ज्ञान होना चाहिये।

(4) वित्तीय संस्थाओ के बीच समन्वय स्थापित करने के लिये राज्य स्तर समिति (State Level Co-ordination Committee) का गठन करना

अतः समिति की उपरोक्त सिफारिशों को ध्यान में रखते हुये अग्रणी बैंक परियोजना को सुदृढ़ बनाना चाहिये।

भारतीय बैंकिंग पद्धति की समस्यायें
(Problems of Indian Banking System)

बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात्, निःसन्देह, बैंकों ने अभूतपूर्व सफलतायें प्राप्त की हैं। जिन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया था उन्हें काफी सीमा तक प्राप्त किया जा चुका है परन्तु यह सफलता पर्याप्त नहीं समझी जा सकती है चूंकि भारतीय बैंकिंग व्यवस्था में अनेक दोष विद्यमान हैं। इन दोषों के कारण बैंकिंग प्रणाली का समुचित विकास असम्भव है। अतः बैंकों के उत्थान के लिये यह आवश्यक है कि बैंकिंग पद्धति की पुनः संरचना की जाये जिसमें वर्तमान दोषों का निवारण करते हुए नये पहलुओं को भी सम्मिलित किया गया हो। भारतीय बैंकिंग पद्धति के अन्तर्गत निम्नलिखित दोष हैं—

(1) कर्मचारियों की भर्ती (Staffing)—बैंकिंग विकास के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि बैंकों में, कुशल कार्यकर्त्ताओं की भर्ती की जाये। परन्तु वर्तमान समय में देखा गया है कि बैंकों में कर्मचारियों की कार्यक्षमता अत्यधिक असन्तुष्ट है चूंकि उन्हें कार्य के सम्बन्ध में पर्याप्त प्रशिक्षण नहीं दिया जाता है।

(2) बैंकों की संरचना (Structure of Banks)—भारतवर्ष में बैंकों की संरचना सन्तुलित नहीं है। भारतीय बैंकिंग पद्धति के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को अत्यधिक विस्तृत अधिकार प्रदान किये गये हैं। बैंकों की नयी शाखाओं को खोलने के विषय में रिजव बैंक को पूर्ण अधिकार है। इससे कुछ बैंकों को सरलता से लाइसेन्स मिल जाता है और कुछ बैंक शाखा खोलने से वंचित रह जाते हैं। यही कारण है कि भारतवर्ष में कुछ बैंकों का संगठन अत्यधिक विस्तृत है जिसके प्रबन्ध एवं नियन्त्रण में कठिनाई होती है। दूसरी ओर कुछ बैंकों का संगठन अत्यन्त संकुचित है।

(3) सीमित लाभ (Low Profits)—भारतीय बैंकों की लाभप्रदता धीरे-धीरे घट रही है। राष्ट्रीयकरण के समय यह दर 100 रुपये पर 16 पैसे थी जबकि 1981 के अन्तर्गत यह घटकर 13 पैसे रह गयी। प्रत्येक व्यवसाय को दीर्घकाल तक चलाने के लिये यह आवश्यक है कि व्यवसाय में लाभ हो रहा हो। परन्तु भारतीय बैंकिंग पद्धति के अन्तर्गत, इस दृष्टिकोण से, विपरीत प्रभाव दिखलायी पड़ रहा है। 1983 में लाभ की दर 100 रुपये पर 15 पैसे हो गयी है।

(4) निक्षेपों में वृद्धि की समस्या (Problems for Deposits Mobilisation)—सार्वजनिक बैंकों ने निक्षेपों में निसन्देह प्रशंसनीय वृद्धि की है परन्तु यह वृद्धि गैर-बैंकिंग संस्थाओं की तुलना में अत्यधिक,कम है। बैंकों में निक्षेपों में वृद्धि की समस्या इसलिये भी व्याप्त है चूंकि बैंकों में आपसी प्रतिस्पर्धा है और बैंकों

की, गैर-बैंकिंग संस्थाओं की तुलना मे, प्रदत्त सुविधायें कम है उदाहरणार्थ उनकी ब्याज दर अधिक होना।

(5) ग्राहक सेवा में कमी (Decline in Customers Service)—भारतीय बैंकिंग पद्धति के अन्तर्गत सबसे महत्वपूर्ण समस्या यह है कि राष्ट्रीयकरण के पश्चात् बैंकों की ग्राहक सेवा का स्तर गिर गया है। इसके अनेक कारण हैं। सर्वप्रथम, बैंकों का पर्याप्त मात्रा में विस्तार हुआ है। जिससे व्यक्तियों, को प्रत्येक बैंक की, सेवा स्तर की तुलना करने का अवसर प्राप्त हुआ है। द्वितीय कर्मचारियों में अनुशासन की कमी, पत्र-व्यवहार में अनावश्यक विलम्ब एवं अपर्याप्तता, कर्मचारियों द्वारा अनावश्यक रूप में नियमों का पालन, बैंक प्रभार में असमानता, ऋण सम्बन्धी आवेदन पत्रों पर अनावश्यक देरी आदि ग्राहक असन्तुष्टि के प्रमुख कारण हैं। इसके अतिरिक्त, बैंक में कर्मचारी संघ (Union) की बढ़ती हुई महत्ता, कर्मचारियों द्वारा कार्यकाल के घण्टों में वार्तालाप तथा समाशोधन गृह का अनावश्यक रूप मे निलम्बन (Suspension) आदि ग्राहक असन्तुष्टि को बढ़ावा देते हैं।

(6) ऋण समस्यायें (Porblems of Lending)—बैंकों को ऋण प्रदान करते समय अनेक निर्देश दिये जाते हैं। बैंक अपने ऋणो का महत्वपूर्ण भाग अलाभकारी कार्यों में लगाते हैं। उन्हे ग्रामीण एवं लघु उद्योगों में वित्त प्रदान करने पड़ते हैं जिन पर बैंकों को कम ब्याज प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त, बैंकों को बीमार इकाइयों (Sick Units) में वित्त प्रदान करना पड़ता है। सार्वजनिक बैंको का 11,000 करोड़ रुपया प्राथमिकता के आधार पर छोटी इकाइयों (Small Units) एवं कृषि क्रियाओ मे वित्तस्वरूप लगा हुआ है।

(7) ब्याज-दर (Interest Rate)—बैंकों की निक्षेप दर में वृद्धि हुई है परन्तु बैंकों की ऋण दर काफी कम है। इससे बैंकों के निक्षेपों की लागत (Cost of Fund) अधिक आती है और बैंको को हानि का सामना करना पड़ता है।

बैंकिंग पद्धति की पुनः सरचना के लिये सुझाव
(Suggestions for Reconstruction of Indian Banking System)

भारतीय बैंकिंग पद्धति के वर्तमान दोषों को दूर करने के लिये आवश्यक है कि उसका पुनः संगठन किया जाये। पुनः संगठन के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं—

(1) बैंकों का पुनः संगठन (Reconstruction of Banks)—बैंकों की कार्य-क्षमता बढ़ाने के लिये आवश्यक है कि उनका पुनः संगठन किया जाये। इसके लिये छोटी इकाइयों को मिलाकर एक बड़ी इकाई के रूप में बैंक की स्थापना की जानी चाहिये जिससे बैंकों का प्रबन्ध एवं नियन्त्रण कुशलतापूर्वक किया जा सके अथवा बैंकों को, समस्त भारत में, एक ही नियन्त्रण के आधीन कर दिया जाये जिसमें स्टेट बैंक पृथक रखा जाये चूंकि वह एक मात्र बैंक ही अत्यन्त व्यापक बैंक है अथवा समस्त भारतीय बैंकों को क्षेत्रीय आधार पर मिला दिया जाये। इसके

आधार पर पाँच अथवा छः क्षेत्रीय बैंक बनाये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त वर्तमान बैंकिग संरचना को ही चालू रखा जा सकता है, परन्तु इसमें कुछ सुधार करने आवश्यक हैं। समस्त बैंकों में समान नियम लागू होने चाहियें अर्थात् ऋण प्रदान करते समय, निक्षेपों को जमा करते समय अथवा प्राथमिकता के आधार पर वित्त प्रदान करने के लिये समस्त बैंकों को एक बैंक मानते हुए निर्देश दिये जाने चाहियें। परन्तु इन सब संगठनों के स्वरूप में एक तथ्य महत्वपूर्ण है कि बैंकों को एक पृथक इकाई समझा जाना चाहिये और उन्हें राजनीति से पृथक किया जाना चाहिये।

(2) कर्मचारियों की भर्ती (Staffing)—कर्मचारियों की भर्ती के लिये एक पृथक संगठन की स्थापना की जानी चाहिसे। कर्मचारियों की भर्ती से पूर्व उन्हें प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये जिससे वे अधिक कुशलता से कार्य कर सकें। इसके अतिरिक्त, बैंकों में नयी तकनीक एवं कम्प्यूटरों (Computers) के प्रयोग को बढ़ावा मिलना चाहिये जिससे कार्य शीघ्रता एवं कुशलता से किया जा सकता है।

(3) लाभों में वृद्धि (Increase in Profits)—बैंकों का भविष्य में उत्थान करने के लिये यह आवश्यक है कि वे लाभ पर कार्य करें। इसके लिये बैंक को सामाजिक दृष्टिकोण के साथ-साथ आर्थिक पहलुओं पर भी ध्यान देना पड़ेगा। बैंकों को ग्रामीण ऋण की वसूली बढ़ानी चाहिये जिससे उनकी लाभप्रदता बढ़ सके। इसके अतिरिक्त बैंकों को बड़े उद्योगों को ऋण प्रदान करना चाहिये जिससे ऊँची ब्याज दर पर रुपया ऋणस्वरूप प्रदान किया जा सकता है। बैंकों में लाभों में वृद्धि करने के उद्देश्य से बैंकों की आय में वृद्धि पर विशेष बल दिया गया है। इस आशय से बैंक व्ययों में वृद्धि की गयी है। उदाहरणार्थ ड्राफ्टों पर कमीशन की दर में वृद्धि बिलों की वसूली पर कमीशन में वृद्धि आदि।

(4) ग्राहक सेवा में सुधार (Improvement in Customer Service)—ग्राहक सेवा में सुधार करने के उद्देश्य से कर्मचारियों को प्रेरणा, बैंक की कार्य पद्धति ग्राहकों के अनुरूप बनाना तथा बैंक नियमनों को पर्याप्त मात्रा में लोचदार (Elastic) बनाना आदि अनेक कार्य महत्वपूर्ण हैं। कर्मचारियों को प्रेरणा देने के उद्देश्य से बैंक प्रबन्धक का विशेष उत्तरदायित्व है। प्रबन्धक को निश्चित अवधि के दौरान कर्मचारियों की सभा (Meeting) बुलानी चाहिये। जिसमें उनकी समस्यायें एवं सुझावों को प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिये। इससे कर्मचारी एवं प्रबन्धक के बीच का तनाव कम होगा तथा बैंक की प्रगति के लिये कर्मचारियों के मन में प्रेरणा जागृत करने में सहायता मिलेगी। कर्मचारियों में अनुशासन तथा आत्म-सम्मान (Self Respect) की भावना पैदा करनी चाहिये। इससे वे बैंकिग संगठन को अपना संगठन समझेंगे तथा उसकी प्रगति के लिये अथक प्रयास करेंगे। इसके अतिरिक्त, कर्मचारियों को उनकी योग्यता के अनुसार कार्यभार सौंपना चाहिये। बैंकिग पद्धति में, कर्मचारियों में कार्य के प्रति लगाव न होने का एक प्रमुख कारण यह भी है कि

उन्हें कार्य का आवंटन उनकी योग्यता के अनुसार नहीं किया जाता है। इससे उनमें कार्य के प्रति उदासीनता रहती है।

बैंकों की कार्य पद्धति ग्राहकों के अनुरूप बनाने के लिये बैंक प्रबन्धक को विवेकाधिकार (Discretionary Power) प्रदान किये जाने चाहियें। उन्हें बैंक के कार्यकाल के घण्टे (Working Hours) बैंक के कार्यक्षेत्र की आवश्यकतानुसार परिवर्तित करने का अधिकार होना चाहिये। इसके अतिरिक्त बैंक प्रबन्धक को नियमों एवं पद्धितियों पर ध्यान न देकर कार्योन्मुख परिणामों पर विशेष ध्यान देना चाहिये। ग्राहकों को शीघ्र भुगतान की सुविधा प्रदान करने हेतु, बैंकों में टेलर पद्धति (Teller System) का प्रयोग किया जाना चाहिये। ग्राहकों की सेवा में वृद्धि करने के उद्देश्य से बैंकों मे कम्प्यूटरों (Computers) के प्रयोग को बढ़ावा देना चाहिये। इससे निर्णय लेने एव नीति निर्धारण के कार्यों में पर्याप्त सहायता मिलेगी।

संक्षेप में, ग्राहक सेवा में सुधार के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं—

(i) बैंक में काउन्टर पर ग्राहक सेवा का विशेष महत्व होता है। काउन्टर पर उचित सर्वेक्षण एवं अनुपालन (Follow up) किया जाना चाहिये।

(ii) ग्राहकों से निश्चित अवधि के पश्चात् बैंक में सभा (Meeting) करनी चाहिये कि उन्हें कौन-कौन सी असावधानियों का सामना करना पड़ता है। इसके पश्चात् उन कठिनाइयों को दूर करना चाहिये।

(iii) बैंक कर्मचारियों को उचित प्रशिक्षण देना एवं ग्राहक सेवा के लक्ष्यों को स्पष्ट करना चाहिये।

(iv) बैंकों में कार्य करने की उचित सुविधायें प्रदान करनी चाहियें।

(v) बैंकों में पूछ-ताछ तथा सलाहकारी विभाग की स्थापना करनी चाहिये जो ग्राहकों को बैंक सम्बन्धी समस्त जानकारी प्रदान कर सके तथा उनकी समस्याओं का समाधान कर सके। यह विभाग प्रत्येक शाखा में खोला जाना चाहिये।

(vi) बैंक कर्मचारियों को अनुशासन पर ध्यान देना चाहिये तथा ग्राहकों से विनम्र व्यवहार करना चाहिये। कर्मचारियों को ग्राहकों की समस्यायें समझनी चाहिये तथा उन्हें दूर करने का प्रयास करना चाहिये।

ग्राहक सेवा को सुधारने के लिये उपरोक्त सुझावों को ध्यान में रखना चाहिये। परन्तु ग्राहक सेवा का मूल तत्व यह है कि ग्राहक बैंक को अपनी संस्था समझे तथा कर्मचारी ग्राहकों को अपने परिचित समझकर उनकी सेवा करें। यह कार्य उसी स्थिति में, सम्भव है जबकि कर्मचारी निष्ठावान, ईमानदार, एवं कर्तव्यनिष्ठ होते हैं।

संक्षेप में, कहा जा सकता है कि भारतीय बैंकिंग पद्धति को सुदृढ़ बनाने के

लिये उपरोक्त सुझावों को क्रियान्वित करना अत्यन्त आवश्यक है। इनकी सहायता से, बैंकों का विकास करके देश की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने में सहायता मिलेगी।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बातें

(Important Points to be Remembered)

(1) बैंकों के राष्ट्रीयकरण के कारणों में कृषि एवं लघु उद्योगों की उपेक्षा कुरीतियाँ, शाखाओं का विस्तार, पूंजी का केन्द्रीयकरण, परिवर्तन की आवश्यकता एवं सामाजिक महत्व सम्मिलित किये जाते हैं।

(2) राष्ट्रीयकरण के पश्चात् बैंकों ने महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। उदाहरणार्थ—शाखा विस्तार, निक्षेपों में वृद्धि, ऋणों में वृद्धि, आर्थिक विकास।

(3) भारतवर्ष में कृषि वित्त प्रदान करने वाली संस्थाओं में व्यापारिक बैंक, सहकारी बैंक, स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, सहकारी साख संस्थायें, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, भूमि विकास बैंक, कृषि वित्त निगम, कृषि पुनर्वित एवं विकास निगम, राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक सम्मिलित हैं।

(4) भारतवर्ष में औद्योगिक विकास के लिये वित्त प्रदान करने वाली संस्थाओं में भारतीय औद्योगिक विकास बैंक, भारतीय औद्योगिक वित्त निगम, औद्योगिक ऋण एवं निवेश (विनियोग) निगम, राज्य वित्त निगम, राज्य औद्योगिक विकास निगम, भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण निगम सम्मिलित हैं।

(5) भारतवर्ष में आयात निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये आयात निर्यात बैंक की स्थापना की गयी है।

(6) योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के लिये अग्रणी बैंक योजना आरम्भ की गयी है।

प्रश्न

(Questions)

1. व्यापारिक बैंक पर राष्ट्रीयकरण के क्या प्रभाव हुये ? यह कहा जाता है कि राष्ट्रीयकरण के पश्चात् बैंकिंग पद्धति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये हैं। विवेचना कीजिये।

What is the effects of nationalisation of Commercial Bank ? It is said that banking in India has under-gone tremendous changes after nationalisation of Commercial Banks. Please discuss.

(C. A. I. I. B. November, 1982)

2. 14 बैंकों का कब और क्यों राष्ट्रीयकरण किया गया ? क्या इनके उद्देश्यों को प्राप्त किया जा चुका है ? 6 अन्य बैंकों का राष्ट्रीयकरण करने की क्यों आवश्यकता पड़ी ?

When and why were the first 14 Banks nationalised ? What

do you think that the objects has been achieved by the nationalisation of these banks so far ? Why was it found necessary to nationalise six more banks recently. (*C. A. I. I. B. Nov. 1980*)

3. वर्ष 1969 से बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात्, व्यापारिक बैंकिंग पद्धति ने भौगोलिक एवं कार्यात्मक दृष्टिकोण से बैंकिंग क्षेत्र में महत्वपूर्ण उन्नति की है। अब बैंकिंग पद्धति आर्थिक विकास एवं वितरित न्याय के उपकरण के रूप में विकसित हो रही है।

Since Nationalisation of Banks in 1969, the Commercial Banking System has been made remarkable progress in extending the frontiers of banking, both geographically and functionally. Banking is now emerging as an instrument of both Economic growth and distributive justice." Please discuss. (*C A. I I. B May, 1984*)

4. भारतीय अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक बैंकों की भूमिका की संक्षिप्त विवेचना कीजिये।

Write short note on the role of public sector Banks in Indian Economy.

5. हमारे देश में औद्योगिक वित्त प्रदान करने वाली कौन-कौन सी प्रमुख संस्थायें हैं ? प्रत्येक पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

What are the main agencies that provide Industrial Finance in our country ? Write short note on each of the Agencies.

(*C. A. I. I. B. Nov. 1983*)

6. ग्रामीण विकास बैंक का महत्व एवं कार्य बतलाइये।

Write briefly the Role and functions of Regional Rural Banks. (*C. A. I. I. B. May, 1982*)

7. भारतवर्ष में कृषि वित्त प्रदान करने वाली अनेक संस्थायें हैं। इनके नाम बतलाते हुये इनकी विशेषतायें एवं उद्देश्य बतलाइये।

There are different types of Institutions for granting Agriculture Loans and Advances in India. Name these institutions and mention their special Objectives & Features.

(*C. A. I. I. B. Nov. 1980*)

8. भारतीय बैंकिंग पद्धति के समक्ष कौन-कौन सी प्रमुख समस्यायें हैं ?

What are the major issues before Indian Banking ?

9. आज यह सामान्य शिकायत है कि बैंकों में ग्राहक सेवा का स्तर पूर्व वर्षों की तुलना में गिर रहा है। कृपया स्पष्ट कीजिये कि सेवा के किन पहलुओं में सुधार हो सकता है और कैसे ?

There are general complaints that the standard of customer service in banks are not the same as they were in few years ago. Please write a short note not exceeding there pages as to which aspects of service need improvement and how?

(C. A. I. I. B. Nov. 1975)

10. क्या आप समझते हैं कि भारतीय बैंकिंग व्यवस्था को पुनः संरचना की आवश्यकता है। यदि हाँ, आप किस प्रकृति की संरचना का सुझाव देंगे।

Do you think there is any need for re-structuring the Indian Banking system? So, what is the nature of the re-construction you would suggest? *(C. A. I. I. B. Nov. 1976)*

11. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखो—

Write a short note on the followings—

(i) व्यापारिक बैंक एवं स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया (Commercial Banks and State Bank of India.) *(C. A. I. I. B. May. 1980; May. 1979)*

(ii) सहकारी बैंक (The Co-operative Banks)

(C. A. I. I. B. May 1979)

(iii) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (Regional Rural Banks—R. R. Bs.)

(C. A. I. I. B. Nov. 1981)

(iv) भूमि विकास बैंक (Land Development Banks)

(v) भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (Industrial Development Bank of India—I. D. B. I.) *(C. A. I. I. B. Nov. 1981; Nov. 1976)*

(vi) भारतीय औद्योगिक वित्त निगम (Industrial Finance Corporation of India—I. F. C. I.) *(C. A. I. I. B. Nov. 1981; Nov. 1976)*

(vii) भारतीय औद्योगिक साख एवं विनियोग निगम (Industrial Credit and Investment Corporation of India—I. C. I. C. I.)

(C. A. I. I. B. Nov 1976)

(viii) राज्य वित्त निगम (State Finance Corporations—S. F. C.)

(C. A. I. I. B. May. 1975)

(ix) कृषि वित्त निगम (Agriculture Finance Corporation—A. F. C.) *(C. A. I. I. B. Nov. 1981, 1976; May 1975)*

12. भारत में व्यवसायिक बैंकों की वर्तमान स्थिति व कमियों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।

Examine critically the present situation and drawbacks of Commercial Banks in India. *(Gorakhpur B. Com. 1984)*

13. राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक के सम्बन्ध में आप क्या जानते हैं? इसके क्या कार्य हैं?

What do you know about the National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD) ? What are its functions ?

(C A I. I. B. May. 1983)

14. अग्रणी बैंक योजना की मुख्य विशेषतायें एवं कार्य पद्धति को स्पष्ट कीजिये।

State briefly the salient features and functioning of Lead Bank Scheme. *(C A. I. I B. May. 1984)*

15. अग्रणी बैंक योजना की भूमिका, कार्य एवं उद्देश्यों का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

Discuss briefly the Background, Aims and Functioning of the 'Lead Bank Scheme.' *(C. A. I I. B. Nov. 1982)*

□□□

3 रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया
(RESERVE BANK OF INDIA)

रिजर्व बैंक की स्थापना रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अधिनियम, 1934 के अन्तर्गत की गयी है। रिजर्व बैंक ने 1 अप्रैल 1935 से अपना कार्य संचालन प्रारम्भ किया तथा इसकी पूंजी 100 रुपये के 5 लाख अंशों में विभक्त 5 करोड़ रुपये थी। बैंक की समस्त पूंजी निजी अंशधारियों को आवंटित की गयी परन्तु 2·2 लाख रुपये की पूंजी केन्द्र सरकार द्वारा प्राप्त की गयी थी। इसका प्रबन्ध एक केन्द्रीय बोर्ड द्वारा किया जाता था तथा बैंक के गवर्नर को नियुक्त करने का अधिकार केन्द्र सरकार को प्रदान किया गया। परन्तु रिजर्व बैंक अधिनियम 1948 के आधीन केन्द्र सरकार ने बैंक की समस्त पूंजी स्वयं क्रय कर ली तथा 100 रुपये का अंश 118·10 रुपये में क्रय किया गया। इस अधिनियम के अन्तर्गत केन्द्र सरकार को बैंक के गवर्नर से विचार-विमर्श करने के पश्चात्, सार्वजनिक हित में निर्देश जारी करने का अधिकार प्रदान किया गया। इस प्रकार, 1 जनवरी 1949 से रिजर्व बैंक ने पूर्णतः सरकारी नियन्त्रण के आधीन कार्य करना प्रारम्भ कर दिया।

रिजर्व बैंक के कार्य
(Functions of R. B. I.)

रिजर्व बैंक भारतवर्ष में केन्द्रीय बैंक के रूप में समस्त कार्य करता है। यह भारत सरकार के अभिकर्त्ता एवं बैंकों के संरक्षक के रूप में महत्वपूर्ण सेवायें अर्पित करता है। रिजर्व बैंक देश के औद्योगिक एवं ग्रामीण विकास के लिये नीतियों के क्रियान्वयन में अमूल्य योगदान प्रदान करता है। रिजर्व बैंक के कार्य व्यापक एवं महत्वपूर्ण हैं। समस्त देश की आर्थिक व्यवस्था इसी पर आश्रित है। रिजर्व बैंक देश के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य करता है—

(1) नोट जारी करना (Banker of Issue)—रिजर्व बैंक देश के अन्तर्गत नोट जारी करने वाली एकमात्र संस्था है। एक रुपये के नोट को छोड़कर (जो भारतीय करेन्सी समझी जाती है) समस्त मुद्रा को छापने का अधिकार रिजर्व बैंक को है। रिजर्व बैंक मुद्रा का निर्गमन अधिकोषण सिद्धान्त के आधार पर करता है। इसके अन्तर्गत, बैंक 200 करोड़ के फण्ड जमा करके, कितनी ही राशि तक के नोट छाप सकता है। इस कोष में 115 करोड़ राशि का सोना एवं विदेशी मुद्रा (Gold and Foreign Reserve) रखना आवश्यक है।

भारतीय करेन्सी अर्थात् एक रुपये का नोट एवं सिक्के सरकार की ओर से निर्गमित किये जाते हैं। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 38 के अन्तर्गत

केन्द्र सरकार केवल बैंक के माध्यम से ही सिक्के एवं नोट जारी कर सकती है। अत: रिजर्व बैंक सरकार के अभिकर्त्ता के रूप में एक रुपये का नोट एवं सिक्के जारी करता है। नोट जारी करने का कार्य रिजर्व बैंक के दो पृथक विभागों द्वारा सम्पन्न किया जाता है। यह कार्य नोट जारी करने का विभाग (Issue Department) तथा बैंकिंग विभाग (Banking Department) द्वारा किया जाता है। दोनों विभागों की सम्पत्ति पृथक-पृथक रखी जाती है।

(2) सरकार के बैंकर के रूप में कार्य करना (Function as a Government Banker)—रिजर्व बैंक भारत सरकार के बैंकर के रूप में कार्य करता है। यह सरकार के एजेन्ट के रूप में सार्वजनिक ऋण प्राप्त करने, सरकार की ओर से भुगतान करने एवं बैंकिंग सम्बन्धी व्यवहार करने का कार्य करता है। रिजर्व बैंक सरकार का रुपया बिना ब्याज के अपने पास रखता है। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक सरकार के सलाहकार के रूप में सरकार को आवश्यक सूचनायें उपलब्ध करवाता है और सरकार की आर्थिक नीतियों को क्रियान्वित करवाने में मदद करता है। रिजर्व बैंक राज्य सरकार के बैंकर के रूप में भी अपनी सेवायें प्रदान करता है।

(3) बैंकों को ऋण सुविधायें उपलब्ध करवाना (Lender of the Last Resort)—रिजर्व बैंक व्यापारिक, सहकारी एवं ग्रामीण बैंकों का बैंक समझा जाता है। रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 की अनुसूची (Schedule) II में रिजर्व बैंक तथा अनुसूचित बैंकों के पारस्परिक सम्बन्धों को स्पष्ट किया गया है जिसके अनुसार अनुसूचित बैंकों (Scheduled Banks) को रिजर्व बैंक से ऋण सुविधायें प्राप्त करने का अधिकार है। परन्तु इन बैंकों को कुछ उत्तरदायित्व वहन करने पड़ते हैं। उदाहरणार्थ इन बैंकों को रिजर्व बैंक आफ इण्डिया के साथ न्यूनतम 3 प्रतिशत से 15 प्रतिशत का रोकड़ कोष (Cash Reserve) रखना अनिवार्य है। रिजर्व बैंक उस किसी भी बैंक को द्वितीय अनुसूची में सम्मिलित कर सकता है जो निम्नलिखित शर्तें पूरी करता है—

(i) उसकी दत्त पूँजी तथा संचय 5 लाख रुपये से कम नहीं होने चाहिए,

(ii) उसको रिजर्व बैंक को सन्तुष्ट करना चाहिए कि उसका कार्य जमाकर्त्ताओं के हित के विरुद्ध नहीं है,

(iii) वह बैंक राज्य सहकारी बैंक अथवा एक कम्पनी (जो कम्पनी अधिनियम, 1956) के अन्तर्गत परिभाषित की गयी है अथवा केन्द्र सरकार द्वारा घोषित संस्था अथवा भारत के बाहर स्थापित अधिनियम के अन्तर्गत सम्मामेलित (Incorporated) कम्पनी अथवा निगम होना चाहिये।

रिजर्व बैंक की अनुसूची II में जिन बैंकों का नाम सम्मिलित नहीं किया गया है उन बैंकों को गैर अनुसूचित बैंक (Non Scheduled Bank) समझा जाता है। अनुसूचित बैंकों को रिजर्व बैंक द्वारा अनेक सुविधायें प्रदान की जाती हैं। उदाहरणार्थ—विनिमय विपत्रों का भुनाना, सरकारी प्रतिभूतियों, सोना, चाँदी के विरुद्ध ऋण

प्रदान करना, रियायती दरों पर धन प्रेषण सुविधायें (Remittance Facilities) प्रदान करना तथा सलाहकारी सुविधायें प्रदान करना आदि अनेक सुविधायें प्रदान की जाती हैं।

रिजर्व बैंक समस्त बैंकों का बैंक समझा जाता है । रिजर्व बैंक अनुसूचित बैंकों को वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवाता है। ये वित्तीय सुविधायें बैंकों के विभिन्न प्रकार के बिलों को पुनः भुनाकर (Rediscounting) अथवा प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करके उपलब्ध करवायी जाती हैं । भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 17 (4) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक अनुसूचित बैंकों को प्रतिभूतियों स्टाक, सोना व चांदी, विनिमय विपत्र अथवा प्रतिज्ञापत्र (जो पुनः बट्टे पर भुनाने के योग्य हों) आदि प्रतिभूतियों के विरुद्ध मांग पर देय ऋण अथवा सावधि ऋण, (जिनकी अवधि 90 दिन से अधिक न हो, प्रदान कर सकता है। इसके अतिरिक्त, रिजर्व बैंक निर्यात बिलों के सम्बन्ध में 180 दिनों तक का सावधि ऋण अथवा मांग पर देय ऋण प्रदान कर सकता है। अधिनियम की धारा 18 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को उन परिस्थितियों में संकटकालीन ऋण (Emergency Advance) प्रदान करने का अधिकार दिया गया हैं जब रिजर्व बैंक समझता है कि ऋण व्यापार, वाणिज्य उद्योग अथवा कृषि के हित में आवश्यक है।

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 17 (2) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को निम्नलिखित बिलों को पुनः भुनाने का अधिकार प्रदान किया गया है—

(i) व्यापारिक बिल (Commercial Bill) जिनकी अवधि बिल क्रय करने अथवा भुनाने की तिथि से 90 दिन से अधिक नहीं होनी चाहिये तथा ये बिल भारत में देय होने चाहिये। निर्यात किये गये माल के सम्बन्ध में बिल की अवधि 180 दिन तक हो सकती है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि बिल पर दो हस्ताक्षरों में से एक हस्ताक्षर अनुसूचित बैंक अथवा राज्य सहकारी बैंक का होना चाहिये।

(ii) कृषि बिल, जो मौसमी कृषि क्रियाओं के सम्बन्ध में अथवा फसल की बिक्री के सम्बन्ध में भारतवर्ष में लिखे गये हैं तथा जिनकी देय तिथि बिल क्रय करने अथवा पुनः भुनाने की तिथि से 15 माह से अधिक नहीं है। इन बिलों पर, एक हस्ताक्षर अनुसूचित बैंक अथवा राज्य सहकारी बैंक का होना आवश्यक है।

(iii) कुटीर एवं लघु उद्योगों को उत्पादन अथवा विपणन के लिये वित्त प्रदान करने के उद्देश्य से स्वीकृत बिल जो भारतवर्ष में लिखे गये हैं तथा जिनकी देय तिथि बिल भुनाने की तिथि से 12 माह से अधिक नहीं है। इन बिलों पर दो हस्ताक्षर होने चाहिये जिनमें से एक हस्ताक्षर राज्य सहकारी बैंक अथवा वित्त निगम द्वारा किया जाना चाहिये और राज्य सरकार द्वारा बिल के मूलधन एवं ब्याज की अदायगी प्रत्याभूत (Guaranted) होनी चाहिये ।

(iv) सरकारी प्रतिभूतियों को प्राप्त करने अथवा उनमें व्यापार करने के लिये

अनुसूचित बैंक का बिल जिसकी अवधि बिल क्रय करने अथवा पुनः भुनाने की तिथि से 90 दिन से अधिक नहीं होनी चाहिये।

(v) विदेशी बिल जो भारत से निर्यात किये गये माल से सम्बन्धित हैं तथा जिनकी देय तिथि 180 दिन से अधिक नहीं है। ये बिल भारत में अथवा भारत के बाहर किसी भी देश में जो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (International Monetary Fund) का सदस्य हो, देय हो सकते हैं।

अतः रिजर्व बैंक विभिन्न प्रकार के बिलों को क्रय करके अथवा पुनः भुनाकर (Re-discount) अनुसूचित बैंकों को वित्तीय सुविधायें प्रदान करता है। इसीलिये रिजर्व बैंक को बैंकों का बैंक समझा जाता है तथा यह अन्तिम ऋणदाता के रूप में (Lender of Last Resort) बैंकों को ऋण प्रदान करता है।

रिजर्व बैंक द्वारा पुनर्वित्त की सुविधा समय-समय पर विस्तारित अथवा संकुचित की जाती है। रिजर्व बैंक देश की अर्थव्यवस्था के अनुरूप इस पर नियन्त्रण करता है। नियन्त्रण करने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक प्रत्येक बैंक के लिये अधिकतम राशि का निर्धारण करता है। राशि निर्धारित करते समय बैंक का ऋण निक्षेप अनुपात (Credit Deposit Ratio), बैंक द्वारा रिजर्व बैंक की नीतियों का पालन तथा बैंक ऋण में क्षेत्रीय प्राथमिकताओं को ध्यान में रखा जाता है। वर्तमान समय में, रिजर्व बैंक द्वारा मुद्रा स्फीति के प्रभाव को कम करने के उद्देश्य से पुनर्वित की सुविधाओं पर नियन्त्रण लगा दिया गया है तथा ये सुविधायें ऊँची ब्याज दरों पर उपलब्ध करवायी जाती हैं। रिजर्व बैंक द्वारा खाद्य ऋणों (Food Credit) पर 30 नवम्बर, 1984 से 4300 करोड़ रुपये से अधिक के ऋणों पर 100% पुनर्वित्त की सुविधा प्रदान की जाती है। इससे पूर्व यह सीमा 4000 करोड़ रुपये निर्धारित की गयी थी। इसी प्रकार निर्यात ऋणों के विरुद्ध पुनर्वित्त की सुविधा प्रदान की जाती है। रिजर्व बैंक अनुसूचित व्यापारिक बैंकों द्वारा निर्यात ऋण में वर्ष 1983 की तुलना में हुई औसत मासिक वृद्धि का 100% पुनर्वित्त की सुविधा के रूप में ऋण प्रदान करता है। यह नीति वर्ष 1984 के लिये लागू समझी जावेगी। वर्ष 1983 में निर्यात ऋणों में वर्ष 1982 की तुलना में हुई औसत मासिक वृद्धि का 125% पुनर्वित्त ऋण स्वरूप प्रदान किया जा सकता था। रिजर्व बैंक द्वारा वर्ष 1985 के लिये खाद्य ऋणों के विरुद्ध पुनर्वित्त की नयी नीति की घोषणा की गयी है। इसमें 2 अगस्त 1985 के पश्चात् 5000 करोड़ रुपये, 30 अगस्त, 1985 के पश्चात् 5400 करोड़ रुपये तथा 27 सितम्बर, 1985 के पश्चात् 5800 करोड़ रुपये से अधिक के खाद्य ऋणों के विरुद्ध 100 प्रतिशत के बराबर पुनर्वित्त की सुविधा प्रदान की जावेगी। खाद्य ऋणों के विरुद्ध पुनर्वित्त की सुविधा पर देय ब्याज दर 1 अक्टूबर 1985 से 10 प्रतिशत से बढ़ाकर 11·5 प्रतिशत कर दी गयी है। अतः रिजर्व बैंक द्वारा खाद्य ऋणों एवं निर्यात ऋण के विरुद्ध पुनर्वित्त सुविधा प्रदान की जाती है।

प्रदान करना, रियायती दरों पर धन प्रेषण सुविधायें (Remittance Facilities) प्रदान करना तथा सलाहकारी सुविधायें प्रदान करना आदि अनेक सुविधायें प्रदान की जाती हैं।

रिजर्व बैंक समस्त बैंकों का बैंक समझा जाता है। रिजर्व बैंक अनुसूचित बैंकों को वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवाता है। ये वित्तीय सुविधायें बैंकों के विभिन्न प्रकार के बिलों को पुनः भुनाकर (Rediscounting) अथवा प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करके उपलब्ध करवायी जाती हैं। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 17 (4) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक अनुसूचित बैंकों को प्रतिभूतियों स्टाक, सोना व चाँदी, विनिमय विपत्र अथवा प्रतिज्ञापत्र (जो पुनः बट्टे पर भुनाने के योग्य हों) आदि प्रतिभूतियों के विरुद्ध माँग पर देय ऋण अथवा सावधि ऋण, (जिनकी अवधि 90 दिन से अधिक न हो, प्रदान कर सकता है। इसके अतिरिक्त, रिजर्व बैंक निर्यात बिलों के सम्बन्ध में 180 दिनों तक का सावधि ऋण अथवा माँग पर देय ऋण प्रदान कर सकता है। अधिनियम की धारा 18 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को उन परिस्थितियों में संकटकालीन ऋण (Emergency Advance) प्रदान करने का अधिकार दिया गया है जब रिजर्व बैंक समझता है कि ऋण व्यापार, वाणिज्य उद्योग अथवा कृषि के हित में आवश्यक है।

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 17 (2) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को निम्नलिखित बिलों को पुनः भुनाने का अधिकार प्रदान किया गया है—

(i) व्यापारिक बिल (Commercial Bill) जिनकी अवधि बिल क्रय करने अथवा भुनाने की तिथि से 90 दिन से अधिक नहीं होनी चाहिये तथा ये बिल भारत में देय होने चाहिये। निर्यात किये गये माल के सम्बन्ध में बिल की अवधि 180 दिन तक हो सकती है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि बिल पर दो हस्ताक्षरों में से एक हस्ताक्षर अनुसूचित बैंक अथवा राज्य सहकारी बैंक का होना चाहिये।

(ii) कृषि बिल, जो मौसमी कृषि क्रियाओं के सम्बन्ध में अथवा फसल की बिक्री के सम्बन्ध में भारतवर्ष में लिखे गये हैं तथा जिनकी देय तिथि बिल क्रय करने अथवा पुनः भुनाने की तिथि से 15 माह से अधिक नहीं है। इन बिलों पर, एक हस्ताक्षर अनुसूचित बैंक अथवा राज्य सहकारी बैंक का होना आवश्यक है।

(iii) कुटीर एवं लघु उद्योगों को उत्पादन अथवा विपणन के लिये वित्त प्रदान करने के उद्देश्य से स्वीकृत बिल जो भारतवर्ष में लिखे गये हैं तथा जिनकी देय तिथि बिल भुनाने की तिथि से 12 माह से अधिक नहीं है। इन बिलों पर दो हस्ताक्षर होने चाहिये जिनमें से एक हस्ताक्षर राज्य सहकारी बैंक अथवा वित्त निगम द्वारा किया जाना चाहिये और राज्य सरकार द्वारा बिल के मूलधन एवं ब्याज की अदायगी प्रत्याभूत (Guaranted) होनी चाहिये।

(iv) सरकारी प्रतिभूतियों को प्राप्त करने अथवा उनमें व्यापार करने के लिये

अनुसूचित बैंक का बिल जिसकी अवधि बिल क्रय करने अथवा पुनः भुनाने की तिथि से 90 दिन से अधिक नहीं होनी चाहिये।

(v) विदेशी बिल जो भारत से निर्यात किये गये माल से सम्बन्धित हैं तथा जिनकी देय तिथि 180 दिन से अधिक नहीं है। ये बिल भारत में अथवा भारत के बाहर किसी भी देश में जो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (International Monetary Fund) का सदस्य हो, देय हो सकते हैं।

अतः रिजर्व बैंक विभिन्न प्रकार के बिलों को क्रय करके अथवा पुनः भुनाकर (Re-discount) अनुसूचित बैंकों को वित्तीय सुविधायें प्रदान करता है। इसीलिये रिजर्व बैंक को बैंकों का बैंक समझा जाता है तथा यह अन्तिम ऋणदाता के रूप में (Lender of Last Resort) बैंकों को ऋण प्रदान करता है।

रिजर्व बैंक द्वारा पुनर्वित्त की सुविधा समय-समय पर विस्तारित अथवा संकुचित की जाती है। रिजर्व बैंक देश की अर्थव्यवस्था के अनुरूप इस पर नियन्त्रण करता है। नियन्त्रण करने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक प्रत्येक बैंक के लिये अधिकतम राशि का निर्धारण करता है। राशि निर्धारित करते समय बैंक का ऋण निक्षेप अनुपात (Credit Deposit Ratio), बैंक द्वारा रिजर्व बैंक की नीतियों का पालन तथा बैंक ऋण में क्षेत्रीय प्राथमिकताओं को ध्यान में रखा जाता है। वर्तमान समय में, रिजर्व बैंक द्वारा मुद्रा स्फीति के प्रभाव को कम करने के उद्देश्य से पुनर्वित्त की सुविधाओं पर नियन्त्रण लगा दिया गया है तथा ये सुविधायें ऊँची ब्याज दरों पर उपलब्ध करवायी जाती हैं। रिजर्व बैंक द्वारा खाद्य ऋणों (Food Credit) पर 30 नवम्बर, 1984 से 4300 करोड़ रुपये से अधिक के ऋणों पर 100% पुनर्वित्त की सुविधा प्रदान की जाती है। इससे पूर्व यह सीमा 4000 करोड़ रुपये निर्धारित की गयी थी। इसी प्रकार निर्यात ऋणों के विरुद्ध पुनर्वित्त की सुविधा प्रदान की जाती है। रिजर्व बैंक अनुसूचित व्यापारिक बैंकों द्वारा निर्यात ऋण में वर्ष 1983 की तुलना में हुई औसत मासिक वृद्धि का 100% पुनर्वित्त की सुविधा के रूप में ऋण प्रदान करता है। यह नीति वर्ष 1984 के लिये लागू समझी जायेगी। वर्ष 1983 में निर्यात ऋणों में वर्ष 1982 की तुलना में हुई औसत मासिक वृद्धि का 125% पुनर्वित्त ऋण स्वरूप प्रदान किया जा सकता था। रिजर्व बैंक द्वारा वर्ष 1985 के लिये खाद्य ऋणों के विरुद्ध पुनर्वित्त की नयी नीति की घोषणा की गयी है। इसमें 2 अगस्त 1985 के पश्चात् 5000 करोड़ रुपये, 30 अगस्त, 1985 के पश्चात् 5400 करोड़ रुपये तथा 27 सितम्बर, 1985 के पश्चात् 5800 करोड़ रुपये से अधिक के खाद्य ऋणों के विरुद्ध 100 प्रतिशत के बराबर पुनर्वित्त की सुविधा प्रदान की जायेगी। खाद्य ऋणों के विरुद्ध पुनर्वित्त की सुविधा पर देय ब्याज दर 1 अक्टूबर 1985 से 10 प्रतिशत से बढ़ाकर 11·5 प्रतिशत कर दी गयी है। अतः रिजर्व बैंक द्वारा खाद्य ऋणों एवं निर्यात ऋण के विरुद्ध पुनर्वित्त सुविधा प्रदान की जाती है।

(4) बैंकों पर नियन्त्रण (Control on Bank)—रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंक पर नियन्त्रण करता है। यह व्यापारिक बैंकों को नयी शाखायें खोलने के लिये आज्ञा प्रदान करता है। रिजर्व बैंक को व्यापारिक बैंकों के खातों का निरीक्षण करने का अधिकार है। रिजर्व बैंक इन्हें निर्देश देने का भी कार्य सम्पन्न करता है। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक को व्यापारिक बैंकों के उच्च प्रबन्ध पर अधिकार प्राप्त होता है चूंकि रिजर्व बैंक की सहमति से ही प्रबन्धकीय संचालकों एवं चेयरमैन (Chairman) की नियुक्ति का कार्य किया जाता है। रिजर्व बैंक को यह अधिकार प्राप्त है कि वह शीर्ष प्रबन्ध में अपने संचालकों को मनोनीत कर सकता है एवं कार्यरत संचालकों को हटा सकता है।

(5) साख नियन्त्रण (Credit Control)—रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों की साख निर्माण की शक्ति पर नियन्त्रण रखता है। बैंक ब्याज दर, खुले बाजार की क्रियायें (Open Market Operation), वैधानिक कोष में परिवर्तन, नैतिक प्रभाव आदि विभिन्न तरीकों से रिजर्व बैंक साख नियन्त्रण करता है। साख नियन्त्रण का कार्य देश की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। आवश्यकतानुसार साख निर्माण का कार्य विस्तृत अथवा संकुचित किया जाता है।

(6) विदेशी कोषों का संरक्षण (Custodian of Foreign Exchange Reserve)—रिजर्व बैंक विदेशी विनिमय का कार्य सम्पन्न करता है। इसके अन्तर्गत, रिजर्व बैंक विदेशी विनिमय दर निर्धारित करता है जिसके आधार पर विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय किया जाता है। इसमें, रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों को निर्देश देने एवं उन पर नियन्त्रण करने का कार्य भी सम्पन्न करता है। व्यापारिक बैंकों द्वारा किये गये व्यवहारों की सूचना का विवरण-पत्र (R-Return) उन्हें रिजर्व बैंक को भेजना पड़ता है तथा भारत के बाहर जाने वाले व्यक्ति को विदेशी मुद्रा प्राप्त करने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक की पुर्वानुमति लेनी आवश्यक होती है। रिजर्व बैंक द्वारा विदेशीमुद्रा का विक्रय अपने नियन्त्रण के आधीन किया जाता है। विदेशयात्रा योजना (Foreign Travell Scheme) के अन्तर्गत यात्री को केवल 500 अमरीकी डालर प्रदान किये जाते हैं।

(7) प्रवेक्षण कार्य (Supervisory Functions)—रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों एवं सहकारी बैंकों का प्रवेक्षण करता है तथा उन्हें नयी शाखायें खोलने एवं बैंकिंग व्यापार बढ़ाने के विभिन्न तरीकों के विषय में निर्देश देता है। रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों को बैंकिंग सुविधायें विस्तृत करने के लिये सलाह देने का कार्य भी करता है।

(8) संवर्द्धक कार्य (Promotional Functions)—रिजर्व बैंक के कार्य आधुनिक युग में, अत्यन्त व्यापक हो गये हैं। रिजर्व बैंक अपने संवर्द्धन कार्यों के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग विकास, नये वित्तीय संस्थानों की स्थापना एवं

व्यक्तियों मे बैंकिग आदत का विकास करने का कार्य करता है। रिजर्व बैंक ने ग्रामीण एवं औद्योगिक विकास के लिये अनेक वित्तीय संस्थानों की स्थापना की है। उदाहरणार्थ—औद्योगिक विकास बैंक, औद्योगिक पुनर्वित्त निगम, निक्षेप बीमा निगम आदि अनेक वित्तीय संस्थानो की स्थापना करके बैंकिग सुविधाओं के विस्तार को नयी दिशा प्रदान की है। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक ने ग्रामीण वित्त सुविधाओं के विस्तार मे प्रशंसनीय सहयोग प्रदान किया है। इसमें रिजर्व बैंक प्रत्यक्ष रूप में वित्त सुविधायें प्रदान करता है। बैंक अल्पकालीन सुविधाओं के अन्तर्गत वित्तीय सस्थाओ को रियायती दर पर ऋण देता है। 1980-81 के लिये रिजर्व बैंक द्वारा 950 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये। रिजर्व बैंक मध्यकालीन ऋणों में 3 वर्ष से 5 वर्ष की अवधि के ऋण प्रदान करता है। ये ऋण राज्य सरकार की प्रतिभूति पर दिये जाते हैं। ये ऋण कृषि औजार क्रय के लिये, सिचाई योजनाओं के विकास के लिये, पम्प सैट (Pump sets) क्रय करने के लिये प्रदान किये जाते हैं। दीर्घकालीन सुविधाओ के अन्तर्गत लम्बी अवधि के लिये ऋण दिये जाते हैं। 1980-81 के अन्तर्गत 108 करोड़ रुपये के ऋण प्रदान किये गये हैं। इसमें रिजर्व बैंक भूमि विकास बैंक के ऋण पत्र क्रय करके कृषि पुनर्वित्त निगम को ऋण प्रदान करके अथवा राज्य सरकार को कृषि वित्त सस्थानो की पूंजी प्राप्त करने हेतु ऋण प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक ने ग्रामीण विकास के लिये दो पृथक कोषो का निर्माण किया है, प्रथम कृषि साख (दीर्घकालीन व्यवहार) कोष एवं द्वितीय कृषि साख (स्थायीकरण) कोष। वर्ष 1982 मे रिजर्व बैंक द्वारा राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (NABARD) की स्थापना की गयी जिसमें रिजर्व बैंक के कृषि साख (दीर्घकालीन व्यवहार) कोष राष्ट्रीय कृषि एव ग्रामीण विकास बैंक को हस्तान्तरित कर दिये गये हैं।

संक्षेप में, रिजर्व बैंक ने राष्ट्र के औद्योगिक एवं कृषि विकास के लिये अमूल्य सेवायें प्रदान की हैं।

रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति
(Monetary Policy of Reserve Bank of India)

रिजर्व बैंक भारतीय अर्थव्यवस्था मे अपना अमूल्य सहयोग प्रदान करता है। बैंक आर्थिक विकास के लिये वित्त उपलब्ध करवाता है अथवा मुद्रा स्फीति से बचने के लिये मुद्रा सकुचन एव साख नियन्त्रण का कार्य करता है। यदि देश की अर्थव्यवस्था मे, उद्योगों के विकास के लिये अतिरिक्त वित्त की आवश्यकता है तब रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंको के माध्यम से अतिरिक्त वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवाता है। इसके विपरीत, यदि अर्थव्यवस्था में कीमतें बढ़ रही हैं अथवा मुद्रा का मूल्य गिर रहा है अर्थात् मुद्रा स्फीति (Inflation) की स्थिति है तब रिजर्व बैंक साख नियन्त्रण के माध्यम से मुद्रा स्फीति को रोकने मे समर्थ होता है। रिजर्व बैंक साख विस्तार

(Credit Expansion) के अन्तर्गत वित्तीय संस्थाओं के माध्यम से अतिरिक्त धन बाजार में पहुँचाता है। इसके लिये बैंक, बिल भुनाने की नीति को सरल बनाता है तथा पुनर्वित्त की सुविधायें प्रदान करता है।

देश में मुद्रा की पूर्ति सरकारी नीति एवं मुद्रा के प्रचलन वेग (Velocity of Money) पर निर्भर करती है। यदि मुद्रा का प्रचलन वेग अधिक होता है तब मुद्रा की पूर्ति बढ़ जाती है। इसके विपरीत, प्रचलन वेग की गति कम होने पर मुद्रा की पूर्ति घट जाती है। बैंक साख का मुद्रा की पूर्ति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता है। बैंक साख देश के आर्थिक विकास की गति पर निर्भर करती है। विकासशील अर्थ-व्यवस्था में बैंक साख की आवश्यकतायें अधिक प्रबल हो जाती हैं और इसके निर्माण की दर बढ़ जाती है। बैंक साख को प्रभावित करने वाले तत्वों में रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति का मुख्य स्थान होता है। रिजर्व बैंक द्वारा साख विस्तार के उपाय किये जाने पर बैंक साख बढ़ जाती है। इसके विपरीत, मुद्रा स्फीति काल में रिजर्व बैंक मुद्रा संकुचन की नीतियां अपनाता है जिससे बैंक साख घट जाती है। अतः रिजर्व बैंक की नियन्त्रण नीति (Control Policy) बैंक साख को नियन्त्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। मुद्रा की पूर्ति बैंक साख के आकार को प्रभावित करती है चूंकि बैंक उपलब्ध कोषों का निश्चित प्रतिशत भाग ही साख निर्माण करने में प्रयुक्त कर सकता है। परन्तु प्रायः बैंक साख के माध्यम से ही निक्षेप का निर्माण करते हैं (Loan Create Deposits) अर्थात् बैंक जो धन ऋणस्वरूप प्रदान करते हैं उसी ऋण के विरुद्ध पुनः ऋण प्रदान करते हैं। उदाहरणार्थ—बैंक अ को एक लाख रुपये का ऋण प्रदान करता है तथा अ का खाता बैंक में उपलब्ध है। अ का ऋण उसके खाते में क्रेडिट कर दिया जायेगा और अ धीरे-धीरे रुपये का भुगतान खाते से करता रहेगा। इस निक्षेप के विरुद्ध पुनः बैंक किसी अन्य व्यक्ति को ऋण प्रदान कर सकता है। अथवा बैंक रिजर्व बैंक से पुनर्वित्त की सुविधायें प्राप्त करते हैं। यह सुविधा ऋण के विरुद्ध प्राप्त होती है इस पुनर्वित्त की सुविधा को बैंक पुनः ऋण स्वरूप प्रदान करते हैं। अतः मुद्रा पूर्ति का बैंक साख के आकार को निश्चित करने में विशिष्ट स्थान है परन्तु बैंक साख को प्रभावित करने में रिजर्व बैंक की साख नियन्त्रण नीतियां विशेष महत्वपूर्ण होती हैं। रिजर्व बैंक का नकद कोषानुपात, वैधानिक तरल कोषानुपात तथा पुनर्वित्त की सुविधा की अधिकतम सीमा बैंक साख के आकार (Volume) को प्रभावित करती हैं।

रिजर्व बैंक द्वारा साख नियन्त्रण
(Credit Control of Reserve Bank of India)

रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति के अन्तर्गत, साख नियन्त्रण का कार्य विभिन्न तरीकों से किया जाता है। साख नियन्त्रण करने की निम्नलिखित दो विधियाँ हैं—

(अ) सामान्य साख नियन्त्रण।

(ब) विशिष्ट साख नियन्त्रण।

सामान्य साख नियन्त्रण देश में साख की कुल मात्रा एवं लागत (Volume and Cost) को प्रभावित करता है। इसके अन्तर्गत बैंक दर, खुले बाजार की क्रियायें, रोकड कोषानुपात तथा वैधानिक तरल अनुपात सम्मिलित किये जाते हैं। बैंक दर से [illegible] के लिये पृथक्-पृथक् ऋण दरें घोषित की जाती हैं। अत. बैंक दर के माध्यम से ऋण दरों को प्रभावित करने की नीति का प्रयोग कम किया जाता है। इसके अतिरिक्त खुले बाजार की क्रियायें, नकद कोषानुपात तथा वैधानिक तरल अनुपात बैंक साख की कुल मात्रा को प्रभावित करने में सहायक होते हैं। विशिष्ट साख नियन्त्रण में रिजर्व बैंक द्वारा विशिष्ट वस्तुओं के विरुद्ध ऋण प्रदान करने की शर्तों एवं सीमाओं के सम्बन्ध में निर्देश जारी किये जाते हैं। इसके माध्यम से किसी विशिष्ट क्षेत्र में साख के प्रवाह (Flow or Direction) को प्रभावित किया जाता है।

(अ) सामान्य साख नियन्त्रण (General Credit Control)—इसके अन्तर्गत निम्नलिखित विधियाँ प्रयोग की जाती हैं—

(1) बैंक ब्याज दर (Bank Rate Policy) रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अधिनियम 1934 की धारा 49 के अनुसार, बैंक ब्याज दर से आशय ऐसी ब्याज दर से है जिस पर रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों के विनिमय विपत्र अथवा अन्य व्यापारिक प्रतिभूतियाँ क्रय करने अथवा भुनाने का कार्य करता है। विपत्रों को भुनाने में रिजर्व बैंक अन्य बैंकों के सावधि विनिमय विपत्र भुनाता है तथा पुनः भुनाने (Rediscounting) के कार्य के अन्तर्गत रिजर्व बैंक अन्य बैंकों द्वारा भुनाये गये विपत्रों को पुनः भुनाकर ऋण सुविधा प्रदान करता है। ब्याज दर का सीधा प्रभाव बैंकों की ऋण क्षमता एवं लागत पर पड़ता है। ब्याज दर बढ़ने से बैंक कम मात्रा में पुनर्वित्त की सुविधायें प्राप्त करेंगे जिससे उनकी ऋण प्रदान करने की शक्ति घट जायेगी। प्रारम्भ में बैंक दर 3 प्रतिशत थी परन्तु वर्तमान समय में यह 10 प्रतिशत है। बैंक दर का सीधा प्रभाव बाजार ब्याज दर पर भी पड़ता है। यदि बैंक दर बढ़ती है तब बाजार दर स्वयं बढ़ जायेगी। बैंकों की ऋण दरें भी बैंक दर पर आश्रित करती हैं। परन्तु पूर्व कुछ समय से बैंक दर का प्रयोग न्यूनतम सीमा में किया जा रहा है। रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों के ऋणों के लिये विभिन्न प्रकार की ब्याज दरें घोषित करता है। बैंकों की अधिकतम ऋण ब्याज दर की सीमा भी रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित की जाती है। बैंक ब्याज दर का सीधा प्रभाव ऋण की लागत पर पड़ता है जिससे बाजार में ऋण की माँग कम हो जाती है और वस्तुओं को स्टाक (Stock) करने की प्रवृत्ति पर नियन्त्रण करने में सहायता प्राप्त होती है। इससे मुद्रा स्फीति पर नियन्त्रण करने में सफलता प्राप्त होती है। परन्तु यदि ऋण की माँग पर ब्याज की दर का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है तब ब्याज दर बढ़ने से वस्तुओं के उत्पादन की लागत में वृद्धि हो जायेगी चूँकि ऋण लागत में

वृद्धि हो जाती है। इससे वस्तुओं की कीमतें अधिक बढ़ जायेंगी और यह मुद्रा स्फीति की स्थिति को बढ़ावा प्रदान करेगी। अतः आधुनिक युग में वैंक दर का अत्यधिक प्रभाव नहीं पाया जाता है।

इसके विपरीत, मुद्रा संकुचन काल (Deflation) में रिजर्व वैंक व्याज दर में कमी करके ऋण लेने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन प्रदान करता है। इससे मुद्रा बाजार में अतिरिक्त वित्त उपलब्ध करवाया जाता है और आर्थिक क्रियाओं को प्रोत्साहन मिलता है। यह मुद्रा संकुचन पर नियन्त्रण करने में सहायता प्रदान करता है।

(2) खुले बाजार की क्रियायें (Open Market Operation)—रिजर्व वैंक को बाजार में प्रतिभूतियों एवं अल्पकालीन विनिमय विपत्रों को क्रय-विक्रय करने का अधिकार दिया गया है। इसी को खुले बाजार की क्रियायें कहते हैं। भारतवर्ष में यह विधि कम मात्रा में अपनाई जाती है चूंकि भारतीय मुद्रा बाजार अल्पविकसित है। इसके अन्तर्गत, यदि रिजर्व वैंक बाजार से मुद्रा की मात्रा कम करना चाहता है तब वह अपनी प्रतिभूतियों का विक्रय करके बाजार से मुद्रा-वापिस प्राप्त कर सकता है। यह नीति मुद्रा स्फीति काल में अपनायी जाती है। इससे बाजार में मुद्रा की पूर्ति पर नियन्त्रण होता है तथा आर्थिक क्रियाओं का विकास रुक जाता है। इसके विपरीत, मुद्रा संकुचन की स्थिति में, रिजर्व वैंक प्रतिभूतियों का क्रय करके, बाजार में, मुद्रा की मात्रा बढ़ा सकता है। इससे आर्थिक क्रियाओं को बढ़ावा मिलता है।

(3) रोकड़ कोषानुपात (Cash Reserve Ratio)—भारतीय रिजर्व वैंक अधिनियम की धारा 42 (i) के अनुसार प्रत्येक वैंक को अपनी शुद्ध माँग एवं समय देयताओं (Net Demand and Time Liabilities) का एक निश्चित प्रतिशत भाग रिजर्व वैंक के पास प्रतिदिन औसत नकद शेष के रूप में रखना आवश्यक है। यह नकद कोष रिजर्व वैंक के पास वैंक के चालू खाते (Current Account) में रखा जाता है। यह प्रतिशत रिजर्व वैंक द्वारा आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया जा सकता है। यह नकद शेष किसी भी समय माँग एवं समय देयताओं के 3 प्रतिशत से कम नहीं हो सकता है। रिजर्व वैंक इस प्रतिशत को 15 प्रतिशत तक बढ़ा सकता है। इसके अतिरिक्त, रिजर्व वैंक उपरोक्त रोकड़ शेष से अलग अतिरिक्त नकद कोष (Additional Cash Reserve) की माँग कर सकता है जो निश्चित तिथि के पश्चात् माँग एवं समय देयताओं की वृद्धि पर निश्चित प्रतिशत से लागू समझा जायेगा। वैंक की देयताओं में पूंजी तथा रिजर्व वैंक अथवा राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास वैंक से प्राप्त ऋण एवं अग्रिम सम्मिलित नहीं किये जाते हैं।

वैंक की शुद्ध देयतायें ज्ञात करने के लिये वैंक की कुल देयताओं में, वैंकिंग पद्धति की देयताओं (Liabilities to the Banking System in India) का वैंकिंग पद्धति की सम्पत्तियों (Assets with the Banking System in India)

पर आधिक्य जोड़ दिया जाता है। यदि बैंकिंग पद्धति की सम्पत्तियाँ दायित्वों से अधिक हैं तब कुल देयतायें ही शुद्ध देयतायें समझी जाती हैं।'

Net Demand and Time Liabilities=Total Demand and Time Liabilities (Other than Banking System)+(Liabilities to the Banking System in India—Assets with Banking System in India)

Total Demand and Time Liabilities (Other than Banks)= Demand and Time Liabilities from Public+Draft Payable and Pay Orders+Sundry Creditors+Interest Accrued+Interest Accrued & Payable+Margin of Bills purchased.

Liabilities to the Banking System in India=Demand and Time Deposits of Banks+Borrowing from Banks (Other than RBI, IDBI, NABARD).

Assets with the Banking System in India=Balance with Banks (Other than RBI)+Money at Call & Short Notice+ Advances to Banks.

अतिरिक्त नकद कोषानुपात किसी भी स्थिति में, निश्चित तिथि के पश्चात् हुई वृद्धि से अधिक नहीं हो सकता है अर्थात् यह 100 प्रतिशत तक हो सकता है, इससे अधिक नहीं। नकद कोषानुपात एवं अतिरिक्त नकद कोषानुपात का कुल योग बैंक की माँग एवं समय देयताओं के 15 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिये। प्रत्येक बैंक को रिजर्व बैंक के पास यह नकद कोष रखना अनिवार्य होता है अन्यथा रिजर्व बैंक को यह अधिकार होता है कि वह बैंक दर से प्रथम सप्ताह (Week) में 3 प्रतिशत अधिक का जुर्माना कर सकता है। आगामी सप्ताहों में यह जुर्माना बैंक दर से 5 प्रतिशत अधिक का हो सकता है। रिजर्व बैंक को यह अधिकार प्राप्त है कि वह बैंक द्वारा न्यूनतम कोषानुपात न रखने की स्थिति में जुर्माना माफ कर सकता है यदि उस बैंक के पास ऐसा न करने के सन्तोषजनक कारण रहे हैं।

प्रत्येक बैंक अपनी कुल माँग एवं समय देयताओं, रिजर्व बैंक तथा अन्य बैंकों के पास जमा धनराशि, सरकारी प्रतिभूतियों में विनियोग, भारतवर्ष में कुल अग्रिम एवं देशीय व विदेशीय प्रपत्रों के भुनाने अथवा क्रय करने के सम्बन्ध में समस्त सूचनायें प्रत्येक शुक्रवार (Friday) को एक विवरणी (Return) के रूप में तैयार करता है और यह विवरणी 5 दिन के अन्दर रिजर्व बैंक को भेजी जाती है। 4 फरवरी, 1984 से नकद कोषानुपात 8·5 प्रतिशत से बढ़ाकर 9 प्रतिशत कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त, 11, नवम्बर, 1983 से अतिरिक्त नकद कोषानुपात 10 प्रतिशत से लागू रहेगा अर्थात् 12 नवम्बर, 1983 से माँग व समय देयताओं की वृद्धि का 10 प्रतिशत भाग अतिरिक्त नकद कोष के रूप में रिजर्व बैंक के पास रखा जायेगा। परन्तु विदेशी मुद्रा (अनिवासी) खाते (FCNR Account) तथा अनिवासी

(परदेशी) खाते (NRE Account) में देय मांग एवं समय देयताओं का केवल 3 प्रतिशत भाग रिजर्व बैंक के पास नकद शेष के रूप में रखा जाता है। अर्थात्—

CRR = 3% of NRE and FCNR Deposits + 9% of (Net Demand and Time Liabilities—FCNR/NRE Deposits) + 10% of Increase in Net Demand and Time Liabilities from 11-11-83.

इस अतिरिक्त नकद कोष पर रिजर्व बैंक निर्धारित दर से व्याज देता है। 16 नवम्बर, 1984 से यह व्याज दर बढ़ाकर 10 प्रतिशत कर दी गई है।

वर्ष 1982 से रिजर्व बैंक द्वारा न्यूनतम रोकड़ कोषानुपात न बनाये रखने की स्थिति में बैंकों पर देय जुर्माने के सम्बन्ध में नई योजना लागू की गई है जिसमें यदि बैंकों द्वारा कुल देय नकद कोष की राशि का 4 प्रतिशत तक का भाग जमा नहीं किया जाता है अर्थात् रिजर्व बैंक में जमा नकद शेष और देय राशि में अन्तर 4 प्रतिशत से अधिक नहीं है तब बैंक पर कोई जुर्माना नहीं लगेगा। उदाहरणार्थ—बैंक पर देय नकद कोष की राशि 200 करोड़ है परन्तु वास्तव में, बैंक ने रिजर्व बैंक के पास 192 करोड़ रुपये जमा किये हैं तब सम्बद्ध बैंक से कोई जुर्माना वसूल नहीं किया जायेगा।

(4) तरल कोषानुपात (Liquidity Reserve Ratio)—तरल कोषानुपात को वैधानिक तरलतानुपात (Statutory Liquidity Ratio) भी समझा जाता है। बैंकिंग विनिमय अधिनियम 1949 की धारा 24 के अन्तर्गत, प्रत्येक व्यापारिक बैंकों को अपनी कुल मांग एवं समय देयताओं (Total Demand and Time Liabilities) का एक निश्चित प्रतिशत भाग तरल कोषों के रूप में रखना पड़ता है। तरल कोषों के अन्तर्गत, बैंक नकदी, सोना (Gold) तथा रिजर्व बैंक द्वारा स्वीकृत प्रतिभूतियों में विनियोग सम्मिलित किया जाता है। इन तरल कोषों में रिजर्व बैंक के पास जमा नकद कोष सम्मिलित नहीं होते है परन्तु यदि रिजर्व बैंक के पास आवश्यकता से अधिक नकद कोष जमा किये गये हैं तब उस आधिक्य को तरल कोषानुपात में सम्मिलित किया जाता है। तरल कोषानुपात 25 प्रतिशत से लेकर 40 प्रतिशत तक निर्धारित किया जा सकता है। प्रारम्भ में यह 25 प्रतिशत था परन्तु वर्ष 1981 में इसे 35 प्रतिशत कर दिया गया था। इसे 28 जुलाई, 1984 से 35·5 प्रतिशत तथा 1 सितम्बर, 1984 से 36 प्रतिशत कर दिया गया है। वैधानिक तरलतानुपात 8 जून, 1985 से पुनः बढ़ाकर 36·5 प्रतिशत कर दिया गया है तथा पुनः 6 जुलाई, 1985 से बढ़ाकर इसे 37 प्रतिशत कर दिया गया है। विदेशी मुद्रा अनिवासी जमा खाते (FCNC Deposits Account) की देयताओं के विरुद्ध केवल 25 प्रतिशत तरल कोष रखे जाते हैं। रिजर्व बैंक द्वारा वर्ष 1985 में अनिवासी परदेशी खाते (NRE Account) की देयताओं के विरुद्ध तरल कोषानुपात 37 प्रतिशत से घटाकर 25 प्रतिशत कर दिया गया है। इससे बैंक के ऋण योग्य स्रोतों में वृद्धि होगी। यह अनुपात प्रत्येक दिन के कुल मांग तथा सावधि देयताओं

के आधार पर ज्ञात किया जायेगा। इससे पूर्व यह प्रत्येक सप्ताह के शुक्रवार (Friday) को कुल माँग एवं सावधि देयताओं के आधार पर ज्ञात किया जाता था। यदि कोई बैंक इस अनुपात को बनाये रखने में असमर्थ रहता है तब उस बैंक पर बैंक दर से 5 प्रतिशत अधिक तक का जुर्माना (Penalty) किया जा सकता है। रिजर्व बैंक इस प्रतिशत को बढ़ाकर व्यापारिक बैंकों की ऋण क्षमता कम कर देता है। इससे साख नियन्त्रण मे सहायता मिलती है। यह नीति मुद्रा स्फीति काल में अपनायी जाती है। इसके अन्तर्गत बैंकों को अपने कोष तरल स्रोतों में प्रयोग करने पड़ते हैं। बैंक इसमे सरकारी प्रतिभूतियों में रुपया विनियोग करते हैं चूंकि इससे उन्हें आय प्राप्त होती है। इस प्रकार रुपया बाजार से कम हो जाता है तथा रिजर्व बैंक मुद्रा स्फीति पर नियन्त्रण करने में सफल होता है। इसके विपरीत, मुद्रा संकुचन में तरल कोषानुपात घटाकर बैंक की ऋण क्षमता को बढ़ाया जाता है जिससे बैंक अधिक ऋण प्रदान करते हैं। इसके परिणामस्वरूप आर्थिक क्रियाओं को प्रोत्साहन मिलता है और मुद्रा संकुचन की स्थिति पर नियन्त्रण करने में सहायता मिलती है।

अतः आधुनिक युग में रिजर्व बैंक वैधानिक नकद कोष एवं तरल कोषों में परिवर्तन करके देश की आर्थिक स्थिति पर नियन्त्रण करने में योगदान प्रदान करता है।

(ब) विशिष्ट साख नियन्त्रण (Selective Credit Control)—विशिष्ट साख नियन्त्रण गुणात्मक प्रकृति के होते हैं। इसके अन्तर्गत प्रत्यक्ष रूप से साख नियन्त्रण का कार्य किया जाता है। इसमे रिजर्व बैंक प्राथमिकता के आधार पर दिये जाने वाले ऋणों के सम्बन्ध में निर्देश जारी करता है। संक्षेप में, विशिष्ट साख नियन्त्रण के अन्तर्गत, रिजर्व बैंक द्वारा निम्नलिखित पद्धतियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं—

(1) रिजर्व बैंक उपभोग साख (Consumer Credit) निर्देशित करता है। यदि साख नियन्त्रण करना है तब उपभोग साख पर नियन्त्रण किया जाता है। इसके अन्तर्गत उपभोग के लिये ऋणों पर रोक लगा दी जाती है।

(2) रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों को निर्देश देता है कि किन-किन क्षेत्रों में ऋण प्रदान किया जाना चाहिये एवं किन उद्योगों को बढ़ावा दिया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंकों को ऋण के सम्बन्ध में निर्देश देता है कि मार्जिन राशि (Margin Money) का कितना प्रतिशत निश्चित किया जाना चाहिये। वर्ष 1985 तक अनुसूचित व्यापारिक बैंकों को अपने कुल ऋणों का 40 प्रतिशत भाग प्राथमिकता वाले क्षेत्रों (Priority Sectors) में प्रदान करना अनिवार्य है। प्राथमिकता वाले क्षेत्र में कृषि, लघु स्तरीय उद्योग, यातायात परिचालक (Transport Operator), फुटकर व्यापारी (Retail Traders), पेशेवर व स्वरोजगार व्यक्ति (Professional and Self Employed Persons) आदि सम्मिलित किये जाते हैं। प्राथमिकता वाले क्षेत्र में प्रदत्त ऋणों का पुनः 40 प्रतिशत भाग कृषि एवं सहायक

क्रियाओं में प्रदत्त किया जाना चाहिये अर्थात् कुल ऋणों का 16 प्रतिशत भाग कृषि एवं सहायक क्रियाओं में लगाया जाना चाहिये। प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में प्रदत्त ऋण का 25 प्रतिशत भाग कमजोर वर्ग (Weaker Section) को प्रदान किया जाना चाहिये। इसमें लघु एवं सीमान्त कृषक (Small and Marginal Farmers) को ऋण, विभेदित ब्याज दरों (Differential Rate of Interest) वाला ऋण, अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों को ऋण, लघु क्षेत्र (Tiny Sector) में प्रदत्त ऋण तथा एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) में प्रदत्त ऋण सम्मिलित किये जाते हैं। इसमें प्रदत्त ऋणों के लिये किसी भी प्रतिभूतिअथवा जमानत की आवश्यकता नहीं होती है।

(3) रिजर्व बैंक नैतिक प्रभाव के अन्तर्गत व्यापारिक बैंकों पर साख नियन्त्रण का कार्य करता है। यह पद्धति अत्यन्त प्रभावपूर्ण है। इसके अन्तर्गत, रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों को सहमत करता है कि ऋण नीति किस प्रकार निर्धारित की जानी चाहिये। मन्दीकाल में, ऋणों को बढ़ाने के लिये कम प्रतिभूति एवं मार्जिन राशि (Margin Money) में कमी पर बल दिया जाता है। इसके विपरीत, तेजी काल में, ऋणों की स्वीकृति प्रदान करने पर रोक लगाई जाती है।

(4) साख का राशनिंग (Rationing of Credit) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक विशिष्ट उद्योगों में दिये जाने वाले ऋणों के लिये अधिकतम राशि निर्धारित करता है। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक निर्धारित करता है कि किन-किन उद्योगों में ऋण दिया जाना चाहिये।

(5) विशिष्ट साख नियन्त्रण के अन्तर्गत रिजर्व बैंक प्रत्यक्ष कार्य (Direct Action) भी करता है जिसमें तुरन्त निर्देश लागू किये जाते हैं। इसका प्रभाव शीघ्र दिखलाई पड़ता है। इसमें समस्त व्यापारिक बैंकों पर समान रूप से निर्देश जारी किये जाते हैं।

(6) विशिष्ट साख नियन्त्रण में रिजर्व बैंक ब्याज दरों के माध्यम से साख पर नियन्त्रण करता है। यह प्रत्येक क्षेत्र में प्रदत्त ऋणों के लिये न्यूनतम व अधिकतम ब्याज दरें निर्धारित करता है। वर्तमान समय में न्यूनतम ब्याज दर 4 प्रतिशत तथा अधिकतम 17·5 प्रतिशत निर्धारित की गई है।

अतः विशिष्ट साख नियन्त्रण में रिजर्व बैंक ऋण के उद्देश्य, मार्जिन की राशि, ऋण की अधिकतम राशि (Ceiling), गारन्टी की अधिकतम राशि तथा ब्याज दर का निर्धारण करता है। विशिष्ट साख नियन्त्रण में कपास, तिलहन, गुड़ (Gur) चीनी, खाण्डसारी, वनस्पति, खाद्य पदार्थ आदि वस्तुयें शामिल होती हैं। इसके विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय रिजर्व बैंक ऋण की अधिकतम सीमा, मार्जिन राशि का निर्धारण तथा ब्याज दर की न्यूनतम सीमा निर्धारित करता है। इसमें ब्याज की दर अधिक निर्धारित की जाती है तथा मार्जिन की राशि भी ऋण के 60 प्रतिशत से 70 प्रतिशत तक तय की जाती है। विशिष्ट साख नियन्त्रण का मुख्य उद्देश्य वस्तुओं के भण्डारण पर रोक लगाना है जिससे सट्टे (Speculation) की प्रवृत्ति पर रोक

लगाने में सहायता मिलती है। परन्तु राज्य एजेन्सीज (State Agencies) को इसमें सम्मिलित नहीं किया जाता है। उदाहरणार्थ—भारतीय खाद्य निगम (Food Corporation of India) तथा राज्य व्यापार निगम (STC) को प्रदत्त ऋण विशिष्ट साख नियन्त्रण में सम्मिलित नहीं किये जाते हैं। इसी प्रकार निर्यात के लिये प्रदत्त ऋण इसमें शामिल नहीं किया जाता है।

वर्ष 1985 में विशिष्ट साख नियन्त्रण पद्धति में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये हैं। वर्तमान समय में विशिष्ट साख नियन्त्रण में गेहूँ (Wheat), मिलों को कच्चे कपास एवं सूत के विरुद्ध ऋण (Advance to Mills againts Raw Cotton and Kapas) सम्मिलित नहीं किये जाते हैं। एक ऋणी की स्थिति में 50,000 रुपये तक का ऋण एक बैंक से विशिष्ट साख नियन्त्रण से मुक्त रखा गया है तथा वस्तुओं के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय मार्जिन की राशि घटा दी गयी है। 26 अक्टूबर, 1985 से माल की जमानत के विरुद्ध मार्जिन की राशि निम्नलिखित दरों से प्रभावी की जायेगी—

(प्रतिशत)

वस्तु (Commodities)	माल के विरुद्ध (Against stock)	
	Processing Mills	Others
1. धान/चावल (Paddy/Rice)	30	45
2. खाद्य पदार्थ [Food Grains (Except Wheat)]	45	60
3. दालें (Pulses)	45	60
4. तिलहन (Oil Seeds)	45	60
5. सूत व कपास (Cotton and Kapas)	—	45
6. गुड़ व खंडसारी (Gur and Khandsari)	45	75
7. वनस्पति तेल (Vegetable Oils)	45[1]	75

संक्षेप में, कहा जा सकता है कि रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों पर विभिन्न पद्धतियों के माध्यम से नियन्त्रण करता है। रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति के आधार पर राष्ट्र का आर्थिक विकास निर्भर करता है। रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों को लाइसेन्स प्रदान करके, उनके खातों का निरीक्षण करके एवं साख नियन्त्रण के विभिन्न तरीकों (Methods) का प्रयोग करके व्यापारिक बैंकों पर नियन्त्रण कार्य

1. यह केवल रजिस्टर्ड मिलों पर लागू समझा जायेगा।

करता है। इसके अन्तर्गत ऋण प्राधिकरण योजना (Credit Authorisation Scheme) को भी सम्मिलित किया जाता है।

ऋण प्राधिकरण योजना
(Credit Authorisation Scheme)

इस योजना के अन्तर्गत बड़े उद्योग-गृहों को अधिक ऋण राशि प्रदान करने पर रोक लगाई गई है। व्यापारिक बैंकों द्वारा किसी भी एक व्यापारी को निर्धारित सीमा से अधिक की ऋण राशि प्रदान नहीं की जा सकती है। इस योजना को वर्ष 1965 में लागू किया गया था। इसका एकमात्र उद्देश्य बड़े उद्योग-गृहों को असीमित मात्रा में ऋण देने से रोकना था। इस योजना के अन्तर्गत कार्यशील पूंजी के लिये 1 करोड़ रुपये से अधिक धनराशि एक ही ऋणी को देने से पूर्व, रिजर्व बैंक की सहमति आवश्यक है। वर्ष 1984 से यह सीमा बढ़ाकर सार्वजनिक कम्पनी (Public Company) एवं निजी कम्पनी (Private Company) की स्थिति में 4 करोड़ रुपये कर दी गयी है। निर्यात करने वाली कम्पनियों की स्थिति में यह सीमा 5 करोड़ रुपये निर्धारित की गई है।

उपरोक्त ऋण सीमा कार्यशील पूंजी के लिये ऋण प्राप्त करते समय लागू समझी जाती है। सावधि ऋण की स्थिति में पूर्वानुमति की निर्धारित सीमा निजी संस्थान के लिये 25 लाख रुपये है तथा सार्वजनिक संस्थान के लिये 1 करोड़ रुपये है। परन्तु वर्ष 1984 से दोनों संस्थानों के लिये यह सीमा 1 करोड़ रुपये कर दी गई है। बैंकों द्वारा ऋण प्रदान करते समय निम्नलिखित ऋणों अथवा सीमाओं (Limits) को ऋण प्राधिकरण योजना से मुक्त (Exempted) रखा गया है—

(1) 3 माह से कम अवधि के लिये अस्थायी कार्यशील पूंजी का अग्रिम (Temporary Working Capital Limit) जो वर्तमान सीमा का 10 प्रतिशत अथवा 50 लाख रुपये (जो दोनों में कम हो) तक हो सकता है।

(2) 3 माह से कम अवधि के लिये, वर्तमान पैंकिंग ऋण (Packing Credit) का 25% अथवा 50 लाख रुपये अतिरिक्त पैंकिंग ऋण के रूप में प्रदान किया गया है।

(3) एक बैंक से एक ऋणी के लिये निर्यात पैंकिंग ऋण की कुल सीमा 5 लाख रुपये तक का ऋण।

(4) ऋण अथवा सीमायें (Limits) जो सरकारी प्रतिभूतियों के विरुद्ध हैं अथवा जो सरकार के पूर्ति बिल (Supply Bill) से सम्बन्धित हैं।

(5) खाद्य पूर्ति के लिये राज्य सरकार, भारतीय खाद्य निगम अथवा राज्य सहकारी बैंक को प्रदत्त ऋण।

(6) सावधि जमा रसीदों के विरुद्ध प्रदत्त ऋण।

(7) पूर्ति बिलों के विरुद्ध ऋण जो अर्द्ध सरकारी संस्था (Semi Government Bodies) पर लिखे गये हैं।

(8) किसी बैंक द्वारा स्वयं अथवा अन्य बैंक के साथ संयुक्त रूप में प्रदत्त

अंतरिम सहायता (Interim Finance) जो निजी संस्था को [illegible] लाख रुपये तथा सार्वजनिक संस्था को 1 करोड़ रुपये तक प्रदान की गई है।

अतः उपरोक्त ऋण अथवा सीमाओं को ऋण प्राधिकरण योजना से मुक्त रखा गया है और ये ऋण प्रदान करते समय बैंकों को रिजर्व बैंक से पूर्व अनुमति प्राप्त करना आवश्यक नहीं है।

रिजर्व बैंक से पूर्वानुमति प्राप्त करने के लिये बैंक को ऋणी के सम्बन्ध में निम्नलिखित सूचनायें रिजर्व बैंक को भेजनी आवश्यक हैं—

(i) वर्तमान ऋण सीमायें जो ऋणी ने समस्त बैंकों से प्राप्त की हुई हैं,

(ii) कार्यशील पूंजी की कुल आवश्यकता का विवरण (Statement) तथा बैंक द्वारा स्वीकृत ऋण। कार्यशील पूंजी के अन्तर (Gap) की पूर्ति करने के लिये ऋणी के पास उपलब्ध साधन,

(iii) वित्तीय स्थिति का तुलनात्मक विवरण जिसमें कम्पनी का आर्थिक चिट्ठा (Balance Sheet) तथा आय का विवरण (Income Statement) सम्मिलित होता है।

(iv) रोकड़ प्रवाह विवरण (Cash Flow Statement),

(v) उपक्रम (Project) की लागत तथा उसके लिये वित्त प्राप्त करने के साधन।

उपरोक्त सूचनायें प्राप्त करने के पश्चात् रिजर्व बैंक ऋण के प्रस्ताव का अध्ययन करता है कि ऋणी के उत्पादन अथवा बिक्री का क्या लक्ष्य है, उसकी वित्तीय स्थिति कैसी है तथा ऋणी का कार्यशील पूंजी में स्वयं का क्या योगदान है अथवा दीर्घकालीन ऋणों एवं स्टाक तथा देनदारी के क्या नियम हैं ? उपरोक्त तथ्यों का ज्ञान प्राप्त करके रिजर्व बैंक प्रस्ताव पर स्वीकृति अथवा अस्वीकृति प्रदान करता है।

वर्ष 1983 में रिजर्व बैंक द्वारा ऋण प्राधिकरण योजना में शीघ्र ही ऋण की स्वीकृति के लिये नई नीति की घोषणा की गई है जो 1 अप्रैल 1984 से लागू समझी जायेगी। इसके अनुसार प्रस्तावित ऋण सीमा का 50 प्रतिशत भाग बैंक द्वारा रिजर्व बैंक की पूर्वानुमति के अभाव में ही प्रदान किया जा सकता है। इसमें ऋणी एवं सम्बद्ध बैंक को निम्नलिखित आवश्यकतायें पूर्ण करनी अनिवार्य हैं—

(a) उपक्रम में उत्पाद, विक्रय तथा चालू सम्पत्तियों का उचित मूल्यांकन किया गया है,

(b) चालू सम्पत्तियों एवं दायित्वों का उचित वर्गीकरण किया गया है,

(c) चालू अनुपात 1·33 : 1 से कम नहीं होना चाहिये,

(d) ऋणी द्वारा त्रैमासिक विवरण तथा अन्तिम खाते उचित समय पर प्रस्तुत किये जाते हैं,

(e) बैंक द्वारा ऋण सीमा का नियमित वार्षिक अवलोकन (Review) किया जाता है।

अतः ऋण प्राधिकरण योजना का प्रमुख उद्देश्य बड़े उद्योग-गृहों को असीमित मात्रा में ऋण प्रदान करने पर रोक लगाना है।

मुद्रा तिजोरी
(Currency Chests)

मुद्रा तिजोरी के अन्तर्गत वैंकों द्वारा अतिरिक्त धन जमा किया जाता है एवं इनकी छटनी करके गले-फटे नोट पृथक किये जाते हैं। प्रारम्भ में मुद्रा तिजोरी का कार्य स्टेट वैंक द्वारा रिजर्व वैंक की सहमति से किया जाता था। परन्तु वैंकिग विकास के साथ कार्य भार अत्यन्त व्यापक हो गया है। इसलिए अव यह कार्य राष्ट्रीयकृत वैंकों द्वारा भी किया जाता है। परन्तु इसके लिये रिजर्व वैंक की पूर्व स्वीकृति आवश्यक है। जिस वैंक द्वारा यह कार्य सम्पन्न किया जाता है वह वैंक अन्य वैंकों से उनकी अतिरिक्त (Surplus) राशि स्वीकार करता है। रिजर्व वैंक को समय-समय पर इनका निरीक्षण करने का अधिकार है। जिस वैंक द्वारा मुद्रा तिजोरी का कार्य किया जाता है उसे रिजर्व वैंक की पूर्व सहमति से गले-फटे नोट नष्ट करने का भी अधिकार है। यह वैंक रिजर्व वैंक के ट्रस्टी के रूप में कार्य करता है। मुद्रा तिजोरी के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य किये जाते हैं—

(1) इसमें अन्य वैंकों की धनराशि जमा करने की सुविधा प्रदान की जाती है।

(2) इसमें मुद्रा विनिमय कार्य किया जाता है अर्थात् मुद्रा को वदलने की सुविधायें प्रदान की जाती हैं।

(3) जो वैंक मुद्रा तिजोरी का संचालन करता है उसे आवश्यकतानुसार धन जमा करने अथवा निकालने (Withdrawal) का अधिकार है।

रिजर्व वैंक की नई विल वाजार योजना
(New Bill Market Scheme of R. B. I.)

रिजर्व वैंक समस्त अनुसूचित वैंकों का अन्तिम ऋणदाता (Lender of Last Resort) समझा जाता है। रिजर्व वैंक अन्य वैंकों को विनिमय विपत्र पुनः भुनाकर (Rediscount) अथवा उनकी जमानत के विरुद्ध वित्तीय सहायता प्रदान करता है। रिजर्व वैंक अधिनियम की धारा 17 (2) (a) के अन्तर्गत वर्ष 1970 में नई विल वाजार नीति की घोषणा की गई है, जिसकी मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

(1) इस योजना के अन्तर्गत समस्त लाइसेन्स प्राप्त अनुसूचित वैंक एवं स्टेट वैंक व उसके सहायक वैंक सम्मिलित किये गये हैं।

(2) यह योजना केवल विशुद्ध अथवा वास्तविक व्यापारिक विलों (Genuine Trade Bills) तक ही सीमित है जिसमें वे विल सम्मिलित किये गये हैं जो माल के विक्रय अथवा सुपुर्दगी से सम्वन्धित हैं।

(3) इसके अन्तर्गत निम्नलिखित विनिमय विपत्र सम्मिलित किये गये हैं जिन पर कम से कम दो व्यक्तियों के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं तथा इनमें से एक हस्ताक्षर अनुसूचित वैंक अथवा राज्य सहकारी वैंक के होने चाहियें—

(i) विनिमय विपत्र क्रेता के बैंक के ऊपर लिखा तथा स्वीकार किया गया है।

(ii) विनिमय विपत्र क्रेता एवं उसके बैंक पर संयुक्त रूप में लिखा गया है तथा संयुक्त रूप में स्वीकार किया गया है।

(iii) विनिमय विपत्र क्रेता पर लिखा गया है तथा क्रेता द्वारा अप्रतिसंहार्य साख-पत्र (Irrevocable Letter of Credit) के आधीन स्वीकार किया गया है तथा विनिमय विपत्र साख-पत्र खोलने वाले बैंक द्वारा प्रमाणित किया गया है कि विनिमय विपत्र माल की सुपुर्दगी के लिये लिखा गया है तथा साख-पत्र की शर्तें विक्रेता द्वारा पूर्ण की गई हैं।

(iv) विनिमय विपत्र सरकारी अथवा अर्द्ध सरकारी विभाग (Government or Semi Government Departments) पर माल के विक्रय के सम्बन्ध में लिखा गया है।

(v) विनिमय विपत्र भारतीय औद्योगिक ऋण एवं विनियोग निगम (Industrial Credit and Investment Corporation of India) पर लिखा एवं स्वीकार किया गया है तथा यह विपत्र निगम द्वारा माल के क्रेता की ओर से संयुक्त अथवा पृथक रूप में स्वीकार किया गया है। परन्तु इस विपत्र पर मान्यता प्राप्त अनुसूचित व्यापारिक बैंक ही पुनः भुनाकर वित्त प्राप्त कर सकते हैं।

(vi) विनिमय विपत्र क्रेता पर लिखा एवं स्वीकार किया गया है तथा विक्रेता द्वारा बैंक के हित में पृष्ठांकित किया गया है और इस विपत्र के साथ लाइसेंस प्राप्त अनुसूचित बैंक का प्रमाण-पत्र संलग्न होता है कि विपत्र का भुगतान देय तिथि से 3 दिन पूर्व कर दिया जायेगा।

(4) विनिमय विपत्र की अवधि (Usance) 90 दिन से अधिक नहीं होनी चाहिये। विशिष्ट परिस्थितियों में यह अवधि 120 दिन की हो सकती है परन्तु विपत्र पुनः भुनाते समय यह अवधि 90 दिन से अधिक नहीं होनी चाहिये।

(5) विनिमय विपत्र रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित प्रारूप (Specimen) के अनुसार होना चाहिये तथा विपत्र के साथ आहर्ता द्वारा माल के सम्बन्ध में प्रमाण-पत्र संलग्न होना चाहिये जिसमें माल के अधिकार प्रपत्रों की संख्या व तिथि आदि का विवरण होता है।

(6) भुनाये गये विनिमय विपत्र रिजर्व बैंक द्वारा भुगतान के लिये प्रस्तुत नहीं किये जायेंगे वरन् विपत्र भुनाने वाले बैंक द्वारा विपत्र की देय तिथि (Maturity Date) से 3 दिन पूर्व तक भुगतान करके वापिस प्राप्त किये जायेंगे। ये विपत्र इस अवधि से पूर्व भी भुगतान करके छुड़ाये जा सकते हैं जिसमें छूट (Discount) का आनुपातिक भाग वापिस किया जायेगा। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्[illegible] विपत्र की तिथि में रियायती दिन (Grace Period) सम्मिलित नहीं [illegible]

(7) इस योजना के अन्तर्गत केवल उन्हीं विपत्रों को पुनः भुन[illegible] है जिनकी न्यूनतम राशि (Minimum Amount) 1000 [illegible]

है (प्रारम्भ में यह राशि 5,000 रुपये निर्धारित की गई थी) तथा भुनाये गये विपत्रों की कुल कीमत 50,000 रुपये से कम नहीं है।

(8) इस योजना के अन्तर्गत विपत्र भुनाने वाला बैंक 10 लाख रुपये से कम का विपत्र (Bill) रिजर्व बैंक के अभिकर्त्ता (Agent) के रूप में अपने पास रखता है। 10 लाख रुपये से अधिक के विपत्र रिजर्व बैंक के पास लेखे (Lodgement) के उद्देश्य से भेजे जायेंगे।

(9) इसके अन्तर्गत बैंक द्वारा क्रेता की ओर से स्वीकार किये गये तथा बाद में विक्रेता की ओर से भुनाये गये विनिमय विपत्र भी सम्मिलित किये जाते हैं।

अतः बिल बाजार की नयी योजना विनिमय विपत्र भुनाकर ऋण प्रदान की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है। इसके अन्तर्गत व्यापारिक बैंकों को अन्य व्यापारिक बैंकों, जीवन बीमा निगम, यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया तथा औद्योगिक ऋण एवं विनियोग निगम से विपत्र भुनाकर वित्तीय सहायता प्राप्त करने के लिये अधिकृत किया गया है। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक द्वारा बिल बाजार का क्षेत्र विस्तृत करने के लिये यह सुविधा व्यापारिक बैंकों के अतिरिक्त अन्य ऋण प्रदान करने वाली संस्थाओं को भी प्रदान की जाती है। उदाहरणार्थ—जीवन बीमा निगम, राज्य वित्त निगम आदि। रिजर्व बैंक द्वारा प्रत्येक बैंक के लिये विपत्र भुनाने की अधिकतम राशि समय-समय पर निर्धारित की जाती है।

प्रश्न
(Questions)

1. भारतीय अर्थव्यवस्था में रिजर्व बैंक की भूमिका पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

Write short note on the role of R.B.I. in Indian Economy.

2. व्यापारिक बैंकों एवं रिजर्व बैंक के सम्बन्धों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

Describe briefly the relationship between Commercial Banks and Reserve Bank. *(C. A. I. I. B. May, 1975)*

3. रिजर्व बैंक की भूमिका निम्नलिखित के सम्बन्ध में स्पष्ट कीजिये—(a) व्यापारिक बैंकों को आज्ञा-पत्र देना (Licencing), (b) बैंक का साख नियन्त्रण, (c) ग्रामीण विकास।

Explain the role of Reserve Bank of India in relation to (a) Licencing of Commercial Banks, (b) Control of Bank Credit, (c) Rural Development. *(C. A. I. I. B. Nov., 1979)*

4. वैधानिक तरलता अनुपात एवं नकदकोष अनुपात में हुये नवीनतम परिवर्तनों का वर्णन कीजिये। बैंक के ऋण योग्य स्रोतों पर उनका क्या प्रभाव हुआ है?

Indicate in brief most recent changes made in Statutory Liquidity Ratio and Cash Reserve Ratio. What their effect on Lendable Resources of Banks. *(C. A. I. I. B. Part II. Oct., 1985)*

5. "रिजर्व बैंक साख को नियमित ही नहीं करता है वरन् यह साख विकास की संस्था है।" भारतीय अर्थव्यवस्था में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की भूमिका के सन्दर्भ में इस कथन की विवेचना कीजिये।

"The Reserve Bank of India is not merely regulator of credit but a Development Agency." Explain the statement with reference to the role of Reserve Bank of India in the Indian Economy.

(C. A. I. I. B. Nov., 1984)

6. रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

Write short note on Monetary Policy of R. B. I.

7. संक्षेप में उन तरीकों की व्याख्या कीजिये जिनकी सहायता से रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों पर नियन्त्रण करता है।

Describe in brief, the methods by which Reserve Bank of India exercise control over the Commercial Banks.

(C. A. I. I. B. May., 1982)

8. रिजर्व बैंक को बैंकिंग कम्पनियों एवं बैंकों के ऊपर कौन-कौन सी शक्तियाँ प्राप्त हैं?

What are the powers of Reserve Bank of India over Banking Companies and Banks *(C. A. I. I. B. May. 1983)*

9. रिजर्व बैंक व्यापारी बैंकों के ऋणों पर किस प्रकार नियन्त्रण रखता है?

Explain how the Reserve Bank of India controls the advances by Commercial Banks of India. *(C. A. I. I B. Aug., 1978)*

10. मुद्रा पूर्ति एवं बैंक साख के बीच सम्बन्धों की विवेचना कीजिये। रिजर्व बैंक के पास कौन-कौन से साधन उपलब्ध हैं जिनकी सहायता से वह मुद्रा स्फीति के अर्थव्यवस्था पर प्रभाव को कम करने हेतु बैंक साख पर नियन्त्रण करता है।

Examine the relationship between money supply and bank credit. What are the various means by which Reseve Bank of India controls the bank credit to minimise the inflationary pressures on the Economy? *(C. A. I. I. B. Part. II, May., 1982)*

11. निम्नलिखित में अन्तर स्पष्ट कीजिये—

Distinguish between the followings—

(i) Statutory Liquidity Ratio and Cash Reserve Ratio.

(ii) General Credit Control and Selective Credit Control.

12. अनुसूचित बैंकों को रिजर्व बैंक से प्राप्त सुविधाओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

Discuss briefly the various facilities available to Schedule Banks from Reserve Bank of India.

13. विशिष्ट साख नियन्त्रण क्या है तथा रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा विभिन्न निर्देशों के माध्यम से विशिष्ट वस्तुओं की जमानत के विरुद्ध बैंक साख को नियमित करने के लिये क्या उपाय किये जाते हैं ?

What is 'SELECTIVE CREDIT CONTROL' and what measures are taken by Reserve Bank of India through various directives to regulate flow of Bank Credit against security of selected commodities ? *(C. A. I. I. B. Sept., 1985)*

14. कृपया रिजर्व बैंक के महत्वपूर्ण कार्यों का वर्णन कीजिये।

Please discuss the important functions of R. B. I.

(C. A. I. I. B. Jan., 1985; Nov., 1983)

□□□

4 बैंकर और ग्राहक के सम्बन्ध
(RELATIONSHIP BETWEEN BANKER AND CUSTOMER)

बैंक अपने ग्राहकों को अनेक प्रकार की सेवायें प्रदान करते हैं। बैंकों को ग्राहकों के साथ व्यवहार करते समय विभिन्न प्रकार की स्थिति होती है। बैंक ग्राहकों के ट्रस्टी, अभिकर्त्ता, देनदार आदि के रूप में कार्य करते हैं। बैंक से अभिप्राय उस व्यक्ति अथवा संस्था से होता है जो ऋण अथवा विनियोग के उद्देश्य से जनता से निक्षेप स्वीकार करता है तथा इसकी अदायगी मांग पर चैक, ड्राफ्ट अथवा अन्य विधि से की जाती है। बैंकों की मुख्य विशेषता यह होती है कि ये जनता के रुपये की अदायगी चैक अथवा ड्राफ्ट के माध्यम से करते हैं। कोई भी वित्तीय संस्था, जो निक्षेप स्वीकार करने एवं ऋण प्रदान करने का कार्य करती है, उस समय तक बैंक नहीं समझी जा सकती है जब तक कि वह संस्था अपने ग्राहकों को चैक बुक की सुविधा प्रदान नहीं करती है। अतः चैक बुक की सुविधा केवल बैंकों द्वारा ही प्रदान की जा सकती है। परन्तु डाकघर (Post Office) में बचत बैंक खाते पर चैक बुक की सुविधा प्रदान की जाती है। यह सुविधा विशेष परिस्थितियों में प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी संस्था, बैंकों को छोड़ कर, चैक बुक की सुविधा प्रदान नहीं कर सकती है।

अतः बैंक से अभिप्राय उस संस्था से होता है जो जनता से ऋण अथवा विनियोग के उद्देश्य के लिये निक्षेप स्वीकार करती है तथा निक्षेप का भुगतान मांग पर चैक अथवा ड्राफ्ट से किया जाता है।[1] बैंक द्वारा निक्षेप का भुगतान ग्राहक की मांग पर ही किया जाता है। परन्तु बैंक द्वारा ग्राहक का खाता बन्द करने पर अथवा ग्राहक की मृत्यु अथवा दिवालिया होने पर रुपये की मांग नहीं की जाती है और बैंक ग्राहक अथवा विधिक उत्तरजीवियों अथवा दिवालिया व्यक्ति के सरकारी प्रापक (Official Receiver) को रुपये का भुगतान करता है।

ग्राहक की परिभाषा
(Definition of Customer)

ग्राहक की परिभाषा किसी विधि के अन्तर्गत नहीं दी गयी है। परन्तु सामान्यतः ग्राहक से आशय उस व्यक्ति से होता है जो व्यापारी से लेन-देन का कार्य करता है। बैंकिंग व्यवहार के अन्तर्गत ग्राहक से आशय उस व्यक्ति से है जिसका बैंक में खाता है और वह बैंक से लेन-देन करता है। प्राचीन अवधारणा के अनुसार

1. विस्तार के लिये देखिये—अध्याय–1।

ग्राहक उस व्यक्ति को समझा जाता था जो व्यक्ति वैंक से नियमित लेन-देन करता हो अर्थात् लेन-देन लम्बी अवधि के लिए होने चाहिए। ग्राहक 'Customer' शब्द का उद्गम 'Custom' शब्द से हुआ समझा जाता है। 'Custom' से अभिप्राय रीति-रिवाज से होता है। रीति-रिवाज उन मान्यताओं को कहते हैं जो लम्बी अवधि से जनसाधारण द्वारा अपनाये जाते हैं। अतः ग्राहक (Customer) शब्द का शाब्दिक अभिप्राय उस व्यक्ति से होता जो वैंक में खाता रखता है तथा खाते में नियमित लेन-देन करता है। इस विचारधारा का समर्थन सर जोन पेजेट ने किया है।

आधुनिक विचारधारा के अनुसार नियमित लेन-देन होना आवश्यक नहीं है। इसके अनुसार वह व्यक्ति ग्राहक है जिसका खाता वैंक में है और वह वैंक से लेन-देन करता है। इस सम्वन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि लेन-देन वैंकिग प्रकृति का होना चाहिए अर्थात् ग्राहक वह व्यक्ति है जो वैंक में रुपया जमा करता है अथवा रुपया निकलवाता है। यदि कोई व्यक्ति वैंक से किसी अन्य प्रकार की सेवायें प्राप्त करता है, उदाहरणार्थ—ड्राफ्ट क्रय करना, सुरक्षित जमा कक्ष (Safe Deposit) की सुविधायें प्राप्त करना आदि तव, इस स्थिति में, वह व्यक्ति ग्राहक नहीं समझा जायेगा। ग्राहक होने के लिये आवश्यक है कि उस व्यक्ति का वैंक में खाता हो एवं वह व्यक्ति वैंक से वैंकिग प्रकृति का व्यवहार करता हो। ग्राहक का वैंक में खाता किसी भी प्रकृति का हो सकता है। उदाहरणार्थ—बचत खाता, चालू खाता, सावधि जमा खाता अथवा ऋण खाता। इस सम्वन्ध में यह तथ्य विचारणीय है कि एक वैंक की एक विशिष्ट शाखा का ग्राहक वैंक की अन्य शाखा का ग्राहक नहीं समझा जाता है।

वैंकर और ग्राहक के सम्वन्ध
(Relationship between Banker and Customer)

वैंक द्वारा ग्राहकों को अनेक प्रकार की सेवायें प्रदान की जाती हैं। वैंक और ग्राहक के वीच निम्नलिखित सम्वन्ध पाये जाते हैं—

(1) देनदार एवं लेनदार (Debtor and Creditor)—ग्राहक द्वारा वैंक में रुपया जमा किये जाने की स्थिति में वह ग्राहक लेनदार (Creditor) होता है तथा वैंक ऋणी अथवा देनदार (Debtor) होता है। इसके विपरीत, यदि ग्राहक ने वैंक से ऋण लिया है तव वैंक लेनदार (Creditor) तथा ग्राहक देनदार (Debtor) होता है। वैंकर और ग्राहक में लेनदार एवं देनदार के सम्वन्ध सामान्य लेनदार अथवा देनदार के होते हैं परन्तु निम्नलिखित परिस्थितियों में ये सम्वन्ध पृथक होते हैं—

(i) सामान्यतः देनदार अपने ऋण का भुगतान किसी भी समय कर सकता है परन्तु वैंक उसी स्थिति में रुपये का भुगतान करता है जवकि लेनदार द्वारा रुपये की मांग (Demand) की जाती है।

(ii) वैंक की स्थिति में रुपये की मांग ग्राहक द्वारा निश्चित स्थान एवं समय (Place and Time) पर की जानी चाहिए तथा मांग कार्यकाल के घण्टों (Working

Hours) में की जानी चाहिए। परन्तु सामान्य लेनदार एवं देनदार की स्थिति में यह आवश्यक नहीं होता है।

(iii) ग्राहक द्वारा रुपये की माँग उचित विधि के अन्तर्गत की जानी चाहिए अर्थात् रुपया चैक अथवा निकासी पर्ची (Withdrawal Slip) के माध्यम से ही निकाला जा सकता है।

(iv) ग्राहक द्वारा बैंक में रुपया जमा किया जाता है। यह राशि ऋण से पृथक होती है तथा इस पर परिसीमा अधिनियम (Limitation Act) लागू नहीं होता है। परन्तु निक्षेप की मांग करने की तिथि से परिसीमा अधिनियम लागू हो जाता है तथा निर्धारित अवधि (3 वर्ष) के भीतर रुपये की वसूली के लिये वाद प्रस्तुत किया जा सकता है। सावधि जमा निक्षेप की स्थिति में रुपया देय तिथि पर माँग पर देय हो जाता है तथा इसके पश्चात् ग्राहक किसी भी समय जमा रसीद (Deposit Receipt) बैंक में जमा करके रुपया वसूल कर सकता है। जमा रसीद जमा करने की तिथि से परिसीमा अधिनियम लागू समझा जाता है तथा रुपया वसूली के लिये जमा रसीद जमा करने की तिथि से 3 वर्ष के भीतर वाद प्रस्तुत किया जा सकता है। बैंकिंग विनिमय अधिनियम, 1949 की धारा 26 के अनुसार, प्रत्येक बैंक को उन खातों की वार्षिक रिपोर्ट जमा करना अनिवार्य है जिन खातों में पूर्व 10 वर्ष से कोई लेन-देन नहीं हुआ है। सावधि जमा खाते की स्थिति में 10 वर्ष की अवधि सावधि जमा खाते की देय तिथि से प्रारम्भ समझी जाती है। इन खातों की राशि 10 वर्ष पश्चात सरकार के खाते (Unclaimed Account) में जमा कर दी जाती है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि इन जमाओं पर परिसीमा अधिनियम लागू नहीं होता है, चूँकि इन जमाओं की माँग (Demand) नहीं की गयी है। परिसीमा अधिनियम रुपये की माँग की तिथि से लागू समझा जाता है। परन्तु कम्पनी के पास सावधि जमा की स्थिति में परिसीमा नियम परिपक्वता की तिथि (Maturity Date) से लागू माना जाता है और पक्षकार को इस तिथि के 3 वर्ष के भीतर वसूली का वाद प्रस्तुत कर देना चाहिए। इस निर्णय की पुष्टि काशीनाथ शंकरप्पा वाणी नामक विवाद[1] में की गयी है, जिसमें काशीनाथ ने कम्पनी को निक्षेप स्वरूप धन प्रदान किया हुआ है जिसके लिये कम्पनी द्वारा सावधि जमा रसीद जारी की जाती है। निक्षेप की देयतिथि 31 जुलाई, 1940 है परन्तु काशीनाथ द्वारा रुपये की माँग 17 मई, 1941 को की जाती है। काशीनाथ रुपये की वसूली के लिये 16 जून, 1944 को वाद प्रस्तुत करता है। वाद में कालातीत ऋण 17 मई, 1944 को हो जाता परन्तु न्यायालय खुलने की प्रथम तिथि 16 जून ही है। अतः ऋण परिसीमा अधिनियम से मुक्त समझा जायेगा।

विचाराधीन विवाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि कम्पनी द्वारा

1. Kashinath Sankarappa Wani Vs. New Akot Cotton Ginning & Pressing Co Ltd. (A. I. R. 1958 S. C. 437).

प्राप्त निक्षेप की अदायगी माँग पर नहीं समझी जा सकती है, चूँकि निक्षेप की देय तिथि 31 जुलाई, 1940 है और इस तिथि के पश्चात कम्पनी-ब्याज देने के लिये बाध्य नहीं है। अतः परिसीमा अवधि की गणना 1 अगस्त, 1940 से की जायेगी। अतः न्यायालय द्वारा काशीनाथ का वाद कालातीत घोषित किया गया।

(2) न्यासी अथवा ट्रस्टी के रूप में (Banker as Trustee)—बैंक ग्राहक के न्यासी या ट्रस्टी के रूप में अनेक कार्य सम्पन्न करता है। वह ग्राहक की ओर से प्रतिभूतियाँ क्रय करता है और ग्राहक के चैक, ड्राफ्ट आदि का संग्रहण करता है। ग्राहक द्वारा चैक आदि संग्रहण के लिए जमा करवाने पर बैंक उस समय तक ट्रस्टी के रूप में कार्य करता है जब तक कि रुपया प्राप्त करके ग्राहक के खाते में जमा नहीं कर दिया जाता है। उगाही का रुपया ग्राहक के खाते में जमा करते ही ग्राहक तथा बैंकर की स्थिति लेनदार एवं देनदार की हो जाती है। ग्राहक द्वारा बैंक में रुपया जमा करने पर बैंक तथा ग्राहक की स्थिति देनदार एवं लेनदार की होती है परन्तु यदि रुपया किसी विशिष्ट निर्देश के साथ दिया जाता है तब बैंक ट्रस्टी के रूप में कार्य करता है।

यदि बैंक को कोई निर्देश नहीं दिया गया है तथा रुपया उचन्त खाते (Suspense Account) में रखा जाता है तब बैंक को ट्रस्टी नहीं समझा जायेगा। उसके बैंकर से सम्बन्ध देनदार व लेनदार के होंगे। इस निर्णय की पुष्टि न्यू बैंक ऑफ इण्डिया बनाम प्यारे लाल नामक विवाद[1] में की गयी। इस विवाद में प्यारे लाल ने न्यू बैंक ऑफ इण्डिया की लाहौर शाखा में 1,35,000 रुपये जमा किये और निर्देश दिया कि न्यू बैंक की नयी खुलने वाली कलकत्ता शाखा में धन अन्तरण कर दिया जाये। धन प्राप्ति की रसीद बैंक द्वारा प्यारे लाल को प्रदान की गयी। यह धन प्यारे लाल के पुनः निर्देशानुसार सावधि जमा खाते अथवा अन्य खाते में जमा किया जाना था। न्यू बैंक की कलकत्ता शाखा खुलने पर बैंक ने 1,35,000 रुपये सावधि जमा खाते में जमा किये परन्तु प्यारे लाल की ओर से कोई निर्देश प्राप्त नहीं किया गया। इसी अवधि के बीच बैंक अपने दायित्वों का भुगतान करने में असमर्थ हो गया तथा न्यायालय के आदेशानुसार जमाकर्त्ताओं को जमा धन का 70 प्रतिशत भाग नकद एवं 5 प्रतिशत के अंश प्रदान किये गये।

वादी द्वारा कलकत्ता हाई कोर्ट में वाद प्रस्तुत किया गया जिसमें निर्णय दिया गया कि बैंक ने वादी की सहमति के अभाव में जमा रसीद जारी की है। बैंक द्वारा सर्वोच्च न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया गया जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि ग्राहक द्वारा कोई भी धनराशि बैंक को भुगतान करने पर उनके बीच देनदार व लेनदार के सम्बन्ध स्थापित होते हैं, परन्तु ये सम्बन्ध विशिष्ट निर्देश द्वारा समाप्त किये जा सकते हैं। यदि ग्राहक बैंक को इस आशय से रुपया देता है कि अमुक राशि अन्य व्यक्ति के खाते में भुगतान की जाये तथा उस व्यक्ति का बैंक में खाता नहीं है

1. New Bank of India Vs. Pyare Lal (A. I. R. 1962)

और वह धन अपने पास पुनः निर्देश प्राप्त होने तक रखता है तब यह ट्रस्ट समझा जायेगा तथा इस स्थिति में देनदार व लेनदार के सम्बन्ध समाप्त हो जाते हैं। उपरोक्त स्थिति में, बैंक ने प्यारे लाल के ट्रस्टी के रूप में धन प्राप्त किया है तथा प्यारे लाल ने सावधि जमा रसीद जारी करने का निर्देश नहीं दिया है। अतः यह सावधि जमा खाता प्यारे लाल पर बाध्य नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय ने बैंक द्वारा प्रस्तुत वाद रद्द कर दिया और सावधि जमा खाते की राशि को ट्रस्ट समझा गया, चूंकि बैंक ने धन अन्तरण के उद्देश्य से धन ट्रस्टी के रूप में प्राप्त किया है। इसी प्रकार यदि ग्राहक ने कोई सम्पत्ति वसूली के लिए बैंक को उसके ऋण की पूर्ति के लिए दी है तब बैंक ग्राहक का ट्रस्टी नहीं होगा, चूंकि ट्रस्टी ट्रस्ट राशि का अपने हित में प्रयोग नहीं कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि न्यू बैंक ऑफ इण्डिया बनाम भारत संघ नामक विवाद[1] में की गयी।

(3) मालिक एवं अभिकर्त्ता (Principal and Agent)—बैंक ग्राहक की ओर से उसके अभिकर्त्ता के रूप में कार्य करता है। इसके अन्तर्गत बैंक बीमा किश्त का भुगतान, प्रतिभूतियों पर लाभांश की वसूली आदि कार्य करता है। बैंक द्वारा अपने ग्राहक की ओर से अभिकर्त्ता के रूप में किये गये कार्यों के लिये ग्राहक उत्तरदायी होता है। परन्तु इसके लिये यह आवश्यक है कि बैंक द्वारा ये कार्य उसकी सामान्य प्रकृति में किये गये हों।

(4) निक्षेपकर्त्ता एवं निक्षेपगृहिता (Bailor and Bailee)—ग्राहक द्वारा संरक्षण में बहुमूल्य वस्तुओं के जमा करने की स्थिति में ग्राहक निक्षेपकर्त्ता (Bailor) तथा बैंक निक्षेपगृहीता (Bailee) होता है।

(5) पट्टाकर्त्ता एवं पट्टागृहिता (Lessor and Lessee)—बैंक द्वारा सुरक्षित जमा कक्ष अथवा लॉकर सुविधायें दिये जाने की स्थिति में ग्राहक और बैंक के बीच पट्टाकर्त्ता (Lessor) एवं पट्टागृहीता (Lessee) के सम्बन्ध होते हैं।

बैंक के कर्त्तव्य एवं दायित्व
(Duties and Obligations of a Bank)

बैंक और ग्राहक के बीच सम्बन्धों की स्थापना एक अनुबन्ध के आधीन होती है। बैंक के ग्राहक के प्रति विभिन्न कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व होते हैं। बैंक के प्रमुख दायित्व निम्नलिखित हैं—

(1) ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान करना,

(2) ग्राहक के खाते की गोपनीयता रखना,

(3) ग्राहक के खाते में चैकों का संग्रहण करना एवं निर्देशानुसार कार्य करना।

(4) ग्राहक के खाते की पासबुक अथवा विवरण तैयार करना।

1. New Bank of India Vs. Union of India.

बैंक को अपने कर्त्तव्यों का उचित विधि से पालन करना चाहिये अन्यथा वह ग्राहक के प्रति क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है।

चैकों का भुगतान करना
(Payment of Cheques)

बैंक ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है। विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 31 के अन्तर्गत स्पष्ट किया गया है कि बैंक निम्नलिखित परिस्थितियों में चैक का भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है—

(1) ग्राहक के खाते में पर्याप्त राशि होना (Safficient Funds in Customer's Account)—ग्राहक द्वारा जिस खाते में चैक जारी किया गया है उसमें चैक प्रस्तुती के समय उचित कोष होने चाहिये। यदि ग्राहक द्वारा कुछ चैक वसूली के लिये जमा किये गये हैं तथा उनकी वसूली नहीं हुई है तब ग्राहक के खाते में चैकों की राशि जमा नहीं समझी जाती है। पर्याप्त कोष से अभिप्राय उस राशि से होता है जो राशि चैक की राशि का भुगतान करने के लिये पर्याप्त समझी जाती है। यदि ग्राहक के एक शाखा में दो खाते हैं तब ये दोनों खाते पृथक-पृथक अस्तित्व के खाते समझे जायेंगे तथा जिस खाते में चैक जारी किया गया है, यदि उसमें पर्याप्त राशि नहीं है तब चैक वापिस किया जाना चाहिये।

इसी प्रकार, यदि किसी व्यक्ति के एक ही बैंक की दो शाखाओं में पृथक-पृथक खाते हैं तब वे खाते पृथक-पृथक समझे जायेंगे और बैंक एक शाखा पर प्रस्तुत चैक, पर्याप्त कोष न होने की स्थिति में, वापिस कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि **मोहम्मद हुसैन साहिब बनाम चार्टर्ड बैंक** नामक विवाद[1] में की गयी। प्रस्तुत वाद में वादी के चार्टर्ड बैंक की मद्रास शाखा में अधिविकर्ष (Overdraft) की सुविधा प्राप्त थी तथा वादी के 13,600 पौंड करांची शाखा में जमा थे। वादी ने अनेक चैक अधिविकर्ष खाते में जारी किये जिनको अपर्याप्त कोष के कारण बैंक ने वापिस कर दिया। वादी द्वारा मद्रास हाई कोर्ट में 12 लाख रुपये की क्षतिपूर्ति का वाद प्रस्तुत किया गया, चूंकि बैंक द्वारा चैक वापिस करने के कारण वह दिवालिया हो गया। वादी ने तर्क प्रस्तुत किया कि बैंक को अपनी करांची शाखा में जमा धनराशि को ध्यान में रखकर चैक भुगतान करने चाहिये थे। न्यायालय द्वारा वाद रद्द करते हुये निर्णय दिया गया कि वादी को चैक के विरुद्ध करांची बैंक में जमा धन राशि के आधार पर उस समय तक कोई उपचार प्राप्त नहीं है जब तक कि वादी द्वारा करांची शाखा पर मांग नहीं की जाती है। अतः ग्राहक को दूसरी शाखा में जमा धनराशि के आधार पर अन्य शाखा से भुगतान प्राप्त करने का अधिकार नहीं है।

अतः बैंक चैक का भुगतान करने के लिये उसी स्थिति में उत्तरदायी होता

---

1. N. Mohammad Hussain Sahed Vs. Chartered Bank and Other (1965)

है जबकि जिस खाते मे चैक जारी किये गये हैं उसमें पर्याप्त धनराशि जमा होती है।

(2) रुपये की माँग करना (Demand of Amount)—बैंक ग्राहक के चैक का भुगतान करने के लिये उसी स्थिति में उत्तरदायी होता है जबकि बैंक से भुगतान करने की माँग की जाती है। यह माँग उचित समय, स्थान एवं विधि से की जानी चाहिये। चैक भुगतान के लिये उसी शाखा पर प्रस्तुत करना चाहिये जिस शाखा द्वारा चैक बुक जारी की गयी है अर्थात् जिस शाखा मे व्यक्ति का खाता है तथा चैक बैंक के कार्यकाल के घण्टों मे प्रस्तुत करना चाहिये। इसके अतिरिक्त, रुपये की माँग उचित विधि से की जानी चाहिये अर्थात् चैक उचित रूप में लिखा होना चाहिये। चैक पर तिथि, रकम, प्रापक का नाम एवं ग्राहक के हस्ताक्षर स्पष्ट होने चाहियें। चैक 6 माह से पूर्व की तिथि का अथवा आगामी तिथि (Post-dated Cheque) का नही होना चाहिये तथा चैक पर शब्दो एवं अंकों की राशि मे अन्तर नही होना चाहिये। चैक पैन (Pen) से लिखा होना चाहिये, पैन्सिल द्वारा लिखा गया चैक व्यवहार में बैंक भुगतान नहीं करते हैं, चूंकि इसमें धोखाधड़ी की सम्भावनायें अधिक होती हैं। चैक मे किया गया कोई भी परिवर्तन खाताधारी द्वारा प्रमाणित होना चाहिये।

चैक पर ग्राहक के हस्ताक्षर विशुद्ध अथवा वास्तविक (Genuine) होने चाहिये। जाली हस्ताक्षर की स्थिति में बैंक को कोई अधिकार प्राप्त नहीं है और वह त्रुटिपूर्ण भुगतान का दोषी समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि लाला प्रभुदयाल बनाम ज्वाला बैंक लि० नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमें इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा निर्णय किया गया कि यद्यपि ग्राहक लापरवाही का दोषी है कि उसने चैक बुक लॉकर मे सुरक्षित नही रखी है तथापि बैंक दोषपूर्ण भुगतान के लिये अपने उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं हो सकता है और वह ग्राहक की क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है। इसी प्रकार, यद्यपि ग्राहक द्वारा अपने खाते के शेष का पुष्टिकरण कर दिया गया है तथापि बैंक जाली चैक के भुगतान के लिये उत्तरदायी होता है। इस निर्णय की पुष्टि इलाहाबाद बैंक बनाम कुलभूषण व अन्य नामक विवाद[2] में की गयी है।

परन्तु यदि ग्राहक जाली हस्ताक्षर का ज्ञान होने पर चुप रहता है और यह कार्य अपनी सहमति से होने देता है तब बैंक दोषपूर्ण भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि ग्रीनवुड बनाम मार्टिन बैंक नामक विवाद[3] में की गई जिसमें ग्राहक के खाते से जाली हस्ताक्षर करके उसकी पत्नि द्वारा रुपया निकाला गया और यह प्रवृत्ति दीर्घ काल तक चलती रही। पत्नि की

1. Lala Prabhu Dayal Vs. Jawala Band Ltd. (A. I. R. 1938)
2. Allahabad Bank Vs. Kul Bhushan and Others. (A. I. R. 1961)
3. Greenwood Vs. Martin Bank.

त्यु के पश्चात् ग्राहक द्वारा वाद प्रस्तुत किया गया, परन्तु न्यायालय ने ग्राहक को ापरवाही का दोषी ठहराया और बैंक को दोषपूर्ण भुगतान के दायित्व से मुक्त कर दया।

(3) कोष चैक के भुगतान के लिये लागू होने चाहिये (Funds must be Applicable to the Payment of the Cheque)—बैंक चैक का भुगतान करने के लिये उसी स्थिति में उत्तरदायी होता है जबकि खाते में जमा कोष चैक के भुगतान के लिये प्रयोग किये जा सकते हैं। ग्राहक की मृत्यु, दिवालिया अथवा पागल होने पर बैंक द्वारा चैक का भुगतान रोक दिया जाता है। ग्राहक द्वारा चैक के भुगतान न करने का निर्देश प्राप्त होने पर बैंक को निर्देश प्राप्ति के पश्चात् चैक का भुगतान नहीं करना चाहिये। यदि बैंक चैक का भुगतान करता है तब वह दोषपूर्ण भुगतान के लिये उत्तरदायी समझा जायेगा।

ग्राहक द्वारा विशिष्ट निर्देश के आधीन जमा कोष चैक के भुगतान के लिये लागू नहीं समझा जाता है तथा इसका प्रयोग उसी निर्देशानुसार किया जाता है। इसी प्रकार, बैंक द्वारा अल्प अवधि के लिये स्वीकृत अधिविकर्ष की सुविधा के आधीन उपलब्ध कोष चैक के भुगतान के लिये लागू नहीं समझे जाते हैं, चूंकि बैंक यह सुविधा किसी भी समय समाप्त कर सकता है। परन्तु यदि अधिविकर्ष की सुविधा दीर्घकालीन अवधि से नियमित आधार पर प्रदान की जा रही है तब उस सीमा तक प्राप्त कोष चैक के भुगतान के लिये लागू समझे जायेंगे तथा बैंक यह सुविधा स्वेच्छा से समाप्त नहीं कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि इण्डियन ओवरसीज बैंक बनाम नारायण प्रसाद गोविन्द लाल पटेल नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमें नारायण प्रसाद गोविन्द लाल ने बैंक से 5,000 रुपये की अधिविकर्ष की सुविधा लम्बी अवधि से प्राप्त की हुई थी। प्रतिवादी द्वारा 3916·04 रुपये का चैक इण्डियन ओवरसीज बैंक पर जारी किया गया जिसका भुगतान बैंक द्वारा नहीं किया गया। प्रतिवादी ने बैंक पर वाद प्रस्तुत किया और न्यायालय द्वारा डिग्री प्रदान की गई। इसके विरुद्ध बैंक ने गुजरात हाईकोर्ट में अपील की, परन्तु न्यायालय ने अपील रद्द करते हुये निर्णय दिया कि बैंक एवं प्रतिवादी के बीच लम्बी अवधि का लेन-देन यह प्रगट करता है कि उनके बीच अनुबन्ध है और बैंक द्वारा यह अनुबन्ध आकस्मिक रूप से समाप्त नहीं किया जा सकता है। अतः बैंक की अपील रद्द कर दी गई।

अतः बैंक चैक का भुगतान करने के लिये उसी स्थिति में उत्तरदायी होता है जबकि ग्राहक के खाते के कोष भुगतान के लिये लागू किये जा सकते हैं। न्यायालय से ग्राहक के खाते पर ऋण लग्नक आदेश अथवा गारनिशी (Garnishee Order) प्राप्त होने पर ग्राहक के खाते में जमा कोष चैक के भुगतान के लिये लागू नहीं किये जा सकते हैं।

---

1. Indian Overseas, Bank Vs. Naran Prasad Govind Lal Patel (1980)

कुर्की आदेश अथवा गारनिशी (Garnishee Order)—सिविल कार्यवाही कोड (Civil Procedure Code) 1908 की धारा 60 के अन्तर्गत न्यायालय को कुर्की आदेश जारी करने का अधिकार दिया गया है जिसमें न्यायालय बैंक को निश्चित खाते में जमा शेष कुर्क करने का आदेश देता है। इस आदेश के अन्तर्गत न्यायालय बैंक को आदेश निशि अथवा प्रारम्भिक आदेश (Order Nishi) जारी करता है जिसमें खाते से भुगतान रोकने का आदेश होता है एवं बैंक से स्पष्टीकरण माँगा जाता है कि खाताधारी का रुपया लेनदार को क्यों न भुगतान कर दिया जाये। इसके पश्चात न्यायालय पूर्ण आदेश (Order Absolute) जारी करता है जिसके पश्चात् खाते का रुपया (आदेश की सीमा तक) लेनदार को अथवा न्यायालय को भुगतान कर दिया जाता है। जिस व्यक्ति की प्रार्थना पर यह आदेश जारी किया जाता है उसे न्यायिक लेनदार (Judgement Creditor) तथा जिस खाताधारी के खाते पर जारी किया जाता है उसे न्यायिक देनदार (Judgement Debtor) कहा जाता है। इसमें बैंक न्यायिक देनदार का देनदार होता है जिसे गारनिशी (Garnishee) समझा जाता है और न्यायालय गारनिशी को रुपया भुगतान का आदेश देता है। यह आदेश गारनिशी आदेश समझा जाता है। इसमें लेनदार अपने ऋण की वसूली के लिये न्यायालय में आवेदन करता है और न्यायालय ऋण राशि के लिये बैंक को भुगतान का आदेश देता है।

कुर्की अथवा गारनिशी आदेश निम्नलिखित जमाओं पर लागू समझा जाता है—

(i) माँग पर देय जमायें।

(ii) वे जमायें जो भविष्य में निश्चित तिथि पर देय होती हैं अथवा निश्चित अवधि बीतने पर देय होती हैं। इन जमाओं पर देय तिथि पर आदेश लागू होता है।

(iii) वे जमायें जो निश्चित सूचना देने पर देय होती हैं तथा ऐसी सूचना दी जा चुकी है।

कुर्की आदेश प्राप्त होने पर बैंक के अनेक दायित्व उत्पन्न होते हैं। सर्वप्रथम, बैंक को जाँच करनी चाहिये कि यह आदेश उसके ही ग्राहक पर लागू होता है अथवा नहीं। इसके पश्चात् आदेश प्राप्ति की तिथि एवं समय अंकित किया जाता है और इस आशय का लेखा ग्राहक के खाते में किया जाता है जिसके पश्चात खाते से कोई रुपया नहीं निकाला जाता है और बैंक यह राशि विविध लेनदार में जमा कर देता है। खाते में आदेश प्राप्ति के पश्चात जमा धनराशि पर यह आदेश लागू नहीं होता है। न्यायालय से पूर्ण आदेश प्राप्त होने पर आदेश की सीमा तक जमा धन का भुगतान न्यायालय के आदेशानुसार किया जाता है और शेष राशि ग्राहक के खाते में जमा कर दी जाती है।

कुर्की आदेश सम्पूर्ण राशि अथवा आंशिक राशि के लिये जारी

सकता है। यदि आदेश सम्पूर्ण राशि के लिये जारी किया गया है तब खाते का परिचालन रोक दिया जायेगा और उसमें कोई भुगतान स्वीकार नहीं किया जायेगा। परन्तु यदि वैंक ने किसी चैक के भुगतान का दायित्व स्वीकार कर लिया है तब उस चैक का भुगतान किया जायेगा। इसके विपरीत, यदि आदेश एक निश्चित राशि के लिये जारी किया गया है तब उस सीमा तक चैकों का भुगतान नहीं किया जायेगा। परन्तु उस सीमा से अधिक राशि का प्रयोग ग्राहक द्वारा किया जा सकता है। कुर्की आदेश के सम्बन्ध में निम्नलिखित तथ्य महत्वपूर्ण हैं—

(i) यह आदेश अधिविकर्ष खाते पर लागू नहीं किया जाता है।

(ii) वैंक अपने ऋण का समायोजन कुर्की आदेश लागू होने से पूर्व कर सकता है। परन्तु इसके लिये आवश्यक है कि वैंक का ऋण वास्तविक हो। वैंक सम्भावित अथवा भावी दायित्व के लिये समायोजन नहीं कर सकता है। यदि वैंक ने किसी ऋण के सम्बन्ध में गारन्टी दी है अथवा विपत्र भुनाये हैं तब ग्राहक का दायित्व सम्भावित (Contingent) है और वैंक इसके लिये समायोजन नहीं कर सकता है।

(iii) वैंक ग्राहक के दो खातों का मिलान कर सकता है और इसके पश्चात् वचे शेष पर यह आदेश लागू होगा।

(iv) यह आदेश प्राप्त होने के पश्चात् जमा की गयी धनराशि पर यह आदेश लागू नहीं माना जायेगा।

(v) यह आदेश विदेश में जमा धनराशि एवं संरक्षण में जमा वस्तुओं (Safe Custody) पर लागू नहीं होता है।

(vi) यह आदेश संग्रहण के लिये जमा चैकों, ड्राफ्टों, प्रतिभूतियों के विक्रय से प्राप्त राशि पर लागू नहीं होता है, चूंकि इस स्थिति में वैंक ग्राहक के अभिकर्त्ता के रूप में कार्य करता है। परन्तु यदि वैंक द्वारा उपरोक्त राशि ग्राहकों के खाते में जमा कर दी गयी है तब उस राशि पर कुर्की आदेश लागू माना जायेगा।

(vii) यह आदेश उन भुगतानों पर भी लागू समझा जायेगा जिनका वास्तविक भुगतान नहीं किया गया है। नकद भुगतान की स्थिति में वास्तविक भुगतान उस समय समझा जाता है जवकि वैंक में व्यक्ति को रोकड़िये द्वारा भुगतान कर दिया जाता है। यदि चैक केवल पुस्तकों में पास (Pass) किया गया है तथा वास्तविक भुगतान नहीं किया गया है तब इस राशि पर भुगतान आदेश लागू समझा जायेगा। अन्तरण (Transfer) की स्थिति में वास्तविक भुगतान उस समय समझा जायेगा जवकि न्यायिक देनदार के खाते से रकम क्रेडिट कर दी गयी है और इसकी सूचना सम्वद्ध व्यक्ति को भेज दी गयी है। सूचना भेजने से पूर्व प्राप्त कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा। समाशोधन (Clearing) में भुगतान के लिये प्रस्तुत चैक की स्थिति में वास्तविक भुगतान उस समय समझा जाता है जवकि चैक को वापिस करने

का समय समाप्त हो गया है और समाशोधन में आये चैंक को वापिस नहीं किया जा सकता है। यदि चैक वापिस करने का पर्याप्त समय है तब भुगतान रोक दिया जायेगा और इस पर कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा।

(viii) कुर्की आदेश सम्बन्धित बैंक के प्रधान कार्यालय (Head Office) को भेजा जायेगा तथा यह समझा जायेगा कि आदेश समस्त शाखाओं को तामील कर दिया गया है।

विभिन्न प्रकार के संयुक्त खातों पर कुर्की आदेश लागू होना (Application of the Garnishee Order to Various Type of Joint Account)—इसमें निम्नलिखित खातों पर कुर्की आदेश लागू होता है—

(1) **संयुक्त खाते (Joint Accounts)**— संयुक्त खाते की स्थिति में यदि खाताधारियों में एक व्यक्ति न्यायिक देनदार है तब संयुक्त खाते पर कुर्की आदेश लागू नहीं हो सकता है। परन्तु यदि समस्त खाताधारी न्यायिक देनदार हैं तब खाते पर संयुक्त रूप में आदेश लागू हो सकता है। इसके विपरीत यदि संयुक्त रूप में ऋण लिया गया है तब समस्त व्यक्तियों के व्यक्तिगत खातो पर कुर्की आदेश लागू समझा जाता है।

(2) **साझेदारी फर्म का खाता (Partnership Account)**— यदि फर्म द्वारा कोई ऋण लिया गया है तब साझेदारों के व्यक्तिगत खातों पर कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा परन्तु साझेदारों के व्यक्तिगत ऋणों के लिये फर्म के खाते पर कुर्की आदेश लागू नहीं हो सकता है।

(3) **ट्रस्ट खाता (Trust Account)**—ट्रस्ट खाते की राशि पर ट्रस्टी के व्यक्तिगत ऋणों के लिये कुर्की आदेश लागू नहीं हो सकता है।

आयकर अधिकारी का कुर्की आदेश (Attachment Order Issued by Income Tax Authorities)—यदि कोई कुर्की आदेश आयकर अधिकारी द्वारा धारा 226 (3) के अन्तर्गत दिया गया है तब बैंक उसे ग्राहक खाते पर लागू करेगा। संयुक्त खाते की स्थिति में यदि एक व्यक्ति के नाम से कुर्की आदेश जारी किया है तब विपरीत अनुबन्ध के अभाव में आदेश बराबर भाग (Equal Share) पर लागू समझा जायेगा। परन्तु इससे पूर्व अन्य संयुक्त खाताधारी को भी इस आशय का नोटिस भेजा जायेगा कि उसके संयुक्त खाताधारी के खाते पर आयकर का कुर्की आदेश प्राप्त हुआ है और यदि उसे कोई आपत्ति होती है तब उसे न्यायालय द्वारा उचित समयावधि में स्थगन आदेश (Stay Order) प्राप्त करना चाहिये जिससे आयकर अधिकारी का कुर्की आदेश न्यायालय के अन्तिम निर्णय तक प्रभावी न किया जा सके।

संयुक्त खाते की स्थिति में यदि कुर्की आदेश प्राप्त होने के पश्चात न्यायिक देनदार की मृत्यु हो जाती है तथा संयुक्त खाता किसी भी खाताधारी अथवा बचे हुये खाताधारी (Either Or Survivor) के निर्देशाधीन परिचालित किया जाता

है तब बैंक को मृतक का कुर्की आदेश बचे हुये खाताधारी की जमा पर लागू नहीं करना चाहिये।

आयकर अधिकारी का कुर्की आदेश समस्त प्रकार के जमा खातों पर लागू समझा जाता है अर्थात् यह बचत खाते, चालू खाते तथा सावधि जमा खाते पर लागू होता है। इस स्थिति में बैंक पास बुक अथवा जमा रसीद प्रस्तुत किये बिना भुगतान करने के लिये बाध्य होता है। यदि बैंक शपथ लेकर यह बयान देता है कि ग्राहक के खाते में कोई देय नहीं है तब यह आदेश व्यर्थ समझा जायेगा। परन्तु यदि यह घोषणा गलत पायी जाती है तब बैंक उत्तरदायी ठहराया जायेगा।

कुर्की आदेश एवं गारनिशी आदेश (Attachment Order and Garnishee Order)—कुर्की आदेश आयकर अधिकारी, धन कर अधिकारी, रिजर्व बैंक अथवा अन्य विधिक संस्था द्वारा जारी किया जाता है। यह गारनिशी आदेश से पृथक होता है, चूंकि यह आदेश न्यायालय द्वारा न्यायिक देनदार के देनदार को जारी किया जाता है जबकि कुर्की आदेश जारी करने वाला व्यक्ति स्वयं लेनदार होता है और वह देनदार के देनदार को आदेश देता है। कुर्की आदेश में तीन पक्षकार होते हैं जिसमें बैंक, देनदार व लेनदार सम्मिलित होते हैं। इसके विपरीत गारनिशी आदेश में चार पक्षकार होते हैं जिसमें न्यायालय भी पक्षकार होता है। कुर्की आदेश में केवल एक आदेश दिया जाता है जबकि न्यायालय द्वारा प्रारम्भिक एवं पूर्ण आदेश दिये जाते हैं। कुर्की आदेश संयुक्त खाते पर लागू हो सकता है जबकि आदेश की एक प्रति संयुक्त खाताधारी को भेजी जाती है। इसके विपरीत न्यायालय का गारनिशी आदेश संयुक्त खाते पर लागू नहीं होता है। कुर्की आदेश निश्चित जमा राशि के लिये लागू किया जाता है जबकि गारनिशी आदेश में प्रारम्भिक आदेश के अन्तर्गत बैंक से देनदार के खाते में जमा धनराशि का स्पष्टीकरण मांगा जाता है। अतः गारनिशी आदेश एवं कुर्की आदेश में पर्याप्त अन्तर होता है।

क्षतिपूर्ति का निर्धारण
(Determination of Damages)

प्रत्येक बैंक का यह मूल कर्त्तव्य है कि अपने ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैक का भुगतान करे। यदि चैक उचित स्थान एवं समय पर काटा गया है तथा खाते में पर्याप्त रुपया है तब बैंक को चैक का भुगतान करना पड़ता है। यदि चैक के भुगतान में कोई त्रुटि की जाती है अर्थात् बैंक द्वारा चैक का भुगतान नहीं किया जाता है तब बैंक चैक के अनादरण से हुई क्षति के लिये पूर्ण उत्तरदायी है। क्षतिपूर्ति की गणना अनादरण से हुई मौद्रिक हानि एवं ग्राहक की ख्याति को ध्यान में रखते हुये की जाती है। व्यापारी वर्ग के लिये क्षतिपूर्ति की गणना करते समय उनकी ख्याति (Reputation) को ध्यान में रखा जाता है। न्यू सेन्ट्रल हॉल बनाम यूनाइटिड कामर्शियल बैंक नामक विवाद[1] में इस तथ्य की पुष्टि की गयी कि क्षतिपूर्ति की गणना

1. New Central Hall Vs. United Commercial Bank Ltd. (1959)

में ख्याति की हानि को ध्यान में रखा जायेगा। इसके लिये विशेष क्षतिपूर्ति दिलवायी जाती है। इस विवाद में न्यू सेन्ट्रल हॉल एक साझेदारी फर्म है जिसका यूनाइटिड कामर्शियल बैंक मे खाता है। फर्म के खाते मे कुछ रुपया जमा किया गया जो बैंक की गलती से पोस्ट नही किया गया और ग्राहक के चैंक आहर्ता से मिलें (Refer to Drawer) कारण लगाकर वापिस कर दिये गये। फर्म ने बैंक के विरुद्ध 50,000 रुपये का क्षतिपूर्ति का वाद प्रस्तुत किया। वाद मे फर्म ने विशेष हर्जाने की मांग की, चूंकि इस परिस्थिति मे क्षति अनुमानित होती है। इस वाद मे मद्रास हाई कोर्ट द्वारा निर्णय दिया गया कि व्यापारी द्वारा जारी किये गये चैंको के त्रुटिपूर्ण अनादरण से व्यापारी को विशेष हर्जाना मिलना चाहिये तथा इसके लिये विशेष क्षति होने के साक्ष्य की आवश्यकता नही होती है। अतः न्यायालय द्वारा 6000 रुपये की क्षतिपूर्ति का निर्णय दिया गया।

इसके विपरीत, गैर व्यापारी वर्ग की स्थिति मे, मौद्रिक हानि के आधार पर क्षतिपूर्ति की गणना की जाती है। इस स्थिति मे ख्याति का महत्व नही दिया जाता है जब तक कि ग्राहक द्वारा यह साबित नही किया जाता है कि चैंक के अनादरण से ग्राहक को विशेष हानि वहन करनी पड़ी है। इस निर्णय की पुष्टि कनारा बैंक बनाम राजगोपाल नामक विवाद[1] मे की गयी।

खातों की गोपनीयता
(Secrecy of Accounts)

बैंक के दायित्वों में खातो की गोपनीयता प्रमुख है।

बैंक का यह कर्त्तव्य है कि वह ग्राहक के खाते की पूर्ण गोपनीयता रखें। यदि बैंक की लापरवाही से ग्राहक को कोई क्षति होती है तब बैंक उसके लिये पूर्ण उत्तरदायी हैं। ग्राहक का खाता उसकी आर्थिक स्थिति प्रगट करता है। अतः बैंक का कर्त्तव्य है कि वह तीसरे पक्षकार को ग्राहक के सम्बन्ध मे कोई भी सूचना प्रगट न होने दें। इस निर्णय की पुष्टि नेशनल प्रोविन्सियल व यूनियन बैंक ऑफ इग्लंड लि० नामक विवाद[2] में की गयी है। इस विवाद में वादी ने बैंक से कुछ राशि ऋण-स्वरूप प्राप्त की हुई थी जिनका भुगतान प्रत्येक सप्ताह 1 पौण्ड मे देय था। वादी द्वारा नियमित भुगतान न करने पर बैंक ने वादी की नियोक्ता कम्पनी में टेलीफोन पर वादी का पता पूछा एवं बातचीत के दौरान ऋण की अदायगी न करने की सूचना कम्पनी को दी। नियोक्ता कम्पनी ने अपने अनुबन्ध का पुनः नवीनीकरण नही किया जिसके परिणामस्वरूप वादी ने बैंक पर गोपनीयता बनाये रखने के कर्त्तव्य का भंग करने के कारण उत्पन्न हुई क्षति की पूर्ति के लिये वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय द्वारा वादी का वाद स्वीकार करते हुये निर्णय दिया गया कि बैंक क्षतिपूर्ति

1. Canara Bank Vs. I V. Rajagopal (1975).

2. Tournier Vs. National Provincial and Union Bank of England Ltd. (1924)

के लिये उत्तरदायी है, चूंकि उसने ग्राहक एवं वैंक के अनुबन्ध में गोपनीयता की शर्त का उल्लघंन किया है। खाते की गोपनीयता बनाये रखना वैंक का विधिक उत्तरदायित्व है।

निम्नलिखित परिस्थितियों में वैंक ग्राहक के खाते की सूचना प्रगट करने के लिये बाध्य है—

(i) यदि किसी कम्पनी का अनुसन्धान कार्य चल रहा है तब वैंक कम्पनी के खाते के सम्बन्ध में समस्त सूचनायें प्रगट करेगा परन्तु इसके लिये वह अन्य ग्राहकों के खातों की सूचनायें प्रगट नहीं कर सकता है।

(ii) आयकर अधिनियम की धारा 131 व 133 के अन्तर्गत आयकर अधिकारी को यह अधिकार दिया गया है कि वह अपनी कार्यवाही के लिये आवश्यक सूचनायें वैंक से प्राप्त कर सकता है।

(iii) यदि कोई खाता पूर्व 10 वर्षों से संचालित नहीं है तब उसके सम्बन्ध में सम्पूर्ण सूचनायें रिजर्व वैंक को भेजी जाती हैं।

(iv) रिजर्व वैंक अधिनियम के अन्तर्गत प्रत्येक व्यापारिक वैंक को ऋण सम्बन्धी सूचनायें रिजर्व वैंक को भेजनी आवश्यक हैं।

(v) न्यायालय के आदेश पर वैंक ग्राहक के खातों के सम्बन्ध में सम्पूर्ण सूचनायें प्रस्तुत करने के लिये बाध्य है। परन्तु पुस्तक साक्ष्य अधिनयम, 1891 (Banker's Books Evidence Act, 1891) के अन्तर्गत वैंक अपनी पुस्तकें न्यायालय में प्रस्तुत करने के लिये बाध्य नहीं है। वैंक आवश्यक लेखों की प्रमाणित प्रतिलिपि प्रस्तुत कर सकता है, जिनको साक्ष्य के रूप में पर्याप्त समझा जायेगा।

(vi) विदेशी विनिमय अधिनियम के अन्तर्गत रिजर्व वैंक को विदेशी व्यापार में कार्यरत वैंकों (Authorised Dealer) की पुस्तकों की जांच करने का अधिकार है तथा वह वैंकों के किसी भी अधिकारी को शपथ दिलाकर जांच कर सकता है।

(vii) औद्योगिक विकास वैंक किसी भी व्यापारिक एवं सहकारी वैंक से ऋण सम्बन्धी सूचनायें प्राप्त कर सकता है।

(viii) यदि किसी ग्राहक के विरुद्ध दण्डनीय कार्यवाही के अन्तर्गत पुलिस द्वारा जांच का कार्य चल रहा है तब पुलिस को वैंक की पुस्तकों की जांच करने का अधिकार है।

उपरोक्त परिस्थितियों में वैंक विधि अनुसार सूचनायें प्रगट करने के लिये बाध्य है। इसके अतिरिक्त वैंक निम्नलिखित परिस्थितियों में सूचनायें प्रगट कर सकता है—

(i) यदि ग्राहक स्पष्ट अथवा गर्भित रूप में वैंक को सूचनायें प्रगट करने की सहमति प्रदान कर देता है।

(ii) यदि सूचनायें प्रगट करना वैंक के हित में है

(iii) यदि किसी अन्य बैंक को ग्राहक के सम्बन्ध में सूचनायें प्रदान करनी हैं परन्तु इस स्थिति में विशेष महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि सूचनायें वास्तविक स्थिति को प्रगट करनी चाहियें तथा ग्राहक के खाते की वास्तविक राशि (Actual Amount) को स्पष्ट नहीं करना चाहिये। सूचनायें पक्षपात अथवा पूर्व अवधारणा पर आधारित नही होनी चाहिए। जो बैंक सूचनायें प्राप्त करता है उसका कर्त्तव्य है कि वह सूचनायें पूर्णतया गुप्त रखे। यदि सूचनायें गलत दी जाती हैं जिससे सूचना प्राप्त करने वाले बैंक को कोई क्षति वहन करनी पड़ती है, तब इस क्षति के लिये सूचनायें देने वाला बैंक उत्तरदायी होगा।

(iv) यदि सूचनायें प्रगट करना जनता के हित मे हो अर्थात् ग्राहक देश के विरुद्ध, देश में विद्यमान विधि (Law) के विरुद्ध कोई कार्य करता है अथवा सरकार द्वारा किसी अपराध में चल रही कार्यवाही के अन्तर्गत ग्राहक के खाते की सूचना माँगी जाती है और बैंक यह समझता है कि सूचना के आधार पर ग्राहक का अपराध सिद्ध हो सकता है।

अतः स्पष्ट होता है कि बैंक द्वारा ग्राहक के खाते की गुप्तता उसका मूल कर्त्तव्य है। यदि बैंक अपने कर्त्तव्य का पालन करने मे असमर्थ रहता है तब बैंक ग्राहक की क्षतिपूर्ति के लिये पूर्ण उत्तरदायी है। इसके अतिरिक्त, यदि बैंक द्वारा सूचना प्रगट होने पर किसी तीसरे पक्षकार को कोई क्षति होती है तथा यह क्षति सूचनाओं के आधार पर होती है तब बैंक तीसरे पक्षकार की क्षतिपूर्ति के लिये पूर्ण उत्तरदायी है। इस तथ्य की पुष्टि हेडली बनाम हेलर नामक विवाद[1] मे की गई है।

चैकों का संग्रहण करना एवं निर्देशानुसार कार्य करना
(Collection of Cheques and Follow the Instructions)

यद्यपि चैकों का संग्रहण करना बैंक का विधिक उत्तरदायित्व नहीं है परन्तु बैंक सेवा के उद्देश्य से अपने ग्राहकों को यह सुविधा प्रदान करते हैं। यह सुविधा बैंकों द्वारा रीति-रीवाज की पद्धति (Customery Practice) के आधीन दी जाती है तथा कुछ चैकों का भुगतान बैंकों के माध्यम से ही हो सकता है। उदाहरणार्थ—रेखांकित चैकों का भुगतान बैंक के माध्यम से ही हो सकता है। अतः चैकों का संग्रहण करना बैंकों के दायित्वों मे सम्मिलित किया जाता है।

इसी प्रकार बैंक अपने ग्राहकों के निर्देशानुसार कार्य करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंक मैनडेट अथवा मुख्तारनामा (Power of Attorny) के निर्देशाधीन खाते का संचालन करते हैं।

मुख्तारनामा (Power of Attorny)—कोई भी व्यक्ति अपने कार्यों को सम्पन्न करने के लिए अपना मुख्तार (अभिकर्ता) मनोनीत कर सकता है। इसके लिये एक नोटिस अथवा प्राधिकार जारी किया जाता है जिसे मुख्तारनामा (Powers of Attorny) कहा जाता है। मुख्तारनामे मे मुख्तार की नियुक्ति सामान्य अथवा

1. Hedly Byrne & Co. Vs. Haller and Partners Ltd. (1964)

विशिष्ट हो सकती है। विशिष्ट नियुक्ति के अन्तर्गत मुख्तार एक विशेष कार्य पूरा करने के लिये नियुक्त किया जाता है। कार्य पूरा करने के लिये मुख्तार को विशेष अधिकार प्रदान किये जाते हैं और कार्य समाप्त होने के पश्चात् उसकी नियुक्ति समाप्त समझी जाती है। इसके विपरीत, सामान्य नियुक्ति के अन्तर्गत मुख्तार उस समय तक कार्य करता है जब तक कि उसकी नियुक्ति समाप्त नहीं की जाती है। इसके अन्तर्गत मुख्तार को सामान्य शक्तियाँ प्राप्त होती हैं और वह अपने मालिक की अनुपस्थिति में समस्त कार्य उसकी ओर से करता है।

मुख्तारनामा समस्त विश्व (World) के विरुद्ध लिखा जाता है तथा इस पर स्टाम्प लगाये जाते हैं। इसमें दो गवाहों के हस्ताक्षर होने अनिवार्य होते हैं। बैंक द्वारा मुख्तारनामा प्राप्त करने पर उस व्यक्ति के हस्ताक्षर प्रमाणित किये जाते हैं जिसके हित में मुख्तारनामा लिखा गया है तथा सन्देह की स्थिति में मुख्तारनामा रजिस्ट्रार (Registrar of Assurance) के पास रजिस्टर्ड करवाया जाता है। यदि मुख्तारनामा विदेश में लिखा गया है तब मुख्तारनामे पर भारतवर्ष में पहुँचने की तिथि से 3 माह के भीतर स्टाम्प लगवाना आवश्यक होता है। इसके पश्चात् बैंक मुख्तारनामा अपनी पुस्तकों में रजिस्टर्ड करके, मुख्तारनामे पर रजिस्ट्रेशन संख्या लिखकर, इसे वापिस कर देता है।

मुख्तारनामा ग्राहक की स्वेच्छा पर, ग्राहक की मृत्यु, दिवालिया अथवा पागल होने पर, मुख्तार (Grantee) की स्वेच्छा पर अथवा मुख्तार के पागल होने पर समाप्त हो जाता है। मुख्तार की मृत्यु अथवा दिवालिया होने का मुख्तारनामे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, चूँकि मुख्तार द्वारा जारी किये गये चैकों का यथाविधि भुगतान किया जायेगा। इसके विपरीत, ग्राहक की मृत्यु, दिवालिया अथवा पागल होने पर बैंक द्वारा खाते का परिचालन रोक दिया जाता है। मुख्तार के पागल होने की सूचना प्राप्त होते ही बैंक को मुख्तार द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान नहीं करना चाहिए। परन्तु यह सूचना विश्वसनीय होनी चाहिए तथा डाक्टर के प्रमाणपत्र (Certificate) के आधार पर होनी चाहिए।

मैनडेट (Mandate)—ग्राहक द्वारा अपने बैंक को लिखित निर्देश मैनडेट समझा जाता है जिसमें ग्राहक अपने खाते के परिचालन के सम्बन्ध में निर्देश देता है। यह निर्देश लिखित होता है तथा इस पर स्टाम्प एवं गवाही की आवश्यकता नहीं होती है। मैनडेट एक विशिष्ट बैंक को दिया जाता है तथा यह उस समय तक लागू समझा जाता है जब तक कि ग्राहक द्वारा इसे समाप्त नहीं किया जाता है अथवा उस व्यक्ति द्वारा जिसके हित में लिखा गया है, स्वेच्छा से समाप्त नहीं किया जाता है। मैनडेट ग्राहक मृत्यु, पागल अथवा दिवालिया होने पर समाप्त हो जाता है। बैंक को मैनडेट के सम्बन्ध में यह तथ्य ध्यान रखना चाहिए कि मैनडेट धारी को ऋण लेने का अधिकार स्पष्टतः प्रदान किया जाना चाहिए।

मुख्तारनामे एवं मैनडेट में महत्वपूर्ण अन्तर यह होता है कि मुख्तारनामा समस्त विश्व के विरुद्ध लिखा जाता है तथा इस पर दो गवाहों के हस्ताक्षर होते हैं

और इस पर स्टाम्प लगाये जाते हैं। इसके विपरीत, मैनडेट में निश्चित बैंक को निर्देश दिया जाता है तथा इस पर स्टाम्प एवं गवाहों की आवश्यकता नहीं होती है।

ग्राहक के खाते की पास बुक तैयार करना

(Preparation of Pass Book of Customer's Account)

पास बुक ग्राहक के खाते का विवरण-पत्र होता है। इसमें ग्राहक का नाम, पता तथा खाता संख्या एवं ग्राहक द्वारा किये गये लेन-देनों का विवरण होता है। पास बुक में पूर्ण सावधानी से लेखे किये जाते हैं। यह बैंक में ग्राहक के खाते की नकल होती है। पास बुक खोने की स्थिति में बैंक दूसरी (Duplicate) पास बुक जारी करता है। पास बुक में की गयी प्रविष्टियों के सम्बन्ध में ग्राहक का दायित्व है कि वह उन प्रविशिष्टियो को पूर्ण जाँच करे एवं किसी त्रुटि के पाये जाने की स्थिति में वह बैंक को तुरन्त सूचित करे। यदि ग्राहक पास बुक प्राप्त करने के पश्चात् पास बुक में की गयी गलत प्रविष्टियों की सूचना एक अवधि (Reasonable Time) के अन्तर्गत बैंक को नहीं देता है तब यह समझा जायेगा कि ग्राहक ने उन प्रविष्टियों की मौन स्वीकृति दी है एवं बाद में ग्राहक को उनके विरुद्ध आपत्ति करने के अधिकार से वंचित कर दिया जायेगा। यह मत सर जॉन पेजेट (Sir John Paget) का था। परन्तु आधुनिक विचारधारा के अनुसार पास बुक को पूर्ण एवं सही साक्ष्य नहीं माना जा सकता है। इसमें गलती किसी भी पक्षकार के पक्ष में हो सकती है। अतः इसके अनुसार पास बुक में त्रुटियों का संशोधन किया जाना चाहिए।

यदि अशुद्धि का प्रभाव ग्राहक के पक्ष में हुआ है तब ग्राहक को उसका लाभ उसी स्थिति में प्राप्त हो सकता है जबकि ग्राहक को अशुद्धि का ज्ञान न हो एवं ग्राहक द्वारा उस रुपये को निकाला जाये। यदि ग्राहक अशुद्धि का ज्ञान रखते हुये रुपये निकालने के लिये चैक जारी करता है और बैंक चैकों का भुगतान नहीं करता है तब ग्राहक क्षतिपूर्ति के लिये वाद प्रस्तुत नहीं कर सकता है। बैंक द्वारा किसी भी समय त्रुटि ज्ञात होने पर बैंक उसका संशोधन कर सकता है और संशोधन की सूचना ग्राहक को भेज दी जायेगी। सूचना प्राप्त होने के पश्चात् ग्राहक बैंक से रुपया नहीं निकाल सकता है। परन्तु सूचना देने से पूर्व बैंक ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का अनादरण नहीं कर सकता है। अतः यदि ग्राहक के हित में अशुद्ध प्रविष्टि की गयी है और ग्राहक की मूल स्थिति में परिवर्तन हो गया है तब बैंक ग्राहक से रुपये की माँग नहीं कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि ओकले बोउडन एण्ड कम्पनी बनाम इण्डिया बैंक लि० नामक विवाद[1] में की गयी जिसमें बैंक की मन्दूर शाखा द्वारा मुख्य कार्यालय से कम्पनी के खाते में दो लेखों को पुनः क्रेडिट भेज दी गयी और मुख्य कार्यालय ने कम्पनी के खाते में त्रुटिपूर्वक पुनः क्रेडिट कर दिया। बैंक द्वारा त्रुटि का ज्ञान होने पर अशुद्ध क्रेडिट की वसूली के लिये वाद प्रस्तुत किया गया। इसी अवधि के बीच कम्पनी ने मन्दूर ग्राहक का खाता अशुद्ध क्रेडिट के आधार पर बन्द कर दिया। कम्पनी ने बैंक को अशुद्ध लेखे डेबिट करने के लिये अवरुद्ध

1. Oakley Bowden & Company Vs. The Indian Bank Ltd. (1964)

(Estopped) किया। बैंक का वाद अपीलेट कोर्ट में स्वीकार कर लिया गया। परन्तु कम्पनी ने मद्रास हाईकोर्ट में अपील की और न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया कि यदि कम्पनी अपने ग्राहकों के खातों की गहन जांच करती तब क्रेडिट लेखों के पुनः क्रेडिट होने का अनुमान लगाया जा सकता था। कम्पनी को ग्राहक के खातों की जांच न करने के लिये लापरवाही का दोषी ठहराया गया तथा बैंक को अशुद्ध लेखों की वसूली के लिये अधिकृत किया गया। परन्तु यदि ग्राहक की स्थिति में परिवर्तन हो जाता है तथा यह परिवर्तन अशुद्ध लेखों का ज्ञान न रखते हुये होता है तब बैंक को अशुद्ध लेखे शुद्ध करने का अधिकार नहीं है।

बैंक समय-समय पर ग्राहकों से उनके खातों की बाकी का पुष्टिकरण पत्र (Confirmation Letter) प्राप्त करता रहता है।' इसके माध्यम से बैंक ग्राहक के खाते में समस्त डेबिट लेखों का पुष्टिकरण प्राप्त कर लेता है जिसके पश्चात् ग्राहक उन लेखों (Entries) के सम्बन्ध में अपनी असहमति प्रगट नहीं कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि इण्डियन बैंक नामक विवाद[1] में की गयी। इस विवाद में वादी ने बैंक को सावधि विनिमय विपत्र परक्रामण के उद्देश्य से प्रदान किये। इन प्रपत्रों का क्रय करके बैंक ने वादी के खाते में क्रेडिट कर दिया। परन्तु विपत्र के स्वीकारक द्वारा विपत्र स्वीकार न करने की स्थिति में बैंक ने वादी का खाता डेबिट कर दिया और वादी ने इस डेबिट लेखे का पुष्टिकरण कर दिया। इसी बीच माल के प्रपत्र खो गये तथा वादी की मृत्यु हो गयी। वादी के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा बैंक के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया गया कि बैंक ने विपत्र के अनादरण की सूचना नहीं दी है और बैंक द्वारा विपत्र वापिस नहीं लौटाये गये हैं। अतः बैंक को विपत्रों की राशि डेबिट करने का अधिकार नहीं है। केरल हाईकोर्ट ने निर्णय दिया कि ग्राहक द्वारा खाते में जमा शेष का पुष्टिकरण प्रपत्र हस्ताक्षर करने पर यह समझा जायेगा कि उसने डेबिट लेखों की सहमति प्रदान कर दी है और डेबिट लेखे उस पर बाध्य समझे जायेंगे।

इसके विपरीत, यदि त्रुटि का प्रभाव बैंक के पक्ष में हुआ है तब ग्राहक उसका संशोधन करने का अधिकारी है। परन्तु यदि बैंक की स्थिति परिवर्तित हो गयी है तथा ग्राहक द्वारा लापरवाही दिखलायी जाती है तब ग्राहक इन अशुद्धियों का संशोधन नहीं करवा सकता है। इस स्थिति में विशेष महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि ग्राहक की लापरवाही साबित होनी चाहिये। इस निर्णय की पुष्टि कनारा बैंक बनाम कनारा सेल्स कॉरपोरेशन नामक विवाद[2] में की गयी।

यदि बैंक के किसी कर्मचारी द्वारा पास बुक में जानबूझकर कोई अशुद्धि की गयी है और यह अशुद्धि व्यवसाय की सामान्य अवधि में की गयी है तब बैंक ग्राहक की क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होगा। इसके विपरीत, यदि बैंक का कर्मचारी

1. Essa Ismal Vs. Indian Bank Ltd. (1963
2. Canara Bank Vs. Canara Sales Corporation (1974)

कोई कार्य, ग्राहक के अभिकर्त्ता के रूप में, बैंक के व्यापार के अन्तर्गत नहीं करता है तब बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया बनाम श्यामा देवी नामक विवाद[1] में की गई है। इस विवाद में श्यामा देवी ने स्टेट बैंक में अपना खाता खोला और खाते पर परिचय बैंक के एक कर्मचारी द्वारा दिया गया जो श्यामा देवी के पति का मित्र एवं उनका पड़ोसी था। श्यामा देवी अपना रुपया एवं चैक बैंक कर्मचारी को अपने खाते में जमा के उद्देश्य से देती थी और कर्मचारी द्वारा इस रुपये का दुरुपयोग किया गया तथा कर्मचारी ने कपट छुपाने के लिये पास बुक में त्रुटिपूर्ण लेखे किये। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया है कि बैंक कर्मचारी ने ग्राहक के एजेन्ट के रूप में कार्य किया है तथा उसने ग्राहक के साथ कपट बैंक के सामान्य व्यवसाय के दौरान नहीं किया है। अतः बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

अतः बैंक की पास बुक का विशेष महत्त्व होता है। बैंक को ग्राहक के खाते की पास बुक नियमित अवधि पर तैयार करके ग्राहक को प्रदान करनी चाहिए।

बैंक के अधिकार
(Rights of a Banker)

बैंक और ग्राहक के बीच अनुबन्ध से बैंक तथा ग्राहक को विभिन्न अधिकार प्राप्त होते है। बैंक के विभिन्न कर्त्तव्य ग्राहक को अधिकार प्रदान करते हैं। बैंक को ग्राहक के विरुद्ध निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते हैं—

(1) ग्रहणाधिकार,

(2) मुजराई अथवा समायोजन का अधिकार,

(3) भुगतान विनियोजन का अधिकार,

(4) ब्याज, कमीशन एवं प्रभार वसूल करने का अधिकार।

ग्रहणाधिकार अथवा लियन
(Lien)

ग्रहणाधिकार से आशय ऋणदाता के उस अधिकार से होता है जिसमें ऋणदाता को अपने कब्जे में प्राप्त सम्पत्ति उस समय तक रोके रखने का अधिकार होता है जब तक कि ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान नहीं कर दिया जाता है। ग्रहणाधिकार चालू अथवा तरल सम्पत्तियों (Current Assets) पर प्राप्त होता है। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 171 के अनुसार बैंकों का ग्रहणाधिकार, विपरीत आशय के अभाव में, सामान्य ग्रहणाधिकार समझा जाता है। बैंकों को यह सामान्य ग्रहणाधिकार प्रतिभूति के विक्रय पर आधिक्य (Surplus) पर लागू समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि पंजाब नेशनल बैंक बनाम सत्यपाल विरमानी नामक विवाद[2]

1. State Bank of India Vs. Shyama Devi (1978 S. C. 1263)
2. Panjab National Bank Vs. Satyapal Virmain (1956)

(Estopped) किया। बैंक का वाद अपीलेट कोर्ट में स्वीकार कर लिया गया। परन्तु कम्पनी ने मद्रास हाईकोर्ट में अपील की और न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया कि यदि कम्पनी अपने ग्राहकों के खातों की गहन जाँच करती तब क्रेडिट लेखों के पुनः क्रेडिट होने का अनुमान लगाया जा सकता था। कम्पनी को ग्राहक के खातों की जाँच न करने के लिये लापरवाही का दोषी ठहराया गया तथा बैंक को अशुद्ध लेखों की वसूली के लिये अधिकृत किया गया। परन्तु यदि ग्राहक की स्थिति में परिवर्तन हो जाता है तथा यह परिवर्तन अशुद्ध लेखों का ज्ञान न रखते हुये होता है तब बैंक को अशुद्ध लेखे शुद्ध करने का अधिकार नहीं है।

बैंक समय-समय पर ग्राहकों से उनके खातों की बाकी का पुष्टिकरण पत्र (Confirmation Letter) प्राप्त करता रहता है।' इसके माध्यम से बैंक ग्राहक के खाते में समस्त डेबिट लेखों का पुष्टिकरण प्राप्त कर लेता है जिसके पश्चात् ग्राहक उन लेखों (Entries) के सम्बन्ध में अपनी असहमति प्रगट नहीं कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि इण्डियन बैंक नामक विवाद[1] में की गयी। इस विवाद में वादी ने बैंक को सावधि विनिमय विपत्र परक्रामण के उद्देश्य से प्रदान किये। इन प्रपत्रों का क्रय करके बैंक ने वादी के खाते में क्रेडिट कर दिया। परन्तु विपत्र के स्वीकारक द्वारा विपत्र स्वीकार न करने की स्थिति में बैंक ने वादी का खाता डेबिट कर दिया और वादी ने इस डेबिट लेखे का पुष्टिकरण कर दिया। इसी बीच माल के प्रपत्र खो गये तथा वादी की मृत्यु हो गयी। वादी के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा बैंक के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया गया कि बैंक ने विपत्र के अनादरण की सूचना नहीं दी है और बैंक द्वारा विपत्र वापिस नहीं लौटाये गये हैं। अतः बैंक को विपत्रों की राशि डेबिट करने का अधिकार नहीं है। केरल हाईकोर्ट ने निर्णय दिया कि ग्राहक द्वारा खाते में जमा शेष का पुष्टिकरण प्रपत्र हस्ताक्षर करने पर यह समझा जायेगा कि उसने डेबिट लेखों की सहमति प्रदान कर दी है और डेबिट लेखे उस पर बाध्य समझे जायेंगे।

इसके विपरीत, यदि त्रुटि का प्रभाव बैंक के पक्ष में हुआ है तब ग्राहक उसका संशोधन करने का अधिकारी है। परन्तु यदि बैंक की स्थिति परिवर्तित हो गयी है तथा ग्राहक द्वारा लापरवाही दिखलायी जाती है तब ग्राहक इन अशुद्धियों का संशोधन नहीं करवा सकता है। इस स्थिति में विशेष महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि ग्राहक की लापरवाही साबित होनी चाहिये। इस निर्णय की पुष्टि कनारा बैंक बनाम कनारा सेल्स कॉरपोरेशन नामक विवाद[2] में की गयी।

यदि बैंक के किसी कर्मचारी द्वारा पास बुक में जानबूझकर कोई अशुद्धि की गयी है और यह अशुद्धि व्यवसाय की सामान्य अवधि में की गयी है तब बैंक ग्राहक की क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होगा। इसके विपरीत, यदि बैंक का कर्मचारी

1. Essa Ismal Vs. Indian Bank Ltd. (1963
2. Canara Bank Vs. Canara Sales Corporation (1974)

कोई कार्य, ग्राहक के अभिकर्त्ता के रूप में, बैंक के व्यापार के अन्तर्गत नहीं करता है तब बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया बनाम श्यामा देवी नामक विवाद[1] में की गई है। इस विवाद में श्यामा देवी ने स्टेट बैंक में अपना खाता खोला और खाते पर परिचय बैंक के एक कर्मचारी द्वारा दिया गया जो श्यामा देवी के पति का मित्र एवं उनका पड़ोसी था। श्यामा देवी अपना रुपया एवं चैक बैंक कर्मचारी को अपने खाते में जमा के उद्देश्य से देती थी और कर्मचारी द्वारा इस रुपये का दुरुपयोग किया गया तथा कर्मचारी ने कपट छुपाने के लिये पास बुक में त्रुटिपूर्ण लेखे किये। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया है कि बैंक कर्मचारी ने ग्राहक के एजेन्ट के रूप में कार्य किया है तथा उसने ग्राहक के साथ कपट बैंक के सामान्य व्यवसाय के दौरान नहीं किया है। अतः बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

अतः बैंक की पास बुक का विशेष महत्व होता है। बैंक को ग्राहक के खाते की पास बुक नियमित अवधि पर तैयार करके ग्राहक को प्रदान करनी चाहिए।

बैंक के अधिकार
(Rights of a Banker)

बैंक और ग्राहक के बीच अनुबन्ध से बैंक तथा ग्राहक को विभिन्न अधिकार प्राप्त होते हैं। बैंक के विभिन्न कर्त्तव्य ग्राहक को अधिकार प्रदान करते हैं। बैंक को ग्राहक के विरुद्ध निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते हैं—

(1) ग्रहणाधिकार,

(2) मुजराई अथवा समायोजन का अधिकार,

(3) भुगतान विनियोजन का अधिकार,

(4) ब्याज, कमीशन एवं प्रभार वसूल करने का अधिकार।

ग्रहणाधिकार अथवा लियन
(Lien)

ग्रहणाधिकार से आशय ऋणदाता के उस अधिकार से होता है जिसमें ऋणदाता को अपने कब्जे में प्राप्त सम्पत्ति उस समय तक रोके रखने का अधिकार होता है जब तक कि ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान नहीं कर दिया जाता है। ग्रहणाधिकार चालू अथवा तरल सम्पत्तियों (Current Assets) पर प्राप्त होता है। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 171 के अनुसार बैंकों का ग्रहणाधिकार, विपरीत आशय के अभाव में, सामान्य ग्रहणाधिकार समझा जाता है। बैंकों को यह सामान्य ग्रहणाधिकार प्रतिभूति के विक्रय पर आधिक्य (Surplus) पर लागू समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि पंजाब नेशनल बैंक बनाम सत्यपाल विरमानी नामक विवाद[2]

1. State Bank of India Vs. Shyama Devi (1978 S. C. 1263)
2. Panjab National Bank Vs. Satyapal Virmain (1956)

में की गई है। इसमें प्रतिवादी ने बैंक से ऋण प्राप्त किया और ऋण की जमानत-स्वरूप कुछ सरकारी प्रतिभूतियाँ बैंक को गिरवी निक्षेप कीं। बैंक द्वारा प्रतिभूतियाँ बेचने पर ऋण का समायोजन किया गया और बैंक के पास कुछ विक्रय आधिक्य (Sales Surplus) शेष बच गया। बैंक ने इस आधिक्य को प्रतिवादी द्वारा प्रदत्त गारन्टी में समायोजित किया। प्रस्तुत वाद में पंजाब हाई कोर्ट ने निर्णय दिया कि विपरीत अनुबन्ध के अभाव में बैंक का ग्रहणाधिकार सामान्य ग्रहणाधिकार होता है तथा विक्रय की राशि पर बैंक को सामान्य ग्रहणाधिकार प्राप्त होगा। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि बैंक ग्रहणाधिकार का प्रयोग करते समय प्रतिभूति पर स्पष्टतः प्रगट करता है कि यह प्रतिभूति अमुक ऋण की जमानत के लिये स्वीकार की गई है तब बैंक किसी अन्य ऋण के लिये विशिष्ट प्रतिभूति पर ग्रहणाधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि विजय कुमार बनाम मैसर्स जालन्धर बोडी बिल्डर्स व अन्य नामक विवाद[1] में की गई है। अतः बैंक को अपने अधिकार में प्राप्त प्रतिभूति पर, विपरीत अनुबन्ध के अभाव में, सामान्य ग्रहणाधिकार प्राप्त होता है।

बैंक के सामान्य ग्रहणाधिकार की निम्नलिखित विशेषतायें हैं—

(1) गर्भित गिरवी (Implied Pledge)—बैंक का ग्रहणाधिकार गर्भित गिरवी होता है, चूंकि ऋण का भुगतान न होने की स्थिति में बैंक को वस्तु बेचने का पूर्ण अधिकार होता है। बैंक के सम्पत्ति बेचने का अधिकार उन समस्त सम्पत्तियों एवं प्रतिभूतियों पर लागू होता है जो बैंक के अधिकार में हैं। परन्तु स्थायी (Fixed) सम्पत्ति की दशा में बैंक को स्पष्टतः सम्पत्ति बेचने का अधिकार नहीं है। बैंक मात्र सम्पत्ति के हक विलेख अपने अधिकार में रख सकता है। माल को विक्रय करने का अधिकार गिरवी में होता है। अतः बैंक का ग्रहणाधिकार गर्भित गिरवी समझा जाता है।

(2) मान्यता (Recognition)—बैंक के ग्रहणाधिकार को भारतीय अनुबन्ध अधिनियम के अन्तर्गत मान्यता प्राप्त है। इसके लिये किसी पृथक् अधिनियम की स्थापना नहीं की गयी है।

(3) बैंक के पास छोड़ी गई प्रतिभूतियाँ (Securities Left with the Bank)—बैंक को उन प्रतिभूतियों पर भी ग्रहणाधिकार प्राप्त होता है जिनके विरुद्ध लिये गये ऋण का भुगतान कर दिया गया है परन्तु प्रतिभूतियाँ बैंक के पास ही छोड़ी गई हैं। चूंकि इस सम्बन्ध में यह समझा जायेगा कि ग्राहक ने अपनी सम्पत्ति अथवा प्रतिभूति अन्य ऋण की जमानतस्वरूप छोड़ी है। इस निर्णय की पुष्टि लन्दन व गलोब फाइनेन्स कॉरपोरेशन नामक विवाद[2] में की गई है।

---

1. Vijay Kumar Vs. Jullunder Body Builders & others (1981)
2. London and Globe Finance Corporation (1902)

(4) प्रतिभूतियों पर अधिकार (Right on Securities)—बैंक का ग्रहणाधिकार केवल उन प्रतिभूतियों पर लागू होता है जो कि ऋणी के नाम मे हैं। संयुक्त नाम मे जारी प्रतिभूतियों पर एक व्यक्ति के ऋण के लिये ग्रहणाधिकार प्राप्त नही हो सकता है।

(5) परिसीमा अधिनियम (Limitation Act)—बैंक के ग्रहणाधिकार पर परिसीमा अधिनियम लागू नहीं होता है। चूंकि यह अधिनियम ऋण की वसूली के उपचार पर प्रतिबन्ध लगाता है। ऋण का विमोचन (Discharge) किया जा सकता है अर्थात् बैंक के अधिकार मे उपलब्ध सम्पत्ति को बेचकर ऋण समाप्त किया जा सकता है।

बैंक का सामान्य ग्रहणाधिकार निम्नलिखित सम्पत्तियों पर लागू नहीं होता है—

(1) सुरक्षा जमा (Safe Deposit)—इसके लिये छोड़ी गई वस्तुओ पर ग्रहणाधिकार प्राप्त नही हो सकता है, चूंकि इस स्थिति में बैंक निक्षेप ग्रहीता होता है।

(2) विशेष उद्देश्य (Special Object)—यदि विशेष उद्देश्य के लिये बैंक के पास कोई प्रतिभूति भेजी गई है तब उस पर बैंक का ग्रहणाधिकार लागू नही होता है।

(3) भूल से छोड़ी गई सम्पत्तियाँ (Property Left by Mistake)—इन पर ग्रहणाधिकार लागू नही समझा जायेगा।

(4) बैंक खाते में जमा धन (Money Deposit in Bank)—बैंक का ग्रहणाधिकार केवल वस्तुओ अथवा प्रतिभूतियो पर लागू होता है। बैंक के पास जमा धनराशि पर बैंक को मुजराई (Setoff) का अधिकार प्राप्त है।

(5) ट्रस्टी (Trustee)—बैंक के पास ट्रस्टी के रूप मे रखी गई वस्तुओ पर बैंक को ग्रहणाधिकार प्राप्त नही हो सकता है।

(6) ऋण प्राप्त न करने पर छोड़ी गई सम्पत्ति (Property without taking Loan)—बैंक के पास ऋण प्राप्त करने के उद्देश्य से छोड़ी गई वस्तुओं पर उस समय तक ग्रहणाधिकार प्राप्त नही होता है जब तक कि उनके विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं कर दिया जाता है।

(7) विशेष ग्रहणाधिकार (Special Lien)—बैंक का सामान्य ग्रहणाधिकार उस स्थिति में विशेष ग्रहणाधिकार बन जाता है जबकि बैंक द्वारा स्पष्ट रूप से कोई वस्तु किसी विशेष ऋण की जमानतस्वरूप स्वीकार की गई है।

मुजराई का अधिकार
(Right of Setoff)

मुजराई अथवा समायोजन के अधिकार से अभिप्राय: उस अधिकार से है

जिसके अन्तर्गत बैंक को दो पृथक् खाते, जो एक ही अधिकार (Entity) के आधीन हैं, समायोजित करने का अधिकार होता है।

बैंक ग्राहक से पूर्व सहमति प्राप्त कर लेता है कि बैंक को ग्राहक के खातों पर मुजराई का अधिकार है। बैंक का यह अधिकार ग्राहक को सूचित किये बिना प्रयोग में लाया जा सकता है। इसके अन्तर्गत बैंक को अपने ऋण की वसूली के लिये एक ही ग्राहक के समस्त खातों को संयुक्त रूप में मिलाने का अधिकार है।

उदाहरणार्थ—ग्राहक के एक खाते में डेबिट शेष है तथा दूसरे खाते में क्रेडिट शेष है तब बैंक दोनों खातों का शेष (Balance) समायोजन करके वास्तविक देनदारी का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। बैंक के मुजराई के अधिकार का प्रयोग निम्नलिखित परिस्थितियों में किया जा सकता है—

(1) समान स्थिति वाले खाते (Account with Same Capacity)—खाते एक ही व्यक्ति के नाम में होने चाहियें तथा दोनों खातों में ग्राहक की समान स्थिति होनी चाहिये। समान स्थिति (Same Capacity) के अन्तर्गत; आवश्यक है कि दोनों खातों में ग्राहक के अधिकार समान होने चाहियें। एकल व्यापारी का व्यापार खाता तथा व्यक्तिगत खाता समान स्थिति वाले खाते समझे जायेंगे। दोनों खातों का समायोजन किया जा सकता है। साझेदारी फर्म की स्थिति में फर्म का खाता साझेदारों के खातों के डेबिट शेष के लिये समायोजित नहीं किया जा सकता है। परन्तु, इसके विपरीत, व्यक्तिगत खातों का समायोजन फर्म खाते से किया जा सकता है, चूंकि फर्म के साझेदार फर्म के ऋण के लिये संयुक्त एवं व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी होते हैं। अवयस्क के खाते में अभिभावक का व्यक्तिगत खाता तथा अवयस्क का खाता पृथक्-पृथक् समझे जायेंगे। ट्रस्ट का खाता ट्रस्टी के व्यक्तिगत खाते से पृथक् समझा जायेगा एवं इसी प्रकार वकील का व्यक्तिगत खाता उसके मुव्वकिल (Client) के खाते से पृथक् समझा जायेगा। यह समान स्थिति वाले खाते नहीं समझे जाते हैं। इसी प्रकार व्यक्तिगत ऋण के लिये संयुक्त खाते पर मुजराई का अधिकार प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

(2) देय ऋण (Debt Due)—मुजराई का अधिकार उन ऋणों के लिये प्रयोग में लाया जा सकता है जो ऋण देय हो चुके हैं। भावी ऋणों के लिये इस अधिकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

(3) विपरीत अनुबन्ध के अभाव में (In Absence of Contrary Contract)—मुजराई का अधिकार उसी स्थिति में प्रयोग में लाया जा सकता है जबकि इसके विपरीत कोई अनुबन्ध नहीं किया गया है।

(4) निश्चित दायित्व (Fixed Liabillties)—मुजराई का अधिकार केवल उसी दायित्व के लिए किया जा सकता है जो दायित्व निश्चित है।

(5) स्वेच्छा पर आधारित (Depend on Discretion)—बैंक मुजराई का अधिकार अपनी स्वेच्छा से करता है, ग्राहक इसके लिये बल नहीं डाल सकता है।

यदि एक ग्राहक के खाते एक ही बैंक की अनेक शाखाओं पर हैं तब बैंक सब खातों का समायोजन कर सकता है।

(6) कुर्की आदेश से पूर्व लागू करना (Use Prior Garnishee Order)—बैंक कुर्की आदेश लागू होने से पूर्व खातों को मुजराई कर सकता है।

(7) नोटिस (Notice) बैंक को मुजराई का अधिकार प्रयोग में लाने से पूर्व ग्राहक को इस आशय का उचित नोटिस भेज देना चाहिये अथवा ग्राहक से पूर्व सहमति प्राप्त कर लेनी चाहिये। विपरीत परिस्थितियो मे बैंक को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। इस स्थिति मे यह साबित करने का दायित्व बैंक पर होगा कि उसका ग्राहक से इस आशय का पूर्व करार (Agreement) हुआ है अथवा इस आशय की पूर्व सूचना दी जा चुकी है। अतः बैंक को ग्राहक का खाता खोलते समय मुजराई करने का अधिकार-पत्र ग्राहक से प्राप्त करना चाहिये। इससे मुजराई करते समय ग्राहक को नोटिस भेजने की आवश्यकता समाप्त हो जाती है।

भुगतान का विनियोजन
(Appropriation of Payment)

बैंकर और ग्राहक के बीच भुगतान नियोजन के सम्बन्ध मे भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, 1872 की धारा 59,60 व 61 लागू होती है जिसमे देनदार व लेनदार के बीच भुगतान नियोजन का प्रावधान किया गया है। अधिनियम की धारा 59 के अनुसार, यदि देनदार के विभिन्न ऋण हैं तथा देनदार रुपया भुगतान करते समय विशेष निर्देश देता है तब भुगतान का नियोजन देनदार के निर्देशानुसार किया जाता है। अधिनियम की धारा 60 के अनुसार, यदि ग्राहक के बैंक में दो ऋण खाते हैं तथा ग्राहक अपने ऋण का भुगतान करते समय कोई निर्देश नहीं देता है तब बैंक स्वेच्छा से ऋण का नियोजन कर सकता है। बैंक द्वारा स्वेच्छा से ऋण के नियोजन की स्थिति में ग्राहक को सूचित करना आवश्यक होता है कि उसने अमुक ऋण के लिये भुगतान का नियोजन किया है।

यदि ग्राहक ने एक ही खाते मे अनेक ऋण प्राप्त कर रखे हैं और ग्राहक ऋण राशि का भुगतान करता है परन्तु यह निर्देश नहीं देता है कि किस ऋण का भुगतान किया गया है तथा बैंक अपनी स्वेच्छा का प्रयोग नहीं करता है तब भुगतान का नियोजन क्लेटन विवाद (Clayton's Case) के आधार पर किया जायेगा। इसके अनुसार ऋण का भुगतान क्रमिक आधार (Chronological Order) मे किया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रथम लिये गये ऋण का भुगतान पहले किया जायेगा तथा इसके पश्चात् लिये गये ऋण का भुगतान इसी क्रम मे किया जायेगा।

अधिनियम की धारा 61 के अनुसार, यदि ऋण के किसी पक्षदार का विनियोजन नहीं किया गया है तथा भुगतान का विनियोजन किया जायेगा (चाहे वह ऋण कालातीत (Time Barred)

और यदि ऋण एक ही समय पर प्रदान किया गया है तब भुगतान का विनियोजन अनुपातिक राशि में किया जायेगा। उपरोक्त नियम के आधार पर क्लेटन विवाद का निर्णय किया गया था।

ब्याज, कमीशन एवं प्रभार वसूल करना
(To Charge Interest, Commission and Service Charges)

बैंक अपने ग्राहक को ऋण प्रदान करते हैं। इस ऋण पर बैंक ब्याज वसूल करने के अधिकारी होते हैं। इसी प्रकार बैंक ग्राहकों के चैक, विपत्र आदि वसूल करते हैं जिन पर बैंक कमीशन एवं प्रभार वसूल करते हैं।

बैंक एवं ग्राहक के सम्बन्ध विच्छेद होना
(Termination of Banker and Customer Relationship)

बैंक तथा ग्राहक के सम्बन्ध निम्नलिखित परिस्थितियों में विच्छेद हो जाते हैं—

(1) ग्राहक द्वारा बैंक से खाता बन्द करने का आवेदन करने पर,

(2) बैंक द्वारा खाता बन्द करने का निर्णय लेने पर, परन्तु इस स्थिति में बैंक को पूर्व सूचना भेजना अनिवार्य होता है अन्यथा बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तर-दायी ठहराया जा सकता है।

(3) विधि लागू होने पर अर्थात् ग्राहक की मृत्यु, दिवालिया अथवा पागल होने पर।

अतः उपरोक्त परिस्थितियों में बैंक और ग्राहक के सम्बन्ध विच्छेद हो जाते हैं।

(SOLVED PROBLEMS)

1. 19 मई 1977 को बैंक की शाखा X के खाते पर कुर्की आदेश प्राप्त करती है। कुर्की आदेश प्राप्ति के समय X के निम्नलिखित खाते बैंक में हैं—

(i) X के नाम में एक चालू खाता जिसमें 3000 रुपये शेष हैं। परन्तु इसमें 500 रुपये उस चैक के सम्मलित हैं जो स्थानीय बैंक में समाशोधन के माध्यम से संग्रहण हेतु भेजा गया है परन्तु उसका संग्रहण नहीं हुआ है।

(iii) X के नाम में जारी 5000 रुपये की जमा रसीद जिसमें 25 मई 1976 को एक वर्ष के लिये रुपया जमा किया गया तथा जिसका भुगतान 25 मई 1977 को देय है।

(ii) X तथा Y के नाम में संयुक्त चालू खाता जिसमें 7500 रुपये शेष हैं।

(iv) एक चालू खाता जिसमें 10,000 रुपये शेष हैं जिसमें X मृतक Z के निष्पादक के रूप में खाता सचालित करता है।

(v) X के नाम में असुरक्षित ऋण खाता जिसमें X ने बैंक से 1000 रुपये ऋण लिया है।

उपरोक्त परिस्थितियों में कुर्की आदेश की प्राप्ति पर कारण सहित समझाते हुये बताइये कि आप क्या करेंगे ?

On 19th May, 1977 your branch receives a garnishee order attaching all sums owing by the Bank to your coustomer X. At the time of the receipt of the order, X has got the following accounts :

(i) A current account in name of X with a balance of Rs. 3000. Included in the balance, however, is a sum of Rs. 500 representing a cheque on another local bank which has been sent earlier in the day for collection through clearing but which has not been realised.

(ii) A fixed deposit for Rs. 5,000 deposited on 25th May 1976, for one year in the name of X and maturing for payment on 25th May 1977.

(iii) A joint current account in the name of X and Y with a balance of Rs. 7,500.

(iv) A current account in the name of 'X executor to the estate of late Mr. Z' with a balance of Rs. 10,000.

(v) An over due unsecured loan account in the name of X wherein he owes the Bank Rs. 1,000.

In view of the Garnishee order explain with reasons, how you would deal with each of the above accounts.

(C. A I. I B May, 1977)

हल—(i) यह आदेश चालू खाते पर लागू होगा परन्तु इसमें 500 रुपये की राशि पर आदेश लागू नही होगा । चूंकि यह राशि भावी देय राशि है और इसकी प्राप्ति सम्भावित (contingent) है । अतः सम्भावित दायित्व सम्मिलित नही किये जाते हैं । अतः केवल 2500 रुपये की राशि पर कुर्की आदेश लागू माना जायेगा ।

(ii) सावधि जमा खाते की राशि भविष्य मे देय है । अतः इस पर कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा । यह सम्भावित देय नही है, अपितु यह भविष्य में निश्चित तिथि पर देय है । अतः इस पर कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा ।

(iii) संयुक्त चालू खाते पर कुर्की आदेश लागू नहीं किया जाता है । कुर्की आदेश उसी खाते पर लागू किया जायेगा जो कि न्यायिक देनदार (Judgement Debtor) का खाता है ।

(iv) निष्पादक खाते (Executor Account) पर कुर्की आदेश लागू नही किया जाता है चूंकि यह खाता वास्तविक रूप मे न्यायिक देनदार का खाता नही है ।

(v) बैंक कुर्की आदेश लागू होने से पूर्व ऋण का समायोजन कर सकता है । अतः कुर्की आदेश लागू करते समय X के पास केवल 2,500 रुपये (i) मे ऋण के

1,000 रुपये घटाकर 1,500 रुपये शेष बचते हैं। इसी राशि पर कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा। इसके अतिरिक्त, 25 मई 1977 को जमा रसीद की राशि पर भी कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा। □

2. A ने बैंक में संग्रहण के लिये अंश व प्रतिभूति दिये। परन्तु अंशों का संग्रहण होने से पूर्व A खाते पर कुर्की आदेश प्राप्त हो गया। क्या अंशों की राशि पर कुर्की आदेश लागू होगा ?

A sent shares and securities to the bank for collection. Before realising the amount of shares, garnishee order is served on the account of A. Will Garnishee order be effective on A's account ?

हल—अंशों की वसूली की राशि सम्भावित देय राशि है तथा बैंक की स्थिति ऐजेन्ट के समान है। अतः इस स्थिति में कुर्की आदेश लागू नहीं होगा।

3. B ने बैंक में एक निश्चित चैक के भुगतान के लिये रुपया जमा किया। इस चैक को बैंक ने पुनः प्रस्तुत करने हेतु वापिस कर दिया था। चैक को वास्तव में प्रस्तुत करने से पूर्व बैंक को कुर्की आदेश प्राप्त होता है। क्या चैक का भुगतान किया जायेगा ?

B deposits a certain sum of money to meet on representation a cheque which was returned by the bank with the remark 'refer to drawer present again'. Meanwhile bank received a Garnishee order. Will you pay the cheque on representation ?

हल—उपरोक्त स्थिति में चैक का भुगतान नहीं किया जायेगा, चूंकि बैंक ने चैक के भुगतान का दायित्व स्वीकार नहीं किया है। अतः कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा। परन्तु यदि बैंक ने चैक का दायित्व स्वीकार कर लिया हो तब उस चैक के भुगतान के लिये जमा राशि पर कुर्की आदेश लागू नहीं माना जाता है।

4. अ का व्यक्तिगत खाता एक बैंक में है। इसके अतिरिक्त उसके मुव्वकिल (client) का खाता भी उसके नाम से बैंक में है। अ अपने मुव्वकिल के खाते से एक चैक 1,000 रुपये का जारी करता है बैंक इसी बीच में अ के व्यक्तिगत खाते पर कुर्की आदेश प्राप्त करता है। क्या चैक का भुगतान किया जायेगा ?

A has a personal Account in a Bank. Besides it, his client's account is also in the bank in his name. A issued a cheque for Rs. 1,000 from his client's account. Meanwhile, a Garnishee order is served on A's account. Will yon pay the amount of cheque ?

हल—अ के मुव्वकिल का खाता उसके व्यक्तिगत खाते से पृथक् समझा जायेगा चूंकि दोनों स्थिति में अ के अधिकार पृथक्-पृथक् हैं। अतः मुव्वकिल के खाते

से जारी किये गये चैक के भुगतान पर कुर्की आदेश का कोई प्रभाव नहीं होगा और चैक का भुगतान किया जायेगा।

5. ब का चालू खाता बैंक में है जिसमें 5,000 रुपये की शेष बाकी है। इस 5,000 रुपये में 3,000 रुपये के ऐसे चैक शामिल हैं जिन्हें समाशोधन में स्थानीय बैंकों पर प्रस्तुत किया गया है। बैंक न्यायालय से कुर्की आदेश प्राप्त करता है। क्या 3,000 रुपये पर कुर्की आदेश लागू होगा ? यदि उनका क्रेडिट पहले दिया जा चुका है तथा बाद में उनका संग्रहण कर लिया जाता है ?

B has current account in a bank with a balance of Rs. 5,000 A amount of Rs. 3,000 is inculded in Rs. 5,000 for those cheques which are sent in local banks through clearing. Bank receives Garnishee order. Will Garnishee order be effective on Rs. 3,000 for which account has been credited before realising the amount ?

हल—उपरोक्त स्थिति में, 3,000 रुपये पर भी कुर्की आदेश लागू समझा जायेगा चूंकि इसका क्रेडिट पहले ही दिया जा चुका है और यह राशि ग्राहक के खाते में हस्तांतरित की जा चुकी है। परन्तु यदि चैक अनादृत हो जाते हैं तब इस राशि पर कुर्की आदेश लागू नहीं समझा जायेगा।

6. बैंक के मुजराई के अधिकार को निम्नलिखित परिस्थितियों में विवेचना कीजिये—

(i) अ के खाते में क्रेडिट शेष है। बैंक अ तथा ब के संयुक्त खाते का अधिविकर्ष समायोजित करना चाहता है।

(ii) द बैंक द्वारा एस को दिये गये ऋण का प्रतिभू है। ऋण अप्राप्य हो जाता है। द के खाते में क्रेडिट शेष है। बैंक द के खाते से प्रतिभू के रूप में उसके दायित्व का समायोजन करना चाहता है।

(iii) एक्स अपने मृतक चाचा जी की सम्पत्ति में विधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त करता है जिसे उसके उसी बैंक में अन्य चालू खाते में क्रेडिट किया जाता है। क्या बैंक इसके ऊपर समायोजन का अधिकार प्राप्त कर सकता है ?

Discuss a banker's right of set-off in the following cases—

(i) There is a Credit Balance in the account of A. The banker wishes to set this off against an overdraft in the joint names of A and B.

(ii) D is a guarantor for a loan granted by the bank to S. The loan becomes sticky. There is a credit balance in D's account. The banker wishes to set it off against D's liability as a guarantor.

(iii) X received the legal representation in his deceased uncle's estate which was credited in his another current account with the

same bank. Can bank exercise his right of set-off against this estate ?

हल—(i) अ और ब के संयुक्त खाते के ऋण के लिये अ का व्यक्तिगत खाता समायोजित किया जा सकता है परन्तु व्यक्तिगत ऋण के लिये संयुक्त खाता समायोजित नहीं हो सकता है। अ तथा ब के संयुक्त खाते का ऋण 'अ' के व्यक्तिगत खाते से समायोजित किया जा सकता है। अतः इसमें बैंक का मुजराई का अधिकार लागू होगा।

(ii) 'स' का ऋण अपर्याप्त हुआ है। इस स्थिति में गारन्टी देने वाले व्यक्ति का दायित्व उसी स्थिति में निश्चित होता है जबकि ऋणी द्वारा ऋण का मुगतान नहीं किया जाता है। उपरोक्त स्थिति में बैंक द के खाते की मुजराई नहीं कर सकता है चूंकि उसका दायित्व निश्चित नहीं हुआ है।

(iii) उपरोक्त स्थिति में दोनों खाते पृथक्-पृथक्अधिकार के अन्तर्गत हैं। अतः बैंक मुजराई का अधिकार, प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है।

7. A का एक बैंक में, दो शाखाओं में पृथक्-पृथक् खाते हैं। शाखा नम्बर 1 में उसके 2,000 रुपये के ऋण हैं तथा शाखा नम्बर 2 में उसका 10,000 रुपये क्रेडिट शेष है। क्या शाखा नम्बर 1 अपने ऋण की मुजराई शाखा नम्बर 2 से कर सकती है ?

A has two separate accounts in two branches of a bank There is a loan of Rs. 2,000 in branch No. I and credit balance of Rs. 10,000 in Branch No. II. Can Branch No. I set-off his loan with the Branch No. II ?

हल—एक ही बैंक की समस्त शाखाओं का एक ही स्वामित्व (entity) समझा जाता है। अतः शाखा नम्बर 1 मुजराई का अधिकार प्रयोग में ला सकती है। परन्तु, इसके विपरीत, ग्राहक को यह अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

8. एक मृतक का एक बैंक में ऋण खाता है जिसकी प्रतिभूति में बीमा पालिसी जमा की गयी थी। मृत्यु के पश्चात् बीमा पालिसी का रुपया प्राप्त हो गया जिसमें ऋण का भुगतान कर दिया गया। बीमा पालिसी की अतिरिक्त (surplus) राशि से बैंक मृतक का एक अन्य ऋण खाते की मुजराई (Set-off) करना चाहता है जिसके विरुद्ध कोई प्रतिभूति नहीं दी गयी है। क्या बैंक को यह अधिकार प्राप्त है ?

A deceased has a loan account in Bank in which securities, Life Insurance Policy has been deposited. After death, amount of policy has been received and loan was paid. Bank wishes to set-off another loan account of deceased from the surplus amount of policy against which there is no security. Can bank exercise his right of set-off ?

हल—बैंक का सामान्य ग्रहणाधिकार (Lien) होता है। बीमा पालिसी से प्राप्त रकम को अन्य ऋण की राशि मे समायोजित किया जा सकता है। परन्तु यदि पालिसी पर बैंक का विशेष ग्रहणाधिकार है तब बैंक द्वारा अन्य ऋणों के लिये मुजराई का अधिकार प्रयोग मे नही लाया जा सकता है।

9. 'अ' का बैंक में व्यक्तिगत खाता है जिसमें 34,000 रुपये का डेबिट शेष है। बैंक 'अ' से यह राशि समायोजित करने की प्रार्थना करता है परन्तु 'अ' कोई उत्तर नहीं देता है। 'अ' ब के साथ मिलकर एक नया बचत खाता बैंक में खोलता है जिसका भुगतान किसी भी व्यक्ति को देय है। इस खाते में 50,000 रुपये क्रेडिट शेष है। बैंक 'अ' को सूचित किये बिना 'अ' का व्यक्तिगत खाता संयुक्त खाते से समायोजित कर लेता है। 'अ' बैंक पर दोषपूर्ण समायोजन के लिये वाद प्रस्तुत करता है। क्या 'अ' सफल होगा ?

A has a personal account in a Bank with the debit balance of Rs. 34,000. Bank requests to A to adjust this amount but A gives no response. A and B opened a new Saving Bank Account payable either or survivor. There is a credit balance of Rs. 50,000 in this account. Bank adjusted the debit balance of A's personal account from their joint account without informing to A. A files a suit against the bank for wrongful set-off. Will A succeed ?

हल—उपरोक्त स्थिति मे बैंक को व्यक्तिगत खाते का ऋण संयुक्त खाते से समायोजित करने का अधिकार नहीं है, चूंकि दोनों खाते पृथक्-पृथक् स्थिति (Status) के खाते हैं। बैंक ने दोषपूर्ण समायोजन किया है जिसके लिये बैंक पूर्ण उत्तरदायी है।

10. बैंक ने एक फर्म का बेजमानती बिल 25,000 रुपये का क्रय किया। देय तिथि पर बिल अनादृत हो गया। फर्म के खाते में 500 रुपये थे। बैंक के पास फर्म के एक साझेदार का व्यक्तिगत खाता भी है जिसमें 50,000 रुपये का क्रेडिट शेष है। क्या बैंक अनादृत बिल की राशि साझेदार के व्यक्तिगत खाते से समंजन कर सकता है ?

A Bank has purchased a clean bill of Rs. 25,000 for a firm. Bill was dishonoured on due date. There is a credit balance of Rs. 500 in firm's account. There is also a partner's account of the firm in which there is a credit balance of Rs. 50,000. Can Bank adjust the amount of dishonoured bill from the Partner's personal account ?

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक साझेदार का व्यक्तिगत खाता फर्म के ऋण के लिये समंजन कर सकता है चूँकि साझेदार फर्म के ऋण के लिये संयुक्त एवं पृथक् रूप से व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी होते हैं। परन्तु उपरोक्त कार्यवाही करने से पूर्व बैंक को इस आशय की सूचना ग्राहक को भेज देनी चाहिये।

11. एक फर्म का चालू खाता आपके बैंक की बम्बई शाखा पर है। इस खाते में 5,000 रुपये क्रेडिट शेष हैं। इसी फर्म का अन्य खाता आपकी कलकत्ता शाखा पर है जिसमें 1,00,000 रुपये शेष है। फर्म द्वारा बम्बई शाखा पर 10,000 रुपये का चैक जारी किया जाता है जिसे बैंक 'आहर्त्ता से मिलिये' का कारण लगाते हुये वापिस कर देता है। फर्म द्वारा वाद प्रस्तुत किया जाता है। क्या फर्म सफल हो सकेगी ?

A firm has a current account with your Bombay branch. With a credit balance of Rs. 5,000. The firm has an another current account with Calcutta branch with a credit balance of Rs. 1,00,000. The firm has issued a cheque of Rs. 10,000 on Bombay branch which was returned with reason 'Refer to Drawer.' The firm files a suit for damages. Will the firm succeed ?

हल—उपरोक्त स्थिति में फर्म द्वारा प्रस्तुत किया गया वाद सफल नहीं हो सकता है। बैंक ने चैक को यथाविधि वापिस किया है, चूँकि एक ही बैंक की अनेक शाखाओं को एक ही स्वामित्व (Entity) के अधीन मानने का अधिकार केवल बैंक को दिया गया है। ग्राहक द्वारा इस अधिकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। ग्राहक के लिये एक ही बैंक की पृथक्-पृथक् शाखायें भिन्न स्वामित्व के अधीन समझी जायेंगी। अतः बैंक ने चैक को उचित विधि के अधीन वापिस किया है जिसके लिये उसे उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

12. निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situations—

(a) A has a current account with your branch. For the last two years, he is enjoying the over draft facilities up to Rs. 10,000. Once he issued a cheque for Rs. 2,000 which was returned by the Bank with reason 'Refer to Drawer.' A file a suit against bank for wrongful dishonour of cheque.

(b) A atttachment order of I. T. O. was received by your branch in name of P. P has a joint current account with R with instructions either or survivor. Meanwhile P died. Will this attachment order effective on joint account.

हल—(a) उपरोक्त परिस्थिति में A के खाते में पर्याप्त कोष नहीं है।

अधिविकर्ष की सीमा माँग पर देय ऋण होती है और यह बैंक के विवेकाधीन होती है। यह ऋण सीमा ग्राहक के खाते में पर्याप्त कोष नहीं समझी जाती है। परन्तु बैंक पूर्व के दो वर्षों से नियमित आधार पर अधिविकर्ष की सुविधा प्रदान कर रहा है। अतः बैंक इसको तुरन्त समाप्त नहीं कर सकता है। इस स्थिति में, बैंक को ऋण सीमा समाप्त करने के लिये ग्राहक को पूर्व सूचना देना आवश्यक होता है। इस निर्णय को पुष्टि इण्डियन ओवरसीज बैंक बनाम नरन प्रसाद गोविंद लाल पटेल नामक विवाद[1] में की गयी है।

(b) उपरोक्त स्थिति में, P के खाते पर कुर्की आदेश प्राप्त हुआ है तथा P का बैंक में सयुक्त खाता है। इस स्थिति में कुर्की आदेश उसी स्थिति में लागू होता है जबकि आयकर अधिकारी द्वारा इसकी सूचना संयुक्त खाताधारी R को भी दी गयी है तथा यह आदेश विपरीत आशय के अभाव में बराबर अंशदान (Equal Share) के लिये लागू समझा जाता है। सयुक्त खाते का परिचालन कोई भी व्यक्ति अथवा जीवित व्यक्ति कर सकता है तथा P की मृत्यु हो गयी है। इस स्थिति में R खाते का जीवित स्वामी है और इस खाते पर P का कुर्की आदेश लागू नहीं समझा जायेगा। अतः बैंक को आयकर अधिकारी का कुर्की आदेश वापिस करना चाहिये।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Importance Points to be Remembered)

(1) बैंकर और ग्राहक के बीच अनेक प्रकार के सम्बन्ध पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ—देनदार व लेनदार, एजेन्ट व अभिकर्त्ता, न्यासी के रूप में, निक्षेपकर्त्ता एवं निक्षेपग्रहीता, पट्टाकर्त्ता एवं पट्टाग्रहीता।

(2) बैंक को ग्राहकों के प्रति अनेक कर्तव्य होते हैं जिसमें ग्राहक द्वारा जारी चैकों का भुगतान करना, खातों की गोपनीयता बनाये रखना, चैकों का संग्रहण करना एवं निर्देशानुसार कार्य करना तथा ग्राहक के खाते की पास बुक तैयार करना आदि प्रमुख होते हैं।

(3) बैंक को ग्राहकों के विरुद्ध अनेक अधिकार प्राप्त होते हैं जिनमें लियन, मुजराई का अधिकार, भुगतान का विनियोजन तथा ब्याज, कमीशन व प्रभार वसूल करना आदि प्रमुख होते हैं।

(4) बैंक और ग्राहक के बीच ग्राहक द्वारा खाता बन्द करने पर, बैंक द्वारा खाता बन्द करने पर, ग्राहक की मृत्यु, दिवालिया अथवा पागल होने पर सम्बन्ध विच्छेद हो जाते हैं।

Explain the statutory obligation of a banker to honour his customers cheque. *(Banglore 1970)*

6. 'बैंक का ग्रहणाधिकार भमित गिरवी है'। विवेचना कीजिये।

1. Indian Overseas Bank Vs. Naran Prasad Govind Lal Patel. (1980)

प्रश्न
(Questions)

1. वैंकर तथा ग्राहक के बीच विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों को स्पष्ट कीजिये ।

Discuss the types of relationship between the Banker and the Customer. *(C.A.I.I.B. Nov., 1982)*

2. सुरक्षा जमा खाते की स्थिति में वैंकर तथा ग्राहकों के सम्बन्ध स्पष्ट कीजिये ।

State the relationship between a Banker and Customer in regard to a safe Custody Account. *(C.A.I.I.B. May, 1982)*

3. वैंक का ग्रहणाधिकार क्या है ? उदाहरण सहित सामान्य एवं विशेष ग्रहणाधिकार में अन्तर स्पष्ट कीजिये ।

What is a Banker's Lien ? Explain with examples the distinction between general lien and particular lien.

(C.A.I.I.B. Nov., 1981)

4. वैंक एक विशेष प्रकार का ऋणी है । विवेचना कीजिये ।

'Banker is a dignified borrower.' Comment.

5. वैंक के अपने ग्राहकों के चैकों का भुगतान करने के वैधानिक उत्तरदायित्व की व्याख्या कीजिये ।

Explain the statutory obligation of a banker to honour his customers cheque. *(Banglore 1970)*

6. 'वैंक का ग्रहणाधिकार गर्भित गिरवी है' । विवेचना कीजिये ।

'Banker lien is an implied pledge. Discuss.

7. वैंक के अपने ग्राहकों के खातों की गोपनीयता बनाये रखने के वैधानिक दायित्व का वर्णन कीजिये ।

Explain the legal obligation of a banker to maintain secrecy about his customer's Accounts. *(Banglore 1972)*

8. वैंकर एवं ग्राहक शब्द को परिभाषित कीजिये । वैंक और ग्राहक के बीच कौन से सामान्य एवं विशेष सम्बन्ध हैं ?

Define the term 'Banker' and 'Customer'. What are the general and special relationships between banker and cus omer ?

(Delhi B. Com.)

9. वैंक और ग्राहक के सामान्य सम्बन्ध क्या हैं ? इस सम्बन्ध की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिये ।

What is the general relation of a banker and customer ? Discuss the special features of this relationship.

10. बैंकर व ग्राहक शब्दों को परिभाषित कीजिये । उन परिस्थितियों का वर्णन कीजिये जिनमे एक बैंकर को अपने ग्राहक का खाता बन्द कर देना चाहिये।

Define Banker and customer. Mention those circumstances under which a Banker should close its customer's Account.

(Gorakhpur B Com. 1985)

11. 'बैंकर' और 'ग्राहक' शब्दो को परिभाषित कीजिये। बैंकर-ग्राहक सम्बन्ध की क्या विशेषतायें हैं ?

Define Banker and Customer. What are the Characteristics of Banker and customer relationship.

(Gorakhpur B. Com. 1984)

□□□

5 खातों का परिचालन
(OPERATION OF ACCOUNTS)

बैंक अपने ग्राहकों को रुपया जमा करने के लिये विभिन्न प्रकार के खातों की सुविधायें प्रदान करते हैं। सीमित आय वाले वर्ग के लिये बचत खाता (Saving Account) उपयुक्त होता है जिसमें आवश्यकतानुसार अनेक बार रुपया जमा किया एवं निकाला जा सकता है। व्यापारी वर्ग के लिये चालू खाता (Current Account) अच्छा होता है जिसमें एक दिन में अनेक व्यवहार किये जा सकते हैं। बैंक उन ग्राहकों को ऊँची ब्याज दर पर सावधि जमा खाते (Fixed Deposit Account) की सुविधायें प्रदान करता है जिनको रुपये की तुरन्त आवश्यकता नहीं होती है। इसमें बैंक 15 दिन से लेकर 10 वर्ष की अवधि के लिये निक्षेप स्वीकार करते हैं। बैंक विदेशी अनिवासियों को धन जमा करने के उद्देश्य से स्वदेशी ब्याज दर की तुलना में अधिक ब्याज देते हैं। इससे विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होती है। अतः बैंक अपने ग्राहकों को विभिन्न प्रकार के खातों में रुपया जमा करने की सुविधायें प्रदान करते हैं।

बैंक खातों के विभिन्न प्रकार
(Different Types of Bank Accounts)

बैंक अपने ग्राहकों की आवश्यकतानुसार निम्नलिखित खाते खोलने की सुविधायें प्रदान करते हैं—

बचत खाता
(Saving Account)

बचत खाता किसी भी व्यक्ति द्वारा खोला जा सकता है। इसका उद्देश्य छोटी-छोटी बचतों को बढ़ावा देना है। इस खाते पर बैंक 5 प्रतिशत ब्याज देता है। यह खाता 10 वर्ष से अधिक की आयु वाले व्यक्ति द्वारा खोला जा सकता है। इस खाते में न्यूनतम जमा राशि 5 रुपये है। इस खाते के अन्तर्गत बैंक चैक द्वारा रुपया निकालने की सुविधा प्रदान करता है। परन्तु इस स्थिति में बचत खाते में न्यूनतम जमा राशि 100 रुपये होनी चाहिये। इस खाते में छमाही ब्याज क्रेडिट किया जाता है। ब्याज की गणना प्रत्येक माह की 10 तारीख से लेकर माह की अन्तिम तिथि तक खाते में न्यूनतम शेष के आधार पर की जाती है। यह खाता कम्पनी व फर्म के नाम से खोला जा सकता है परन्तु इस स्थिति में खाते पर ब्याज नहीं दिया जाता है। रिजर्व बैंक के निर्देशों के अधीन, यदि बचत खाता किसी ऐसी संस्था

द्वारा खोला जाता है जो जनकल्याण के लिये स्थापित की गयी है अथवा सहकारी समिति है अथवा ऐसी कम्पनी है जिसे कम्पनी अधिनियम की धारा 25 के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार से लाइसेन्स प्राप्त हुआ है तथा कम्पनी के नाम के अन्त में लिमिटेड शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है एवं बैंक बचत खाते पर ब्याज प्रदान कर सकता है। बचत खाते से एक वर्ष में 150 निकासी (Wihdrawals) से ज्यादा नहीं हो सकती हैं। कुछ बैंकों में निकासी की अधिकतम सीमा 6 माह में 50 निर्धारित की गयी है। व्यवहार में, बैंक इस नियम का कठोरता से पालन नहीं करते हैं, चूंकि महत्वपूर्ण ग्राहकों (Valuable Customers) को इस सीमा से अधिक निकासी की सुविधायें प्रदान की जाती हैं। यदि ग्राहकों द्वारा निर्धारित सीमा से अधिक बार (Times) रुपया निकाला जाता है तब बैंक उस अवधि के लिये ब्याज नहीं देता है और बैंक को प्रभार (Charges) काटने का अधिकार भी प्रदान किया गया है। यह प्रभार 50 पैसे प्रति पन्ने की दर से न्यूनतम 1 रुपये तथा अधिकतम 5 रुपये हो सकता है।

चालू खाता
(Current Account)

चालू खाता व्यापारी वर्ग के लिये उपयुक्त होता है। इसके अन्तर्गत रुपये जमा करने एवं रुपयां निकालने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। इसके अन्तर्गत एक दिन में अनेक लेन-देन किये जा सकते है। चालू खाते मे बैंक द्वारा ब्याज नहीं दिया जाता है एवं बैंक को प्रासंगिक व्यय (Incidental Charges) काटने का अधिकार होता है। चालू खाते में अधिविकर्ष की सुविधायें, तृतीय पक्षकार के नाम मे जारी चैकों का ग्राहक के खाते में संग्रहण आदि सुविधायें प्रदान की जाती हैं। अवयस्क के नाम में चालू खाता नहीं खोला जा सकता है, चूंकि अवयस्क (Minor) अनुबन्ध करने के अयोग्य होता है जिससे ऋण की स्थिति मे अवयस्क से ऋण की वसूली के लिये कानूनी कार्यवाही नहीं की जा सकती है।

चालू खाते से चैक का भुगतान करते समय निम्नलिखित सावधानियां बरतनी चाहियें—

(i) चैक उचित रूप मे लिखा (Properly Drawn) होना चाहिये अर्थात् उस पर तिथि, रकम, प्रापक का नाम एवं ग्राहक के हस्ताक्षर होने चाहियें।

(ii) चैक मे कोई परिवर्तन (Alteration) नहीं होना चाहिये और यदि परिवर्तन किया गया है तब वह ग्राहक द्वारा अधिकृत होना चाहिये।

(iii) ग्राहक के खाते में पर्याप्त रकम (Sufficient Funds) होनी चाहिये।

(iv) चैक रेखांकित (Crossed) नहीं होना चाहिये (यदि भुगतान काउन्टर पर किया जाना है)।

(v) ग्राहक द्वारा किये गये हस्ताक्षर नमूने के हस्ताक्षर (Specimen Signature) से मिलान करते हुये होने चाहियें ।

सावधि जमा खाता
(Fixed Deposit Account)

सावधि जमा खाते के अन्तर्गत एक निश्चित अवधि के लिये वैंक में रुपया जमा किया जाता है। यह अवधि 15 दिन से लेकर 10 वर्ष तक की हो सकती है। 10 वर्ष की अवधि से अधिक के लिये सावधि जमा खाता खोला जा सकता है। परन्तु न्यायालय के आदेशानुसार अथवा अवयस्क के हित के लिये, यह अवधि 10 वर्ष से अधिक के लिये हो सकती है तथा सावधि निक्षेप खाता अवयस्क के वयस्क होने तक की अवधि के लिये खोला जा सकता है। इसके अन्तर्गत वैंक अधिक ब्याज देता है, चूंकि इसमें वैंकों को एक निश्चित अवधि तक नकद रुपये की आवश्यकता समाप्त हो जाती है। ब्याज दर का निर्धारण रिजर्व वैंक द्वारा वैंकिंग अधिनियम, 1949 की धारा 21 व 35A में की गयी शक्तियों के अन्तर्गत किया जाता है। रिजर्व वैंक देश की आर्थिक स्थिति के अनुरूप समय-समय पर ब्याज दरों में परिवर्तन करता रहता है।

29 मई, 1985 से रिजर्व वैंक द्वारा ब्याज दरों में निम्नलिखित परिवर्तन किया गया है—

(प्रतिशत)

निक्षेप (Deposit)	ब्याज दर (Interest Rate)		
	Deposits	NRE A/cs	FCNR A/cs[1]
1. 15 दिन से लेकर 45 दिन तक,	3·0	3·0	3·0
2. 46 दिन से 90 दिन तक,	4·0	4·0	4·0
3. 91 दिन अथवा इससे अधिक परन्तु 6 माह से कम,	6·5	6·5	6·5
4. 6 माह अथवा इससे अधिक परन्तु 1 वर्ष से कम,	8·0	8·0	8·0
5. 1 वर्ष अथवा इससे अधिक परन्तु 2 वर्ष से कम,	8·5	10·5	9·5
6. 2 वर्ष अथवा इससे अधिक परन्तु 3 वर्ष से कम,	9·0	11·0	10·5
7. 3 वर्ष अथवा इससे अधिक परन्तु 5 वर्ष से कम,	10·0	12·0	11·0
8. 5 वर्ष से अधिक,	11·0	13·0	12·0

1. विदेशी मुद्रा अनिवासी खाते में ब्याज की दरों में उपरोक्त परिवर्तन 22 अगस्त, 1985 से लागू किया गया है।

सहकारी बैंक निर्धारित दर से 0·5 प्रतिशत तथा सहकारी समितियाँ, निर्धारित दर से 1·0 प्रतिशत अधिक ब्याज देने के लिये अधिकृत की गयी हैं। सावधि जमा खाता खोलते समय, आवेदन पत्र के अन्तर्गत नाम, पता, निक्षेप की अवधि आदि का वर्णन होता है। आवेदन पत्र के साथ नमूने के हस्ताक्षर भी प्राप्त किये जाते हैं। इसके पश्चात्, ग्राहक को जमा रसीद (Deposit Receipt) जारी की जाती है। यह रसीद अहस्तांतरणीय (Non-transferrable) होती है परन्तु जमा रसीद का अभिहस्तांकन (Assignment) किया जा सकता है।

सावधि जमा खाते पर तिमाही अवधि के आधार पर मिश्रित ब्याज (Compound Interest) दिया जाता है। आवर्ती जमा खाते (Recurring Deposit), पुनर्विनियोजित निक्षेप योजना (Reinvestment Deposit Plan) के अन्तर्गत ब्याज का देय तिथि पर ही भुगतान किया जाता है। बैंक मासिक, त्रैमासिक एवं छमाही ब्याज का भुगतान करने की विभिन्न योजनाओं की व्यवस्था भी करता है। इसमें विशेष सावधि जमा (Special Fixed Deposit) एवं स्थायी जमा रसीद (Fixed Deposit Receipt) की योजनायें लागू की जाती हैं जिसमें बैंक प्रत्येक माह अथवा तिमाही अथवा छमाही ब्याज प्रदान करते हैं।

अतिदेय जमा पर ब्याज (Interest on Overdue Deposit)—बैंक को देय तिथि पर निश्चित जमा खाते की रकम ग्राहक को भुगतान करनी पड़ती है। यदि देय तिथि पर ग्राहक द्वारा भुगतान प्राप्त नहीं किया जाता है तब निश्चित जमाराशि माँग पर देय जमाराशि (Demand Deposit) के रूप में बदल जाती है और इसे अतिदेय जमा समझा जाता है। बैंक इस राशि पर ब्याज का भुगतान नहीं करता है। परन्तु यदि ग्राहक द्वारा अतिदेय राशि का नवीकरण (Renewal) करवाया जाता है तब बैंक देय तिथि (Maturity Date) से प्रस्तावित अवधि के लिये ब्याज की स्वीकृति प्रदान कर सकता है। यह अधिकार बैंक को सुरक्षित किया गया है कि बैंक अतिदेय राशि पर ब्याज का भुगतान करे अथवा नहीं। अतिदेय राशि पर बैंक उसी स्थिति में ब्याज का भुगतान करता है जबकि, नवीकरण देय तिथि से करवाया जाता है तथा प्रस्तावित अवधि, अतिदेय अवधि (Overdue Period) के द्विगुने के बराबर अथवा इससे अधिक होती है। अर्थात् यदि अतिदेय अवधि 1 वर्ष है तब सावधि जमा रसीद देय तिथि से 2 वर्ष के लिये जारी करनी चाहिए। नवीकरण पर बैंक उस दर से ब्याज की गणना करता है जो दर देय तिथि अथवा नवीकरण की तिथि पर (जो दोनों में कम हो) है। अतिदेय राशि पर ब्याज का भुगतान करना बैंक का दायित्व नहीं है। इस निर्णय की पुष्टि हिन्दुस्तान कामर्शियल बैंक बनाम जगतार सिंह नामक विवाद[1] में की गयी। प्रस्तुत वाद में न्यायालय द्वारा बैंक का सावधि जमाराशि का रुपया न्यायालय में जमा करने का आदेश दिया गया। परन्तु

1. Hindustan Commercial Bank Ltd. Vs. Jagtar Singh. (A. I. R. 1974 Punjab & Haryana 208)

बैंक ने निक्षेप राशि बैंक में जमा नहीं की। न्यायालय द्वारा अतिदेय राशि पर व्याज के भुगतान का निर्देश दिया गया चूंकि बैंक ने न्यायालय में जमाराशि जमा नहीं करायी है।

अतिदेय अवधि के लिये बैंक केवल नवीकरण की स्थिति में व्याज देय तिथि से प्रदान करता है। इसमें व्याज का नकद भुगतान नहीं किया जाता है वरन् निक्षेप की अवधि पूर्व देय तिथि से ज्ञात की जाती है। उदाहरणार्थ—सावधि जमा निक्षेप 30 जून, 1985 को भुगतान के लिये देय होती है परन्तु ग्राहक 30 अगस्त, 1985 को नवीकरण के लिये प्रस्तुत करता है और नवीकरण 1 वर्ष के लिये करवाया जाता है तब नवीन जमा निक्षेप की तिथि 30 जून, 1986 समझी जायेगी। अतः अतिदेय अवधि का व्याज नकद भुगतान नहीं किया जाता है। पूर्व समय में, व्याज का नकद भुगतान किया जा सकता था परन्तु वर्तमान समय में यह भुगतान प्रतिबन्धित कर दिया गया है।

अतः ग्राहक द्वारा सावधि जमा रसीद का भुगतान प्राप्त करने पर बैंक अतिदेय अवधि के लिये व्याज का भुगतान नहीं करता है। परन्तु, खाताधारी की मृत्यु की स्थिति में बैंक अतिदेय अवधि का व्याज भुगतान करता है बशर्ते खाताधारी की मृत्यु निक्षेप चालू रहने की अवधि में होती है अर्थात् देय तिथि से पूर्व होती है, अतिदेय अवधि में नहीं।

परिपक्वता अथवा देय तिथि से पूर्व भुगतान (Payment before Maturity)—यदि ग्राहक सावधि जमाराशि का देय तिथि से पूर्व भुगतान प्राप्त करना चाहता है तब ग्राहकों को यह सुविधा उपलब्ध है। इस स्थिति में, जिस अवधि के लिये बैंक के पास रुपया जमा रहता है उस अवधि के लिये लागू दर से 1 प्रतिशत कम पर चक्रवृद्धि (Cummulative) व्याज दिया जाता है। मृत्यु की दशा में, व्याज दर से 1 प्रतिशत व्याज कम नहीं किया जाता है।

संयुक्त खाता (Joint Account) सावधि जमा संयुक्त नाम में जारी हो की स्थिति में, देय तिथि से पूर्व एक खाताधारी द्वारा जमा रसीद का भुगतान प्राप्त नहीं किया जा सकता है और न ही वह इसके विरुद्ध ऋण प्राप्त कर सकता है। इस स्थिति में समस्त खाताधारियों की सहमति आवश्यक होती है। परन्तु बैंक द्वारा जमा खाता खोलते समय इस आशय का अधिकार पत्र प्राप्त करने की स्थिति में कि जीवित बचा हुआ खाताधारी पूर्व भुगतान प्राप्त कर सकता है, बैंक जीवित बचे हुये खाताधारी को पूर्व भुगतान कर सकता है। बैंक को यह अधिकार उस समय तक प्राप्त होता है जब तक कि न्यायालय द्वारा इस सम्बन्ध में कोई विपरीत आदेश जारी नहीं किया जाता है। अतः बैंक संयुक्त नाम में जारी रसीद का पूर्व तिथि पर भुगतान, जमा रसीद के विरुद्ध ऋण अथवा जमा रसीद खोने पर अनुलिपि समस्त खाताधारियों की सहमति से जारी करता है।

संयुक्त खाते में यदि रुपये का भुगतान देय तिथि पर किसी भी व्यक्ति

('E' or 'S') को किया जा सकता है तब बैंक बचे हुये खाताधारी को भुगतान करके अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाता है।[1] परन्तु यदि मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा न्यायालय मे वाद प्रस्तुत किया जाता है तब बैंक को देय तिथि के पश्चात् भी सावधि जमा खाते का भुगतान नहीं करना चाहिए और बैंक को न्यायालय के आदेशानुसार भुगतान करना चाहिए। संयुक्त नाम में जारी जमा रसीद का भुगतान किसी भी व्यक्ति को अथवा जीवित बचे हुये व्यक्ति को देय होने की स्थिति मे, मृतक के उत्तराधिकारियो का मृतक के अंशदान पर अधिकार होता है तथा मात्र खाते का भुगतान जीवित व्यक्ति के हित में होने का निर्देश, मृतक द्वारा उस व्यक्ति के हित में भेंट (Gift) नही समझा जा सकता है। इस निर्णय की पुष्टि पदमानाभन भवानी, बनाम गोविन्दन भारगवी नामक विवाद[2] में की गयी है। इस विवाद में मृतक द्वारा अपने जमा खाते मे अपनी पत्नि का नाम सम्मिलित किया गया तथा सयुक्त खाते का भुगतान किसी भी व्यक्ति अथवा जीवित बचे हुये व्यक्ति को किया जा सकता था। मृतक की मृत्यु पर उसकी विधवा द्वारा भवन बनवाने के उद्देश्य से रुपया निकाल लिया गया। मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों ने भवन के विभाजन के लिये वाद प्रस्तुत किया, चूंकि भवन मृतक के रुपयों से बनवाया गया था। केरल हाई कोर्ट ने निर्णय दिया कि मात्र विधवा का नाम खाते में सम्मिलित करने पर खाते की राशि विधवा के हित में भेंट नहीं समझी जा सकती है तथा मृतक के उत्तराधिकारियों का भवन में अधिकार है।

ऋण सुविधा (Loan Facilities)—सावधि जमा रसीद के आधार पर ऋण प्राप्त किया जा सकता है। ऋण पर ब्याज दर सावधि जमा राशि पर ब्याज की दर से 2 प्रतिशत अधिक होती है। इसके अतिरिक्त, बैंक ब्याज पर आयकर के लिये, निश्चित प्रतिशत ब्याज दर मे जोड देता है ब्याज कर की व्यवस्था का प्रावधान 1 अप्रैल, 1985 से समाप्त कर दिया गया है। सावधि जमा रसीद की जमानत के आधार पर तृतीय पक्षकार (Third Party) को ऋण प्रदान किया जा सकता है। इसके लिये ऋण पर ब्याज दर की गणना करते समय सावधि जमा पर ब्याज की दर को ध्यान मे नही रखा जाता है। इस स्थिति में बैंक ऋण प्राप्ति के उद्देश्य के आधार पर ब्याज दर का निर्धारण करता है।

उदाहरणार्थ—फुटकर व्यापारी (Retail Traders) को दिये गये ऋण पर ब्याज दर 15 प्रतिशत लगायी जायेगी। इस स्थिति में जमा रसीद की देय ब्याज दर को ध्यान में नही रखा जायेगा। परन्तु यह सीमा मात्र 25,000 रुपये ऋण तक के लिये लागू होती है। इस सीमा के बाद लिये गये ऋण पर अधिकतम ब्याज दर

---

1. Krushandas Nagindas Bhase Vs. Bhagwan Das Ranchhod Das and Others (A. I. R. 1976 Bombay 153)
2. Padmanabhan Bhavani Vs. Govindan Bhargavi (A.I.R. 1975 Kerala 83)

बैंक ने निक्षेप राशि बैंक में जमा नहीं की। न्यायालय द्वारा अतिदेय राशि पर ब्याज के भुगतान का निर्देश दिया गया चूंकि बैंक ने न्यायालय में जमाराशि जमा नहीं करायी है।

अतिदेय अवधि के लिये बैंक केवल नवीकरण की स्थिति में ब्याज देय तिथि से प्रदान करता है। इसमें ब्याज का नकद भुगतान नहीं किया जाता है वरन् निक्षेप की अवधि पूर्व देय तिथि से ज्ञात की जाती है। उदाहरणार्थ—सावधि जमा निक्षेप 30 जून, 1985 को भुगतान के लिये देय होती है परन्तु ग्राहक 30 अगस्त, 1985 को नवीकरण के लिये प्रस्तुत करता है और नवीकरण 1 वर्ष के लिये करवाया जाता है तब नवीन जमा निक्षेप की तिथि 30 जून, 1986 समझी जायेगी। अतः अतिदेय अवधि का ब्याज नकद भुगतान नहीं किया जाता है। पूर्व समय में, ब्याज का नकद भुगतान किया जा सकता था परन्तु वर्तमान समय में यह भुगतान प्रतिबन्धित कर दिया गया है।

अतः ग्राहक द्वारा सावधि जमा रसीद का भुगतान प्राप्त करने पर बैंक अतिदेय अवधि के लिये ब्याज का भुगतान नहीं करता है। परन्तु, खाताधारी की मृत्यु की स्थिति में बैंक अतिदेय अवधि का ब्याज भुगतान करता है बशर्ते खाताधारी की मृत्यु निक्षेप चालू रहने की अवधि में होती है अर्थात् देय तिथि से पूर्व होती है, अतिदेय अवधि में नहीं।

परिपक्वता अथवा देय तिथि से पूर्व भुगतान (Payment before Maturity)—यदि ग्राहक सावधि जमाराशि का देय तिथि से पूर्व भुगतान प्राप्त करना चाहता है तब ग्राहकों को यह सुविधा उपलब्ध है। इस स्थिति में, जिस अवधि के लिये बैंक के पास रुपया जमा रहता है उस अवधि के लिये लागू दर से 1 प्रतिशत कम पर चक्रवृद्धि (Cummulative) ब्याज दिया जाता है। मृत्यु की दशा में, ब्याज दर से 1 प्रतिशत ब्याज कम नहीं किया जाता है।

संयुक्त खाता (Joint Account) सावधि जमा संयुक्त नाम में जारी हो की स्थिति में, देय तिथि से पूर्व एक खाताधारी द्वारा जमा रसीद का भुगतान प्राप्त नहीं किया जा सकता है और न ही वह इसके विरुद्ध ऋण प्राप्त कर सकता है। इस स्थिति में समस्त खाताधारियों की सहमति आवश्यक होती है। परन्तु बैंक द्वारा जमा खाता खोलते समय इस आशय का अधिकार पत्र प्राप्त करने की स्थिति में कि जीवित बचा हुआ खाताधारी पूर्व भुगतान प्राप्त कर सकता है, बैंक जीवित बचे हुये खाताधारी को पूर्व भुगतान कर सकता है। बैंक को यह अधिकार उस समय तक प्राप्त होता है जब तक कि न्यायालय द्वारा इस सम्बन्ध में कोई विपरीत आदेश जारी नहीं किया जाता है। अतः बैंक संयुक्त नाम में जारी रसीद का पूर्व तिथि पर भुगतान, जमा रसीद के विरुद्ध ऋण अथवा जमा रसीद खोने पर अनुलिपि समस्त खाताधारियों की सहमति से जारी करता है।

संयुक्त खाते में यदि रुपये का भुगतान देय तिथि पर किसी भी व्यक्ति

('E' or 'S') को किया जा सकता है तब बैंक बचे हुये खाताधारी को भुगतान करके अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाता है।[1] परन्तु यदि मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया जाता है तब बैंक को देय तिथि के पश्चात् भी सावधि जमा खाते का भुगतान नही करना चाहिए और बैंक को न्यायालय के आदेशानुसार भुगतान करना चाहिए। संयुक्त नाम में जारी जमा रसीद का भुगतान किसी भी व्यक्ति को अथवा जीवित बचे हुये व्यक्ति को देय होने की स्थिति मे, मृतक के उत्तराधिकारियों का मृतक के अंशदान पर अधिकार होता है तथा मात्र खाते का भुगतान जीवित व्यक्ति के हित मे होने का निर्देश, मृतक द्वारा उस व्यक्ति के हित में भेंट (Gift) नही समझा जा सकता है। इस निर्णय की पुष्टि पद्मानाभन भवानी, बनाम गोविन्दन मारगवी नामक विवाद[2] में की गयी है। इस विवाद मे मृतक द्वारा अपने जमा खाते मे अपनी पत्नि का नाम सम्मिलित किया गया तथा सयुक्त खाते का भुगतान किसी भी व्यक्ति अथवा जीवित बचे हुये व्यक्ति को किया जा सकता था। मृतक की मृत्यु पर उसकी विधवा द्वारा भवन बनवाने के उद्देश्य से रुपया निकाल लिया गया। मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों ने भवन के विभाजन के लिये वाद प्रस्तुत किया, चूंकि भवन मृतक के रुपयों से बनवाया गया था। केरल हाई कोर्ट ने निर्णय दिया कि मात्र विधवा का नाम खाते में सम्मिलित करने पर खाते की राशि विधवा के हित में भेंट नहीं समझी जा सकती है तथा मृतक के उत्तराधिकारियो का भवन में अधिकार है।

ऋण सुविधा (Loan Facilities)—सावधि जमा रसीद के आधार पर ऋण प्राप्त किया जा सकता है। ऋण पर ब्याज दर सावधि जमा राशि पर ब्याज की दर से **2** प्रतिशत अधिक होती है। इसके अतिरिक्त, बैंक ब्याज पर आयकर के लिये, निश्चित प्रतिशत ब्याज दर में जोड़ देता है ब्याज कर की व्यवस्था का प्रावधान **1** अप्रैल, **1985** से समाप्त कर दिया गया है। सावधि जमा रसीद की जमानत के आधार पर तृतीय पक्षकार (Third Party) को ऋण प्रदान किया जा सकता है इसके लिये ऋण पर ब्याज दर की गणना करते समय सावधि जमा पर [illegible] दर को ध्यान में नहीं रखा जाता है। इस स्थिति में बैंक ऋण प्राप्ति [illegible] आधार पर ब्याज दर का निर्धारण करता है।

उदाहरणार्थ—फुटकर व्यापारी (Retail Traders) को [illegible] ब्याज दर **15** प्रतिशत लगायी जायेगी। इस स्थिति मे [illegible] दर को ध्यान मे नही रखा जायेगा। परन्तु यह सीमा [illegible] के लिये लागू होती है। इस सीमा के बाद लिये गये [illegible]

1. Krushandas Nagindas Bhase Vs. [illegible] Others (A. I. R. 1976 Bombay 153)
2. Padmanabhan Bhavani Vs. [illegible] 83)

(17·5 प्रतिशत) से ब्याज की गणना की जाती है। यह व्यवस्था 1.4 1985 से लागू की गयी है। अतः तृतीय पक्षकार को दिये गये ऋण की स्थिति में ब्याज दर का निर्धारण व्यापार की क्रियाओं (Line of Activities) को ध्यान में रखते हुये किया जाता है। विभिन्न व्यापारिक क्रियाओं के लिये ब्याज दर निम्नलिखित है—

	प्रतिशत
(1) यातायात संचालक (Transport Operator)	
(i) 2 वाहनों तक	12 50
(ii) 2 से अधिक 6 वाहनों तक	15·00
(2) फुटकर व्यापारी (Retail Traders)	
(i) 5,000 रुपये के ऋण तक	12·50
(ii) 5,000 रुपये से 25,000 रुपये तक	15·00
(iii) 25,000 रुपये से अधिक	17·50
(3) लघु व्यापार गृह (Small Business Men) (जिनके उपकरणों की लागत 2 लाख तक सीमित है)	
(i) सावधि ऋण (Term Loan)	15·00
(ii) कार्यशील पूंजी के लिये ऋण (Working Capital Advance)	16·50

तृतीय पक्षकार से आशय उस स्थिति से समझा जाता है जिसमें ऋणी (Borrower) और निक्षेपकर्त्ता (Depositor) पृथक्-पृथक् व्यक्ति हैं अर्थात् जिसमें ऋण जमा रसीद के स्वामी (Owner) के अतिरिक्त, किसी अन्य व्यक्ति को प्रदान किया जाता है। उदाहरणार्थ—जमा रसीद A के नाम में जारी की गयी है तथा ऋण B को प्रदान किया जाता है। इस स्थिति में B तृतीय पक्षकार समझा जायेगा। परन्तु एकाकी व्यापार (Proprietorship) अथवा साझेदारी फर्म की स्थिति में, यदि जमा रसीद साझेदारी अथवा एकल व्यापारी के नाम में जारी की गयी है और ऋण फर्म के नाम से लिया जाता है तब इसे तृतीय पक्षकार का ऋण नहीं समझा जायेगा चूंकि इस स्थिति में दोनों का (फ़र्म एवं साझेदार अथवा एकल व्यापारी) समान अस्तित्व होता है। अतः इसमें जमा रसीद पर देय ब्याज दर को ध्यान में रखते हुये ऋण प्रदान किया जाना चाहिए। इसी प्रकार अवयस्क (Minor) के नाम जारी जमा रसीद पर अभिभावक (Guardian) को प्रदान किया गया ऋण तृतीय पक्षकार वाला ऋण नहीं समझा जायेगा चूंकि इसमें ऋण अवयस्क की आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये प्राप्त किया जाता है।

सावधि जमा रसीद खोना (Lost of Fixed Deposit Receipt)—इस स्थिति में, क्षतिपूरक बांड (Indemnity Bond) के आधार पर बैंक द्वारा अनुलिपि (Duplicate) जारी की जा सकती है।

देय तिथि पर भुगतान (Payment on Due Date)—बैंक को सावधि जमा खाते में 10,000 रुपये से अधिक होने की स्थिति में, जमा रसीद का नकद भुगतान

नहीं करना चाहिए। इसका भुगतान खाते के माध्यम से अथवा रेखांकित बैंक अथवा ड्राफ्ट के माध्यम से करना चाहिए। यह सीमा एक खाताधारी के एक बैंक में समस्त जमा खातों पर लागू होती है। उदाहरणार्थ—एक व्यक्ति के हित में 5,000 रुपये, 3,000 रुपये एवं 2,500 रुपये की जमा रसीद जारी की गयी हैं तथा व्यक्ति 2,500 रुपये की जमा रसीद का भुगतान प्राप्त करना चाहता है तब बैंक को इस राशि का नकद भुगतान नहीं करना चाहिए। यदि बैंक द्वारा नकद भुगतान कर दिया जाता है तब बैंक आयकर अधिकारी के विरुद्ध भुगतान की राशि एवं सजा के लिये उत्तरदायी होता है। अतः सावधि जमा रसीद का नकद भुगतान करते समय, बैंक खाताधारी से इस आशय का घोषणा पत्र प्राप्त करता है कि इस बैंक में खाताधारी के 10,000 रुपये से अधिक के सावधि निक्षेप नहीं हैं।

आवर्ती जमा खाता
(Recurring Deposit Account)

इस खाते के अन्तर्गत, ग्राहक को प्रत्येक माह, एक सावधि जमाराशि जो 5 रुपये के गुणाक में हो, खाते में जमा करनी पड़ती है और एक अवधि के पश्चात् इस खाते का भुगतान ग्राहक को कर दिया जाता है। इसमें ब्याज का रुपया देय तिथि पर भुगतान किया जाता है। आवर्ती जमा खाते में निर्धारित किश्त का भुगतान प्रत्येक माह की अन्तिम तिथि तक किया जा सकता है। यदि किसी माह की किश्त का भुगतान नहीं किया जाता है तब उस माह की किश्त पर खाताधारी को दण्डात्मक ब्याज (Penal Interest) का भुगतान करना पड़ता है। आवर्ती जमा खाते की परिपक्वता की तिथि अन्तिम किश्त के भुगतान के एक माह पश्चात् अथवा पूर्व निर्धारित देय तिथि (Due Date) (जो दोनों में अधिक हो) पर होती है।

परिपक्वता की तिथि अथवा देय तिथि से पूर्व भुगतान (Payment Before Maturity)—आवर्ती जमा खाते में देय तिथि से पूर्व भुगतान की सुविधा उपलब्ध होती है। इस स्थिति में खाता जिस अवधि के लिये चालू रहता है उसी अवधि के आधार पर देय ब्याज दर से 1 प्रतिशत कम ब्याज दर पर साधारण ब्याज का भुगतान किया जाता है। परन्तु, यदि आवर्ती जमा खाता 3 माह से कम की अवधि के लिये चालू रहता है तब उस पर ब्याज का भुगतान नहीं किया जाता है।

आवर्ती जमा खाते पर बैंक ऋण सुविधा (Loan Facilities) प्रदान करते हैं। इस स्थिति में, बैंक खाते में जमा धन पर आवश्यक मार्जिन राशि (Margin Amount) घटा कर ऋण प्रदान कर सकते हैं। मार्जिन राशि 25 प्रतिशत रखना अनिवार्य होता है। ऋण पर ब्याज की दर आवर्ती जमा खाते पर ब्याज की दर से 2 प्रतिशत अधिक होती है। आवर्ती जमा खाता संयुक्त अथवा पृथक रूप में खोला जा सकता है।

आवर्ती जमा खाते का परिपक्वता की तिथि पर भुगतान (Payment of ...curring Deposit Account on Due Date)—परिपक्वता की तिथि पर ...वर्ती जमा खाते का भुगतान ब्याज सहित खाताधारी को कर दिया जाता है। कुछ ...रस्थितियों में खाताधारी द्वारा खाते में नियमित किश्तों का भुगतान नहीं किया ...ाता है तथा आवर्ती जमा खाता निर्धारित अवधि तक चलता रहता है तब भुगतान ...रने की निम्नलिखित विधियां अपनायी जाती हैं—

(i) खाते पर दण्डात्मक ब्याज सहित किश्तों की रकम जमा करवायी जाये तथा उसके 1 माह पश्चात् आवर्ती जमा खाते की देय रकम (Maturity Value) का भुगतान कर दिया जाये।

(ii) खाते को नियमित (Regularise) करवाये बिना खाते में जमा धन पर मासिक गुणनफल (Monthly Product) के आधार पर अनुबन्धित ब्याज दर (Contracted Rate) से साधारण ब्याज का भुगतान किया जा सकता है।

अतः बैंक अपने ग्राहकों को विभिन्न प्रकार के खातों में उनकी आवश्यकता-नुसार रुपया जमा करने की सुविधायें प्रदान करते हैं। उपरोक्त खातों के अतिरिक्त, बैंक नकद प्रमाण पत्र (Cash Certificates), गुणक जमा योजना (Multiple Deposit Scheme), स्थायी आय योजना (Permanent Income Plan), विशेष जमा योजना (Special Fixed Deposit) आदि अनेक खातों में रुपया जमा करने की सुविधायें प्रदान करते हैं जिसमें ग्राहकों को ब्याज का भुगतान देय तिथि पर अथवा प्रत्येक माह, तिमाही अथवा छमाही किया जाता है।

बैंक में बचत खाता अथवा चालू खाता खोलते समय ग्राहक को आवश्यक प्रपत्र भरने पड़ते हैं। ग्राहक निश्चित आवेदन प्रपत्र पर बैंक से खाता खोलने के लिये आवेदन करता है जिसमें ग्राहक का नाम, पता एवं व्यवसाय लिखा जाता है ... अवयस्क खाताधारी की स्थिति में उसकी आयु भी लिखते हैं। इस प्रपत्र में परिच... अथवा सन्दर्भ देने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर भी होते हैं। इसके पश्चात् ग्राहक... नमूने के हस्ताक्षर अथवा बायें हाथ के अंगूठे का निशान (अशिक्षित ग्राहक की सि... में) प्राप्त किया जाता है और ग्राहक जमा पर्ची (Pay in Slip) के द्वारा ... खाते में रुपया जमा करवाता है। इस प्रकार, खाता खोलने वाला व्यक्ति बैं... ग्राहक बन जाता है।

खाता खोलने से पूर्व प्रयोग में लायी जाने वाली सावधानियाँ (Precautions to be taken before Opening an Account)

कोई भी व्यक्ति जो अनुबन्ध करने के योग्य है वह बैंक में खाता ख... अधिकारी है। अनुबन्ध योग्य व्यक्ति, उस व्यक्ति को समझा जाता है ... मस्तिष्क का है, वयस्क है तथा किसी भी विधि के अन्तर्गत अनुबन्ध करने... अयोग्य घोषित नहीं किया गया है। खाता खोलने से पूर्व बैंक निश्चित...

करता है, चूंकि बैंक मे खाता खुलने के पश्चात् खाताधारी बैंक का ग्राहक बन जाता है और ग्राहक तथा बैंक मे विशेष सम्बन्ध होते हैं।

बैंक खाता खोलने से पूर्व निम्नलिखित सावधानियों को ध्यान में रखता है—

(1) आवेदन (Application)—खाता खोलने से पूर्व ग्राहक को बैंक से आवेदन करना चाहिये। आवेदन एक निश्चित प्रपत्र (Form) पर किया जाता है। आवेदन पत्र में खाता खोलने वाले व्यक्ति का नाम, पता, सन्दर्भ देने वाले व्यक्ति का नाम तथा हस्ताक्षर होते हैं। आवेदन पत्र पर बैंक के नियम छपे होते हैं जिन्हें व्यक्ति द्वारा पालन करना आवश्यक है।

(2) सन्दर्भ (Reference)—खाता खोलते समय खाता खोलने वाले व्यक्ति को अपना परिचय (Introduction) करवाने के उद्देश्य से किसी ऐसे व्यक्ति का नाम सन्दर्भ देना पड़ता है जिस व्यक्ति को बैंक जानता है अर्थात् जिस व्यक्ति का बैंक में खाता है। रजिस्टर्ड फर्म, कम्पनी आदि की स्थिति में, सन्दर्भ की आवश्यकता नहीं होती है चूंकि इनका पंजीयन रजिस्ट्रार के यहां होता है। इसी प्रकार, परिचय-पत्र (Identity Card) के आधार पर खाता खोला जा सकता है और इसमें सन्दर्भ की आवश्यकता नहीं पड़ती है। सन्दर्भ किसी सम्मानित व्यक्ति द्वारा दिया जाना चाहिये तथा सन्दर्भ प्राप्त करने का उद्देश्य खाता खोलने वाले व्यक्ति की पहचान प्राप्त करना है। बैंक को सन्दर्भ देने वाले व्यक्ति का साक्षात्कार करना चाहिये कि वह खाता खोलने वाले व्यक्ति को किस प्रकार एवं कितनी अवधि से जानता है। सन्दर्भ देने वाले व्यक्ति का यह दायित्व है कि वह व्यक्ति उसे अच्छी प्रकार जानता है और खाता खोलने वाले व्यक्ति के चरित्र पर उसे कोई सन्देह नहीं है। इसके अतिरिक्त, आवश्यकता के समय वह व्यक्ति खाता खोलने वाले व्यक्ति को बैंक में प्रस्तुत कर सकता है। अतः सन्दर्भ देने वाले व्यक्ति का यह कर्त्तव्य है कि वह खाता खोलने वाले व्यक्ति का नाम, पता एवं व्यवसाय अच्छी प्रकार जानता हो।

बैंक व्यवहार में समस्त प्रकार के खाते खोलने में परिचय प्राप्त करता है। परन्तु बैंक निम्न प्रकार के खाते परिचय के अभाव मे भी खोल सकता है—

(i) बचत खाता, जिसमें केवल नकद लेन-देन ही किये जा सकते हैं। इस प्रकार के खातों पर बैंक बुक जारी नहीं की जानी चाहिये। इस खाते के सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि खाताधारी को अधिविकर्ष अथवा ओवरड्राफ्ट की सुविधायें (Overdraft Facilities) प्रदान नहीं की जानी चाहियें। परन्तु वर्तमान समय में बैंकों में दिन प्रतिदिन कपट एवं चोरी बढ़ रही है। इस प्रवृत्ति को देखते हुये प्रत्येक खाते में सन्दर्भ प्राप्त करना अनिवार्य हो गया है।

(ii) सावधि जमा खाता (Fixed Deposits Account), परन्तु आधुनिक पद्धति के अन्तर्गत बैंक सावधि जमा खाता खोलते समय भी परिचय प्राप्त करते हैं। यह पद्धति बेनामी व्यवहारों को रोकने के उद्देश्य से अपनायी गई है।

यदि खाता खोलते समय उचित सन्दर्भ प्राप्त नहीं किया गया है तब बैंक को निम्नलिखित जोखिम वहन करने पड़ते हैं—

(i) अधिविकर्ष अथवा ओवरड्राफ्ट की स्थिति में, बैंक को हानि वहन करनी पड़ सकती है।

(ii) व्यक्ति द्वारा जाली चैक काटकर जनता को धोखा देने का सन्देह रहता है।

(iii) बैंक को पराक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत, संरक्षण प्राप्त नहीं होता है, चूंकि यह संरक्षण बैंक को अपने ग्राहकों के चैकों आदि का संग्रहण करने की स्थिति में प्राप्त होता है। यदि बैंक ने उचित सन्दर्भ (Proper Introduction) के अभाव में खाता खोला है तब बैंक को धारा 131 के अन्तर्गत प्राप्त संरक्षण प्रदान नहीं किया जायेगा।

(3) नमूने के हस्ताक्षर (Specimen Signature)—खाता खोलने से पूर्व बैंक व्यक्ति के नमूने के हस्ताक्षर प्राप्त करता है। इसी के आधार पर भविष्य में खाते से रुपये निकालने का कार्य किया जाता है। यदि बैंक के पास उपलब्ध नमूने के हस्ताक्षर से ग्राहक द्वारा काटे गये चैक के हस्ताक्षर नहीं मिलते हैं, तब बैंक को चैक का भुगतान नहीं करना चाहिये। नमूने के हस्ताक्षर बैंक के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रलेख हैं। अतः इन्हें बैंक अधिकारी द्वारा अपने संरक्षण में सुरक्षित स्थान पर रखा जाना चाहिये। नमूने के हस्ताक्षर बैंक अधिकारी की उपस्थिति में प्राप्त किये जाने चाहिये। अशिक्षित व्यक्ति की स्थिति में बैंक ग्राहक का फोटो एवं बायें हाथ के अंगूठे का निशान नमूने के हस्ताक्षर के रूप में प्राप्त करता है।

(4) खाता खोलना (Opening an Account)—उपरोक्त कार्यवाही सम्पन्न करने के पश्चात् बैंक व्यक्ति का खाता अपनी पुस्तकों में खोलता है एवं खाते की संख्या प्रदान करता है। इसके पश्चात् खाता खोलने वाला व्यक्ति बैंक का ग्राहक बन जाता है और उसे चैक बुक (Cheque Book) तथा पास बुक (Pass Book) जारी की जाती हैं। खाते में प्रथम लेन-देन नकद (Cash) किया जाना चाहिये। परन्तु, विदेशी (परदेशी) खाते (NRE A/c) में ड्राफ्ट द्वारा खाता खोला जा सकता है। बैंक को खाते में प्रथम लेन-देन नकदी में करना चाहिये चूंकि चैक अथवा ड्राफ्ट की वसूली केवल ग्रहकों के लिये की जाती है तथा खाताधारी उस समय ग्राहक समझा जाता है जबकि उसका खाता बैंक में खुल जाता है। अतः बैंक को ग्राहक का खाता नकदी में खोलना चाहिये। रुपये जमा करने के लिये ग्राहक को जमा पर्ची (Pay-in-slip) प्रदान की जाती है।

खाता बन्द करने की विधियाँ
(Methods of Closing the Bank's Account)

ग्राहक एवं बैंकर के सम्बन्ध अनुबन्ध पर आधारित होते हैं। दोनों पक्षकारों को यह अधिकार प्राप्त है कि वे दूसरे पक्ष को सूचना देकर अपने सम्बन्ध विच्छेद

कर सकते हैं। कुछ परिस्थितियों मे विधि के क्रियान्वयन के कारण दोनों पक्षो के बीच आपसी सम्बन्ध स्थगित हो जाते हैं। उदाहरणार्थ—न्यायालय का ऋण लगनक आदेश अथवा कुर्की आदेश प्राप्त होने पर ग्राहक के खाते से भावी लेन-देन निर्धारित राशि के लिये रोक दिये जाते हैं। बैंक में खाता बन्द करने की विभिन्न पद्धतियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं। ये पद्धतियाँ निम्नलिखित हैं—

(1) ग्राहक द्वारा सूचना देने पर (Notice Received from Customer)—यदि ग्राहक बैंक को अपना खाता बन्द करने का निर्देश देता है तब बैंक खाता बन्द करने के लिये बाध्य है। ग्राहक के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह खाता बन्द करने के कारणों को स्पष्ट करे।

(2) खाते में परिचालन न होना (No Operations in the Account)—यदि ग्राहक द्वारा खाते में लम्बी अवधि से लेन-देन नहीं किया जा रहा है तब बैंक ग्राहक को रुपया निकालने के लिये सूचित करता है और ग्राहक का खाता बन्द कर देता है अन्यथा उपरोक्त खाते का रुपया रिजर्व बैंक को 10 वर्ष बाद अन्तरित कर दिया जाता है।

(3) बैंक द्वारा खाता बन्द करना (Closing of Account by the Bank)—बैंक को यह अधिकार प्राप्त है कि वह अपने ग्राहकों का चुनाव स्वेच्छा से करे। बैंक प्रत्येक व्यक्ति का खाता खोलने के लिये बाध्य नहीं है। यदि किसी ग्राहक का खाता असन्तोषजनक है और बैंक के हित में नहीं है तब, इस स्थिति में, बैंक ग्राहक को उचित अवसर प्रदान करके निश्चित समय के पश्चात् खाता बन्द कर सकता है।

चालू खाते की स्थिति में, यदि बैंक ग्राहक का खाता बन्द करना चाहता है तब बैंक को उचित समयावधि का नोटिस भेजना चाहिये। इस निर्णय की पुष्टि चैम्पियन ओटोमोबाइल्स लि० बनाम ट्रावनकोर नेशनल बैंक लि० नामक विवाद[1] में की गई है। इस विवाद में वादी का बैंक में खाता था जिसमें सन्तोषजनक व्यवहार नहीं हो रहे थे। वादी के खाते में 15 रुपये शेष थे। बैंक ने ग्राहक को सूचना दिये बिना चालू खाता बन्द कर दिया। इस तिथि से पूर्व वादी द्वारा 12 रुपये का चैक काटा गया जो बैंक ने वापिस कर दिया। वादी द्वारा क्षतिपूर्ति के लिये वाद प्रस्तुत किया गया। मद्रास हाई कोर्ट द्वारा निर्णय दिया गया कि बैंक चैक की वापसी का कारण बताते समय पूर्ण सावधानी ध्यान में रखता है तथा बैंक के चालू खाते के नियम सार्वजनिक नीति के विरुद्ध नहीं थे। अतः हाई कोर्ट द्वारा वादी का वाद रद्द कर दिया गया। परन्तु यह बैंक के हित में है कि वह चालू खाता बन्द करते समय ग्राहक को पूर्व सूचना भेजे तथा ग्राहक के निर्देशानुसार खाता बन्द करे।

---

1. Champion Automobiles Ltd. Vs. Travancore National Bank Ltd. *(A.I.R. 1938 Madras 77)*

(4) ग्राहक की मृत्यु पर (On Death of Customer)—ग्राहक की मृत्यु की सूचना प्राप्त होते ही बैंक ग्राहक का खाता बन्द कर देते हैं और खाते का रुपया मृतक के उत्तराधिकारियों (Legal Representatives) को भुगतान किया जाता है।

(5) ग्राहक के पागल होने पर (On Insanity of Customer)—यदि ग्राहक के पागल होने की सूचना बैंक को प्राप्त हो जाती है तब बैंक को ग्राहक के खाते से लेन-देन रोक देना चाहिये।

(6) ग्राहक के दिवालिया होने पर (On Insolvency of Customer)—बैंक को ग्राहक के दिवालिया होने की सूचना प्राप्त होने पर खाते का परिचालन बन्द कर देना चाहिये। इससे ग्राहक के दायित्वों का निर्धारण किया जा सकता है।

(7) धन का अभिहस्तांकन (Assignment of the Money)—ग्राहक द्वारा अपने धन का तृतीय पक्षकार को अभिहस्तांकन करने की स्थिति में, बैंक ग्राहक का निर्देश मानने के लिये बाध्य है। अतः बैंक ग्राहक का खाता बन्द करके, तृतीय पक्षकार को खाते के रुपये का भुगतान करता है।

(8) विधि लागू होने पर (Effect of Law)—यदि किसी विधि के लागू होने पर ग्राहक के खाते पर प्रभाव पड़ता है तब बैंक ग्राहक का खाता उस निश्चित अवधि के लिये बन्द कर देता है। उदाहरणार्थ—कुर्की आदेश प्राप्त होने पर ग्राहक के खाते से परिचालन रोक दिया जाता है।

अतः बैंक उपरोक्त परिस्थितितों में ग्राहकों का खाता बन्द कर देता है और बैंक तथा ग्राहक के सम्बन्ध विच्छेद हो जाते हैं।

जमा बीमा एवं ऋण गारन्टी निगम
(Deposit Insurance Credit Guarantee Corporation)

निगम की स्थापना वर्ष 1978 में की गई। निगम निक्षेपों का बीमा करती है एवं ऋण के लिये प्रत्याभूति (गारन्टी) देने का कार्य करती है। निगम की अधिकृत पूंजी 15 करोड़ रुपये है तथा दत्त पूंजी 10 करोड़ रुपये है। निगम की समस्त पूंजी रिजर्व बैंक के पास प्रार्थित है। निगम के पास तीन प्रकार के कोष होते हैं—प्रथम, निक्षेप बीमा कोष, द्वितीय ऋण प्रत्याभूति कोष तथा अन्तिम सामान्य कोष। निगम वित्तीय संस्थाओं की ऋण सुविधाओं को बढ़ावा देती है। इसके अतिरिक्त, निगम ऋण प्रत्याभूति देने का कार्य करती है। निगम द्वारा वर्ष 1981 में लघु ऋण गारन्टी योजना (Small Loan Guarantee Scheme, 1981) लागू की गयी जिसमें विभिन्न प्रकार की व्यापारिक एवं उत्पादक क्रियाओं के लिये लघु स्तरीय उद्योगों में प्रदत्त ऋण के लिये गारन्टी प्रदान की गयी। इसमें निगम द्वारा 1 जनवरी 1985 के पश्चात् अप्राप्य ऋण का 60 प्रतिशत तक उत्तरदायित्व वहन किया जाता है परन्तु क्षतिपूर्ति की अधिकतम सीमा विभिन्न प्रक्रियाओं के लिये पृथक-पृथक निर्धारित की गयी है। उदाहरणार्थ—

विवरण	ऋण की अधिकतम सीमा
(i) फुटकर व्यापारी (Retail Traders)	—(अप्राप्य ऋण का 60 प्रतिशत अथवा) 50,000 रुपये·
(ii) यातायात संचालक (Transport Operator)	—75,000 रुपये
(iii) व्यापारिक संस्थान (Business Enterprises)	—50,000 रुपये
(iv) पेशेवर एवं स्वरोजगार (Professional and Self Employed)	—50,000 रुपये

अतः निगम द्वारा लघु उद्योगों के विकास के लिये ऋण प्रदान करने की दिशा में बैंकों को महत्वपूर्ण प्रोत्साहन दिया गया है।

जमा बीमा योजना के अन्तर्गत, समस्त बैंकों के निक्षेपों पर यह योजना लागू होती है। इसके अन्तर्गत समान स्थिति एवं समान अधिकार वाले खाते की जमायें 30,000 रुपये तक बीमित होती हैं अर्थात् प्रत्येक बैंक में प्रत्येक खाता 30,000 रुपये तक की बाकी (Balance) तक सुरक्षित खाता समझा जाता है। यह बीमा एक बैंक के लिये लागू समझी जाती है। निगम की प्रत्याभूति बैंक की समाप्ति अथवा समामेलन (Amalgamation) पर प्रारम्भ होती है। बीमा प्रीमियम की दर 100 रुपये पर ·04 पैसे वार्षिक है। यह प्रीमियम निगम को छमाही चुकायी जाती है। प्रीमियम का भुगतान बीमित बैंक द्वारा किया जाता है।

अनिवासी (परदेशी) खाता
[Non Resident (External) Account—NRE]

विदेशों में रहने वाले ऐसे भारतीय नागरिकों को यह खाता खोलने की सुविधा प्रदान की जाती है जो अपने व्यवसाय अथवा पेशे के कारण विदेशों में निवास करते हैं। इस खाते में प्राप्त ब्याज कर मुक्त (Tax Free) होता है तथा यह खाता भारतीय बैंकों में, भारतवर्ष की सीमाओं में खोला जाता है। इसमें, विदेशी मुद्रा को भारतीय मुद्रा में बदलकर ग्राहक का खाता क्रेडिट किया जाता है तथा रुपये पर ब्याज भारतीय मुद्रा में दिया जाता है। इस योजना के अन्तर्गत सावधि जमा खाते पर देय ब्याज दर एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिये स्वदेशी राशियों पर ब्याज-दर की तुलना में 2 प्रतिशत अधिक होती है। इस योजना का महत्वपूर्ण दोष यही है कि इसमें विनिमय दर की जोखिम ग्राहक वहन करता है। 30 जून, 1984 तक इन खातों में जमा राशि लगभग 2,830 करोड़ रुपये है। अनिवासी (परदेशी) खाते में ग्राहक बचत खाता अथवा सावधि जमा खाता (Fixed Deposit A/c) खोल सकता है। सावधि जमा खाते 15 दिन की अवधि से लेकर 10 वर्ष की अवधि के लिये खोले जा सकते हैं।

विदेशी मुद्रा (अनिवासी) खाते
(Foreign Currency (Non-resident) Accounts—FCNR)

इस योजना के अन्तर्गत निक्षेप निश्चित अवधि के लिये स्वीकार किये जाते हैं। यह योजना 1, नवम्बर 1975 से लागू की गयी। इसमें विदेशी मुद्रा को भारतीय मुद्रा में नहीं बदला जाता है वरन् विदेशी मुद्रा में ही सावधिजमा खाता खोला जाता है। सावधि जमा खाता 1 वर्ष से लेकर 5 वर्ष की अवधि के लिये खोला जाता है। इसमें पौंड (Pond) अथवा संयुक्त राज्य अमेरिका के डालर (Dollor) में खाता खोला जा सकता है। यदि अनिवासी द्वारा किसी अन्य विदेशी मुद्रा को भेजा जाता है तब बैंक ग्राहक की इच्छा पर उन्हें पौंड अथवा डॉलर में परिवर्तित कर लेता है। इस खाते पर प्राप्त ब्याज कर मुक्त होता है। इसमें ब्याज की गणना विदेशी मुद्रा में की जाती है तथा इन खातों में ग्राहकों को विदेशी विनिमय का जोखिम वहन नहीं करना पड़ता है चूंकि देय तिथि पर ग्राहक को ब्याज सहित विदेशी मुद्रा भुगतान की जाती है। इन जमाओं पर रिजर्व बैंक की पूर्व अनुमति के अभाव में 2,00,000 रुपये से अधिक का ऋण प्रदान नहीं किया जा सकता है। ऋण देते समय ऋण की ब्याज दर 2 प्रतिशत जमा ब्याज दर की तुलना में अधिक होती है।

विदेशी मुद्रा (अनिवासी) खाते पर ब्याज का भुगतान प्रत्येक माह, तिमाही अथवा छमाही किया जा सकता है। 30 जून, 1984 तक इन खातों में पौंड के खातों में 164·6 मिलियन तथा अमरीकी डॉलर के खातों में 408·2 मिलियन शेष थे। यह राशि 30 जून, 1983 को क्रमशः 80·7 मिलियन तथा 246·2 मिलियन थी।

नामांकन की सुविधा
(Facility of Nomination)

बैंकों में नामांकन की सुविधायें प्रदान नहीं की जाती हैं। परन्तु, वर्ष 1983 में बैंकिंग विनियमन अधिनियम की संशोधित धारा 45 ZA के अनुसार, बैंकों में नामांकन की सुविधा का प्रावधान किया गया है जिसमें कोई भी खाताधारी अपनी जमा का नामांकन किसी भी व्यक्ति के हित में कर सकता है। यदि यह नामांकन अवयस्क के हित में किया गया है तब अवयस्क द्वारा वयस्कता प्राप्त करने की तिथि तक किसी अन्य व्यक्ति को भी नियुक्त किया जा सकता है। खाताधारी द्वारा नामांकन किसी भी समय परिवर्तित अथवा रद्द किया जा सकता है। बैंक द्वारा नामांकन व्यक्ति को ग्राहक की मृत्यु के पश्चात् भुगतान किये जाने पर, बैंक अपने दायित्व से पूर्णतया मुक्त हो जाता है। परन्तु नामांकित व्यक्ति (Nominee) मृतक के वैधानिक उत्तराधिकारियों के प्रति पूर्णतः उत्तरदायी बना रहता है और वह नामांकित धन का स्वयं स्वामी नहीं बन जाता है। विपरीत साक्ष्य के अभाव में नामांकित व्यक्ति को मृतक के उत्तराधिकारियों का प्रन्यासी (Trustee) समझा जाता है। विवादास्पद स्थिति में बैंकों को नामांकित खाते का भुगतान न्यायालय के आदेशानुसार ही करना चाहिये। अतः नामांकन के पश्चात् उत्तराधिकारियों का अधिकार समाप्त नहीं होता है। इस

निर्णय की पुष्टि नागराजम्मा बनाम स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमें सावधि जमा रसीद के लिये एक खाताधारी की मृत्यु पर अन्य जीवित खाताधारी को मृतक के उत्तराधिकारियों का प्रन्यासी समझा गया तथा नामांकित रकम को जीवित व्यक्ति के पक्ष में भेंट (Gift) नहीं माना गया। अतः व्यवहार में बैंकों में नामांकन की सुविधा प्रदान नहीं की जाती है।

परन्तु 29 मार्च, 1985 से केन्द्रीय सरकार ने रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया से विचारविमर्श करके बैंकिंग कम्पनीज (नामांकन) नियम, 1985 [Banking Companies (Nomination) Rule, 1985] पारित कर दिया है जिसके अनुसार बैंक वर्तमान एवं भावी खातों पर खाताधारियों से निक्षेप खातों (Deposit Accounts), सुरक्षित संरक्षण खातों (Safe Custody Accounts) तथा लॉकर (Locker) पर नामांकन की सुविधायें प्रदान कर सकते हैं। नामांकन की सुविधा समस्त प्रकार के खाताधारियों को उपलब्ध है। परन्तु खाता उनकी व्यक्तिगत स्थिति (Individual Capacity) में खोला जाना चाहिये। प्रतिनिधित्व वाली प्रकृति की खातों में नामांकन की सुविधा उपलब्ध नहीं हो सकती है। उदाहरणार्थ—कार्यालय के संचालक को कार्यालय के खाते पर नामांकन की सुविधा प्राप्त नहीं हो सकती है। इस नियम की मुख्य विशेषता यह है कि नामांकन केवल एक व्यक्ति के हित में किया जा सकता है। नामांकित व्यक्ति (Nominee) अवयस्क हो सकता है परन्तु इस स्थिति में एक अन्य वयस्क व्यक्ति नामांकित किया जायेगा जो खाते की राशि अवयस्कता की ओर से उस स्थिति में प्राप्त करेगा यदि खाताधारी की मृत्यु अवयस्क की अवयस्कता की अवधि में हो जाती है। इसी प्रकार अवयस्क के खाते में नामांकन करने का अधिकार उस व्यक्ति को प्राप्त है जो विधिक रूप में अवयस्क की ओर से कार्य करने के लिये अधिकृत है। इसमें खाताधारी को नामांकन में परिवर्तन करने अथवा समाप्त करने का अधिकार प्राप्त है कि वह खाता चालू रहने की अवधि में किसी भी समय नामांकन समाप्त अथवा परिवर्तित कर सकता है।

निष्क्रिय खाता
(Dormant Account)

निष्क्रिय खाते से अभिप्राय उस खाते से होता है जिसमें ग्राहक द्वारा लम्बी अवधि से खाते में कोई व्यवहार नहीं किया गया है। साधारणतः बैंक में उन खातों को, जिनमें 3 वर्ष से कोई लेन-देन नहीं किया गया है, पृथक लेजर में निष्क्रिय खाते के नाम में अन्तरित कर दिया जाता है। यह सावधानी इसलिये प्रयोग में लायी जाती है कि खाते से कोई कपट अथवा धोखा न किया जा सके, चूँकि जो खाता लम्बी अवधि से निष्क्रिय है उसमें लेन-देन करने से पूर्व बैंक को पर्याप्त सावधानी बरतनी चाहिये। लेन-देन करने की स्थिति में इस खाते को पुनः निष्क्रिय खाते से चालू

1. Nagarajamma Vs. State Bank of India. (1962)

लेजर में हस्तांतरित कर दिया जाता है। रिजर्व बैंक के निर्देशों के अधीन जिस खाते में पूर्व 10 वर्ष से कोई लेन-देन नहीं किया गया है अर्थात् 7 वर्ष की अवधि से खाता निष्क्रिय खाते के रूप में बैंक की पुस्तकों में प्रगट हो रहा है तब उसे रिजर्व बैंक को हस्तांतरित कर दिया जाता है। इसके पश्चात् यदि खाते के सम्बन्ध में कोई दावा (Claim) किया जाता है तब वह रिजर्व बैंक से किया जाता है।

SOLVED PROBLEMS

1. 'अ' 'ब' के चालू खाते में परिचय देता है परन्तु बाद में 'अ' कहता है कि उसने कोरे फार्म पर हस्ताक्षर किये थे। आप इस स्थिति में क्या करेंगे ?

'A' gives an introduction for B's current account but on later, 'A' says that he has signed the blank form. What will you do in this condition ? *(Based on C. A. I. I. B. Nov., 1980)*

हल—उपरोक्त समस्या के अन्तर्गत अ अपने उत्तरदायित्व से यह कहकर मुक्त नहीं हो सकता है कि उसने हस्ताक्षर कोरे फार्म पर किये थे। अतः 'अ' को मिथ्या वर्णन (Mis. Representation) के लिये दोषी माना जायेगा। यद्यपि परिचय देने वाले व्यक्ति का कोई विधिक दायित्व नहीं है परन्तु यह उसका नैतिक कर्त्तव्य है कि वह जिस व्यक्ति का परिचय दे रहा है उसे अच्छी प्रकार से जानता है तथा उसे उसके चरित्र पर कोई सन्देह नहीं है।

इसके अतिरिक्त इस परिस्थिति में, बैंक भी लापरवाही का दोषी ठहराया जायेगा चूंकि परिचय देने वाले व्यक्ति को बैंक के समक्ष हस्ताक्षर करने चाहिए। बैंक को परिचय देने वाले व्यक्ति से साक्षात्कार करना चाहिए कि वह खाता खोलने वाले व्यक्ति को किस प्रकार एवं कितनी अवधि से जानता है। अतः इस परिस्थिति में बैंक परिचय देने वाले व्यक्ति को उत्तरदायी नहीं बना सकता है।

2. अ तथा उनकी पत्नी ब का एक निष्क्रिय खाता आपकी शाखा में है। यह खाता वर्ष 1952 में खोला गया था। खाते में वर्ष 1965 से 10,000 रुपये शेष हैं। वर्ष 1983 में अ का पुत्र स बैंक में आता है एवं सूचित करता है कि—

(1) उसके पास खाते की पास बुक है।

(2) उसकी माँ की मृत्यु वर्ष 1975 में हो गयी।

(3) उसके पिता ने वर्ष 1960 में घर छोड़ दिया है तथा उनका कोई पता नहीं है।

(4) वह सूचित करता है कि उसके पास दोनों के नाम में लॉकर होने की सूचना भी उपलब्ध है जिसकी चाबी खो गयी है।

(5) वह खाते से रुपया भुगतान करने तथा लॉकर से वस्तुयें प्रदान करने की प्रार्थना करता है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A and his wife B. has joint account which is dormant in your branch. This account was opened in 1952. Balance is Rs. 10,000

the account since 1965. In 1983 C, son of A comes in the bank and inform that

(1) He hold the pass book of this account.

(2) His mother was died in 1975.

(3) His father has left the house since 1960 and his where about are not known.

(4) He has informed that a safe deposit locker was also in their names The key of the locker is not traceable.

(5) He request to make the payment of the account and deliver the articles lying in the locker to him.

How will you deal the matter ?

(Based on C. A. I. I. B. May., 1979)

हल—उपरोक्त स्थिति में खाता निष्क्रिय खाता है चूंकि अ और ब द्वारा लम्बी अवधि से खाते में लेन-देन नही किया गया है। 'स' अ और ब का एकमात्र पुत्र है इसके लिये बैंक को उससे उत्तराधिकार का प्रमाण-पत्र (Letter of Succession) प्राप्त करना चाहिये जो उचित न्यायालय द्वारा जारी किया गया हो। ब की मृत्यु हो चुकी है तथा अ का पूर्व 23 वर्षों से कोई पता नही है जिसके परिणामस्वरूप साक्ष्य अधिनियम (Evidence Act) के अनुसार उसे भी मृत समझा जायेगा। अतः बैंक 'स' को खाते के रुपये का भुगतान कर सकता है। लॉकर में रखी वस्तुओं के सम्बन्ध में 'स' के पास चाबी (key) नही है जिससे लॉकर को दो ख्याति प्राप्त (Reputed) व्यक्तियों की जमानत एवं 'स' द्वारा प्रतिभूति बन्धक (Indemnity Bond) के आधार पर तोड़ा जायेगा और लॉकर की वस्तुयें 'स' को सुपुर्द की जायेंगी।

3. क्या बैंक मना कर सकता है—

(i) नयी चैक बुक जारी करने के लिये,

(ii) जमा राशि स्वीकार करने के लिये,

(iii) चैक का भुगतान करने के लिये,

जिस ग्राहक के चालू खाते में सन्तोषजनक व्यवहार नहीं है। कारण सहित उत्तर बतलाइये।

Can a banker refuse—

(i) to issue a fresh cheque book to

(ii) to accept credit for and

(iii) to honour cheque of

a customer whose current account is being unsatisfactorily conducted ? Give reasons for your answer.

(Based on C. A. I. I. B., Nov., 1979. Jan. 1985)

हल—बैंक चालू खाते की स्थिति में, ग्राहक का खाता ग्राहक को सूचित किये बिना बन्द नहीं कर सकता है। यदि बैंक किसी ग्राहक के खाते में सन्तोषजनक व्यवहार नहीं देख रहा है और बैंक को सन्देह है कि व्यक्ति का खाता चालू रखना बैंक के हित में नहीं है तब बैंक अपने आशय की एक सूचना ग्राहक को भेजेगा कि खाते में लेन-देन नियमित रूप में किये जायें। इस सूचना के अन्तर्गत बैंक ग्राहक को एक निश्चित अवधि में खाता नियमित करने की अनुमति देता है। यदि इस अवधि में ग्राहक द्वारा कोई प्रत्युत्तर (Response) नहीं दिया जाता है तब बैंक एक अन्य सूचना (Notice) भेजेगा जिसमें ग्राहक को एक निश्चित तिथि से खाता बन्द करने की सूचना भेजी जायेगी। इस तिथि के पश्चात् बैंक ग्राहक के खाते को बन्द करके उसका रुपया भुगतान आदेश (Pay Order) द्वारा ग्राहक के पते पर भेज देता है। इस प्रकार बैंक अपने ग्राहक का खाता बन्द कर सकता है। उपरोक्त स्थिति में, बैंक नयी चैक बुक जारी करने से मना कर सकता है तथा ग्राहक से जमा प्राप्त करने के लिये बाध्य नहीं है। बैंक इसके लिये इन्कार भी कर सकता है। चैक भुगतान की स्थिति में, बैंक चैकों का भुगतान उस समय रोक सकता है जबकि उसने ग्राहक को खाता बन्द करने की सूचना भेज दी है। इससे पूर्व बैंक चैकों का भुगतान करने के लिये उत्तरदायी है।

4. आपके बैंक की बम्बई शाखा के एक अच्छे ग्राहक की 3,000 रुपये की जमा रसीद खो जाती है जो शाखा द्वारा उसके हित में जारी की गयी है तथा जिसकी देय तिथि 10 दिसम्बर, 1976 है। वह इस सम्बन्ध में उचित कार्यवाही के लिये आपको सूचित करता है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे?

A good customer of your bank's branch in Bombay has lost a fixed deposit receipt of Rs. 3,000 issued by the branch in his favour and falling due for payment on 10th December 1976. He approaches for necessary action in the matter. How would you proceed? *(Based on C. A. I. I. B. Nov., 1976)*

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक ग्राहक को क्षतिपूरक बॉण्ड (Indemnity Bond) के आधार पर अनुलिपि (Duplicate) जारी कर सकता है परन्तु इसके लिये ग्राहक से लिखित आवेदन प्राप्त करना आवश्यक है। अनुलिपि जारी करने की सूचना ग्राहक के खाते पर नोट कर दी जायेगी। इसके पश्चात्, देय तिथि पर, अनुलिपि के आधार पर ही भुगतान किया जायेगा।

5. मिस सरोज सुन्दरंजन का सावधि जमा खाता आपके पास है। वह जमा रसीद श्रीमती सरोज विद्यान्यथन के नाम में परिवर्तित करने की प्रार्थना करती है। क्या आप यह प्रार्थना स्वीकार करेंगे?

Miss Saroj Sundarrajan has a fixed deposit account with you

and request to change the name in the fixed deposit receipt to Mrs. Saroj Vaidyanathan. Will you accept this request ?

(C. A. I. I. B. May., 1973)

हल—उपरोक्त स्थिति में, लिखित सूचना के आधार पर ग्राहक का नाम बदल सकता है, चूंकि नाम में परिवर्तन शादी के कारण सम्भव है तथा सावधि जमा रसीद में कोई भी परिवर्तन समस्त खाताधारियों की सहमति से किया जा सकता है। इस स्थिति में सरोज सुन्दरजन सावधि जमा रसीद की एकमात्र स्वामी हैं तथा उनकी सहमति से नाम में परिवर्तन किया जा सकता है।

6. आपकी शाखा श्रीमती एवं श्री एम० बी० दलवी के नामों में संयुक्त सावधि जमा रसीद 10,000 रु० की 12 माह के लिये जारी करती है। जमा रसीद का भुगतान किसी भी व्यक्ति ('E' or 'S') को किया जा सकता है तथा भुगतान 30 सितम्बर, 1979 को देय है। श्रीमती दलवी 12 दिसम्बर, 1978 को दूसरी प्रति जारी करने का आवेदन करती हैं चूंकि मूल प्रति खो गयी है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

Your branch has issued a fixed deposit receipt of Rs. 10,000 in the joint names of Mrs. and Mr. M. B. Dalvi, payable to either or survivor for a period of 12 months maturing on 30th September, 1979. Mrs. Dalvi approaches you on 11th December, 1978 with a request to issue a duplicate receipt since original receipt is lost by her. How would you deal ? *(C. A. I. I. B. May., 1975)*

हल—उपरोक्त समस्या में, बैंक दूसरी रसीद की प्रति (Duplicate Receipt) जारी नहीं कर सकता है चूंकि रसीद दो व्यक्तियों के नाम से जारी की गयी है। भुगतान तिथि से पूर्व, कोई भी परिवर्तन दोनों पक्षकारों की सहमति से ही किया जा सकता है। अतः श्रीमती दलवी की प्रार्थना स्वीकार नहीं की जा सकती है।

7. एक साझेदारी फर्म में तीन साझेदार हैं। फर्म का खाता बैंक में खोला जाता है। बैंक में दो साझेदारों के व्यक्तिगत बचत खाते भी हैं। दोनों साझेदार फर्म से 5,000 रुपये अपने खातों में हस्तान्तरित करने का आदेश देते हैं। इस स्थिति में बैंक क्या करेगा ?

A partnership firm consists three partners. Firm's account has been opened in a Bank. There are two personal accounts of two partners. Both partners order to transfer a sum of Rs. 5,000 each in their respective accounts. What would Bank do in this Condition ? *(Based on C. A. I. I. B. Aug., 1978)*

हल—उपरोक्त समस्या में बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिये और फर्म को इस आशय की सूचना भेजनी चाहिये। यदि रुपये का हस्तान्तरण उचित है तब बैंक साझेदारों के खातों में रुपया हस्तान्तरित कर सकता है।

8. अ के बचत खाते में 25,000 रुपये जमा हैं। अ पिछले 2 माह से स्वस्थ अनुभव नहीं कर रहा है। वह बैंक को अपनी पत्नी के हस्ताक्षर प्रमाणित करके भेजता है और प्रार्थना करता है कि उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके खाते का रुपया उसकी पत्नी को दे दिया जाये। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

Mr. A has a Saving Bank Account with a balance of Rs. 25,000 since he is not keeping good health from last 2 months, he writes to the bank to pay the balance in his account to his wife in event of his death. He sends his wife's specimen signature duly attested by him. Will you accept such instruction ? Why ?

हल—उपरोक्त स्थिति में, 'अ' की प्रार्थना मान्य नहीं हो सकती है चूंकि मृत्यु की स्थिति में रुपये का नियोजन उत्तराधिकारियों को किया जाता है एवं उत्तराधिकारियों का निश्चय न्यायालय द्वारा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त बैंक में नामांकन की सुविधायें प्रदान नहीं की जाती हैं। परन्तु अ को यह सलाह दी जा सकती है कि उसके बचत खाते में उसकी पत्नी का नाम शामिल किया जा सकता है और बचत खाते में रुपये निकालने का अधिकार दोनों व्यक्तियों को पृथक् अथवा संयुक्त रूप से प्राप्त हो सकता है। परन्तु, वर्ष 1985 से, बैंकों में नामांकन की सुविधा प्रदान की जाती है। अतः बैंक 'अ' के बचत खाते पर नामांकन की सुविधा प्रदान कर सकता है और उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके खाते का रुपया उसकी पत्नि को भुगतान किया जा सकता है।

9. एक व्यक्ति 5,000 रुपये की जमा रसीद अपने पक्ष में लिखी हुई लेकर बैंक में प्रस्तुत होता है और इसके विरुद्ध 3,000 रुपये का ऋण प्राप्त करना चाहता है। रसीद आपके बैंक की विदेशी शाखा से जारी की गयी है। वह प्रार्थना करता है कि उसके लिये उस शाखा से ऋण के लिये आवेदन करना कठिन है जिससे रसीद जारी की गई है चूंकि उसका स्थानान्तरण इस स्थान पर हो गया है। उस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A person calls at a branch office with a Fixed Deposit Receipt for Rs. 5,000 issued in his name by the up-country branch of the bank. He requests for a loan of Rs. 3,000 against the F.D.R. He represents that it is difficult for him to approach the branch which issued the F. D. R. as he is transferred from there to the place where he seeks loan. What will you do ?

(C. A. I. I. B. May., 1984)

हल—उपरोक्त स्थिति में, साधारणतः बैंक अन्य शाखा द्वारा जारी की गयी रसीद पर ऋण प्रदान नहीं करते हैं। विशेष स्थिति में, अन्य शाखा द्वारा जारी

जमा रसीद पर ऋण प्रदान किया जा सकता है ।- परन्तु ऋण प्रदान करने से पूर्व, ऋण प्रदान करने वाली शाखा, जमा रसीद जारी करने वाली शाखा (Issuing Branch) को अपने इस आशय की सूचना भेजेगी और प्रार्थना करेगी कि जमा खाते पर ग्रहणाधिकारी अथवा लियन (Lien) नोट कर दिया जाये । अतिरिक्त, यदि जमा रसीद पर पहले ऋण प्राप्त किया गया है तब उसके सम्बन्ध में सूचना प्राप्त करेगी । जारी करने वाली शाखा से पुष्टिकरण प्राप्त होने पर 3,000 रुपये का ऋण प्रदान किया जा सकता है चूंकि यह राशि जमा राशि के 75 प्रतिशत से कम है । परन्तु यदि ग्राहक द्वारा, इससे पूर्व भी ऋण प्राप्त किया गया है और ऋण चालू स्थिति में है तब बैंक जमा रसीद के आधार पर ऋण प्रदान नहीं करेगा ।

10. निम्नलिखित कारण स्पष्ट करते हुये बतलाइये कि बैंक क्या निश्चय करेगा—

(अ) एक ख्याति प्राप्त सार्वजनिक कम्पनी अपने बैंकर से प्रार्थना करती है कि बैंक प्रत्येक छमाही में कम्पनी के ऊपर जारी अथवा कम्पनी की ओर से भुगतान किये गये समस्त चैक कम्पनी को वापिस करे ?

(ब) एक दिन एक चैक समाशोधन के माध्यम से अथवा प्रत्यक्ष रूप में अन्य बैंक से प्राप्त है जिसे ऐसे ग्राहक अथवा उसकी ओर से लिखा गया है जिसकी मृत्यु की सूचना प्राप्त हो चुकी है । क्या चैक का भुगतान करना चाहिए अथवा वापसी करनी चाहिए ?

(स) अ बैंक में अपने खाते में रुपया जमा करता है । बाद में, बैंक एक्स से जो अ का नियोक्ता है, सूचना प्राप्त करता है कि अ द्वारा जमा किया गया धन चोरी का रुपया है तथा बैंक को रुपया भुगतान न करने की चेतावनी दी जाती है । क्या बैंक चेतावनी की उपेक्षा कर सकता है ?

(द) एक ग्राहक जिसने बैंक को स्कन्ध, अंश तथा प्रतिभूतियाँ क्रय-विक्रय करने के लिये लिखित निर्देश दिये हुये हैं, वसूली की तिथि से पूर्व ही मर जाता है । क्या बैंक ग्राहकों की मृत्यु के पश्चात्, उसके खाते से लागत डेबिट अथवा प्राप्तियाँ क्रेडिट, जैसी भी स्थिति हो, कर सकता है ?

(य) अ तथा ब के नाम में संयुक्त रूप में देय जमा रसीद है जिस पर ब्याज तिमाही देय होता है । बाद में अ बैंक से प्रार्थना करता है कि ब्याज का भुगतान केवल उसे ही किया जाये । क्या बैंक ब्याज का भुगतान इस मान्यता के आधार पर कर सकता है, कि विशिष्ट सूचना के अभाव में, जबकि मूल राशि का भुगतान संयुक्त रूप में देय है, ब्याज का भुगतान किसी भी पक्षकार को किया जा सकता है ।

State briefly with reason, how would bank react/decide under the following cases :—

(a) A reputed public limited company approaches its banker

with a request to return to the company every half year all cheques drawn on and paid by the bank during the period.

(b) On the day on which a banker becomes aware of a customer's death cheques drawn by or on behalf of the customer have been presented through the clearing or received directly from other Banks. Should the cheques be paid or returned ?

(c) "A" deposits cash in his account with a Bank. Later the Bank receives notice from "X" who is an employer of "A" informing the Bank that the money deposited by A are stolen money and warning the Bank not to repay the subject amount. Can the Bank disregard the warning ? *(Based on C. A. I. I. B. Jan., 1985)*

(d) A customer, who has given written instructions to the Bank to buy or sell stocks, shares and other securities, dies before settlement day. Can the Bank, notwithstanding the customer's death, debit his account with the cost or credit it with proceeds as the case may be ?

(e) A and B have fixed deposit payable JOINTLY with interest payable every quarter. Later A approaches the Bank to pay him interest. Can the Bank pay him interest relying on an assumption that while principal amount is payable jointly interest can be paid to either party in absence of any specific instructions.

(C. A. I. I. B. Nov., 1982)

हल—(a) इस स्थिति में, साधारणत: वैंक व्यवहार में यह पद्धति नहीं अपनाता है। परन्तु, कम्पनी एक प्रसिद्ध कम्पनी है इसलिये वैंक कम्पनी को यह सुविधा प्रदान कर सकता है। परन्तु इससे पूर्व वैंक को कम्पनी से क्षतिपूरक बन्धक प्राप्त करना चाहिये जिसमें चैंक, विपत्र आदि की वापसी का उत्तरदायित्व कम्पनी पर हो। इस स्थिति में, वैंक के लिये हितकर है कि यदि वैंक, कम्पनी से चैंक, विपत्र आदि की जीरोक्स प्रति (Xerox copies) प्राप्त करके, अपने पास सुरक्षित रखे।

(b) प्रस्तुत समस्या के अन्तर्गत, वैंक को ग्राहक की मृत्यु की सूचना प्राप्त हो चुकी है। चैंकों का भुगतान नहीं किया जा सकता है।

(c) इस स्थिति में, वैंक X की सूचना पर ध्यान नहीं देगा चूंकि, रुपया चोरी का है अथवा नहीं, इसका निर्णय वैंक के क्षेत्राधिकार से बाहर है।

(d) इस स्थिति में वैंक पर ग्राहक की मृत्यु से कोई प्रभाव नहीं पड़ता है चूंकि वैंक निर्देशों के आधीन कार्य कर रहा है। अतः वह ग्राहक का खाता डेबिट अथवा क्रेडिट कर सकता है।

(c) इस स्थिति में, बैंक एक व्यक्ति के खाते में ब्याज की रकम जमा नहीं कर सकता है चूँकि सावधि जमा खाता संयुक्त नाम में खोला गया है। इस सम्बन्ध में, दिया गया कोई भी निर्देश समस्त खाताधारियों की सहमति से दिया जाना चाहिए।

11. एक बैंक 10,000 रुपये को 10 प्रतिशत ब्याज पर 3 वर्ष की अवधि के लिये X तथा Y के हित में सावधि जमा रसीद जारी करता है जिसका भुगतान संयुक्त या पृथक् रूप में देय है।

एक वर्ष की समाप्ति पर, X बैंक से जमा रसीद का भुगतान करने की प्रार्थना करता है अथवा वैकल्पिक रूप में, जमा रसीद के विरुद्ध अधिकतम राशि का ऋण प्रदान करने की प्रार्थना करता है चूंकि उसे धन को तुरन्त आवश्यकता है। एक बैंक के प्रबन्धक के रूप, इस स्थिति में आप क्या करेंगे? आप क्या प्रपत्र प्राप्त करेंगे तथा किस दर पर ब्याज वसूल किया जायेगा?

A bank has issued a fixed deposit receipt for Rs. 10,000 for 3 years with interest @ 10% p. a. in favour of X and Y payable to either or survivor.

On completion of one year, X approaches the Bank for payment of the fixed deposit or in the alternative to grant him a loan for the maximum amount, as he is in urgent need of money. As Manager of the Bank how would you proceed in the matter? What documents would you take for loan and how much interest would you charge? *(C. A. I. I. B. May., 1982)*

हल—उपरोक्त समस्या के अन्तर्गत बैंक X की प्रार्थना पर ऋण प्रदान नहीं कर सकता है और न ही सावधि जमा रसीद का देय तिथि से पूर्व भुगतान किया जा सकता है। जमा रसीद का भुगतान देय तिथि पर ही, दोनों व्यक्तियों में से किसी एक व्यक्ति को किया जा सकता है। परन्तु, देय तिथि से पूर्व सावधि जमा रसीद पर ऋण लेने के लिये अथवा पूर्व भुगतान के लिये, समस्त संयुक्त खाताधारियों की लिखित सहमति आवश्यक है। अतः X तथा Y द्वारा संयुक्त रूप से ऋण के लिये आवेदन किया जाना चाहिये परन्तु वर्तमान समय में बैंक खाता खोलते समय इस आशय का अधिकार पत्र प्राप्त करते हैं कि देय तिथि से पूर्व दोनों पक्षकारों में कोई भी पक्षकार ऋण प्राप्त कर सकता है अथवा पूर्व भुगतान प्राप्त कर सकता है। अत. यदि बैंक ने उपरोक्त अधिकार पत्र प्राप्त किया है तब बैंक एक पक्षकार के आवेदन पर ऋण प्रदान कर सकता है।

ऋण प्रदान करते समय, बैंक ग्राहक से प्रतिज्ञा-पत्र (Demand Promisory Note—D.P.N.) प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त, बैंक अपने हित में, दोनों व्यक्तियों द्वारा सावधि जमा रसीद पर विधिवत् विमुक्ति (Discharge) करवाता

है। जमा रसीद प्रतिभूति पर दिये गये ऋण के सम्बन्ध में, ऋण ब्याज दर जमा रसीद की ब्याज दर से 2 प्रतिशत अधिक होती है। अतः ऋण ब्याज दर 12 प्रतिशत होगी जिस पर ब्याजकर अतिरिक्त लिया जायेगा। ब्याजकर की व्यवस्था 1 अप्रैल 1985 से समाप्त कर दी गयी है। यदि जमा रसीद का भुगतान तिथि से पूर्व किया जाता है तब जिस अवधि के लिये जमा रसीद का धन बैंक के पास रहा है उस अवधि पर लागू ब्याज दर से 1 प्रतिशत कम पर ब्याज का भुगतान किया जायेगा। इस स्थिति में, बैंक के पास 1 वर्ष की अवधि के लिये जमा धन रहा है जिस पर ब्याज दर 8 प्रतिशत देय है। अतः ग्राहक को इस स्थिति में, केवल 7 प्रतिशत ब्याज की दर से मिश्रित (Compound) ब्याज दिया जाना चाहिए।

12. 'अ' एक गांव का निवासी है। 'अ' को आपके शहर में स्थित बैंक का एक चैक प्राप्त होता है। 'अ' चैक बैंक को भेजता है और प्रार्थना करता है कि चैक का संग्रहण करके बैंक उसके हित में ड्राफ्ट भेज दे। क्या आप उसकी प्रार्थना स्वीकार करेंगे ?

A is a resident of a village. A receives a cheque drawn on a Bank situated in your city. A sent the cheque to the Bank and request to send a D D in his favour after realising the cheque. Will you accede his request ? *(C.A.I.I.B. (Part II) Nov., 1980)*

हल—उपरोक्त स्थिति में 'अ' के चैक का संग्रहण नहीं किया जा सकता है चूंकि वह व्यक्ति बैंक का ग्राहक नहीं है। विनिमय साध्य विलेख अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत बैंक को चैकों का संग्रहण (Collection) अपने ग्राहकों के लिये करना चाहिये अन्यथा बैंक को धारा 131 के अन्तर्गत संरक्षण प्राप्त नहीं हो सकता है। □

13. K का बैंक में 50,000 रुपये का बचत खाता है। K बैंक से प्रार्थना करता है कि 25,000 रुपये की सावधि जमा रसीद (F.R.D.) उसकी पत्नी S के नाम से 3 वर्ष की अवधि के लिये जारी की जाये। बैंक जमा रसीद जारी करके K को दे देता है। कुछ दिनों बाद K बैंक में आता है और बैंक से प्रार्थना करता है कि उपरोक्त रसीद को समाप्त (cancell) कर दिया जाये तथा उसके खाते में रुपया पुनः जमा कर दिया जाये। क्या आप K की प्रार्थना स्वीकार करेंगे ?

K has a saving bank account in a bank K request to issue a fixed deposit for Rs. 25,000 for 3 years in favour of his wife, S. Bank issues the F. D. R. and deliver to K. After some days K comes in the Bank and request to cancell the above receipt and to recredit his account. Will you accede the request of K.

(Based on. C. A. I. I. B. (Part II) Nov., 1981)

हल—उपरोक्त समस्या में, बैंक ग्राहक K को प्रार्थना स्वीकार नहीं कर सकता है चूंकि जमा रसीद जिस व्यक्ति के नाम में जारी की जाती है, उस व्यक्ति को ही, उसका भुगतान प्राप्त करने का अधिकार होता है। अतः जमा रसीद का भुगतान प्राप्त करने का अधिकार S को है।

14. A बैंक को एक पत्र लिखता है जिसमें C का नाम 5,000 रुपये की उस जमा रसीद में जोड़ने की प्रार्थना करता है जो A तथा B के संयुक्त नाम में है। C, A तथा B का वयस्क पुत्र है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A letter is received by a bank from 'A' requesting the Bank to add the name of 'C' in the Fixed Deposit for Rs. 5,000 in the joint names of 'A' & 'B', 'C' is the major son of A and B. What will you you do in this condition ? *(C. A. I. I. B. Jan., 1985)*

हल—उपरोक्त स्थिति में C का नाम जमा रसीद में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है, चूंकि जमा रसीद संयुक्त नाम में है तथा नाम सम्मिलित करने के लिये आवेदन, केवल A द्वारा किया गया है। संयुक्त नाम में जारी जमा रसीद में कोई भी परिवर्तन समस्त खाताधारियों की सहमति से किया जा सकता है। अतः C का नाम सम्मिलित करने के लिये आवश्यक है कि आवेदन A तथा B द्वारा संयुक्त रूप में किया जाना चाहिये।

15. विभिन्न प्रकार के निक्षेपों का 'अवधि निक्षेप' तथा 'मांग निक्षेप' में वर्गीकरण कीजिये।

Please classify the various deposits under 'Time Deposits' and 'Demand Deposits'. *(C. A. I. I. B. Nov, 1983, Jan., 1985)*

हल—मांग निक्षेप (Demand Deposits)—इसमें बचत खाता (Saving Bank A/c), चालू खाता (Current A/c), मांग पर देय जमा निक्षेप (Call Deposits), तथा अतिदेय जमा (Over Due Deposits) सम्मिलित किये जाते हैं।

सावधि निक्षेप (Time Deposits)—इसमें नकद प्रमाण-पत्र (Cash Certificates), आवृत्ति जमा (Recurring Deposits), सावधि जमा रसीद (Fixed Deposits Receipts), पुनर्निवेश जमा योजना (Reinvestment Deposits Plan) सम्मिलित किये जाते हैं।

16. आपके पास एक ग्राहक का ऐसा चालू खाता है जिसमें कोषों की कमी के कारण नियमित रूप में चैक वापिस हो रहे हैं। आप खाता बन्द करने का निर्णय लेते हैं। क्या आप शेष राशि का भुगतान आदेश उसे भेज सकते हैं तथा इसके तुरन्त पश्चात् भुगतान के लिये प्रस्तुत चैक को वापिस कर सकते हैं ?

You have got a Current Account of a party whose

have been returned frequently for want of funds. You have decided to close the account.

Can you send him a pay order for the balance and return his cheques presented to the account subsequently ?

(C. A. I. I. B. Part II May, 1977)

हल—बैंक किसी भी ग्राहक का खाता असन्तोषजनक पाये जाने की स्थिति में बन्द कर सकता है। परन्तु चालू खाते की सूचना में बैंक को इस आशय की पूर्व सूचना ग्राहक को देना अनिवार्य समझा गया है। यदि सूचना के अभाव में खाता बन्द किया गया है तब बैंक को चैक की त्रुटिपूर्ण वापसी के लिये उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। उपरोक्त स्थिति में, बैंक को सर्वप्रथम इस आशय का नोटिस ग्राहक को भेजना चाहिये तथा निश्चित तिथि के पश्चात् ग्राहक का खाता बन्द करना चाहिये।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) बैंक में विभिन्न प्रकार के खाते खोले जाते हैं। उदाहरणार्थ—बचत खाता, चालू खाता, सावधि जमा खाता, आवर्ती जमा खाता, अनिवासी (परदेशी) खाता, विदेशी मुद्रा अनिवासी खाता आदि।

(2) बैंक को खाता खोलते समय विभिन्न सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहिये जिसमें आवेदन, सन्दर्भ, हस्ताक्षर एवं खाता खोलना प्रमुख होती हैं।

(3) बैंक और ग्राहक के बीच सम्बन्धों की समाप्ति खाता बन्द होने पर होती है। बैंक में खाता विभिन्न विधियों द्वारा बन्द किया जा सकता है। उदाहरणार्थ—ग्राहक द्वारा सूचना देने पर, खाते में परिचालन न होने पर, बैंक द्वारा खाता बन्द करने पर, ग्राहक की मृत्यु, पागल अथवा दिवालिया होने पर, धन का अभिहस्तांकन करने पर एवं विधि लागू होने पर खाता बन्द हो जाता है।

प्रश्न
(Questions)

1. बैंक को खाता खोलते समय किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिये ?

What precautions to be taken by the bank while opening an account ?

2. खाता खोलते समय संदर्भ की आवश्यकता क्यों पड़ती है ? सन्दर्भ देने वाले व्यक्ति के क्या दायित्व हैं ?

Why is introduction necessary for opening an account ? What are the liabilities and responsibilities of the introducer ?

(C. A. I. I. B. Nov., 1980)

3. खाता खोलते समय सन्दर्भ का क्या आशय है तथा बैंकों के लिये विनिमय साध्य विलेख अधिनियम के अन्तर्गत, सन्दर्भ का महत्व स्पष्ट कीजिये।

Explain the meaning of introduction while opening an account and its significance to the Banker under the negotiable Instrument Act. *(C. A. I. I. B May, 1982)*

4. चालू खाते से चेक भुगतान करते समय किन-किन सावधानियों को प्रयोग में लाया जाना चाहिये ?

Enumerate the points which a Current Account ledger keeper must scrutinise before posting a cheque for payment ?

(C. A. I I B. May, 1982)

5. एक नया खाता खोलने की विधि विस्तारपूर्वक समझाइये। बैंकों को खाता खोलते समय विशेष रूप से कौन-कौन सी सावधानियाँ रखनी चाहिये ?

Describe in detail the method of opening an account. What precautions should be taken by the banks while opening the account ? *(Gorakhpur B Com. 1985)*

6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये—

Write a short note on the following—

(a) अनिवासी (परदेशी) खाते (NRE Accounts)

(C. A. I. I. B. Nov., 1980, 1975)

(b) जमा बीमा एवं ऋण गारन्टी निगम

(Deposit Insuance and Credit Guarantee Corporation.)

(C. A. I. I. A. Part II may, 1979)

(c) निष्क्रिय खाता (Dormant Account)

(C. A. I. I. B. may, 1979)

(d) विदेशी मुद्रा अनिवासी खाते (FCNR Accounts)

7. उन परिस्थितियों का वर्णन कीजिये जिनमें एक बैंक अपने ग्राहकों का खाता बन्द कर देता है। उसे किस व्यक्ति को खाते के शेष का भुगतान करना चाहिये।

Describe the circumstance when a banker should close the account of his customer. To whom should he pay the balance ?

(Rajasthan B. Com.)

8. सार्वजनिक जमा रसीद के सम्बन्ध में बैंक की क्या वैधानिक स्थिति है ?

What is the legal position of banker regarding a Fixed Deposit Receipt ?

9. चालू खाते, बचत खाते एवं स्थायी जमा खाते में क्या अन्तर है ?

What is the difference between Current, Saving and Fixed Deposit Account ?

10. एक बैंकर के रूप में आप क्या करेंगे, यदि ग्राहक आपकी प्रार्थना के पश्चात भी अपना खाता बन्द करने से अस्वीकार करता है ?

As a banker, what oction would you take if the customer refuses to close his account, despite your request to that effect ?

(*Delhi B. Com.*)

11. स्थायी जमा रसीद की क्या विशेषतायें हैं ? स्थायी जमा रसीद खोने पर उत्पन्न स्थिति को समझाइये ।

What are the features of Fixed Deposit Receipt ? Explain the position regarding loss of Fixed Deposit Receipt.

(*Delhi B. Com.* (*Hons*) *1972*)

12. बैंकों में नामांकन की सुविधा पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये ।

Write a short note on Nomination facilities in the Banks.

□□□

6 बैंक के विशेष प्रकार के ग्राहक
(SPECIAL TYPE OF BANKER'S CUSTOMERS)

वर्तमान समय में बैंक का प्रमुख उद्देश्य जमा संग्रह (Deposit Mobilisation) को प्रोत्साहन देना है। बैंक अपने ग्राहकों को विभिन्न प्रकार के खातों में रुपया जमा करने की सुविधायें प्रदान करते हैं। बैंकर और ग्राहक के बीच एक वैध अनुबन्ध होता है। वैध अनुबन्ध से अभिप्राय उस अनुबन्ध से होता है जो अनुबन्ध योग्य पक्षकारों द्वारा स्वतन्त्र सहमति से किया जाता है। अनुबन्ध योग्य पक्षकार से अभिप्राय उस व्यक्ति से होता है जो वयस्क आयु का है स्वस्थ मस्तिष्क का है तथा जिसे किसी भी विधि द्वारा अनुबंध अयोग्य घोषित नहीं किया है। परन्तु, बैंक व्यवहार में नाबालिग अथवा अवयस्क (Minor) को खाता खोलने की सुविधायें निश्चित प्रतिबन्धों के अधीन, प्रदान करते हैं। इसी प्रकार, बैंक के कुछ ग्राहक ऐसे होते हैं जो खाता खोलते समय अनुबन्ध योग्य होते हैं परन्तु बाद में किसी कारणवश अनुबन्ध अयोग्य हो जाते हैं। इन परिस्थितियों में बैंक को विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखनी पड़ती हैं। बैंक में विभिन्न व्यक्तियों द्वारा खाता खोला जाता है। संक्षेप में, बैंक के *विभिन्न प्रकार के ग्राहक निम्नलिखित व्यक्तिगत हो सकते हैं।*

अवयस्क
(Minor)

अवयस्क अथवा नाबालिग से आशय उस व्यक्ति से है जिसने 18 वर्ष की आयु पूर्ण नहीं की है। यदि व्यक्ति के लिये कोर्ट द्वारा अभिभावक (Guardian) की नियुक्ति की गयी है तब वह 21 वर्ष की आयु तक नाबालिग समझा जाता है। भारतीय अनुबन्ध अधिनियम के अन्तर्गत, नाबालिग को अनुबन्ध करने का अधिकार नहीं दिया गया है। अतः नाबालिग के विरुद्ध किसी भी प्रकार की विधिक कार्यवाही (Legal Proceeding) नहीं की जा सकती है। बैंक के अन्तर्गत नाबालिग को बचत खाता खोलने का अधिकार दिया गया है। नाबालिग चालू खाता (Current Account) खोलने का अधिकारी नहीं है। चालू खाते के अन्तर्गत, अधिविकर्ष की सुविधा दी जाती है और नाबालिग को ऋण प्रदान करने की स्थिति में, ऋण वसूली के लिये नाबालिग पर वाद प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है। अतः बैंक को नाबालिग का चालू खाता नहीं खोलना चाहिये। परन्तु यदि बैंक कुछ विशेष परिस्थितियों में खाता खोलने की अनुमति देता है, तब बैंक को विशेष सावधानी रखनी चाहिए कि उस खाते में ऋण प्रदान नहीं किया जाना चाहिये।

अवयस्क द्वारा बचत खाता निम्नलिखित तीन विधियों से खोला जा सकता है—

(1) स्वपरिचालित खाता (Self Operated Account)—इसमें अवयस्क स्वयं खाते का परिचालन कर सकता है। इसमें अवयस्क 10 वर्ष से अधिक आयु का होना चाहिये तथा वह पढ़ने-लिखने में सक्षम होना चाहिए। यह सुविधा अशिक्षित अवयस्क को प्रदान नहीं की जाती है, चूँकि वह खाता परिचालित करने योग्य नहीं समझा गया है। इसमें खाता खोलते समय अवयस्क का परिचय किसी खाता-धारी अथवा उसके स्कूल के प्रिंसीपल द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इस खाते में अवयस्क की जन्म तिथि (Date of Birth) खाते के ऊपर लिखी जाती है। इसमें बचत खाते का देय तिथि से पूर्व भुगतान अथवा उसके विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं किया जा सकता है।

इस खाते में अवयस्क को रुपया निकालने के लिये चैक बुक की सुविधा प्रदान की जाती है तथा अवयस्क तृतीय पक्षकार के हित में चैक जारी नहीं कर सकता है, चूँकि अवयस्क को अनुबन्ध करने के अयोग्य घोषित किया गया है। इसमें अवयस्क को निकासी पर्ची (Withdrawal) द्वारा रुपया निकालने की सुविधा प्राप्त नहीं होती है, चूँकि अवयस्क केवल विनिमय साध्य प्रपत्र लिख सकता है अथवा पृष्ठांकित कर सकता है। निकासी पर्ची को विनिमय साध्य प्रपत्र नहीं समझा जाता है। यह सुविधा केवल ग्राहकों को प्राप्त होती है तथा इसका परक्रामण मात्र सुपुर्दगी द्वारा सम्भव नहीं होता है अतः निकासी पर्ची विनिमय साध्य प्रपत्र नहीं है। यदि अवयस्क को निकासी पर्ची द्वारा रुपया निकालने की सुविधा प्रदान की जाती है तब इस पर्ची पर 20 पैसे के रसीदी टिकट की आवश्यकता होती है।

(2) सहज अभिभावक द्वारा परिचालित खाता (Account Operated by Natural Guardian)—इस स्थिति में अवयस्क की आयु 10 वर्ष से कम होने पर उसके खाते के परिचालन की सुविधा अवयस्क के सहज अभिभावक को होती है। हिन्दू अवयस्क की स्थिति में पिता (Father) को सहज अभिभावक समझा जाता है तथा पिता की मृत्यु के पश्चात् माता (Mother) को सहज अभिभावक समझा जाता है। इसके विपरीत, मुस्लिम अवयस्क की स्थिति में, पिता की मृत्यु के पश्चात् पिता द्वारा नियुक्त व्यक्ति अथवा पिता के पिता (Father of Father) को सहज अभिभावक समझा जाता है। सहज अभिभावक की मृत्यु के पश्चात् न्यायालय द्वारा अभिभावक की नियुक्ति की जाती है। अभिभावक की मृत्यु पर अवयस्क का खाता बन्द नहीं किया जाता है तथा खाते का रुपया अवयस्क के वयस्क होने पर अथवा न्यायालय द्वारा मनोनीत अभिभावक को भुगतान कर दिया जाता है।

इसके विपरीत, अवयस्क की मृत्यु की स्थिति में बैंक द्वारा अवयस्क का खाता तुरन्त बन्द करके उसका भुगतान अभिभावक को किया जाता है।

इस खाते में खाते का परिचालन सहज अभिभावक द्वारा किया जाता है और खाते पर अवयस्क की जन्मतिथि लिखी जाती है। अवयस्क द्वारा वयस्कता प्राप्त करने की तिथि में अभिभावक को खाता परिचालन का अधिकार नहीं होता है तथा अवयस्क के हस्ताक्षर अभिभावक अथवा अन्य खाताधारी द्वारा प्रमाणित (Attested) करवाये जाते हैं। इस तिथि के पश्चात् अवयस्क को खाता परिचालन का अधिकार प्राप्त होता है।

इसमें अभिभावक अवयस्क के लाभार्थ सावधि जमा रसीद के विरुद्ध ऋण प्राप्त कर सकता है अथवा सावधि जमा रसीद का देय तिथि से पूर्व भुगतान प्राप्त कर सकता है।

(3) अभिभावक के साथ संयुक्त खाता (Joint Account with Guardian)—इस स्थिति में, अवयस्क एवं उसके अभिभावक के साथ संयुक्त खाता खोला जा सकता है परन्तु खाते के परिचालन का अधिकार केवल अभिभावक को प्राप्त होता है। अवयस्क के वयस्क होने पर, उसके हस्ताक्षर अभिभावक द्वारा प्रमाणित करवाये जाते हैं तथा इस तिथि के पश्चात् खाता परिचालन के विषय में खाताधारियों से निर्देश प्राप्त किया जाता है कि खाता परिचालन का अधिकार संयुक्त होगा अथवा संयुक्त एवं पृथक।

अतः बैंक अवयस्क को विभिन्न प्रकार के खाते विविध रूपों में खोलने की सुविधायें प्रदान करते हैं।

अवयस्क को ऋण (Loan to Minor)—अवयस्क को उसकी आवश्यक आवश्यकताओं के लिये ऋण प्रदान किया जा सकता है जिसके लिये उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति उत्तरदायी होती है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि उपरोक्त ऋण के अतिरिक्त किसी अन्य ऋण के लिये अवयस्क की व्यक्तिगत सम्पत्ति उत्तरदायी नहीं होती है। अवयस्क की सम्पत्ति को गिरवी (Pledge) द्वारा उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता है। बैंकों को अवयस्क के नाम में जारी सावधि जमा रसीद (Fixed Deposit) के विरुद्ध केवल उसके लाभार्थ के लिये ऋण प्रदान करना चाहिये। यदि अवयस्क एवं किसी अन्य व्यक्ति के नाम में संयुक्त रूप में सावधि जमा रसीद जारी की गयी है तब संयुक्त रूप में लिये गये ऋण का अनुबन्ध व्यर्थ समझा जाता है।

अवयस्क के साथ किया गया अनुबन्ध प्रारम्भ से ही व्यर्थ होता है। यदि प्रतिभू द्वारा ऋण की गारन्टी दी जाती है तब प्रतिभू उत्तरदायी नहीं होता है, चूंकि देनदार एवं लेनदार के बीच वैध अनुबन्ध का अभाव होता है। परन्तु इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि क्षतिपूर्ति के अनुबन्ध (Indemnity Contract) में प्रतिभू का उत्तरदायित्व इस आधार पर समाप्त नहीं होता है कि लेनदार का अनुबन्ध व्यर्थ है। इसमें प्रतिभू लेनदार द्वारा त्रुटि करने पर पूर्ण उत्तरदायी होता है।

अवयस्क को विनिमय विपत्र अथवा चैक लिखने का अधिकार प्राप्त होता है परन्तु वह स्वयं को इनसे उत्तरदायी नहीं बनाता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि विपत्र के अन्य पक्षकार अपने दायित्व के लिये उत्तरदायी होते हैं, चूंकि विपत्र इस आधार पर व्यर्थ नहीं होता है कि वह अवयस्क द्वारा लिखा गया है। इसी प्रकार अवयस्क को किसी भी अनुबन्ध योग्य व्यक्ति का अभिकर्ता

(Agent) बनाया जा सकता है जिसके लिये प्रधान (Principal) पूर्ण रूप में उत्तरदायी होता है।

भारतीय साझेदारी अधिनियम 1932 (Indian Partnership Act, 1932) की धारा 30 के अनुसार, अवयस्क को फर्म में लाभ के लिये साझेदार बनाया जा सकता है परन्तु वह फर्म में ऋणों के लिये व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। वयस्कता प्राप्त करने के पश्चात् यदि अवयस्क साझेदार फर्म का साझेदार बना रहता है तब वह फर्म में प्रवेश तिथि से हुये समस्त लेन-देनों के प्रति उत्तरदायी ठहराया जायेगा। अतः इस स्थिति में बैंक को ऋण प्रदान करते समय विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिये।

पागल
(Lunatics)

भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, 1872 की धारा 11 के अनुसार पागल व्यक्ति को अनुबन्ध करने के लिये अयोग्य घोषित किया गया है। पागल व्यक्ति से आशय उस व्यक्ति से है जो अपने द्वारा किये कार्य से पड़ने वाले प्रभाव को समझने में असमर्थ है तथा अपने हित के लिये उचित निर्णय लेने में अक्षम है। बैंक स्थायी रूप से पागल व्यक्ति का खाता नहीं खोलता है। परन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे पाये जाते हैं जिन्हें कभी-कभी पागलपन के दौरे पड़ते हैं। इस स्थिति में, बैंक व्यक्ति का खाता खोल सकता है। परन्तु, बैंक को विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखनी पड़ती हैं। बैंक को व्यक्ति के पागल होने की सूचना प्राप्त होने पर खाते का परिचालन बन्द कर देना चाहिये। यदि बैंक को व्यक्ति के पागल होने की सूचना प्राप्त नहीं है तब बैंक को सामान्य ग्राहक समझकर खाते से लेन-देन करना चाहिये चूंकि व्यक्ति द्वारा पागलपन के दौरान जारी किये गये चैक उस समय तक नहीं रोके जा सकते हैं जब तक कि इस सम्बन्ध में बैंक को कोई प्रमाण-पत्र प्राप्त न हो जाये। यदि ग्राहक द्वारा इसके विपरीत बात कही जाती है अर्थात् चैक का भुगतान होने पर ग्राहक यह तथ्य प्रगट करता है कि चैक पागलपन की अवधि में जारी किया गया है तथा बैंक को इसकी जानकारी प्राप्त थी तब यह साबित करने का दायित्व ग्राहक पर होगा। अतः बैंक को ग्राहक के पागल होने की सूचना प्राप्त होने से पूर्व खाते का परिचालन जारी रखना चाहिये। ग्राहक के पागल होने पर उसके द्वारा नियुक्त अभिकर्त्ता के अधिकार समाप्त हो जाते हैं। यदि ग्राहक का पागलपन स्थायी है तब बैंक को ग्राहक के खाते का रुपया उसके विधिक उत्तराधिकारियों को प्रदान करना चाहिये। इसके विपरीत, यदि ग्राहक स्वयं को सही मानसिक स्थिति में बतलाता है तब इस आशय का प्रमाण-पत्र दो चिकित्साधिकारियों (Medical Officers) द्वारा जारी किया हुआ प्राप्त करना चाहिये। इसके पश्चात् बैंक ग्राहक को खाते के परिचालन की अनुमति प्रदान कर सकता है।

बैंकों को ऐसे व्यक्तियों के खाते में ऋण प्रदान नहीं करने चाहियें चूंकि सामान्य स्थिति में दिये गये ऋण वसूली योग्य हैं परन्तु बैंक को यह साबित करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा कि ग्राहक को ऋण सामान्य अवधि के दौरान दिया गया है।

शराबी
(Drunker)

भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, 1872 की धारा 11 के अनुसार शराबी व्यक्ति को अनुबन्ध करने के अयोग्य घोषित किया गया है, चूंकि शराबी व्यक्ति नशे की हालत में स्वस्थ मस्तिष्क का नहीं होता है जिससे उसे अनुबन्ध से पड़ने वाले प्रभावों का ज्ञान नहीं हो पाता है। अतः शराबी व्यक्ति द्वारा किया गया अनुबन्ध व्यर्थ समझा जाता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि शराबी व्यक्ति द्वारा किया गया अनुबन्ध उसी स्थिति में व्यर्थ होता है जब शराबी व्यक्ति यह साबित करता है कि उसने अनुबन्ध नशे की हालत में किया है। अतः इसमें साबित करने का भार (Onus) शराबी व्यक्ति पर होता है। शराबी व्यक्ति द्वारा लिखे गये अथवा परक्रामित (Negotiate) किये गये विनिमय विपत्र अथवा चैक द्वारा शराबी व्यक्ति को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। परन्तु यदि ये परक्राम्य प्रपत्र (Negotiable Instruments) किसी यथाविधिधारी को मूल्य के बदले हस्तान्तरित कर दिये गये हैं तब शराबी व्यक्ति यथाविधिधारी के अधिकारों को समाप्त नहीं कर सकता है। शराबी व्यक्ति को खाते से रुपया भुगतान करते समय भुगतान की गवाही (Witness) प्राप्त करना चाहिये। बैंक द्वारा शराबी व्यक्ति को ऋण प्रदान करते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिये तथा ऋण के प्रपत्र भरवाते समय ध्यान में रखना चाहिये कि वह नशे की स्थिति में नहीं है।

दिवालिया
(Insolvent)

दिवालिया व्यक्ति से अभिप्राय उस व्यक्ति से होता है जो अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ रहता है तथा उसकी सम्पत्ति न्यायालय के आदेशानुसार सरकारी प्रापक को सुपुर्द कर दी जाती है। सरकारी प्रापक उसकी सम्पत्ति की वसूली से उसके ऋणों का भुगतान करता है। दिवालिया होने के लिये न्यायालय में लेनदारों द्वारा अथवा ऋणी द्वारा स्वयं आवेदन किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि कोई भी फर्म, संस्था अथवा कम्पनी दिवालिया नहीं हो सकती है। इसमें केवल व्यक्ति ही दिवालिया घोषित [illegible] ... है। फर्म अथवा कम्पनी का समापन विधि (Law) द्वारा किया जाता [illegible] व्यक्ति को ऋण प्रदान नहीं करना चाहिए तथा [illegible] होने पर खाते से परिचालन रोक देना चाहिए।

एकल व्यापारी
(Sole Proprietor)

एकल व्यापारी से अभिप्राय उस व्यक्ति से होता है जो स्वयं व्यापार करता है तथा उस व्यापार से अर्जित लाभ अथवा हानि के लिये स्वयं उत्तरदायी होता है। बैंक एकल व्यापारी का खाता फर्म के नाम से अपनी पुस्तकों में खोल सकता है तथा एकल व्यापारी द्वारा खाते का परिचालन फर्म की ओर से किया जाता है। एकल व्यापारी को फर्म के नाम में ऋण दिया जा सकता है। ऋण प्रदान करते समय बैंक को एकल व्यापारी से इस आशय का घोषणा-पत्र प्राप्त करना चाहिये कि उसके व्यापार में अन्य कोई व्यक्ति साझेदार नहीं है। एकल व्यापारी अपने व्यवसाय से उत्पन्न समस्त कार्यों के लिये स्वयं उत्तरदायी होता है। बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण का भुगतान करने के लिये एकल व्यापारी व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी होता है।

विवाहित स्त्री
(Maried Woman)

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम (Indian Succession Act) के अन्तर्गत विवाहित स्त्रियों को पुरुषों के बराबर अधिकार प्रदान किये गये हैं। विवाहित स्त्रियों का खाता सामान्य ग्राहक के रूप में खोला जा सकता है। खाता खोलते समय बैंक को पत्नि के पति का नाम, व्यवसाय एवं पति के नियोक्ता (Employer) का नाम आवेदनपत्र पर प्राप्त करना चाहिये। इससे बैंक खाता पूर्ण सावधानी से खोला हुआ समझा जाता है तथा बैंक को विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत पूर्ण संरक्षण प्राप्त होता है। विवाहित स्त्रियाँ अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति गिरवी रख सकती हैं। बैंक द्वारा विवाहित स्त्रियों को ऋण प्रदान किया जा सकता है। विवाहित स्त्रियाँ अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति की सीमा तक ऋण के लिये उत्तरदायी होती हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि विवाहित स्त्री का पति अपनी पत्नि की आवश्यक आवश्यकताओं के लिए पूर्ण उत्तरदायी होता है। यदि बैंक द्वारा विवाहित स्त्री की आवश्यक आवश्यकताओं के लिये अथवा पति की सहमति से ऋण प्रदान किया गया है तब उसका पति उस ऋण की पूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है।

पर्दानशीन स्त्रियाँ (Pardanashin Women)—पर्दानशीन स्त्रियों से आशय उन स्त्रियों से समझा जाता है जो स्त्रियाँ समाज से पर्दा करती हैं और अज्ञात व्यक्ति (Unknown) के समक्ष प्रगट नहीं होती हैं। विधि के अन्तर्गत ऐसी स्त्रियों को पूर्ण संरक्षण दिया गया है और उनके साथ किये गये अनुबन्ध के सम्बन्ध में यह मान्यता है कि उनके द्वारा किया गया अनुबन्ध अनुचित प्रभाव एवं स्वतन्त्र सहमति के अभाव में किया गया है। पर्दानशीन स्त्रियों का खाता खोलते समय बैंक को विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिए तथा खाता केवल शिक्षित पर्दानशीन स्त्रियों का ही खोलना चाहिए। पर्दानशीन स्त्रियों के खाते में परिचय (Introduction)

प्राप्त करते समय बैंक को विशेष ध्यान देना चाहिए तथा परिचय देने वाले व्यक्ति की क्षमता (Worth) का मूल्यांकन करना चाहिए। पर्दानशीन स्त्रियों के खाते में केवल ख्याति प्राप्त ग्राहकों का ही परिचय प्राप्त करना चाहिये। बैंक पर्दानशीन स्त्रियों को ऋण प्रदान करते समय विशेष सावधानी रखते हैं, चूंकि इनके द्वारा किये गये अनुबन्ध की वैधता को साबित करने का दायित्व बैंक के ऊपर होता है कि अनुबन्ध के प्रभाव को पर्दानशीन स्त्री ने अच्छी प्रकार समझ लिया है और अनुबन्ध स्वतन्त्र सहमति से किया गया है। अतः बैंकों को पर्दानशीन स्त्रियों को ऋण प्रदान नहीं करना चाहिये।

अशिक्षित व्यक्ति
(Illiterate Person)

अशिक्षित व्यक्ति पढ़ने-लिखने में असमर्थ होता है। वह अपने हस्ताक्षर करने के स्थान पर बांये हाथ का अंगूठा लगाता है। यही निशान उसके नमूने के हस्ताक्षर के रूप में प्राप्त किया जाता है। खाता खोलते समय अशिक्षित व्यक्ति के तीन फोटो प्राप्त किये जाते हैं, जिनमें से एक फोटो लेजर पर, एक फोटो आवेदनपत्र पर तथा एक फोटो नमूने के कार्ड पर चिपकाया जाता है। अशिक्षित व्यक्ति को केवल बचत खाता अथवा सावधि जमा खाता खोलने की अनुमति प्रदान की जाती है तथा बचत खाते की स्थिति में अशिक्षित व्यक्ति को चैक बुक की सुविधा उपलब्ध नहीं होती है। अशिक्षित व्यक्ति को निकासी पर्ची की सहायता से रुपया निकालने का अधिकार प्राप्त होता है। चूंकि उसे भुगतान प्राप्त करते समय बैंक में उपस्थित होना अनिवार्य होता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि अशिक्षित व्यक्ति को चालू खाता खोलने की अनुमति प्राप्त नहीं होती है चूंकि चालू खाते पर केवल चैक बुक की सुविधा उपलब्ध होती है। अशिक्षित व्यक्ति के अंगूठा न होने की स्थिति में संव्यवहार होने का पुष्टिकरण मजिस्ट्रेट द्वारा करवाया जाता है।

अशिक्षित व्यक्ति को ऋण प्रदान करते समय भी उसका फोटो (Photo) लेना आवश्यक होता है तथा यह फोटो ऋण के आवेदन-पत्र पर चिपकाया जाता है। ऋण प्रदान करते समय समस्त प्रपत्र अशिक्षित व्यक्ति को पढ़कर सुनाये जाते हैं तथा इसके पश्चात् उसका अंगूठे का निशान प्रपत्रों पर प्राप्त किया जाता है। अशिक्षित व्यक्ति के अंगूठे का निशान बैंक अधिकारी द्वारा प्रमाणित किया जाता है कि यह निशान अमुक व्यक्ति का है।

संयुक्त खाता
(Joint Account)

बैंक में खाता खोलने के सम्बन्ध में ग्राहकों को यह अधिकार दिया गया है कि दो या दो से अधिक व्यक्ति संयुक्त रूप से खाता खोल ... से खाते के परिचालन का अधिकार समस्त खाताधारियों ...

...ही होता है। बैंक द्वारा संयुक्त व्यक्तियों को ऋण प्रदान किया जा सकता है। ...क्ति किसी फर्म के साझेदार, निष्पादक या ट्रस्टी नहीं होते हैं। संयुक्त खाते की ...ति में बैंक निम्नलिखित सावधानियां ध्यान में रखता है—

(1) प्रारम्भिक कार्यवाही (Primary Procedure)—खाता खोलते समय ...मस्त व्यक्तियों के हस्ताक्षर प्राप्त किये जाने चाहियें तथा समस्त खाताधारियों का ...ाम सभी प्रपत्रों पर लिखा जाना चाहिए।

(2) खाते के परिचालन (Operation of Account)—इस विषय में बैंक को स्पष्ट निर्देश प्राप्त करना चाहिए कि किन-किन व्यक्तियों को खाता परिचालन का अधिकार प्रदान किया गया है। यह निर्देश समस्त खाताधारियों से प्राप्त किया जाना चाहिये कि खाता समस्त खाताधारियों द्वारा परिचालित किया जायेगा अथवा किसी भी खाताधारी द्वारा या जीवित बचने वाले खाताधारी द्वारा (Either or Survivor)। प्राप्त किये गये निर्देश के अनुसार यह निर्देश समस्त प्रपत्रों एवं खाते के ऊपर लिखा जाना चाहिये जिससे भविष्य में खाते का परिचालन निर्देशानुसार किया जा सके।

(3) अभिकर्त्ता की नियुक्ति (Appointment of Agent)—खाते परिचालन के लिये अधिकृत व्यक्ति, सब खाताधारियों की सहमति के अभाव में, अभिकर्त्ता की नियुक्ति नहीं कर सकता है।

(4) चैक का भुगतान रोकना (Stop Payment of Cheque)—कोई भी खाताधारी खाते से किसी भी चैक का भुगतान रोक सकता है जो अन्य खाताधारी द्वारा जारी किया गया है।

(5) ऋण प्राप्त करने का अधिकार (Powers to Take Loan)—संयु... खाते की स्थिति में ऋण प्राप्त करने के अधिकारों के सम्बन्ध में बैंक को स्प... आदेश प्राप्त करना चाहिये कि ऋण के सम्बन्ध में खाताधारियों के दायित्व सं... हैं अथवा संयुक्त एवं पृथक। यदि खाताधारियों के दायित्व संयुक्त हैं तब ऋण... वसूली समस्त ऋणियों से संयुक्त रूप में की जा सकती है। परन्तु यदि ऋ... उत्तरदायित्व संयुक्त एवं पृथक रूप में वहन किया जाता है तब बैंक ऋण की... भी खाताधारी से कर सकता है। इस स्थिति में बैंक मृतक की सम्पत्ति ... ऋण की वसूली का अधिकार रखता है अर्थात् मृतक के उत्तरजीवियों ... Representatives) से ऋण की वसूली की जा सकती है। अतः बैंक को ऋ... लिखित निर्देश प्राप्त करना चाहिये कि उनके दायित्व संयुक्त एवं पृथक हैं।

(6) प्रतिभूतियों की सुपुर्दगी (Delivery of Securities)—ऋ... बैंक को स्पष्ट निर्देश प्राप्त करना चाहिये कि ऋण के लिये जमा प्र... सुपुर्दगी किस व्यक्ति को प्रदान की जायेगी अर्थात् सुपुर्दगी किसी एक नि... को की जायेगी अथवा किसी भी व्यक्ति को की जा सकती है।

(7) मृत्यु अथवा दिवालिया (Death or Insolvency)—सं...

स्थिति में यदि किसी खाताधारी की मृत्यु हो जाती है तब विपरीत अनुबन्ध के अभाव में बैंक खाते में जमा धन का भुगतान समस्त खाताधारियों को, मृतक के उत्तराधिकारियों को सम्मिलित करते हुये, किया जाता है। परन्तु, यदि बैंक को खाता खोलते समय निर्देश दिया गया था कि खाते का परिचालन किसी भी व्यक्ति द्वारा अथवा जीवित बचने वाले व्यक्ति द्वारा (Either or Survivor) किया जायेगा तब संयुक्त खाताधारी की मृत्यु पर शेष बचे हुये खाताधारियों को जमा धन का भुगतान कर दिया जायेगा। परन्तु यदि रुपया भुगतान करने से पूर्व, मृतक के उत्तराधिकारी इस सम्बन्ध में कोई दावा करते हैं तब बैंक को न्यायालय के आदेशानुसार खाते में जमा रकम का भुगतान करना चाहिए। बैंक द्वारा जीवित बचे हुये खाताधारियों को भुगतान करने पर जीवित बचे हुये खाताधारी (Survivors) मृतक के उत्तराधिकारियों के प्रति उत्तरदायी होते हैं चूंकि खाते में जमा रकम जीवित बचे हुये व्यक्तियों के हित में ट्रस्ट समझी जाती है और इस राशि पर मृतक के उत्तराधिकारियों का अधिकार होता है।

मृत्यु अथवा दिवालिया होने की स्थिति में बैंक को ऋण खाते का परिचालन रोक देना चाहिए जिससे मृतक अथवा दिवालिया व्यक्ति के उत्तरदायित्व का निर्धारण किया जा सके और उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति को संयुक्त ऋण के लिये उत्तरदायी बनाया जा सके। यदि मृत्यु अथवा दिवालिया होने की तिथि के पश्चात् ऋण खाते में कोई नया ऋण प्रदान किया जाता है तब मृतक अथवा दिवालिया व्यक्ति उस ऋण के लिये उत्तरदायी नहीं होता है। इसी प्रकार यदि ऋण खाता परिचालित रहता है तब उसमें जमा की गयी राशि मृतक अथवा दिवालिया व्यक्ति के दायित्व को कम करती है। क्लेटन विवाद (Clayton's Case) के अनुसार, स्पष्ट निर्देश के अभाव में भुगतान का नियोजन ऋण के क्रमानुसार किया जाता है अर्थात् प्रथम भुगतान की गयी राशि प्रथम ऋण के समायोजन में प्रयोग की जाती है। अतः मृत्यु या दिवालिया होने की स्थिति में बैंक खाते का परिचालन रोक देते हैं और बचे हुये खाताधारियों के नाम में नया खाता खोलते हैं।

अतः संयुक्त व्यक्तियों का खाता खोलते समय बैंक को विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

पति व पत्नि
(Husband and Wife)

बैंक द्वारा पति पत्नि का संयुक्त खाता खोला जा सकता है। खाता परिचालन के सम्बन्ध मे बैंक को स्पष्ट निर्देश प्राप्त करने चाहिये।

बैंक द्वारा पति पत्नि को संयुक्त रूप में ऋण प्रदान करते समय वे समस्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें जो संयुक्त खाते में ऋण प्रदान करते समय आवश्यक होती हैं। इसके लिये बैंक को संयुक्त एवं पृथक दायित्व ऋण प्रदान करना चाहिये जिसके परिणामस्वरूप बैंक पति व पत्नि की व्यक्तिगत सम्पत्ति से पृथक्-पृथक् रुपया वसूल करने का अधिकारी होता है। पति व पत्नि को ऋण प्रदान करते समय प्रदत्त प्रतिभूतियों के सम्बन्ध में स्पष्ट निर्देश प्राप्त करना चाहिये कि ऋण का

भुगतान होने पर प्रतिभूतियाँ किस व्यक्ति को देय होंगी। यदि प्रतिभूतियाँ किसी व्यक्ति की मृत्यु पर उत्तरजीवित व्यक्ति (Survivor) को प्रदान की जाती हैं तब बैंक शेष बचे जीवित व्यक्ति को प्रतिभूतियाँ प्रदान कर सकता है। परन्तु यदि मृतक के उत्तराधिकारियों द्वारा इस सम्बन्ध में कोई वाद प्रस्तुत किया जाता है तब बैंक को न्यायालय के आदेशानुसार प्रतिभूतियों की सुपुर्दगी करनी चाहिए। पति व पत्नि के संयुक्त खाते के सम्बन्ध में यह मान्यता है कि संयुक्त खाते का रुपया पति का होता है और उस पर मृतक की पत्नि का कोई अधिकार नहीं होता। इस निर्णय की पुष्टि मार्शल बनाम कर्टवैल नामक विवाद[1] में की गई है। अतः विपरीत साक्ष्य के अभाव में संयुक्त खाते का रुपया मृतक पति का समझा जाता है जिस पर मृतक के उत्तराधिकारियों का अधिकार होता है। अतः विवादास्पद परिस्थितियों में बैंक को न्यायालय के आदेशानुसार प्रतिभूतियों की सुपुर्दगी करनी चाहिये।

नेत्रहीन व्यक्ति
(Blind Person)

भारतीय अनुबन्ध अधिनियम 1872 के अन्तर्गत नेत्रहीन व्यक्ति को अनुबन्ध करने के अयोग्य घोषित नहीं किया गया है। बैंक को नेत्रहीन व्यक्ति का खाता खोलते समय निम्नलिखित विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहिये—

(1) नेत्रहीन व्यक्ति को खाता खोलते समय स्वयं बैंक में उपस्थित होना चाहिये तथा उसको केवल बचत खाता अथवा सावधि जमा खाता खोलने की अनुमति प्रदान की जानी चाहिये।

(2) नेत्रहीन व्यक्ति का खाता संयुक्त खाते (Joint Account) के रूप में खोला जा सकता है। जिसमें अन्य व्यक्ति विश्वसनीय होता है।

(3) नेत्रहीन व्यक्ति के तीन फोटो प्राप्त करने चाहिये जिसमें फोटो आवेदन पत्र, लेकर एवं नमूने के हस्ताक्षर वाले कार्ड पर चिपकाये जाते हैं।

(4) नेत्रहीन व्यक्ति के हस्ताक्षर (शिक्षित होने की स्थिति में) एवं बायें हाथ के अंगूठे का निशान नमूने के हस्ताक्षर के रूप में प्राप्त किये जाते हैं।

(5) बैंक को लेजर एवं नमूने के कार्ड पर अंकित करना चाहिये कि अमुक व्यक्ति नेत्रहीन है।

(6) नेत्रहीन व्यक्ति अपने खाते के परिचालन का अधिकार अन्य व्यक्ति को मैनडेट द्वारा प्रदान कर सकता है।

(7) नेत्रहीन व्यक्ति को शिक्षित होने की स्थिति में चैक बुक की सुविधा प्रदान की जा सकती है परन्तु नेत्रहीन व्यक्ति को तृतीय पक्षकार के हित में रेखांकित चैक (Cross Cheque) जारी करने चाहिये।

(8) नेत्रहीन व्यक्ति द्वारा चैक का स्वयं भुगतान प्राप्त करने की स्थिति में, उसे बैंक में उपस्थित होना चाहिये तथा भुगतान अन्य व्यक्ति की गवाही (Witness)

---

1. Marshall Vs. Curtwell.

के अधीन किया जाना चाहिये। नेत्रहीन व्यक्ति द्वारा रुपया जमा करते समय भी गवाही आवश्यक समझी जाती है।

अतः बैंक को नेत्रहीन व्यक्ति का खाता खोलते समय उपरोक्त समस्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

संयुक्त हिन्दू परिवार
(Joint Hindu Family)

संयुक्त हिन्दू परिवार से आशय ऐसे परिवार से है, जिसमें परिवार की सम्पत्ति एवं व्यापार संयुक्त रूप में होता है तथा यह सम्पत्ति एवं व्यापार पैतृक सम्पत्ति के रूप में प्राप्त होता है। इसमें व्यवसाय के परिचालन का अधिकार परिवार के कर्त्ता अथवा मुखिया को होता है। संयुक्त हिन्दू परिवार का खाता खोलते समय बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) व्यवसाय परिचालन (Business Operation)—संयुक्त परिवार के व्यवसाय का परिचालन कर्त्ता द्वारा किया जाता है। अतः कर्त्ता व्यवसाय परिचालन के लिये परिवार की सम्पत्ति पर ऋण प्राप्त करने का अधिकार है। अतः संयुक्त हिन्दू परिवार खाते के परिचालन का अधिकार कर्त्ता को प्राप्त होता है तथा कर्त्ता परिवार की ओर से (On behalf of H.U.F.) समस्त लेन-देन करता है। संयुक्त हिन्दू परिवार की मुख्य विशेषता यह होती है कि इसमें केवल पुरुष सदस्यों (Male Members) को सम्पत्ति में अधिकार प्राप्त होता है। खाता खोलते समम समस्त वयस्क सहभागियों के हस्ताक्षर प्रपत्रों पर प्राप्त करने चाहियें तथा अवयस्क की ओर से उसके अभिभावक को हस्ताक्षर करने चाहिए। खाता खोलने का आवेदन केवल कर्त्ता द्वारा भी किया जा सकता है।

(2) ऋण का उद्देश्य (Object of Loan)—कर्त्ता परिवार के सदस्यों की आवश्यकता की पूर्ति के लिये अथवा परिवार के हित के लिए सम्पत्ति गिरवी रख सकता है एवं ऋण प्राप्त कर सकता है। यदि कर्त्ता ने उपरोक्त उद्देश्य के अतिरिक्त अन्य किसी उद्देश्य के लिये ऋण प्राप्त किया है तब कर्त्ता ऋण की पूर्ति के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा। अतः बैंक को ऋण देते समय विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिए कि ऋण परिवार के सदस्यों के हित के लिये क्षमा दिया जाये।

(3) अवयस्क समांश सहभागी (Minor Co-parcener)—ऋण के समस्त प्रपत्रों पर परिवार के समस्त सहभागियों (Co-parceners) के हस्ताक्षर होने चाहियें अथवा समस्त सहभागियों की ओर से घोषणापत्र प्राप्त करना चाहिए कि अमुक व्यक्ति परिवार का कर्त्ता है और उसे ऋण लेने का अधिकार प्राप्त है। यदि संयुक्त हिन्दू परिवार में कोई अवयस्क समांश सहभागी है तब उसकी ओर से (On Behalf of) उसका अभिभावक प्रलेखों पर हस्ताक्षर करता है।

(4) उत्तरदायित्व की सीमा (Limit of Liability)—परिवार के कर्त्ता

द्वारा प्राप्त किए गए ऋण के लिए, परिवार के अन्य वयस्क समांश सहभागी (Adult Co-parcener) केवल परिवार में, अपने हित की सीमा तक उत्तरदायी होते हैं। परन्तु यदि उनके द्वारा व्यक्तिगत रूप में दायित्व स्वीकार किया गया है तब उनकी व्यक्तिगत सम्पत्ति भी वैंक ऋण के लिये उत्तरदायी समझी जाती है। अत: वैंक को ऋण का प्रतिज्ञा पत्र समस्त सहभागियों की व्यक्तिगत स्थिति में भी प्राप्त करना चाहिए।

(5) ऋण परिवार के व्यवसाय के लिये (Loan for Family Business)—वैंक को ऋण प्रदान करते समय यह सावधानी ध्यान में रखनी चाहिये कि ऋण परिवार के व्यवसाय के लिये प्रयोग किया जाये। इसके लिये वैंक को परिवार के सहभागियों से घोषणापत्र प्राप्त करना चाहिये कि ऋण परिवार के व्यवसाय के लिये प्राप्त किया गया है तथा वे संयुक्त एवं पृथक रूप में ऋण के भुगतान के लिये उत्तरदायी हैं तथा संयुक्त परिवार का व्यवसाय बन्द होने की स्थिति में अथवा परिवार का विभाजन होने पर इसकी सूचना वैंक को दी जायेगी। अवयस्क सहभागी की स्थिति में घोषणा-पत्र में उसका नाम तथा जन्म-तिथि भी लिखी होनी चाहिये। अवयस्क सहभागी के वयस्क होने पर उसके द्वारा ऋण का अनुमोदन किया जाना चाहिये।

अत: वैंक को संयुक्त हिन्दू परिवार की स्थिति में अनेक सावधानियाँ ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

अभिकर्त्ता
(Agent)

प्रत्येक व्यक्ति को अपना कार्य पूर्ण करने के लिये किसी भी व्यक्ति को अभिकर्त्ता के रूप में नियुक्त करने का अधिकार है। इसके अन्तर्गत जो व्यक्ति नियुक्ति करता है उसे मालिक (Principal) तथा जिसे नियुक्त किया जाता है उस व्यक्ति को अभिकर्त्ता (Agent) समझा जाता है। अभिकर्त्ता किसी एक व्यवहार के लिये अथवा समस्त व्यवहारों के लिये नियुक्त किये जा सकते हैं। मालिक द्वारा अभिकर्त्ता को कार्य को करने के लिये अधिकार लिखित अथवा मौखिक दिये जा सकते हैं। अभिकर्त्ता के रूप में किसी भी व्यक्ति को नियुक्त किया जा सकता है अर्थात् अवयस्क (Minor) को भी अभिकर्त्ता के रूप में मनोनीत किया जा सकता है। अभिकर्त्ता द्वारा सामान्य व्यवसाय अवधि में किये गये कार्यों के लिये प्रधान पूर्ण उत्तरदायी होता है। प्रधान की ओर से वैंक में अभिकर्त्ता द्वारा खाता खोला जा सकता है। इसके अन्तर्गत अभिकर्त्ता द्वारा समस्त लेन-देन प्रधान द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अन्तर्गत किये जायेंगे। ऋण सम्बन्धी सुविधायें प्राप्त करने के सम्बन्ध में अभिकर्त्ता को विशेष अधिकार प्रदान किये जाते हैं। वैंक द्वारा अभिकर्त्ता का खाता खोलते समय निम्नलिखित सावधानियाँ प्रयोग में लायी जानी चाहियें—

(1) मुख्तारनामा (Power of Attorny)—अभिकर्त्ता द्वारा ऋण प्राप्त

करते समय, अभिकर्त्ता को प्रदत्त शक्तियों के सम्बन्ध में बैंक को मुख्तारनामा प्राप्त करना चाहिये।

(2) लेन-देन मालिक की ओर से (Transaction on Behalf of Principal)—अभिकर्त्ता द्वारा समस्त लेन-देन मालिक के लिये किये जाने चाहियें।

(3) प्रधान की मृत्यु व दिवालिया होने पर (Death or Insolvency of Principal)—प्रधान के पागल, दिवालिया अथवा मृत्यु होने की दशा में बैंक खाते से परिचालन रोक देना चाहिये चूंकि उपरोक्त स्थिति में, प्राधिकरण अधिकार समाप्त समझे जाते हैं। इसके विपरीत, यदि ऐजेन्ट पागल हो जाता है, अथवा मर जाता है तब भविष्य के लिये प्राधिकरण अधिकार समाप्त समझे जाते हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य विशेष महत्वपूर्ण है कि अभिकर्त्ता के दिवालिया होने पर प्राधिकरण अनुबन्ध पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। अभिकरण अनुबन्ध की समाप्ति मालिक की मृत्यु, दिवालिया या पागल होने पर अथवा मालिक द्वारा प्रत्यक्ष रूप से समाप्त किये जाने अथवा अभिकर्त्ता की मृत्यु पर या अभिकर्त्ता द्वारा स्पष्ट निर्देश देने की स्थिति में होती है।

(4) ऋण का स्पष्ट लिखित अधिकार (Written Powers of Loan)—बैंकों को मुख्तारनामे का पूर्ण अध्ययन करना चाहिये तथा उसमें प्रदत्त शक्तियों के अन्तर्गत ही अभिकर्त्ता द्वारा कार्य किये जाने चाहियें। मुख्तारनामे में ऋण लेने का अधिकार स्पष्ट लिखित होना चाहिये तथा यदि अभिकर्त्ता द्वारा सम्पत्ति गिरवी रखकर ऋण लिया जाता है तब इस सम्बन्ध में स्पष्टतः शक्तियाँ प्रदत्त होनी चाहियें। बैंकों को मुख्तारनामे की प्रमाणित की हुई फोटो स्टेट कापी प्राप्त करनी चाहिये।

(5) व्यापारिक अभिकर्त्ता (Mercantile Agent)—माल के लिये अभिकर्त्ता द्वारा माल के प्राधीयन पर ऋण प्राप्त किया जा सकता है, परन्तु इसके लिये स्पष्ट अधिकार होना चाहिये। यदि बैंक द्वारा माल की जमानत के विरुद्ध ऋण सद्भाव में प्रदान किया गया है अर्थात् यह विश्वास रखते हुए दिया गया है कि अभिकर्त्ता को गिरवी रखने का अधिकार है तब बैंकों को ऋण वसूली के लिये प्रधान के विरुद्ध पूर्ण अधिकार प्राप्त है।

अतः अभिकर्त्ता का खाता खोलते समय बैंक को विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

स्थानीय प्राधिकारी
(Local Authorities)

स्थानीय प्राधिकारियों की स्थापना विधि के अन्तर्गत की जाती है। इनके समस्त अधिकार विधि द्वारा निश्चित किये जाते हैं। ये बैंक में खाता खोलने का अधिकार रखती हैं। खाता परिचालन का अधिकार स्थानीय प्राधिकारी द्वारा मनोनीत व्यक्ति को प्राप्त होता है। स्थानीय प्राधिकार शक्तियाँ अपनी संवैधानिक शक्तियों के अन्तर्गत ऋण प्राप्त कर सकती हैं। बैंकों द्वारा इनको ऋण प्रदान करते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिये कि ऋण की अधिकतम राशि कितनी हो सकती है

तथा इनके द्वारा प्रदत्त प्रतिभूतियां किस प्रकार की हो सकती हैं। ऋण प्राप्त करने से पूर्व स्थानीय प्राधिकरण शक्तियों को इस आशय का प्रस्ताव पारित करना आवश्यक होता है तथा यदि ऋण प्राप्त करने से पूर्व सरकार की पूर्वानुमति की आवश्यकता होती है तब यह अनुमति प्राप्त की जानी चाहिये और इस आशय का प्रस्ताव प्राप्त करना चाहिये कि सरकार की पूर्वानुमति प्राप्त कर ली गई है।

स्थानीय प्राधिकारी को ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक कानूनी सलाह प्राप्त करते हैं, चूंकि इनको ऋण प्रदान करने में अनेक तकनीकी एवं संवैधानिक समस्याओं का सामना करना करना पड़ता है।

क्लब व सोसाइटी
(Club and Society)

क्लब अथवा धार्मिक संस्थाओं से अभिप्राय उन संस्थाओं से होता है जो कला वाणिज्य, धर्म आदि का विकास करने के लिये स्थापित की जाती हैं। ये संस्थायें रजिस्टर्ड अथवा अनरजिस्टर्ड हो सकती हैं। बैंक को क्लब अथवा सोसाइटी का खाता खोलते समय उसके नियमों का ज्ञापन प्राप्त करना चाहिये। खाता खोलने से पूर्व संस्था द्वारा इस आशय का प्रस्ताव पारित किया जाना चाहिये जिसमें बैंक का नाम एवं खाता परिचालित करने वाले व्यक्तियों के नाम व हस्ताक्षर वर्णित होते हैं। यह प्रस्ताव संस्था के अध्यक्ष द्वारा प्रमाणित होता है। बैंक में खाता खोलने का प्रपत्र भी अध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिये। खाता परिचालित करते समय बैंक को विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिए कि संस्था के खाते से रुपया खाता परिचालित करने वाले व्यक्तियों के खातों में अंतरित न किया जाये।

क्लब, सोसाइटी अथवा अन्य धार्मिक संस्थाओं को साधारणतः बैंकों द्वारा ऋण प्रदान नहीं किया जाता है, परन्तु विशेष परिस्थितियों में बैंक निम्नलिखित सावधानियां ध्यान में रखते हुए ऋण प्रदान कर सकते हैं—

(1) रजिस्ट्रेशन (Registration)—क्लब अथवा सोसाइटी (Society) रजिस्टर्ड होने चाहियें। रजिस्टर्ड सोसाइटी अथवा क्लब के द्वारा उस पर वाद चलाया जा सकता है।

(2) ज्ञापन (Memorandum)—बैंक द्वारा ऋण देने से पूर्व बैंक को सोसाइटी के नियमों के सम्बन्ध में ज्ञापन प्राप्त करना चाहिये। इसी की सहायता से बैंक सोसायटी की ऋण लेने की शक्ति तथा सीमा का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ होते हैं।

(3) ऋण प्राप्त करने का अधिकार (Power to Take Loan)—सोसाइटी को बैंक से ऋण प्राप्त करने के अधिकार सोसाइटी के ज्ञापन में वर्णित होते हैं। बैंक द्वारा ऋण प्रदान किये जाने की स्थिति में बैंक को सोसाइटी की अधिकृत सीमा के अन्तर्गत ही ऋण प्रदान करना चाहिये। ऋण प्राप्त करने से पूर्व सोसाइटी द्वारा एक प्रस्ताव पास किया जाता है जिसमें ऋण की राशि, ऋण का उद्देश्य तथा सोसाइटी

द्वारा संस्था की सम्पत्ति को गिरवी रखने की विधि वर्णित होती है। सोसाइटी का उपरोक्त प्रस्ताव सोसाइटी के चेयरमैन द्वारा प्रमाणित होता है। बैंकों द्वारा ऋण प्रदान करते समय सोसाइटी के प्रबन्धकों की जमानत (Guarantee) भी प्राप्त करनी चाहिये जिससे वे ऋण के लिये व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी बनाये जा सकें। अतः क्लब व सोसाइटी का खाता खोलते समय बैंक को विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिये।

न्यास खाता
(Trust Account)

भारतीय ट्रस्ट अधिनियम, 1882 के अन्तर्गत ट्रस्ट से आशय ऐसे दायित्व से है जिसमें सम्पत्ति का प्रबन्ध किसी अन्य व्यक्ति के हाथों में दिया जाता है और सम्पत्ति का प्रयोग किसी अन्य व्यक्ति अथवा स्वामी एवं अन्य व्यक्ति के लाभ के लिये किया जाता है। जिस व्यक्ति को सम्पत्ति का प्रबन्ध सुपुर्द किया जाता है उसे न्यासी (Trustee) कहा जाता है। न्यासी के अधिकार एवं शक्तियाँ न्यास विलेख (Trust Deed) द्वारा प्रदत्त होती हैं। अत न्यासी को वर्णित अधिकार सीमाओं से बाहर कार्य करने की शक्तियाँ प्राप्त नहीं होती हैं। यदि ट्रस्ट विलेख के अन्तर्गत एक से अधिक न्यासी नियुक्त किये गये हैं तब बैंक को खाता परिचालन से पूर्व ट्रस्ट विलेख का अध्ययन करके ज्ञात करना चाहिये कि परिचालन का अधिकार किन व्यक्तियों को प्राप्त है।

ट्रस्ट निजी अथवा सार्वजनिक हो सकते हैं। ट्रस्ट का खाता खोलते समय बैंक को ट्रस्ट विलेख की मूल प्रति एवं खाता खोलने का प्रस्ताव प्राप्त करना चाहिए जिसमें बैंक का नाम तथा खाता परिचालित करने के लिये अधिकृत व्यक्तियों के नाम एवं हस्ताक्षर होते हैं। ट्रस्टी को अपने अधिकार पुनः सुपुर्द करने का अधिकार नहीं होता है। परन्तु ट्रस्ट विलेख में इस आशय का प्रावधान होने पर ट्रस्टी अपना अभिकर्त्ता नियुक्त कर सकता है। बैंक को ट्रस्ट का खाता खोलते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) न्यासी के अधिकार ट्रस्ट विलेख द्वारा परिभाषित होते हैं। अतः न्यासी को उन अधिकार सीमाओं से बाहर कार्य करने की शक्ति नहीं होती है। यदि ट्रस्ट विलेख के अन्तर्गत एक से अधिक न्यासी नियुक्त किये गये हैं तब बैंक को खाता परिचालन से पूर्व ट्रस्ट विलेख का अध्ययन करके ज्ञात करना चाहिये कि परिचालन का अधिकार किन व्यक्तियों को प्राप्त है।

(2) ट्रस्ट खाते की राशि का प्रयोग ट्रस्ट के उद्देश्यों के लिये किया जाना चाहिये तथा न्यासी द्वारा व्यक्तिगत हित के लिये खाते से रुपया निकालते समय अथवा बिल, चैक आदि का अपने पक्ष में पृष्ठांकन (Endorsement) करते समय बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिये।

(3) न्यासी की मृत्यु की स्थिति में ट्रस्ट खाते का संचालन

चाहिये। इस स्थिति में न्यास विलेख के अनुसार कार्य किया जाता है अर्थात् किसी नये न्यासी की नियुक्ति की जाती है अथवा संयुक्त न्यास खाते की स्थिति में शेष न्यासी को संचालन का अधिकार प्रदत्त किया जाता है।

(4) न्यासी के दिवालिया होने की स्थिति में न्यास खाते पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

(5) न्यासी के पागल होने की स्थिति में, न्यास खाते के सम्बन्ध में न्यासी की मृत्यु की दशा में किये गये नियमों का पालन करना चाहिये तथा न्यास विलेख के प्रावधानों के आधार पर कार्य करना चाहिये।

(6) ट्रस्ट खाते पर ऋण प्रदान करते समय बैंक को उसी सीमा तक ऋण प्रदान करना चाहिये जिस सीमा तक ट्रस्ट विलेख में यह अधिकार प्रदान किया गया है तथा ऋण की राशि का प्रयोग ट्रस्ट के उद्देश्यों के लिये किया जाना चाहिए।

ट्रस्ट विलेख में ऋण लेने का अधिकार प्रत्यक्षतः लिखित होना चाहिये तथा न्यासी को ट्रस्ट की सम्पत्ति बन्धक अथवा गिरवी रखने के लिये स्पष्ट अधिकार प्रदान किये जाने चाहियें। बैंक को ऋण प्रदान करने से पूर्व ट्रस्टी की जमानत प्राप्त करनी चाहिये तथा ट्रस्ट विलेख में ऋण प्राप्त करने के अधिकार न होने की स्थिति में बैंक ट्रस्टी की व्यक्तिगत जमानत पर ऋण प्रदान कर सकते हैं। बैंकों को ऋण प्रदान करने से पूर्व ट्रस्ट विलेख का गहन अध्ययन करना चाहिये तथा इसके लिये कानूनी सलाह प्राप्त करने के पश्चात् ही ऋण प्रदत्त करना चाहिये। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि बैंक ट्रस्ट को ऋण प्रदान करने में अनेक कठिनाइयाँ अनुभव करते है जिससे बैंक केवल उन्हीं ट्रस्टों को ऋण प्रदान करते हैं जिनके ट्रस्टी ख्याति प्राप्त व्यक्ति हैं तथा ऋण व्यक्तिगत जमानत के आधार पर प्रदान किया जाता है। ट्रस्टी की सम्पत्ति पर प्रभार उत्पन्न किया जा सकता है। ऋण प्राप्त करते समय ट्रस्टी को ट्रस्ट की ओर से प्रलेखों पर हस्ताक्षर करने चाहियें।

अतः बैंकों को खाता खोलते समय उपरोक्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

प्रशासक एवं निष्पादक
(Administrator and Executor)

निष्पादन से आशय ऐसे व्यक्ति से है जो मृतक की सम्पत्ति का, मृतक के निर्देशों के अधीन प्रबन्ध करता है। निष्पादक मृतक द्वारा वसीयत के माध्यम से मनोनीत किया जाता है। निष्पादन के कार्य मृतक की मृत्यु के उपरान्त प्रारम्भ होते हैं। इसके विपरीत, यदि मृतक द्वारा वसीयत में निष्पादक नियुक्त नहीं किया गया है तब मृतक की सम्पत्ति के प्रबन्ध के लिये न्यायालय (Court) द्वारा प्रशासक नियुक्त किया जाता है। प्रशासकों के अधिकार न्यायालय के आदेशानुसार निर्धारित होते हैं। बैंक खाते की स्थिति में निष्पादक एवं प्रशासक की नियुक्ति के सम्बन्ध में बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(i) निष्पादक की नियुक्ति की स्थिति में निष्पादक द्वारा खाता चालू करने से पूर्व बैंक को न्यायालय द्वारा जारी किया गया सम्प्रमाण अथवा प्रोबेट (Probate) प्राप्त करना चाहिये। सम्प्रमाण के अन्तर्गत मृतक की सम्पत्ति, निष्पादक के अधिकार, वसीयत की तिथि तथा सम्प्रमाण प्रस्तुत करने वाले का नाम एवं न्यायालय का नाम सम्मिलित होता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य विशेष महत्वपूर्ण है कि वसीयत मृतक की अन्तिम वसीयत होनी चाहिये तथा मृत्यु की सूचना प्राप्त होते ही बैंक को मृतक के खाते से परिचालन रोक देना चाहिये तथा निष्पादक नियुक्त होने पर मृतक के खाते को निम्नलिखित शीर्षक देना चाहिये—

'मृतक अ के निष्पादक अथवा प्रशासक ब'

(ii) यदि मृतक की वसीयत के अनुसार निष्पादक की नियुक्ति नहीं की गयी है तब न्यायालय द्वारा नियुक्त प्रशासक मृतक के बैंक खाते का परिचालन करते हैं। इनके अधिकार न्यायालय के आदेशानुसार निर्धारित होते हैं।

(iii) निष्पादक अथवा प्रशासक की मृत्यु की दशा में वसीयत के अनुसार कार्यवाही की जाती है। यदि एक से अधिक निष्पादक हैं तब वसीयत में प्रावधान होने पर शेष निष्पादकों को खाता संचालन का अधिकार प्राप्त हो जाता है। यदि एकल निष्पादक अथवा प्रशासक (Sole Executor or Administrator) की नियुक्ति की गयी है तब मृत्यु की दशा में, नये प्रशासक की नियुक्ति की जायेगी।

(iv) निष्पादक अथवा प्रशासक के दिवालिया होने की स्थिति में निष्पादक खाते पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

(v) साधारणतः बैंकों द्वारा निष्पादक एवं प्रशासक को ऋण प्रदान नहीं किया जाता है। निष्पादक अथवा प्रशासक को मृतक की वसीयत अथवा न्यायालय के सम्प्रामण द्वारा ऋण प्राप्त करने का अधिकार प्रदान किया जा सकता है जिसमें निष्पादक अथवा प्रशासक को मृतक की सम्पत्ति के विरुद्ध ऋण प्रदान किया जा सकता है। सम्प्रामण अथवा प्रोबेट (Probate) प्राप्त होने से पूर्व प्रशासक को उसकी व्यक्तिगत जमानत पर मृतक की अन्तिम क्रियाकर्म अथवा सम्प्रामण प्राप्त करने के लिये बैंक द्वारा ऋण प्रदान किया जा सकता है। यदि वसीयत अथवा न्यायालय द्वारा एक से अधिक निष्पादक अथवा प्रशासक नियुक्त किये गये हैं तब समस्त निष्पादकों अथवा प्रशासकों को संयुक्त एवं व्यक्तिगत जमानत पर ऋण प्रदान किया जाता है। मृतक की सम्पत्ति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंकों द्वारा समस्त निष्पादकों की सहमति प्रदान की जाती है तथा ऋण के प्रपत्रों पर सब व्यक्तियों के हस्ताक्षर प्राप्त किये जाते हैं। परन्तु बैंकों द्वारा निष्पादक अथवा प्रशासक को सामान्यतः ऋण प्रदान नहीं किया जाता है।

साझेदारी फर्म
(Partnership Firm)

साझेदारी फर्म से आशय ऐसी संस्था से है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति मिलजुल कर व्यापार करने का अनुबन्ध करते हैं तथा व्यापार से उत्पन्न लाभ आपस में वितरित करते हैं।[1] बैंक में खाता खोलते समय फर्म का रजिस्टर्ड होना अनिवार्य है चूंकि अनरजिस्टर्ड फर्म किसी भी व्यक्ति पर वाद प्रस्तुत नहीं कर सकती है। साझेदारी फर्म व्यक्तियों का समूह होती है जिसमें सदस्यों की संख्या 2 से लेकर 20 तक सीमित होती है। यह संख्या बैंकिंग कम्पनी की स्थिति में 10 तक सीमित होती है। यह प्रतिबन्ध कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 11 के अन्तर्गत लगाया गया है। फर्म का साझेदारों से पृथक् कोई आस्तित्व नहीं होता है। फर्म में अवयस्क को केवल लाभ के लिये साझेदार बनाया जा सकता है परन्तु वह फर्म के एजेन्ट के रूप में कार्य करने के लिये अधिकृत नहीं होता है। अवयस्क साझेदार समस्त साझेदारों की सहमति से बैंक खाते का परिचालन कर सकता है चूंकि अवयस्क को अभिकर्त्ता के रूप में नियुक्त किया जा सकता है। साझेदारी फर्म किसी अन्य साझेदारी फर्म में साझेदार नहीं हो सकती है चूंकि फर्म का स्वयं का विधिक अस्तित्व नहीं होता है। परन्तु कम्पनी अथवा संयुक्त हिन्दू परिवार की स्थिति में ये साझेदारी फर्म में सम्मिलित किये जा सकते हैं। कम्पनी की स्थिति में साझेदारी फर्म में सदस्यों की संख्या कम्पनी के लिये केवल एक समझी जायेगी। इसके विपरीत, संयुक्त हिन्दू परिवार को फर्म में सदस्य बनाने पर परिवार के समस्त वयस्क सदस्यों को फर्म का साझेदार समझा जायेगा।

संयुक्त हिन्दू परिवार का फर्म में परिवार की सम्पत्ति तक दायित्व सीमित होता है। यदि फर्म में कम्पनी को सदस्य बनाया गया है तब फर्म का दायित्व असीमित होता है परन्तु कम्पनी के सदस्यों का दायित्व फर्म के दायित्व के लिये कम्पनी के अंशों (Shares) तक सीमित होता है।

साझेदारी फर्म में अशिक्षित व्यक्ति (Illiterate Person) को फर्म का साझेदार बनाया जा सकता है परन्तु उसे फर्म का खाता परिचालित करने का अधिकार प्रदान नहीं करना चाहिए चूंकि फर्म का खाता चालू खाता खोला जाता है जिसमें चैक बुक की सुविधा उपलब्ध होती है। अशिक्षित व्यक्ति तृतीय पक्षकार को चैक जारी नहीं कर सकता है चूंकि भुगतान प्राप्त करते समय उसका बैंक में प्रस्तुत होना अनिवार्य होता है। बैंक अधिकारी की उपस्थिति में अशिक्षित व्यक्ति के अंगूठे के निशान को प्रमाणित किया जाता है। अतः अशिक्षित व्यक्ति को खाता परिचालित करने की अनुमति प्रदान नहीं की जानी चाहिए। बैंक साझेदारी फर्म के साथ व्यवहार करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखता है—

---

1. Partnership is the relationship between the persons who have agreed to share the profits of the business carried on by all or any one of them acting for all.
—Sec. 4, Indian Partnership Act.

(1) आवेदन (Application)—खाता खोलने के लिये बैंक को आवेदन किया जाना चाहिए। आवेदन पत्र पर समस्त साझेदारों के हस्ताक्षर होने चाहियें तथा समस्त साझेदारों से नमूने के हस्ताक्षर लिये जाने चाहियें।

(2) साझेदारी विलेख (Partnership Deed)—बैंक खाता खोलते समय साझेदारी विलेख (Partnership Deed) प्राप्त करता है। इसकी सहायता से बैंक फर्म का नाम, पता, साझेदारों के नाम व पते एवं फर्म में साझेदारों की संख्या के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करता है। साझेदारी विलेख की सहायता से ही बैंक यह जानकारी प्राप्त करने में समर्थ होता है कि खाते के परिचालन का अधिकार किन व्यक्तियों को प्राप्त है।

(3) खाता परिचालन का अधिकार (Power of Account Operation)—साझेदारी फर्म के खाते के परिचालन का अधिकार किसी एक साझेदार द्वारा खण्डित किया जा सकता है। इस आशय के लिये वह साझेदार बैंक को लिखित सूचना देगा कि अमुक साझेदार को खाता परिचालन का अधिकार नहीं है। इस सूचना की प्राप्ति के पश्चात् बैंक अमुक साझेदार द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान रोक देता है।

(4) अभिकर्त्ता की नियुक्ति (Appointment of Agent)—खाता परिचालन का अधिकार रखने वाले साझेदार को अपना अभिकर्ता नियुक्त करने का अधिकार नहीं है। कोई भी अभिकर्त्ता समस्त साझेदारों की सहमति से ही नियुक्त किया जाता है।

(5) हित में पृष्ठांकन (Endorsement in Favour)—यदि फर्म के नाम का चैक साझेदार द्वारा अपने हित में पृष्ठांकित किया गया है अथवा फर्म के खाते से अपने हित के लिये रुपया निकाला गया है तब बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिए।

(6) गर्भित अधिकार (Implied Authority)—इसके सम्बन्ध में बैंक को विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है। गर्भित अधिकारों से आशय उन अधिकारों से है जिनको स्पष्ट रूप में साझेदारों में निहित नहीं किया गया। परन्तु उन्हें कुछ कार्य फर्म के हित में करने का अधिकार सुरक्षित किया गया है। साझेदारी अधिनियम की धारा 19 (2) के अन्तर्गत साझेदारों के गर्भित अधिकारों का वर्णन किया गया है जिसके अनुसार कोई भी साझेदार फर्म की ओर से बैंक खाता खोलने, फर्म की सम्पत्ति पर ऋण लेने, फर्म के ऊपर चल रहे विवाद में दायित्व स्वीकार करने, किसी अन्य साझेदारी में फर्म की ओर से प्रवेश करने का अधिकार नहीं रखता है। उपरोक्त कार्य करने का अधिकार स्पष्ट रूप से घोषित किया जाना चाहिए। परन्तु उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त साझेदार वे समस्त कार्य करने का अधिकार रखते हैं जो फर्म के हित में हैं, फर्म के व्यवसाय के अनुकूल किये गये हैं तथा फर्म को

ये गये हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य विशेष महत्वपूर्ण है कि कार्य फर्म की ओर
किया जाना चाहिये। इस निर्णय की पुष्टि अब्बास ब्रादर्स वनाम चेतन दास फतेह
व अन्य नामक विवाद[1] में की गई। कोई कार्य फर्म की ओर से किया गया उसी
ति में समझा जायेगा जबकि उसमें फर्म का नाम सम्मिलित किया जाये और साझे-
र अपने हस्ताक्षर, फर्म की ओर (On Behalf of) से करता है।

(7) **साझेदार की मृत्यु पर** (On Death of Partner)—इस स्थिति में, विपरीत अनुवन्ध के अभाव में, फर्म विघटित (Dissolved) समझी जाती है। मृत्यु की सूचना मिलते ही वैंक को फर्म का खाता वन्द कर देना चाहिये जिससे मृतक के उत्तराधिकारियों का दायित्व निश्चित किया जा सके। ऋण खाते की दशा में खाता वन्द करना अनिवार्य समझा जाता है जिससे मृतक का उत्तरदायित्व निर्धारित किया जा सके। यदि फर्म विघटित नहीं होती है अर्थात् शेप साझेदार व्यवसाय चालू रखते हैं तव वैंक को फर्म का नया खाता खोलना चाहिये।

इसी प्रकार यदि कोई साझेदार फर्म से निवृत्त (Retire) होता है तव निवृत्ति की स्थिति के वाद, फर्म द्वारा किये गये व्यवहारों के लिये, निवृत्त होने वाला साझेदार उत्तरदायी नहीं होता है। परन्तु इसके लिये आवश्यक है कि निवृत्ति की **सूचना** प्रकाशित की जा चुकी हो। यदि कोई व्यक्ति इस तथ्य का ज्ञान न रखते हुए, फर्म से कोई व्यवहार करता है तथा निवृत्त होने वाला साझेदार इसका विरोध नहीं करता है तव वह साझेदार उत्तरदायी समझा जायेगा। अतः यदि निवृत्ति के समय वैंक खाता ऋण प्रगट करता है तव वैंक को यह खाता वन्द कर देना चाहिये जिससे निवृत्त साझेदार का दायित्व निर्धारित किया जा सके।

(8) **साझेदार के दिवालिया होने पर** (On Insolvency of Partner)—साझेदार को दिवालिया घोषित किये जाने की तिथि से फर्म विघटित समझी जाती है तथा वैंक को फर्म के खाते का संचालन रोक देना चाहिए जिससे दिवालिया साझे-दार का दायित्व निर्धारित किया जा सके। दिवालिया घोषित किये जाने की तिथि के पश्चात्, फर्म द्वारा किये गये व्यवहारों के लिये, दिवालिया साझेदार उत्तरदायी न
होता है।

(9) **फर्म को ऋण** (Loan to Firm)—वैंक द्वारा फर्म को ऋण प्र
करते समय अनेक सावधानियां ध्यान में रखनी पड़ती हैं। ऋण के प्रपत्र प्राप्त
समय वैंक को साझेदारों के हस्ताक्षर फर्म की ओर से प्राप्त करने चाहियें तथा
द्वारा व्यक्तिगत रूप में भी ऋण का दायित्व स्वीकार किया जाना चाहिए
साझेदारों का संयुक्त एवं पृथक दायित्व वन जाता है। इस स्थिति में वैंक अप
की वसूली फर्म की सम्पत्ति तथा साझेदारों की व्यक्तिगत सम्पत्ति से एक स
सकता है। इस अनुवन्ध के अभाव में साझेदारों की व्यक्तिगत सम्पत्ति से

Abbass Brothers Vs. Chetan Das Fateh Chand and others.

की वसूली साझेदारों के व्यक्तिगत ऋणों का भुगतान करने के पश्चात् ही की जा सकती है। फर्म की ओर से किसी ऋण की जमानत (Guarantee) दिये जाने की स्थिति में समस्त साझेदारों के हस्ताक्षर आवश्यक होते हैं चूंकि यह कार्य साझेदारों के गर्भित अधिकारों में सम्मिलित नहीं होता है। परन्तु यदि साझेदारी फर्म का मुख्य व्यवसाय ऋण स्वीकार करना एवं ऋण प्रदान करना है तब समस्त साझेदारों के हस्ताक्षर आवश्यक नहीं होते हैं। बैंक द्वारा ऋण प्रदान करते समय यदि हक विलेख की जमानत के विरुद्ध (Against Deposit of Title Deed) ऋण प्रदान किया जा रहा है तब सम्यक बन्धक का निर्माण करने के उद्देश्य से समस्त साझेदारों के हस्ताक्षर होने अनिवार्य होते हैं।

अत: बैंक द्वारा रजिस्टर्ड फर्म को समस्त साझेदारों की सहमति से ऋण प्रदान करते समय बैंक को प्रतिज्ञा पत्र साझेदारों द्वारा फर्म की ओर से तथा उनकी व्यक्तिगत स्थिति में निष्पादित किया जाना चाहिए।

(10) नये साझेदार का प्रवेश (Admission of New Partner)—फर्म में नये साझेदार के प्रवेश पर बैंक को समस्त साझेदारों से (नये साझेदार सहित) मैनडेट (Mandate) अथवा अधिदेश प्राप्त करना चाहिए जिसमें फर्म के खाते में भविष्य के लिये लेनदेनों के सम्बन्ध में निर्देश दिया जाता है। नया साझेदार प्रवेश की तिथि के पश्चात्, विपरीत अनुबन्ध के अभाव में, फर्म द्वारा किये गये व्यवहारों के लिये उत्तरदायी होता है। अवयस्क द्वारा वयस्क साझेदार के रूप में फर्म में प्रवेश करने पर बैंक को अपने लेखों में वयस्कता प्राप्त करने की तिथि वर्णित करनी चाहिए तथा समस्त साझेदारों से खाता खोलने का प्रपत्र निष्पादित करवाना चाहिए।

साझेदारी फर्म के संविधान अथवा गठन (Constitution) में परिवर्तन होने की स्थिति में फर्म द्वारा प्रदत्त चल प्रत्याभूति (Continuing Guarantee) परिवर्तन की तिथि से समाप्त समझी जाती है।

अत: बैंक को साझेदारी फर्म का खाता खोलते समय उपरोक्त समस्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

कम्पनी
(Company)

संयुक्त पूँजी कम्पनी से आशय उस कृत्रिम व्यक्ति से है जिसका निर्माण विधि के अन्तर्गत हुआ है तथा इसका स्वतन्त्र अस्तित्व होता है और इसमें शाश्वत उत्तराधिकार पाया जाता है।[1] कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 3 (i) व (ii) के अनुसार, "कम्पनी से आशय इस अधिनियम के अधीन निर्मित तथा पंजीकृत हुई कम्पनी से अथवा किसी ऐसी विद्यमान कम्पनी से है जिसका गठन तथा पंजीकरण

1. Company is an artificial person created by law having a separate entity with a perpetual succession and common seal. —Prof Hane

किसी पूर्व कम्पनी विधि के अन्तर्गत हो चुका है।"[1] अतः कम्पनी से अभिप्राय विधिक व्यक्ति से होता है जिसका अस्तित्व कम्पनी के सदस्यों के अस्तित्व से पृथक होता है। कम्पनी का उत्तरदायित्व सीमित होता है परन्तु इसमें शाश्वत उत्तराधिकार (Perpetual Succession) पाया जाता है। अतः कम्पनी का समापन विधि के अन्तर्गत ही होता है। किसी सदस्य के आने अथवा जाने का कम्पनी के अस्तित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। कम्पनी का कार्यभार कम्पनी का संचालक मण्डल सम्भालता है। कम्पनी का कार्य, पूंजी एवं अधिकार क्षेत्र का निर्धारण कम्पनी के पार्षद सीमा नियम द्वारा तय किया जाता है। बैंक में व्यापारी अथवा गैर व्यापारी कम्पनी का चालू खाता (Current Account) खोला जा सकता है। बैंक को कम्पनी के साथ व्यवहार करते समय **निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी** चाहियें—

(1) प्रपत्र प्राप्त करना (Obtain Documents)– बैंक कम्पनी का **पार्षद सीमा नियम** (Memorandum of Association), **पार्षद अन्तर्नियम** (Article of Association), **प्रथम संचालकों की सूची** तथा **व्यापार प्रारम्भ का प्रपत्र** (Certificate of Commencement of Business) प्राप्त करता है। निजी कम्पनी की स्थिति में व्यापार प्रारम्भ का प्रपत्र आवश्यक नहीं होता है। निजी कम्पनी समामेलन का प्रमाण-पत्र (Letter of Incorporation) प्रस्तुत करती है। इन्हीं प्रपत्रों की सहायता से बैंक कम्पनी की वैधानिक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करता है। ये प्रलेख बैंक द्वारा अपने पास सुरक्षित रखे जाते हैं। इन प्रलेखों की जांच कम्पनी रजिस्ट्रार के कार्यालय से की जा सकती है। **पार्षद सीमा नियम** कम्पनी का नाम, स्थान, उद्देश्य, पूंजी आदि के सम्बन्ध में सूचनायें प्रगट करता है। **पार्षद अन्तर्नियम,** कम्पनी की आन्तरिक व्यवस्था के सम्बन्ध में प्रकाश डालता है कि कम्पनी की पूंजी का स्वरूप क्या होगा और यह कैसे प्राप्त की जायेगी, संचालकों को क्या अधिकार प्राप्त हैं ? आदि। व्यापार प्रारम्भ का प्रमाण-पत्र कम्पनी को व्यवसाय चालू करने के लिये अधिकृत करता है। इसके अभाव में सार्वजनिक कम्पनी का खाता नहीं खोलना चाहिए। विशेष परिस्थितियों में यह खाता मुख्य कार्यालय की सहमति से खोला जा सकता है।

(2) प्रस्ताव (Resolution)—कम्पनी का बैंक में खाता खोलने से पूर्व इस आशय का एक प्रस्ताव संचालकों की सभा में पारित करना पड़ता है जिसमें बैंक का नाम, खाता परिचालन के लिये अधिकृत व्यक्ति, ऋण सम्बन्धी सूचनाओं के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी होती है। बैंक को उपरोक्त प्रस्ताव प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। संचालक मण्डल को कम्पनी अधिनियम **धारा 292** के अन्तर्गत अनेक

---

1. "Company means a company formed and registered under this act or an existing company means a company formed and registered under any of the previous Company Laws." —Sec. 3 (i) & ii) Indian Companies Act.

अधिकार प्रदान किये गये हैं जिसमें संचालक मण्डल कम्पनी के लिये ऋण प्राप्त करने अथवा कम्पनी का धन विनियोजित करने का अधिकार रखता है। बैंक द्वारा कम्पनी को ऋण प्रदान करते समय यह प्रस्ताव विशेष सहायक सिद्ध होता है चूंकि इसमें कम्पनी द्वारा लिये गये ऋण की अधिकतम सीमा एवं ऋण की प्रतिभूतिस्वरूप प्रदत्त प्रतिभूतियों का विस्तारपूर्वक वर्णन रहता है। यह प्रस्ताव सभा के सभापति (Chairman) द्वारा हस्ताक्षरित होता है। यह प्रस्ताव उस समय तक लागू समझा जाता है जब तक कि संचालकों की अन्य सभा में इसे रद्द करने का अन्य प्रस्ताव पास नहीं किया जाता है।

इसके पश्चात् कम्पनी से खाता खोलने के प्रपत्र भरवाये जाते हैं तथा संचालकों की सूची प्राप्त की जाती है जिसमें खाता परिचालित करने के लिये अधिकृत संचालकों के नाम व हस्ताक्षर होते हैं।

(3) ऋण लेने की सीमा (Limit of Borrowing Powers)—कम्पनी को अपनी दत्त पूंजी (Paid up Capital) तथा सामान्य संचय की कुल राशि के योग से अधिक ऋण लेने का अधिकार प्राप्त नहीं है। अतः बैंक को इस सीमा से अधिक ऋण प्रदान नहीं करने चाहियें। यदि कोई संचय पूंजीगत व्यय के लिये बनाया गया है तब उस राशि को संचय में सम्मिलित नहीं किया जायेगा। ऋण प्राप्त करने से पूर्व कम्पनी के लिये यह आवश्यक है कि संचालकों की सभा में इस आशय का प्रस्ताव पारित किया जाये, जिसमें ऋण की सीमा तथा ऋण की प्रतिभूति में दी जाने वाले प्रतिभूतियों (Securities) का वर्णन होता है। बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण की राशि की गणना करते समय बैंक द्वारा प्रदत्त अस्थायी ऋणों (Temporay Loans) को सम्मिलित नहीं किया जाता है। अस्थायी ऋणों से आशय उन ऋणों से होता है जो मांग पर देय होते हैं तथा जिनकी अदायगी की अवधि अल्पकालीन होती है। उदाहरणार्थ—अल्पकालीन नकद साख व्यवस्था, अल्पकालीन ऋण, मिती काटे पर बिलों का भुगतान, आदि। बैंक दत्त पूंजी एवं सामान्य निधि के योग से अधिक ऋण कम्पनी को उसी स्थिति में प्रदान कर सकता है जबकि कम्पनी की साधारण सभा में इस आशय का प्रस्ताव पारित किया जा चुका है। परन्तु ऋण प्राप्त करने से पूर्व कम्पनी की संचालक सभा (Board of Directors) में इस आशय का प्रस्ताव पारित किया जाना अनिवार्य है। बैंक को इस प्रस्ताव की एक प्रति अपने पास रखनी चाहिये।

कम्पनी के संचालक अपनी सीमा से अधिक ऋण प्राप्त नहीं कर सकते हैं। परन्तु यदि संचालकों ने सीमा से अधिक ऋण कम्पनी के लाभ के लिये प्राप्त किया है तब कम्पनी से इस ऋण की वसूली की जा सकती है। इस निर्णय की पुष्टि कुमार किशन रोहतगी बनाम स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया नामक विवाद[1] में की

1. Kumar Kishan Rohatgi Vs. State Bank of India.

(4) **प्रभार (Charge)—कम्पनी अधिनियम धारा 125** के अनुसार कम्पनी अपनी सम्पत्तियों पर कोई प्रभार (Charge) उत्पन्न करती है अर्थात् उसकी प्रतिभूति पर ऋण प्राप्त करती है तब उन प्रभारों का रजिस्ट्रेशन अनिवार्य है। प्रभारों की प्राथमिकता (Priority) रजिस्ट्रेशन की तिथि से निर्धारित की जाती है। यह रजिट्रेशन 30 दिन के भीतर किया जाना चाहिये अन्यथा प्रभार व्यर्थ समझा जायेगा। 30 दिन के पश्चात् कम्पनी लॉ बोर्ड की पूर्व सहमति से उचित समय के भीतर प्रभारों का रजिस्ट्रेशन करवाया जा सकता है। उपरोक्त प्रभारों में **ऋण-पत्रों का प्रभार पर निर्गमन, अयाचित पूंजी पर प्रभार, ख्याति, पेटेन्ट ट्रेडमार्क, कापीराईट आदि पर प्रभार, स्थायी सम्पत्तियों पर प्रभार, पुस्तकीय ऋणों पर प्रभार, चल सम्पत्ति पर प्रभार जो गिरवी नहीं है,** आदि प्रभारों को सम्मिलित किया जाता है। बैंक द्वारा प्रभार का रजिस्ट्रेशन कराने के उद्देश्य से रजिस्ट्रार को सूचित किया जाता है तथा रजिस्ट्रार इस आशय का प्रमाण-पत्र जारी करता है। कम्पनी के माल अंश तथा सरकारी प्रतिभूतियों के विरुद्ध प्रभार उत्पन्न करने की स्थिति में प्रभार का रजिस्ट्रेशन करवाना आवश्यक नहीं होता है। बैंक को ऋण प्रदान करने से पूर्व रजिस्ट्रार के रिकार्ड की जांच करनी चाहिये कि कम्पनी ने पूर्व कोई प्रभार उत्पन्न किया हुआ है अथवा नहीं। बैंक द्वारा कम्पनी में मुख्य कार्यालय में रखे हुये प्रभार रजिस्टर की जांच भी की जानी चाहिये जिसमें कम्पनी द्वारा उत्पन्न किये गये प्रभारों का संक्षिप्त विवरण होता है। इसके द्वारा बैंक उस सम्पत्ति पर पूर्व प्रभार का अनुमान लगा सकता है जिस सम्पत्ति को कम्पनी द्वारा ऋण की जमानतस्वरूप प्रदत्त किया जा रहा है।

अतः बैंक द्वारा कम्पनी को ऋण प्रदान करते समय ऋण की जमानत लिये जमा प्रतिभूति पर प्रभार का रजिस्ट्रेशन करवाना अनिवार्य होता है। ऋण प्रपत्रों (Documents) पर कम्पनी का प्रबन्ध संचालक अथवा वह संचालक हस्ता करता है जिसको कम्पनी की ओर से हस्ताक्षर करने के लिये अधिकृत किया हैं। बैंक द्वारा ऋण के प्रपत्र प्राप्त करते समय संचालकों की व्यक्तिगत ज (Guarantee) भी प्राप्त की जाती है जिसमें कम्पनी के संचालक कम्पनी के ऋ लिये संयुक्त एवं पृथक् रूप से उत्तरदायी होते हैं। अतः ऋण का प्रतिज्ञा-पत्र की ओर से स्वीकार किया जाता है तथा संचालकों की जमानत प्राप्त की ज कुछ बैंकों द्वारा कम्पनी के साथ-साथ कम्पनी के संचालकों से भी ऋण का प्र (Demand Promissory Note–DPN) प्राप्त किया जाता है जिससे कम्पनी के साथ ऋण के प्रति उत्तरदायी होते हैं। बैंक द्वारा कम्पनी से **ग्रहणाधिकार (Negative Lien)** के लिये बोर्ड का प्रस्ताव भी प्राप्त क जिसमें कम्पनी द्वारा भविष्य में कम्पनी की सम्पत्ति पर कोई प्रभार उत्प का आश्वासन दिया जाता है। अतः बैंक द्वारा कम्पनी को ऋण प्रदान विभिन्न सावधानियाँ ध्यान में रखी जाती हैं।

SOLVED PROBLEMS

1. अ और ब का संयुक्त चालू खाता है जिसमें खाता परिचालन का अधिकार स को अभिकर्ता के रूप में प्रदान किया गया है। स साधारणतः खाते का परिचालन करता है। पूर्व तिथि पर (yesterday) ब की मृत्यु की सूचना प्राप्त होती है। आज 2,500 रुपये का एक चैक प्रस्तुत किया जाता है जिस पर स के हस्ताक्षर हैं। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A and B who have a Joint Current Account (payable to either or survivor) have granted a Power of Attorney in favour of C to operate on the account C usually operates on the account. Yesterday a notice was received by you intimating the death of B. Today a cheque for Rs. 2,500/- drawn on the account and signed by C is presented for payment. How would you deal ?

(C. A. I. I. B. May, 1979)

हल—उपरोक्त स्थिति में, स के द्वारा हस्ताक्षर किये गये चैक का भुगतान नही किया जायेगा चूंकि मुख्तारनामा (Power of Attorney) मालिक की मृत्यु की स्थिति में समाप्त हो जाता है। अत. चैक का भुगतान रोक दिया जायेगा।

2. आप अन्य शाखा से दिलीप मुखर्जी के बचत खाते में 5,000 रुपये जमा करने हेतु प्राप्त करते हैं। लेजर में जाँच करने के पश्चात् आप जानते हैं कि बचत खाता दिलीप मुखर्जी एवं निखिल बनर्जी के संयुक्त नाम में है जिसका भुगतान किसी भी व्यक्ति अथवा जीवित बचे हुये व्यक्ति को देय है। क्या आप 5,000 रुपये का उपरोक्त अंतरण संयुक्त खाते में जमा करेंगे ?

You receive from another branch a sum of Rs. 5,000 for credit of Savings Bank Account of Dilip Mukherjee On search of the ledgers you find that there is a Joint Savings Bank Account of Dilip Mukherjee and Nikhil Banerjee, payable to "Either or Surviol." Would you credit the above remittance of Rs. 5,000 to the joint account ? *(C. A. I. I. May, 1977)*

हल—सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से खाते से भुगतान के सम्बन्ध में दिया गया निर्देश कि भुगतान किसी एक को अथवा जीवित रहने वाले व्यक्ति को किया जाये, खाते में जमा धनराशि पर लागू नही होता है। संयुक्त खाते मे संयुक्त नाम से देय चैक अथवा रकम ही जमा की जा सकती है। यह निर्देश केवल भुगतान के लिये लागू समझा जाना चाहिए। परन्तु व्यवहार में बैंक मे किसी एक व्यक्ति के नाम में देय चैक भी संयुक्त खाते मे जमा करते हैं। अतः इस चैक की रकम संयुक्त खाते मे जमा की जा सकती है चूंकि यह निर्देश ग्राहकों को सुविधा प्रदान करने के लिये प्राप्त किया गया है। इस सम्बन्ध मे कोई वैधानिक नियम नही है। अतः ग्राहकों को

सुविधा प्रदान करने के दृष्टिकोण से यह निर्देश जमाओं पर भी लागू समझा जाता है। सुरक्षा के दृष्टिकोण से, बैंक दूसरे खाताधारी से सहमति भी प्राप्त कर सकते हैं।

3. वेलकम ट्रेडर्स एकाकी संस्था है जिसका आपके पास एक अच्छा चालू खाता है। एकाकी व्यापारी मिस्टर पिन्टो अपनी पत्नी लूसी के हित में एक मेनडेट देता है जिसमें खाता परिचालन का अधिकार पत्नी को दिया जाता है। कुछ महीनों के पश्चात् वह अपने कार्यालय की प्रबन्धक सचिव मिस रोजा के हित में मुख्तार नामा लिखता है जिसमें खाता परिचालन का अधिकार उसे प्रदान किया जाता है। क्या आप मिस रोजा को खाता परिचालन के लिये स्वीकृति प्रदान करेंगे ? क्या यह मुख्तारनामा पूर्व के मेनडेट को प्रतिबन्धित करता है ?

Welcome Traders is a proprietory concern maintaining a good current account with you Proprietor, Mr. Pinto has given a mandate in favour of his wife Lucy, authorising her to operate the account. After a few months he executes a power of attorney in favour of his office secretary Miss. Roza, authorising her to operate the account.

Will you allow Miss Roza to operate the account ? Will this P/A rescind the earlier mandate given in favour of his wife ?

(C. A. I. I. B. Part II, Nov., 1981)

हल—उपरोक्त स्थिति में मिस रोजा को खाता संचालन का पूर्ण अधिकार है चूंकि मुख्तारनामा लिखने के पश्चात् पूर्व लिखित मेनडेट (निर्देश) समाप्त माना जायेगा। मुख्तारनामा मेनडेट से विस्तृत शक्तियाँ प्रदान करता है चूंकि मेनडेट में केवल एक निश्चित व्यवहार के लिये शक्तियाँ प्रदान की जाती हैं जबकि मुख्तारनामा सामान्य प्रकृति के कार्यों के लिये समस्त अधिकार प्रदान करता है। मुख्तारनामा मेनडेट के पश्चात् लिखा गया है। अतः मेनडेट समाप्त समझा जायेगा।

4. एक व्यक्ति अपने दो अवयस्क पुत्रों के नाम में संयुक्त खाता खोलना चाहता है जिनकी आयु क्रमशः 7 वर्ष एवं 5 वर्ष है। इस खाते का परिचालन उसके द्वारा पिता व अभिभावक के रूप में किया जायेगा।

A man approaches you for opening a Joint Saving Bank Account in the name of his two sons aged 7 years and 5 years to be operated by him as father and guardian.

(C. A. I. I. B. Nov., 1980)

हल—उपरोक्त स्थिति में, बैंक संयुक्त नाम में खाता खोल सकता है परन्तु इस खाते का परिचालन उनके पिता द्वारा अभिभावक के रूप में किया जाना चाहिए।

वर्ष की आयु के पुत्र के वयस्क होने पर खाते का परिचालन वयस्क पुत्र तथा अवयस्क पुत्र की ओर से पिता द्वारा किया जायेगा। दोनों पुत्रों के वयस्क होने पर खाते का परिचालन वयस्क पुत्रों द्वारा किया जायेगा। वयस्क के समय बैंक को निर्देश प्राप्त चाहिए कि संयुक्त खाते का परिचालन किस प्रकार किया जायेगा तथा यह निर्देश दोनों पुत्रों द्वारा प्रदान किया जाना चाहिए। निर्देश के अभाव मे खाते में जमा राशि पर दोनों का बराबर अधिकार समझा जायेगा।

5. आप सूचना प्राप्त करते हैं कि एक्स जिनका एक चालू खाता फर्म के नाम में आपके पास है, जेल भेज दिया गया है। क्या आप सजा से पूर्व एवं सजा की अवधि में खाते पर देय चैकों का भुगतान चालू रखेंगे।

You receive a report that Mr. X who is maintaining a good current account with you in the name of his proprietorship firm has been imprisoned. Would you continue to pay the cheques drawn on the account before and during the period of imprisonment.

(C. A. I. I. B. Part II May, 1980)

हल—खाताधारी के जेल में जाने पर बैंक और ग्राहक के सम्बन्धों पर कोई प्रभाव नही पड़ता है तथा ग्राहक द्वारा जेल जाने से पूर्व एवं कारावास की अवधि में जारी किये गये चैको का भुगतान किया जायेगा। परन्तु, यदि ग्राहक दिवालिया होने के परिणामस्वरूप कारावास में भेजा गया है तब खाते का परिचालन रोक दिया जाता है।

6. जब व्यक्तियों का संयुक्त व्यक्तिगत खाता खोला जाता है तब बैंक परिचालन के लिये निर्देश प्राप्त करते हैं जैसे—'भुगतान किसी भी व्यक्ति को अथवा जीवित बचे हुये व्यक्तियों को देये' अथवा 'संयुक्त रूप में या जीवित बचे हुये व्यक्तियों को देय।' कृपया स्पष्ट कीजिये कि क्या 'जीवित बचे हुये' शब्द का प्रयोग आवश्यक है।

While opening personal joint accounts of individuals, banks obtain instructions for operations such as 'payable to either or survivor' or 'jointly or survivor'. Please discuss whether the word "survivor" is necessary. *(C. A. I. I. B Part II May, 1980)*

हल—(a) संयुक्त खाते की स्थिति में बैंक खाते के परिचालन के सम्बन्ध में *निर्देश प्राप्त करता है कि खाते से रुपया निकालने का अधिकार किन-किन व्यक्तियों* को प्राप्त है। यह अधिकार किसी भी एक व्यक्ति को अथवा समस्त व्यक्तियों को अथवा जीवित बचे हुये व्यक्तियो को प्राप्त हो सकता है। यदि खाता परिचालन का अधिकार किसी भी व्यक्ति को अथवा जीवित बचे हुये व्यक्ति (Eor S) को प्रदान किया गया है तब खाते से रुपया किसी भी खाताधारी द्वारा निकाला जा सकता है। किसी खाताधारी की मृत्यु की स्थिति में खाते में जमा धन जीवित बचे हुये व्यक्तियों को भुगतान

कर दिया जाता है। परन्तु, इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि मृतक के उत्तराधिकारियों द्वारा मृतक की सम्पत्ति के लिये दावा किया जाता है तब बैंक को खाते में जमा धन का भुगतान न्यायालय के निर्णयानुसार करना चाहिए।

परन्तु खाते में परिचालन का अधिकार संयुक्त अथवा जीवित बचे व्यक्तियों (Jointly or Survivor) को प्रदान करने की स्थिति में खाते से रुपया समस्त खाताधारियों के द्वारा निकाला जा सकता है तथा मृत्यु की स्थिति में मृतक के उत्तराधिकारियों का संयुक्त अधिकार होता है। इस स्थिति में जीवित बचे हुये (Survivor) शब्द की आवश्यकता नहीं होती है चूंकि रुपये का भुगतान मृतक के उत्तराधिकारियों द्वारा भी प्राप्त किया जाता है।

7. श्रीमती एवं श्री डी० पी० दावे का चालू खाता आपकी शाखा में है जिसमें 50,000 रुपये शेष हैं तथा खाते का भुगतान किसी भी व्यक्ति को अथवा जीवित बचे हुये व्यक्ति को देय है। आप श्री दावे से एक पत्र प्राप्त करते हैं। जिसमें आपको सूचित किया जाता है कि वह लगभग एक वर्ष के लिये लन्दन में होगा तथा उसकी अनुपस्थिति में उसके अवयस्क पुत्र, अजय दावे को खाता परिचालित करने की अनुमति दी जाये। क्या आप अवयस्क पुत्र को खाता परिचालित करने की अनुमति प्रदान करेंगे जैसा कि निर्देश दिया गया है?

Shrimati and Shri D. P. Dave have a Current Account with your Branch, payable to "Either or Survior", having a credit balance of Rs. 50,000. You receive a letter from Shri Dave informing you that he will be in London for about one year and that during his absence his minor son Ajay Dave should be allowed to operate his account. Would you allow the minor son to operate the account as instructed ? *(C. A. I. I. B. Part II May., 1977)*

हल—उपरोक्त स्थिति में अवयस्क पुत्र को खाता परिचालित करने की अनुमति प्रदान नहीं की जा सकती है, चूंकि खाता संयुक्त नाम में है। इस स्थिति में प्रत्येक निर्देश समस्त खाताधारियों की सहमति से प्रदान किया जाना चाहिए। यदि दोनों खाताधारियों से सहमति प्राप्त हो जाती है तब अवयस्क को खाता परिचालित करने के लिये अनुमति प्रदान की जा सकती है। इसके लिये अवयस्क के हित में सामान्य मुख्तार नामा अथवा मैनडेट लिखा जायेगा।

8. निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे—

(अ) आपने एक बचत खाता संयुक्त नाम में श्रीमती भारतीएम० देसाई तथा उनके अवयस्क पुत्र अजय देसाई (आयु 12 वर्ष) के नाम में खोला। 1 जनवरी, 1981 को खाते में 5,000 रुपये शेष हैं। आपको 3 जनवरी, 1981 को श्रीमती देसाई की मृत्यु की सूचना प्राप्त होती है। उनका अवयस्क पुत्र, जो उनका एकलौता पुत्र है, 10 जनवरी, 1981 को आपके पास आता है तथा संयुक्त खाते के 5000 रुपये का

भुगतान करने की प्रार्थना करता है चूंकि वह अपने चाचाजी के साथ भारतवर्ष से बाहर जाना चाहता है।

(ब) आपके पास एक संयुक्त चालू खाता श्री एवं श्रीमती एम० पी० पाटिल के नाम में है। जिसका भुगतान किसी भी व्यक्ति ('E' or 'S') को देय है। 1 मार्च 1981 को खाते में 3,500 रुपये शेष हैं। 2 मार्च, 1981 को, आपको श्री पाटिल से एक पत्र प्राप्त होता है। जिसमें कहा जाता है कि श्रीमती पाटिल को खाता सचालन का अधिकार न दिया जाये चूंकि न्यायालय ने तलाक का आदेश दे दिया है। वह पुनः सूचना देता है कि खाते से 50 रुपये प्रतिमाह का भुगतान न्यायालय को श्रीमती पाटिल के रख रखाव के लिये किया जाये।

(स) मैसर्स एम० जे० पटेल एण्ड कम्पनी का एक साझेदार आपसे फर्म के नाम में चालू खाता खोलने की प्रार्थना करता है। बातचीत के दौरान आपको ज्ञात होता है कि फर्म का एक साझेदार अवयस्क है जिसकी आयु 15 वर्ष है तथा अन्य साझेदार भारतवर्ष के बाहर गया हुआ है जो 6 माह पश्चात वापिस आयेगा। कुल मिलाकर पांच साझेदार हैं। क्या आप फर्म के नाम में खाता खोलेंगे तथा आप क्या सावधानियां ध्यान में रखेंगे, यदि आप खाता खोलने का निश्चय करते हैं?

How will you, as a Banker, deal with the following situations–

(a) You have opened a saving bank account jointy in the named of Mrs. Bharati M. Desai and her minor son Ajay Desai aged 12 years. The account shows a credit balance of Rs. 5,000 on 1st January, 1981. You are informed of the death of Mrs Desai on 3rd January, 1981. Her minor son who is the only child of the family approaches you on 10th January, 1981 asking you to pay him the balance of Rs. 5,000 lying in the joint account as the wants to go out of India with his uncle.

(b) You have opened a current account jointly in the names of Mrs. and Mrs. M. P. Patil with instructions to pay to either or survivour. The account shows a credit balance of Rs. 3,500 on 1st March 1981. On 2nd March, 1981 you received a letter from Mr. Patil to say that you should not allow Mrs. Patil to operate on the account as the court has passed a decree of divorce. He further instruct you to pay every month Rs. 50 to the court for payment to be made to Mrs. Patil for her maintenance.

(c) A partner of Messrs H. J. Patel & Co., approaches you with a request to open a current account in the name of the firm. In course of your conversation with him, you find that one of the

artners is a minor aged 15 years, another partner has gone abroad
nd would be returning after six months. In all there are five part-
ers would you open an account in the name of the firm and what
recautions would you take in case you decide to open the account ?
(C. A. I. I. B. May., 1981)

हल—(a) साधारण परिस्थितियों में वैंक अभिभावक की मृत्यु पर खाते का
रुपया अवयस्क द्वारा वयस्कता प्राप्त करने के पश्चात भुगतान करते हैं। परन्तु इसमें
अवयस्क भारतवर्ष के वाहर जाना चाहता है। अतः वैंक अवयस्कता की अवधि में
अपने विवेकाधीन खाते में जमा रुपये का भुगतान कर सकता है। परन्तु इससे पूर्व
अवयस्क के अभिभावक की मृत्यु का प्रमाण-पत्र प्राप्त करना आवश्यक है। वैंक रुपये
का भुगतान करने से पूर्व अवयस्क का परिचय प्राप्त करेगा। परिचय ऐसे व्यक्ति
द्वारा दिया जाना चाहिये जिसे वैंक जानता है तथा वह व्यक्ति वाजार में अच्छी साख
(Credit) रखता है।

(b) इस स्थिति में, श्री पाटिल का आदेश स्वीकार्य नहीं है चूंकि खाता
संयुक्त नाम में है। वैंक द्वारा कोई भी निर्देश उसी स्थिति में मान्य है जबकि निर्देश
समस्त संयुक्त खाताधारियों द्वारा दिया गया है। अतः श्रीमती पाटिल को खाता-
संचालन का अधिकार प्राप्त रहेगा। श्री पाटिल द्वारा 50 रुपये प्रतिमाह के भुगतान का
निर्देश भी मान्य नहीं है। विवादास्पद परिस्थितियों में वैंक को खाते का परिचालन
रोक देना चाहिए।

(c) इस समस्या में, फर्म का खाता खोला जा सकता है। परन्तु खाता
खोलने से पूर्व, समस्त साझेदारों के हस्ताक्षर, खाता खोलने के प्रपत्रों पर अनिवार्य
हैं। अतः जो साझेदार भारत से वाहर गया हुआ है और 6 माह तक उसके आने
की कोई आशा नहीं है, इसके अभाव में, खाते का परिचालन प्रारम्भ नहीं हो सकता
है। इसके अतिरिक्त अवयस्क साझेदार को खाता संचालन का अधिकार प्राप्त नहीं
हो सकता है चूंकि उसे फर्म में लाभ के लिये साझेदार वनाया जा सकता है परन्तु
समस्त साझेदारों की सहमति से अवयस्क को खाता परिचालन का अधिकार प्राप्त हो
सकता है। संक्षेप में, वैंक द्वारा फर्म का खाता खोल दिया जायेगा परन्तु, उस खाते
से लेन-देन उसी स्थिति में शुरू किये जायेंगे जबकि वाहर गया हुआ साझेदार, वापिस
आकर हस्ताक्षर कर देगा अथवा वह साझेदार अन्य किसी व्यक्ति को अपना मुख्तार-
नामा (Power of Attorney) लिख देता है तथा वह व्यक्ति साझेदार की ओर से
खाते का परिचालन करने की सहमति प्रगट कर देता है।

9. मैसर्स जैन एण्ड कम्पनी का सन्तोषजनक चालू खाता है। जिसमें फर्म के
भी दो साझेदारों द्वारा संयुक्त परिचालन किया जाता है। फर्म में तीन साझेदार हैं
(i) बी० एम० जैन, (ii) बी० एम० जैन तथा (iii) सी०एम० जैन। उनके व्यक्तिगत
खाते भी बैंक में हैं। श्री बी० एम जैन तथा सी० एम० जैन आपसे प्रार्थना करते हैं

कि फर्म के चालू खाते से 5,000 रुपये उनके संयुक्त व्यक्तिगत खाते में अंतरित कर दिये जायें। आप क्या कार्यवाही करेंगे ?

Messers Jain & Co., maintain a satisfactory current account operated by any two partners jointly. There are three partners in the firm (i) Mr V. M. Jain (ii) Mr. B. M. Jain, and (iii) Mr. C. M. Jain. They also maintain individual Saving Bank Accounts. Mr. B. M. Jain and Mr. C. M. Jain write to you to transfer an amount of Rs. 5,000 from the current account of the firm to the joint saving Bank Account standing in their names. What action will you take ?

(C. A. I I. B August., 1978)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक को फर्म के खाते से साझेदारों के व्यक्तिगत खाते में रुपया अंतरित करते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। इसमें बैंक को उक्त अंतरण की सूचना वी० एम० जैन को देनी चाहिए तथा उससे पुष्टिकरण प्राप्त करने के पश्चात व्यक्तिगत संयुक्त खाते में अंतरित किया जा सकता है अथवा अंतरण के लिये प्रार्थना करने वाले साझेदारों से लिखित वचन-पत्र (Letter of Under taking) प्राप्त करना चाहिये कि अंतरण फर्म के कार्यों के लिये किया जा रहा है तथा विवादास्पद परिस्थितियों में वे साझेदार व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी ठहराये जायेंगे।

10. निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situations—

(i) A widow of a deceased account holder calls at the Branch Office of a bank with her two minor children and presents a pass-book and unused cheque forms and requests that the balance of Rs. 800 standing to the credit of the account in single name of her late husband be paid to her. What should be the procedure ?

(ii) An uncrossed and bearer cheque for Rs. 10,000 drawn by a Limited Company favouring Self is presented by a representative of the Company for cash payment. Should the cheque be paid or else what is the procedure ?

(iii) An uncrossed and bearer cheque for Rs. 5,000 drawn by a partnership firm is presented by a third party who is also the customer of the Branch. It is observed that amount is altered/increased from Rs. 3,000 to Rs. 5,000 under signature of a partner other than one who has signed the cheque as drawer. What should the drawee Branch do ?

(C. A. I. I. B. Sept., 1985)

(i) उपरोक्त स्थिति में बैंक द्वारा खाताधारी की मृत्यु का पुष्टिकरण प्राप्त करना चाहिये तथा मृतक की विधवा से उत्तराधिकारी प्रमाण पत्र (Legal Heirs Certificate) प्राप्त करना चाहिये। यह प्रमाण पत्र उचित न्यायाधिकारी द्वारा जारी किया जाता है। यदि मृतक के उत्तराधिकारी अवयस्क बच्चे हैं तब अवयस्क बच्चों की माता को मृतक के खाते का रुपया अवयस्क बच्चों के लाभार्थ प्रदान किया जा सकता है।

(ii) उपरोक्त स्थिति में बैंक को कम्पनी द्वारा जारी वाहक चैक का भुगतान करना चाहिये चूंकि चैक कम्पनी द्वारा अपने हित में लिखा गया है तथा इसका भुगतान कम्पनी का प्रतिनिधि प्राप्त कर रहा है। इस स्थिति में चैक का भुगतान करने पर बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन का दोषी नहीं समझा जायेगा।

(iii) उपरोक्त स्थिति में, चैक का भुगतान करना खाते की प्रकृति पर निर्भर करता है। यदि फर्म के खाते में संयुक्त परिचालन है अर्थात् खाता परिचालन करने के लिये अधिकृत समस्त व्यक्तियों द्वारा संयुक्त रूप में खाता परिचालित किया जाता है तब उपरोक्त चैक का भुगतान नहीं किया जायेगा। इसके विपरीत, यदि खाते का परिचालन कोई भी साझेदार कर सकता है तब उपरोक्त चैक का भुगतान किया जा सकता है परन्तु दूसरे साझेदार के हस्ताक्षर फर्म की ओर से' (On Behalf of) किये जाने चाहियें।

11. निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situations—

(a) A minor has a FDR for Rs. 50,000. It is self operated account. He wants a loan of Rs. 2,000 against his F. D. R.

(b) A Aaving Bank Account in the name of minor is operated by his mother. After the death of minor his mother wants to withdraw the money from S. B. Account.

(c) An illiterate person wants to open Saving Bank Account but he has no thumb due to accident.

(d) A minor partner in a firm wants to operate firm's account.

(e) You receive a notice of a death of partner in the firm. After this notice you receive a cheque for payment presented through clearing favouring Sales Tax Officer. Cheque was signed by the deceased partner.

(f) A and B has a joint Fixed Deposit account for Rs. 50,000 payable either or survivor. Before the date of maturity A died. B claim the money before maturity?

हल—(a) इस स्थिति में, सावधि जमा खाता अवयस्क द्वारा स्वपरिचालित

किया जाता है। इसमे अवयस्क को सावधि जमा रसीद की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान नही किया जा सकता है चूंकि अवयस्क अनुबन्ध करने के अयोग्य होता है।

(b) साधारणतः अवयस्क के खाते का परिचालन सहज अभिभावक द्वारा किया जाता है तथा सहज अभिभावक पिता को समझा जाता है। परन्तु विशेष परिस्थितियों मे पिता की सहमति से माता द्वारा खाते का परिचालन सहज अभिभावक के रूप मे किया जा सकता है। अवयस्क की मृत्यु की सूचना का पुष्टिकरण होने पर, खाते मे जमा धन का भुगतान माता को करके खाता बन्द कर देना चाहिये।

(c) इस परिस्थिति मे साधारणतः बैंक खाता नही खोलते हैं। खाते से रुपया निकालते समय अशिक्षित व्यक्ति के बांये हाथ के अंगूठे का निशान नमूने (Specimen)-के रूप मे लिया जाता है। परन्तु इसमें अशिक्षित व्यक्ति के अंगूठा नही है। परन्तु विशेष परिस्थितियों में खाता खोला जा सकता है। रुपये का भुगतान करते समय सव्यवहार का पुष्टिकरण मजिस्ट्रेट द्वारा करवाया जाता है कि अमुक व्यक्ति ने लेन-देन किया गया है।

(d) इस स्थिति में, अवयस्क को फर्म के समस्त साझेदारो की सहमति से खाते के परिचालन का अधिकार प्रदान किया जा सकता है। चूंकि अवयस्क अभिकर्त्ता के रूप मे नियुक्त किया जा सकता है।

(e) साधारणतः साझेदार की मृत्यु पर खाते का परिचालन रोक दिया जाता है। मृतक द्वारा बिक्री कर अधिकारी के हित में जारी चैक का फर्म के हित मे बैंक द्वारा भुगतान किया जा सकता है। इसके लिये बैंक अन्य साझेदारो से पुष्टिकरण भी प्राप्त कर सकता है।

(f) इस स्थिति में 'ब' को सावधि जमा रसीद का देय तिथि से पूर्व भुगतान नही किया जा सकता है चूंकि यह निर्देश देय तिथि पर भुगतान के सम्बन्ध मे लागू होता है। परन्तु यदि बैंक ने खाता खोलते समय इस आशय का प्रपत्र प्राप्त किया है कि मृत्यु की देयतिथि से पूर्व भी भुगतान अथवा ऋण प्राप्त किया जा सकता है तब बैंक देय तिथि से पूर्व 'ब' को भुगतान कर सकता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि 'अ' के उत्तराधिकारियों द्वारा 'अ' के अंशदान का दावा करने की स्थिति में बैंक को न्यायालय के निर्णयानुसार जमा धन का भुगतान करना चाहिए।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) बैंक मे विभिन्न प्रकार के व्यक्ति खाता खोल सकते है। बैंक के विशेष ग्राहको मे मुख्यतः अवयस्क, पागल, दिवालिया, साझेदारी फर्म, पर्दानशीन स्त्रियां, निष्पादक व प्रबन्धक, नेत्रहीन एवं कम्पनी आदि सम्मिलित किये जाते हैं।

(2) अवयस्क के खाते मे अवयस्क की जन्म तिथि महत्वपूर्ण होती है : वयस्कता प्राप्त करने की तिथि से अभिभावक को खाता परिचालन का अधिकार नहीं होता है। अवयस्क के खाते मे बैंक को ऋण प्रदान नही करना चाहिए।

(3) वैंक को पागल व्यक्ति का खाता नहीं खोलना चाहिए। खाताधारी के ल होने पर खाते का परिचालन रोक देना चाहिए ?

(4) वैंक को ग्राहक के दिवालिया होने पर खाते का परिचालन बन्द कर ा चाहिए।

(5) वैंक को विवाहित स्त्रियों को ऋण पति की सहमति अथवा आवश्यक ावश्यकताओं के लिये प्रदान करना चाहिए।

(6) संयुक्त खाते की स्थिति में वैंक को खाताधारियों से खाता परिचालन के सम्बन्ध में स्पष्ट निर्देश प्राप्त करना चाहिए।

(7) कम्पनी का खाता खोलते समय कम्पनी के समस्त आवश्यक प्रलेख एवं संचालकों की सभा में पारित प्रस्ताव (खाता खोलने के लिये) प्राप्त करना चाहिए। कम्पनी अपनी अंश पूंजी एवं संचय की तुलना में अधिक ऋण प्राप्त नहीं कर सकती है।

प्रश्न
(Questions)

1. क्या अवयस्क वैंक में चालू खाता खोल सकता है ? यदि हाँ, तब आप क्या सावधानियाँ प्रयोग में लायेंगे ?

Can a minor open a current account in the Bank. if, so what precautions would you observe ? *(C. A. I. I. B. Nov., 1982)*

2. कम्पनी का चालू खाता खोलते समय वैंक किन-किन मुख्य प्रपत्रों को प्राप्त करता है ?

State the important documents required to be furnished to the Bank by a Public Limited Company for opening a current account. *(C. A. I. I. B. May, 1984; 1983*

3. नेत्रहीन व्यक्ति का खाता खोलते समय वैंक किन-किन तथ्यों को ध्यान रखता है ?

What are the points to be borne in mind by the Bank wh opening and maintaining an account in the name of a bli person ?

4. एक वैंकर को निम्नलिखित के नाम चालू खाता खोलते समय सावधानियों पर ध्यान देना चाहिये—

What precautions should be taken by a bank while op a current account in the following names—

(a) A Limited Company, (b) H. U. F. (c) Pardanashi

(Gorakhpur B. Com.,

5. एक बैंक को अवयस्क, विवाहित स्त्री तथा क्लब का खाता खोलते समय क्या सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहिए ?

What precautions should a banker take in opening an account in names of minors, married women and clubs ?

(Bombay, 1970)

6. एक बैंकर निम्नलिखित ऋणियों की स्थिति में ऋण लेने की शक्तियों की किस प्रकार जाँच करेगा—

How will a banker examine the power to borrow of the following classes of borrowers —

(i) Joint Stock Company, (ii) Partnership (iii) Agent and Attorneys. *(Madras B Com)*

7. एक शाखा प्रबन्धक द्वारा क्लब अथवा संस्था का खाता खोलते अथवा परिचालित करते समय किन-किन तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिए।

What are the points tabe borne in mind by the branch manager while opening and maintaining an account in the name of a club or society ? *(C. A. I. I. B. Nov, 1980)*

8. बैंक को सार्वजनिक कम्पनी एवं निजी कम्पनी का खाता खोलते समय किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए ?

What precautions should be taken by a bank while opening an account of a public and private limited company.

9. एक साझेदार की मृत्यु पर फर्म के खाते में परिचालन रोक देना चाहिए यदि खाता (i) क्रेडिट (ii) डेबिट अथवा अधिविकर्ष में है। कारण बतलाइये।

On the death of a partner should the operations on his firm's account be stopped if it is (i) in Credit and (ii) Overdrawn. Give reasons. *(C. A. I. I. B. Part II May, 1970)*

10. अवयस्क का खाता खोलते समय आपको क्या सावधानियाँ लेनी चाहिए ?

What precautions will you take while opening accounts of minors. *(C. A. I. I. B. Part II Nov., 1974)*

□□□

7 परक्राम्य प्रपत्र
(NEGOTIABLE INSTRUMENTS)

बैंकों का मुख्य व्यवसाय निक्षेप स्वीकार करना एवं ऋण प्रदान करना होता है। बैंकों के कार्यों में मुख्यतः चैकों का भुगतान एवं संग्रहण सम्मिलित किये जाते है। चैक को परक्राम्य प्रपत्र (Negotiable Instruments) में सम्मिलित किया गया है। अतः प्रत्येक बैंक के लिये परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम 1881 की मुख्य धाराओं का ज्ञान अनिवार्य होता है। वर्तमान समय में परक्राम्य प्रपत्रों का विशेष महत्व होता है। ये वर्तमान व्यवसाय का आधार समझे जाते हैं चूंकि इसमें अधिकारों का हस्तांतरण मात्र सुपुर्दगी से सम्भव हो सकता है।

परक्राम्य प्रपत्र का अभिप्राय
(Meaning of Negotiable Instruments)

परक्राम्य प्रपत्र अथवा विनिमय साध्य विपत्र से अभिप्राय उस प्रपत्र से है जिसका भुगतान माँग पर अथवा आदेश पर देय होता है। इसमें निहित स्वामित्व का अन्तरण बिना दूषित स्वामित्व के उचित प्रतिफल (Consideration) एवं सद्भाव के साथ किया जा सकता है। परक्राम्य प्रपत्र से आशय उस पत्र से होता है जो व्यक्ति को निश्चित राशि प्राप्त करने का अधिकारी बनाता है।

परक्राम्य प्रपत्र शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है। प्रथम, परक्राम्य अथवा विनिमय साध्य (Negotiable) जिसका अभिप्राय सुपुर्दगी द्वारा स्वामित्व का हस्तांतरण है एवं द्वितीय प्रपत्र (Intrument) जिसका अभिप्राय ऐसे लिखित प्रपत्र से है जिसके अन्तर्गत, किसी व्यक्ति पर अधिकारों (Rights) का निर्माण (Creation) किया जाता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम (Negotiable Instrument Act, 1881) की धारा 13 के अनुसार, "परक्राम्य प्रपत्र से अभिप्राय प्रतिज्ञा-पत्र, विनिमय बिल अथवा चैक से है जिनका भुगतान आदेशानुसार अथवा वाहक को किया जाता है।"[1]

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम के अन्तर्गत, प्रतिज्ञा-पत्र, विनिमय बिल एवं चैक को ही परक्राम्य प्रपत्र समझा गया है। वास्तव में परक्राम्य प्रपत्र ऐसा विलेख अथवा सम्पत्ति है जिसे सद्भाव से, मूल्य के बदले प्राप्त किया गया है और उसका हस्तांतरण

1. "A negotiable instrument means a promissory note, bill of exchange or cheque payable either to order or bearer."

—Sec. 13, Negotiable Instrument Act.

धारक के आदेशानुसार अथवा सुपुर्दगी से ही सम्भव होता है। यदि किसी प्रपत्र में निश्चित व्यक्ति को भुगतान करना है परन्तु व्यक्ति को भविष्य मे हस्तातरण का अधिकार नही दिया गया है तब उस प्रपत्र को परक्राम्य प्रपत्र नहीं समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि जेठा परकाह बनाम रामचन्द्र"[1] नामक विवाद में की गयी है। जिसमें बम्बई हाईकोर्ट ने निर्णय दिया कि यदि कोई बिल अथवा नोट निश्चित व्यक्ति के हित मे देय है तथा उसे पुनः हस्तातरण का अधिकार नहीं दिया गया है तब वह प्रपत्र परक्राम्य प्रपत्र नही समझा जायेगा। अतः परक्राम्य प्रपत्र उस प्रपत्र को समझा जाता है जिसमें प्रापक के नाम के साथ 'आदेश पर' अथवा 'वाहक को' ('Or Order' 'Or Bearer') शब्द जुड़े होते हैं। यदि किसी चैक मे वाहक (Bearer) शब्द काट दिया गया है तथा आदेश पर (Or Order) शब्द नहीं जोड़ा गया है तब, चैक को परक्राम्य प्रपत्र नही समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि दोसा भाई बनाम वीरचन्द्र[2] नामक विवाद मे की गयी। परन्तु प्रचलित रीतियो के अनुसार इस प्रपत्र को आदेश पर (Or Order) भुगतान समझा जाता था। वर्ष 1919 मे अधिनियम मे सशोधन किया गया और यह मान्यता प्रदान की गयी कि 'आदेश पर' अथवा 'वाहक को', शब्दो का जुड़ना परक्राम्य प्रपत्र की वैधता पर कोई प्रभाव नही डालता है। यदि प्रपत्र पर किसी शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है तब प्रपत्र को आदेश पर (Or Order) देय समझा जायेगा। अतः परक्राम्य प्रपत्र मे भविष्य में प्रापक को हस्तातरण का अधिकार न होने की स्थिति मे विपत्र उन पक्षकारो के बीच वैध समझा जाता है परन्तु यह परक्राम्य प्रपत्र नही समझा जाता है।

वाहक को (Bearer) देय भुगतान से आशय उस व्यक्ति को भुगतान करने से है जिसके अधिकार मे प्रपत्र है। यदि किसी प्रपत्र पर आदेश पर (Or Order) शब्द लिखा है तथा प्रपत्र का कोरा पृष्ठांकन (Blank Endorsement) किया जाता है तब प्रपत्र वाहक को (Bearer) देय समझा जाता है।

परक्राम्य प्रपत्र प्रापक के आदेश पर देय होने की स्थिति में भुगतान प्राप्त करते समय प्रापक को पृष्ठांकन करने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु यदि प्रापक अन्य व्यक्ति को भुगतान प्राप्त करवाना चाहता है तब प्रपत्र पर उसका पृष्ठांकन आवश्यक समझा जाता है।

परक्राम्य प्रपत्र संयुक्त नाम में लिखा जा सकता है तथा इसका भुगतान किसी भी एक व्यक्ति के हित मे देय हो सकता है।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम के अन्तर्गत केवल चैक, बिल अथवा प्रतिज्ञा-पत्र को सम्मिलित किया गया है। परन्तु व्यवहार में उन प्रपत्रों को भी परक्राम्य प्रपत्र समझा जाता है जो प्रथाओ के अन्तर्गत हस्तांतरण योग्य हैं तथा उन्हे मूल्य के बदले

1. Jetha Parkha Vs. Ramchandra.
2. Dossabhai Vs. Virchandra.

व से प्राप्त करने वाला धारक अपने नाम से वाद प्रस्तुत करने का अधिकार
ा है। उदाहरणार्थ—हुण्डी, सरकारी प्रतिज्ञा पत्र, माल का भुगतान
ग्र आदि।

परक्राम्य प्रपत्र की विशेषतायें
(Characteristics of Negotiable Instruments)

परक्राम्य प्रपत्र में निम्नलिखित विशेषतायें पायी जाती हैं—

(1) हस्तांतरणशीलता (Transferability)—परक्राम्य प्रपत्र एक व्यक्ति द्वारा
न्य व्यक्ति को हस्तांतरित किया जा सकता है। इसमें देय तिथि से पूर्व प्रपत्र का
अनेक बार (Times) हस्तांतरण हो सकता है। प्रपत्र का हस्तांतरण मात्र सुपुर्दगी
अथवा पृष्ठांकन एवं सुपुर्दगी द्वारा किया जाता है।

(2) साधिकार धारक अथवा यथाविधिधारी (Holder in due course)—
परक्राम्य प्रपत्र उस व्यक्ति को शुद्ध अधिकार प्रदान करता है जिस व्यक्ति ने प्रपत्र को
मूल्य के बदले प्राप्त किया है। इसमें यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि हस्तांतरिती
(Transferee) ने सद्भाव से और दूषित स्वामित्व का ज्ञान न रखते हुए प्रपत्र प्राप्त
किया है। परक्राम्य प्रपत्र में यथाविधिधारी के स्वामित्व पर हस्तांतरणकर्त्ता के दूषित
स्वामित्व का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

(3) अपने नाम में वाद (Suit in his Own Name)—परक्राम्य प्रपत्र
के अन्तर्गत प्रपत्र का धारक अपने नाम से वाद प्रस्तुत करने का अधिकार
रखता है।

विभिन्न प्रकार के प्रपत्र
(Different Type of Instruments)

(1) लदान बिल (Bill of Lading)—यह अर्द्ध परक्राम्य प्रपत्र (Quasi
Negotiable Instrument) है। इसमें बिल का हस्तांतरण किया जाता है परन्तु
प्राप्तकर्त्ता को हस्तांतरणकर्त्ता से शुद्ध अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता है।

(2) पोस्टल आर्डर (Postal Order)—इसका हस्तांतरण सुपुर्दगी द्वार
सम्भव नहीं है। अतः यह परक्राम्य प्रपत्र नहीं है।

(3) प्रतिज्ञा-पत्र (Promissory Note)—यह परक्राम्य प्रपत्र है।

(4) ऋण-पत्र (Debenture)—यह परक्राम्य प्रपत्र नहीं है चूंकि इस
हस्तांतरण सुपुर्दगी द्वारा नहीं किया जा सकता है।

(5) रेलवे रसीद (Railway Receipt)—यह अर्द्ध परक्राम्य प्रपत्र
(लदान बिल के आधार पर)।

(6) जीवन बीमा पॉलिसी (Life Insurance Policy)—इसमें स्वा
का हस्तांतरण नहीं किया जा सकता है। अतः यह परक्राम्य प्रपत्र नहीं है।

(7) अंश अधि-पत्र (Share Certificate)—अंश अधिपत्र परक्राम्य

नहीं है[1] चूंकि इनका हस्तांतरण मात्र सुपुर्दगी द्वारा सम्भव नहीं है।

(8) करन्सी नोट (Currency Note)—यह परक्राम्य प्रपत्र है। यह रिजर्व बैंक का प्रतिज्ञा-पत्र है। इसका भुगतान वाहक को माँग पर देय होता है। कोई भी विलेख, जो वाहक को माँग पर देय है, उसके प्रचलन का अधिकार भारतवर्ष में केवल रिजर्व बैंक को दिया गया है। परन्तु बैंक अथवा उसके अभिकर्ता पर किसी व्यक्ति के खाते में वाहक को माँग पर देय चैक अथवा ड्राफ्ट जारी किये जा सकते हैं।

(9) बैंक ड्राफ्ट (Bank Draft)—बैंक ड्राफ्ट लिखित शर्तरहित आज्ञा पत्र है जिस पर लिखने वाले के हस्ताक्षर होते हैं। बैंक ड्राफ्ट किसी व्यक्ति विशेष पर आदेश होता है। अतः बैंक ड्राफ्ट में परक्राम्य प्रपत्र की समस्त विशेषतायें पायी जाती हैं। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 85 A तथा 131 A के अनुसार भुगतानकर्ता एवं संग्रहकर्ता बैंक को ड्राफ्ट का भुगतान अथवा संग्रहण करने पर बैंक के समान ही विधिक संरक्षण प्रदान किया गया है। अतः बैंक ड्राफ्ट को कुछ विशेष दशाओं में चैक माना गया है।

(10) व्यापारिक साख पत्र (Commercial Letter of Credit)—व्यापारिक साख पत्र में हित का परक्राम्य समझा गया है चूंकि इसका परक्राम्य हितग्राही की सहमति से किया जा सकता है।[2]

(11) सरकारी प्रतिज्ञा पत्र (Government Promissory Notes)—इनका हस्तांतरण पृष्ठांकन द्वारा किया जा सकता है। अतः इसे परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम में सम्मिलित किया जा सकता है।[3]

परक्राम्यता
(Negotiability)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 14 के अनुसार[4], परक्राम्य प्रपत्र (चैक, प्रपत्र, प्रतिज्ञापत्र) का हस्तांतरण, किसी अन्य व्यक्ति को उसका धारक बनाने के उद्देश्य से किया जाता है। इसी प्रक्रिया को विनिमय-साध्यता अथवा परक्राम्यता (Negotiation) कहा जाता है। परक्राम्य प्रपत्र का हस्तान्तरण (Transfer) प्रपत्र के परक्रामण (Negotiation) अथवा सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 130 के अन्तर्गत प्रपत्र के अभिहस्तांकन अथवा समनुदेशन (Assignment) के माध्यम से किया जा सकता है। प्रपत्र के परक्रामण के अन्तर्गत प्रपत्र दूसरे व्यक्ति को इस आशय से हस्तान्तरित किया जाता है कि दूसरा व्यक्ति प्रपत्र का धारक बन जाता है। धारक

---

1. "Praga Tools Corporation Ltd. Vs. Patny. A. I. R. 1968. A.P. ...
2. "United Bank of India Ltd. Vs. Nederlandsebe Standard Bank A. I. R. 1962 Cal ...
3. "Bank of Bengal Vs. Me Leod.
4. "When a promissory note, bill of exchange or cheque is ... to any other person so as to constitute that person the holder ... instrument is said to be negotiated." —Sec. 14, Negotiable

से अभिप्राय उस व्यक्ति से होता है जो प्रपत्र को अपने अधिकार में रखने के लिये अधिकृत होता है तथा प्रपत्र से सम्बन्धित पक्षकारों से प्रपत्र का मूल्य वसूल कर सकता है।

परक्राम्यता के अन्तर्गत प्रपत्र की सुपुर्दगी अत्यन्त आवश्यक होती है। प्रपत्र की सुपुर्दगी (Delivery) वास्तविक अथवा रचनात्मक (Actual or Constructive) हो सकती है। वास्तविक सुपुर्दगी के अन्तर्गत प्रपत्र का शारीरिक हस्तांतरण (Physical Transfer) किया जाता है। इसके विपरीत, रचनात्मक सुपुर्दगी के अन्तर्गत प्रपत्र के अधिकार का हस्तान्तरण किया जाता है। इसमें वास्तव में प्रपत्र हस्तान्तरणकर्त्ता के पास ही रहता है, परन्तु वह हस्तांतरिती के अभिकर्त्ता के रूप में प्रपत्र को अपने पास रखता है।

परक्राम्य प्रपत्र के अन्तर्गत सुपुर्दगी का होना आवश्यक है। यदि प्रपत्र पर पृष्ठांकन कर दिया जाता है परन्तु सुपुर्दगी नहीं की जाती है तब प्रपत्र का परक्रामण सम्पूर्ण नहीं समझा जा सकता है। इस निर्णय की पुष्टि ठाकुरसी बनाम किंग एम्परर नामक विवाद[1] में की गयी। यदि प्रपत्र के पृष्ठांकन (Endorsement) की सूचना हस्तान्तरिती को दी जा चुकी है तब इसको रचनात्मक सुपुर्दगी समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि प्रयाग दास बनाम दौलत राम नामक विवाद[2] में की गई। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि सुपुर्दगी शर्तसहित अथवा विशेष उद्देश्य के लिये की गयी है तब हस्तांतरणकर्त्ता एवं हस्तांतरिती के बीच मालिक एवं अभिकर्त्ता (Principal and Agent) के सम्बन्ध होते हैं। इस स्थिति में प्रपत्र का परक्रामण नहीं समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि राजरूपराम बनाम बुद्धू नामक विवाद[3] में की गई। इसमें हस्तांतरणकर्त्ता के दायित्व उसी दशा में प्रारम्भ होते हैं जबकि विशेष उद्देश्य की प्राप्ति कर ली गयी है अथवा शर्त पूर्ण हो गयी है। शर्तसहित सुपुर्दगी की दशा में यथाविधिधारी अथवा साधिकार धारक (Holder in Due Course) के अधिकार प्रभावित नहीं होते हैं।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 47 के अनुसार, यदि परक्राम्य पपत्र वाहक को (Bearer) देय है तब इसका परक्रामण की सुपुर्दगी से ही पूरा समझा जाता है। परन्तु यदि प्रपत्र की सुपुर्दगी शर्तसहित की जाती है तब शर्त पूरी होने तक परक्राम्य प्रपत्र का परक्रामण नहीं समझा जा सकता है। इसके विपरीत, यदि प्रपत्र आदेश पर देय है तब प्रपत्र का परक्रामण प्रपत्र के पृष्ठांकन एवं उसकी सुपुर्दगी के साथ पूर्ण समझा जाता है।[4] (धारा 48) परन्तु मृतक के उत्तराधिकारियों

1. Thakursi Vs. King Emperor.
2. Prayag Das Vs. Daulat Ram.
3. Raj Roop Ram Vs. Budhoo.
4. "A promissory note, bill of exchange or cheque payable to order is negotiable by the holder by endorsement and delivery thereof." Sec. 48.

द्वारा ऐसे चैक, बिल आदि का मात्र सुपुर्दगी द्वारा परक्रामण नहीं किया जा सकता है जिनका पृष्ठांकन मृतक द्वारा किया गया था (धारा 57)। इस स्थिति में प्रपत्र का परक्रामण मृतक के उत्तराधिकारियों द्वारा पुनः पृष्ठांकन एवं सुपुर्दगी द्वारा किया जायेगा।

परक्राम्य प्रपत्र का हस्तांतरण प्रपत्र के अभिहस्तांकन द्वारा भी किया जा सकता है परन्तु इस स्थिति में समनुदेशिती (Assignee) को हस्तांतरणकर्ता के अधिकार प्राप्त होते हैं और वह उससे अच्छा अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता है। अतः इसमें समनुदेशिती साधिकार धारक नहीं बन सकता है।[1] प्रपत्र का अभिहस्तांकन लिखित रूप में किया जाना चाहिये।

परक्राम्यता एवं हस्तांतरणशीलता
(Negotiability and Transferability)

हस्तांतरणशीलता से आशय किसी वस्तु का एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरण करने से है। इसके अन्तर्गत हस्तांतरणकर्ता किसी वस्तु में निहित अपने अधिकारों को दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरण करता है। इसमें हस्तांतरणकर्ता, हस्तांतरिती को अपने से अच्छा स्वामित्व (Title) प्रदान नहीं कर सकता है अर्थात् यदि हस्तांतरणकर्ता का स्वामित्व दूषित है तब हस्तांतरिती का स्वामित्व भी दूषित समझा जाता है। इसके विपरीत, परक्राम्यता के अन्तर्गत प्रपत्र का हस्तांतरण किसी अन्य व्यक्ति को इस आशय से किया जाता है कि व्यक्ति प्रपत्र का धारक (Holder) बन जाये। इस स्थिति में हस्तांतरिती (Transferee) का स्वामित्व हस्तांतरणकर्ता के स्वामित्व से प्रभावित नहीं होता है अतः परक्राम्यता के अन्तर्गत हस्तांतरिती हस्तांतरणकर्त्ता से अच्छा स्वामित्व प्राप्त कर सकता है।

परक्राम्यता एवं अभिहस्तांकनशीलता अथवा समनुदेशनशीलता
(Negotiability and Assignability)

सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम (Transfer of Property Act) की धारा 130 के अन्तर्गत स्पष्ट किया गया है कि आकस्मिक दावों (Actionable Claims) का अभिहस्तांकन अथवा समनुदेशन किया जा सकता है। आकस्मिक दावों के अन्तर्गत पुस्तकीय ऋण (Book Debt) एवं धन सम्बन्धी दावे सम्मिलित किये जाते हैं। अभिहस्तांकन में लिखित प्रलेख पर हस्ताक्षर करके सम्पत्ति का अन्तरण किया जाता है। परक्राम्यता एवं अभिहस्तांकनशीलता में निम्नलिखित अन्तर हैं—

(1) लिखित (Written)—परक्राम्यता में प्रपत्र का हस्तांतरण मात्र सुपुर्दगी द्वारा किया जा सकता है। इसके विपरीत, अभिहस्तांकन में हित का हस्तान्तरण लिखित प्रलेख की सहायता से सम्भव होता है।

(2) प्रतिफल (Consideration)—परक्राम्यता में परक्राम्य

1. Mohammad Vs. Rango Rao.

ल प्राप्त हुआ समझा जाता है जबकि अभिहस्तांकन में प्रतिफल का होना
त्य अनुबन्ध के समान साबित करना आवश्यक होता है।

(3) सूचना (Notice)— परक्राम्यता में परक्रामण की सूचना देनदार को
आवश्यक नहीं होती है, परन्तु अभिहस्तांकन में देनदार को सूचना देना अनिवार्य
झा गया है।

(4) स्वामित्व (Ownership)—परक्राम्यता में हस्तांतरिती (Transferee) का स्वामित्व हस्तांतरणकर्त्ता के स्वामित्व से प्रभावित नहीं होता है। हस्तांतरिती द्वारा सद्भाव से, मूल्य के बदले एवं दूषित स्वामित्व का ज्ञान न रखते हुये प्रपत्र प्राप्त करने की स्थिति में वह साधिकार धारक (Holder in Due Course) समझा जाता है। इसके विपरीत, अभिहस्तांकन में समनुदेशिती (Assignee) को हस्तांतरणकर्त्ता के अधिकार प्राप्त होते हैं और वह उससे अच्छा स्वामित्व प्राप्त नहीं कर सकता है। इसमें समनुदेशिती को हस्तांतरणकर्त्ता के समस्त दायित्वों के साथ सम्पत्ति प्राप्त होती है अर्थात् उसे सम्पत्ति में अधिकार दायित्वों (Equities) के समरूप प्राप्त होता है।

(5) क्षेत्र (Scope)—परक्राम्यता में केवल परक्राम्य प्रपत्रों का परक्रामण किया जाता है। परन्तु अभिहस्तांकन में आकस्मिक दावों, पुस्तकीय ऋण एवं धन सम्बन्धी दावों का हस्तांतरण किया जाता है।

धारक
(Holder)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 8 के अनुसार, धारक से आशय उस
व्यक्ति से है जो विनिमयपत्र, चैक अथवा प्रतिज्ञा-पत्र अपने नाम में, अपने पा
रखता है तथा सम्बद्ध व्यक्तियों से उसका भुगतान प्राप्त करता है।[1] यदि प्र
(Instrument) खो गया है अथवा नष्ट हो गया है तब प्रपत्र का धारक वही व्य
समझा जायेगा जिसको खोने अथवा नष्ट होने के समय भुगतान प्राप्त करने
अधिकार प्राप्त होता है। अतः धारक से आशय उस व्यक्ति से है जो प्रपत्र
नाम में रखने का अधिकारी होता है तथा प्रपत्र से सम्बद्ध व्यक्ति से रुपया
करने का अधिकार रखता है। इसमें धारक को प्रपत्र पर वास्तविक कब्जा
आवश्यक नहीं है। वह केवल कब्जा रखने का अधिकारी होना चाहिये। उदाह
आदेशित चैक का प्रापक अपने अभिकर्त्ता को चैक बिना पृष्ठांकन के सुपुर्द

---

1. "The 'Holder' of a promissory note, bill of exchange o
means any person entitled in his own name to the possession there
receive or recover the amount due there on from the parties there
the note, bill or cheque is lost or destroyed, its holder is the person
of such loss or destruction"

भी प्रपत्र का धारक बना रहता है। अतः प्रपत्र का धारक विधि के अनुसार धारक होना आवश्यक होता है, उसके लिये प्रपत्र पर वास्तविक कब्जा अनिवार्य नही है। यदि किसी विधि के लागू होने पर कोई व्यक्ति प्रपत्र का धारक बनता है तब उसे प्रपत्र का प्रापक अथवा पृष्ठांकिती होना आवश्यक नहीं होता है। उदाहरणार्थ— मृतक की मृत्यु के पश्चात् प्रपत्र के धारक मृतक के विधिक उत्तराधिकारी होते हैं। इस सम्बन्ध मे यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रपत्र का हितग्राही वास्तव म प्रपत्र का धारक हो, यह आवश्यक नही होता है। उदाहरणार्थ—प्रपत्र का संग्रह के लिये पृष्ठांकिती (Endorsee for Collection) वास्तव मे प्रपत्र का धारक नहीं होता है। अतः धारक वह व्यक्ति होता है जो प्रपत्र को अपने कब्जे में रखने का अधिकारी होता है।

प्रपत्र का धारक बनने के लिये यह अनिवार्य है कि धारक प्रपत्र पर कब्जा रखने के लिये अधिकारी हो और वह प्रपत्र से सम्बन्धित पक्षकारो पर रुपया वसूली का अधिकार रखता हो। अतः वह व्यक्ति प्रपत्र का धारक नही है जिसके कब्जे मे प्रपत्र हो, तथा वह रुपया वसूली के लिये सम्बद्ध पक्षकारों पर वाद प्रस्तुत नही कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि लक्ष्मीचन्द्र बनाम मदनलाल नामक विवाद[1] मे की गयी है। उदाहरणार्थ—जाली पृष्ठांकन की स्थिति मे पृष्ठांकिती के कब्जे मे प्रपत्र होता है परन्तु वह सम्बद्ध व्यक्तियों से रुपया वसूली का अधिकार नही रखता है। अतः वह प्रपत्र का धारक नहीं होता है। न्यायालय मे रुपया वसूली के लिये वही व्यक्ति वाद प्रस्तुत कर सकता है जो प्रपत्र में हितग्राही है। फर्म के साझेदार के हित मे देय प्रपत्र पर फर्म की ओर से तथा परिवार के कर्ता के हित मे देय प्रपत्र पर संयुक्त हिन्दू परिवार की ओर से वाद प्रस्तुत किया जा सकता है। परन्तु प्रपत्र मे रुपया वसूली के लिये वाद प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति अनिवार्य रूप से धारक नही होता है।

अतः धारक वह व्यक्ति होता है जिसे प्रपत्र पर कब्जा रखने का अधिकार प्राप्त होता है तथा वह प्रपत्र के सम्बद्ध व्यक्तियों से रुपया वसूली का अधिकारी होता है। इसके अतिरिक्त, प्रपत्र खोने की स्थिति में वह प्रपत्र की अनुलिपि (Duplicate) प्राप्त करने का अधिकारी होता है।

साधिकार धारक अथवा यथाविधिधारी
(Holder In Due Course)

यथाविधिधारी अथवा साधिकार धारक से आशय उस व्यक्ति से है जिसने कोई प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय विपत्र अथवा चैक पर्याप्त प्रतिफल के फलस्वरूप, देय तिथि से

1. Lachmichand Vs. Madanlal A.I.R. 194,7 Allahabad. 52

पूर्व तथा पूर्ण सद्भाव के साथ प्राप्त किया है ।[1] यथाविधिधारी के लिये निम्नलिखित सावधानियों को ध्यान में रखना आवश्यक है —

(i) यदि प्रपत्र वाहक को देय है तब यथाविधिधारी को प्रपत्र अपने अधिकार में रखना चाहिये । इसके विपरीत, प्रपत्र आदेश पर देय होने की स्थिति में, उसका नाम प्रापक अथवा पृष्ठांकिकी (Endorsee) के रूप में, प्रपत्र पर होना चाहिये ।

(ii) परक्राम्य प्रपत्र का परक्रामण, प्रपत्र की देय तिथि से पूर्व होना चाहिये । देय तिथि के पश्चात् प्रपत्र का परक्रामण करने पर प्रपत्र का हस्तांतरिती (Transferee) प्रपत्र के हस्तांतरणकर्त्ता से अच्छा अधिकार प्राप्त नहीं करता है ।

(iii) प्रपत्र अपरक्राम्य (Not negotiable) नहीं होना चाहिये अन्यथा प्रपत्र के धारक को यथाविधिधारी के अधिकार प्राप्त नहीं हो सकते हैं ।

(iv) परक्राम्य प्रपत्र का पराक्रामण उचित प्रतिफल (Consideration) के बदले होना चाहिये । प्रतिफल विधिक (Legal) एवं पर्याप्त होना चाहिये ।

(v) परक्राम्य प्रपत्र पूर्ण सद्भावना (Good Faith) से प्राप्त किया जाना चाहिये । हस्तांतरणकर्त्ता के स्वामित्व पर सन्देह नहीं होना चाहिये ।

परक्राम्य प्रपत्र को उचित प्रतिफल के बदले में प्राप्त किया जाना चाहिये । बाजी के अनुबन्ध (Wager Contract) में प्राप्त प्रतिफल अथवा अनैतिक अथवा जनहित के विरुद्ध कोई प्रतिफल अथवा कार्य वैध अनुबन्ध को निर्मित नहीं करता है । अतः इस स्थिति में यथाविधिकारी नहीं बन सकता है । इसी प्रकार, यदि प्रपत्र दान (Donation) में दिया गया है तब दान का प्राप्तकर्त्ता (Donee) प्रपत्र को दान में देने वाले व्यक्ति (Donor) के विरुद्ध कोई अधिकार प्रयोग में नहीं ला सकता है । माँग पर देय (On Demand) प्रपत्र की स्थिति में, देय तिथि का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है । अतः प्रपत्र का धारक, यथाविधिधारी के रूप में स्थान प्राप्त कर सकता है । इसी प्रकार, उत्तरदिनांकित चैक (Postdated Cheque) की स्थिति में धारक यथाविधिधारी बन सकता है । बीत-काल चैक (Stale Cheque) की स्थिति में, चैक का धारक यथाविधिधारी नहीं बन सकता है परन्तु वह प्रपत्र के हस्तांतरणकर्त्ता के विरुद्ध अधिकार रखता है ।

परक्राम्य प्रपत्र सद्भावना से प्राप्त किया जाना चाहिये । इंग्लिश लॉ (English Law) के अनुसार, सद्भावना से आशय विपत्र को पूर्ण ईमानदारी के साथ प्राप्त किया जाना चाहिए । यदि धारक द्वारा लापरवाही से कार्य किया गया

1. "Holder in due course" means any person who for consideration become the possessor of promissory note, bill of exchange or cheque, if payable to bearer or the payee or indorsee thereof, if payable to order before the amount mention in it become payable and without having sufficient cause to believe that any defect existed in the title of the person from whom he derived his title. —Sec. 6, N. I. Act, 1981

है तब, इसका यथाविधिधारी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसके विपरीत, भारतीय विधि (Indian Law) के अन्तर्गत, प्रपत्र को सद्भावना से प्राप्त किया गया उसी स्थिति में समझा जायेगा जबकि प्रपत्र के हस्तांतरिती द्वारा लापरवाही (Negligence) से कार्य नहीं किया गया है। अत भारतीय विधि के अन्तर्गत, यथाविधिधारी को पूर्ण सावधानी से विपत्र प्राप्त करना चाहिये। इसमें क्रेता सावधान (Caveat Emptor) नियम को प्रधानता दी गयी है। यदि प्रपत्र पर अनियमित पृष्ठांकन (Irregular Endorsement) अथवा आहर्ता के जाली हस्ताक्षर (Forged Signature) किये गये हैं तब विपत्र का धारक यथाविधिधारी नहीं हो सकता है। परन्तु, यदि प्रपत्र वाहक को देय है तथा पृष्ठांकनकर्ता के हस्ताक्षर जाली किये जाते हैं, तब प्रपत्र का धारक यथाविधिधारी के अधिकार रखता है चूंकि वाहक को देय चैक का परक्रामण मात्र सुपुर्दगी से सम्भव होता है। इस निर्णय की पुष्टि होगर्थ बनाम लाथन (Hogarth Vs. Lathan) नामक विवाद में की गई। इसके अतिरिक्त, यदि प्रपत्र अपर्याप्त प्रतिफल[2] के बदले प्राप्त किया गया है तब, यह हस्तांतरणकर्ता के स्वामित्व पर सन्देह प्रगट करता है। अत प्रपत्र को सद्भावना से प्राप्त किया गया है इसके लिये पर्याप्त प्रतिफल का होना आवश्यक है। प्रपत्र के धारक को हस्तांतरणकर्ता के दूषित स्वामित्व (Defective Title) का ज्ञान नहीं होना चाहिये।

अपूर्ण प्रपत्र (Inchoate Instrument) की दशा मे प्रापक यथाविधिधारी नहीं होता है परन्तु वह व्यक्ति जिसने प्रपत्र को उचित प्रतिफल के बदले एव विश्वसनीय (Bonafide) हस्तांतरिती के रूप मे, प्राप्त किया है, यथाविधिधारी होता है। प्रापक यथाविधिधारी नहीं समझा जाता है चूंकि प्रापक को अपूर्ण प्रपत्र प्राप्त होता है और वह स्वय इसको पूर्ण करता है। यथाविधिधारी की स्थिति में, यह आवश्यक है कि प्रपत्र पूर्ण होना चाहिये तथा प्रपत्र का परक्रामण किया जाना चाहिए।

बैंक की स्थिति (Banker's Condition)—बैंक अपने ग्राहकों के, देय तिथि से पूर्व, परक्राम्य प्रपत्रों का क्रय करता है। इस स्थिति में, बैंक यथाविधिधारी समझा जाता है। परक्राम्य प्रपत्र अपरक्राम्य (Not Negotiable) होने की स्थिति मे बैंक यथाविधिधारी नहीं होता है।

धारक एवं साधिकार धारक में अन्तर
(Difference between Holder and Holder in Due Course)

प्रपत्र के धारक एवं साधिकार धारक मे पर्याप्त अन्तर है, वे अन्तर निम्नलिखित हैं—

---

1. Arab Bank Ltd. Vs. Ross.
2. Raphael Vs. Bank of England.

(1) प्रतिफल (Consideration)—धारक की स्थिति में प्रतिफल का होना आवश्यक नहीं होता है परन्तु साधिकार धारक के लिये पर्याप्त प्रतिफल अनिवार्य समझा गया है।

(2) कब्जा (Possession)—धारक के लिये प्रपत्र पर कब्जे का अधिकार होना आवश्यक होता है तथा यह अधिकार किसी भी समय प्राप्त किया जा सकता है। इसके विपरीत, साधिकार धारक के लिये प्रपत्र पर कब्जा प्रपत्र की देय तिथि से पूर्व प्राप्त किया जाना चाहिये।

(3) स्वामित्व (Ownership) - साधिकार धारक का स्वामित्व हस्तांतरण-कर्त्ता के स्वामित्व से प्रभावित नहीं होता है तथा उसे दोषरहित स्वामित्व प्राप्त होता है। बशर्ते उसने प्रपत्र पूर्ण सावधानी से एवं पर्याप्त मूल्य के बदले प्राप्त किया हो। धारक की स्थिति में यह अनिवार्य नहीं होता है।

साधिकार अथवा यथाविधिधारी के विशेषाधिकार
(Privileges of Holder in Due Course)

साधिकार धारक अथवा यथाविधिधारी को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम के अन्तर्गत सामान्य धारक की तुलना में निम्नलिखित विशेषाधिकार प्रदान किये गये हैं—

(1) दोषरहित स्वामित्व (Title Free of Defects)—यथाविधिधारी का स्वामित्व दोषरहित होता है। यदि हस्तांतरणकर्त्ता का दायित्व दोषयुक्त है तथा प्रपत्र का हस्तांतरण उचित प्रतिफल एवं पूर्ण सद्भाव से किया गया है तब, प्रपत्र के हस्तांतरिती (यथाविधिधारी) के अधिकार हस्तांतरणकर्त्ता से अच्छे समझे जाते हैं।

(2) समस्त पक्षकारों का दायित्व (Liabilities to all Prior Parties)—यथाविधिधारी को प्रपत्र का भुगतान, पूर्व के किसी भी एक पक्षकार अथवा समस्त पक्षकारों से प्राप्त करने का अधिकार होता है।

(3) अपूर्ण प्रपत्र की स्थिति में (In Case of Inchoate Instrument)—अपूर्ण प्रपत्र की स्थिति में यथाविधिधारी के अधिकार प्रभावित नहीं होते हैं। यदि प्रपत्र के लेखक द्वारा अपूर्ण प्रपत्र जारी किया गया है तथा प्रापक (Payee) ने उसमें त्रुटिपूर्ण विधि से अधिक रकम लिखी है तब प्रपत्र का आहर्ता (Drawer) यथाविधि-धारी के विरुद्ध अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता है।

(4) शर्तसहित परक्रामण (Conditional Negotiation)—यदि प्रपत्र का परक्रामण किसी विशेष उद्देश्य अथवा शर्तसहित किया गया है तब, यथाविधिधारी के अधिकार प्रभावित नहीं होते हैं।

(5) कल्पित नाम में देय विपत्र (Bills Payable in a Fictitious Name)—यदि विनिमय बिल के आहर्ता (Drawer) द्वारा बिल कल्पित नाम में लिखा गया है तथा स्वयं पृष्ठांकित किया गया है तब बिल का स्वीकारक यथाविधि-

धारी के प्रति अपने दायित्व से इस आधार पर मुक्त नहीं हो सकता है कि बिल कल्पित नाम में लिखा गया है।

(6) अवैधानिक प्रतिफल (Unlawful Consideration)—प्रपत्र के यथाविधिधारी को उन व्यक्तियों के विरुद्ध अधिकार प्राप्त होता है जिनसे प्रपत्र खो गया (Lost) है अथवा प्रपत्र को धोखे (Fraud) से प्राप्त किया गया है। यदि परक्राम्य प्रपत्र का प्रतिफल अवैधानिक अथवा अनैतिक (Immoral) है तब, यथाविधिधारी की स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। उसको प्रपत्र से सम्बन्धित समस्त पक्षों पर अधिकार प्राप्त होता है।

(7) परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 120 के अनुसार, बिल के आहर्ता अथवा आदर के लिये स्वीकारकर्ता अथवा चैक के लेखक को यथाविधिधारक द्वारा वाद प्रस्तुत करने पर प्रपत्र की मूल वैधता (Original Validity) से इन्कार करने का अधिकार नहीं है। परन्तु इस धारा के अन्तर्गत लेखक अथवा आहर्ता अथवा स्वीकारक को यह तर्क देने के लिये प्रतिबन्धित नहीं किया गया है कि वह प्रपत्र लिखने के समय अवयस्क था अथवा उसके हस्ताक्षर जाली हैं अथवा उसने प्रपत्र नहीं लिखा है। अतः इन परिस्थितियों में प्रपत्र के यथाविधिधारी को कोई अधिकार प्राप्त नहीं है।

(8) परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 121 के अनुसार, प्रतिज्ञा-पत्र के स्वीकारक अथवा विनिमय बिल के लेखक को यथाविधि द्वारा वाद प्रस्तुत किये जाने पर, प्रापक की क्षमता से इन्कार करने का अधिकार नहीं है कि प्रापक को प्रपत्र पृष्ठांकित करने का अधिकार नहीं था अर्थात् प्रापक (Payee) पृष्ठांकन की तिथि पर अवयस्क था अथवा पागल था। अतः यथाविधिधारी के विरुद्ध प्रपत्र का लेखक उत्तरदायी होता है। परन्तु प्रतिज्ञापत्र का स्वीकार अथवा विनिमय बिल का लेखक प्रापक के पृष्ठांकन की वैधता अथवा शुद्धता को चुनौती दे सकते हैं। इस स्थिति में प्रपत्र का धारक यथाविधिधारी नहीं हो सकता है।

(9) परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 122 के अनुसार, किसी भी पृष्ठांकनकर्ता को उत्तरवर्ती धारक द्वारा वाद प्रस्तुत किये जाने पर पूर्व के पक्षकारों की अनुबन्ध क्षमता अथवा हस्ताक्षर से इन्कार करने का अधिकार नहीं है। कोई भी पृष्ठांकनकर्ता पृष्ठांकन करते समय इस आशय का अनुबन्ध करता है कि उसे प्रपत्र का पृष्ठांकन करने का अधिकार है तथा उससे पूर्व के पक्षकारों के हस्ताक्षर जिनसे उसने प्रपत्र प्राप्त किया है, वास्तविक अथवा विशुद्ध (Genuine) हैं। परन्तु पृष्ठांकनकर्ता को प्रपत्र की वैधता अथवा शुद्धता को चुनौती देने के लिये प्रतिबन्धित नहीं किया गया है। उदाहरणार्थ—वाहक को माँग पर देय प्रपत्र के सम्बन्ध में पृष्ठांकनकर्ता प्रपत्र की वैधता को चुनौती दे सकता है कि ऐसा प्रपत्र केवल रिजर्व बैंक द्वारा जारी किया जा सकता है।

मूल्य के लिये धारक
(Holder for Value)

मूल्य के लिये धारक से आशय उस व्यक्ति से है जिसने कोई ऐसा प्रपत्र प्राप्त किया है जिस प्रपत्र का मूल्य चुकाया जा चुका है। प्रपत्र के धारक के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह प्रपत्र का मूल्य स्वयं चुकाये। मूल्य के लिये धारक के अधिकार, प्रपत्र के लेखक अथवा पूर्व सम्बन्धित व्यक्तियों पर होते हैं। मूल्य के लिये धारक (Holder for Value) यथाविधिधारी से पृथक अस्तित्व रखता है। यथाविधिधारी के लिये आवश्यक है कि प्रतिफल के बदले प्रपत्र को प्राप्त करे। इसके विपरीत, मूल्य के लिये धारक की स्थिति में यह तथ्य आवश्यक नहीं है।

यथाविधि भुगतान
(Payment in Due Course)

परक्राम्य प्रपत्र का भुगतान पूर्ण सावधानी एवं सद्भाव से किया जाना चाहिये। यदि परक्राम्य प्रपत्र का भुगतान उचित रूप से नहीं किया गया है, तब प्रपत्र का भुगतानकर्त्ता, भुगतान के लिये स्वयं उत्तरदायी होता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 10 के अनुसार, यथाविधि भुगतान[1] से आशय ऐसे भुगतान से है जिसमें प्रपत्र का भुगतान दर्शनीय अभिप्राय (Apparent Tenor) के अनुसार सद्भाव से एवं विना लापरवाही के किया गया है। प्रपत्र का भुगतान, प्रपत्र के धारक को किया जाना चाहिये तथा भुगतान करते समय प्रपत्र के धारक पर कोई सन्देह नहीं होना चाहिये कि धारक भुगतान प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। अतः यथाविधि भुगतान से अभिप्राय ऐसे भुगतान से है जिसमें निम्नलिखित सावधानियों को ध्यान में रखते हुए प्रपत्र का भुगतान किया गया है—

(1) प्रपत्र का भुगतान दर्शनीय अभिप्राय (Apparent Tenor) के अनुसार किया जाना चाहिये। यदि प्रपत्र रेखांकित है तब, उसका भुगतान काउन्टर (Counter) पर नहीं करना चाहिये।

आदेशित प्रपत्र (Order Instrument) की स्थिति में प्रपत्र के पृष्ठांकन की नियमितता की जाँच करनी चाहिए। प्रपत्र में किया गया कोई भी परिवर्तन आहर्ता द्वारा अभिप्रमाणित किया जाना चाहिए।

(2) प्रपत्र का भुगतान पूर्ण सद्भाव विना लापरवाही से किया जाना चाहिये।

(3) प्रपत्र का भुगतान उस व्यक्ति को करना चाहिये जिसके अधिकार में प्रपत्र है।

---

1. Payment in due course means payment in accordance with the apparent tenor of the instrument in good faith and without negligence to any person in possession thereof under circumstances which do not afford a reasonable ground for believing that he is not entitled to receive payment of the amount therein mentioned.

Sec. 10, N. I. Act.

(4) प्रपत्र का भुगतान करते समय सन्देहजनक परिस्थितियाँ नहीं होनी चाहिए। उदाहरणार्थ—प्रपत्र दो हस्तलेख (Handwriting) में अथवा दो स्याही (Ink) में नहीं लिखा होना चाहिए तथा फर्म की स्थिति में फर्म के खाते से रुपया साझेदारों के व्यक्तिगत खातों में अवरित करने समय बैंक को विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिए।

(5) प्रपत्र का देयतिथि से पूर्व भुगतान नहीं किया जाना चाहिए। विनिमय बिल की स्थिति में देय तिथि से पूर्व किया गया भुगतान यथा विधि भुगतान नहीं समझा जाता है। यह भुगतान सम्बद्ध पक्षकारों को उनके दायित्व से मुक्त करता है परन्तु इससे तृतीय पक्षकार के अधिकार प्रभावित नहीं होते हैं। यदि प्रपत्र के भुगतान के पश्चात परन्तु देय तिथि से पूर्व, प्रपत्र का पृष्ठांकन किया जाता है तब वास्तविक पृष्ठांकिती (Bonafide Endorsee) को प्रपत्र पर पूर्ण अधिकार प्राप्त होता है।

(6) उन प्रपत्रों का केवल मुद्रा (Money) में भुगतान किया जाना चाहिए जिनका भुगतान मुद्रा में स्पष्टता देय होता है। मुद्रा के अतिरिक्त, अन्य विधि से प्रपत्र का भुगतान करने की स्थिति में, यह यथाविधि भुगतान नहीं समझा जाता है।

संक्षेप में, यथाविधि भुगतान से अभिप्राय उस भुगतान से होता है जो प्रपत्र के धारक को पूर्ण सावधानी से प्रपत्र के दर्शनीय अभिप्राय के अनुसार इस आशय से किया जाता है कि प्रपत्र का धारक वास्तविक स्वामी है। निम्नलिखित परिस्थितियों में बैंक द्वारा किया गया भुगतान यथाविधि भुगतान नहीं समझा जाता है—

(i) रेखांकित चैक का भुगतान काउन्टर (Counter) पर किया जाना।

(ii) आहर्ता (Drawer) के हस्ताक्षर जाली हों।

(iii) आहर्ता द्वारा चैक का भुगतान रोका गया है परन्तु चैक का भुगतान किया जाना।

(iv) आहर्ता के खाते पर कुर्की आदेश प्राप्त होने के पश्चात्, चैक का भुगतान करना।

(v) ग्राहक की मृत्यु की सूचना प्राप्त होने के पश्चात् मृतक के खाते से भुगतान करना।

(vi) बीतकाल चैक अथवा उत्तरदिनांकित चैक का भुगतान करना।

(vii) आदेशित चैक का भुगतान धारक के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति को करना जबकि चैक पर पृष्ठांकन नहीं किया गया है।

अपूर्ण प्रपत्र
(Inchoate Instruments)

अपूर्ण प्रपत्र से अभिप्राय ऐसे प्रपत्र से है जिसमें धारक प्रपत्र को लेकर

अभिकर्त्ता के रूप में, प्राप्त करता है। इसमें परक्राम्य प्रपत्र को धारक द्वारा पूर्ण किया जाता है चूंकि लेखक अपने हस्ताक्षर करके, प्रपत्र परक्रामण (Negotiate) कर देता है लेखक । (Drawer) का दायित्व उसी स्थिति में प्रारम्भ होता है जबकि प्रपत्र (Instrument) पूर्ण[1] कर लिया गया है। प्रपत्र अंशतः (Partially) अथवा पूर्णतः (Completely) अपूर्ण हो सकता है। इसमें लेखक धारक को स्पष्टतः (Primefacie) अधिकार प्रदान करता है कि अपूर्ण प्रपत्र को पूर्ण करने का अधिकार प्रपत्र के धारक को प्राप्त है। प्रपत्र पर (चैक को छोड़कर) स्टाम्प (Stamp) आवश्यक होता है और प्रपत्र की रकम का निर्धारण (विवादस्पत स्थिति में स्टाम्प राशि के अनुसार ही किया जाता है। यदि प्रपत्र में अधिक रकम लिखी गई है तब, यथाविधिधारी को छोड़कर, अन्य किसी व्यक्तिको प्रपत्र की रकम (Amount) प्राप्त करने का अधिकार नहीं है। प्रपत्र को पूर्ण करने का अधिकार किसी भी धारक (Holder) को प्राप्त हो सकता है। यह अधिकार उस व्यक्ति द्वारा प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है जिसने, प्रपत्र अभिकर्त्ता (Agent) के रूप में प्राप्त किया है। प्रपत्र की अपूर्णता तिथि, प्रापक, रकम आदि के सम्बन्ध में हो सकती है। यदि यह अपूर्णता रकम के सम्बन्ध में है अर्थात् रकम स्टाम्प कर (Duty) की तुलना में अधिक लिखी गई है तब प्रपत्र के यथाविधिधारी को प्रपत्र में लिखी गयी रकम आहर्ता (Drawer) से प्राप्त करने का अधिकार है। अपूर्ण प्रपत्र की स्थिति में, प्रापक (Payee) यथाविधिधारी नहीं समझा जा सकता है चूंकि परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 9 के अनुसार, परक्राम्य प्रपत्र का परक्रामण होने पर ही यथाविधिधारी हो सकता है। इसमें अपूर्ण प्रपत्र का हस्तांतरण होता है। अतः प्रापक यथाविधिधारी नहीं होता है। तारा चन्द्र बनाम सिकरी ब्रादर्स नामक विवाद[2] में इस निर्णय की पुष्टि की गयी है कि अपूर्ण प्रपत्र की स्थिति में, धारक अथवा हस्तांतरिती को विश्वसनीय (Bonafide) समझना अत्यन्त कठिन कार्य है। अपूर्ण प्रपत्र की स्थिति में, यथाविधिधारी के अधिकार प्रभावित नहीं होते हैं परन्तु यथाविधिधारी को प्रपत्र का परक्रामण पूर्ण प्रपत्र (Complete Instrument) के रूप में किया जाना चाहिए।

अस्पष्ट प्रपत्र
(Ambiguous Instruments)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 17 के अनुसार, अस्पष्ट प्रपत्र से आशय उस प्रपत्र से है जिसमें यह स्पष्ट नहीं होता है कि अमुक प्रपत्र प्रतिज्ञा पत्र है अथवा विनिमय प्रपत्र। यह संदिग्धता प्रपत्र की दोषयुक्त भाषा के कारण होती है। इस स्थिति में, प्रपत्र के धारक को यह अधिकार दिया गया है कि वह दोनों विकल्पों में से, किसी एक का चुनाव कर सकता है। यदि प्रपत्र का आहर्त्ता (Drawer) एवं देनदार (Drawee) एक ही व्यक्ति है अथवा प्रपत्र कल्पित (Ficticious) व्यक्ति के

1. Montague Vs. Perkins.
2. Tarachand Vs. Sikri Brothers (55 Bombay)

नाम में लिखा गया है अथवा विपत्र किसी ऐसे व्यक्ति के नाम में है जो अनुबन्ध करने के अयोग्य है तब उपरोक्त स्थितियों में प्रपत्र को अस्पष्ट प्रपत्र समझा जाता है। अपूर्ण प्रपत्र की स्थिति में, धारक के अधिकार प्रपत्र पूर्ण होने पर प्रारम्भ होते हैं परन्तु अस्पष्ट प्रपत्र की स्थिति में, यह अधिकार धारक द्वारा विकल्प का चुनाव किये जाने पर प्रारम्भ हो जाता है।

देशीय प्रपत्र
(Inland Instruments)

देशीय विपत्र[1] से आशय उन प्रपत्रों से है जो भारतवर्ष में लिखे गये हैं तथा भारत में देय हैं अथवा भारत में रहने वाले व्यक्ति पर देय (Payable) हैं। अतः देशीय प्रपत्र की स्थिति में, निम्नलिखित तथ्य महत्वपूर्ण हैं—

(i) प्रपत्र भारतवर्ष में लिखा गया है तथा भारतवर्ष में देय है।

(ii) प्रपत्र, भारत में रहने वाले व्यक्ति के ऊपर लिखा गया है यद्यपि प्रपत्र का भुगतान विदेश में देय है। यदि प्रपत्र का पृष्ठांकन विदेशों में किया गया है तब, प्रपत्र देशीय प्रपत्र ही समझा जाता है।

प्रतिज्ञा-पत्र की स्थिति में यह आवश्यक है कि प्रतिज्ञा-पत्र भारत में रहने वाले व्यक्ति द्वारा लिखा गया हो। चूंकि इसमें लेखक एवं स्वीकारक (Acceptor) एक ही व्यक्ति होते हैं।

विदेशी प्रपत्र
(Foreign Instruments)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 12 के अनुसार, वह प्रपत्र, विदेशी प्रपत्र है जो देशीय प्रपत्र के रूप में नहीं लिखा गया है[2] अर्थात् विदेशी प्रपत्र निम्नलिखित परिस्थितियों में समझा जाता है—

(1) प्रपत्र भारत के बाहर लिखा गया है तथा प्रपत्र का भुगतान भारत के बाहर देय है।

(2) प्रपत्र भारत के बाहर लिखा गया है परन्तु प्रपत्र का भुगतान भारत में देय है।

(3) प्रपत्र भारत से बाहर रहने वाले व्यक्ति के पक्ष में भारत में लिखा गया है परन्तु प्रपत्र का भुगतान भारत के बाहर देय है।

जाली प्रपत्र
(Forged Instrument)

जाली प्रपत्र से अभिप्राय उस प्रपत्र से है जिसमें प्रपत्र कृत्रिम व्यक्ति

---

1. "A promissory note, bill of exchange or cheque drawn or made in India and made payable in or drawn upon any person recident in India, shall be deemed to be an Inland instrument." Sec. 11. N. I. Act

2. Any such instrument not so drawn made or made payable shall be . . . ." Sec. 12, Negotiable Instrument Act

(Ficticious) के नाम में लिखा गया है अथवा प्रपत्र के आहर्ता (Drawer) के हस्ताक्षर जाली हैं। यदि प्रपत्र पर जाली हस्ताक्षर हैं तब, प्रपत्र के धारक को, आहर्ता के विरुद्ध कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है, चूंकि प्रपत्र मूलत: व्यर्थ (Void) होता है। प्रपत्र का धारक इस सम्बन्ध में यदि कोई धनराशि प्राप्त करता है तब, वह व्यक्ति धन की वापसी के लिये उत्तरदायी है। जाली प्रपत्र के सम्बन्ध में, यथाविधिधारी को कोई संरक्षण प्राप्त नहीं होता है। परन्तु, इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यथाविधिधारी के अधिकार, प्रपत्र के दोषयुक्त स्वामित्व के कारण प्रभावित नहीं होते हैं अर्थात् यदि प्रपत्र कल्पित नाम में जारी किया गया है तब यथाविधिधारी को विधि के अन्तर्गत संरक्षण प्रदान किया गया है।

अथवा अन्तरण करना प्रतिफल के परिणामस्वरूप हुआ है। इस स्थिति में यह समझा जायेगा कि धारक ने उचित प्रतिफल के लिये प्रपत्र प्राप्त किया है। यदि कोई अन्य व्यक्ति इसके विरुद्ध बात कहता है तब इसको विपरीत साबित करने का भार (Burden of Proof) कहने वाले व्यक्ति के ऊपर होता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रतिफल की मान्यता उसी स्थिति में उत्पन्न होती है जबकि प्रपत्र को निष्पादित (Execute) किया जा चुका है।[1] परक्राम्य प्रपत्र में यदि कोई प्रतिफल नहीं लिखा हुआ है तब भी यह मान्यता लागू समझी जायेगी परन्तु प्रतिफल की मात्रा के सम्बन्ध में ऐसी कोई मान्यता लागू नहीं है।[2] यह मान्यता प्रतिज्ञा-पत्र के लेखक की मृत्यु की स्थिति में समाप्त नहीं होती है। यह मान्यता उत्तर दिनांकित चैक (Postdated Cheque) तथा सरकारी प्रतिज्ञा नोट (Government Promissory Note) पर भी लागू समझी जाती है। प्रतिफल प्राप्ति की मान्यता में प्रतिवादी (Defendant) को यह साबित करना पड़ता है कि वादी (Paintiff) ने प्रतिफल प्राप्त नहीं किया है। यदि वादी प्रतिफल साबित करने में असमर्थ रहता है तब भी प्रतिफल प्राप्ति की मान्यता लागू रहती है जब तक कि प्रतिवादी विपरीत साक्ष्य प्रस्तुत नहीं करता है।

(2) तिथि (Date)—परक्राम्य प्रपत्र पर जो तिथि लिखि होती है, विपरीत साक्ष्य के अभाव में प्रपत्र उसी तिथि पर लिखा हुआ अथवा स्वीकार किया हुआ समझा जाता है।

(3) स्वीकृति का समय (Time of Acceptance)—विनिमय प्रपत्र की स्वीकृति के सम्बन्ध में यह मान्यता है कि विपरीत साक्ष्य के अभाव में, प्रपत्र उचित समयावधि में तथा परिपक्वता के तिथि से पूर्व स्वीकार हुआ है। परन्तु इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रपत्र किस तिथि को स्वीकृत हुआ है, इस सम्बन्ध में कोई मान्यता नहीं है।

(4) हस्तांतरण का समय (Time of Transfer)—विपरीत साक्ष्य के अभाव में पृष्ठांकन की तिथि के पश्चात् प्रत्येक हस्तांतरण के सम्बन्ध में यह मान्यता है कि ऐसा हस्तांतरण परिपक्वता की तिथि (Maturity Date) से पूर्व किया गया है।

(5) पृष्ठांकन का क्रम (Order of Endorsement)—विपरीत साक्ष्य के अभाव में यदि परक्राम्य प्रपत्र पर एक से अधिक पृष्ठांकन किये गये हैं तब यह मान्यता है कि ये पृष्ठांकन परक्राम्य प्रपत्र पर उसी क्रम में किये गये हैं जिस क्रम में ये दिखलायी देते हैं। परन्तु यह मान्यता उसी स्थिति में समाप्त समझी जाती है जबकि बाद का पृष्ठांकिकी यह साबित कर देता है कि वे दोनों सह जमानती (Co Sureties) हैं।

(6) स्टाम्प (Stamp)—यदि कोई विनिमय प्रपत्र अथवा प्रतिज्ञा-पत्र खो

1. Ramulu Vs. Singayya. (1967)
2. Thirumalati Vs. Subba Raja (1962) Madras.

जाता है अथवा नष्ट हो जाता है, तब उसके सम्बन्ध में यह मान्यता है कि उस पर उचित स्टाम्प लगे हुये थे।

(7) यथाविधिधारी (Holder in Due Course)—विपरीत साक्ष्य के अभाव में, परक्राम्य प्रपत्र के धारक को यथाविधिधारी समझा जाता है। इस सम्बन्ध में यह मान्यता है कि धारक ने प्रपत्र पर्याप्त प्रतिफल एवं पूर्ण सद्भाव से प्राप्त किया है।[1] धारक को यह साबित करना आवश्यक नहीं है कि वह यथाविधिधारी है। परन्तु, यदि यह तथ्य साबित हो जाता है कि प्रपत्र वास्तविक एवं विधिक स्वामी से कपट अथवा धोखे से प्राप्त किया गया है अथवा अवैधानिक प्रतिफल के बदले में प्राप्त किया गया है तब यह साबित करने का भार धारक पर होगा कि वह यथाविधि-धारी है।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) परक्राम्य प्रपत्र की मुख्य विशेषताओं में हस्तांतरणशीलता, साधिकार धारक तथा अपने नाम से वाद प्रस्तुत करने का अधिकार सम्मिलित किये जाते हैं।

(2) धारक से अभिप्राय उस व्यक्ति से होता है जो प्रपत्र अपने कब्जे में रखने का अधिकारी होता है तथा प्रपत्र से सम्बन्धित पक्षकारों से रुपया वसूल करने का अधिकार रखता है।

(3) यथाविधिधारी के विशेषाधिकारों में दोषरहित स्वामित्व, अपूर्ण प्रपत्र की स्थिति में प्रभावित न होना, कल्पित नाम में जारी प्रपत्र की स्थिति में सम्बन्धित पक्षकारों पर वाद प्रस्तुत करने का अधिकार आदि सम्मिलित किये जाते हैं।

(4) यथाविधि भुगतान के अन्तर्गत प्रपत्र का भुगतान दर्शनीय अभिप्राय के अनुरूप सद्भाव से एवं बिना लापरवाही के प्रपत्र के धारक को किया जाता है।

प्रश्न
(Questions)

1. परक्राम्य प्रपत्र से आपका क्या अभिप्राय है ? इसकी मुख्य विशेषतायें बताइये।

What do you mean by Negotiable Instruments ? Desrcibe their main characteristics ?

2. क्या आप निम्नलिखित को परक्राम्य प्रपत्र समझते हैं ? कारण सहित बताइये—

Would you consider the following as negotiable instruments ? Give reasons—

(a) Bill of Lading, (b) Railway Receipt, (c) Life Insurance Policy, (d) Share Certificate, (e) Promissory Note, (f) Currency Note, (g) Postal Order, (h) A Debenture, (i) Bank Draft.

(Based on C. A. I. I B Nov., 1983, 1979)

3. निम्नलिखित में अन्तर स्पष्ट कीजिये—

Distinguish between the following—

(a) परक्राम्यता एवं हस्तांतरणशीलता।

(Negotiability and Transferability)

(C. A. I. I. B. Part. II, Nov., 1977)

(b) परक्राम्यता एवं अभिहस्तांकनशीलता।

(Negotiability and Assignability)

(c) मूल्य के लिये धारक एवं यथाविधिधारी अथवा साधिकार धारक।

(Holder for Value and Holder in Due Course)

(C. A. I. I. B. Nov., 1977)

4. यथाविधिधारी कौन है ? परक्राम्य प्रपत्र के हस्तांतरिती (transferee) को यथाविधिधारी बनने के लिये किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिये ?

Who is a "Holder in Due Course" What precautions should the transferee of a negotiable instrument take to qualify as a Holder in Due Course ? *(C. A. I. I. B May., 1984)*

5. यथाविधिधारी कौन है ? बैंक यथाविधिधारी कब होता है ?

Who is 'Holder in Due Course' ? When is Banker a 'Holder in Due Course ? *(C. A. I. I. B. May., 1984)*

6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—

Write a short note on the followings—

(a) यथाविधि भुगतान।

(Payment in Due Course)

(b) यथाविधिधारी के विशेषाधिकार।
(Privileges of a Holder in Due Course)
(*C. A. I. I. B. Part II. Nov., 1977*)

(c) धारक
(Holder)
(d) अपूर्ण विलेख।
(Inchoate Instruments) (*C. A. I. I B. Aug., 198*3*, 1979*)
(e) परक्राम्य प्रपत्र की मान्यतायें।
(Presumptions of Negotiable Instruments)
(*C. A. I. I. B. Pat II*)

7. यथाविधि भुगतान से क्या आशय है? कोई तीन उदाहरण दीजिये जिनमें यथाविधि भुगतान नहीं है।

What is 'payment in due course'? Give three examples of payment not made in due course.
(*C. A. I. I. B. May., 1983; Nov., 1979*)

8. मूल्य के लिये धारक एवं यथाविधिधारी में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

Discuss the differences between holder for value and holder in due course.

9. परक्राम्य प्रपत्र की परिभाषा दीजिये एवं इसकी मुख्य विशेषतायें समझाइये।

Define Negotiable Instrument and describe its main characteristics. (*Kanpur B. Com.*)

10. परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम के अन्तर्गत यथाविधिधारी को क्या विशेषाधिकार उपलब्ध हैं?

What privileges does a holder in due course enjoy under Negotiable Instrument Act? (*Delhi B. Com.*)

□□□

विनिमय पत्र एवं प्रतिज्ञा-पत्र
(BILL OF EXCHANGE AND PROMISSORY NOTE)

आधुनिक व्यावसायिक युग में परक्राम्य प्रपत्रों का विशिष्ट महत्व है। ये प्रपत्र मुद्रा के लेनदेन में व्यापक भूमिका अदा करते हैं। ये साख निर्माण में विशेष सहयोग प्रदान करते हैं। विनिमय पत्र एवं प्रतिज्ञा-पत्र का प्रचलन भारतवर्ष में अत्यन्त प्राचीन है। इनके माध्यम से व्यापारिक लेनदेनों का निपटारा किया जाता है।

विनिमय पत्र
(Bill of Exchange)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 5 के अनुसार, विनिमय पत्र शर्तरहित, लिखित आदेश है जिसमें लेखक एक निश्चित व्यक्ति को एक निश्चित जमा धनराशि निश्चित व्यक्ति के आदेश पर अथवा पत्र के वाहक को भुगतान करने का आदेश देता है।[1] विनिमय पत्र पर लेखक के हस्ताक्षर होते हैं। विनिमय पत्र की निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं—

(1) विनिमय पत्र लिखित (Written) होता है।

(2) विनिमय पत्र के अन्तर्गत, देनदार (Drawee) को निश्चित जमा धन राशि भुगतान करने का आदेश दिया जाता है। यह आदेश प्रार्थना के रूप में नहीं दिया जाना चाहिए अन्यथा वह प्रपत्र विनिमय बिल नहीं समझा जायेगा।

(3) विनिमय पत्र के अन्तर्गत, शर्तरहित (Unconditional) आदेश होता है। यदि प्रपत्र का भुगतान निश्चित कोष (Particular Fund) से किया जाना है तब यह प्रपत्र शर्तसहित समझा जायेगा।[2] परन्तु यदि आदेश शर्तरहित है तथा भुगतान देनदार द्वारा उस कोष से किया जाता है जिससे देनदार स्वयं की प्रतिपूर्ति करता है तब यह शर्तसहित आदेश नहीं समझा जायेगा।[3] उदाहरणार्थ – अ ब के हित प्रपत्र लिखता है जिसमें ब को आदेश दिया जाता है कि उसे प्राप्त प्रतिभूति की राशि से निश्चित रकम अ को भुगतान की जायेगी। यह आदेश विनिमय बिल समझा जायेगा।

(4) विनिमय पत्र में आहर्ता (Drawer) के हस्ताक्षर होने आवश्यक होते हैं।

---

1. A bill of exchange is an instrument in writing containing an unconditional order, signed by the maker, directing a certain person to pay certain sum of money only to, or to the order of, a certain person or to bearer to the instrument. —Sec. 5 of N. I. Act

2. Jenney Vs. Harle.

3. Griffin Vs. Wheather by.

यदि प्रपत्र पर आहर्ता के हस्ताक्षर नहीं हैं तब वह प्रपत्र विनिमय बिल नहीं समझा जायेगा।

(5) विनिमय पत्र में देनदार (Drawee) निश्चित व्यक्ति होता है जिसे प्रपत्र के मुगतान का आदेश दिया जाता है। विनिमय पत्र दो व्यक्तियों के नाम में वैकल्पिक रूप में नहीं लिखा जा सकता है। यदि बिल पर देनदार का नाम नहीं है तब यह बिल नहीं समझा जाता है, यद्यपि किसी व्यक्ति द्वारा इस पर स्वीकृति प्रदान की गयी है। इस स्थिति में बिल प्रतिज्ञा-पत्र समझा जाता है और बिल का स्वीकारक प्रतिज्ञापत्र का लेखक समझा जाता है।

(6) इसमें प्रपत्र की राशि (Amount) निश्चित होती है।

(7) इसमें प्रपत्र का प्रापक (Payee) निश्चित होता है। प्रापक संयुक्त रूप में दो या दो से अधिक व्यक्ति हो सकते हैं।

(8) प्रपत्र का मुगतान केवल मुद्रा (Money) में किया जाता है।

विनिमय पत्र से सम्बन्धित पक्षकार
(Parties Relating to Bill of Exchange)

विनिमय पत्र में निम्नलिखित पक्षकार होते हैं—

(1) आहर्ता (Drawer)—आहर्ता से आशय उस व्यक्ति से है जो विनिमय पत्र अथवा चैक लिखता है।

(2) देनदार अथवा अदाकर्त्ता (Drawee)—जिस व्यक्ति को विनिमय पत्र अथवा चैक में निर्देशित किया जाता है, उसे देनदार समझा जाता है।

(3) स्वीकारक (Acceptor)—साधारणतः विनिमय पत्र की स्थिति में, देनदार एवं स्वीकारक एक ही व्यक्ति होता है। स्वीकारक से आशय उस व्यक्ति से है जो विनिमय पत्र के मुगतान का दायित्व स्वीकार करता है।

(4) प्रापक अथवा आदाता (Payee) प्रापक से आशय उस व्यक्ति से है जिसे अथवा जिसके आदेश पर किसी अन्य व्यक्ति को प्रपत्र का मुगतान किया जायेगा।

प्रतिज्ञा-पत्र
(Promissory Note)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 4 के अनुसार, प्रतिज्ञा-पत्र से अभिप्राय ऐसे लिखित प्रपत्र से है (जो वैंक नोट अथवा मुद्रा नोट नहीं है) जिसमें विपत्र का लेखक शर्तरहित उत्तरदायित्व वहन करता है कि निश्चित धन का मुगतान किसी निश्चित व्यक्ति अथवा उसके आदेशानुसार किया जायेगा।[1] प्रतिज्ञा-पत्र में निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं—

1. A promissory note is an instrument in writing (not being a bank note or a currency-note) containing an unconditional undertaking, signed by the maker to pay a certain sum of money only to or to the order of a certain person or to the bearer of the instrument.

—Sec. 4, Negotiable Instrument Act

(1) प्रतिज्ञा-पत्र लिखित होना चाहिये। इसमें किसी भी भाषा का प्रयोग किया जा सकता है। प्रतिज्ञा-पत्र पेन्सिल अथवा स्याही से लिखा जा सकता है।

(2) इसमें निश्चित धनराशि भुगतान करने का वचन (Promise) होता है। मात्र, ऋण की स्वीकार्यता[1] (Acceptance) प्रतिज्ञा-पत्र नहीं होती है। परन्तु यदि ऋण की स्वीकार्यता के अतिरिक्त ऋण की अदायगी का वचन भी वर्णित किया गया है तब इसे प्रतिज्ञा-पत्र समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि त्रुपति बनाम रामारेड्डी नामक विवाद[2] में की गयी है। इसके अतिरिक्त यदि विलेख में ऋण की अभिस्वीकृति है तथा निश्चित रकम का भुगतान माँग पर देय है तब इसे प्रतिज्ञा-पत्र समझा जायेगा और इसमें ऋण की अदायगी का वचन आवश्यक नहीं है।[3] यदि विलेख पर भुगतान के वचन करने का शब्द (I Promise to Pay) नहीं लिखा गया है और विलेख में प्रतिज्ञा-पत्र के सभी तत्व मौजूद हैं तब यह समझा जायेगा कि विलेख प्रतिज्ञा-पत्र है। इस निर्णय की पुष्टि बालमुकुन्द बनाम मुन्नालाल रामजीलाल नामक विवाद[4] में की गई है। प्रतिज्ञा-पत्र माँग पर देय होने की स्थिति में, यदि प्रतिज्ञा-पत्र में ऋण भुगतान का वचन (Promise) नहीं लिखा गया है तब इसे अनुबन्ध समझा जायेगा और लेखक के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया जा सकता है।

(3) प्रतिज्ञा-पत्र में भुगतान का वचन शर्तरहित (Unconditional) होता है। परन्तु यदि प्रतिज्ञा-पत्र का भुगतान निश्चित स्थान पर देय है तब इसे शर्त नहीं समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि भगवानदास बनाम छगनलाल नामक विवाद[5] में की गई है। इसी प्रकार यदि प्रतिज्ञा-पत्र का भुगतान केवल माँग पर देय हो तब इसे शर्तसहित नहीं समझा जायेगा अथवा प्रतिज्ञा-पत्र निश्चित तिथि के पश्चात् माँग पर देय हो तब भी इसे बॉण्ड समझा जायेगा।[6]

(4) प्रतिज्ञा-पत्र में लेखक के हस्ताक्षर होते हैं।

(5) इसमें देय राशि निश्चित होनी चाहिये। यदि देय धन पर ब्याज देना है तथा ब्याज दर निश्चित नहीं है तब इसे प्रतिज्ञा-पत्र नहीं समझा जाता है। परन्तु यदि कोई ब्याज दर नहीं लिखी गई है तब, ब्याज दर 6 प्रतिशत समझी जाती है। (धारा 80) इस निर्णय की पुष्टि सेठ तुलसीदास लालचन्द्र बनाम राजगोपालन नामक विवाद में की गयी है।

(6) प्रतिज्ञा-पत्र में केवल मुद्रा (Money) में भुगतान करने का वचन होता है।

(7) इसमें प्रापक (Payee) निश्चित व्यक्ति होता है। इस निर्णय की पुष्टि अम्बालाल पुरुषोत्तम दास बनाम जयरलाल नामक विवाद में की गई है। प्रतिज्ञा-

1. Laxmibhai Vs Ga..esh.
2. Tirupathi Vs. Rama Reddy 21 Madras.
3. Muthu Gownder Vs. Pesumayammal A. I. R. 1961, Madras 347.
4. Bal Mukand Vs. Munnala Ramjilal. A. I. R. 1970, Punjab 516.
5. Bhagwandas Vs. Chagan lal
6. R. Devi Vs. D. L. Issu.

पत्र का लेखक प्रापक नहीं हो सकता है। यदि प्रतिज्ञा-पत्र में प्रापक का नाम नहीं लिखा गया है परन्तु प्रापक निश्चित व्यक्ति समझा जा सकता है तब इसे वैध प्रतिज्ञा-पत्र समझा जायेगा।

(8) इसमें यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रतिज्ञा-पत्र माँग पर (On Demand) जारी नहीं किया जा सकता। रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अधिनियम की धारा 31 (2) के अन्तर्गत वाहक प्रतिज्ञा-पत्र (Bearer Promissory Note) जारी करने का अधिकार, केवल रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अथवा सरकार को दिया गया है।

यदि प्रतिज्ञा-पत्र में 'अथवा आदेशानुसार' (Or order of) शब्द नहीं लिखा गया है तब इसकी विनिमय साध्यता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और इसे प्रतिज्ञा-पत्र ही समझा जाता है। परन्तु यदि प्रतिज्ञा पर स्टाम्प नहीं लगाये गये हैं तब प्रतिज्ञा-पत्र व्यर्थ समझा जाता है।[1]

(9) प्रतिज्ञा-पत्र में प्रतिफल (Consideration), स्थान (Place) एवं तिथि (Date) का होना आवश्यक समझा जाता है। यदि ये शब्द नहीं हैं तब प्रतिज्ञा-पत्र वैध समझा जायेगा। प्रतिफल प्राप्त (Value Received) शब्द का लिखना भी आवश्यक नहीं होता है। परन्तु प्रतिज्ञा-पत्र में निष्पादन (Execution) की तिथि के पश्चात् बिना लेखक की सहमति के, किया गया कोई भी परिवर्तन महत्वपूर्ण परिवर्तन समझा जाता है और यह परिवर्तन प्रतिज्ञा-पत्र को व्यर्थ बनाता है। इस निर्णय की पुष्टि एन० नारायण स्वामी बनाम मदनलाल नामक विवाद[2] में की गयी है जिसमें प्रतिज्ञा-पत्र में ब्याज की दर निष्पादन की तिथि के पश्चात् प्रापक द्वारा लिखी गयी थी। कर्नाटक हाई कोर्ट ने इसे महत्वपूर्ण परिवर्तन बतलाते हुये प्रतिज्ञा-पत्र व्यर्थ घोषित किया तथा इस प्रपत्र को अपूर्ण प्रपत्र (Inchoate Instrument) नहीं समझा गया जिसमें धारक को प्रपत्र पूर्ण करने का अधिकार होता है।

अतः प्रतिज्ञा-पत्र निष्पादित करने की तिथि पर प्रतिज्ञापत्र पूर्ण होना चाहिए। यदि अपूर्ण प्रतिज्ञा पत्र स्वीकारक द्वारा प्रापक को दिया गया है तब प्रापक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 20 के अन्तर्गत प्रतिज्ञा पत्र पूर्ण करने का अधिकार प्राप्त होता है परन्तु इससे प्रापक को यथाविधिधारी नहीं समझा जा सकता है और प्रतिज्ञा-पत्र पूर्ण परक्राम्य प्रपत्र नहीं बनता है। इसमें प्रापक को यह साबित करना पड़ेगा कि उसने अपूर्ण प्रतिज्ञा-पत्र उचित रूप में पूर्ण किया है। इस निर्णय की पुष्टि बालासुन्दरम् नामक विवाद[3] में की गयी है जिसमें वादी ने प्रतिवादी को प्रतिज्ञापत्र निष्पादन की तिथि से 2 दिन पूर्व रुपये का भुगतान कर दिया तथा प्रतिवादी द्वारा कोरा प्रतिज्ञा-पत्र स्टाम्प सहित हस्ताक्षरित किया गया। वादी द्वारा

---

1. Kuruppath Ummer's son Arakkal Kuruppath Hameed Haji Vs. Appukutti and others A. I. R. 1969, Kerala 189.)
2. N. Narayanaswamy Vs. Madanlal (A. I. R. 1982, Karnataka 227.
3. S. Ramaiah Thevar Vs- Balasundaram (1982)

प्रतिज्ञा-पत्र ऋण की राशि से अधिक राशि के लिये पूर्ण किया गया। प्रतिवादी द्वारा ऋण का भुगतान न करने पर वादी ने वाद प्रस्तुत किया परन्तु वादी का वाद इस आधार पर रद्द कर दिया गया कि वादी रुपये का भुगतान साबित करने में असमर्थ है कि उसने प्रतिवादी को अमुक तिथि पर ऋण प्रदान किया है।

अतः अपूर्ण प्रतिज्ञा-पत्र की स्थिति में प्रापक को पूर्ण करने का अधिकार है परन्तु उसे यथाविधिधारी अथवा साधिकार धारक बनने के लिये यह साबित करना पड़ेगा कि उसने स्वीकारक को रुपये का भुगतान किया है एवं प्रतिज्ञा-पत्र उचित रूप में पूर्ण किया है।

(10) प्रतिज्ञा-पत्र पर निष्पादन से पूर्व अथवा निष्पादित करते समय उचित राशि के स्टाम्प चिपकाये जाने चाहिए अन्यथा प्रतिज्ञा-पत्र व्यर्थ समझा जाता है और इसे न्यायालय में साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है। स्टाम्प प्रतिज्ञा-पत्र के मूल्य के अनुसार लगाया जाता है।

विनिमयपत्र एवं प्रतिज्ञा-पत्र में अन्तर
(Difference between Bill of Exchange and Promissory Note)

विनिमय पत्र एवं प्रतिज्ञा-पत्र में अनेक विशेषतायें समान रूप में पायी जाती हैं। परन्तु, इनमें निम्नलिखित अन्तर पाये जाते हैं—

(1) स्वभाव (Nature)—विनिमयपत्र में देनदार को रुपया भुगतान करने का आदेश दिया जाता है जबकि प्रतिज्ञा-पत्र में भुगतान करने की प्रतिज्ञा की जाती है।

(2) दायित्व (Liabilities)—विनिमय पत्र में देनदार का दायित्व प्रमुख होता है तथा लेखक का दायित्व गौण (Secondary) एवं शर्तसहित होता है। इसके विपरीत प्रतिज्ञा-पत्र में लेखक का दायित्व प्रमुख एवं पूर्ण (Absolute) होता है।

(3) स्वीकृति (Acceptance) विनिमय पत्र में देनदार की स्वीकृति महत्वपूर्ण होती है और प्रपत्र उस समय तक पूर्ण नहीं समझा जाता है जब तक कि वह देनदार द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है। इसके विपरीत, प्रतिज्ञा-पत्र में लेखक स्वयं रुपया भुगतान की प्रतिज्ञा करता है जिसमें स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होती है।

(4) प्रस्तुतीकरण (Presentation)—विनिमयपत्र की स्थिति में, आहर्ता को उत्तरदायी बनाने के लिये प्रपत्र का भुगतान के लिये अधकर्ता के समक्ष प्रस्तुत करना अनिवार्य होता है परन्तु प्रतिज्ञा-पत्र में लेखक को उत्तरदायी बनाने के उद्देश्य से प्रपत्र का प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं होता है।

(5) शर्त सहित स्वीकृति (Conditional Acceptance)—विनिमय पत्र में प्रपत्र का स्वीकारक शर्त सहित स्वीकृति प्रदान कर सकता है जिससे स्वीकृति के पश्चात प्रपत्र व्यर्थ समझा जाता है। परन्तु प्रतिज्ञा-पत्र में प्रपत्र का लेखक शर्तसहित

स्वीकृति प्रदान नहीं कर सकता है अन्यथा प्रपत्र प्रारम्भ से ही व्यर्थ समझा जायेगा।

(6) स्थिति (Position)—विनिमय पत्र में आहर्ता का प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्वीकारक से होता है। इसके विपरीत, प्रतिज्ञा-पत्र में लेखक का प्रत्यक्ष सम्बन्ध प्रापक (Payee) से होता है।

(7) सूचना (Notice) विनिमय पत्र में आहर्ता को प्रपत्र अनादरण की सूचना देना आवश्यक होता है। परन्तु प्रतिज्ञापत्र में अनादरण की सूचना लेखक को देना आवश्यक नहीं होता है चूंकि वह स्वयं अनादरण का उत्तरदायी होता है।

(8) अन्य (Other) विनिमय पत्र में प्रपत्र स्वीकृति के लिये प्रस्तुत करना, स्वीकृति प्रदान किया जाना एवं सेट अथवा खण्डों में प्रपत्र (Bills in Set) लिखा जा सकता है जबकि प्रतिज्ञा-पत्र में ये प्रावधान लागू नहीं होते हैं।

अतः विनिमय पत्र एवं प्रतिज्ञा-पत्र में पर्याप्त अन्तर है।

बिल की अनेक प्रतियाँ

(Bill in Sets)

इसमें विनिमय पत्र एक प्रलेख के रूप में नहीं लिखा जाता है। इसमें प्रपत्र की कई प्रतियाँ अथवा सेट में (Sets) लिखा जाता है।[1] यह पद्धति विदेशी व्यापार में अपनायी जाती है। इसका उद्देश्य व्यवहार में होने वाली असुविधा अथवा देरी (Delay) को दूर करना है। यह आहर्ता (Drawer) की स्वेच्छा पर निर्भर है कि वह प्रपत्र अनेक प्रतियों में लिखता है अथवा नहीं। इसमें प्रत्येक प्रति पर क्रम संख्या लिखते हैं तथा प्रत्येक प्रति में अन्य प्रति का वर्णन (Reference) किया जाता है। यदि किसी प्रति में अन्य प्रति का वर्णन नहीं किया गया है तब विश्वसनीय धारक की स्थिति में वह प्रति, एक पृथक प्रपत्र समझी जायेगी। इसमें प्रत्येक प्रति पर आहर्ता के हस्ताक्षर होते हैं और समस्त प्रतियाँ देनदार को भेजी जाती हैं। देनदार द्वारा एक ही प्रति (Set) स्वीकार की जाती है तथा स्टाम्प एक प्रति पर लगते हैं। यदि देनदार (Drawee) एक से अधिक प्रतियाँ स्वीकार करता है तब यथाविधिधारी के विरुद्ध वह समस्त स्वीकृत प्रतियों के लिये उत्तरदायी समझा जायेगा।[2] यदि प्रपत्र एक से अधिक यथाविधिधारियों को परक्रामण किया जाता है तब, वह यथाविधिधारी प्रपत्र का भुगतान प्राप्त करने का अधिकारी है जिसने प्रपत्र की प्रति सर्वप्रथम प्राप्त की है।

---

1. Bill of Exchange may be drawn in parts, each part being numbered and containing a provision that it shall continue payable only so long as the other remains unpaid. All the parts together make a set, but the whole set constitutes only one bill and it extinguished when one of the parts, if separate bill, would be extinguished." Sec. 132, N. I. Act.

2. Holdsworth Vs. Hunter 1930.

व्यापारिक एवं निभाव बिल
(Trade Bill and Accommodation Bill)

व्यापारिक प्रपत्र से आशय ऐसे प्रपत्र से है जो पर्याप्त प्रतिफल के बदले में लिखा गया है। ये प्रपत्र व्यापारिक लेन-देनों से उत्पन्न दायित्वों के निपटारे (Settlement) के फलस्वरूप लिखे जाते हैं। इसके विपरीत, निभाव बिल (Accommodation Bill) पारस्परिक सहायता के उद्देश्य से लिखे जाते हैं। इन प्रपत्रों का उद्देश्य वित्तीय साधन उपलब्ध करवाना होता है। इसमें बिल के आहर्ता बिल को बैंक से छूट पर भुनाकर (Discount) देय तिथि से पूर्व रुपया प्राप्त करके, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। देय तिथि पर, बैंक को रुपये का भुगतान कर दिया जाता है। निभाव पत्र की स्थिति में, पूर्व पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त नहीं होते हैं यदि उन्हें अनादरण की सूचना नहीं दी जाती है। इसी प्रकार बिल का आहर्ता अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है यदि बिल भुगतान के लिये स्वीकारक को प्रस्तुत नहीं किया जाता है।

निभाव बिल की स्थिति में देय तिथि पर वित्तीय सहायता प्राप्त करने वाला पक्षकार बिल के स्वीकारक को बिल में देय राशि का इस उद्देश्य से भुगतान करता है कि वह बिल का भुगतान कर सके। इसके पश्चात वह रुपया वापसी का अधिकार नहीं रखता है। इस स्थिति में निभाव पक्षकार (Accommodation Party) जिसने बिल स्वीकार किया है, बिल के धारक के प्रति भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है तथा इसमें यह तथ्य महत्वहीन होता है कि धारक को यह ज्ञान था कि स्वीकारक निभाव पक्षकार है।[1] निभाव बिल के पक्षकार बिल के धारक के प्रति भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होते हैं परन्तु यदि धारक निभाव बिल का पक्षकार है तब उसे यह अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

निभाव बिल की स्थिति में, यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि बिल का परक्रामण देय तिथि के पश्चात सद्भाव से एवं मूल्य के बदले किया जाता है तब बिल के धारक को वे समस्त अधिकार प्राप्त होते हैं जो देय तिथि से पूर्व परक्रामण की स्थिति में धारक को प्राप्त होते हैं।[2]

सावधि एवं माँग बिल
(Time and Demand Bills)

माँग बिल से आशय उस बिल से होता है जिसमें भुगतान का समय निश्चित नहीं होता है अथवा जो स्पष्टतः माँग पर, दर्शनी अथवा प्रस्तुति पर देय होता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 19 के अन्तर्गत चैक को भी माँग पत्र समझा

1. Bank of Ireland Vs. Beresford.
2. Refer to Sec. 59 of Negotiable Instrument Act.

गया है।[1] दर्शनी अथवा प्रस्तुती (At sight or on Presentation) प्रपत्र की स्थिति में प्रपत्र माँग पर देय समझा जाता है तथा इस स्थिति में प्रपत्र का भुगतान प्राप्त करने के लिये प्रस्तुतीकरण आवश्यक समझा गया है। इसके विपरीत माँग पर देय प्रपत्र का भुगतान प्रपत्र प्रस्तुत किये बिना देय हो जाता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रपत्र माँग पर अथवा प्रस्तुती पर देय होने की स्थिति में माँग प्रपत्र समझा जाता है, परन्तु इन दोनों परिस्थितियों में अन्तर होता है। प्रपत्र दर्शनी पर (At sight) या प्रस्तुती पर (On Presentation) देय होने की स्थिति में परिसीमा अवधि की गणना प्रपत्र प्रस्तुत करने की तिथि से की जाती है। इसके विपरीत, प्रपत्र माँग पर देय होने की स्थिति में परिसीमा अवधि की गणना प्रपत्र की तिथि से की जाती है।

सावधि बिल में बिल का भुगतान निश्चित तिथि के पश्चात देय होता है। इसमें बिल की परिपक्वता (Maturity) की तिथि ज्ञात की जाती है। परिपक्वता की तिथि प्रपत्र की अवधि पर निर्भर करती है। तिथि पश्चात् (After date) देय प्रपत्र की स्थिति में, अवधि की गणना विनिमय पत्र के लिखने की तिथि से की जाती है। इसके विपरीत, दर्शन के पश्चात् देय (After Sight) पत्र की स्थिति में, अवधि की गणना, विनिमय पत्र स्वीकृत (Accepted) होने की तिथि से की जाती है। प्रपत्र की देय तिथि (Due Date) ज्ञात करने के लिये अवधि में 3 अनुग्रह दिन (Days of Grace) जोड़ दिये जाते हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि देय तिथि सार्वजनिक अवकाश (Public Holiday) का दिन है तब प्रपत्र, पूर्व के दिन (Next Preceding Day) देय होता है। यदि प्रपत्र का भुगतान निश्चित दिनों (Days) बाद देय होता है तब, प्रपत्र की स्वीकृति अथवा लिखने की तिथि को अवधि की गणना में शामिल नहीं किया जाता है। परन्तु इसमें अनुग्रह दिन जोड़े जायेंगे। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि चैक की स्थिति में अनुग्रह दिवस नहीं जोड़े जाते हैं।

परक्राम्य प्रपत्रों का प्रस्तुतीकरण
(Presentment of Negotiable Instruments)

परक्राम्य प्रपत्रों का स्वीकृति एवं भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाना आवश्यक होता है। माँग पर देय प्रपत्रों को छोड़कर यदि प्रपत्र दर्शन के पश्चात देय है अथवा प्रपत्र में स्पष्टतः वर्णित है तब प्रपत्र का स्वीकृति के लिये प्रस्तुत किया जाना आवश्यक होता है।

---

1. "A promissory note or bill of exchange in which no time for payment is specified, and a cheque are payable on demand."

—Sec. 19, Negotiable Instrument Act.

स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण

(Presentment for Acceptance)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 61 के अनुसार, जो विनिमय पत्र दर्शन (Sight) के पश्चात् देय होते हैं उन्हें भुगतान से पूर्व स्वीकारक के समक्ष उचित समय के भीतर स्वीकृति के लिये प्रस्तुत किया जाना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, यदि प्रपत्र में स्पष्टत: यह शर्त लिखी गयी है कि प्रपत्र का स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण आवश्यक है तब प्रपत्र को स्वीकारक के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक है। परन्तु माँग पर देय प्रपत्र, तिथि से निश्चित दिनों के पश्चात् देय प्रपत्र अथवा निश्चित तिथि पर देय प्रपत्र की स्थिति में विनिमय पत्र का स्वीकृति के लिये प्रस्तुत किया जाना आवश्यक नहीं होता है।

माँग पर देय विनिमय पत्र को केवल एक बार प्रस्तुत किया जाता है और प्रस्तुतीकरण पर यह भुगतान योग्य होता है। यद्यपि माँग पर देय प्रपत्रों पर की स्थिति में स्वीकृति आवश्यक नहीं होती है परन्तु विनिमय पत्र पर स्वीकृति का महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि इससे अदाकर्त्ता का दायित्व निर्धारित हो जाता है। विनिमय पत्र धारक द्वारा अदाकर्त्ता (Drawee) अथवा उसके अधिकृत अभिकर्त्ता को प्रस्तुत किया जाना चाहिए। अदाकर्त्ता को मात्र सूचना देना ही पर्याप्त नहीं है वरन् वह विनिमय पत्र प्रस्तुत करने की माँग कर सकता है। यदि प्रपत्र एक से अधिक अदाकर्त्ता को देय है तथा वे साझेदार नहीं हैं तब समस्त अदाकर्त्ताओं को विनिमय पत्र प्रस्तुत किया जायेगा और यदि उनमें से कोई एक अदाकर्त्ता स्वीकृति प्रदान नहीं करता है तब विनिमय पत्र का अनादरण समझा जा सकता है। यदि अदाकर्त्ता की मृत्यु हो चुकी है तब विनिमय पत्र उसके विधिक उत्तराधिकारियों को प्रस्तुत किया जायेगा। अदाकर्त्ता के दिवालिया होने पर विनिमय पत्र स्वीकृति के लिये उसके समनुदेशिती (Assignee) को प्रस्तुत किया जायेगा।

विनिमय पत्र का प्रस्तुतीकरण प्रपत्र के धारक अथवा उसके अभिकर्त्ता द्वारा किया जाता है।

प्रपत्र का प्रस्तुतीकरण प्रपत्र में लिखित समयावधि के अन्तर्गत किया जाना चाहिए। यदि प्रस्तुतीकरण वैकल्पिक है तब प्रपत्र देय तिथि से पूर्व प्रस्तुत किया जाना चाहिए। दर्शन के पश्चात् देय प्रपत्र की स्थिति में, प्रपत्र उचित समय के भीतर प्रस्तुत किया जाना चाहिए। यदि प्रपत्र उचित समय के भीतर प्रस्तुत नहीं किया जाता है तब प्रपत्र का आहर्ता (Drawer) तथा पृष्ठांकनकर्त्ता (Endorsers) उस धारक के प्रति अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाते हैं जिसने यह त्रुटि (Default) की है।

अत: विनिमय पत्र का स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण आवश्यक होता है। परन्तु, निम्नलिखित परिस्थितियों में प्रस्तुतीकरण आवश्यक नहीं होता है चूंकि विनिमय पत्र को स्वत: ही अनादृत मान लिया जाता है जबकि—

(i) अदाकर्त्ता (Drawee) एक काल्पनिक व्यक्ति होता है अथवा वह अनुबन्ध के अयोग्य होता है।

(ii) अदाकर्त्ता उचित छानबीन के पश्चात् नहीं मिलता है,

(iii) प्रस्तुतीकरण अनियमित है परन्तु स्वीकृति किसी अन्य कारण से इंकार र दी गयी है,

(iv) अदाकर्त्ता की मृत्यु हो जाती है अथवा वह दिवालिया हो जाता है।

प्रतिज्ञा-पत्र की स्थिति में, जिसका भुगतान दर्शन के पश्चात् (After Sight) देय होता है, धारक द्वारा प्रतिज्ञा-पत्र उचित समय के भीतर लेखक को प्रस्तुत किया जाना चाहिए अन्यथा प्रतिज्ञा-पत्र की देय तिथि का निर्धारण असम्भव होता है। यदि धारक द्वारा प्रतिज्ञा-पत्र प्रस्तुत नहीं किया जाता है तब त्रुटि करने वाले धारक से पूर्व के समस्त पक्षकार अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाते हैं। परक्राम्य प्रपत्र का प्रस्तुतीकरण डाक-द्वारा किया जा सकता है परन्तु यह प्रस्तुतीकरण उसी स्थिति में स्वीकार्य होता है जबकि ऐसा करना अनुबन्ध में अधिकृत है अथवा प्रचलित रीति-रिवाज में मान्यता प्राप्त है।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 63 के अनुसार[1], प्रपत्र के अदाकर्त्ता (Drawee) को प्रपत्र पर अपनी स्वीकृति 48 घण्टों के भीतर दे देनी चाहिए कि उसने प्रपत्र स्वीकार किया है अथवा नहीं। यदि स्पष्टतः स्वीकृति प्राप्त नहीं होती है तब यह समझा जायेगा कि प्रपत्र का अनादरण हो गया है। 48 घण्टों की अवधि की गणना करते समय सार्वजनिक अवकाश का दिन नहीं जोड़ा जाता है। अदाकर द्वारा प्रपत्र नष्ट किये जाने पर अथवा धारक को पुनः वापिस न किये जाने प प्रपत्र का धारक प्रपत्र की वसूली अथवा क्षतिपूर्ति के लिये वाद प्रस्तुत सकता है।

विनिमय पत्र की स्वीकृति सामान्य अथवा शर्तसहित हो सकती है। सा स्वीकृति (General Acceptance) में बिल का अदाकर्त्ता बिल को उसी स्वीकार करता है जिसमें बिल लिखा गया है। इसके विपरीत शर्तसहित स्व (Qualified Acceptance) में बिल का स्वीकारक बिल की स्वीकृति निश्चित अधीन प्रदान करता है। यह शर्त अवधि, राशि, बिल का भुगतान निश्चित घट होने पर अथवा भुगतान निश्चित स्थान पर होने के सम्बन्ध में हो सकती है।

यदि बिल पर शर्तसहित स्वीकृति प्रदान की गयी है तब बिल के यह अधिकार प्राप्त होता है कि वह स्वीकृति स्वीकार कर सकता है अथवा अनादृत समझ सकता है। बिल के धारक द्वारा शर्तरहित स्वीकृति स्वीक

1. The holder must if so required by the drawee of the bill of presented to him for acceptance, allow the drawee forty eight hours days) to consider whether he will accept it. —Sec. 6

पर बिल के पूर्व पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त समझे जाते हैं चूँकि शर्तसहित स्वीकृति उनकी सहमति से प्राप्त नहीं की गयी है।

भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण (Presentmens for Payment)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 64 के अनुसार धारक अथवा उसकी ओर से विनिमय पत्र, प्रतिज्ञा पत्र अथवा चैंक, प्रपत्र के स्वीकारक, लेखक अथवा देनदार (अदाकर्त्ता) को भुगतान के लिये प्रस्तुत करना चाहिए। यदि प्रपत्र का प्रस्तुतीकरण नहीं किया जाता है तब प्रपत्र से सम्बन्धित अन्य पक्षकार उस धारक के प्रति उत्तरदायी नहीं होते हैं। स्पष्ट अनुबन्ध के अभाव में प्रपत्र के आहर्ता को उत्तरदायी बनाने के लिये प्रपत्र का भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण अनिवार्य नहीं होता है चूँकि देनदार मूल रूप में लेनदार का भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है।[1] परन्तु प्रपत्र के अदाकर्त्ता एवं अन्य पक्षकारों को उत्तरदायी बनाने के उद्देश्य से भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण आवश्यक होता है। यदि प्रपत्र का उचित समय में प्रस्तुतीकरण नहीं किया जाता है तब प्रपत्र के अन्य पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त हो जाते है। इस स्थिति में देनदार अपने दायित्व से मुक्त नहीं समझा जाता है। भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण डाक द्वारा किया जा सकता है। प्रपत्र के लेखक, स्वीकारक अथवा अदाकर्त्ता की मृत्यु अथवा दिवालिया होने पर, प्रपत्र को मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों अथवा समनुदेशिती (Assignee) को भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रतिज्ञा-पत्र माँग पर देय होने की स्थिति में (यदि भुगतान का स्थान निश्चित नहीं है) प्रपत्र का भुगतान तुरन्त देय होता है तथा उसका भुगतान देय करने के लिये प्रस्तुतीकरण आवश्यक नहीं होता है। परन्तु यदि माँग पर देय प्रतिज्ञा-पत्र का भुगतान निश्चित स्थान पर देय होता है तब भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण आवश्यक होता है।[2] माँग पर देय प्रपत्र में यदि स्थान निश्चित नहीं होता है तब प्रपत्र का लेखक प्रपत्र प्रस्तुत किये जाने पर भुगतान करने के लिये बाध्य होता है।

परक्राम्य प्रपत्र का भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण परिपक्वता की तिथि पर कार्यकाल के घण्टों में किया जाना चाहिए। यदि प्रपत्र अथवा चैंक का प्रस्तुतीकरण बैंक को किया जाना है तब प्रस्तुतीकरण बैंकिंग घण्टों (Banking Hours) में किया जाना चाहिए।[3] प्रतिज्ञा-पत्र का भुगतान किश्तों (Instalment) में देय होने की स्थिति में, प्रस्तुतीकरण प्रत्येक किश्त की देय तिथि पर किया जाना चाहिए। प्रत्येक किश्त की देय तिथि ज्ञात करते समय अनुग्रह दिवस (Days of Grace) जोड़े जाते हैं।

---

1. Walton Vs. Mascall.
2. People's Instalment & Saving Bank Ltd. Vs. Ram Nath.
3. Presentation for payment must be made during the business, and if at a banke's, within banking hours. —Sec.

यदि धारक द्वारा किसी एक किश्त के लिये प्रस्तुतीकरण नहीं किया जाता है तब प्रपत्र से सम्बन्धित अन्य पक्षकार उस किश्त के लिये, प्रपत्र के धारक के प्रति अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाते हैं। यदि प्रतिज्ञा-पत्र में एक किश्त का भुगतान न करने पर, प्रतिज्ञा-पत्र का कुल भुगतान देय हो जाता है तब धारक द्वारा किसी एक किश्त के लिये प्रस्तुतीकरण न करने पर प्रपत्र से सम्बन्धित पक्षकार उस धारक के प्रति अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाते हैं। किश्तों में देय प्रतिज्ञा-पत्र की स्थिति में, प्रत्येक किश्त की देय तिथि निश्चित होनी चाहिए अन्यथा प्रतिज्ञा-पत्र अवैध समझा जाता है।

प्रस्तुतीकरण का स्थान (Place of Presentment)—परक्राम्य प्रपत्र का प्रस्तुतीकरण निम्नलिखित स्थानों पर किया जा सकता है—

(i) जब प्रपत्र में भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण का स्थान सुनिश्चित होता है, तब प्रपत्र को उसी स्थान पर प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

(ii) यदि भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण का स्थान पूर्व निर्धारित नहीं किया गया है तब प्रपत्र का प्रस्तुतीकरण व्यापार के स्थान पर अथवा प्रपत्र के लेखक आहर्ता अथवा स्वीकारक के निवास स्थान पर किया जाना चाहिए।

(iii) यदि लेखक अथवा स्वीकारक का व्यापार स्थान अथवा निवास स्थान सुनिश्चित नहीं हैं तब प्रपत्र का प्रस्तुतीकरण उस स्थान पर किया जा सकता है जहाँ पर वह पाया गया है।[1] (धारा 71)

(iv) चैक की स्थिति में, चैक के धारक द्वारा चैक को उस बैंक में प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिस बैंक पर चैक देय होता है। यदि चैक भुगतान के लिये प्रस्तुत नहीं किया गया है तथा आहर्ता को कोई क्षति वहन करनी पड़ती है तब आहर्ता अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाता है। परन्तु, यदि आहर्ता को कोई क्षति नहीं होती है तब चैक का धारक आहर्ता से रुपया वसूली का वाद प्रस्तुत कर सकता है। चैक का उचित समयावधि में प्रस्तुत करना आवश्यक होता है चूंकि इससे चैक से सम्बद्ध अन्य पक्षकारों को उत्तरदायी बनाया जा सकता है।

अतः भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण उचित स्थान पर, उचित समयावधि में किया जाना चाहिए। यदि धारक द्वारा प्रपत्र का प्रस्तुतीकरण किसी ऐसे कारणवश नहीं किया जाता है जो उसके नियन्त्रण से बाहर है तब प्रपत्र का प्रस्तुतीकरण आवश्यक नहीं समझा गया है। परन्तु जब देरी का कारण समाप्त हो जाता है तब प्रपत्र उचित समयावधि में प्रस्तुत किया जाना चाहिए।[2]

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 76 के अनुसार निम्नलिखित परिस्थितियों में प्रपत्र का भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण आवश्यक नहीं होता है जबकि—

---

1. Banaras Bank Vs. Hormusji.
2. Refer to Sec. 75 (A) N. I. Act.

पुष्टि राम रावजी बनाम प्रह्लाद दास नामक विवाद[1] में की गयी है।

अस्वीकृति के कारण अनादरण (Dishonour by Non Acceptance)—प्रपत्र का अनादरण, स्वीकृति प्राप्त न होने की स्थिति में होता है। यदि प्रपत्र स्वीकृति के लिये प्रस्तुत किया जाता है तथा देनदार (Dr wee) द्वारा अथवा संयुक्त देनदारों की स्थिति में, किसी एक देनदार द्वारा प्रपत्र स्वीकार नहीं किया जाता है तब, प्रपत्र अनादृत समझा जाता है। स्वीकृति प्रस्तुती से 48 घण्टों में प्राप्त की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त यदि देनदार अनुबन्ध करने के अयोग्य है अथवा वह शर्तसहित स्वीकृति देता है तब, प्रपत्र अनादृत समझा जा सकता है। स्वीकृति के लिये अनादरण उसी स्थिति में सम्भव है जबकि प्रपत्र स्वीकृति के लिये प्रस्तुत किया गया है।

भुगतान न होने पर अनादरण (*Dishonour Due to Non Payment*)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 92 के अनुसार, यदि प्रतिज्ञा-पत्र का लेखक अथवा विनिमय पत्र का स्वीकारक अथवा चैक का भुगतानकर्ता (Drawee) प्रपत्र का भुगतान तिथि पर, भुगतान करने में असमर्थ रहता है तब प्रपत्र का अनादरण समझा जाता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रतिज्ञा-पत्र के लेखक को भुगतान की सूचना भेजने पर, यदि वह भुगतान नहीं करता है तब प्रपत्र का अनादरण समझा जाता है। प्रतिज्ञा-पत्र के लेखक को नोट (Note) भेजना आवश्यक नहीं है। उसे इस आशय की सूचना भेजना ही पर्याप्त समझा जायेगा। परन्तु, अनादरण समझने के लिये यह तथ्य साबित करना होगा कि लेखक ने दायित्व स्वीकार करने से मना कर दिया है। परन्तु यदि प्रपत्र का भुगतान के लिये प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है तथा उसका देय तिथि तक भुगतान नहीं किया गया है तब प्रपत्र अनादृत समझा जायेगा।[2]

अनादरण की सूचना
(Notice of Dishonour)

प्रपत्र का अनादरण होने की स्थिति में प्रपत्र के धारक को उन समस्त पक्षकारों को अनादरण की सूचना भेजनी चाहिए जोकि प्रपत्र के लिये उत्तरदायी हैं। यदि प्रपत्र में संयुक्त रूप में अनेक व्यक्ति उत्तरदायी हैं तब समस्त व्यक्तियों में से किसी भी एक व्यक्ति को अनादरण की सूचना भेजनी चाहिए। इस सम्बन्ध में तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रतिज्ञा पत्र के लेखक अथवा विनिमय प्रपत्र व चैक के भुगतानकर्ता को अनादरण की सूचना भेजना आवश्यक नहीं होता है चूंकि वे प्रपत्र के मूल उत्तरदायी व्यक्ति होते हैं। अनादरण की सूचना प्रपत्र के धारक (Holder) अथवा उसके अभिकर्ता द्वारा दी जा सकती है। सूचना प्रपत्र से सम्बन्धित उत्तरदायी पक्षकारों द्वारा ही दी जाने चाहिए। अन्यथा सूचना व्यर्थ समझी जायेगी। यदि सूचना किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा दी गयी है तब सूचना व्यर्थ समझी जायेगी।[3] सूचना प्रपत्र से सम्बन्धित पक्षकार द्वारा दी जानी ही पर्याप्त नहीं है वरन् सूचना प्रपत्र में उत्तरदायी पक्षकारों द्वारा

1. Ram Ravji Vs. Prahlad Das.
2. Refer to sec. 76 of N. I. Act.
3. Stewart V. S. Kennett.

दी जानी चाहिए। उदाहरणार्थ —ऐसे पृष्ठांकनकर्ता द्वारा दिया गया नोटिस व्यर्थ समझा जाता है जो प्रपत्र पर अपने दायित्व से मुक्त हो चुका है।

अतः सूचना धारक अथवा उसके अभिकर्ता अथवा प्रपत्र के स्वीकारक अथवा पृष्ठांकनकर्ता (Endorser) द्वारा (जो प्रपत्र का उत्तरदायी पक्षकार है) दी जा सकती है।

अनादरण की सूचना उन समस्त व्यक्तियों को अथवा उनके अभिकर्ता को दी जानी चाहिए जिन्हें धारक प्रपत्र के लिये उत्तरदायी बनाना चाहता है। मृतक की स्थिति में अनादरण की सूचना मृतक के विधिक उत्तरजीवियों को दी जानी चाहिए। यदि अनादरण की सूचना डाक द्वारा भेजी जा चुकी है तथा सम्बन्धित पक्षकार की मृत्यु का ज्ञान, सूचना भेजने वाले व्यक्ति को नहीं है तब सूचना पर्याप्त समझी जायेगी।[1] दिवालिया व्यक्ति की स्थिति में अनादरण की सूचना उसके समनुदेशिती (Assignee) को भेजी जा सकती है। यह सूचना लिखित अथवा मौखिक हो सकती है।

धारक द्वारा अनादर की सूचना न देने की स्थिति में, वे समस्त पक्षकार अपने उत्तरदायित्व से मुक्त समझे जाते हैं जो सूचना प्राप्त करने के अधिकारी हैं तथा उन्हें सूचना नहीं भेजी गयी है परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 30 व 35 की के अन्तर्गत प्रपत्र के आहर्ता (Drawer) एवं पृष्ठांकनकर्ता (Endorser) को उसी स्थिति में प्रपत्र के लिये उत्तरदायी बनाया जा सकता है जबकि उन्हें अनादरण की सूचना भेजी गयी है। अतः यदि प्रपत्र के धारक द्वारा अथवा दायित्व पूर्ण नहीं किया जाता है तब वह उस पक्षकार को उत्तरदायी नहीं बना सकता है जिसे अनादरण की सूचना भेजना आवश्यक था और उसने सूचना नहीं भेजी है। अनादरण की सूचना उचित समय के भीतर तथा व्यापार के स्थान पर दी जानी चाहिए। यदि व्यापार का निश्चित स्थान नहीं है तब पक्षकार के रहने के स्थान पर (Place of Residence) सूचना भेजी जानी चाहिए। यदि ये दोनों स्थान निश्चित नहीं हैं। तब सूचना पक्षकार को किसी भी ऐसे स्थान पर भेजी जा सकती है जहाँ पर वह पक्षकार पाया गया है। सूचना डाक द्वारा भेजने की स्थिति में यदि सूचना मार्ग में खो जाती है तब सूचना व्यर्थ नहीं समझी जायेगी।[2] अतः अनादरण की सूचना देना अत्यन्त आवश्यक है।

अनादरण की सूचना भेजना आवश्यक न होना (Notice of Dishonour is Unnecessary)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 98 के अनुसार, निम्नलिखित परिस्थितियों में अनादरण की सूचना देने की आवश्यकता नहीं है यदि—

(1) सूचना प्राप्त करने के लिए अधिकृत व्यक्ति ने अपना अधिकार स्पष्टतः छोड़ दिया है। यह अधिकार पक्षकार द्वारा प्रपत्र पृष्ठांकित करते समय छोड़ा जा सकता है अथवा सूचना देने से पूर्व किसी भी समय छोड़ा जा सकता है।

---

1. Refer to Sec. 97 of N. I. Act.
2. efer to Sec. 94 of N. I. Act.

(2) विपत्र के आहर्ता (Drawer) ने प्रपत्र का भुगतान रोक दिया है तब आहर्ता को अनादरण की सूचना भेजना आवश्यक नहीं है।

(3) सम्बन्धित पक्षकार को अनादरण की सूचना न देने पर कोई क्षति नहीं होती है तब उसे सूचना देना आवश्यक नहीं है। यदि लेखक द्वारा रुपये के अभाव में प्रपत्र अथवा चैक लिखा जाता है तब अनादरण होने पर सूचना देना आवश्यक नहीं है। इसी प्रकार यदि देनदार (Drawee) आहर्ता का ऋणी नहीं है तथा आहर्ता उस पर प्रपत्र लिखता है तब अनादरण की सूचना देना आवश्यक नहीं होता है।

(4) सम्बन्धित पक्षकार के रहने के स्थान का ज्ञान नहीं है तथा सूचना देने वाले व्यक्ति ने पर्याप्त प्रयत्न किये हैं तब अनादरण की सूचना देना आवश्यक नहीं होता है।

(5) सूचना न दे सकने का अपरिहार्य कारण (Unavoidable Reasons) है, उदाहरणार्थ—धारक अथवा एजेन्ट की मृत्यु अथवा बीमारी अथवा प्रकोप आदि तब अनादरण की सूचना देना आवश्यक नहीं समझा जायेगा।

(6) प्रपत्र का आहर्ता स्वयं स्वीकारक होता है। तब अनादरण की सूचना देना आवश्यक नहीं है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि एक ही फर्… का एक साझेदार फर्म के अन्य साझेदार फर्म पर प्रपत्र लिखता है तब प्रपत्र दोनों क… ओर से लिखा हुआ नहीं माना जायेगा।

(7) प्रतिज्ञा-पत्र परक्राम्य प्रपत्र नहीं है तब प्रपत्र के पृष्ठांकिकी (Endorse… को प्रपत्र के स्वीकारक अथवा पृष्ठांकनकर्त्ता के विरुद्ध कोई अधिकार नहीं होता… इस स्थिति में अनादरण की सूचना देना आवश्यक नहीं होता है।

(8) कोई पक्षकार सूचना प्राप्ति का अधिकारी होता है तथा वह स… तथ्य जानता है और प्रपत्र के भुगतान करने का वचन देता है तब उस पक्षका… अनादरण की सूचना देना आवश्यक नहीं है।[1]

अतः उपरोक्त परिस्थितियों में अनादरण की सूचना देना आवश्यक… होता है।

नोटिंग एवं प्रमाणन
(Noting and Protesting)

प्रपत्र के अनादृत होने के पश्चात् धारक का प्रमुख उत्तरदायित्व अ… सूचना उत्तरदायी पक्षकारों को भेजना एवं प्रपत्र का नोटरी पब्लिक … Public) से टिप्पणी अथवा नोटिंग एवं प्रमाणन अथवा प्रसाक्ष्य (P… करवाना होता है।

नोटरी पब्लिक से आशय उस व्यक्ति से है जो प्रपत्र के अनाद… विपत्र के नोट (Note) होने का कार्य करता है। इसके लिये नोटिंग अ… को पुनः प्रस्तुत करता है एवं देनदार से अनादरण का पुष्टिकरण कर…

1. …Bank Vs. Bando Raghunath.

पश्चात् प्रपत्र की प्रविष्टि नोटिंग रजिस्टर में की जाती है जिसमें अनादरण की तिथि, कारण, यदि प्रपत्र का अनादरण स्पष्टतः नहीं है तब धारक द्वारा अनादृत समझने के कारण एवं नोटिंग व्यय आदि के सम्बन्ध में, समस्त विवरण लिखा जाता है। देशीय पत्र (Inland Bill) की स्थिति में प्रपत्र का नोटिंग करवाना आवश्यक नहीं है परन्तु, विदेशी पत्र में यदि उस स्थान पर प्रपत्र का प्रमाणन अनिवार्य है जहाँ पर प्रपत्र देय है तब प्रपत्र का नोटिंग आवश्यक है।[1] प्रपत्र को नोट करवाने के पश्चात् नोटेरी पब्लिक अनादरण प्रमाणन अथवा प्रसाक्ष्य (Protesting) पत्र जारी करता है जिसमें प्रपत्र के अनादरण का प्रमाणन होता है।

अच्छी प्रतिभूति के लिये प्रमाणन (Protest for Better Security)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 100 के अनुसार यदि विनिमय बिल का स्वीकारक देय तिथि से पूर्व दिवालिया घोषित कर दिया जाता है अथवा उसकी शोधन क्षमता संदिग्ध समझी जाती है तब प्रपत्र का धारक नोटेरी पब्लिक से अच्छी प्रतिभूति के लिये प्रमाणन (प्रसाक्ष्य) अथवा निकराई करवा सकता है। यह कार्य धारक द्वारा उचित समय के भीतर किया जाना चाहिए। इसमें नोटेरी (Notary) स्वीकारकर्ता से अधिक प्रतिभूति की मांग करता है और स्वीकारकर्ता द्वारा उचित समय में मांग पूरी न किये जाने पर, धारक इसका प्रमाणन करवाता है। परन्तु, धारक को देय तिथि से पूर्व स्वीकारक के विरुद्ध कोई भी विधिक कार्यवाही करने का अधिकार प्रदान नहीं किया गया है।

इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है कि यदि प्रपत्र का अनादरण होने के पश्चात् प्रपत्र का प्रमाणन विधि के अन्तर्गत अनिवार्य है तब प्रपत्र के धारक द्वारा अनादरण की सूचना भेजने के स्थान पर प्रमाणन की सूचना (Notice of Protest) भेजी जाती है तथा यह सूचना नोटेरी पब्लिक द्वारा भी भेजी जा सकती है।[2]

प्रमाणन के तत्व अथवा अन्तर्वस्तु (Contents of Protest)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 101 के अन्तर्गत प्रमाणन में निम्नलिखित तत्वों को सम्मिलित किया जाना अनिवार्य समझा गया है अन्यथा प्रमाणन व्यर्थ समझा जायेगा—

(1) प्रपत्र अथवा प्रपत्र का प्रतिलेखन (Trancription),

(2) प्रमाणन में उन पक्षकारों का नाम जिनके लिये अथवा विरुद्ध प्रमाणन करवाया गया है।

(3) अनादरण के तथ्य एवं कारण,

(4) अनादरण का समय एवं स्थान,

(5) नोटेरी के हस्ताक्षर,

(6) प्रपत्र के अनादरण पर आदर के लिये स्वीकृति अथवा भुगतान

1. Refer to Sec 104 of N I Act.
2. Refer to Sec. 102 of N. I. Act.

वाले व्यक्ति का नाम, जिसकी ओर से प्रपत्र स्वीकार अथवा भुगतान किया गया है उसका नाम एवं उस विधि का वर्णन किया जायेगा जिसमें प्रपत्र की स्वीकृति अथवा भुगतान किया गया है।

अतः प्रमाणन में उपरोक्त समस्त तथ्य सम्मिलित करने अनिवार्य होते हैं।

आदर के लिये स्वीकृति
(Acceptance for Honour)

यदि विनिमय पत्र का अनादरण स्वीकृति प्राप्त न होने के कारण होता है, तब, कोई अन्य व्यक्ति धारक की सहमति से आहर्ता अथवा पृष्ठांकिती के आदर (Honour) के लिये प्रपत्र स्वीकार कर सकता है। यह स्वीकृति लिखित होनी चाहिए तथा यह स्पष्ट होना चाहिए कि किस आहर्ता (Drawee) अथवा पृष्ठांकिकी (Endorsee) के लिये प्रपत्र स्वीकार किया गया है। यदि स्वीकारक ने स्पष्ट नहीं किया है कि किस व्यक्ति के लिये प्रपत्र स्वीकार किया गया है तब, यह समझा जाता है कि उसने प्रपत्र के आहर्ता के लिये प्रपत्र स्वीकार किया है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित तथ्य महत्वपूर्ण हैं—

(1) आदर के लिये स्वीकृति प्रपत्र का अनादरण होने के पश्चात् ही सम्भव है तथा अनादरण का नोटिंग एवं प्रमाणन किया जाना चाहिए।

(2) यह स्वीकृति कोई भी व्यक्ति प्रदान कर सकता है परन्तु स्वीकृति धारक की सहमति पर ही प्राप्त की जा सकती है। यदि प्रपत्र के धारक की सहमति प्राप्त नहीं है तब आदर के लिये स्वीकृति प्रदान नहीं की जा सकती है।

(3) स्वीकारक द्वारा स्वीकृति लिखित होनी चाहिए तथा स्पष्ट होना चाहिए कि किस व्यक्ति की ओर से स्वीकृति प्रदान की गयी है। जिस व्यक्ति के लिये स्वीकृति प्रदान की गयी है वह प्रपत्र के लिये उत्तरदायी होना चाहिए। यदि प्रपत्र पर आदर के लिये स्वीकृति किसी स्पष्ट पक्षकार के लिये नहीं की गयी है तब यह धारक के लिये समझी जायेगी।

(4) आदर के लिये स्वीकृति उस व्यक्ति की ओर से की जा सकती है जो व्यक्ति प्रपत्र में पक्षकार के रूप में उत्तरदायी नहीं है।

आदर के लिये स्वीकारक (Acceptor) उन समस्त पक्षकारों के प्रति उत्तरदायी होता है जो पक्षकार, उस व्यक्ति के बाद बनते हैं जिसकी ओर से स्वीकृति दी गयी है। यह दायित्व उस स्थिति में उत्पन्न होता है जबकि वास्तविक देनदार द्वारा प्रपत्र का भुगतान नहीं किया जाता है। इसके विपरीत, वह व्यक्ति जिसकी ओर से स्वीकृति दी गयी है तथा उससे पूर्व के पक्षकार आदर के लिये स्वीकारक के प्रति उत्तरदायी होते हैं। आदर के लिये स्वीकारक के दायित्व निम्नलिखित परिस्थितियों में उत्पन्न होते हैं—

(1) प्रपत्र देनदार को भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाना चाहिए तथा प्रपत्र का अनादरण होना चाहिये।

(2) प्रपत्र के अनादरण का नोटिस एवं अनादरण प्रमाणन (Protesting) आवश्यक होता है।

(3) प्रपत्र का अनादरण होने के पश्चात् प्रपत्र को आदर के लिये स्वीकारक के पास भेजना चाहिए। प्रपत्र एक दिन के भीतर भेज देना चाहिए।

आदर के लिये भुगतान
(Payment for Honour)

विनिमय पत्र का देय तिथि पर, देनदार द्वारा भुगतान न करने पर, कोई अन्य व्यक्ति जो भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं है, बिल का भुगतान कर सकता है। बिल का आदर के लिये भुगतान उस स्थिति में किया जा सकता है जबकि बिल का भुगतान न होने के कारण अनादरण हो चुका है तथा इसका नोटिस एवं अनादरण प्रमाणन करवाया जा चुका है। आदर के लिये भुगतानकर्ता को, नोटेरी के समक्ष घोषणा करनी होती है कि भुगतान किस व्यक्ति की ओर से किया गया है। आदर के लिये भुगतान उसी व्यक्ति की ओर से किया जा सकता है जो प्रपत्र में भुगतान करने के लिये उत्तरदायी है तथा यह भुगतान किसी भी व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है चाहे वह प्रपत्र का भुगतान करने के लिये उत्तरदायी है अथवा नहीं। आदर के लिये भुगतान की स्थिति में, भुगतानकर्ता को वे समस्त अधिकार प्राप्त हो जाते हैं जो प्रपत्र के उस धारक को प्राप्त होते हैं जिसे भुगतान किया गया है। भुगतानकर्ता को भुगतान की गयी रकम ब्याज सहित उस व्यक्ति एवं उससे पूर्व के समस्त पक्षकारों से प्राप्त करने का अधिकार होता है जिस व्यक्ति की ओर से आदर के लिये भुगतान किया गया है परन्तु भुगतानकर्ता को पूर्व के पक्षकारों के विरुद्ध यह अधिकार उसी स्थिति में प्राप्त होता है जबकि उन्हें अनादरण की सूचना दी गयी है चूंकि भुगतानकर्त्ता को प्रपत्र के धारक के अधिकार एवं उत्तरदायित्व, दोनों संयुक्त रूप में प्राप्त होते हैं। जिस व्यक्ति के आदर के लिये प्रपत्र का भुगतान किया गया है उसके बाद के पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं।

आवश्यकता में देनदार
(Drawee in Case of Need)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 7 के अनुसार, यदि किसी विनिमय पत्र में देनदार से अलग, किसी अन्य देनदार का नाम इस उद्देश्य से लिखा जाता है कि प्रपत्र की स्वीकृति अथवा भुगतान नहीं होता है तब अन्य देनदार से रुपया वसूल किया जा सके अथवा उससे स्वीकृति प्राप्त की जा सके। ऐसे देनदार को आवश्यकता में देनदार (Drawee in Case of Need) कहा जाता है। आवश्यकता में देनदार के दायित्व उसी स्थिति में उत्पन्न होते हैं जबकि प्रपत्र के देनदार द्वारा [illegible] अनादरण किया गया है। परन्तु, प्रपत्र के धारक (Holder) को यह

गया है कि वह आवश्यकता में देनदार के समक्ष प्रपत्र प्रस्तुत करने के लिये बाध्य नहीं है। यदि धारक उचित समझता है तब ही, वह प्रपत्र को आवश्यकता में देनदार के समक्ष प्रस्तुत करता है। इस स्थिति में प्रपत्र का अनादरण उसी स्थिति में समझा जाता है जबकि आवश्यकता में देनदार द्वारा प्रपत्र का अनादरण कर दिया गया हो।

(SOLVED PROBLEMS)

1. निम्नलिखित विलेखों की स्थिति में देय तिथि क्या होगी—

What will be the due dates for the following instruments—

(i) A Bill of Exchange dated 20th November, 1982 payable 4 months after date.

(ii) A Promissory Note dated 27th November 1982 payable 60 days after date without grace.

(iii) A Bill of Exchange dated 28th August, 1982 payable 180 days after date.

(iv) A Bill of Exchange dated 1st February, 1982 payable 45 days after sight. The Bill was accepted on 6th Februry 1982.

(C. A. I. I. B. May, 1983)

हल—(i) 23 मार्च 1983

(ii) 26 जनवरी 1983 (विपत्र 60 दिन पश्चात् देय है। अतः 27 नवम्बर का दिन सम्मिलित नहीं किया जायेगा।) परन्तु 26 जनवरी सार्वजनिक अवकाश का दिन है। अतः देय तिथि 25 जनवरी 1983 समझी जायेगी।

(iii) 27 फरवरी, 1983

(iv) 26 मार्च 1982 (विपत्र दर्शन के पश्चात् (after sight) देय है। अतः अवधि की गणना 6 फरवरी, 1982 से की जायेगी एवं 3 दिन अनुग्रह के जोड़े जायेंगे।)

2. निम्नलिखित की देय तिथि बतलाइये—

Give the due dates of the following—

(i) A Bill dated 31st December 1981 payable 90 days after date.

(ii) A Bill dated 28th Junuary, 1982 payable after one month.

(iii) A bill dated 1st May 1982 payable 90 days after sight and accepted on 6th May 1982.

(iv) A Fixed Deposit Receipt dated 31st August 1981 for 6 months.

(v) A Fixed Deposit Receipt for Rs. 1 lac due on 2nd May 1982 which is a Sunday.

(C. A. I. I. B. May, 1982)

हल—(i) 3 अप्रैल 1982

(ii) 3 मार्च, 1982

(iii) 7 अगस्त, 1982

(iv) 28 फरवरी, 1982 (इसमें अनुग्रह दिन नहीं जोड़े जायेंगे तथा माह (months) के आधार पर देय तिथि ज्ञात होगी। देय तिथि 28 फरवरी अर्थात् महीने का अन्तिम दिन होगी।)

(v) 3 मई, 1982 (अवकाश की स्थिति में देय तिथि अगला दिन (Next working day) समझी जाती है।

3 निम्नलिखित प्रलेखों की देय तिथि क्या है –

What are the due dates of the following instruments—

(i) A Bill of Exchange dated 27th Oct 1979 payable 4 months after date.

(ii) A Promissory Note dated 31st Oct. 1979 payable 60 days after date without grace.

(iii) A Bill of Exchange dated 28th August 1979 payable 180 days after date.

(iv) A Bill of Exchange dated 31st Jan. 1980 payable 45 days after sight accepted on 4th February 1980.

(v) A Fixed Deposit Receipt maturing on 2nd March 1980 which is a Sunday. *(C. A. I I B, May, 1980)*

हल—(i) 1 मार्च 1980,

(ii) 30 दिसम्बर 1979,

(iii) 27 फरवरी 1980,

(iv) 23 मार्च 1980 (विपत्र 4 फरवरी को स्वीकार किया गया है। अतः 4 फरवरी 1980 से 45 दिन + 3 दिन अनुग्रह दिन की गणना की जायेगी। इसमें 4 फरवरी का दिन छोड़कर 48 दिन जोड़े जायेंगे)।

(v) 3 मार्च 1980।

4 निम्नलिखित विनिमय विपत्रों की देय तिथि बतलाइये—

Please mention 'DUE DATES' of the following Bill of Exchange—

(i) A bill dated 31st January 1984 payable one month after date and accepted on 10th February 1984.

(ii) A bill dated 2nd March 1984 and payable 90 days after date.

(iii) A bill dated 5th May 1984 payable two months after sight and without days of grace. Bill was sighted on 12th May, 1984. *(C. A. I. I. B. January 1985)*

हल—(i) 3rd March, 1984

(ii) 3rd June, 1984

(iii) 12th July, 1984

5. एक परक्राम्य विपत्र 29 जनवरी 1978 को एक माह की अवधि का लिखा गया। इसकी देय तिथि क्या होगी ?

A negotiable instrument dated 29th January, 1978 is made payable at one month after date. When is it at maturity ?

(C. A. I. I. B, Part II, May 1979)

हल—3rd March, 1978.

6. निम्नलिखित बिलों की देय तिथि बताइये—

State the date of maturity of each of the following bills—

(i) Bill of Exchange dated 15th January 1980, payable 57 days after sight accepted on 20th January 1980.

(ii) Bill of Exchange dated 1st May, 1980 expressed payable on 9th May 1980.

(iii) Bill of Exchange dated 30th November, 1979 payable 3 months after date. *(C. A. I. I. B. Part II, Nov, 1980)*

हल—(i) 20th March, 1980,

(ii) 12th May, 1980,

(iii) 3rd March, 1980.

7. निम्नलिखित विनिमय प्रपत्रों के भुगतान की देय तिथि बतलाइये—

Give the dates on which the following Bill of Exchange will be due for payment—

(i) Bill of Exchange dated 30-11-1977 payable 3 months after date.

(ii) Bill of Exchange dated 1-3-1978 and expressed payable on 9th May 1979.

(iii) Bill of Exchange dated 30-1-80 payable 45 days after sight and accepted on 4-2-1980. *(C. A. I. I. B. Part II, 1980)*

हल—(i) 3rd Marchi, 1978

(ii) 12th May, 1979

(iii) 23rd March, 1980

प्रश्न
(Questions)

1. एक विनिमय पत्र की अप्रतिष्ठा का नोटिस कब, कैसे और किसको दिया जाना चाहिये।

When how and to whom a notice of dishonour of a Bill of Exchange should be given ? (*Gorakhpur B. Com., 1983*)

2. आदर के लिये स्वीकारक को परिभाषित कीजिये। उसके अधिकार एवं उत्तरदायित्व समझाइये।

Define acceptor for honour. Explain his rights and liabilities.

3. विनिमय पत्र से सम्बन्धित विविध पक्षकारों का वर्णन कीजिये। प्रपत्र के अनादरण पर धारक को अपने हित की सुरक्षा के लिये क्या कदम उठाने चाहिये ?

Describe the various parties to a Bill of Exchange, When a bill is dishonoured, what steps should the holder take to protect his interest ?

4. परक्राम्य प्रपत्रों के भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण के क्या नियम हैं ? यह प्रस्तुतीकरण कब आवश्यक है ?

What are the rules governing presentation for payment of Negotiable Instruments ? When is such presentation unnecessary ?

5. एक परक्राम्य प्रपत्र कब अनाहत समझा जाता है ? अनादरण की सूचना कब अनावश्यक समझी जाती है ?

When is a negotiable instrument considered as dishonour ? When is notice of dishonour unnecessary ?

(*C. A. I. I. B. May, 1971*)

6. विनिमय प्रपत्र से आप क्या समझते हैं ? विनिमय प्रपत्र एवं प्रतिज्ञा-पत्र में क्या अन्तर है ?

What do you mean by Bill of Exchange ? What is the difference between Promissory Note and Bill of Exchange ?

7. विनिमय विपत्र क्या है और इससे सम्बन्धित पक्षकारों का वर्णन कीजिये।

What is a Bill of Exchange and describe the various parties relating to it. (*C. A. I. I. B. May, 1982; Aug, 1978*)

8. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये—

Write a short note on the following—

(i) आवश्यकता में देनदार।
(Drawee in Case of Need)

(ii) अवधि।
(Usance)

9

पृष्ठांकन
(ENDORSEMENT)

परक्राम्य प्रपत्रों की प्रमुख विशेषता यह होती है कि इन प्रपत्रों में हितों का दोषरहित हस्तांतरण किया जाता है। इन प्रपत्रों में पूर्व के पक्षकारों के दूषित स्वामित्व का हस्तांतरिती पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है बशर्ते हस्तांतरिती द्वारा प्रपत्र को मूल्य के बदले एवं सद्भाव से प्राप्त किया गया है। परक्राम्य प्रपत्रों का परक्रामण प्रपत्रों को मात्र सुपुर्दगी अथवा पृष्ठांकन एवं सुपुर्दगी द्वारा सम्भव होता है। परक्राम्य प्रपत्र वाहक को देय होने की स्थिति में, मात्र सुपुर्दगी द्वारा परक्राम्य होते हैं। इसके विपरीत प्रपत्र आदेश पर देय होने की स्थिति में पृष्ठांकन द्वारा परक्राम्य होते हैं।

पृष्ठांकन की परिभाषा
(Definition of Endorsement)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 15 के अनुसार, जब प्रपत्र का धारक परक्रामण के उद्देश्य से प्रपत्र की पीठ (Back) या सामने (Face) अथवा उससे संलग्न पृष्ठांकन पर्ची (Allonge) पर अपने हस्ताक्षर इस उद्देश्य से करता है कि दूसरा व्यक्ति प्रपत्र का धारक बन जाये तब इसको पृष्ठांकन[1] कहते हैं। जो व्यक्ति यह कार्य करता है उसे पृष्ठांकनकर्ता (Endorser) कहते हैं। आदेश पर देय (On Order) प्रपत्र की स्थिति में पृष्ठांकन आवश्यक होता है। पृष्ठांकन करते समय किसी निश्चित शब्द की आवश्यकता नहीं होती है। वरन्, इसमें धारक के हस्ताक्षर एवं पृष्ठांकन लिखित होना आवश्यक होता है। यदि पृष्ठांकनकर्ता द्वारा किसी ऐसे शब्द का प्रयोग किया जाता है जिससे पृष्ठांकन का आशय स्पष्ट होता है तब यह शब्द भी पृष्ठांकन के लिये पर्याप्त समझा जायेगा। परन्तु पृष्ठांकन करने का लिखित वचन[2] अथवा पृथक रूप में प्रपत्र के अधिहस्तांकन को पृष्ठांकन नहीं समझा जाता है। यदि प्रपत्र के मुख (Face) पर पृष्ठांकन किया जाता है तब पृष्ठांकन वैध समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि यंग बनाम ग्लोवर नामक विवाद[3] में की गयी है।

1. "When a maker or holder of a negotiable instrument signs the same, otherwise then as such maker, for the purpose of negotiation on the back or face thereof or on a slip of a paper annexed thereto, or so signs for the same purpose a stamp paper intended to be completed as a negotiable instrument he is said to indorse the same and is called the indorser."

—Sec. 15, Negotiable Instrument Act

2. Harrop Vs. Fisher.
3. Young Vs. Glover.

(i) Should a cheque endorsed in pencil be paid.

(C. A. I. I. B. May., 1981)

(ii) Cheque bearing per pro endorsement present in clearing or at counter. *(C. A. I. I. B. Nov., 1981)*

हल—(i) पेन्सिल से पृष्ठांकित चैंक भुगतान के लिये प्रस्तुत किये जाने पर विधि के अनुसार भुगतान किया जाना चाहिए चूंकि परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम में कोई भी नियम यह स्पष्ट नहीं करता है कि विलेख पेन्सिल से नहीं भरना चाहिए। परन्तु व्यवहार में, बैंक सावधानी को ध्यान में रखते हुये चैंक का भुगतान नहीं करता है चूंकि इसमें धोखे (Fraud) की सम्भावना अधिक होती है। अतः बैंक को चैंक का भुगतान नहीं करना चाहिए।

(ii) Per pro पृष्ठांकन की स्थिति में, किसी अन्य व्यक्ति को पृष्ठांकन करने का अधिकार प्रदान किया जाता है। इसमें मालिक द्वारा अभिकर्ता को स्पष्टतः अधिकार दिया जाता है कि अभिकर्ता मालिक के लिये चैंक के पृष्ठांकन आदि का कार्य करेगा। बैंक को समाशोधन (Clearing) में आये ऐसे चैंक का पूर्ण सावधानी से जांच करके भुगतान करना चाहिये। पृष्ठांकन नियमित होना चाहिए तथा पृष्ठांकन मालिक की ओर से किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, बैंक को चैंक का भुगतान यथाविधि भुगतान (Payment in Due Course) के रूप में करना चाहिए।

काउन्टर (Counter) पर प्रस्तुत किये गये चैंक की स्थिति में बैंक को मालिक की प्राधिकरण शक्तियों की जांच करनी चाहिए जिसमें अभिकर्ता को यह अधिकार दिया गया है तथा भुगतान चैंक के अनुसार करना चाहिए। यदि चैंक आदेश पर (On Order) देय है तब धारक के परिचय (Identification) के पश्चात् ही, चैंक का भुगतान किया जाना चाहिए।

4. आदेश पर देय चैंक एक अवयस्क के द्वारा पृष्ठांकित किया जाता है। तृतीय पक्षकार चैंक भुगतान के लिये प्रस्तुत करता है। आप क्या करेंगे ?

An order cheque is endorsed by a minor. Third party presents the cheque for payment. What will you do ?

(Based on C. A. I. I. B. Nov., 1981)

हल—उपरोक्त स्थिति में, चैंक का भुगतान तृतीय पक्षकार का परिचय प्राप्त करने के पश्चात किया जा सकता है। अवयस्क चैंक का पृष्ठांकन कर सकता है।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बातें
(Important points to be Remembered)

(1) पृष्ठांकन का अभिप्राय प्रपत्र के मुख पर अथवा पीठ पर अथवा उससे संलग्न पर्ची पर इस उद्देश्य से हस्ताक्षर करना होता है कि अन्य व्यक्ति प्रपत्र का धारक बन जावे।

(2) पृष्ठांकन विभिन्न रूपों में किया जा सकता है जिसमें सामान्य अथवा कोरा पृष्ठांकन, विशेष अथवा पूर्ण पृष्ठांकन, शर्त सहित पृष्ठांकन, प्रतिबन्धित पृष्ठांकन, दायित्व रहित पृष्ठांकन एवं आंशिक पृष्ठांकन प्रमुख होते हैं।

प्रश्न
(Questions)

1. पृष्ठांकन की परिभाषा दीजिये। पृष्ठांकन कितने प्रकार का होता है? उदाहरण दीजिये।

Define 'Endorsement'. What are different type of 'Endorsement? Give examples. *(C A. I. I. B. May, 1981)*

2. वैध पृष्ठांकन के मूल तत्वों का वर्णन कीजिये तथा उदाहरण सहित विभिन्न प्रकार के पृष्ठांकन समझाइये।

Describe the essentials of a valid endorsement and describe with illustrations the various kinds of endorsement.

(Kanpur B. Com., 1969)

3. पृष्ठांकन क्या है? पृष्ठांकन के विभिन्न प्रकारों को उदाहरण सहित समझाइये।

What is an endorsement? Explain with illustrations the different kinds of endorsement.

4. पृष्ठांकन के विभिन्न प्रकार कौन-कौन से हैं? आंशिक पृष्ठांकन के प्रभाव को उदाहरण सहित समझाइये।

What are the different kinds of endorsements? Explain and illustrate the effect of partial endorsement? *(Rajsthan B Com.)*

□□□

10 चैकों का रेखांकन
(CROSSING OF CHEQUES)

परक्राम्य प्रपत्रों की मुख्य विशेषता यह होती है कि धारक दोषरहित स्वामित्व प्राप्त करता है। धारक द्वारा प्रपत्र को उचित मूल्य के बदले एवं सद्भाव से प्राप्त करने की स्थिति में, यथाविधिधारी के अधिकार प्राप्त होते हैं। परक्राम्य प्रपत्रों में चैक का भुगतान करते समय विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है चूंकि इसमें कपट की सर्वाधिक सम्भावनायें होती हैं। बैंक चैक के धारक को यथाविधि भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। चैक आदेश पर अथवा वाहक को देय होने की स्थिति में, चैक का खिड़की पर भुगतान किया जा सकता है। चैकों का भुगतान सुरक्षित करने के उद्देश्य से रेखांकन की विधि को महत्व दिया गया है। इसमें चैक का भुगतान केवल बैंक के माध्यम से ही होता है। कपट की स्थिति में, भुगतान प्राप्तकर्ता का सुविधापूर्वक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इसमें भुगतान प्राप्तकर्त्ता का बैंक में खाता होना अनिवार्य होता है। अतः रेखांकन चैक के भुगतान को सुरक्षित बनाता है।

रेखांकन का आशय
(Meaning of Crossing)

परक्राम्य प्रपत्रों में केवल चैक का रेखांकन किया जाता है। विधिक अधिकार के अभाव में विनिमय पत्र अथवा प्रतिज्ञा-पत्र को रेखांकन नहीं किया जा सकता है। चैकों के रेखांकन से आशय चैक के मुख पर दो तिरछी समान्तर रेखायें खींचकर चैक के काउन्टर पर भुगतान को रोकना है। रेखांकित चैक का भुगतान केवल बैंकों के माध्यम से ही हो सकता है। रेखांकन से आशय भुगतानकर्त्ता बैंक (Paying Banker) को निर्देश देना है कि रेखांकित चैक का भुगतान काऊन्टर पर न किया जाये।

रेखांकन के प्रकार
(Type of Crossing)

चैक का रेखांकन दो प्रकार से किया जा सकता है—

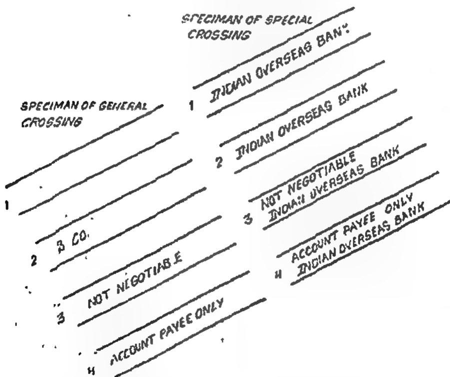
(1) सामान्य रेखांकन (General Crossing)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 123 के अनुसार, सामान्य रेखांकन में चैक के मुख पर दो तिरछी समानान्तर रेखायें खींचकर चैक का रेखांकन किया जाता है।[1] उनमें अपरक्राम्य

1. Where a cheque bears across its face an addition of the words 'and Company" or any abbreviation there of, between two parrallel transverse lines or of the two parrallel transverse lines simply either with or without words 'not negotiable', that addition shall be deemed a crossing and the cheque shall be deemed to be crossed generally. Sec. 123, Negotiable Instrument Act.

(Not Negotiable) शब्द लिखना आवश्यक नहीं होता है। इन तिरछी समानान्तर रेखाओं के बीच कोई भी शब्द जैसे & Co. आदि लिख सकते हैं। सामान्य रेखांकन का प्रभाव यह होता है कि चैक का भुगतान खिड़की पर नहीं किया जाता है एवं चैक का भुगतान किसी भी बैंक के माध्यम से किया जा सकता है।

(2) विशेष रेखांकन (Special Crossing)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 124 के अनुसार जब चैक के मुख (Face) पर किसी बैंक का नाम लिखा होता है चाहे उसके साथ अपरक्राम्य (Not Negotiable) शब्द लिखा गया है अथवा नहीं, इसे विशेष रेखांकन समझा जाता है।[1] विशेष रेखांकन में दो समानान्तर

सामान्य रेखांकन एवं विशेष रेखांकन के नमूने



(Parallel) रेखायें होनी आवश्यक नहीं होती हैं। विशेष रेखांकित चैक की स्थिति में चैक का भुगतान केवल उसी बैंक के माध्यम से किया जा सकता है जिस बैंक का नाम चैक के मुख पर लिखा गया है।

1. Where a cheque bears across its face an addition of the name of a banker, either with or without the words "Not Negotiable", that addition shall be deemed a crossing and the cheque shall be deemed to be crossed specially and to be crossed to that banker.

—Sec. 124, Negotiable Instruments

चैक रेखांकित करने के लिये अधिकृत व्यक्ति
(Persons Authorised for Making Crossing)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 125 के अन्तर्गत निम्नलिखित व्यक्तियों को रेखांकन का अधिकार दिया गया है—

(1) चैक का आहर्ता अथवा धारक चैक को रेखांकित कर सकता है।

(2) यदि चैक सामान्य रेखांकित है तब धारक इसे विशेष रेखांकन में बदल सकता है।

(3) यदि चैक सामान्य अथवा विशेष रेखांकित है तब धारक चैक में अपरक्राम्य शब्द जोड़ सकता है।

(4) यदि चैक विशेष रेखांकित है तब वह बैंक पुनः रेखांकन कर सकता है। परन्तु दूसरा बैंकर एजेण्ट के रूप में संग्रह (Collection) का कार्य करेगा।

परन्तु चैक का धारक रेखांकन को समाप्त करने अथवा विशेष रेखांकन को सामान्य रेखांकन में परिवर्तित करने का कार्य नहीं कर सकता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि धारक को चैक रेखांकित करने का अधिकार भारतीय परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम के अन्तर्गत प्रदान किया गया है। इंगलैंड में यह अधिकार केवल आहर्ता (Drawer) को प्रदान किया गया है।

भुगतान करने वाले बैंक के दायित्व
(Liabilities of Paying Banker)

चैक का रेखांकन भुगतान करने वाले बैंक को निर्देश होता है कि चैक का भुगतान बैंक के माध्यम से ही किया जाये। रेखांकित चैक का खिड़की पर भुगतान नहीं किया जा सकता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 126 व 129 के अनुसार, सामान्य रेखांकन की स्थिति में, चैक का भुगतान किसी बैंक के माध्यम से किया जायेगा तथा विशेष रेखांकन की स्थिति में चैक का भुगतान विशिष्ट बैंक (Specified Bank) के माध्यम से किया जायेगा यदि भुगतानकर्त्ता बैंक इस सम्बन्ध में कोई त्रुटि करता है तथा वास्तविक धारक को चैक का भुगतान प्राप्त नहीं होता है तब भुगतानकर्त्ता बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी ठहराया जाता है। विशिष्ट बैंक से अभिप्राय: उस बैंक से है जिस बैंक का नाम चैक के ऊपर लिखा गया है अथवा उस बैंक के आदेशानुसार अन्य किसी बैंक को जो विशिष्ट बैंक के अभिकर्त्ता के रूप में चैक का संग्रहण करता है। यदि भुगतान करने वाला बैंक उपरोक्त नियमों को ध्यान में रखते हुए भुगतान नहीं करता है तब भुगतानकर्त्ता बैंक असावधानी (Negligence) का दोषी समझा जायेगा और बैंक चैक के वास्तविक धारक (True Holder) के प्रति क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होगा।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 128 के अनुसार, यदि भुगतानकर्त्ता बैंक ने चैक का यथाविधि (In Due Course) भुगतान नहीं किया है तब बैंक आहर्ता (Drawer) के प्रति उत्तरदायी समझा जाता है। परन्तु यदि भुगतान यथाविधि किया गया है तब भुगतानकर्त्ता बैंक को विधि में पूर्ण संरक्षण दिया गया है। इस स्थिति में वास्तविक धारक को बैंक के प्रति कोई अधिकार प्राप्त नहीं है परन्तु वह उस व्यक्ति से रुपया वसूल कर सकता है जिसने चैक का भुगतान किया है।[1]

1. Ogeden Vs. Benas.

अतः चैक के रेखांकन की स्थिति में भुगतानकर्ता बैंक चैक के वास्तविक स्वामी तथा आहर्ता (Drawer) के प्रति उत्तरदायी समझा जाता है।

अपरक्राम्य रेखांकन
(Not Negotiable Crossing)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 130 के अनुसार, अपरक्राम्य शब्द का प्रयोग सामान्य अथवा विशेष रेखांकन में किया जा सकता है। अपरक्राम्य शब्द का आशय पुनः परक्रामण (Negotiation) पर रोक लगाना है अर्थात् चैक को पुनः परक्रामित नहीं किया जा सकता है। यदि चैक का पुनः परक्रामण किया जाता है तब हस्तांतरिती (Transferee) को हस्तांतरणकर्त्ता से अच्छा स्वामित्व प्राप्त नहीं हो सकता है। अतः अपरक्राम्य शब्द चैक की परक्राम्यता (Negotiability) पर रोक लगाता है परन्तु यह चैक की हस्तांतरणशीलता पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाता है। चैक पर 'अपरक्राम्यता' शब्द लिखने पर चैक की परक्राम्यता समाप्त हो जाती है तथा उसे परक्राम्य प्रपत्र नहीं समझा जाता है। इस स्थिति में चैक के हस्तांतरिती को हस्तांतरणकर्त्ता से अच्छा स्वामित्व प्राप्त नहीं हो सकता है। परक्राम्य प्रपत्र की यह प्रमुख विशेषता है कि धारक दोषरहित स्वामित्व प्राप्त करता है। अपरक्राम्य चैक में यह विशेषता समाप्त हो जाती है। अतः इस स्थिति में अपरक्राम्य चैक को परक्राम्य प्रपत्र नहीं समझा जाना चाहिए चूंकि यह शब्द चैक की परक्राम्यता समाप्त कर देता है। इस स्थिति में चैक मात्र स्वत्व विलेख समझा जाता है जिसका हस्तांतरण अन्य सम्पत्ति के रूप में किया जाता है। संग्रहकर्ता एवं भुगतानकर्ता बैंक को रेखांकित चैक के सम्बन्ध में धारा 128 व 131 के अन्तर्गत पूर्ण संरक्षण दिया गया है। यदि भुगतानकर्त्ता बैंक (Paying Bank) चैक का भुगतान यथाविधि रूप में तथा रेखांकन के अनुसार करता है तब बैंक किसी भी क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं है। अपरक्राम्य रेखांकन का मुख्य उद्देश्य वास्तविक धारक के हितों की रक्षा करना है।

केवल प्रापक के लिये रेखांकन
(Account Payee Crossing)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम के अन्तर्गत 'केवल प्रापक के लिये' (A/c Payee Only) शब्द का कोई महत्व नहीं दिया गया है। परन्तु व्यवहार में यह शब्द अत्यन्त महत्वपूर्ण है तथा इस शब्द को भुगतानकर्त्ता बैंक के लिये निर्देश (Mandate) समझा जाता है। यदि किसी चैक पर दो तिरछी समानान्तर रेखाओं के बीच 'केवल प्रापक के लिये' शब्द लिखा गया है तब इसे सामान्य रेखांकन (General Crossing) समझा जाता है। परन्तु यदि समानान्तर रेखायें नहीं हैं तब इसे रेखांकन नहीं समझा जाता है। इस स्थिति में 'केवल प्रापक के लिये' शब्द बैंक को निर्देश होता है कि चैक का भुगतान केवल प्रापक को किया जाये। इस स्थिति में प्रापक (Payee) को

का भुगतान काउन्टर (Counter) पर किया जा सकता है परन्तु चैक का भुगतान करने से पूर्व भुगतानकर्त्ता बैंक प्रापक का परिचय (Identification) प्राप्त करता है।

भुगतानकर्त्ता बैंक को 'केवल प्रापक के लिये' रेखांकित चैक का भुगतान करते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिए कि चैक का भुगतान केवल प्रापक को ही किया जाये। इसके लिये संग्रहकर्त्ता बैंक (Collecting Bank) का पुष्टिकरण (Confirmation) आवश्यक होता है कि चैक का संग्रह केवल प्रापक के लिये किया जा रहा है। अतः भुगतानकर्त्ता बैंक संग्रहकर्त्ता के पुष्टिकरण पर यथाविधि भुगतान करने की स्थिति में अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है।

'केवल प्रापक के लिये' शब्द संग्रहकर्त्ता बैंक को भी निर्देश समझा गया है।[1] संग्रहकर्त्ता बैंक द्वारा चैक का संग्रह केवल प्रापक के खाते में करना चाहिए। यदि केवल प्रापक के खाते में रेखांकित चैक (A/c Payee Only) का पृष्ठांकन किया जाता है तब साधारणतः बैंक पृष्ठांकिकी के खाते में चैक का संग्रह नहीं करता है। बैंक व्यवहार में मूल्यवान ग्राहकों के लिये केवल प्रापक के लिये रेखांकित चैक का संग्रह पृष्ठांकन की स्थिति में भी किया करते हैं। परन्तु इसके लिये बैंक प्रापक के पृष्ठांकन का पुष्टिकरण एवं पृष्ठांकन की जमानत (Guarantee) पृष्ठांकिकी से करवाया करते हैं। 'केवल प्रापक के लिये' रेखांकित चैक की स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक का दायित्व भुगतानकर्त्ता बैंक की तुलना में अधिक समझा गया है अतः संग्रहकर्त्ता बैंक को चैक का संग्रहण पूर्ण सावधानी से करना चाहिए।

इस स्थिति में यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि चैक रेखांकित होने की स्थिति में भुगतानकर्त्ता बैंक चैक का भुगतान रेखांकन के अनुरूप करता है। चैक आदेश पर अथवा वाहक को देय होने का रेखांकन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। अतः यदि चैक वाहक को देय है तथा 'प्रापक केलिये' रेखांकित चैक है तब चैक का भुगतान आवश्यक बैंक के माध्यम से ही किया जायेगा और इसके लिये संग्रहकर्त्ता बैंक का पुष्टिकरण है। यदि भुगतानकर्त्ता बैंक 'केवल प्रापक के लिये' शब्द को कोई महत्व नहीं देता है तथा रेखांकित चैक का भुगतान अन्य बैंक के माध्यम से करता है तब भुगतानकर्त्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 128 के अन्तर्गत वैधानिक संरक्षण प्राप्त है परन्तु यदि संग्रहकर्त्ता बैंक ने प्रापक के खाते में चैक का संग्रहण नहीं किया है तथा संग्रहकर्त्ता बैंक विघटित (Dissolved) अथवा फेल हो जाता है तब चैक का वास्तविक स्वामी भुगतानकर्त्ता बैंक से ही क्षतिपूर्ति की माँग करेगा। इस स्थिति में भुगतानकर्त्ता बैंक त्रुटिपूर्ण भुगतान का दोषी ठहराया जा सकता है चूंकि उसने भुगतान करने से पूर्व ग्राहक के निर्देश (Mandate) का पुष्टिकरण नहीं किया है। अतः भुगतानकर्त्ता बैंक को अपनी वैधानिक स्थिति सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से, संग्रहकर्त्ता बैंक का पुष्टिकरण प्राप्त करना चाहिए।

---

1. Underwood Vs. Bank of Liverpool and Tailors Priya Vs. Gulab Chand A. I. R. (1963)

दोहरा रेखांकन
(Double Crossing)

विशेष रेखांकन की स्थिति में चैक का भुगतान एक विशिष्ट बैंक के माध्यम से किया जाता है। यदि चैक पर दो बैंकों के नाम लिखे गये हैं तब यह दोहरा रेखांकन समझा जाता है। दोहरा रेखांकन परक्राम्य विपत्र अधिनियम के अन्तर्गत मान्य नहीं है। परन्तु दूसरे बैंक का नाम विशिष्ट बैंक के अभिकर्ता के रूप में लिखा जा सकता है।[1] इस स्थिति में चैक का भुगतान अभिकर्ता बैंक (Banker as Agent) को किया जाता है। दोहरे रेखांकन की स्थिति में यह तथ्य अत्यन्त

SPECIMEN OF DOUBLE CROSSING

INDIAN OVERSEAS BANK
TO
STATE BANK OF INDIA
AS AGENT FOR COLLECTION

महत्वपूर्ण है कि रेखांकन करते समय संग्रह के लिये अभिकर्ता (Agent for Collection) शब्द लिखना अनिवार्य है अन्यथा रेखांकन अपूर्ण समझा जाता है।

रेखांकन का विलोपन अथवा मिटाना
(Obliterating of Crossing)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 89 के अनुसार, यदि रेखांकित चैक का रेखांकन नष्ट कर दिया गया है अथवा मिटा दिया गया है और भुगतान करते समय चैक के मुख पर रेखांकन स्पष्ट नहीं होता है तथा भुगतानकर्ता बैंक चैक का यथाविधि भुगतान करता है तब भुगतानकर्ता बैंक अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। अतः रेखांकित चैक की स्थिति में भुगतानकर्ता बैंक दोषपूर्ण भुगतान के लिये उसी दशा में उत्तरदायी ठहराया जाता है जबकि चैक पर रेखांकन स्पष्टतः प्रगट होता है और बैंक चैक का काउण्टर पर भुगतान करता है।

---

1. Akrokerri Mines Vs. Economic Bank.

रेखांकन को खोलना
(Opening of Crossing)

चैक पर रेखांकन किसी भी व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है जो कि चैक का धारक है। परन्तु रेखांकन खोलने का अधिकार चैक के लेखक (Drawer) को होता है। रेखांकन खोलते समय निम्नलिखित क्रियाविधि अपनायी जाती है—

(1) रेखांकन को काटा जाता है।

(2) रेखांकन काटने के पश्चात् उस पर नकद भुगतान (Pay Cash) शब्द लिखते हैं।

(3) रेखांकन काटने के स्थान पर लेखक के पूर्ण हस्ताक्षर (Full Signature) होने आवश्यक होते हैं।

अतः उपर्युक्त विधि से रेखांकन को समाप्त करके रेखांकित चैक खोला जा सकता है और इसका काउन्टर (Counter) पर भुगतान प्राप्त किया जा सकता है।

(SOLVED PROBLEMS)

1. बैंक में एक चैक 2,000 रुपये की राशि का प्राप्त होता है जिस पर मूलतः रेखांकन किया गया है परन्तु इसके पश्चात् रेखांकन काटकर लेखक के हस्ताक्षर किये गये हैं। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A cheque for Rs. 2,000 which had been crossed originally carries below the crossing words 'crossing cancelled' and signed by the drawer and is presented for cash payment on the counter. How would you deal with this situation ? *(C. A. I. I. B. Nov., 1977)*

हल—उपरोक्त स्थिति में चैक का भुगतान नहीं किया जा सकता है चूंकि रेखांकन काटकर नकद भुगतान का निर्देश नहीं दिया गया है। परन्तु व्यवहार में बैंक ऐसे चैक का भुगतान कर देता है चूंकि लेखक द्वारा रेखांकन काटा गया है जिसका गर्भित आशय नकद भुगतान समझा जाता है।

2. एक मूलतः रेखांकित चैक भुगतान के लिये बैंक में प्रस्तुत किया जाता है जिसका रेखांकन कटा हुआ है तथा लेखक के संक्षिप्त हस्ताक्षर (Initials) हो रहे हैं। आप क्या करेंगे ?

A cheque which had originally been crossed is presented to you for payment at counter bearing the remark "crossing cancelled" below the crossing under the drawer's initials.

(C. A. I. I. B. Nov., 1981)

हल—उपरोक्त स्थिति में चैक का भुगतान नहीं किया जायेगा चूंकि रेखांकन काटने की स्थिति में यह कार्य महत्वपूर्ण परिवर्तन समझा जाता है तथा इस पर लेखक के पूर्ण हस्ताक्षर आवश्यक समझे जाते हैं।

3. क्या चैक पर निम्नलिखित रेखांकन को सामान्य रेखांकन समझा जा सकता है—

Can the following type of crossing on a cheque be regarded as General Crossing—

Under Rs 25,000/-

(C. A. I.I. B. Part II)

हल—उपरोक्त रेखांकन को सामान्य रेखांकन समझा जा सकता है। सामान्य रेखांकन में चैक के मुख पर दो समानान्तर रेखायें होनी आवश्यक हैं। उनके अन्दर किन्ही शब्दों को लिखा जा सकता है अथवा उन्हें रिक्त (Blank) छोड़ा जा सकता है। अतः उपरोक्त स्थिति में सामान्य रेखांकन समझा जायेगा।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य

(Important Points to be Remembered)

(1) रेखांकित चैक का भुगतान बैंक खाते के माध्यम से ही किया जाना चाहिए।

(2) चैक पर रेखांकन दो प्रकार से किया जा सकता है। प्रथम, सामान्य रेखांकन एवं द्वितीय, विशेष रेखांकन।

(3) चैक पर विशेष रेखाकन दो बैंकों के लिये नहीं किया जा सकता है।

(4) रेखांकित चैक के दोषपूर्ण भुगतान की स्थिति में, भुगतानकर्ता बैंक चैक के आहर्ता एवं वास्तविक स्वामी के प्रति उत्तरदायी होता है।

(5) केवल प्रापक के लिये रेखांकन भुगतानकर्ता एवं संग्रहकर्ता बैंक को निर्देश समझा जाता है।

प्रश्न
(Questions)

1. चैक के रेखांकन से आप क्या समझते हैं ? रेखांकन के प्रकार बताइये एवं 'अपरक्राम्य रेखांकन' के प्रभाव को स्पष्ट कीजिये।

What do you mean by crossing of cheque ? Explain the type of crossing and effect of 'Not Negotiable' crossing.

(Gorakhpur B. Com, 1985)

2. चेक के रेखांकन का क्या अर्थ है ? रेखांकन कौन कर सकता है ? इसके कितने रूप हैं तथा इसका क्या प्रभाव होता है ?

What do you mean by crossing of cheque ? How can make the crossing ? What are its type and what has its effect ?

(Gorakhpur B. Com. 1984)

3. अहस्तांतरणीय अपरक्राम्य तथा केवल प्रापक के लिये रेखांकन में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

Distinguish between the crossing Not Transferable, Not Negotiable and Account Payee.

4. भुगतानकर्त्ता बैंक के लिये चैक पर केवल प्रापक के लिये तथा अपरक्राम्य रेखांकन का महत्व स्पष्ट कीजिये।

Discuss the significance to the paying banker of 'Account Payee Only' and 'Not Negotiable' crossing on cheque.

(C. A. I. I. B. May, 1981)

5. क्या विशेष रेखांकित चैक पुनः रेखांकित हो सकता ? यदि हाँ, तब किन परिस्थितियों में ?

Can a specially crossed cheque be crossed again ? If so, under what circumstances ?

6. रेखांकित चैक के मुख पर 'प्रापक के खाते में' शब्द का महत्व संग्रहकर्त्ता एवं भुगतानकर्त्ता बैंक के लिये स्पष्ट कीजिये।

Discuss the significance of the words 'Account Payee' written on the face of a crossed cheque, for the collecting banker and the paying banker. *(C. A. I. I. B. Nov., 1977)*

7. यदि एक चैक एक से अधिक बैंक के लिये विशेष रेखांकित किया गया है तब प्रस्तुतीकरण पर क्या कार्य करना चाहिए ?

If a cheque is crossed specially to more than one banker, what action should be taken on presentation ?

□□□

11

चैकों का संग्रहण
(COLLECTION OF CHEQUES)

बैंक अपने ग्राहकों को बहुमूल्य सेवायें प्रदान करते हैं। इन सेवाओं में चैंकों का संग्रहण विशिष्ट स्थान रखता है। बैंक अपने ग्राहकों की सुविधा के लिये यह सेवा प्रदान करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंक ग्राहकों के खातों में अन्य बैंकों पर देय चैंकों की राशि वसूल करके जमा करते हैं। इसमें बैंक तथा ग्राहक के बीच मालिक एवं अभिकर्ता के सम्बन्ध होते हैं। बैंक ग्राहकों के खातों में चैंकों का संग्रहण करने के लिये विधिक रूप में उत्तरदायी नहीं होते हैं वरन बैंक अपनी सेवाओं का विस्तार करने के लिये यह सुविधा प्रदान करते हैं। वर्तमान समय में, यह सुविधा अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गयी है चूंकि साधारणतः व्यक्तियों में बैंकिंग आदत का विकास हो रहा है और ग्राहकों को अन्यत्र स्थान पर देय चैंक प्राप्त होते हैं। ग्राहकों के लिये यह सम्भव नहीं होता है कि वे स्थान-स्थान पर जाकर रुपये की वसूली करें। वे बैंक के माध्यम से अपने चैंकों की वसूली करते हैं। अतः वर्तमान समय में, चैंकों का संग्रहण बैंकों के अनिवार्य कार्यों में सम्मिलित समझा जाता है। इसके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं—

(1) बैंकों द्वारा संग्रहण की सुविधा पृथागत (Customery) है। अतः बैंक यह सुविधा व्यवहार में अनिवार्य रूप से प्रदान करते हैं।

(2) रेखांकित चैंकों का भुगतान बैंक के माध्यम से ही प्राप्त हो सकता है। चैंकों को रेखांकित करने का अधिकार परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम ने प्रदान किया गया है।

अतः उपरोक्त कारणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बैंकों के लिये चैंकों का संग्रहण एक आवश्यक कार्य है। चैंकों का संग्रहण करते समय, संग्रहकर्त्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत विधिक संरक्षण प्रदान किया गया है जिसमें चैंक का संग्रहण निश्चित दशाओं में करने पर संग्रहकर्त्ता बैंक अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है अन्यथा बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन का उत्तरदायी होता है।

परिवर्तन का सिद्धान्त
(Doctrine of Conversion)

यह सिद्धान्त केवल मूर्त सम्पत्तियों (Tangible Property) पर लागू समझा जाता है। यह पुस्तकीय देनदारियों (Book Debts) पर लागू नहीं होता है। इसमें

परक्राम्य प्रपत्र भी सम्मिलित किये जाते हैं। संग्रहकर्त्ता बैंक को चैक का संग्रहण उचित सावधानी एवं बिना लापरवाही के करना चाहिये। जाली पृष्ठांकन की स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक का उत्तरदायित्व अत्यधिक विस्तृत है। अपरक्राम्य रेखांकित चैक की स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक को धारक से अच्छा स्वामित्व प्राप्त नहीं हो सकता है अतः इस स्थिति में, तृतीय पक्षकार के हित में चैक का संग्रहण नहीं करना चाहिए। यदि बैंक चैक का संग्रहण मूल्य के लिये धारक (Holder for Value) के रूप में करता है अर्थात चैक संग्रहण से पूर्व ग्राहक का खाता क्रेडिट कर दिया जाता है तब दोषपूर्ण परिवर्तन की स्थिति में वह निम्नलिखित परिस्थितियों में उत्तरदायी नहीं माना जायेगा कि यदि चैक—

(i) सद्भाव से प्राप्त किया है।

(ii) मूल्य के लिये प्राप्त किया है।

(iii) बिना इस तथ्य की जानकारी के प्राप्त किया है कि इस पर तृतीय पक्षकार का अधिकार है।

उपरोक्त परिस्थिति में बैंक यथाविधिधारी माना जायेगा तथा वह दोषयुक्त परिवर्तन के लिये उत्तरदायी नहीं होगा। व्यवहार में, बैंक बचत खाते (Saving Bank A/c) की स्थिति में पृष्ठांकित चैक का संग्रहण नहीं करते हैं। चालू खाते की स्थिति में, संग्रहण से पूर्व ग्राहक से पृष्ठांकन की जमानत (Guarantee) प्राप्त करते हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि संग्रहकर्त्ता बैंक को 'अपरक्राम्य रेखांकित चैक' (Not Negotiable Crossing) अथवा 'केवल प्रापक के लिये' (A/c payee only) रेखांकित चैक की स्थिति में तृतीय पक्षकार के हित में पृष्ठांकन चैक का संग्रहण नहीं करना चाहिए चूंकि इस स्थिति में बैंक यथाविधिधारी नहीं बन सकता है।

संग्रहकर्त्ता बैंक के विधिक संरक्षण
(Statutory Protection of Collecting Banker)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत, संग्रहकर्त्ता बैंक को ग्राहकों के खाते में चैकों का संग्रह (Collection) के सम्बन्ध में पूर्ण संरक्षण दिया गया है कि यदि संग्रहकर्त्ता बैंक रेखांकित चैक का संग्रह सद्भाव (Good Faith) एवं बिना लापरवाही (Without Negligence) से करता है तब चैक में कोई दोषपूर्ण स्वामित्व होने की स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक उत्तरदायी नहीं होता है। चैकों का संग्रह करने की स्थिति में। यदि बैंक स्वामित्व परिवर्तन (Conversion) का दोषी पाया जाता है तब बैंक वास्तविक स्वामी के प्रति उत्तरदायी समझा जाता है। स्वामित्व परिवर्तन के अन्तर्गत, बैंक उस व्यक्ति के लिये चैकों के संग्रह का कार्य करता है जिसका चैक पर कोई अधिकार (Title) नहीं होता है अथवा दोषयुक्त स्वामित्व होता है। अतः इस स्थिति में, बैंक को धारा 131 के अन्तर्गत कोई संरक्षण प्राप्त नहीं होता है। चैकों का संग्रह करने की स्थिति में, बैंक ग्राहक के अभिकर्त्ता

के रूप में कार्य करता है। इसमे बैंक ग्राहक के खाते मे, रुपया वसूल करने के पश्चात् जमा करता है। बैंक का स्वामित्व ग्राहक के स्वामित्व से अच्छा नही हो सकता है। इसके विपरीत, कुछ परिस्थितियों मे, बैंक मूल्य के लिये धारक (Holder for Value) के रूप मे चैंकों का संग्रह करता है। इसमे, बैंक चैंकों की रकम वसूल करने से पूर्व ही ग्राहक के खाते मे रकम क्रेडिट (Credit) कर देता है। इस स्थिति मे बैंक मूल्य के लिये धारक समझा जाता है तथा बैंक को धारा 131 के अन्तर्गत संरक्षण प्राप्त होता है।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 केवल रेखांकित चैकों के सम्बन्ध में, संग्रहकर्त्ता बैंक को सरक्षण प्रदान करती है। परन्तु, वर्ष 1947 से अधिनियम की धारा 131A संलग्न की गई जिसमें ड्रॉफ्ट (Draft) के संग्रह के लिये बैंक को धारा 131 के अनुसार ही संरक्षण प्रदान किया गया।

संग्रहकर्त्ता बैंक को निम्नलिखित दशाओं में वैधानिक संरक्षण प्राप्त होता है—

(1) रेखांकित चैक (Crossed Cheque)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत, संग्रहकर्त्ता बैंक को उसी स्थिति मे सरक्षण प्रदान किया जाता है जबकि बैंक को संग्रह के लिये रेखांकित चैक प्राप्त होता है। यदि चैक रेखांकित नही है तथा बैंक चैक के ऊपर अपना नाम लिखकर संग्रह करता है तब, बैंक को धारा 131 के अन्तर्गत सरक्षण प्राप्त नही होता है चूंकि इस स्थिति मे चैक रेखांकित नही समझा जाता है।[1] अतः चैक संग्रहण के लिये जमा होने से पूर्व रेखांकित होना चाहिये।

(2) ग्राहक के खाते में संग्रहण (Collection in Customer's Account)–संग्रहकर्त्ता बैंक को वैधानिक संरक्षण उसी स्थिति मे प्राप्त होता है जबकि बैंक अपने ग्राहक के लिये चैक का संग्रह करता है। ग्राहक से आशय उस व्यक्ति से होता है। जिसका बैंक मे खाता है तथा वह बैंक से बैंकिंग प्रकृति का व्यवहार करता है। इस सम्बन्ध मे यह तथ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि ग्राहक का खाता पर्याप्त सावधानी एव परिचय (Introduction) प्राप्त करके खोला जाना चाहिये। यदि ग्राहक के खाते में परिचय प्राप्त नहीं किया गया है तब बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी समझा जायेगा और उसे धारा 131 के अन्तर्गत संरक्षण प्राप्त नही हो सकता है। इस निर्णय की पुष्टि इण्डियन बैंक नामक विवाद[2] मे की गयी।

(3) संग्रहण सद्भाव एवं बिना लापरवाही से किया जाये (Collection in Good Faith and Without Negligence)—संग्रहकर्त्ता बैंक को चैकों का संग्रहण पूर्ण सद्भाव एवं बिना लापरवाही से करना चाहिये। यदि बैंक लापरवाही

1. Garden Vs. London City and Midland Bank.
2. Indian Bank Vs. Catholic Syrian Bank.

का दोषी समझा जाता है तब, बैंक को धारा 131 के अन्तर्गत संरक्षण प्रदान नहीं किया जाता है। बैंक को सन्देह की स्थिति में पूर्ण छानबीन करनी चाहिये। इस निर्णय की पुष्टि यूनाइटेट कामिशयल बैंक नामक विवाद[1] में की गयी। इस विवाद में संग्रहकर्त्ता बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन का उत्तरदायी ठहराया गया है। इसमें बैंक द्वारा पृष्ठांकन की शुद्धता की जाँच उचित सावधानी ध्यान में रखते हुये नहीं की गयी है चूंकि चैक एक कम्पनी द्वारा अन्य कम्पनी को पृष्ठांकित किया गया है। जबकि व्यवहार में ऐसी पद्धति कम प्रचलन में होती है चूंकि कम्पनी अपने खाते से चैक द्वारा भुगतान करती है। कम्पनी द्वारा पृष्ठांकन करते समय, कम्पनी की रबर स्टाम्प का प्रयोग नहीं किया गया है तथा चैक की राशि बढ़ी है। बैंक द्वारा चैक की राशि वसूल होने से पूर्व कम्पनी के खाते में क्रेडिट कर दी गयी है। अतः उपरोक्त तथ्यों को संग्रहकर्त्ता बैंक पूर्ण सावधानी से कार्य करने पर ज्ञात कर सकता था। परन्तु बैंक ने उचित छानबीन के अभाव में चैक का संग्रहण किया है। अतः संग्रहकर्त्ता बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी ठहराया गया।

निम्नलिखित दशाओं में बैंक द्वारा किया गया कार्य लापरवाही से किया गया कार्य समझा जाता है—

(i) बैंक द्वारा ग्राहक का खाता बिना परिचय के खोला गया है। बैंक में खाता खोलते समय, बैंक के अन्य किसी ग्राहक द्वारा परिचय किया जाना चाहिये। यदि बैंक ने खाता खोलते समय यह सावधानी नहीं अपनायी है तब बैंक लापरवाही के लिये दोषी समझा जायेगा। खाते में प्रथम लेनदेन नक़दी (Cash) में होना चाहिए। परन्तु अनिवासी परदेशी खाते (NRE Account) में अन्तरण राशि से खाता खोला जाता है। चालू खाते की स्थिति में परिचय किसी चालू खाताधारी से प्राप्त करना चाहिए, चूंकि एक व्यापारी अन्य व्यापारी को उचित रूप में जानता है। व्यापारी उसी प्रकृति की वस्तु में व्यापार करता हुआ होना चाहिए। विवाहित स्त्री का खाता खोलते समय पति का नाम, पता व व्यवसाय लिखना चाहिए।

(ii) कम्पनी के नाम में देय चैक कम्पनी के संचालक अथवा प्रबन्धक के व्यक्तिगत खाते में संग्रहण नहीं करना चाहिये।[2]

(iii) संग्रहण की स्थिति में बैंक को ग्राहक के निर्देशानुसार कार्य करना चाहिये और यदि बैंक ऐसा करने में असमर्थ रहता है तब वह इससे हुई क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी है। इस निर्णय की पुष्टि मोहम्मद जाकूब साहिब बनाम इण्डियन बैंक लिमिटेड नामक विवाद[3] में की गयी। परन्तु यदि संग्रहकर्त्ता बैंक की कोई शाखा उस स्थान पर नहीं है जहाँ पर चैक देय है तब संग्रहकर्त्ता बैंक चैक का संग्रहण

1. United Commercial Bank Vs Reliable Hire Purchase Co. (P) Ltd.
2. Woodbriar Estate Ltd. Vs. Catholic Bank of India Ltd.
3. R.M.J. Mohd. Jacub Sahib and Others Vs. Indian Bank Ltd. Madras.

किसी अन्य बैंक के माध्यम से करवा सकता है। यह संग्रहकर्त्ता बैंक का गर्भित अधिकार है। इस निर्णय की पुष्टि पंजाब नेशनल बैंक बनाम ईश्वरभाई लालभाई पटेल व अन्य नामक विवाद में की गयी है।

(iv) चैक का संग्रहण करते समय संग्रहकर्त्ता बैंक को प्रापक (Payee) द्वारा पृष्ठांकन की जाँच पूर्ण सावधानी से करनी चाहिये। यदि पृष्ठांकन एक से अधिक बार किया गया है तब पृष्ठांकन नियमित होना चाहिये। पृष्ठांकन की स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक पूर्ण उत्तरदायी होता है। अतः तृतीय पक्षकार के खाते में संग्रहण करते समय बैंक को तृतीय पक्षकार के प्रापक अथवा आहर्ता से सम्बन्धों की जाँच करनी चाहिये कि तृतीय पक्षकार द्वारा चैक की प्राप्ति किन परिस्थितियों में की गयी है। इसके अतिरिक्त, बैंक को तृतीय पक्षकार से प्रथम पृष्ठांकन का पुष्टिकरण करवाना चाहिये कि पृष्ठांकनकर्त्ता के हस्ताक्षर वास्तविक (Genuine) हैं और त्रुटि की स्थिति में वह स्वयं उत्तरदायी होगा। यदि संग्रहकर्त्ता बैंक द्वारा पर्याप्त सावधानी का प्रयोग नहीं किया गया है और पृष्ठांकन में कोई दोष पाया जाता है तब संग्रहकर्त्ता बैंक चैक के वास्तविक स्वामी व आहर्ता (Drawer) के प्रति उत्तरदायी होता है। संग्रहकर्त्ता बैंक द्वारा पृष्ठांकन का पुष्टिकरण करते समय लापरवाही से कार्य नहीं किया जाना चाहिए अन्यथा संग्रहकर्त्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत विधिक संरक्षण प्राप्त नहीं हो सकता है। इस निर्णय की पुष्टि कनारा बैंक बनाम गोविन्द राम राजेन्द्र कुमार व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी है। व्यवहार में, बैंक बचत खाते में तृतीय पक्षकार के हित में देय चैक खाताधारी के खाते में संग्रह नहीं करते हैं। यह सुविधा चालू खाते में प्रदान की जा सकती है परन्तु इसमें खाताधारी द्वारा पूर्व के पृष्ठांकन की जमानत प्राप्त की जाती है।

पृष्ठांकन की स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक का दायित्व भुगतानकर्त्ता बैंक की तुलना में अधिक होते हैं। इस निर्णय की पुष्टि सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया बनाम गोपीनाथ नामक विवाद[2] में की गयी है। इस विवाद में केरल हाईकोर्ट द्वारा संग्रहकर्त्ता बैंक को जाली पृष्ठांकन के लिये उत्तरदायी ठहराया गया चूंकि बैंक द्वारा ग्राहक का खाता पर्याप्त सावधानी से नहीं खोला गया था। ग्राहक के खाते में औसत शेष बहुत कम रहता था तथा खाते में लम्बी अवधि से लेन-देन नहीं किये गये थे। इसके अतिरिक्त, ग्राहक के हित में किया गया पृष्ठांकन दोषपूर्ण था चूंकि उसमें कुछ शब्द लिखे गये तथा पृष्ठांकिकी के लिये कम्पनी के नाम की मोहर का प्रयोग किया गया था। संग्रहकर्त्ता बैंक द्वारा ग्राहक के स्वत्व (Title) की जाँच पूर्ण सावधानी से नहीं की गयी थी। अतः न्यायालय द्वारा भुगतानकर्त्ता बैंक की तुलना में संग्रहकर्त्ता बैंक को उत्तरदायी ठहराया गया।

(v) 'अपरक्राम्य रेखांकित चैक' (Not Negotiable Crossing) अथवा

1. Canara Bank Vs. Govind Ram Rajindra Kumar & Others. (1961)
2. Central Bank of India Vs. Gopinath Nair and Others (1972).

'केवल प्रापक के लिये' (Account Payee Only) रेखांकित चैक की स्थिति में बैंक को पर्याप्त सावधानी बरतनी चाहिये तथा 'केवल प्रापक के लिये' रेखांकित चैक की स्थिति में बैंक को चैक का संग्रहण केवल प्रापक के खाते में करना चाहिये।

अतः स्पष्ट होता है कि संग्रहकर्त्ता बैंक को वैधानिक संरक्षण प्राप्त करने के लिये उपरोक्त समस्त सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिये। यदि संग्रहकर्त्ता बैंक द्वारा पर्याप्त सावधानी का प्रयोग नहीं किया गया है तब बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत संरक्षण प्रदान किया जाता है।

संग्रहकर्त्ता बैंक के कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व
(Duties and Liabilities of Collecting Banker)

संग्रहकर्त्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत वैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है जिसमें संग्रहकर्त्ता बैंक उचित सावधानी एवं सद्भाव से कार्य करने पर दोषपूर्ण संग्रहण के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जाता है। बैंक द्वारा चैकों का संग्रहण करते समय, बैंक एवं ग्राहक के बीच अभिकर्त्ता (Agent) एवं मालिक (Principal) के सम्बन्ध पाये जाते हैं। अतः बैंक के ग्राहक के प्रति कुछ कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व होते हैं। बैंक के अपने ग्राहक के प्रति निम्नलिखित कर्त्तव्य हैं—

(1) चैकों का प्रस्तुतीकरण (Presentation of Cheque)—बैंक को चैक का प्रस्तुतीकरण अदाकर्त्ता बैंक (Paying Banker) के समक्ष बिना किसी विलम्ब के करना चाहिए अर्थात् बैंक को उचित समयावधि में चैक भुगतान के लिये प्रस्तुत करना चाहिये। उचित समयावधि बैंक की कार्य-पद्धति, उपलब्ध साधन एवं बैंकिंग व्यवहार पर निर्भर करती है। स्थानीय चैकों को भुगतान लिये अगले दिन (Next day) प्रस्तुत करना चाहिये। यदि संग्रहकर्त्ता बैंक चैक प्रस्तुतीकरण में अनावश्यक देरी करता है जिससे धारक को क्षतिवहन करनी पड़ती है तब बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी समझा जाता है। संग्रहकर्त्ता बैंक को निम्नलिखित जोखिम वहन करने पड़ते हैं—

(i) विलम्ब की अवधि में चैक का आहर्ता पागल अथवा दिवालिया हो सकता है,

(ii) चैक के आहर्ता द्वारा भुगतान रोका अथवा खाते से रुपया निकाला जा सकता है,

(ii) अदाकर्त्ता बैंक विघटित हो सकता है।

उपरोक्त परिस्थितियों में बैंक लापरवाही का दोषी समझा जाता है तथा चैक के धारक के प्रति उत्तरदायी होता है।

(2) अनादरण की सूचना भेजना (To Serve Notice of Dishonour)—संग्रहकर्त्ता बैंक को चैक अनादृत होने की स्थिति में, अनादरण की सूचना ग्राहक को रजिस्टर्ड डाक द्वारा शीघ्र भेजनी चाहिए जिसमें चैक अनादृत होने का कारण स्पष्ट

होता है। यह सूचना चैक अनादरण का प्रमाण-पत्र होती है। इसकी सहायता से ग्राहक चैक के आहर्ता एवं अन्य पक्षकारों के विरुद्ध दावा करने में समर्थ होता है। यदि बैंक द्वारा यह सूचना उचित समयावधि में नहीं भेजी जाती है तब बैंक ग्राहक को हुयी क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है।

(3) ग्राहक के खाते में जमा करना (Credit the Proceeds in Customer's Account)—चैक का भुगतान होने की स्थिति में, संग्रहकर्त्ता बैंक को चैक की राशि ग्राहक के खाते में तुरन्त जमा करनी चाहिये।

संग्रहकर्त्ता बैंक को अपने उपरोक्त कर्तव्य पूर्ण सावधानी से पालन करने चाहिए। यदि संग्रहकर्त्ता बैंक लापरवाही का दोषी पाया जाता है तब बैंक चैक के वास्तविक धारक के प्रति पूर्णतः उत्तरदायी होता है और बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन का दोषी समझा जाता है। संग्रहकर्त्ता बैंक पृष्ठांकन की विशुद्धता (Genuineness of Endorsement) एवं खाता खोलने में अनियमितता के लिये उत्तरदायी होता है। पृष्ठांकित किये गये चैक का संग्रहण करने की स्थिति में संग्रहणकर्त्ता बैंक को पूर्व के समस्त पृष्ठांकनों की जमानत प्राप्त करनी चाहिये तथा चैक का संग्रहण केवल ग्राहक के लिये करना चाहिये। ग्राहक का खाता उचित विधि में खुला हुआ होना चाहिये। यदि संग्रहकर्त्ता बैंक इस सम्बन्ध में लापरवाही का दोषी पाया जाता है तथा वास्तविक धारक के अतिरिक्त, किसी अन्य व्यक्ति के खाते में चैक का संग्रहण करता है तब बैंक वास्तविक धारक के प्रति क्षतिपूर्ति का उत्तरदायी समझा जाता है।

अतः संग्रहकर्त्ता बैंक के कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व अत्यधिक विस्तृत होते हैं। संग्रहकर्त्ता बैंक को चैकों का संग्रहण उचित सावधानी एवं पर्याप्त छानबीन के पश्चात् करना चाहिए।

(SOLVED PROBLEMS)

1. P बैंक द्वारा 3,000 रुपये का चैक X बैंक से भुगतान के लिये संग्रह किया जाता है। चैक बैंक के ग्राहक के खाते में जमा किया जाता है जिसके हित में प्रापक द्वारा पृष्ठांकन किया गया है। भुगतानकर्त्ता एवं संग्रहकर्त्ता बैंक की स्थिति का वर्णन कीजिये—

(i) यदि आहर्ता के हस्ताक्षर जाली हैं।

(ii) यदि प्रापक का पृष्ठांकन जाली है।

A crossed order cheque for Rs. 3,000 drawn on X Bank is collected by P Bank for the latter's customer in whose favour it has been endorsed by the payee. Discuss the position of the paying Bank and the collecting Bank.

(i) If the signature of the Drawer has been forged.

(ii) If the endorsement of the payee has been forged.

(C. A. I. I. B. Nov., 1950)

हल—(i) आहर्ता के हस्ताक्षर जाली (Forged) होने की स्थिति में, भुगतान-कर्त्ता बैंक पूर्ण उत्तरदायी है। संग्रहकर्त्ता बैंक की स्थिति में, जाली हस्ताक्षर के चैक का भुगतान होने पर, उसका कोई दायित्व नहीं है।

(ii) प्रापक के हस्ताक्षर जाली होने की स्थिति में भुगतानकर्त्ता (Paying Banker) बैंक का कोई उत्तरदायी नहीं होता है। भुगतानकर्त्ता बैंक का यह कर्त्तव्य है कि वह पृष्ठांकित चैक की स्थिति में यह जांच करे कि पृष्ठांकन नियमित (Regular) है अथवा नहीं है। जाली पृष्ठांकन के लिये भुगतानकर्त्ता बैंक उत्तरदायी नहीं होता है।

इसके विपरीत, संग्रहकर्त्ता बैंक जाली पृष्ठांकन की स्थिति में पूर्ण उत्तरदायी समझा जाता है। बैंक का यह दायित्व होता है कि वह पृष्ठांकनकर्त्ता के हस्ताक्षर की शुद्धता (Genuineness) के सम्बन्ध में पर्याप्त छानबीन करे। यदि संग्रहकर्त्ता बैंक दोषी पाया जाता है तब बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है। इसलिये, व्यवहार में, साधारणतः संग्रहकर्त्ता बैंक तृतीय पक्षकार के पक्ष में पृष्ठांकित चैक का संग्रह नहीं करते हैं। यह केवल चालू खाते (Current Account) की स्थिति में ही किया जाता है तथा संग्रह से पूर्व बैंक ग्राहक से पूर्व पृष्ठांकन (Prior Endorsement) का पुष्टिकरण प्राप्त करता है। इस स्थिति में ग्राहक किसी भी होने वाली क्षति (Loss) के लिये उत्तरदायी होता है। अतः जाली पृष्ठांकन की स्थिति में, संग्रहकर्त्ता बैंक के दायित्व अत्यन्त व्यापक हैं। यदि संग्रहकर्त्ता बैंक लापरवाही का दोषी नहीं है तब क्षतिपूर्ति के लिये वह ग्राहक उत्तरदायी समझा जायेगा जिसके खाते में चैक का संग्रहण किया गया है।

2 —X एक कम्पनी में प्रबन्ध संचालक है जो कम्पनी के खाते का संचालन करता है। कम्पनी का खाता Y बैंक में है जो कलकत्ता में है। X का व्यक्तिगत खाता Z बैंक में है जिसमें औसत शेष 5,000 रुपये रहता है। X कम्पनी के खाते से 85,000 रुपये का चैक अपने पक्ष में काटता है और Z बैंक इसका संग्रहण X के खाते में करता है। इसके पश्चात् कम्पनी का समापन होता है जिसमें निष्पादक (Liquidator) Z बैंक पर वाद प्रस्तुत करता है कि बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन (Conversion) का दोषी है। Z बैंक की क्या स्थिति है ?

X is a Managing director in a Company who operates the account. Compay has an account with Y Bank in Calcutta. X has his personal account in Z Bank in which average balance remains Rs. 5,000. X draws a cheque for Rs. 85,000 in his favour and Bank Z collects it in the personal account of X. After this, Company went into liquidation and the liquidator of the Company claims from Z Bank that the Bank has committed wrongful conversion. What is the position of Z Bank.

हल—इस स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत संरक्षण प्राप्त नहीं होगा। संग्रहकर्त्ता बैंक लापरवाही का दोषी है चूंकि खाता खोलते समय X का पूर्ण पता एवं व्यवसाय लिखा जाता है। X कम्पनी का प्रबन्ध संचालक है। अतः कम्पनी के खाते से X के खाते में रुपया संग्रह करते समय बैंक को पूर्ण सावधानी बरतनी चाहिये। इसके अतिरिक्त, X के खाते का औसत शेष 5,000 रुपये है जबकि चैक का संग्रहण 85,000 रुपये के लिये किया गया था। अतः इस स्थिति में बैंक को पूर्ण सावधानी से संग्रह करना चाहिये था। परन्तु संग्रहकर्त्ता बैंक ने उपरोक्त सावधानियों को ध्यान में नहीं रखा है। अतः बैंक 'दोषपूर्ण परिवर्तन' के लिये उत्तरदायी है।

3. A एक बैंक में 5,000 रुपये का चैक संग्रहण के लिये जमा करता है। बैंक चैक को 5 माह की अवधि के बाद संग्रह के लिये भेजता है परन्तु, इससे पूर्व भुगतानकर्त्ता बैंक समाप्त (Failed) हो जाता है। A का बैंक के प्रति क्या अधिकार है तथा A का चैक के आहर्ता (Drawer) के प्रति क्या उपचार है?

A deposits a cheque for Rs. 5,000 in a bank for collection. Bank sent the cheque for collection after 5 months meanwhile paying banker has been failed. Discuss the right of A against the banker and the drawer of the cheque.

हल—उपरोक्त स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक लापरवाही के लिये दोषी है चूंकि बैंक द्वारा चैक को उचित समय के भीतर संग्रहण के लिये नहीं भेजा गया है। 5 माह की अवधि का समय चैक प्रस्तुतीकरण के लिये उचित समय नहीं हो सकता है। अतः संग्रहकर्त्ता बैंक A क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी है। परन्तु A को चैक के आहर्ता के प्रति कोई उपचार प्राप्त नहीं है। चैक का आहर्ता अपने दायित्व से मुक्त समझा जायेगा। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 72 व 84 के अनुसार, यदि चैक का प्रस्तुतीकरण उचित समय के अन्दर नहीं किया गया है तब चैक का आहर्ता (Drawer) प्रस्तुतीकरण न होने के कारण हुई क्षति तक अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। चैक के धारक को दिवालिया बैंक के लेनदारों में सम्मिलित किया जाता है यदि चैक के आहर्ता का रुपया दिवालिया होने की तिथि पर खाते में जमा था। यदि आहर्ता का बैंक से अधिविकर्ष का प्रबन्ध है और चैक उचित समय के भीतर प्रस्तुत नहीं किया जाता है तब चैक का आहर्ता अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है तथा चैक के धारक को दिवालिया बैंक के लेनदारों में सम्मिलित नहीं किया जाता है।

4. निम्नलिखित स्थिति में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situation—

One Mr. Girilal introduces himself to you as a salesman of Excellent Sports Goods Co. Ltd. of Amritsar.

He hands you a cheque for Rs. 10,000 drawn by one of

the customers of your Bank and requests you to issue a mail transfer in the name of the payee company on your Amritsar Branch where the company maintains a current account. He wants to know the fate of the cheque immediately so that he can deliver a parcel of sports goods to the drawer of the cheque. Will you comply with Mr. Girilal's request ?

(C. A. I. I. B. Part II, May., 1981)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक को मिस्टर गिरीलाल की प्रार्थना स्वीकार नहीं करनी चाहिये चूंकि चैक का संग्रहण केवल ग्राहक के लिये ही किया जाना चाहिये अन्यथा बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा (3) के अन्तर्गत वैधानिक संरक्षण प्राप्त नहीं होता है। कम्पनी के हित में देय चैक का संग्रहण उसी स्थिति में किया जा सकता है जबकि बैंक की अमृतसर शाखा चैक वसूली के लिये भेजती है तथा बैंक उस शाखा के अभिकर्त्ता के रूप में चैक का संग्रहण कर सकता है।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) बैंक ग्राहक के खाते में चैकों का संग्रहण अभिकर्त्ता अथवा मूल्य के लिये धारक के रूप में करता है।

(2) बैंक को केवल ग्राहकों के लिये रेखांकित चैक का संग्रहण करना चाहिए।

(3) बैंक को चैकों का संग्रहण करते समय उचित सावधानी एवं सद्भाव से कार्य करना चाहिए।

(4) दोषपूर्ण संहग्रण की स्थिति में बैंक वास्तविक स्वामी के प्रति उत्तरदायी होता है।

(5) संग्रहकर्त्ता बैंक के कर्त्तव्यों में चैक का उचित समयावधि में भुगतान के लिये प्रस्तुतीकरण तथा अनादरण की स्थिति में ग्राहक को सूचना देना सम्मिलित होती हैं।

प्रश्न
(Questions)

1. संग्रहकर्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत क्या-क्या संरक्षण दिये गये हैं।

What are the protections to the collecting bank under Sec. 131 of Negotiable Instrument Act.

2. उन दशाओं का संक्षिप्त वर्णन कीजिये जो संग्रहकर्ता बैंक को धारा 131 के अन्तर्गत वैधानिक संरक्षण प्राप्त करने के लिये आवश्यक समझी जाती हैं ?

Explain briefly the conditions to be fulfilled by a bank to get protection against liability for collection of cheques under Sec. 131 of Negotiable Instrument Act. *(C. A. I. I B. May., 1979)*

3. "बैंकर का ग्राहक के लिये चैक के संग्रहण में मुख्य जोखिम परिवर्तन का होता है।" विवेचना कीजिये।

"The main risk of the banker runs in collecting cheques for customer is that of conversion." Comment.

(C. A. I. I. B. Nov., 1977)

4. संग्रहण से आप क्या समझते हैं ? इसकी क्या आवश्यकता एवं महत्व है ? आदर्श संग्रहण के प्रमुख लक्षणों की व्याख्या कीजिये।

What do you mean by collection ? What is its necessity and importance ? Discuss the main characteristics of an Ideal Collection.

(Gorakhpur B. Com., 1983)

5. संग्रहकर्ता बैंक के लिये चैक पर 'केवल प्रापक के लिये' तथा 'अपक्राम्य' रेखांकन का महत्व स्पष्ट कीजिये।

Discuss the significance to the collecting banker of 'Account Payee Only' and 'Not Negotiable' crossing on a cheque.

(C. A. I. I. B.)

□□□

चैकों का भुगतान
(PAYMENT OF CHEQUES)

ग्राहक अपना जमा धन बैंक में से चैकों के माध्यम से निकालते हैं। बैंकों के दायित्वों में, उनका यह प्रमुख कर्त्तव्य है कि वे ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का मांग पर भुगतान करें। परन्तु बैंकों का यह दायित्व उसी स्थिति में उत्पन्न होता है जबकि ग्राहक के खाते में पर्याप्त राशि है तथा राशि की मांग उचित स्थान पर की गयी है। इसके अतिरिक्त, खाते की राशि चैंक का भुगतान करने हेतु प्रयोग की जा सकती है। कुछ विशेष परिस्थितियों में खाते में जमा धन का प्रयोग चैंक के भुगतान हेतु नहीं किया जा सकता है। उदाहरणार्थ—ग्राहक की मृत्यु, पागल अथवा दिवालिया होने पर, न्यायालय द्वारा खाते पर कुर्की का आदेश प्राप्त होने पर एवं ग्राहक द्वारा चैंक का भुगतान रोकने का निर्देश देने पर बैंक चैक का भुगतान नहीं करते हैं। यदि बैंक ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान करने में असमर्थ रहते हैं तब बैंक सम्बन्धी पक्षकारों के प्रति क्षतिपूर्ति के लिये पूर्ण उत्तरदायी होते हैं। (विस्तार के लिये कृपया देखें अध्याय–4 बैंकों का उत्तरदायित्व)।

बैंक ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान करते समय विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखते हैं। इस सम्बन्ध में बैंकों का उत्तरदायित्व अत्यन्त व्यापक होता है। बैंकों को ग्राहक का खाता उसी स्थिति में डेबिट करने का अधिकार प्राप्त होता है जबकि चैंक का यथाविधि भुगतान (Payment in Due Course) किया गया है। बैंकों द्वारा किया गया चैक का भुगतान उसी स्थिति में यथाविधि भुगतान समझा जाता है जबकि चैक का भुगतान पूर्ण सद्भाव एवं बिना लापरवाही के चैक के धारक को किया जाता है। बैंक को चैक का भुगतान दर्शनीय अभिप्राय (Apparent Tenor) के अनुसार एवं उन परिस्थितियों में करना चाहिए जबकि बैंक के पास सन्देह का कोई कारण नहीं है कि चैक का धारक, चैक का वास्तविक स्वामी नहीं है। (विस्तार के लिये कृपया देखें अध्याय–7 यथाविधि भुगतान)।

भुगतानकर्त्ता बैंक की स्थिति
(Status of Paying Banker)

भुगतानकर्त्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 85 (1) 85 (2), 89 तथा 128 के अन्तर्गत वैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 78 के अनुसार, यदि परक्राम्य प्रपत्र का लेखक अथवा स्वीकारक (Acceptor) प्रपत्र के धारक को भुगतान करता है तब वह अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। प्रपत्र के धारक से आशय उस व्यक्ति से है जिसके अधिकार में प्रपत्र

होता है और उसके स्वामित्व पर सन्देह नहीं होता है। धारक अपने नाम में भुगतान के लिये वाद प्रस्तुत कर सकता है। प्रपत्र का हितकारी (Benificiary) अपने नाम में वाद प्रस्तुत नहीं कर सकता है अर्थात् संस्था के नाम में देय प्रपत्र के भुगतान के लिये प्रबन्धक अपने नाम में उस समय तक वाद प्रस्तुत नहीं कर सकता है जब तक कि प्रपत्र को प्रबन्धक के नाम में उन्मुक्त (Discharge) नहीं किया जाता है। इस निर्णय की पुष्टि लक्ष्मीचन्द बनाम मदन लाल नामक विवाद में की गयी है। इसके विपरीत, बेनामी (Benami) व्यवहार में प्रपत्र का स्वामी अपने नाम में वाद प्रस्तुत कर सकता है। यदि प्रपत्र वाहक को देय (Bearer) है तब प्रपत्र का भुगतान प्रपत्र के धारक को करने की स्थिति में भुगतानकर्ता अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। इसमें यदि प्रपत्र चोरी अथवा धोखे से प्राप्त किया गया है तब भुगतान यथाविधि समझा गया है। परन्तु प्रपत्र का भुगतान आदेश पर देय होने की स्थिति में, यदि प्रपत्र का पृष्ठांकन दोषपूर्ण है तब पृष्ठांकिती मूल्य के लिये धारक (Holder for Value) होता है। उसे यथाविधि धारक नहीं समझा जाता है। अतः प्रपत्र का भुगतान देय तिथि पर अथवा इसके पश्चात् मुद्रा के रूप में प्रपत्र के धारक को किया जाना चाहिये। प्रपत्र का भुगतान मुद्रा के अतिरिक्त अन्य रूप में भी किया जा सकता है परन्तु इसके लिये धारक की सहमति आवश्यक होती है। प्रपत्र का लेखक अथवा स्वीकारक प्रपत्र माँग पर देय अथवा प्रपत्र का कोरा पृष्ठांकन होने पर प्रपत्र का भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त (Discharge) हो जाता है।

भुगतानकर्ता बैंक को वैधानिक संरक्षण
(Statutory Protection to the Paying Banker)

भुगतानकर्ता बैंक की स्थिति अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। बैंक को पूर्ण सावधानी एवं सद्भाव से कार्य करना पड़ता है। चैकों के भुगतान के सम्बन्ध में भुगतानकर्ता बैंक की वैधानिक स्थिति निम्नलिखित है—

(1) आदेश पर देय चैक की स्थिति में (In Case of Order Cheque)— परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 85 के अन्तर्गत बैंक के अदायकर्ता (Drawee) द्वारा आदेश पर देय चैक का यथाविधि भुगतान करने की स्थिति में बैंक अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। भुगतानकर्ता बैंक चैक के पृष्ठांकन के सम्बन्ध में उत्तरदायी नहीं होता है अर्थात् यदि चैक पर दोषपूर्ण पृष्ठांकन किया गया है अथवा प्रापक की ओर से अनाधिकृत व्यक्ति (Unauthorised Person) द्वारा पृष्ठांकन किया गया है तब दोषपूर्ण पृष्ठांकन के लिये भुगतानकर्ता बैंक उत्तरदायी नहीं होता है। यह प्रावधान भुगतानकर्ता बैंक को केवल चैक के भुगतान के सम्बन्ध में वैधानिक संरक्षण [illegible] करता है। बैंक द्वारा प्रतिज्ञा-पत्र अथवा विनिमय पत्र के भुगतान की [illegible] उसे इस धारा के अन्तर्गत कोई वैधानिक संरक्षण प्राप्त नहीं होता है। [illegible] बैंक द्वारा चैक का भुगतान पूर्ण सद्भाव एवं बिना लापरवाही से [illegible] भुगतान करते समय बैंक को चैक की तिथि, रकम, हस्ताक्षर

सम्बन्ध में समस्त जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। चैक पर महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, भुगतानकर्त्ता बैंक को परिवर्तन (Conversion) का दोषी नहीं होना चाहिए। खाताधारी के दिवालिया होने पर सरकारी प्रापक को खाताधारी के चैक का भुगतान काउन्टर पर नहीं किया जाना चाहिए अन्यथा भुगतानकर्त्ता बैंक परिवर्तन का दोषी समझा जायेगा।[1] अतः आदेश पर देय चैक का यथाविधि भुगतान किया जाना चाहिए। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 54 के अनुसार, आदेश पर देय चैक की स्थिति में, यदि चैक पर कोरा पृष्ठांकन (Blank Endorsement) किया गया है तब चैक वाहक को देय समझा जाता है। यदि चैक पर रेखांकन किया हुआ है तब चैक का भुगतान रेखांकन के अनुसार ही किया जाना चाहिए। पृष्ठांकन के विषय में चैक पर पृष्ठांकन नियमित रूप में किया जाना चाहिये। यदि चैक पर पृष्ठांकन नहीं किया गया है तब बैंक द्वारा चैक का भुगतान प्रस्तुतकर्त्ता का परिचय (Identification) प्राप्त करके किया जा सकता है। इसमें यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि भुगतानकर्त्ता बैंक को जाली पृष्ठांकन (Forged Endorsement) के लिये वैधानिक संरक्षण दिया गया है। यदि आहर्त्ता (Drawer) के हस्ताक्षर जाली हैं तक भुगतानकर्त्ता बैंक को कोई संरक्षण प्राप्त नहीं होता है। बैंक ड्राफ्ट के भुगतान के सम्बन्ध में भुगतानकर्त्ता बैंक को धारा 85 A के अन्तर्गत संरक्षण प्रदान किया गया है जिसके अनुसार ड्राफ्ट का यथाविधि भुगतान करने पर बैंक अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है।

(2) वाहक को देय चैक की स्थिति में (In Case of Bearer Cheque)—भुगतानकर्त्ता बैंक को वाहक को देय चैक की स्थिति में वैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है। यह संरक्षण इसलिये आवश्यक समझा गया है चूंकि भुगतानकर्त्ता बैंक के लिये प्रत्येक पृष्ठांकन की वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त करना अत्यधिक विकट कार्य है। भुगतानकर्त्ता बैंक वाहक को देय चैक का यथाविधि भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। वाहक को देय चैक का भुगतान किसी भी व्यक्ति को किया जा सकता है। वाहक को देय चैक की स्थिति में, चैक पर किये गये कोरे अथवा पूर्ण पृष्ठांकन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। यदि चैक के पृष्ठांकन द्वारा चैक की परक्राम्यता (Negotiability) रोक दी जाती है तब भी चैक वाहक को देय बना रहता है और चैक का भुगतान किसी भी व्यक्ति को किया जा सकता है। अतः एक बार वाहक को देय चैक, सदैववाहक को देय होता है (Once a Bearer Cheque is Always a Bearer Cheque)। इस सम्बन्ध में, यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि वाहक को देय चैक पर पृष्ठांकन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है परन्तु रेखांकन (Crossing) के माध्यम से वाहक चैक को प्रतिबन्धित किया जा सकता है अर्थात् यदि चैक पर 'केवल प्रापक के लिये' (A/c Payee Only) अथवा 'अपरक्राम्य' (Not Negotiable) शब्द रेखांकन में लिखा गया है तब चैक का धारक

1. Madras Provincial Co-operative Bank Ltd Vs. Southern Indian Match Factory Ltd.

प्रापक से अच्छा अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता है तथा रेखांकित चैक का काउन्टर भुगतान नही हो सकता है।

वाहक को देय चैक की स्थिति में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि बैंक को वैधानिक संरक्षण उसी स्थिति मे प्राप्त होता है जबकि चैक का यथाविधि भुगतान किया गया है। उदाहरणार्थ—एक अवयस्क द्वारा वाहक को देय 1,00,000 रुपये का चैक काउन्टर पर भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाता है तथा बैंक चैक का भुगतान बिना पूछताछ के कर देता है तब बैंक द्वारा किया गया भुगतान यथाविधि भुगतान नही समझा जायेगा। इसमे सन्देहजनक परिस्थितियाँ विद्यमान हैं कि अवयस्क को इतनी बड़ी राशि का चैक किस प्रकार प्राप्त हुआ है तथा बैंक ने इस सम्बन्ध मे कोई सावधानी ध्यान में नही रखी है। इसी प्रकार, एक वाहक को देय चैक बार बार पूर्ण पृष्ठांकित किया गया है परन्तु चैक का भुगतान प्रथम पृष्ठांकनकर्ता द्वारा माँगा जाता है तब बैंक को पूर्ण सावधानी ध्यान में रखनी चाहिये कि चैक उसे पुनः किस प्रकार प्राप्त हुआ है। इसमें सन्देहजनक परिस्थितियाँ विद्यमान हैं कि चैक का धारक, चैक का वास्तविक स्वामी नहीं है। यदि बैंक लापरवाही से भुगतान कर देता है तब यह भुगतान यथाविधि भुगतान नहीं समझा जायेगा। अतः वाहक को देय चैक किसी भी व्यक्ति को भुगतान किया जा सकता है परन्तु भुगतान करते समय बैंक को सन्देह नहीं होना चाहिये कि चैक का धारक, चैक का वास्तविक स्वामी नहीं है तथा भुगतान पूर्ण सद्भाव एवं बिना लापरवाही के करना चाहिये।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 85 (A) के अनुसार ड्राफ्ट का यथाविधि भुगतान करने की स्थिति में बैंक अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है।

(3) रेखांकित चैक की स्थिति में (In Case of Crossed Cheque)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 126 व 128 के अनुसार, यदि भुगतानकर्ता बैंक चैक का यथाविधि भुगतान करता है तथा भुगतान रेखांकन के अनुरूप करता है तब भुगतानकर्ता बैंक अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। सामान्य रेखांकन की दशा में चैक का भुगतान बैंक के माध्यम से किया जाना चाहिये तथा विशेष रेखांकन की स्थिति में, चैक का भुगतान उस विशिष्ट बैंक को अथवा उसके अभिकर्ता को करना चाहिये जिसका नाम चैक के ऊपर लिखा गया है। भुगतानकर्ता बैंक द्वारा रेखांकित चैक का भुगतान यथाविधि रूप में करने पर, बैंक अपने उत्तरदायित्व से मुक्त समझा जाता है। इस स्थिति में, यह समझा जायेगा कि बैंक द्वारा किया गया भुगतान चैक के वास्तविक स्वामी को प्राप्त हो गया है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 129 के अनुसार, यदि रेखांकित चैक का यथाविधि भुगतान नही किया गया है अर्थात् सामान्य रेखांकन की स्थिति मे चैक का भुगतान बैंक के माध्यम से तथा विशेष रेखांकन की स्थिति में भुगतान विशेष बैंक अथवा संग्रह के लिये उसके अभिकर्ता को नहीं किया तब भुगतानकर्ता बैंक चैक के वास्तविक स्वामी के प्रति उत्तरदायी वह ग्राहक अथवा आहर्ता (Drawer) का खाता डेबिट नहीं कर सकता है।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 89 के अनुसार, यदि रेखांकित चैक का रेखांकन समाप्त कर दिया गया है और रेखांकन स्पष्टतः दृष्टिगोचर नहीं होता है तब भुगतान-कर्त्ता वैंक चैक के दर्शनीय आशय (Apparent Tenor) के अनुसार भुगतान करने के लिये बाध्य होता है। इस स्थिति में भुगतानकर्त्ता वैंक चैक का यथाविधि भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त समझा जायेगा। परन्तु रेखांकित चैक की स्थिति में, भुगतानकर्त्ता वैंक को अनियमित पृष्ठांकन (Irregular Endorsement), महत्वपूर्ण परिवर्तन (Material Alteration), तथा आहर्ता के जाली हस्ताक्षर (Forged Signature of Drawer) की दशा में वैधानिक संरक्षण प्राप्त नहीं होता है। जाली हस्ताक्षर की स्थिति में वैंक को उसी दशा में वैधानिक संरक्षण प्राप्त होता है जबकि यह कार्यग्राहक की सहमति से किया गया है।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 (A) के अनुसार, रेखांकित ड्राफ्ट का भुगतान करते समय वैंक को चैक के समान ही वैधानिक संरक्षण प्राप्त होता है।

(4) महत्वपूर्ण परिवर्तन की स्थिति में (In Case of Material Alteration)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 87 के अनुसार, परक्राम्य प्रपत्र में किया गया कोई भी महत्वपूर्ण परिवर्तन प्रपत्र को व्यर्थ बनाता है। महत्वपूर्ण परिवर्तन से आशय उस परिवर्तन से है जिसके द्वारा विपत्र की भाषा (Language) बदल जाती है अथवा पक्षकारों की स्थिति में परिवर्तन हो जाता है। इसके विपरीत, यदि धारक द्वारा किया गया परिवर्तन महत्वपूर्ण नहीं है तब विपत्र की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। निम्नलिखित परिवर्तन महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं होते हैं—

(i) वाहक को देय चैक आदेशित (order) चैक में परिवर्तित करना,
(ii) सामान्य रेखांकन को विशेष रेखांकन में परिवर्तित करना,
(iii) चैक का रेखांकन करना, आदि।

परन्तु, निम्नलिखित परिवर्तन महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं—

(i) चैक की तिथि, प्रापक, रकम आदि में परिवर्तन,
(ii) आदेशित चैक का वाहक चैक में परिवर्तन,
(iii) रेखांकित चैक का रेखांकन समाप्त करना,
(iv) चैक के भुगतान करने के स्थान में परिवर्तन, आदि।

अतः चैक में किया गया कोई भी महत्वपूर्ण परिवर्तन चैक को व्यर्थ (Void) बनाता है। महत्वपूर्ण परिवर्तन से वे ही पक्षकार प्रभावित होते हैं जो परिवर्तन के समय, चैक के पक्षकार होते हैं। यदि परिवर्तन समस्त पक्षकारों की सहमति से नहीं किया जाता है तब वे पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं। यदि यह परिवर्तन पृष्ठांकिती द्वारा किया जाता है तब पृष्ठांकनकर्त्ता पृष्ठांकिती के विरुद्ध अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। परिवर्तन के पश्चात् सम्मिलित पक्षकारों पर परिवर्तन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 89 के अनुसार[1], भुगतानकर्त्ता बैंकों को ऐसे चैक का भुगतान करने पर वैधानिक संरक्षण दिया गया है जिसमे महत्वपूर्ण परिवर्तन स्पष्टतः दिखाई नहीं देता है तथा चैक का यथाविधि भुगतान किया गया है। इस स्थिति में भुगतानकर्त्ता बैंक अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है।

चैक के भुगतान में प्रयोग होने वाली सावधानियाँ
(Precautions to be taken while Paying a Cheque)

भुगतानकर्त्ता बैंक द्वारा चैक का भुगतान करते समय निम्नलिखित सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिये—

(1) निश्चित प्रपत्र का प्रयोग (Use of Prescribed Form)—ग्राहक द्वारा बैंक से रुपया निकालते समय निश्चित प्रपत्र का प्रयोग करना चाहिये। यद्यपि ग्राहक खाते से रुपया निकालने के लिये साधारण कागज का प्रयोग कर सकता है तथापि व्यवहार मे, बैंक एक निश्चित फार्म का प्रयोग करता है जिसमें निश्चित भाषा का प्रयोग होता है और यह फार्म छपा हुआ (Printed) होता है। इससे ग्राहक के खाते में धोखा (Fraud) होने की सम्भावनायें कम हो जाती हैं। बैंक ग्राहक को खाते से रुपया निकालने के लिये एक निश्चित चैक बुक देता है जिसमें क्रमानुसार चैक संख्या लिखी रहती है। प्रत्येक खाते के लिये पृथक चैक बुक दी जाती है। बैंक द्वारा ग्राहक के खाते से रुपया निकालने के लिये अबद्ध चैक (Loose Cheque) के प्रयोग की सुविधा भी प्रदान की जाती है। इस स्थिति मे बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिये।

ग्राहक द्वारा उसके खाते मे जारी चैक बुक के अतिरिक्त किसी अन्य चैक पर रुपये की मांग करने की स्थिति मे, बैंक को चैक का पूर्ण सावधानी से भुगतान करना चाहिये। इस स्थिति मे जाली हस्ताक्षर की सम्भावनायें अत्यधिक होती हैं।

(2) चैक की तिथि (Date of Cheque)—चैक का भुगतान करते समय चैक पर तिथि अवश्य होनी चाहिये। तिथि सही एवं स्पष्ट होनी चाहिये। यदि चैक पर त्रुटिपूर्ण विधि से तिथि लिखी गयी है (उदाहरणार्थ 30 फरवरी) तब चैक का भुगतान फरवरी की अन्तिम तिथि को किया जा सकता है। परन्तु व्यवहार मे बैंक

1. Where a Promissory Note, Bill of Exchange or Cheque has been materially altered but does not appear to have been so altered, or where a Cheque is presented for payment which does not at the time of presentation appear to be crossed or to have crossing which have been obliterated, payment thereof by a person or banker liable to pay, and paying the same according to apparent tenor thereof at the time of payment and otherwise in due course, shall discharge such person or banker from liability thereon, and such payment shall not be questioned by reason of the instrument having been altered or the cheque crossed. —Sec. 89, Negotiable Instrument Act

ऐसे चैकों को वापिस कर देते हैं। इस सम्बन्ध में, यह तथ्य महत्वपूर्ण हैं कि चैक 6 माह की अवधि के लिये वैध समझा जाता है। यह अवधि किसी विधि के अन्तर्गत निर्धारित नहीं की गयी है परन्तु यह अवधि प्रथागत पद्धति के रूप में बैंकों में अपनायी जाती है। अतः चैक 6 माह से पूर्व की अवधि का नहीं होना चाहिये। यदि चैक 6 माह से पूर्व की तिथि का है तब चैक बीतकाल अथवा गतावधि (Stale) चैक होगा और उसका भुगतान नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार उत्तरदिनांकित चैक (Postdated Cheque) का भुगतान भी नहीं करना चाहिये।[1] उत्तरदिनांकित चैक से आशय उस चैक से है जो आगामी तिथि के लिये लिखा गया है। आगामी तिथि का चैक भुगतान करने की स्थिति में भुगतानकर्त्ता बैंक अनेक जोखिम वहन करता है। उदाहरणार्थ—ग्राहक द्वारा चैक का भुगतान रोकना, ग्राहक की मृत्यु अथवा दिवालिया होना, यथाविधि भुगतान न समझा जाना आदि। अतः बैंक को उत्तर दिनांकित चैक का भुगतान नहीं करना चाहिये।

(3) **चैक की रकम (Amount of Cheque)**—चैक पर शब्दों एवं अंकों (Words and Figure) में राशि लिखी जाती है। इन दोनों में रकम समान लिखी जानी चाहिये। यदि दोनों राशियों में अन्तर पाया जाता है तब बैंक ग्राहक का चैक व्यवहार में वापिस कर देता है। परन्तु बैंक अपने विवेकाधीन अधिकार (Discretionary Power) के अन्तर्गत शब्दों (Words) में लिखी राशि का भुगतान कर सकता है। **परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम** की धारा 18 के अनुसार, यदि शब्दों एवं अंकों में लिखी राशि में अन्तर पाया जाता है तब शब्दों में लिखी राशि का भुगतान किया जायेगा अथवा भुगतान करने की प्रतिज्ञा की जायेगी। इस स्थिति में प्रपत्र अवैधानिक नहीं समझा जाता है। प्रपत्र पर देय स्टाम्प के अनुसार भी प्रपत्र की राशि का अनुमान लगाया जा सकता है। उदाहरणार्थ—प्रपत्र पर शब्दों में केवल पचास लिखा है तथा अंकों में US 50 लिखा और देय स्टाम्प US में चिपकाये गये हैं तब प्रपत्र की राशि US 50 समझी जायेगी।

चैक का भुगतान करते समय ग्राहक के खाते में पर्याप्त रकम होनी चाहिये। यदि ग्राहक का बैंक से अधिविकर्ष (Overdraft) का प्रबन्ध लम्बी अवधि से चल रहा है तब बैंक यह सुविधा तुरन्त समाप्त नहीं कर सकता है और बैंक ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान करने के लिये बाध्य है। इस निर्णय की पुष्टि इण्डियन ओवरसीज बैंक बनाम नरन प्रसाद गोविन्द लाल पटेल विवाद[2] में की गयी। बैंक ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान उस सीमा तक करने के लिये बाध्य है जब तक कि ग्राहक के खाते में शेष (Balance) रहता है। यदि बैंक खाते में निश्चित जमा राशि न्यूनतम राशि के रूप में रखना अनिवार्य है और ग्राहक द्वारा न्यूनतम राशि से चैक जारी किया जाता है तब बैंक ग्राहक के चैक का भुगतान करने

1. Morley Vs. Culverwell.
2. Indian Overseas Bank Vs. Naran Prasad Govind Lal Patel.

के लिये बाध्य है। इस स्थिति में, न्यूनतम राशि की सीमा लागू नहीं समझी जायेगी।

बैंक में प्रस्तुत किये गये चैकों का भुगतान क्रम में (Chronological Order) किया जाना चाहिये अर्थात् प्रथम प्रस्तुत किये गये चैक का भुगतान सर्वप्रथम करना चाहिये और इसके पश्चात् प्रस्तुत चैक का भुगतान प्रथम भुगतान के बाद करना चाहिये। यदि एक साथ अनेक चैक भुगतान के लिये प्रस्तुत किये गये हैं तब बैंक को अपने विवेकानुसार कार्य करना चाहिये और ग्राहक के खाते से उस समय तक चैकों का भुगतान करना चाहिये जब तक कि ग्राहक के खाते में कोषों की समाप्ति नहीं होती है। सरकारी अधिकारी के नाम में देय चैक का भुगतान प्राथमिकता के आधार पर किया जाना चाहिये।

खाते मे पर्याप्त राशि होने के अतिरिक्त, खाते की राशि का चैक के भुगतान के लिये प्रयोग किया जाना अनिवार्य है। यदि खाते पर लियन अथवा मुजराई अथवा कुर्की आदेश लागू हो गया है तब चैक का भुगतान नही किया जा सकता है। ग्राहक के दृष्टिकोण से एक बैंक की पृथक-पृथक शाखाओं को पृथक अस्तित्व वाला बैंक समझा गया है। अतः चैक उसी शाखा पर जारी किया जाना चाहिये जिसमें ग्राहक का खाता होता है अन्यथा बैंक चैक का भुगतान करने से इन्कार कर सकता है।[1]

(4) ग्राहक के हस्ताक्षर (Signature of Drawer)—बैंक चैक का भुगतान करते समय चैक पर किये गये हस्ताक्षर की शुद्धता (Genuineness) की जांच करने के लिये चैक के हस्ताक्षर की तुलना अपने पास सुरक्षित नमूने के हस्ताक्षर (Specimen Signature) से करता है। ग्राहक द्वारा चैक के मुख पर हस्ताक्षर किये जाने चाहियें। चैक पर किये गये हस्ताक्षर सही होने चाहियें। यदि चैक पर जाली हस्ताक्षर हैं तब भुगतानकर्ता बैंक ग्राहक के खाते से रुपया डेबिट नही कर सकता है और इससे उत्पन्न क्षति के लिये बैंक स्वयं उत्तरदायी होता है। ग्राहक के जाली हस्ताक्षर किसी भी स्थिति में मान्य नहीं हैं अर्थात् यदि ग्राहक चैक बुक का दुरुपयोग (Misuse) करता है अथवा ग्राहक असावधानी (Negligency) का दोषी पाया जाता है तब भी बैंक अपने दायित्व से मुक्त नही होता है और जाली चैक के भुगतान को मान्य नही समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि लाला प्रभु दयाल बनाम ज्वाला बैंक लि० नामक विवाद[2] में की गयी। अतः जाली हस्ताक्षर की स्थिति मे, भुगतानकर्ता बैंक द्वारा यथाविधि भुगतान नही समझा जाता है। परन्तु यदि ग्राहक द्वारा जाली हस्ताक्षर को मौन स्वीकृति (Silence Acceptance) प्रदान कर दी जाती है तब बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नही ठहराया जा सकता है।

अतः ग्राहक को जाली हस्ताक्षर के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त होते ही बैंक को सूचित करना चाहिए। यदि ग्राहक उचित समय में बैंक को सूचित नही करता है और मौन रहता है तब बाद में ग्राहक को दावा प्रस्तुत करने का कोई अधिकार

1. Bank of India Vs. Official Liquidator (1950).
2. Lala Prabhu Dayal Vs. Jwala Bank Ltd.

प्राप्त नहीं होता है। इस निर्णय की पुष्टि ग्रीनवुड बनाम मार्टिन्स बैंक नामक विवाद[1] में की गयी है जिसमें ग्राहक की पत्नि ने ग्राहक के खाते से जाली हस्ताक्षर करके अनेक चैकों का भुगतान प्राप्त किया। ग्राहक को सूचना प्राप्त होने पर वैंक को सूचित नहीं किया गया चूंकि पत्नि द्वारा रुपया वापसी का आश्वासन दिया गया। इसी बीच पत्नि की मृत्यु हो गयी तथा इसके पश्चात् ग्राहक द्वारा वैंक पर वाद प्रस्तुत किया गया जिसमें ग्राहक का दावा इस आधार पर रद्द कर दिया गया कि ग्राहक ने उचित समय पर कोई कार्य नहीं किया तथा वह उस समय मौन (Silence) रहा है जिससे भुगतानकर्त्ता वैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि भुगतानकर्त्ता वैंक द्वारा जाली चैक का बिना लापरवाही से त्रुटिपूर्वक भुगतान कर दिया जाता है तब भुगतानकर्त्ता वैंक को रुपये की वापसी की माँग करने से प्रतिवन्धित नहीं किया जायेगा।[2] भुगतानकर्त्ता वैंक संग्रहकर्त्ता वैंक एवं प्रापक से चैक की राशि की वापसी का अधिकार रखता है।

(5) कटे फटे चैक का भुगतान (Payment of Multilated Cheque)—यदि भुगतान के लिये प्रस्तुत चैक कटा हुआ है तब भुगतान करने से पूर्व वैंक को आहर्ता से पुष्टिकरण प्राप्त करना चाहिये अन्यथा भुगतानकर्त्ता वैंक असावधानी का दोषी समझा जायेगा।

(6) चैक का भुगतान कार्य के घण्टों में (Payment in Business Hours Only)—वैंक को चैक का भुगतान केवल कार्यकाल के घण्टों में करना चाहिये। यदि चैक का भुगतान इसके पश्चात् किया गया है तब यथाविधि भुगतान नहीं समझा जाता है और किसी भी क्षति के लिये वैंक स्वयं उत्तरदायी होता है। वैंक द्वारा चैक का कार्यकाल के घण्टों के पश्चात भुगतान करने की स्थिति में, अनेक जोखिम उत्पन्न करने की स्थिति में अनेक जोखिम उत्पन्न होते हैं चूंकि इस स्थिति में ग्राहक का खाता आगामी तिथि पर डेबिट किया जा सकता है। इस अवधि में चैक का भुगतान रोका जा सकता है अथवा ग्राहक की मृत्यु या पागल होने की सूचना प्राप्त हो सकती है। इस सूचना के प्राप्त होने के पश्चात् ग्राहक का खाता डेबिट नहीं किया जा सकता है। अतः वैंक को चैक का भुगतान कार्यकाल के घण्टों में ही करना चाहिए।

अतः भुगतानकर्त्ता वैंक को चैक का भुगतान करते समय उपरोक्त समस्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहिए।

चैक का भुगतान रोकने की परिस्थितियाँ
(Conditions to Refuse the Payment of a Cheque)

ग्राहक और वैंक की स्थिति में, वैंक देनदार (Drawee) होता है तथा चैक

1. Greenwood Vs. Martins Bank.
2. National West minister Bank Ltd. Vs. Basclays Bank International Ltd. & Others (1974 AIR 834)

प्राप्त नहीं होता है। इस निर्णय की पुष्टि ग्रीनवुड बनाम मार्टिन्स बैंक नामक विवाद[1] में की गयी है जिसमें ग्राहक की पत्नि ने ग्राहक के खाते से जाली हस्ताक्षर करके अनेक चैकों का भुगतान प्राप्त किया। ग्राहक को सूचना प्राप्त होने पर बैंक को सूचित नहीं किया गया चूंकि पत्नि द्वारा रुपया वापसी का आश्वासन दिया गया। इसी बीच पत्नि की मृत्यु हो गयी तथा इसके पश्चात् ग्राहक द्वारा बैंक पर वाद प्रस्तुत किया गया जिसमें ग्राहक का दावा इस आधार पर रद्द कर दिया गया कि ग्राहक ने उचित समय पर कोई कार्य नहीं किया तथा वह उस समय मौन (Silence) रहा है जिससे भुगतानकर्त्ता बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि भुगतानकर्त्ता बैंक द्वारा जाली चैक का बिना लापरवाही से त्रुटिपूर्वक भुगतान कर दिया जाता है तब भुगतानकर्त्ता बैंक को रुपये की वापसी की माँग करने से प्रतिबन्धित नहीं किया जायेगा।[2] भुगतानकर्त्ता बैंक संग्रहकर्त्ता बैंक एवं प्रापक से चैक की राशि की वापसी का अधिकार रखता है।

(5) कटे फटे चैक का भुगतान (Payment of Multilated Cheque)—यदि भुगतान के लिये प्रस्तुत चैक कटा हुआ है तब भुगतान करने से पूर्व बैंक को आहर्ता से पुष्टिकरण प्राप्त करना चाहिये अन्यथा भुगतानकर्त्ता बैंक असावधानी का दोषी समझा जायेगा।

(6) चैक का भुगतान कार्य के घण्टों में (Payment in Business Hours Only)—बैंक को चैक का भुगतान केवल कार्यकाल के घण्टों में करना चाहिये। यदि चैक का भुगतान इसके पश्चात् किया गया है तब यथाविधि भुगतान नहीं समझा जाता है और किसी भी क्षति के लिये बैंक स्वयं उत्तरदायी होता है। बैंक द्वारा चैक का कार्यकाल के घण्टों के पश्चात भुगतान करने की स्थिति में, अनेक जोखिम उत्पन्न करने की स्थिति में अनेक जोखिम उत्पन्न होते हैं चूंकि इस स्थिति में ग्राहक का खाता आगामी तिथि पर डेबिट किया जा सकता है। इस अवधि में चैक का भुगतान रोका जा सकता है अथवा ग्राहक की मृत्यु या पागल होने की सूचना प्राप्त हो सकती है। इस सूचना के प्राप्त होने के पश्चात् ग्राहक का खाता डेबिट नहीं किया जा सकता है। अतः बैंक को चैक का भुगतान कार्यकाल के घण्टों में ही करना चाहिए।

अतः भुगतानकर्त्ता बैंक को चैक का भुगतान करते समय उपरोक्त समस्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहिए।

चैक का भुगतान रोकने की परिस्थितियाँ
(Conditions to Refuse the Payment of a Cheque)

ग्राहक और बैंक की स्थिति में, बैंक देनदार (Drawee) होता है तथा चैक

1. Greenwood Vs. Martins Bank.
2. National West minister Bank Ltd. Vs. Basclays Bank International Ltd. & Others (1974 AIR 834)

का लेखक आहर्ता (Drawer) होता है। ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान करने के लिये बैंक उत्तरदायी होता है। यदि बैंक ग्राहक के चैक का भुगतान करने में त्रुटि करता है तब वह ग्राहक के प्रति क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है। अत: बैंक को चैक का भुगतान पूर्ण सावधानी से करना चाहिये। साधारणतया, बैंक निम्नलिखित परिस्थितियों में चैक का भुगतान नहीं करता है—

(1) चैक का भुगतान रोकना (Countermands Payment of the Cheque)—चैक का आहर्ता चैक का भुगतान होने से पूर्व किसी भी समय चैक का भुगतान न करने का आदेश दे सकता है जिसके पश्चात् बैंक द्वारा चैक का भुगतान नहीं किया जाता है।[1] चैक का भुगतान रोकने का अधिकार केवल आहर्ता को होता है। चैक का प्रापक अथवा पृष्ठांकिती चैक का भुगतान नहीं रोक सकता है। भुगतान रोकने का आदेश लिखित दिया जाना चाहिये। बैंक के किसी अधिकारी को बैंक से बाहर, भुगतान रोकने का आदेश दिया जा सकता है। परन्तु, यह आदेश उसी स्थिति में वैध होता है। जबकि अधिकारी द्वारा बैंक को इस आशय की सूचना दे दी जाती है। भुगतान रोकने के आदेश पर चैक के लेखक के हस्ताक्षर होने चाहियें। संयुक्त खाते (Joint account) की स्थिति में, चैक का भुगतान किसी भी एक खाताधारी द्वारा रोका जा सकता है। परन्तु आदेश वापिस प्राप्त करते समय, समस्त खाताधारियों की सहमति आवश्यक होती है। भुगतान रोकने का आदेश देते समय आदेश में चैक की तिथि, रकम, चैक संख्या तथा प्रापक का नाम लिखा होना चाहिये। आदेश प्राप्त करते समय बैंक को तिथि तथा प्राप्ति का समय अवश्य लिखना चाहिये। यदि चैक का वास्तविक भुगतान नहीं किया गया है तब आदेश प्रभावी समझा जायेगा और इसके पश्चात् चैक का भुगतान करने पर भुगतानकर्त्ता बैंक उत्तरदायी समझा जायेगा।

नकद भुगतान की स्थिति में चैक का वास्तविक भुगतान उस समय समझा जाता है जबकि चैक के धारक को रोकड़ केबिन पर रोकड़िये द्वारा भुगतान कर दिया जाता है। अन्तरण (Transfer) की स्थिति में चैक का वास्तविक भुगतान उस समय समझा जाता है जबकि सम्बद्ध व्यक्ति के खाते में चैक की राशि क्रेडिट कर दी गयी है तथा इसकी सूचना खाताधारी को भेजी जा चुकी है तथा सूचना वापिस प्राप्त करना बैंक के नियन्त्रण से बाहर होता है। समाशोधन (Clearing) की स्थिति में, चैक का वास्तविक भुगतान उस समय समझा जाता है जबकि चैक वापसी का समय समाप्त हो चुका हो।

अतः भुगतान रोकने की सूचना चैक के आहर्ता द्वारा चैक का वास्तविक भुगतान होने से पूर्व प्रदत्त की जानी चाहिए।

(2) आहर्ता की मृत्यु (Death of Drawer)—बैंक को आहर्ता की मृत्यु की सूचना प्राप्त होने पर खाते का परिचालन रोक देना चाहिये। सूचना विश्वसनीय

1. Mowji Shamji Vs. The National Bank of India.

स्रोतों से प्राप्त होनी चाहिये। यदि ग्राहक के खाते का परिचालन अभिकर्त्ता द्वारा किया जाता है तब अभिकर्त्ता की मृत्यु पर चैक का भुगतान नहीं रोका जा सकता है। आहर्ता के खाते से परिचालन इसलिये रोका जाता है जिससे मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों के दायित्वों का निर्धारण किया जा सके। संयुक्त खाते की स्थिति में बैंक को किसी भी खाताधारी की मृत्यु पर खाते का परिचालन रोक देना चाहिए। मृत्यु के पश्चात् खाते में जमा धनराशि पर मृतक के उत्तराधिकारियों का अधिकार होता है तथा बैंक द्वारा खाते में पुनः परिचालन प्रारम्भ करने की अनुमति देने की स्थिति में बैंक को उत्तराधिकार का प्रमाण पत्र (Succession Certificate) प्राप्त करना चाहिए।

(3) आहर्ता का दिवालिया होना (Insolvency of Drawer)—कोई भी व्यक्ति उस समय दिवालिया समझा जाता है जबकि उसकी सम्पत्ति उसकी देयताओं का भुगतान करने में अपर्याप्त होती है। इसके लिये लेनदारों में से कोई भी व्यक्ति अथवा दिवालिया होने वाला व्यक्ति स्वयं न्यायालय में याचिका प्रस्तुत कर सकता है। न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित होने का आदेश पारित होने के पश्चात् दिवालिया व्यक्ति की सम्पत्ति न्यायालय के सरकारी प्रापक को सुपुर्द कर दी जाती है जिसे सरकारी प्रापक दिवालिया व्यक्ति के लेनदारों में वितरित करता है। न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित का आदेश याचिका प्रस्तुतीकरण की तिथि से प्रदान किया जाता है। यदि दिवालिया व्यक्ति द्वारा दिवालिया घोषित होने की तिथि से 3 माह पूर्व की अवधि में अपने लेनदारों को कपटपूर्ण प्राथमिकता के आधार पर कोई भुगतान किया जाता है तब सरकारी प्रापक भुगतान की गयी राशि वापिस प्राप्त करने का अधिकारी होता है। परन्तु इसमें उन भुगतानों को सम्मिलित नहीं किया जाता है जो पूर्ण सद्भाव एवं उचित प्रतिफल के लिये किये गये हैं।

बैंक को आहर्ता के दिवालिया होने की सूचना प्राप्त होने पर खाते का परिचालन रोक देना चाहिये। इस स्थिति में खाते का रुपया सरकारी प्रापक के अधिकार में पहुंच जाता है।[1] साझेदारी फर्म के खाते अथवा संयुक्त खाते की स्थिति में, यदि कोई साझेदार अथवा संयुक्त खाताधारी दिवालिया हो जाता है तब, खाते का परिचालन रोक देना चाहिये ताकि दिवालिया साझेदार के दायित्वों का निर्धारण किया जा सके। यदि दिवालिया साझेदार द्वारा जारी किया गया चैक, बैंक में भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाता है तब बैंक को अन्य साझेदारों का पुष्टिकरण प्राप्त करके चैक का भुगतान करना चाहिये।

बैंक को खाताधारी के दिवालिया होने पर, खाते में डेबिट शेष की स्थिति में खाते में राशि क्रेडिट नहीं करनी चाहिए। प्रत्येक क्रेडिट राशि दिवालिया साझेदार की देयताओं को कम करती है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि बैं

1. Mathew Vs. Sherwell.

को खाताधारी के दिवालिया होने के लिये याचिका प्रस्तुतीकरण का नोटिस प्राप्त होता है तब डेबिट सेष के खाते में क्रेडिट लेखा किया जा सकता है।

संयुक्त पूँजी कम्पनी की स्थिति में कम्पनी का समापन होने पर कम्पनी के खाते से परिचालन रोक देना चाहिए। कम्पनी के समापन की कार्यवाही प्रारम्भ होने के पश्चात्, कम्पनी के खाते में जमा धनराशि पर सरकारी निस्तारक (Official Liquidator) का अधिकार होता है।

(4) जमा धन का अभिहस्तांकन (Assignment of Credit Balance)—ग्राहक द्वारा जमा धन का अभिहस्तांकन करने पर बैंक खाते का संचालन रोक देना चाहिये।

(5) कुर्की आदेश (Garnishee Order)—यदि ग्राहक के खाते पर कुर्की आदेश प्राप्त होता है तब बैंक आदेश की सीमा तक खाते में जमा धन के लिये परिचालन रोक देना चाहिये।

(6) ग्राहक के पागल होने पर (Insanity of the Customer)—ग्राहक के पागल होने की सूचना प्राप्त होने पर बैंक को ग्राहक द्वारा जारी किये गये चैकों का भुगतान रोक देना चाहिये।

(7) धारक का दोषपूर्ण स्वामित्व (Defective Title of Holder)—चैक के प्रस्तुतकर्त्ता का दोषपूर्ण स्वामित्व होने की दशा में यदि बैंक को दोषपूर्ण स्वामित्व का ज्ञान है तब आहर्ता द्वारा जारी किये गये चैक का भुगतान नहीं करना चाहिये।

अतः उपरोक्त परिस्थितियों में बैंक चैक का भुगतान नहीं करता है। इसके अतिरिक्त बैंक चैक में महत्वपूर्ण परिवर्तन होने पर, चैक का भुगतान अन्य शाखा पर देय होने पर, चैक गतावधि (stale) अथवा उत्तरदिनांकित होने पर, तथा आहर्ता के हस्ताक्षर जाली होने पर चैक का भुगतान नहीं करता है।

1. कुर्की आदेश प्राप्त खाते पर चैक की वापसी किस कारण से की जायेगी ?

SOLVED PROBLEMS

What reason with cheques will be returned relating to an account on which 'Garnishee Order' is served. *(C. A. I. I. B. Dec., 1982)*

हल—उपरोक्त स्थिति में, चैक की वापसी 'आहर्ता से मिलिये' (Refer to Drawer) कारण स्पष्ट करते हुये की जायेगी।

2. एक चैक अशोक नाडकरणी अथवा आदेशानुसार 2,500 रुपये के भुगतान के लिए खिड़की पर प्रस्तुत किया जाता है। चैक रेखांकित नहीं है। क्या आप चैक का भुगतान करेंगे ? यदि हाँ तो क्यों ?

An uncrossed cheque f Rs. 2,500 payable to Ashok Nadkarni or order is presented at the counter for cash payment. Will you make payment of the cheque and if so, why ?

(C. A. I. I. B. Dec., 1982)

हल—उपरोक्त स्थिति में, प्रापक का परिचय (Identification) प्राप्त करके चैक का भुगतान किया जा सकता है। इसमें चैक आदेश पर देय है। अतः इसमें परिचय प्राप्त करना आवश्यक होता है।

3. अज्ञात व्यक्ति द्वारा वाहक को देय 2,500 रुपये का चैक एच० पी० राणा एण्ड कम्पनी के नाम में भुगतान के लिये खिड़की पर प्रस्तुत किया जाता है। क्या आप चैक का भुगतान करेंगे या नहीं ?

A bearer uncrossed cheque of Rs. 2,500 favouring H. P. Raina and Co. Ltd. is presented by a stranger on the counter for cash payment. Will you pay this cheque or not ?

(C. A. I. I. B. May, 1982)

हल—वाहक को देय चैक का भुगतान किसी भी व्यक्ति को किया जा सकता है। इसमें, चैक का धारक ही चैक का स्वामी (owner) समझा जाता है। परन्तु यदि चैक किसी कम्पनी के नाम में देय है तब चैक का भुगतान कम्पनी के खाते में ही किया जाना चाहिए। यदि बैंक ने पूर्ण सावधानी ध्यान में रखते हुये चैक के वाहक को काउन्टर पर यथाविधि भुगतान कर दिया है तब बैंक दोषपूर्ण भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि भूटोरिया ट्रेडिंग कम्पनी बनाम इलाहाबाद बैंक नामक विवाद[1] में की गयी है। व्यवहार में, बैंक कम्पनी के हित में देय चैक का भुगतान खिड़की पर नहीं करते हैं।

4. एक चैक कौशल कुमार द्वारा जारी किया गया जिसमें आहर्ता के हस्ताक्षर छोड़कर समस्त तथ्यों में इस प्रकार परिवर्तन किया गया कि परिवर्तन, भुगतान के समय स्पष्टतः दिखलायी नहीं पड़ता है। कौशल कुमार कहते हैं कि चैक की रकम उनके खाते में डेबिट नहीं होनी चाहिए। आप किस प्रकार तय करेंगे ?

A cheque drawn by Mr. Kaushal Kumar is chemically altered in all respect except the signature of the drawer, in such a way that at the time of payment, the alteration was not visible to the naked eye. Mr. Kaushal Kumar insists that the amount of the cheque should not be debited to his account. How will you decide ?

(C. A. I. I. B. May, 1982)

हल—उपरोक्त स्थिति में, भुगतानकर्त्ता बैंक को ग्राहक के खाते से रुपया डेबिट करने का अधिकार है। भुगतानकर्त्ता बैंक को परकाम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 89 के अन्तर्गत वैधानिक संरक्षण प्राप्त होगा। इसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन स्पष्टतः दिखलायी नहीं पड़ता है और चैक का यथाविधि भुगतान किया गया है। अतः भुगतानकर्त्ता बैंक लापरवाही का दोषी नहीं समझा जायेगा।

---

1. Bhutaria Trading Company Ltd. Vs. Allahabad Bank Ltd. (A. I. R. 1977. Cal. 363)

5. एक ग्राहक के चालू खाते में 2,000 रुपये का क्रेडिट शेष है। समाशोधन में तीन चैक क्रमशः 1,000 रुपये, 500 रुपये तथा 1,200 रुपये के भुगतान के लिये प्रस्तुत किये जाते हैं। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A customer has a credit balance of Rs. 2,000 in his current account ■ your branch Three cheques for Rs. 1,000. Rs. 500 and Rs. 1,200 respectively and simultaneously presented for payment through clearing. What will you do in this condition ?

(C. A. I. I. B Nov, 1981)

हल—उपरोक्त स्थिति में, ग्राहक के खाते में पर्याप्त रुपया नहीं है। इसमें ग्राहक के खाते से अधिकतम सीमा तक चैकों का भुगतान किया जायेगा। अतः 500 रुपये तथा 1,200 रुपये के चैक का भुगतान कर दिया जायेगा और 1,000 रुपये के चैक को वापिस (Refer to Drawer) कर दिया जायेगा।

6. एक चैक रमाकान्त पटेल को आदेश पर देय जारी किया जाता है। (चैक में वाहक शब्द कटा हुआ है तथा आदेश में परिवर्तित किया गया है) प्रापक की प्रार्थना पर आहर्ता आदेश शब्द काट देता है तथा इस पर अपने संक्षिप्त हस्ताक्षर (Initials) करता है। क्या चैक को वाहक को देय चैक समझा जायेगा ?

A cheque is drawn payable to Ramakant Patel or order (the word bearer on the cheque form is crossed out and changed to order.) At the request of the payee the word order is crossed out by the drawer under his initial Should the cheque be considered payable to bearer ? *(C. A. I. I. B. Nov., 1981)*

हल—उपरोक्त समस्या के अन्तर्गत चैक में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया है। अतः इस पर आहर्ता के पूर्ण हस्ताक्षर होने चाहिये। इसके अतिरिक्त, आदेश शब्द काटकर वाहक (or bearer) शब्द लिखना चाहिये।

7. वाहक को देय 7,000 रुपये का चैक भुगतान के लिये काउन्टर पर प्रस्तुत किया जाता है। ग्राहक के खाते में 6,000 रुपये शेष हैं। चैक प्रस्तुतकर्ता को लेजर कीपर से बातचीत करते समय ज्ञात होता है कि खाते में 500 रुपये कम हैं। वह खाते में जमा पर्ची के माध्यम से 500 रुपये का भुगतान करता है तथा इसकी सूचना लेजर कीपर को देता है और 7,000 रुपये का चैक पास करवाता है। आहर्ता सूचना प्राप्त होने पर प्रबन्धक से शिकायत करता है और अपने धन की वापसी का दावा करता है। आप क्या करेंगे ?

An open bearer cheque for Rs. 7,000 drawn by your customer is presented for payment. The balance in his account is Rs. 6,600. The presenter while talking to the ledger keeper comes to know that

the balance is shortly about Rs 500. He pays into the account Rs. 500 by a pay-in-slip and informs the ledger keeper about the credit and gets his cheque for Rs. 7,000 passed. The drawer, when he comes to know of this complains to the Manager and asks for a refund of the sum of Rs. 7,000. (*C. A. I. I. B. May, 1981*)

हल—ग्राहक के खाते में कोई भी व्यक्ति रुपया जमा कर सकता है, परन्तु रुपया निकालने का अधिकार ग्राहक को होता है। उपरोक्त स्थिति में, ग्राहक के लिये यह साबित करना असम्भव है कि बैंक द्वारा लापरवाही से कार्य किया गया है। अतः ग्राहक बैंक से रुपया वापिस प्राप्त नहीं कर सकता है। परन्तु बैंक को अपने हित में यह सावधानी बरतनी चाहिये कि काउन्टर पर लेजर कीपर से यह लापरवाही नियमित रूप में न हो। यदि लापरवाही साबित हो जाती है तब बैंक क्षतिपूर्ति के लिये पूर्ण उत्तरदायी होता है।

8. ग्राहक द्वारा जारी 1,000 रुपये के चैक में महत्वपूर्ण परिवर्तन करके 10,000 रुपये किया जाता है तथा चैक का भुगतान कर दिया जाता है। क्या बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी है ?

A cheque issued by the customer for Rs. 1,000 is altered into Rs. 10,000 and payment of the cheque was made. Is Bank liable to compensate ?

हल—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 89 के अनुसार, बैंक उसी दशा में उत्तरदायी नहीं होता है जबकि परिवर्तन स्पष्टतः दिखलायी नहीं देता है और भुगतान यथाविधि किया जाता है। यदि 1,000 रुपये की रकम में शब्दों में दस हजार रुपये नहीं किये गये हैं परन्तु अंकों में 10,000 रुपये किये गये हैं और बैंक चैक का भुगतान कर देता है तब बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी समझा जायेगा। इसके विपरीत यदि शब्दों एवं अंकों में इस प्रकार परिवर्तन किया गया है कि वह स्पष्टतः प्रगट नहीं होता है तब बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन के लिये उत्तरदायी समझा जाता है।

9. निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे—

How will you deal with the following—

(i) A minor (12 year old) presents a bearer cheque of Rs. 500 for cash payment.

(ii) A blindman wants to withdraw Rs. 500 from his S. B. A/c.

(iii) An order cheque for Rs. 1,000 is presented for payment by the payee duly endorsed by him.

(iv) A friend of yours' approaches you to collect a crossed bearer cheque for Rs 2,000 and pay him the amount in cash.

(C. A. I. I. B. May, 1980)

हल—(i) इस स्थिति में ग्राहक को देय चैक का भुगतान अवयस्क को किया जा सकता है। परन्तु भुगतान से पूर्व उससे पूछताछ करेंगे कि चैक उसे किस प्रकार प्राप्त हुआ है।

(ii) इस स्थिति में अन्धे व्यक्ति का खाता खोलते समय बैंक व्यक्ति का फोटो प्राप्त करता है तथा रुपया निकालते समय ग्राहक का व्यक्तिगत रूप में प्रस्तुत होना आवश्यक होता है। अन्धे व्यक्ति द्वारा रुपया निकालते समय व्यक्ति के अँगूठे का निशान लिया जायेगा और यह निशान प्रमाणित किया जायेगा। अन्धे व्यक्ति को भुगतान करते समय एक गवाह (Witness) के हस्ताक्षर भी प्राप्त करने चाहिये कि व्यक्ति को भुगतान किया गया है अथवा अन्धे व्यक्ति का खाता उसके अटर्नी (Attorney) द्वारा संचालित किया जाता है।

(iii) इस स्थिति में चैक का भुगतान ग्राहक का परिचय (Identification) प्राप्त करके किया जा सकता है।

(iv) रेखांकित चैक का भुगतान काउन्टर पर नहीं हो सकता है। अतः व्यक्ति का खाता खोलकर, उसके खाते में चैक का संग्रहण करना चाहिये।

10. एक कम्पनी के संचालक द्वारा जारी किया गया चैक भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाता है। बैंक को संचालक की मृत्यु की सूचना प्राप्त होती है। क्या आप चैक का भुगतान करेंगे?

A cheque is issued by a director of a Company which is presented for payment at counter. Meanwhile bank comes to know that the director has been died. Will you pay the cheque?

(C. A. I. I. B. Nov., 1977)

हल—इस समस्या के अन्तर्गत बैंक चैक का भुगतान कर सकता है चूंकि कम्पनी का पृथक् अस्तित्व होता है। परन्तु बैंक सावधानी को ध्यान में रखते हुये कम्पनी का खाता संचालित करने वाले अन्य व्यक्तियों से चैक पर पुष्टिकरण प्राप्त करता है। यदि कम्पनी के खाता परिचालन का अधिकार एक व्यक्ति को ही दिया जाता है तब संचालक की मृत्यु पर मनोनीत अन्य संचालक से चैक पर पुष्टिकरण प्राप्त किया जाता है।

11. एक चैक A या आदेशानुसार देय है तथा रेखांकित है B को पृष्ठांकित किया जाता है और भुगतान के लिए समाशोधन में प्रस्तुत किया जाता है। चैक पर 'अपरक्राम्य' (Not-Negotiable) शब्द लिखा हुआ है। क्या चैक का भुगतान किया जा सकता है?

A cheque is payable to A or order which is crossed Cheque

endorsed to B and presents for payment in clearing. There is a word 'Not Negotiable' on the face on cheque. Can the payment of the cheque be made ?

हल—अपरक्राम्य चैक का पुनः परक्रामण किया जा सकता है परन्तु पृष्ठांकिकी को पृष्ठांकनकर्त्ता से अच्छा अधिकार नहीं मिल सकता है। अतः भुगतानकर्त्ता चैक का भुगतान कर सकता है परन्तु बैंक को यथाविधि भुगतान करना चाहिये। चैक पर A का B के पक्ष में पृष्ठांकन होना चाहिये चूंकि चैक आदेश पर देय है। इसके अतिरिक्त पृष्ठांकन का पुष्टिकरण संग्रहकर्त्ता बैंक द्वारा किया जाना चाहिये। इस स्थिति में संग्रहकर्त्ता बैंक पृष्ठांकिकी (Endorsee) से प्रथम पृष्ठांकन की जमानत लेता है कि पृष्ठांकनकर्त्ता के हस्ताक्षर सही हैं और किसी भी त्रुटि के लिये वह स्वयं उत्तरदायी होगा। भुगतानकर्त्ता बैंक संग्रहकर्त्ता बैंक के पुष्टिकरण के आधार पर चैक का भुगतान कर सकता है।

12. एक रेखांकित चैक A या वाहक को देय होता है जिस पर 'प्रापक के लिये' शब्द लिखा गया है। चैक समाशोधन में प्रस्तुत किया जाता है परन्तु चैक पर संग्रहकर्त्ता बैंक का पुष्टिकरण नहीं होता है। क्या चैक का भुगतान किया जाना चाहिये ?

A crossed cheque with account payee only is payable to A or bearer. Cheque presents in clearing but there is no confirmation of collecting banker on the cheque. Should the payment of cheque be made.

हल—उपरोक्त समस्या में चैक वाहक को देय है। चैक पर पृष्ठांकन का कोई प्रभाव नहीं होता है। परन्तु रेखांकित चैक के सम्बन्ध में भुगतानकर्त्ता बैंक (Paying Banker) को रेखांकन के अनुरूप ही कार्य करना चाहिये। यदि चैक पर 'केवल प्रापक के लिये' शब्द लिखा गया है जो संग्रहकर्त्ता बैंक एवं भुगतानकर्त्ता बैंक को निर्देश (Mandate) समझा जाता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 85 के अनुसार, वाहक को देय चैक का भुगतान किसी भी व्यक्ति को किया जा सकता है जिसके अन्तर्गत चैक पर पृष्ठांकन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। परन्तु रेखांकित चैक की स्थिति में बैंक को रेखांकन के अनुरूप ही भुगतान करना चाहिये। इसमें चैक के आदेशित अथवा वाहक होने का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और चैक का भुगतान बैंक के माध्यम से ही किया जाता है।

अतः भुगतानकर्त्ता बैंक के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि यथाविधि भुगतान करने के उद्देश्य से बैंक संग्रहकर्त्ता बैंक का पुष्टिकरण प्राप्त करे। इस सम्बन्ध में यह तथ्य विशेष महत्वपूर्ण है कि यदि चैक मात्र 'केवल प्रापक के लिये' रेखांकितरहित हैं तब इसका कोई प्रभाव नहीं होता है। यह मात्र निर्देश (Mandate) समझा जाता

है। अतः प्रापक के लिये रेखांकित चैक वाहक को देय होने की स्थिति में भुगतानकर्ता बैंक को संग्रहकर्ता बैंक का पुष्टिकरण प्राप्त करना चाहिये। यद्यपि भुगतानकर्ता बैंक इसके अभाव में चैक का भुगतान कर सकता है परन्तु वैधानिक संरक्षण प्राप्त करने के उद्देश्य से कि चैक का यथाविधि भुगतान किया गया है, बैंक व्यवहार में चैक को पुष्टिकरण के लिये वापिस कर सकता है।

13. एक चैक 1,000 रुपये का भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाता है जिसमें अंकों में रकम अंग्रेजी में लिखी गयी है तथा अन्य विवरण स्थानीय भाषा में लिखे गये हैं। आहर्ता के हस्ताक्षर नमूने के हस्ताक्षर से मिलते हैं। क्या आप चैक का भुगतान करेंगे ?

A cheque for Rs 1,000 drawn on your branch is presented for payment with the amount in figure written in English and other particulars in regional language of the region of your branch. The signature of the drawer of the cheque tallies with specimen of your record. Will you pay the cheque ? *(C. A. I. I. B. May, 1979)*

हल—उपरोक्त स्थिति में चैक का भुगतान किया जायेगा। चैक में किसी भी भाषा का प्रयोग किया जा सकता है। परन्तु बैंक को भुगतान करने से पूर्व पूर्ण सावधानी ध्यान में रखनी चाहिये।

14. एक चैक स्थानीय सरकार के पक्ष में लिखा हुआ। भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाता है और प्रस्तुत करते समय चैक यथाविधि पृष्ठांकित है तथा चैक के साथ अधिकार-पत्र भी प्रस्तुत किया जाता है। क्या चैक का भुगतान किया जायेगा ?

A cheque drawn in favour of local Government is presented for payment. The cheque is duly endorsed and a letter of authority duly signed is also produced Will you pay the cheque ?

हल—सरकार के हित में जारी चैक का भुगतान किसी अन्य व्यक्ति को नहीं किया जा सकता है। अतः चैक का सरकार के खाते (Govt.'s a/c) में ही भुगतान किया जाना चाहिये।

15 चैक का प्रापक बैंक को सूचना देता है कि चैक खो गया है। अतः चैक का भुगतान न किया जाये। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A payee of the cheque informs that the cheque has been lost. So, payment should not be made. What will you do in this condition.

हल—चैक के भुगतान रोकने का अधिकार केवल चैक के आहर्ता (Drawer) को होता है। चैक के प्रापक को भुगतान रोकने का अधिकार नहीं होता है। परन्तु बैंक चैक खोने की सूचना रेकर्ड में लिख लेता है और इस सम्बन्ध में चैक के आहर्ता को सूचित करता है। आहर्ता से पुष्टिकरण करने के पश्चात् ही चैक का भुगतान रोका

जा सकता है। यदि पुष्टिकरण प्राप्त होने से पूर्व ही चैक भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाता है तब बैंक चैक को वापिस कर सकता है। इस स्थिति में, वापसी का कारण 'चैक खो गया है पुष्टिकरण अपेक्षित' (Cheque Reported Lost: Confirmation awaited) होगा।

16. एक चैक 5,000 रुपये का, एक लिमिटेड कम्पनी अथवा आदेशानुसार देय है। चैक का भुगतान, कम्पनी के प्रबन्धक द्वारा चैक का अपने हित में पृष्ठांकन करके प्राप्त कर लिया जाता है। बैंक भुगतान करते समय प्रबन्धक का परिचय बैंक के अन्य ग्राहक से प्राप्त करता है। क्या चैक का भुगतान यथाविधि भुगतान समझा जायेगा ?

A cheque of Rs. 5,000 payable to a Limited Company or order. Payment of the cheque was received by its director having endorsed in his favour. Bank receives the identification of the director from his other customer. Will the payment of cheque be treated in due course ?

हल—उपरोक्त स्थिति में चैक आदेशानुसार देय है तथा चैक पर कम्पनी के नाम से प्रबन्धक के हित में पृष्ठांकन किया गया है। बैंक ने भुगतान करते समय प्रबन्ध का परिचय भी खाताधारी द्वारा प्राप्त किया है। अतः यहाँ पर चैक का भुगतान यथाविधि भुगतान समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि भुटोरिया ट्रेडिंग कम्पनी बनाम इलाहाबाद बैंक नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमें कम्पनी को दोष-पूर्ण पृष्ठांकन के लिये दोषी ठहराया गया चूंकि कम्पनी के प्रबन्धक द्वारा कम्पनी की मोहर (Stamp) का गलत प्रयोग किया गया है। बैंक ने चैक का भुगतान पूर्ण सावधानी रखते हुये किया है। अतः चैक का भुगतान यथाविधि भुगतान समझा गया।

परन्तु, व्यवहार में बैंक को कम्पनी के हित में देय चैक का भुगतान केवल खाते के माध्यम से ही करना चाहिए तथा उसका काउन्टर पर भुगतान नहीं करना चाहिए अन्यथा बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन (Wrong Conversion) के लिये दोषी ठहराया जा सकता है।

17. 'A' बैंक से ड्राफ्ट क्रय करता है तथा उसे डाक द्वारा प्रापक को भेज देता है। ड्राफ्ट मार्ग में खो जाता है तथा प्रापक तक नहीं पहुँचता है। ड्राफ्ट के ऊपर एक कल्पित फर्म के नाम में पृष्ठांकन होता है। ड्राफ्ट समाशोधन के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है तथा इसका भुगतान हो जाता है। बाद में ज्ञात होता है कि प्रापक ने ड्राफ्ट पर कभी भी पृष्ठांकन नहीं किया है तथा ड्राफ्ट का रुपया बैंक से माँगता है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

---

1. Bhutoria Trading Company Vs. Allahabad Bank (A. I. R. 1977, Cal. 363)

Mr. A purchased a draft from a bank and despatched the same by post to the payee. The draft was pilfered in postal transit and did not reach the payee. The draft bears endorsement in the name of a fictitious firm. It was presented through clearing and it was paid. Subsequently, it transpired that the payee had never endorsed the draft and he claims the amount of the draft from the Bank. What will you do in this condition ?

(C A I. I B. Part II, May, 1982)

हल उपरोक्त स्थिति में भुगतानकर्त्ता बैंक दोषपूर्ण भुगतान का दोषी नहीं है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 58 के अनुसार बैंक जाली पृष्ठांकन के लिये दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। बैंक अनियमित (Irregular) पृष्ठांकन का दोषी हो सकता है। इस स्थिति में जाली पृष्ठांकन किया गया है, परन्तु बैंक द्वारा यथाविधि भुगतान हुआ है। अतः भुगतानकर्त्ता बैंक अनियमित भुगतान का दोषी नहीं है। 'अ' द्वारा प्रस्तुत दावा रद्द समझा जायेगा। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि संग्रहकर्त्ता बैंक उसी स्थिति में दोषी हो सकता है जबकि उसके द्वारा पृष्ठांकिती फर्म (Endorsee Firm) का खाता अनियमित विधि से खोला गया है अर्थात् उचित सन्दर्भ के बिना खोला गया है अथवा वह लापरवाही का दोषी है।

18. एक बैंकर के रूप में निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे ? आप कारण सहित उत्तर बताइये—

How would you deal with the following situations as a banker ? Give reasons for your answer—

(i) A cheque dated 29th February, 1979 is presented to you for payment on 2nd March, 1979.

(ii) You are Branch Manager in Calcutta. You receive by Registered Post, a cheque of Rs. 50,000 payable to "M/s Aurobindo Society or bearer" from Pondichery with a letter from the society to remit the proceeds by a draft on your Pondichery Branch. Would you comply with the request ?

(iii) The current account of Mr. R. B. Dalal shows a credit balance of Rs. 5,000 on 1st January, 1979. On 2nd January, 1979 you receive the following cheques in clearing for payment—

(a) a cheque of Rs. 4,000 payable to self or order.

(b) a cheque of Rs. 3,500 payable to Reserve Bank of India or order.

जा सकता है। यदि पुष्टिकरण प्राप्त होने से पूर्व ही चैक भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाता है तब बैंक चैक को वापिस कर सकता है। इस स्थिति में, वापसी का कारण 'चैक खो गया है पुष्टिकरण अपेक्षित' (Cheque Reported Lost. Confirmation awaited) होगा।

16. एक चैक 5,000 रुपये का, एक लिमिटेड कम्पनी अथवा आदेशानुसार देय है। चैक का भुगतान, कम्पनी के प्रबन्धक द्वारा चैक का अपने हित में पृष्ठांकन करके प्राप्त कर लिया जाता है। बैंक भुगतान करते समय प्रबन्धक का परिचय बैंक के अन्य ग्राहक से प्राप्त करता है। क्या चैक का भुगतान यथाविधि भुगतान समझा जायेगा ?

A cheque of Rs. 5,000 payable to a Limited Company or order. Payment of the cheque was received by its director having endorsed in his favour. Bank receives the identification of the director from his other customer. Will the payment of cheque be treated in due course ?

हल—उपरोक्त स्थिति में चैक आदेशानुसार देय है तथा चैक पर कम्पनी के नाम से प्रबन्धक के हित में पृष्ठांकन किया गया है। बैंक ने भुगतान करते समय प्रबन्ध का परिचय भी खाताधारी द्वारा प्राप्त किया है। अतः यहाँ पर चैक का भुगतान यथाविधि भुगतान समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि भुटोरिया ट्रेडिंग कम्पनी बनाम इलाहाबाद बैंक नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमें कम्पनी को दोषपूर्ण पृष्ठांकन के लिये दोषी ठहराया गया चूंकि कम्पनी के प्रबन्धक द्वारा कम्पनी की मोहर (Stamp) का गलत प्रयोग किया गया है। बैंक ने चैक का भुगतान पूर्ण सावधानी रखते हुये किया है। अतः चैक का भुगतान यथाविधि भुगतान समझा गया।

परन्तु, व्यवहार में बैंक को कम्पनी के हित में देय चैक का भुगतान केवल खाते के माध्यम से ही करना चाहिए तथा उसका काउन्टर पर भुगतान नहीं करना चाहिए अन्यथा बैंक दोषपूर्ण परिवर्तन (Wrong Conversion) के लिये दोषी ठहराया जा सकता है।

17. 'A' बैंक से ड्राफ्ट क्रय करता है तथा उसे डाक द्वारा प्रापक को भेज देता है। ड्राफ्ट मार्ग में खो जाता है तथा प्रापक तक नहीं पहुँचता है। ड्राफ्ट के ऊपर एक कल्पित फर्म के नाम में पृष्ठांकन होता है। ड्राफ्ट समाशोधन के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है तथा इसका भुगतान हो जाता है। बाद में ज्ञात होता है कि प्रापक ने ड्राफ्ट पर कभी भी पृष्ठांकन नहीं किया है तथा ड्राफ्ट का रुपया बैंक से माँगता है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

---

1. Bhutoria Trading Company Vs. Allahabad Bank (A. I. R. 1977, Cal. 363)

Mr. A purchased a draft from a bank and despatched the same by post to the payee. The draft was pilfered in postal transit and did not reach the payee. The draft bears endorsement in the name of a fictitious firm. It was presented through clearing and it was paid. Subsequently, it transpired that the payee had never endorsed the draft and he claims the amount of the draft from the Bank. What will you do in this condition?

(C. A. I. I. B. Part II, May, [illegible])

हल उपरोक्त स्थिति में भुगतानकर्ता बैंक दोषपूर्ण भुगतान का दोषी नहीं है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 58 के अनुसार बैंक जाली पृष्ठांकन के लिये दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। बैंक अनियमित (Irregular) पृष्ठांकन का दोषी हो सकता है। इस स्थिति में जाली पृष्ठांकन किया गया है, परन्तु बैंक द्वारा यथाविधि भुगतान हुआ है। अतः भुगतानकर्ता बैंक अनियमित भुगतान का दोषी नहीं है। पाने वाले द्वारा प्रस्तुत दावा रद्द समझा जायेगा। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि संग्रहकर्ता बैंक उसी स्थिति में दोषी हो सकता है जबकि उसके द्वारा पृष्ठांकिती फर्म (Endorsee Firm) का खाता अनियमित विधि से खोला गया है अर्थात् उचित सन्दर्भ के बिना खोला गया है अथवा वह लापरवाही का दोषी है।

18. एक बैंकर के रूप में निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे ? आप कारण सहित उत्तर बताइये—

How would you deal with the following situations as a banker? Give reasons for your answer—

(i) A cheque dated 29th February, 1979 is presented to you for payment on 2nd March, 1979.

(ii) You are Branch Manager in Calcutta. You receive by Registered Post, a cheque of Rs. 50,000 payable to "M/s Aurobindo Society or bearer" from Pondichery with a letter from the society to remit the proceeds by a draft on your Pondichery Branch. Would you comply with the request?

(iii) The current account of Mr. R. B. Dalal shows a credit balance of Rs. 5,000 on 1st January, 1979. On 2nd January, 1979 you receive the following cheques in clearing for payment—

(a) a cheque of Rs. 4,000 payable to self or order.

(b) a cheque of Rs. 3,500 payable to Reserve Bank of India or order.

(c) a cheque of Rs. 4,500 to M/s. B. B. Brothers or order.

(*C. A. I. I. B. Part II, May, 1979*)

हल—29 फरवरी 1979 का लिखित चैक लेखक द्वारा अधि प्रमाणन पत्र (Authentication Letter) प्राप्त करके भुगतान किया जा सकता है।

(ii) उपरोक्त स्थिति में बैंक को चैक वापिस करना चाहिए। चैक का संग्रहण केवल ग्राहक के लिये ही किया जाता है अन्यथा बैंक को वैधानिक संरक्षण प्राप्त नहीं हो सकता है।

(iii) उपरोक्त स्थिति में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया के हित में देय चैक का भुगतान किया जाना चाहिए। प्रथम, यह चैक सबसे कम राशि का है तथा द्वितीय, यह चैक संवैधानिक देय (Statutory Dues) के सम्बन्ध में है।

19. 'A' 'X' के हित में एक रेखांकित चैक देता है। Y चैक को कपट-पूर्ण विधि से प्राप्त कर लेता है तथा चैक पर X के जाली हस्ताक्षर करके अपने हित में पृष्ठांकन कर लेता है तथा अपने बैंक के माध्यम से चैक का संग्रहण अपने खाते में प्राप्त करता है। 'A' भुगतानकर्त्ता तथा संग्रहकर्त्ता बैंक पर दावा प्रस्तुत करता है। क्या वह सफल हो सकता है?

A gives X a crossed cheque drawn in favour of him. Y gets hold of the cheque fraudulently and forges the signature of X to an endorsement in favour of Y himself and has the cheque collected to his account through his bank. A sues the paying bank and the collecting bank. Can he succeed ?

हल—उपरोक्त स्थिति में भुगतानकर्त्ता बैंक क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है चूंकि चैक पर जाली पृष्ठांकन किया गया है जिसके लिये बैंक उत्तरदायी नहीं है। चैक का यथाविधि भुगतान माना जायेगा चूंकि चैक पर नियमित पृष्ठांकन है। इसके विपरीत संग्रहकर्त्ता बैंक ने चैक का संग्रहण अपने ग्राहक के लिये किया है तथा रेखांकित चैक का संग्रह किया है। संग्रहण से पूर्व संग्रहकर्त्ता बैंक ग्राहक से पृष्ठांकन की वैधता एवं शुद्धता के सम्बन्ध में पुष्टिकरण प्राप्त करता है कि प्रथम पृष्ठांकन सही है। इसके पश्चात् ही संग्रहकर्त्ता बैंक चैक का संग्रहण करता है। परन्तु उपरोक्त कार्यवाही केवल 'आदेशित चैक' अथवा 'केवल प्रापक के लिये' अथवा 'अपरक्राम्य' रेखांकित चैक में की जाती है। यदि चैक वाहक को देय है तब इसकी आवश्यकता समाप्त हो जाती है। अतः संग्रहकर्त्ता बैंक को उसी स्थिति में दोषी ठहराया जा सकता है जबकि उस बैंक ने उपयुक्त सावधानी ध्यान में नहीं रखी है।

20. बैंक को X के जेल जाने की सूचना प्राप्त होती है जिसका बैंक में उसकी फर्म के नाम से एक चालू खाता है। क्या आप उसके जेल जाने से पूर्व तथा जेल की अवधि में खाते पर जारी किये गये चैकों का भुगतान चालू रखेंगे?

Bank receives a report that Mr. X who is maintaining a good current account with you in the name of his proprietorship firm has been imprisoned. Would you continue to pay the cheques drawn on the account before and during the period of imprisonment ?

(*C. A. I. I. B. Part II, May, 1977*)

हल—उपरोक्त स्थिति में ग्राहक के जेल जाने पर खाते के संचालन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। ग्राहक द्वारा जेल जाने से पूर्व अथवा सजा की अवधि में जारी किये गये चैकों का भुगतान यथाविधिवत् होता रहेगा। परन्तु यदि ग्राहक दिवालिया होने के कारण जेल गया है तब उसके खाते का संचालन रोक दिया जायेगा और सरकारी प्रापक को ही उसके खाते के सचालन का अधिकार होगा।

21. कुछ बैंक निश्चित राशि के चैक की स्थिति में ग्राहक से परिचय की मांग करते हैं जब वे कोई चैक भुगतान के लिये काउन्टर पर प्रस्तुत करते हैं, यद्यपि चैक वाहक को देय है। क्या यह पद्धति उचित है ?

Some Banks insist on identification the person who present cheques for payment in case of certain amount of cheque even though the cheques are bearer. It it proper ?

हल—साधारणतः बैंक वाहक को देय चैक का यथाविधि भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं। वाहक को देय चैक का भुगतान किसी भी व्यक्ति को किया जा सकता है। इसके लिये ग्राहक के परिचय की आवश्यकता नहीं होती है। परन्तु यदि चैक की रकम अधिक है तब बैंक ग्राहक से परिचय की मांग कर सकते हैं ताकि चैक का रुपया सही व्यक्ति को भुगतान किया जा सके। बैंक यह पद्धति ग्राहकों के धन की सुरक्षा के लिये प्रयोग में लाते हैं।

22. एक ग्राहक जिसका चालू खाता है और जो व्यापारिक वस्तुओं का लेन-देन करता है, बैंक को 50,000 रुपये के चैक का भुगतान रोकने का निर्देश देता है। यह निर्देश छूट जाता है तथा चैक का भुगतान कर दिया जाता है। कृपया बताइये कि क्या बैंक के पास कोई बचाव है ?

A customer who maintains a good current account and deals in hardware has given instructions for stopping payment of a cheque for Rs. 50,000. These instructions are over looked and cheque is paid. Please discuss whether Bank has any defence ?

(*C. A. I. I. B. Part II, Nov., 1981*)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक त्रुटिपूर्ण भुगतान के लिये पूर्ण उत्तरदायी है तथा बैंक ग्राहक के प्रति क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी है। इस स्थिति में, सामान्यतः बैंक निर्देश प्राप्त करते समय ग्राहक से यह लिखित रूप में प्राप्त करते हैं कि चैक का

भुगतान होने पर वैंक उत्तरदायी नहीं है। परन्तु यह प्रथा अनुचित है तथा इसका कोई महत्व नहीं है। भुगतान के लिये रोके गये चैकों का भुगतान करने पर वैंक को लापरवाही का दोषी समझा जायेगा तथा वैंक ग्राहक के प्रति पूर्ण रूप में उत्तरदायी बना रहेगा।

23. परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 85 के अनुसार, यदि एक चैक अथवा ड्राफ्ट आदेश पर देय है तथा उस पर प्रापक द्वारा अथवा उसकी ओर से पृष्ठांकन किया जाता है तब अदाकर्त्ता यथाविधि भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है।

एक चतुर ग्राहक आपसे पूछता है, "चूंकि वैंक (जो अदाकर्त्ता है) को यह ज्ञात करने की आवश्यकता नहीं होती है कि पृष्ठांकन वास्तविक है अथवा नहीं, तब चैक अथवा ड्राफ्ट को वाहक पर देय करने के स्थान पर आदेश पर देय चैक जारी करने का क्या महत्वपूर्ण उद्देश्य है।"

कृपया विवेचना कीजिये कि क्या ग्राहक को आदेश पर देय चैक/ड्राफ्ट जारी करने का कोई लाभ है ?

According to Section 85 of Negotiable Instruments Act, where a cheque or draft payable to order purports to be endorsed by or on behalf of the payee, the drawee is discharged by payment in due course.

An intelligent customer asks you, "Since the banker (who is the drawee) is no required to verify whether the endorsement is 'genuine' or not, what useful purpose is served by making the cheque or draft payable to 'order' instead of making them payable to 'bearer'?

Please discuss whether the customer benefits in any way by issuing order cheques/drafts. (*C. A. I. I. B. Part II, May, 1979*)

हल—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 85 के अन्तर्गत भुगतानकर्त्ता वैंक को आदेश पर देय चैक की स्थिति में जाली पृष्ठांकन के लिये संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है कि वह पृष्ठांकनकर्त्ता के हस्ताक्षर की वास्तविकता ज्ञात करने के लिये उत्तरदायी नहीं है। परन्तु भुगतानकर्त्ता वैंक को अनियमित पृष्ठांकन के लिये उत्तरदायी ठहराया जाता है। अतः आदेश पर देय चैक की स्थिति में भुगतानकर्त्ता वैंक चैक पर पृष्ठांकन की नियमितता (क्रम) का पूर्ण सावधानी से अध्ययन करता है। इसके अतिरिक्त, आदेश पर देय चैक का भुगतान प्रापक अथवा पृष्ठांकिकी का परिचय प्राप्त करके किया जाता है जबकि वाहक को देय चैक की स्थिति में परिचय प्राप्त नहीं किया जाता है।

ग्राहक को आदेश पर देय चैक जारी करने का महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि इसमें प्रापक का पृष्ठांकन जाली होने की स्थिति में कोई भी पृष्ठांकिती यथाविधिधारी नहीं होता है अथवा जिस पृष्ठांकनकर्त्ता के हस्ताक्षर जाली होते हैं, उसके पश्चात कोई भी पक्षकार चैक पर यथाविधिधारी के अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता है।

24. एक ग्राहक उस पद्धति के सम्बन्ध में आपसे सलाह मांगता है जिसमें ग्राहक को चैक जारी करने में अधिकतम संरक्षण प्राप्त होता है। कृपया स्पष्ट कीजिये कि निम्नलिखित विकल्पों में कौन सा विकल्प अधिकतम संरक्षण प्रदान करता है—

A customer asks for your advice regarding the manner in which a cheque should be drawn to afford maximum protection to the customer. Please discuss which of the following alternatives would offer the best protection :—

(i) Cheque drawn to order.

(ii) Cheque drawn to bearer and crossed.

(iii) Cheque drawn to bearer with a special crossing in favour of a bank.

(iv) Cheque drawn to bearer and crossed "Not Negotiable"

(v) Cheque drawn to bearer and crossed "A/c Payee".

(C. A. I. I B. Part II, May, 1977)

हल—उपरोक्त स्थिति में ग्राहक को देय 'केवल प्रापक के लिये' रेखांकित चैक की स्थिति में ग्राहक को अधिकतम सवैधानिक संरक्षण प्राप्त होता है चूंकि इस स्थिति में चैक का भुगतान केवल प्रापक के खाते में ही किया जाता है। यदि संग्रहकर्त्ता बैंक द्वारा प्रापक के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति के खाते में चैक का संग्रहण किया जाता है तब वह दोषपूर्ण संग्रहण के लिये स्वयं उत्तरदायी होता है।

अन्य परिस्थितियों में ग्राहक द्वारा चैक जारी करने पर यह संरक्षण प्राप्त नहीं होता है। 'अपरक्राम्य रेखांकित चैक' का पुनः हस्तांतरण किया जा सकता है परन्तु इसमें हस्तांतरिती (Transferee) को हस्तांतरणकर्ता (Transferor) से अच्छा स्वामित्व प्राप्त नहीं होता है। इसी प्रकार आदेश पर देय चैक अथवा वाहक को देय रेखांकित चैक में ग्राहक को कोई संरक्षण प्राप्त नहीं होता है।

अतः ग्राहक को 'केवल प्रापक के लिये' रेखांकित चैक में सबसे अधिक संरक्षण प्राप्त होता है।

25. लेजर कीपर को चैक के खाते में पोस्टिंग करते समय किन-किन तथ्यों की जांच करनी चाहिए, विशेषः जब चैक रोकड़ भुगतान के लिये प्रस्तुत किया गया है ?

What points in your view, a ledger-keeper should scrutinise before posting a cheque in the ledger particularly when it is a cheque for cash payment ?

हल—वैंक में रोकड़ भुगतान अथवा अन्तरण के उद्देश्य से प्राप्त चैंक की पोस्टिंग करते समय लेजर कीपर को निम्नलिखित सावधानियां ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) चैंक भुगतान के लिये प्राप्त करने पर, लेजर कीपर को चैंक के धारक को टोकन (Token) प्रदान करना चाहिए तथा धारक के हस्ताक्षर चैंक की पीठ पर प्राप्त करने चाहिए। ये हस्ताक्षर इस बात का साक्ष्य होते हैं कि चैंक अमुक व्यक्ति से प्राप्त किया गया है।

(2) लेजर कीपर को चैंक की तिथि, राशि एवं प्रापक व्यक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। चैंक की राशि अंकों व शब्दों में समान लिखी होनी चाहिए तथा चैंक 6 माह से पूर्व की तिथि का अथवा उतरदिनांकित (Post dated Cheque) नहीं होना चाहिए।

(3) चैंक वाहक को देय होने की स्थिति में, किसी भी व्यक्ति को चैंक का भुगतान किया जा सकता है। परन्तु आदेशित चैंक का भुगतान प्रापक का परिचय प्राप्त करके ही भुगतान करना चाहिए।

(4) चैंक रेखांकित नहीं होना चाहिए।

(5) चैंक खाते में पोस्ट करते समय उचित खाते में पोस्ट करना चाहिए तथा खाते में पर्याप्त राशि होनी चाहिए।

(6) खाताधारी को जारी चैंक बुक की संख्या चैंक संख्या से मिलान करनी चाहिए। चैंक उसी चैंक बुक से जारी किया जाना चाहिए जो चैंक बुक उसके खाते में जारी की गयी है।

(7) खाते में पोस्टिंग करते समय तिथि एवं राशि स्पष्ट एवं सही लिखी जानी चाहिए।

अतः लेजर कीपर को चैंक की पोस्टिंग करते समय उपरोक्त सावधानियां ध्यान में रखनी चाहियें।

26. निम्नलिखित स्थिति में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following Condition—

An open bearer cheque for Rs. 1,000 has been presented for payment on the counter. It is duly passed but before money is paid to the presenter of the cheque, an order is recived from the drawer stopping payment. Can the Bank treat the che having been paid before receipt of stop payment instructi

(C. A. I. I. B. Part II,

हल—उपरोक्त स्थिति में चैक का भुगतान रोकने की सूचना बैंक को चैक का वास्तविक भुगतान होने से पूर्व प्राप्त हो गयी है। चैक का वास्तविक भुगतान उस समय समझा जाता है जबकि चैक के धारक को रोकड़ का भुगतान दे दिया जाता है।

27. निम्नलिखित परिस्थितियों में बैंक की स्थिति स्पष्ट कीजिये—

Discuss the Bank's position in the following situations —

Prem steals from Babulal one cheque for Rs. 10,000 drawn on Chemical Bank Ltd. The cheque is a "bearer cheque" and not crossed. Prem deposits this cheque into his account with Royal Bank Ltd Chemical Bank Ltd. pays the cheque and debits the account of the drawer Mr. Kundanlal. Ultimately, the drawer finds that the cheque was stolen and claims this amount from Chemical Bank Limited."

Discuss the liability of Chemical Bank Ltd.

(C. A. I. I. B. May, 1980)

हल—उपरोक्त स्थिति में कैमिकल बैंक चैक के भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है चूंकि चैक का यथाविधि भुगतान किया गया है। चैक के आहर्ता को चैक खोने की सूचना भुगतानकर्त्ता बैंक को तुरन्त देनी चाहिये। भुगतानकर्त्ता बैंक के पास इस सम्बन्ध में कोई निर्देश प्राप्त नहीं है। अतः भुगतानकर्त्ता बैंक चैक के भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं है। परन्तु, इस स्थिति में, संग्रहकर्त्ता बैंक चैक के दोषपूर्ण संग्रह के लिये उत्तरदायी हो सकता है चूंकि चैक वाहक को देय (Bearer cheque) है। संग्रहकर्त्ता बैंक को केवल रेखांकित चैक का संग्रहण करना चाहिये।

28. निम्नलिखित परिस्थितियों में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situations—

(a) Shri Raman, a customer of your bank, issues a cheque for Rs. 5,000 in favour of Shri Sitaram. The cheque is crossed "A/c. Payee only."

Shri Sitaram, however, has no account and he negotiates the cheque for value to M/s. Shroff & Co., Bankers, who collect the cheque through their bankers. On presentation to the drawee bank, the cheque is dishonoured for want of balance in the account. The dishonoured cheqe while being returned in the post is lost in transit. Can Shroff and Co., as holder for value, ask

the drawee to issue duplicate cheque notwithstanding the words "A/c. Payee only" ?

(b) A Company makes arrangements with the bank for payment of dividends at all branches of the bank. For this purpose a special account "......Co....Dividend a/c." is opened at main Branch and an amount equivalent to total dividend is transferred to this Account.

Before all dividend warrants are presented for payment, the Company goes into liquidation and a Receiver is appointed.

Can the Bank continue to pay the dividends ?

हल—(a) उपरोक्त परिस्थिति में रेखांकित चैक है जिसमें रेखांकन 'केवल प्रापक के लिये' किया गया है। इसमें चैक का पुनः परक्रामण किया जा सकता है। यह चैक के परक्रामण पर रोक नहीं लगाता है। इस स्थिति में सीताराम द्वारा चैक मूल्य के बदले मैसर्स सरोफ एण्ड कम्पनी को परक्रामित किया गया है परन्तु चैक वापसी के पश्चात् मार्ग में खो गया है। मैसर्स सरोफ एण्ड क० चैक के आहर्ता से यथाविधिधारी (Holder in due Course) के रूप में दूसरा चैक प्राप्त कर सकती है।

(b) उपरोक्त स्थिति में बैंक कम्पनी के पृथक् खाते से लाभांश का भुगतान जारी नहीं रख सकता है। कम्पनी के समापन में जाने के पश्चात् कम्पनी की समस्त सम्पत्ति एवं खातों पर समापक को अधिकार प्राप्त होता है। अतः बैंक को लाभांश का भुगतान जारी नहीं रखना चाहिए।

29. निम्नलिखित स्थिति में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situation—

M/s Diamond Cycle Company who are a good customer of your bank find from the bank's statement that a particular cheque for Rs. 12,000 has been paid by the bank. On enquiry and subsequent correspondence it is established that the company had issued a crossed order cheque for Rs. 2,000 in favour of M/s. Oriental Traders and had sent the same by ordinary post. The cheque was stolen in transit and someone had removed the "crossing" and "order" and altered the amount to Rs. 12,000. The alterations were not visible and the bank paid the cheque across the counter to one Mr. Chaman Lal, who was formerly an employee at Diamond Cycle Company and who had recently been discharged.

Shri Chaman Lal used to come to the Bank for receiving cash payments in the past. Your clients claim the amount from the Bank. Please discuss the bank's position.

(C. A. I. I. B. Part II, May, 1973)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक चैक का विकृति पर भुगतान करने के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 89 के अन्तर्गत यदि चैक पर किया गया कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन दर्शनीय नहीं है तब बैंक चैक का यथाविधि भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। इस स्थिति में चैक के रेखांकन एवं राशि का परिवर्तन दर्शनीय नहीं है। अतः बैंक को त्रुटिपूर्ण भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तत्त्व
(Important Points to be Remembered)

(1) बैंक को चैक का भुगतान करते समय चैक की संख्या, तिथि, रकम, ग्राहक के हस्ताक्षर, महत्वपूर्ण परिवर्तन आदि सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए।

(2) बैंक अनेक परिस्थितियों में चैक का भुगतान रोक सकता है। जैसे—ग्राहक द्वारा भुगतान न करने का निर्देश प्राप्त होने पर, ग्राहक की मृत्यु पागल अथवा दिवालिया होने पर उन का अधिहस्तांकन करने पर अथवा जाली होने पर कुर्की आदेश प्राप्त होने की स्थिति में चैक का भुगतान नहीं किया जाता है।

(3) बैंक को चैक का यथाविधि भुगतान करने पर आदेशित, वाहक अथवा रेखांकित चैक की स्थिति में वैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है।

(4) चैक का भुगतान करते समय, यदि महत्वपूर्ण परिवर्तन स्पष्टतः प्रकट नहीं होते हैं तब बैंक दोषपूर्ण भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं समझा जाता है।

(5) कम्पनी के हित में ग्राहक को देय चैक का भुगतान भी कम्पनी के नाम से किया जाना चाहिए।

प्रश्न
(Questions)

1. भुगतानकर्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम 1881 के अन्तर्गत प्राप्त संरक्षण का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।

Discuss in detail the statutory protection granted to paying bankers under Negotiable Instrument Act.

2. परक्राम्य प्रपत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन से क्या प्रभाव पड़ता है? महत्वपूर्ण परिवर्तन के तीन उदाहरण दीजिये।

the drawee to issue duplicate cheque notwithstanding the words "A/c. Payee only" ?

(b) A Company makes arrangements with the bank for payment of dividends at all branches of the bank. For this purpose a special account "......Co....Dividend a/c." is opened at main Branch and an amount equivalent to total dividend is transferred to this Account.

Before all dividend warrants are presented for payment, the Company goes into liquidation and a Receiver is appointed.

Can the Bank continue to pay the dividends ?

हल—(a) उपरोक्त परिस्थिति में रेखांकित चैक है जिसमें रेखांकन 'केवल प्रापक के लिये' किया गया है। इसमें चैक का पुनः परक्रामण किया जा सकता है। यह चैक के परक्रामण पर रोक नहीं लगाता है। इस स्थिति में सीताराम द्वारा चैक मूल्य के बदले मैसर्स सरोफ एण्ड कम्पनी को परक्रामित किया गया है परन्तु चैक वापसी के पश्चात् मार्ग में खो गया है। मैसर्स सरोफ एण्ड क० चैक के आहर्ता से यथाविधिधारी (Holder in due Course) के रूप में दूसरा चैक प्राप्त कर सकती है।

(b) उपरोक्त स्थिति में बैंक कम्पनी के पृथक् खाते से लाभांश का भुगतान जारी नहीं रख सकता है। कम्पनी के समापन में जाने के पश्चात् कम्पनी की समस्त सम्पत्ति एवं खातों पर समापक को अधिकार प्राप्त होता है। अतः बैंक को लाभांश का भुगतान जारी नहीं रखना चाहिए।

29. निम्नलिखित स्थिति में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situation—

M/s Diamond Cycle Company who are a good customer of your bank find from the bank's statement that a particular cheque for Rs. 12,000 has been paid by the bank. On enquiry and subsequent correspondence it is established that the company had issued a crossed order cheque for Rs. 2,000 in favour of M/s. Oriental Traders and had sent the same by ordinary post. The cheque was stolen in transit and someone had removed the "crossing" and "order" and altered the amount to Rs. 12,000. The alterations were not visible and the bank paid the cheque across the counter to one Mr. Chaman Lal, who was formerly an employee at Diamond Cycle Company and who had recently been discharged.

Shri Chaman Lal used to come to the Bank for receiving cash payments in the past. Your clients claim the amount from the Bank. Please discuss the bank's position.

(C. A. I. I. B. Part II, May, 1978)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक चैक का खिड़की पर भुगतान करने के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 89 के अन्तर्गत यदि चैक पर किया गया कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन दर्शनीय नहीं है तब बैंक चैक का यथाविधि भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। इस स्थिति में चैक के रेखांकन एवं राशि का परिवर्तन दर्शनीय नहीं है। अतः बैंक को त्रुटिपूर्ण भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) बैंक को चैक का भुगतान करते समय चैक की संख्या, तिथि, रकम, ग्राहक के हस्ताक्षर, महत्वपूर्ण परिवर्तन आदि सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए।

(2) बैंक अनेक परिस्थितियों में चैक का भुगतान रोक सकता है। जैसे—ग्राहक द्वारा भुगतान न करने का निर्देश प्राप्त होने पर, ग्राहक की मृत्यु पागल अथवा दिवालिया होने पर धन का अभिहस्तांकन करने पर अथवा खाते पर कुर्की आदेश प्राप्त होने की स्थिति में चैक का भुगतान नहीं किया जाता है।

(3) बैंक को चैक का यथाविधि भुगतान करने पर आदेशित, वाहक अथवा रेखांकित चैक की स्थिति में वैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है।

(4) चैक का भुगतान करते समय, यदि महत्वपूर्ण परिवर्तन स्पष्टतः प्रगट नहीं होते हैं तब बैंक दोषपूर्ण भुगतान के लिये उत्तरदायी नहीं समझा जाता है।

(5) कम्पनी के हित में वाहक को देय चैक का भुगतान भी कम्पनी के खाते में किया जाना चाहिए।

प्रश्न
(Questions)

1. भुगतानकर्ता बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम 1881 के अन्तर्गत प्राप्त संरक्षण का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।

Discuss in detail the statutory protection granted to paying bankers under Negotiable Instrument Act.

2. परक्राम्य प्रपत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन से क्या प्रभाव पड़ता है? महत्वपूर्ण परिवर्तन के तीन उदाहरण दीजिये।

What is the effect of material alteration in a negotiable instrument ? Give three examples of material alterations.

(C. A. I. I. B. May, 1980)

3. चैक का भुगतान करते समय बैंक को क्या सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहिए ?

What precautions should a bank take in making payment of a cheque.

4. आपके दृष्टिकोण में एक लेजर कीपर को लेजर में चैक का लेखा करते समय विशेषत: जब चैक रोकड़ भुगतान के लिये है, किन तथ्यों की जाँच करनी चाहिए ?

What points in your view, a ledger-keeper should scrutinise before posting cheque in the ledger particularly when it is a cheque for cash payment ? *(C. A. I. I. B. Sept., 1985)*

5. चैक में महत्वपूर्ण परिवर्तनों का क्या अभिप्राय है। उन परिवर्तनों का उदाहरण दीजिये जो महत्वपूर्ण हैं तथा वे जो नहीं हैं।

What is meant by material alterations in cheques ? Give examples of alterations which are material and those which are not.

6. भुगतानकर्त्ता बैंक से आपका क्या अभिप्राय है ? संक्षेप में अपने ग्राहक के चैकों का भुगतान करने के सम्बन्ध में उसके कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्वों का वर्णन कीजिये। उसे इस सम्बन्ध में क्या संवैधानिक संरक्षण उपलब्ध हैं ?

What is meant by paying Bank ? State briefly his duties and responsibilities in regard to honouring his Customer's Cheques. What statutory protection does he enioy in this connection ?

7. चैक पर 'केवल प्रापक के लिये' तथा 'अपरक्राम्य रेखांकन' का भुगतान-कर्त्ता बैंक के लिये महत्व की विवेचना कीजिये।

Discuss the significance to the paying banker of 'Account Payee only' and 'Not Negotiable Crossing' on a cheque.

(Delhi B. Com.)

8. एक बैंक का क्या दायित्व है जो एक जाली पृष्ठांकन किये हुये चैक का भुगतान करता है ?

What is the liability of a banker which makes payment of a cheque bearing forged endorsements ?

9. किन परिस्थितियों में एक बैंक अपने ग्राहक के चैंक का भुगतान न करने पर न्यायोचित होता है ? चैंक के दोषपूर्ण अनादरण के परिणामों की विवेचना कीजिये।

Under what circumstances is a banker justified in refusing payment of his customer's cheque? Discuss the consequences of wrongful dishonour of cheques.

10. परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 85 में प्रदत्त भुगतानकर्ता बैंक के वैधानिक संरक्षण की विस्तारपूर्वक विवेचना कीजिये।

Discuss in detail the statutory protection granted to paying banker under section 85 of the Negotiable Instruments Act.

(Delhi B. Com.)

□□□

13 परक्राम्य प्रपत्रों के पक्षकारों के अधिकार एवं दायित्व
(RIGHTS AND LIABILITIES OF PARTIES TO NEGOTIABLE INSTRUMENTS)

परक्राम्य प्रपत्रों से सम्बन्धित विभिन्न पक्षकार होते हैं। प्रपत्र के पक्षकारों में मुख्यत: आहर्ता, देनदार (Drawee), प्रापक, स्वीकारक, पृष्ठांकनकर्त्ता एवं पृष्ठांकिती सम्मिलित किये जाते हैं। इन पक्षकारों के प्रपत्र के धारक के प्रति व्यापक अधिकार एवं कर्त्तव्य होते हैं।

परक्राम्य प्रपत्रों से सम्बन्धित पक्षकार व उनके दायित्व
(Parties Relating to Negotiable Instruments and Their Liabilities)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 26 के अनुसार, प्रत्येक वह व्यक्ति जो अनुबन्ध करने के योग्य हो विनिमय-पत्र, प्रतिज्ञा-पत्र तथा चैक आहूत करके कर, स्वीकार करके, पृष्ठांकित करके, सुपुर्द करके तथा परक्रामित करके अन्य रों अथवा स्वयं को उत्तरदायी बना सकता है। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 11 के अन्तर्गत प्रत्येक उस व्यक्ति को अनुबन्ध करने के योग्य समझा गया है जो वयस्क हो, स्वस्थ मस्तिष्क का हो तथा जिसे किसी विधि के अन्तर्गत स्पष्टत: अनुबन्ध करने के अयोग्य घोषित नहीं किया गया हो। अत: भारतीय संविदा अधिनियम में अवयस्क को अनुबन्ध करने के अयोग्य घोषित किया गया है। अवयस्क वयस्कता प्राप्त करने के पश्चात् अवयस्कता की अवधि में किये गये अनुबन्धों का अनुमोदन अथवा संपुष्टि (Ratification) नहीं कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि मोहरी बीबी बनाम धरमोदास नामक विवाद[1] में की गयी है। परन्तु परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम के अन्तर्गत अवयस्क (Minor) को परक्राम्य प्रपत्र लिखने, पृष्ठांकित करने, सुपुर्द करने तथा परक्रामित करने का अधिकार प्रदान किया गया है जिससे वह स्वयं को छोड़कर, समस्त पक्षकारों को उत्तरदायी बनाता है। इसी प्रकार अवयस्क के हित में लिखा गया प्रपत्र व्यर्थ नहीं होता है तथा वह प्रपत्र पर अपना दावा कर सकता है। अवयस्क को आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये प्रदान किया गया ऋण अवयस्क की व्यक्तिगत सम्पत्ति से वसूली योग्य होता है परन्तु अवयस्क को इसके लिये व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। यदि अवयस्क द्वारा मिथ्या वर्णन करके कोई अनुबन्ध किया जाता है कि वह

1. Mohori Bibi Vs. Dharmodas.

वयस्क है तब भी यह अनुबन्ध व्यर्थ (Void) समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि कन्हैया लाल बनाम बाबू राम नामक विवाद[1] में की गयी है।

इसी प्रकार पागल व शराबी व्यक्ति को अनुबन्ध करने का अधिकार नहीं दिया गया है। इनके द्वारा निष्पादित किया गया प्रपत्र इनके विरुद्ध व्यर्थ समझा जाता है। परन्तु इस स्थिति में यह साबित करने का भार पागल अथवा शराबी व्यक्ति पर होता है कि प्रपत्र लिखते, स्वीकार करते अथवा परक्रामित करते समय उन्हें अपने कार्य के प्रभावों का ज्ञान नहीं था।

निगम (Corporation) को परक्राम्य प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने अथवा परक्रामित करने का उस समय तक अधिकार नहीं होता है जब तक कि प्रचलित विधि के अन्तर्गत उसे यह अधिकार स्पष्टतः प्रदान नहीं किया जाता है। निगम अथवा कम्पनी के अधिकार उनके चार्टर में वर्णित होते हैं और कम्पनी इसके बाहर कार्य नहीं कर सकती है। इस सम्बन्ध में यथाविधिधारी को भी निगम के विरुद्ध कोई अधिकार नहीं होता है। निगम के ये अधिकार स्पष्ट अथवा गर्भित हो सकते हैं। कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत कम्पनी को प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने अथवा परक्रामित करने का अधिकार प्रदान किया गया है। अतः कम्पनी परक्राम्य प्रपत्र लिख सकती है।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 27 के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति जो परक्राम्य प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने अथवा परक्रामित (Negotiated) करने के योग्य है, अपने प्राधिकृत अभिकर्त्ता (Authorised Agent) द्वारा, जिसने उसके नाम में कार्य किया है, स्वयं को अथवा अन्य किसी व्यक्ति को उत्तरदायी बना सकता है। अतः कोई भी व्यक्ति अपने प्रधान (Principal) की ओर से प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने, पृष्ठांकित करने, सुपुर्द करने तथा परक्रामित करने का कार्य कर सकता है। प्राधिकृत अभिकर्त्ता द्वारा हस्ताक्षर करते समय यह स्पष्ट होना चाहिये कि उसने अमुक व्यक्ति की ओर से अभिकर्त्ता के रूप में हस्ताक्षर किये हैं। यदि अभिकर्त्ता द्वारा इस आशय से हस्ताक्षर नहीं किये जाते हैं तब यह परक्राम्य प्रपत्र के लिये स्वयं उत्तरदायी होता है तथा उसके प्रधान को इसके लिये उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 28 के अनुसार, प्राधिकृत अभिकर्त्ता उन व्यक्तियों के प्रति उत्तरदायी नहीं होता है जिन्होंने इस आशय से अभिकर्त्ता के हस्ताक्षर प्राप्त किये हैं कि इसके लिये प्रधान को ही उत्तरदायी बनाया जायेगा। अवयस्क तथा अभिभावक की स्थिति में यह सिद्धान्त लागू नहीं होता है चूंकि अवयस्क को उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता है। अतः यदि किसी अभिभावक ने अवयस्क की ओर से हस्ताक्षर किये हैं तब वह इसके लिये स्वयं उत्तरदायी होता है।[2]

1. Kanhai Lal Vs. Babu Ram.
2. Sulochana Vs. Pandyan Bank Ltd. (A.I.R. 1975)

अतः कोई भी व्यक्ति, जो अन्य व्यक्ति की ओर से करता है, अपने कार्यों के प्रति उस व्यक्ति को उत्तरदायी बनाता है। यदि कोई कार्य किसी अज्ञात व्यक्ति (Undisclosed Principal) की ओर से किया गया है अर्थात् परक्राम्य प्रपत्र पर उसका नाम स्पष्ट नहीं होता है तब उस अज्ञात व्यक्ति को उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता है।[1] इस स्थिति में अभिकर्त्ता स्वयं उत्तरदायी होता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 27 के अनुसार यदि किसी अभिकर्त्ता को व्यापार चलाने अथवा ऋणों का भुगतान करने का अधिकार प्रदान किया गया है तब उस प्राधिकृत अभिकर्त्ता को परक्राम्य प्रपत्र स्वीकार करने अथवा पृष्ठांकित करने का अधिकार प्राप्त नहीं समझा जाता है। इसी प्रकार यदि किसी अभिकर्त्ता को प्रपत्र लिखने का अधिकार प्रदान किया गया है तब उसे प्रपत्र पृष्ठांकित करने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है। प्रपत्र के धारक को उस अभिकर्त्ता के विरुद्ध क्षतिपूर्ति का अधिकार प्राप्त होता है जिस अभिकर्त्ता ने अपने अधिकार क्षेत्र से अधिक कार्य किया है। इस स्थिति में, अभिकर्त्ता द्वारा किये गये कार्यों के लिये प्रधान को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

विधिक प्रतिनिधि (Legal Representative) की स्थिति में, परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 29 के अनुसार विधिक प्रतिनिधि उस सीमा तक उत्तरदायी होता है जिस सीमा तक वह मृतक की सम्पत्ति प्राप्त करता है। यदि विधिक प्रतिनिधि परक्राम्य प्रपत्र पर हस्ताक्षर करते समय यह सीमा स्पष्ट नहीं करता है तब वह परक्राम्य प्रपत्र के लिये स्वयं उत्तरदायी है। अतः परक्राम्य प्रपत्र लिखते, स्वीकार करते अथवा परक्रामित करते समय विधिक प्रतिनिधि को स्पष्टतः लिखना चाहिए कि वह व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी नहीं है।

साझेदारी फर्म (Partnership Firm) की स्थिति में, व्यापारिक कार्य करने वाली फर्म के प्रत्येक साझेदार को फर्म की ओर से परक्राम्य प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने अथवा परक्रामित करने का गर्भित अधिकार (Implied Right) है। फर्म उसके द्वारा किये गये कार्य के लिये बाध्य होती है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि साझेदार द्वारा यह कार्य फर्म की ओर से किया जाना चाहिये अन्यथा उस कार्य के लिये साझेदार स्वयं उत्तरदायी होता है।[2] गैर व्यापारी (Non Trading) फर्म की स्थिति में साझेदारों को यह अधिकार उसी स्थिति में प्राप्त होता है जबकि साझेदारी विलेख (Partnership Deed) में यह अधिकार स्पष्टतः प्रदान किया गया है।

संयुक्त हिन्दू परिवार (Hindu Joint Family) की स्थिति में, परिवार के कर्त्ता को परक्राम्य प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने अथवा परक्रामित करने का अधिकार होता है। वह परिवार के व्यापार के लिये अथवा परिवार के लिये ऋण

1. Subba Narayan Vs. Ramaswami.
2. Sharanbasppa Vs. Rachappa.

ले सकता है तथा परिवार की सम्पत्ति गिरवी रख सकता है।[1] परिवार के कर्ता द्वारा स्वीकार किया गया प्रपत्र समस्त सदस्यों को स्वीकार्य होता है।[2] इसके लिये अवयस्क भी अपने हित (share) के लिये उत्तरदायी होता है।[3]

अतः उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि परक्राम्य प्रपत्र में पक्षकारों की स्थिति (Capacity of Parties) पृथक्-पृथक् होती है। परक्राम्य प्रपत्र में विभिन्न पक्षकार होते हैं। उदाहरणार्थ—आहर्ता, स्वीकारक, अदाकर्ता, पृष्ठांकनकर्ता आदि। विभिन्न पक्षकारों के दायित्व निम्नलिखित हैं—

(1) आहर्ता का दायित्व (Liability of Drawer)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 30 के अनुसार विनिमय-पत्र अथवा चैक की स्थिति में प्रपत्र के भुगतान का दायित्व प्रपत्र के अदाकर्ता (Drawee) पर होता है। यदि प्रपत्र के अदाकर्ता द्वारा प्रपत्र का भुगतान नहीं किया जाता है तब प्रपत्र का आहर्ता भुगतान के लिये उत्तरदायी होता है। इस सम्बन्ध में, यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि विनिमय-पत्र अथवा चैक भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जावे तथा प्रपत्र का अनादरण हो जाये और अनादरण की सूचना (Notice of Dishonour) प्रपत्र के आहर्ता को भेजी जावे। यदि अनादरण की सूचना आहर्ता को नहीं भेजी जाती है तब आहर्ता अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। चैक की स्थिति में यदि बैंक अदाकर्ता के समक्ष भुगतान के लिये प्रस्तुत नहीं किया गया है तब भी आहर्ता चैक के लिये उत्तरदायी होता है परन्तु यदि चैक के प्रस्तुतीकरण में देरी के कारण, चैक अनादृत होता है तब आहर्ता अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। अनादरण की सूचना लिखित अथवा मौखिक हो सकती है। आहर्ता का दायित्व सहायक (Secondary) दायित्व होता है चूंकि आहर्ता का दायित्व उसी स्थिति में उत्पन्न होता है जबकि विनिमय-पत्र अथवा चैक के अदाकर्ता (Drawee) द्वारा भुगतान नहीं किया जाता है।

प्रपत्र का आहर्ता प्रपत्र लिखते समय अपने दायित्व से मुक्त हो सकता है।

(2) स्वीकारक का दायित्व (Liability of Acceptor)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 32 के अनुसार, प्रतिज्ञा-पत्र का स्वीकारक अथवा लेखक प्रपत्र के दर्शनीय अभिप्राय अथवा स्वीकृति की शर्तों के अनुसार प्रपत्र का देय तिथि पर भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है। प्रतिज्ञा-पत्र के लेखक का प्रपत्र पर मूल उत्तरदायित्व होता है तथा अनादरण की सूचना प्राप्त न होने की स्थिति में वह अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है। परन्तु प्रतिज्ञा-पत्र का स्वीकारक उसी स्थिति में उत्तरदायी होता है जबकि उसने प्रपत्र पर स्वीकृति प्रदान कर दी है और प्रपत्र प्रापक (Payee) को सुपुर्द कर दिया है। अतः प्रतिज्ञा-पत्र में अदाकर्ता की स्वीकृति

1. Abdul Majid Vs. Maganlal.
2. Raghunath Singh Vs. Sri Narayan.
3. Raghunathji Vs. Bank of Bombay.

अतः कोई भी व्यक्ति, जो अन्य व्यक्ति की ओर से करता है, अपने कार्यों के प्रति उस व्यक्ति को उत्तरदायी बनाता है। यदि कोई कार्य किसी अज्ञात व्यक्ति (Undisclosed Principal) की ओर से किया गया है अर्थात् परक्राम्य प्रपत्र पर उसका नाम स्पष्ट नहीं होता है तब उस अज्ञात व्यक्ति को उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता है।[1] इस स्थिति में अभिकर्त्ता स्वयं उत्तरदायी होता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 27 के अनुसार यदि किसी अभिकर्त्ता को व्यापार चलाने अथवा ऋणों का भुगतान करने का अधिकार प्रदान किया गया है तब उस प्राधिकृत अभिकर्त्ता को परक्राम्य प्रपत्र स्वीकार करने अथवा पृष्ठांकित करने का अधिकार प्राप्त नहीं समझा जाता है। इसी प्रकार यदि किसी अभिकर्त्ता को प्रपत्र लिखने का अधिकार प्रदान किया गया है तब उसे प्रपत्र पृष्ठांकित करने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है। प्रपत्र के धारक को उस अभिकर्त्ता के विरुद्ध क्षतिपूर्ति का अधिकार प्राप्त होता है जिस अभिकर्त्ता ने अपने अधिकार क्षेत्र से अधिक कार्य किया है। इस स्थिति में, अभिकर्त्ता द्वारा किये गये कार्यों के लिये प्रधान को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

विधिक प्रतिनिधि (Legal Representative) की स्थिति में, परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 29 के अनुसार विधिक प्रतिनिधि उस सीमा तक उत्तरदायी होता है जिस सीमा तक वह मृतक की सम्पत्ति प्राप्त करता है। यदि विधिक प्रतिनिधि परक्राम्य प्रपत्र पर हस्ताक्षर करते समय यह सीमा स्पष्ट नहीं करता है तब वह परक्राम्य प्रपत्र के लिये स्वयं उत्तरदायी है। अतः परक्राम्य प्रपत्र लिखते, स्वीकार करते अथवा परक्रामित करते समय विधिक प्रतिनिधि को स्पष्टतः लिखना चाहिए कि वह व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी नहीं है।

साझेदारी फर्म (Partnership Firm) की स्थिति में, व्यापारिक कार्य करने वाली फर्म के प्रत्येक साझेदार को फर्म की ओर से परक्राम्य प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने अथवा परक्रामित करने का गर्भित अधिकार (Implied Right) है। फर्म उसके द्वारा किये गये कार्य के लिये बाध्य होती है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि साझेदार द्वारा यह कार्य फर्म की ओर से किया जाना चाहिये अन्यथा उस कार्य के लिये साझेदार स्वयं उत्तरदायी होता है।[2] गैर व्यापारी (Non Trading) फर्म की स्थिति में साझेदारों को यह अधिकार उसी स्थिति में प्राप्त होता है जबकि साझेदारी विलेख (Partnership Deed) में यह अधिकार स्पष्टतः प्रदान किया गया है।

संयुक्त हिन्दू परिवार (Hindu Joint Family) की स्थिति में, परिवार के कर्त्ता को परक्राम्य प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने अथवा परक्रामित करने का अधिकार होता है। वह परिवार के व्यापार के लिये अथवा परिवार के लिये ऋण

1. Subba Narayan Vs. Ramaswami.
2. Sharanbasppa Vs. Rachappa.

ले सकता है तथा परिवार की सम्पत्ति गिरवी रख सकता है।[1] परिवार के कर्ता द्वारा स्वीकार किया गया प्रपत्र समस्त सदस्यों को स्वीकार्य होता है।[2] इसके लिये अवयस्क भी अपने हित (share) के लिये उत्तरदायी होता है।[3]

अतः उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि परक्राम्य प्रपत्र में पक्षकारों की स्थिति (Capacity of Parties) पृथक्-पृथक् होती है। परक्राम्य प्रपत्र में विभिन्न पक्षकार होते हैं। उदाहरणार्थ—आहर्ता, स्वीकारक, अदाकर्ता, पृष्ठांकनकर्ता आदि। विभिन्न पक्षकारों के दायित्व निम्नलिखित हैं—

(1) आहर्ता का दायित्व (Liability of Drawer)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 30 के अनुसार विनिमय-पत्र अथवा चैक की स्थिति में प्रपत्र के भुगतान का दायित्व प्रपत्र के अदाकर्ता (Drawee) पर होता है। यदि प्रपत्र के अदाकर्ता द्वारा प्रपत्र का भुगतान नहीं किया जाता है तब प्रपत्र का आहर्ता भुगतान के लिये उत्तरदायी होता है। इस सम्बन्ध में, यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि विनिमय-पत्र अथवा चैक भुगतान के लिये प्रस्तुत किया जाये तथा प्रपत्र का अनादरण हो जाये और अनादरण की सूचना (Notice of Dishonour) प्रपत्र के आहर्ता को भेजी जाये। यदि अनादरण की सूचना आहर्ता को नहीं भेजी जाती है तब आहर्ता अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। चैक की स्थिति में यदि चैक अदाकर्ता के समक्ष भुगतान के लिये प्रस्तुत नहीं किया गया है तब भी आहर्ता चैक के लिये उत्तरदायी होता है परन्तु यदि चैक के प्रस्तुतीकरण में देरी के कारण, चैक अनादृत होता है तब आहर्ता अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। अनादरण की सूचना लिखित अथवा मौखिक हो सकती है। आहर्ता का दायित्व सहायक (Secondary) दायित्व होता है चूंकि आहर्ता का दायित्व उसी स्थिति में उत्पन्न होता है जबकि विनिमय-पत्र अथवा चैक के अदाकर्ता (Drawee) द्वारा भुगतान नहीं किया जाता है।

प्रपत्र का आहर्ता प्रपत्र लिखते समय अपने दायित्व से मुक्त हो सकता है।

(2) स्वीकारक का दायित्व (Liability of Acceptor)—परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 32 के अनुसार, प्रतिज्ञा-पत्र का स्वीकारक अथवा लेखक प्रपत्र के दर्शनीय अभिप्राय अथवा स्वीकृति की शर्तों के अनुसार प्रपत्र का देय तिथि पर भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है। प्रतिज्ञा-पत्र के लेखक का प्रपत्र पर मूल उत्तरदायित्व होता है तथा अनादरण की सूचना प्राप्त न होने की स्थिति में वह अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है। परन्तु प्रतिज्ञा-पत्र का स्वीकारक उसी स्थिति में उत्तरदायी होता है जबकि उसने प्रपत्र पर स्वीकृति प्रदान कर दी है और प्रपत्र प्रापक (Payee) को सुपुर्द कर दिया है। अतः प्रतिज्ञा-पत्र में अदाकर्ता की स्वीकृति

1. Abdul Majid Vs. Maganlal.
2. Raghunath Singh Vs. Sri Narayan.
3. Raghunathji Vs. Bank of Bombay.

अनिवार्य है ।[1] परन्तु चैंक की स्थिति में अदाकर्त्ता (Drawee) की स्वीकृति आवश्यक नहीं होती है तथा अदाकर्त्ता केवल चैंक के आहर्ता के प्रति उत्तरदायी होता है, प्रापक के प्रति नहीं । इसके विपरीत, प्रतिज्ञा-पत्र की स्थिति में प्रपत्र का अदाकर्त्ता प्रापक के प्रति उत्तरदायी होता है ।

विनिमय-पत्र का स्वीकारक प्रपत्र का देय तिथि पर भुगतान करने के लिये बाध्य है । यदि स्वीकारक प्रपत्र का भुगतान नहीं करता है तब वह उस पक्षकार के प्रति उत्तरदायी समझा जायेगा जिस पक्षकार को, भुगतान न करने पर कोई क्षति वहन करनी पड़ती है । स्वीकारक का दायित्व पूर्ण होता है तथा आहर्ता की मृत्यु अथवा दिवालिया होने पर प्रभावित नहीं होता है । प्रपत्र का स्वीकारक अथवा प्रतिज्ञा-पत्र का लेखक अपनी स्वीकृति अथवा पृष्ठांकन से उत्तरदायी हो जाता है और यदि प्रपत्र में स्वीकृति से पूर्व कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया है तब, इसका स्वीकृति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है । **परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 41** के अनुसार, प्रपत्र का स्वीकारक जाली पृष्ठांकन की स्थिति में अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता है । यदि प्रपत्र स्वीकृत करने से पूर्व स्वीकारक यह जानता है कि प्रपत्र का पृष्ठांकन जाली है तथा वह प्रपत्र स्वीकार करता है तब यह समझा जाता है कि उसे जाली पृष्ठांकन का ज्ञान था और बाद में, वह इसके आधार पर अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता है । **परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 42** के अनुसार, यदि प्रपत्र किसी कल्पित नाम (Fictitous Name) में लिखा गया है तथा आहर्ता के आदेशानुसार देय है तब स्वीकारक यथाविधिधारी के प्रति अपने उत्तरदायित्व से इस आधार पर मुक्त नहीं हो सकता है कि प्रपत्र कल्पित नाम में लिखा गया है ।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 33 के अनुसार निम्नलिखित व्यक्ति विनिमय-पत्र स्वीकार कर सकते हैं—

(i) विनिमय-पत्र का अदाकर्त्ता (Drawee),

(ii) आदर के लिये स्वीकारक (Acceptor for Honour),

(iii) आवश्यकता में अदाकर्त्ता अथवा देनदार (Drawee in Case of Need),

(iv) संयुक्त नाम में देय प्रपत्र की स्थिति में समस्त अथवा कुछ अदाकर्त्ता (All or Some of Several Drawees) ।

यदि प्रपत्र संयुक्त अदाकर्त्ताओं के नाम में देय है तब, यदि वे एक फर्म के साझेदार नहीं हैं अथवा उन्हें स्पष्टतः अधिकार प्रदान नहीं किया गया है, वे अन्य अदाकर्त्ता की ओर से प्रपत्र स्वीकार नहीं कर सकते हैं ।

---

1. Harish Chandra Vs. M/s Ganga Singh & sons and others, (A·I R. 1974 Punjab & Haryana 156)
2. Jagjivan Vs. Ranchhoddas (A.I.R. 1954. S. C. 544)

(3) पृष्ठांकनकर्त्ता का दायित्व (Liability of Endorser)—यदि पृष्ठांकनकर्त्ता परक्राम्य प्रपत्र का पृष्ठाकन करके प्रपत्र पृष्ठांकिती (Endorsee) को सुपुर्द करता है तब विपरीत अनुबन्ध के अभाव मे, प्रपत्र का अनादरण होने की स्थिति मे, पृष्ठांकनकर्त्ता प्रपत्र के धारक के प्रति उत्तरदायी समझा जाता है। परन्तु, अनादरण की सूचना पृष्ठांकनकर्त्ता को देना अनिवार्य होता है। यदि अनादरण की सूचना पृष्ठाकनकर्त्ता को नही दी जाती है तब पृष्ठाकनकर्त्ता एवं उससे पूर्व के पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं। इस सम्बन्ध मे यह तथ्य महत्वपूर्ण होता है कि पृष्ठाकनकर्त्ता प्रपत्र के अनादरण के लिये उसी स्थिति मे उत्तरदायी होता है जबकि इससे विपरीत कोई अनुबन्ध नहीं किया गया है अर्थात् यदि पृष्ठांकन दायित्वरहित (Sans Recows) किया गया है तब पृष्ठाकनकर्त्ता अनादरण की स्थिति मे उत्तरदायी नहीं समझा जाता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 88 के अनुसार, यदि परक्राम्य प्रपत्र के पृष्ठांकन से पूर्व कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया है तब प्रपत्र के पृष्ठांकन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और पृष्ठाकनकर्त्ता प्रपत्र के लिये उत्तरदायी होता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 36 के अनुसार, यथाविधिधारी के प्रति पूर्व के समस्त पक्षकार उस समय तक उत्तरदायी समझे जाते हैं जब तक कि प्रपत्र का भुगतान नही कर दिया जाता है।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 40 के अनुसार, यदि परक्राम्य प्रपत्र का धारक पृष्ठाकनकर्त्ता की सहमति के बिना उससे पूर्व के पक्षकारों को जिनके विरुद्ध पृष्ठांकनकर्त्ता को अधिकार होता है, उनके दायित्व से मुक्त कर देता है तब पृष्ठांकनकर्त्ता प्रपत्र के धारक के प्रति उस सीमा तक मुक्त समझा जाता है जिस सीमा तक वह प्रपत्र का देय तिथि पर भुगतान होने पर मुक्त होता है।

परक्राम्य प्रपत्र में प्रपत्र से सम्बन्धित समस्त पक्षकार विनिमय-पत्र के स्वीकारक अथवा प्रतिज्ञा-पत्र या चैक के लेखक के जमानती अथवा प्रतिभू (Sureties) होते हैं तथा प्रत्येक पूर्व का पक्षकार अपने आगामी पक्षकार (Succeeding Party) के प्रति मूल देनदार समझा जाता है। परन्तु प्रपत्र के धारक के लिये प्रपत्र का आहर्ता मूल देनदार होता है तथा अन्य पक्षकार आहर्ता अथवा स्वीकारक के जमानती समझे जाते हैं।

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 122 के अनुसार, जाली पृष्ठाकन (Forged Endorsement) की स्थिति में प्रपत्र का पृष्ठांकनकर्त्ता अपने दायित्व से मुक्त नही होता है चूँकि कोई भी पृष्ठाकनकर्त्ता अपने बाद वाले पक्षकार द्वारा वाद प्रस्तुत करने पर पूर्व के पक्षकार की अनुबन्ध क्षमता अथवा हस्ताक्षर के आधार पर अपने दायित्व से मुक्त नही होता है। अतः प्रत्येक पृष्ठांकनकर्त्ता प्रपत्र का पृष्ठाकन करते समय पृष्ठांकिती से इस आशय का गर्भित अनुबन्ध करता है कि पूर्व के समस्त पक्षकारों के विशुद्ध हस्ताक्षर हैं।

(4) चैक के भुगतानकर्त्ता का दायित्व (Liability of Drawee of Cheque)—

चैक का अदाकर्त्ता बैंक होता है। चैक के आहर्ता द्वारा जारी किये गये चैक का भुगता करना बैंक का मूल दायित्व होता है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 31 अनुसार यदि आहर्ता के खाते में पर्याप्त धनराशि है और उस धनराशि का प्रयो चैक के भुगतान में हो सकता है तब बैंक को चैक का भुगतान करना चाहिए। यदि बैंक चैक का भुगतान करने में त्रुटि करता है तब वह आहर्ता के प्रति क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है। बैंक को चैक का भुगतान करते समय विभिन्न सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए।

(विस्तार के लिये कृपया देखें अध्याय—4, बैंकों का चैक भुगतान करने का दायित्व)

पक्षकारों का दायित्व से मुक्त होना

(Parties Discharge from Liability)

परक्राम्य प्रपत्र का लेखक, स्वीकारक अथवा पृष्ठांकनकर्त्ता निम्नलिखित परिस्थितियों में अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं—

(1) प्रपत्र के धारक द्वारा यदि प्रपत्र पर स्वीकारक अथवा पृष्ठांकनकर्त्ता का नाम इस उद्देश्य से काट दिया जाता है कि वह अपने दायित्व से मुक्त हो जाये, तब वह पक्षकार तथा उसके बाद के समस्त पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त समझे जाते हैं।

(2) प्रपत्र के धारक द्वारा लेखक, स्वीकारक अथवा पृष्ठांकनकर्त्ता को नाम काटने के अतिरिक्त अन्य किसी विधि से उनके दायित्व से मुक्त कर दिये जाते हैं। उदाहरणार्थ—आपसी करार के आधार पर।

(3) प्रपत्र वाहक को देय होने की स्थिति में अथवा कोरा पृष्ठांकित होने पर लेखक, स्वीकारक अथवा पृष्ठांकनकर्त्ता द्वारा भुगतान किये जाने पर समस्त पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त समझे जाते हैं।

(4) परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 83 के अनुसार, प्रपत्र का धारक यदि अदाकर्त्ता (Drawee) को प्रपत्र की स्वीकृति के लिये 48 घण्टों से अधिक का समय (जिसमें सार्वजनिक अवकाश का दिन सम्मिलित नहीं किया जाता है) प्रदान करता है तब उससे पूर्व के वे समस्त पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त समझे जाते हैं जिनसे ऐसी स्वीकृति प्राप्त करने के लिये सहमति प्राप्त नहीं की गयी है।

(5) परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 84 के अनुसार, चैक के धारक द्वारा चैक को अदाकर्त्ता के समक्ष भुगतान करने के लिये उचित समयावधि में प्रस्तुत न करने की स्थिति में चैक का आहर्ता उस सीमा तक अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है जिस सीमा तक आहर्ता को क्षति वहन करनी पड़ती है। उचित समयावधि का निर्धारण प्रचलित रीति-रिवाजों के आधार पर किया जाता है तथा इसके पश्चात् चैक का धारक अदाकर्त्ता बैंक के लेनदार के रूप में रुपया वसूल करने का अधिकारी होता है। परन्तु यह अधिकार उसी स्थिति में लागू समझा जाता है जबकि चैक प्रस्तुत करते समय आहर्ता के खाते में पर्याप्त धनराशि उपलब्ध हो।

(6) भुगतानकर्त्ता बैंक द्वारा चैक का यथाविधि भुगतान करने की स्थिति में बैंक अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। विस्तार के लिये कृपया देखिये, अध्याय 12—चैकों का भुगतान करते समय ध्यान रखने योग्य सावधानियाँ एवं बैंकों को सवैधानिक संरक्षण)

(7) यदि प्रपत्र का धारक विनिमय-पत्र पर शर्तसहित स्वीकृति प्राप्त करता है तब पूर्व के वे समस्त पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त समझे जाते हैं जिनसे शर्तसहित स्वीकृति प्राप्त करने की सहमति प्राप्त नहीं की गयी है। निम्नलिखित परिस्थितियों में शर्तसहित स्वीकृति (Qualified Acceptance) समझा जाता है—

(i) यदि स्वीकृति में प्रपत्र का भुगतान निश्चित घटना घटित होने पर देय होता है।

(ii) यदि प्रपत्र के स्वीकारक द्वारा अंशतः राशि के भुगतान की स्वीकृति प्रदान की गयी है।

(iii) यदि भुगतान के लिये कोई निर्दिष्ट स्थान नहीं है तथा स्वीकारक द्वारा किसी विशिष्ट स्थान पर भुगतान देय के लिये स्वीकृति प्रदान की जाती है और भुगतान अन्य किसी स्थान पर होने के लिये प्रतिबन्धित किया जाता है।

(iv) यदि भुगतान किसी निर्दिष्ट स्थान पर होना है परन्तु स्वीकारक उस स्थान के अतिरिक्त अन्य किसी स्थान पर भुगतान के लिये स्वीकृति प्रदान करता है और भुगतान इसके अतिरिक्त किसी अन्य स्थान पर होने के लिये प्रतिबन्धित किया जाता है।

(v) जब स्वीकारक प्रपत्र का भुगतान निर्धारित समयावधि के अतिरिक्त किसी अन्य अवधि में करने के लिये स्वीकृति प्रदान करता है।

(vi) जब विनिमय-पत्र एक से अधिक व्यक्तियों पर देय होता है और वे व्यक्ति आपस में साझेदार नहीं होते हैं तथा विनिमय-पत्र पर स्वीकृति समस्त अदाकर्त्ताओं द्वारा प्रदान नहीं की जाती है।

(8) यदि विनिमय-पत्र के धारक को स्वीकारकर्त्ता द्वारा भुगतान किया जाता है और स्वीकारकर्त्ता प्रपत्र अपने अधिकार में प्राप्त कर लेता है तब प्रपत्र से सम्बन्धित समस्त पक्षकारों के दायित्व समाप्त समझे जाते हैं।

प्रतिफलरहित परक्राम्य प्रपत्र

(Negotiable Instruments without Consideration)

परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 43 के अनुसार, यदि परक्राम्य प्रपत्र बिना प्रतिफल के लिखा गया है अथवा स्वीकार किया गया है तब प्रपत्र से सम्बन्धित पक्षकारों पर कोई उत्तरदायित्व नहीं होता है। भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 25 के अनुसार, कुछ परिस्थितियों को छोड़कर प्रत्येक अनुबन्ध में प्रतिफल होना अनिवार्य होता है अन्यथा अनुबन्ध व्यर्थ समझा जाता है। कालातीत ऋण को

अदायगी का अनुबन्ध अथवा भेंट (Gift) के अनुबन्ध में प्रतिफल आवश्यक नहीं समझा गया है। **परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम** की **धारा 118** के अन्तर्गत परक्राम्य प्रपत्रों में प्रतिफल प्राप्त हुआ समझा जाता है और यदि कोई पक्षकार इसके विरुद्ध कोई बात कहता है तब यह साबित करने का भार उसी पक्षकार पर होता है कि इसमें प्रतिफल का भुगतान नहीं किया गया है।

इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि प्रपत्र का हस्तान्तरण पृष्ठांकन अथवा बिना पृष्ठांकन द्वारा किया गया है और यह हस्तान्तरण मूल्य के लिये किया गया है तब हस्तान्तरिती हस्तान्तरणकर्त्ता अथवा पूर्व के पक्षकारों से रुपया वसूल कर सकता है। अतः यथाविधिधारी (Holder in Due Course) के अधिकार पर प्रतिफलरहित प्रपत्र का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। निभाव बिल (Accommodation Bills) की स्थिति में यदि प्रपत्र लिखते, स्वीकार करते अथवा पृष्ठांकित करते समय उस व्यक्ति द्वारा रुपये का भुगतान किया गया है जिसकी सहायता के लिये प्रपत्र लिखा गया है तब वह व्यक्ति उस व्यक्ति से रुपया वसूल नहीं कर सकता है जिसने सहायतार्थ प्रपत्र स्वीकार किया है। परन्तु सहायता करने वाला पक्षकार प्रपत्र के मूल्य के लिये धारक (Holder for Value) के प्रति पूर्ण उत्तरदायी होता है।

परक्राम्य प्रपत्र का अंशतः प्रतिफल (Partial Consideration) भुगतान किये जाने की स्थिति में, प्रपत्र का धारक उसी सीमा तक भुगतान प्राप्त करने का अधिकारी है जिस सीमा तक प्रतिफल का भुगतान किया गया है। परन्तु यह नियम केवल उस धारक पर लागू होता है जहाँ पर प्रपत्र के धारक का हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध (Immediate Relation) होता है। आहर्ता व स्वीकारक, आहर्ता व प्रापक, पृष्ठांकनकर्त्ता व पृष्ठांकिकी, प्रतिज्ञा-पत्र का स्वीकारक व प्रापक के बीच के सम्बन्ध प्रत्यक्ष समझे जाते हैं। मूल्य के लिये धारक अथवा यथाविधिधारी पर अंशतः प्रतिफल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

अवैधानिक साधनों से प्राप्त प्रपत्र
(Instruments Obtained by Unlawful Means)

परक्राम्य प्रपत्र के अन्तर्गत आहर्ता, स्वीकारक अथवा पृष्ठांकनकर्त्ता को उत्तरदायी बनाने के लिये प्रतिफल का होना अनिवार्य समझा जाता है। इसके अतिरिक्त प्रतिफल अवैधानिक नहीं होना चाहिये। **परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम** की **धारा 58** के अनुसार, यदि परक्राम्य प्रपत्र खो गया है अथवा धारक द्वारा धोखे से प्राप्त किया गया है अथवा अवैधानिक प्रतिफल में प्राप्त किया गया है तब यथाविधिधारी को छोड़कर कोई भी व्यक्ति विपत्र के लेखक, स्वीकारक अथवा पृष्ठांकनकर्त्ता के विरुद्ध विपत्र की रकम प्राप्त करने का अधिकारी नहीं होता है।

परक्राम्य प्रपत्र **खोने** (Lost) अथवा **चोरी होने** (Stolen) की स्थिति में प्रपत्र का धारक प्रपत्र पर कोई अधिकार प्राप्त नहीं करता है। परन्तु यदि धारक द्वारा

प्रपत्र किसी अन्य व्यक्ति को मूल्य के लिये हस्तान्तरित कर दिया जाता है तब वह व्यक्ति प्रपत्र पर शुद्ध अधिकार प्राप्त कर लेता है। इस विषय में यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है कि प्रपत्र का हस्तान्तरिती (Transferee) प्रपत्र को सद्भाव से दूषित स्वामित्व का ज्ञान न रखते हुए तथा पर्याप्त प्रतिफल के बदले में प्राप्त करता है। वाहक के देय प्रपत्र की स्थिति में यथाविधिधारी के अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है परन्तु आदेश पर देय प्रपत्र की स्थिति में यथाविधिधारी नहीं हो सकता है चूंकि इस स्थिति में किया गया पृष्ठांकन जाली होता है और जाली पृष्ठांकन में कोई भी बाद का धारक यथाविधिकारी नहीं बनता है।

प्रपत्र खोने की स्थिति में प्रपत्र के प्राप्तकर्त्ता को कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है परन्तु प्रपत्र का वास्तविक स्वामी देय तिथि से पूर्व प्रपत्र खोने पर प्रपत्र के आहर्ता से उचित क्षतिपूरक बॉण्ड के आधार पर प्रपत्र की अनुलिपि प्राप्त करने का अधिकारी होता है। यदि प्रपत्र के प्राप्तकर्त्ता ने प्रपत्र का भुगतान प्राप्त कर लिया है तब प्रपत्र का वास्तविक स्वामी प्राप्तकर्त्ता से रुपया वसूल करने का अधिकारी होता है।[1] प्रपत्र खोने की स्थिति में वास्तविक स्वामी को इस आशय की सूचना समस्त पक्षकारों को देनी चाहिए। प्रपत्र की देय तिथि पर वास्तविक स्वामी को प्रपत्र के भुगतान के लिये अदाकर्त्ता से प्रार्थना करनी चाहिए तथा अनादरण की स्थिति में अनादरण की सूचना समस्त पक्षकारों को भेजनी चाहिए। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि उपरोक्त प्रावधान केवल बिल पर लागू होते हैं। ये प्रतिज्ञा-पत्र पर लागू नहीं होते हैं। इसमें प्रपत्र के वास्तविक स्वामी को केवल प्रपत्र के आहर्ता के विरुद्ध अधिकार प्राप्त होते हैं।

धोखे (Fraud) से अथवा अवैधानिक प्रतिफल के लिये प्राप्त प्रपत्र की स्थिति में प्रपत्र के धारक को कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है परन्तु यथाविधिधारी के अधिकार प्रभावित नहीं होते हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य विशेष महत्वपूर्ण है कि यदि प्रपत्र पर स्वीकारक की स्वीकृति अथवा प्रतिज्ञा-पत्र में लेखक की स्वीकृति अनुचित दबाव (Undue Influence) अथवा धोखे से दी गई है तब प्रतिज्ञा-पत्र का लेखक अथवा विनिमय-पत्र का स्वीकारक उत्तरदायी नहीं होते हैं। यदि किसी प्रपत्र पर आहर्ता अथवा लेखक के हस्ताक्षर जाली होते हैं तब प्रपत्र व्यर्थ समझा जाता है और कोई भी पक्षकार यथाविधिधारी नहीं होता है।

जाली पृष्ठांकन (Forged Endorsement) की स्थिति में यथाविधिधारी के अधिकार पृष्ठांकन के रूप (Form) पर निर्भर करते हैं। कोरे पृष्ठांकन (Blank Endorsement) की स्थिति में जाली पृष्ठांकन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसमें मूल्य के लिये धारक का प्रपत्र पर विशुद्ध स्वामित्व समझा जाता है और वह प्रपत्र से सम्बन्धित उत्तरदायी पक्षकारों में से किसी भी पक्षकार पर वाद प्रस्तुत कर

1. Burn Vs. Morris.

है। इसके विपरीत पूर्ण पृष्ठांकन (Endorsement in Full) की स्थिति में कंकी को पृष्ठांकनकर्त्ता के हस्ताक्षर पर प्रपत्र प्राप्त होता है। जाली पृष्ठांकन स्थिति में अर्थात् यदि पृष्ठांकनकर्त्ता के हस्ताक्षर जाली हैं, मूल्य के लिये धारक या यथाविधिधारी को प्रपत्र पर कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है। परन्तु कनकर्त्ता अपने निकटतम् पृष्ठांकिती के प्रति पूर्ण उत्तरदायी होता है चूंकि कोई पृष्ठांकनकर्त्ता अपने पूर्व के पक्षकार की क्षमता के आधार पर अपने उत्तरदायित्व मुक्त नहीं होता है।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि अवैधानिक प्रतिफल अथवा अवैधानिक धनों से प्राप्त प्रपत्र की स्थिति में यथाविधिधारी के अधिकार प्रभावित नहीं होते और वह अपने से पूर्व के समस्त उत्तरदायी पक्षकारों के विरुद्ध अधिकार रखता । परन्तु जाली प्रपत्र अथवा जाली पृष्ठांकन (प्रपत्र आदेश पर देय हो अथवा पूर्ण ष्ठांकित हो) की स्थिति में प्रपत्र का धारक यथाविधिधारी नहीं बन सकता है।

SOLVED PROBLEMS

1. अ एक प्रपत्र ब के पक्ष में लिखता है। ब प्रपत्र का पृष्ठांकन स को, स द को तथा द प्रपत्र का पृष्ठांकन 'य' को करता है। य प्रपत्र पर स का नाम काट देता है। य को किन-किन व्यक्तियों के प्रति अधिकार प्राप्त होंगे?

A draws a bill in favour of B, B endorsed it in favour of C, C endorsed it in favour of D and D endorse it in favour of E. E cancelled the name of C. From whom persons can E exercise his right?

हल—य, द की सहमति के बिना स का नाम पृष्ठांकन में काट देता है। अतः स एवं द अपने दायित्व से मुक्त समझे जायेंगे। विपत्र का अनादरण होने की स्थिति में, य को अ और ब के प्रति अधिकार प्राप्त होंगे।

2. निम्नलिखित परिस्थितियों में धारक की स्थिति बतलाइये—

Please discuss the holder's position in the following conditions—

(i) A draws a bill on 'B' for acceptance but it was forged signed by A. Later on, Bill comes into the hand of D fo value.

(ii) A bill is indorsed 'pay to B or order'. It is lost an comes into the hand of X. Later on X indorsed it with forged si nature of B to C for value and in good faith.

(iii) A bill is indorsed 'pay to A or order'. A indorsed it Blank to B. Now Bill is lost and comes into the hand of C w gives it in good faith and for value to D.

(iv) A draws a bill in favour of B and B gives his acceptance under undue influence. A indorsed it to C for consideration after maturity.

(v) A draws a bill in favour of B and it was returned due to dishonour. A indorsed it to C for value. C has knowledge of such dishonour.

हल—(i) इस स्थिति में जाली बिल समझा जायेगा चूँकि इस पर आहर्ता के हस्ताक्षर जाली हैं। जाली प्रपत्र की स्थिति में कोई भी व्यक्ति यथाविधिधारी नहीं हो सकता है। अतः 'D' को कोई उपचार प्राप्त नहीं है।

(ii) इस स्थिति में प्रपत्र 'B' अथवा उसके आदेशानुसार देय है। प्रपत्र पर X द्वारा B के जाली हस्ताक्षर करके C को पृष्ठांकित किया जाता है। जाली पृष्ठांकन की स्थिति में, यदि प्रपत्र आदेश पर देय है अर्थात् प्रपत्र पर पृष्ठांकन किया गया है तब पृष्ठांकिती को यथाविधिधारी नही समझा जा सकता है। अतः C को कोई उपचार प्राप्त नहीं है। परन्तु C को X के विरुद्ध समस्त अधिकार प्राप्त होते हैं। परक्राम्य प्रपत्र की धारा 122 के अन्तर्गत प्रपत्र के धारक को पृष्ठांकनकर्त्ता के विरुद्ध अधिकार प्राप्त होते हैं तथा पृष्ठांकनकर्त्ता पूर्व के पक्षकारो की अनुबन्ध क्षमता अथवा दोषपूर्ण हस्ताक्षर के आधार पर अपने दायित्व से मुक्त नही समझा जाता है। C मूल्य के धारक के रूप में X से रुपया वसूली का अधिकार रखता है।

(iii) इस स्थिति में D को यथाविधिधारी समझा जायेगा चूँकि प्रपत्र पर कोरा पृष्ठांकन किया गया है जिसका परक्रामण मात्र सुपुर्दगी से किया जा सकता है। अतः D को पूर्व समस्त पक्षकारों पर अधिकार प्राप्त है।

(iv) इस स्थिति में C यथाविधिधारी नहीं हो सकता है चूँकि प्रपत्र में अवैधानिक प्रतिफल है तथा प्रपत्र का परक्रामण देय तिथि के पश्चात किया गया है। इसमें पृष्ठांकिती को पृष्ठांकनकर्त्ता से अच्छा अधिकार प्राप्त नही हो सकता है। अतः C को B के विरुद्ध कोई उपचार प्राप्त नहीं है।

(v) इस स्थिति में C यथाविधिधारी नही बन सकता है चूँकि उसे प्रपत्र के अनादरण की सूचना का ज्ञान प्राप्त नहीं है।

3. निम्नलिखित परिस्थितियों में परक्राम्य प्रपत्र के धारक के अधिकार बतलाइये—

Please discuss the rights of holder of negotiable Instrument in the following conditions—

(i) A owes B Rs. 5,000: B draws a bill on A for Rs. 8,000 and indorse it to C for value and in good faith.

(ii) A draws a bill on B for Rs. 2,000 and 'B' accepts it under threat. A indorse it to C.

हल—(i) इस स्थिति में प्रपत्र अंशतः प्रतिफल के लिये स्वीकार किया गया है। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 44 के अनुसार ऐसी स्थिति में स्वीकारक प्रतिफल की सीमा तक उत्तरदायी होता है। परन्तु यह उत्तरदायित्व केवल प्रत्यक्ष पक्षकार पर लागू होता है। अतः B A से केवल 5,000 रुपये वसूल करने का अधिकारी है। परन्तु C को प्रत्यक्ष पक्षकार (Immediate Party) नहीं कहा जा सकता है तथा C यथाविधिधारी है। अतः C A तथा B पर पूर्ण रकम के लिये वाद प्रस्तुत कर सकता है।

(ii) प्रपत्र के धारक के अधिकार उस स्थिति में प्रभावित नहीं होते हैं जबकि प्रपत्र कपट, धोखे आदि में लिखा गया है और प्रपत्र का धारक यथाविधि-धारी है। उपरोक्त परिस्थितियों में C प्रपत्र का धारक है और इसे उस समय तक यथाविधिधारी समझा जायेगा जब तक कि इसके विपरीत आशय के लिये कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जाता है [धारा 118 (g)]। अतः C A तथा B से अपना रुपया वसूल कर सकता है। परन्तु इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि A को B पर कोई उपचार प्राप्त नहीं है चूंकि प्रपत्र प्रतिफल के अभाव में तथा अवैधानिक रूप में स्वीकार किया गया है।

4. निम्नलिखित परिस्थितियों में कारण सहित उत्तर बतलाइये—

Please annswer with reason in the following situations—

(i) A draws a bill on B and sent to B for acceptance. But A forgets to put his signature thereon and bill is accepted by B. A transfers the bill to C for value. On due date bill is dishonoured. Can C recover the money from A and B ?

(ii) A make a Promissory Note for Rs. 1,000 for amount payable to C. Before delivery to C, A died. The legal representative delived the Note to C. In what extent are the legal representatives liable ?

(iii) A draws a bill on B and bill was accepted by B. Bill was lost in transit and C finds the bill. C forges the signature of A and transferre to D. D futher endrosed the bill to E. Discuss the right of E.

(iv) Messers Mehta Trading Co. enjoys a bills purchase limit. The company is in financial difficulties and the following cheque purchased on their account has been returned unpaid.

An order cheqe for Rs. 15,000 drawn by Laxmi Jewellers in favour of Shri Navnitlal Shah. The cheque bears the following endorsements: —

"Pay to K. R. Chokshi,
Navnitlal Shah"
"Pay to Mehta Trading Co.
K. R. Chokshi"

On your sending a notice to the drawers and other endrosers, your are informed by Shri Navnitlal Shah *that the chequs was stolen from him before he had endrosed the same.*

Please discuss the banb's rights *against, (i) Laxmi Jewellers,* (ii) Navnitlal Shah, (ii) K. R. Chokshi and (iv) Mehta Trading Co.

(C. A. I. I. B. Pat II, May, 1978)

हल—(i) उपरोक्त स्थिति में बिल पर आहर्ता के हस्ताक्षर नहीं हैं। ऐसा बिल व्यर्थ समझा जाता है तथा इस पर किसी भी पक्षकार को कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

(ii) परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 57 के अनुसार, मृतक के उत्तराधिकारी मात्र सुपुर्दगी के माध्यम से प्रपत्र का परक्रामण नहीं कर सकते हैं। उपरोक्त स्थिति में मृतक के उत्तराधिकारियों द्वारा प्रतिज्ञापत्र का मात्र सुपुर्दगी से परक्रामण किया गया है। अतः C को कोई उपचार प्राप्त नहीं है। इस स्थिति में उत्तराधिकारियों द्वारा पुनः पृष्ठांकन की आवश्यकता होती है।

(iii) उपरोक्त स्थिति में E को केवल D के विरुद्ध उपचार प्राप्त है चूंकि जाली पृष्ठांकन की स्थिति में कोई भी व्यक्ति प्रपत्र पर यथाविधिकारी नहीं बनता है। E द्वारा D से रुपया वसूल किया जा सकता है चूंकि D निकटतम पृष्ठांकनकर्ता है और E मूल्य के लिये धारक। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 122 के अन्तर्गत प्रपत्र के धारक द्वारा वाद प्रस्तुत करने पर पृष्ठांकनकर्ता को पूर्व पक्षकारों के जाली हस्ताक्षर के आधार पर कोई उपचार प्राप्त नहीं होता है।

(iv) उपरोक्त स्थिति में बैंक द्वारा मूल्य के बदले चैक का क्रय किया गया है। इसमें बैंक यथाविधिकारी नहीं हो सकता है चूंकि चैक पर जाली पृष्ठांकन है। इस स्थिति में, नवनीतलाल शाह एवं उनसे पूर्व के पक्षकारों को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है चूंकि उनके हस्ताक्षर जाली हैं। परन्तु जाली पृष्ठांकन के बाद अन्य पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकते हैं। परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 122 के अन्तर्गत यह प्रावधान है कि बिल के धारक को पृष्ठांकनकर्ता के विरुद्ध अधिकार प्राप्त है और बिल का पृष्ठांकनकर्ता पूर्व के पक्षकारों की क्षमता अथवा हस्ताक्षर के आधार पर अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता है। अतः बैंक मेहता ट्रेडिंग कम्पनी एवं के० आर० चौकसी के विरुद्ध अधिकार रखता है।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) अवयस्क को परक्राम्य प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने एवं परक्रामित करने का अधिकार प्रदान किया गया है। परन्तु इसके लिये वह स्वयं व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी नहीं होता है।

(2) विधिक प्रतिनिधि उस सीमा तक मृतक द्वारा लिखित प्रपत्र पर उत्तरदायी होते हैं जिस सीमा तक उन्हें मृतक की सम्पत्ति में से अंशदान प्राप्त होता है।

(3) परक्राम्य प्रपत्र पर लेखक स्वीकारक अदाकर्त्ता (Drawee) एवं पृष्ठांकनकर्त्ता उत्तरदायी होते हैं।

(4) प्रतिफलरहित अथवा अंशतः प्रतिफल का प्रपत्र के यथाविधिधारी के अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

(5) जाली प्रपत्र अथवा जाली पृष्ठांकन की स्थिति में कोई भी व्यक्ति यथाविधिधारी नहीं बनता है।

प्रश्न
(Questions)

1. परक्राम्य प्रपत्रों में कौन-कौन व्यक्ति पक्षकार होते हैं ? उनके दायित्वों का वर्णन करते हुये बतलाइये कि वे किन दशाओं में अपने दायित्व से मुक्त समझे जाते हैं ?

What are the parties relating to Negotiable Instruments ? What are the liabilities of the parties and how they discharge from their liabilitise?

2. प्रतिफल रहित अथवा अंशत प्रतिफल वाले परक्राम्य प्रपत्रों का यथाविधिधारी के अधिकारों पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

What is the effect of Negotiable Instruments without consideration or with partial consideration on the rights of holder in due course.

3. जाली पृष्ठांकन की स्थिति में पक्षकारों के दायित्व स्पष्ट कीजिये।

Discuss the liabilities of parties in case of forged endorsement.

4. परक्राम्य प्रपत्र के पक्षकार किन परिस्थितियों में अपने दायित्व से मुक्त समझे जाते हैं ?

In what circumstances are the parties of Negotiable Instruments are discharge from their liabilities ?

5. परक्राम्य प्रपत्र में निगम, फर्म, कम्पनी एवं संयुक्त हिन्दू परिवार की संवैधानिक स्थिति स्पष्ट कीजिये।

Discuss the statutory position of Corporation, Firm, Company and H.U.F. in Negotiable Instruments

6. परक्राम्य प्रपत्र में पृष्ठांकनकर्त्ता के दायित्वो को विस्तारपूर्वक समझाइये।

Describe in detail the liabilities of Endorser in Negotiable Instruments. □□□

14 बैंक ऋण के सिद्धान्त
(PRINCIPLES OF BANK LENDING)

बैंक ऋण के सिद्धान्त
(Principles of Bank Lending)

बैंक का मुख्य कार्य जनता से निक्षेप स्वीकार करना तथा उस निक्षेप को ऋणस्वरूप प्रदान करना होता है। बैंकिंग व्यवसाय का समस्त ढाँचा ऋण नीति पर आश्रित करता है। बैंकों की ऋण नीति को प्रभावित करने वाले तत्वों में सरकारी नीति, रिजर्व बैंक की नीति तथा बैंक की स्वयं की नीति महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती हैं। बैंक जनता के निक्षेपों के धारक होते हैं तथा यह रुपया माँग पर देय होता है। अतः बैंकों के लिये यह आवश्यक होता है कि वे जनता के निक्षेप का प्रयोग उन साधनों में करें जिनके माध्यम से रुपया सुरक्षित रह सके और उसमें तरलता विद्यमान हो अर्थात् रुपया तुरन्त नकदी के रूप में प्राप्त किया जा सके। बैंकों द्वारा रुपया प्रयोग के साधनों में ऋण एवं अग्रिम (Loan and Advances) महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंकों का सर्वाधिक धन विनियोजित होता है चूंकि इसी मद से बैंकों को आय प्राप्त होती है। प्रत्येक बैंक के दीर्घकालीन अस्तित्व के लिये यह आवश्यक होता है कि उसे अपने व्यवसाय से नियमित आय प्राप्त होती रहे। अतः बैंकों के लिये ऋण एवं अग्रिम साधन अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इसके अन्तर्गत रुपया विनियोजित करते समय बैंकों को विशिष्ट नियमों एवं सिद्धान्तों का ध्यान रखना अनिवार्य होता है। बैंकों के लिये ऋण नीति के निश्चित सिद्धान्तों की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों (Reasons) से अनुभव की जाती है—

(1) निक्षेपों के धारक (Holder of Deposits)—बैंक जनता के निक्षेपों के धारक होते हैं। वे स्वेच्छा से इस धन का प्रयोग नहीं कर सकते हैं। प्रत्येक बैंक को अपनी कुल माँग एवं समय देयताओं का एक निश्चित भाग तरल सम्पत्तियों में रखना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, बैंकों को कुल माँग एवं समय देयताओं का एक न्यूनतम प्रतिशत नकद राशि के रूप में रिजर्व बैंक के पास रखना अनिवार्य होता है। इसका मुख्य उद्देश्य जनता के निक्षेपों की सुरक्षा एवं तरलता होता है।

(2) सामाजिक न्याय (Social Justice)—बैंकों में ऋण नीति के सिद्धान्तों की आवश्यकता सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण होती है। आज के युग में बैंकों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य सामाजिक उत्थान होता है। बैंक रिजर्व बैंक एवं सरकारी नीतियों के अधीन अपने ऋणों का एक सुनिश्चित प्रतिशत भाग

कमजोर वर्गों के उत्थान के लिये उपलब्ध करवाते हैं। इसके अतिरिक्त गरीबों के लिये विभेदित ब्याजदरो वाला ऋण उपलब्ध करवाते हैं जिसमें 4% ब्याजदर पर ऋण प्रदान किया जाता है।

(3) पूंजी की कमी (Scarcity of Capital)—भारतवर्ष में पूंजी की कमी पायी जाती है। बैंको द्वारा ऋण नीति के सिद्धान्तों की आवश्यकता इस दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। बैंकों द्वारा उचित सिद्धान्तों का पालन करके इस कमी को निश्चित सीमा तक दूर किया जा सकता है।

(4) मांग की अधिकता (Excess of Demand)—भारतवर्ष में ऋण की आवश्यकता अत्यधिक प्रबल पायी जाती है। यहां पर धन के मांग का आधिक्य है। अतः बैंकों को धन की पूर्ति के लिये निश्चित सिद्धान्तों की आवश्यकता होती है।

उपरोक्त कारणों से स्पष्ट होता है कि बैंक के पास वित्तीय संसाधनों की कमी होती है और उन ससाधनों का अधिकतम प्रयोग करके बैंक लाभ अर्जित करना चाहते हैं। इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुये, बैंकों को ऋण प्रदान करने से पूर्व निम्नलिखित सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिये –

(1) सुरक्षा (Safety)—बैंक द्वारा ऋण प्रदान करते समय ऋण की सुरक्षा का विशेष ध्यान रखा जाता है। सुरक्षा से अभिप्रायः बैंक ऋण की वसूली से होता है। ऋण की वसूली नियमित होनी चाहिये। सुरक्षा का मूल्यांकन ऋणी के व्यक्तित्व (Character), ऋण का उद्देश्य (Object), ऋणी की सम्पत्ति (Property) आदि तत्वो को ध्यान में रखते हुये किया जाता है। बैंक ऋण प्रदान करते समय ऋणी की संपार्श्विक प्रतिभूतियों (Collateral Security) के अतिरिक्त तृतीय व्यक्ति की प्रत्याभूति (Guarantee) भी प्राप्त करते हैं। सुरक्षा के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुये बैंकों को भागीदारी ऋण (Participating Loan) अथवा सघीय ऋण (Consortium Advance) के रूप मे वित्त सुविधा प्रदान करनी चाहिये। इससे, बैंकों के ऋण की सुरक्षा बनी रहती है चूंकि इसमें अन्य बैंक भी ऋण प्रदान करते है। जिससे एक बैंक की ऋण सीमा कम रहती है और ऋण सीमा के लिये समस्त बैंको द्वारा प्रत्येक पहलू का अध्ययन किया जाता है। इसके अतिरिक्त, बैंको द्वारा विविध प्रक्रियाओं के लिये ऋण प्रदान किया जाना चाहिये और ऋणियो मे विविधता (Diversification) होनी चाहिये अर्थात् विभिन्न वर्ग के व्यक्तियो को ऋण प्रदान करना चाहिये। एक ही प्रक्रिया में अथवा कुछ सीमित वर्ग के व्यक्तियों को ऋण प्रदान नही करना चाहिये चूंकि इससे ऋण की सुरक्षा मे कमी आती है। अतः ऋण प्रदान करते समय बैंकों के लिये ऋण की सुरक्षा प्रमुख उद्देश्य होना चाहिये।

(2) व्यक्ति (Person)—बैंक द्वारा ऋण प्रदान करते समय ऋणी का व्यक्तिगत अस्तित्व विशेष महत्व रखता है। बैंक द्वारा उसी व्यक्ति को ऋण प्रदान किया जाना चाहिये जो अनुबन्ध करने में सक्षम है अर्थात् जो

मस्तिष्क का है और जिसे विधि द्वारा अनुबन्ध करने के अयोग्य घोषित नहीं किया गया है। यदि बैंक द्वारा अनुबन्ध योग्य व्यक्ति के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति को ऋण प्रदान किया जाता है तब ऋण का अनुबन्ध व्यर्थ होगा और ऋण की वसूली असम्भव बन जायेगी। अतः व्यक्ति की अनुबन्ध क्षमता अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त, ऋणी का अस्तित्व (Entity) भी बैंक के लिये महत्वपूर्ण होता है चूंकि ऋणी व्यक्ति, फर्म अथवा कम्पनी होने की स्थिति में ऋण प्रदान करते समय बैंकों को विभिन्न सावधानियाँ बरतनी पड़ती हैं। व्यक्ति का अध्ययन करते समय ऋणी की ऋण क्षमता (Credit Worthiness) का अनुमान लगाना अनिवार्य होता है।

बैंक बेजमानती ऋण (Clean Loan) प्रदान करते समय ऋणी की ऋण क्षमता का विशेष ध्यान रखता है। ऋणी की ऋण क्षमता निम्नलिखित पहलुओं पर निर्भर करती है—

(i) ऋणी का चरित्र (Character of Borrower)—ऋणी के चरित्र में उसकी ख्याति, कर्त्तव्य के प्रति भावना, ईमानदारी, नियमितता, उत्तरदायित्व की भावना आदि अनेक गुण सम्मिलित किये जाते हैं। अच्छे चरित्र के व्यक्ति की ऋण क्षमता अच्छी समझी जाती है।

(ii) क्षमता (Capacity)—ऋण क्षमता का अनुमान लगाते समय ऋणी की तकनीकी, वित्तीय व प्रबन्धकीय क्षमता एवं अनुभव को ध्यान में रखा जाता है। ऋणी द्वारा ऋण उपलब्ध करने की क्षमता एवं वस्तु के विपणन की क्षमता का अनुमान भी अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इसके अतिरिक्त जिस संस्थान में ऋण लगाया जा रहा है उसकी भावी सम्भावनाओं एवं उपक्रम की सुदृढ़ता (Soundness) को ध्यान में रखना चाहिये।

(iii) पूंजी (Capital)—ऋणी की ऋण क्षमता का अनुमान लगाते समय ऋणी की पूंजी का महत्वपूर्ण योगदान होता है। बैंक ऋण प्रदान करते समय ऋणी के फण्ड भी उपक्रम में वियोनिजित करवाना चाहता है। इससे ऋणी का व्यक्तिगत हित उपक्रम में सम्मिलित रहता है।

ऋणी की ऋण क्षमता का अनुमान निम्नलिखित विधियों से लगाया जा सकता है—

(a) बैंकों द्वारा सुरक्षित ऋण 10 लाख रुपये तथा असुरक्षित ऋण 5 लाख रुपये से अधिक प्रदान करने की स्थिति में, बैंक रिजर्व बैंक के **ऋण सूचना ब्यूरो** (Credit Information Bureau) से ऋणी की ऋण ग्राह्यता के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त कर सकता है।

(b) बैंक ऋणी का साक्षात्कार (Interview) करके ऋण ग्राह्यता का अनुमान लगा सकता है।

(c) बैंक अन्य वित्तीय संस्था अथवा बैंक (Bank) से (जिनसे ऋणी का पूर्व सम्बन्ध रहा है) ऋणी की ऋण ग्राह्यता का अनुमान लगा सकता है।

(d) बैंक व्यापारी के आर्थिक चिट्ठे व लाभ-हानि खाते (Balance Sheet and Profit and Loss A/c) का विश्लेषण करके उसकी ऋण ग्राह्यता का अनुमान लगा सकता है।

(e) यदि ऋणी का बैंक में कोई पूर्व खाता है तब उस खाते में हुये संव्यवहारों (Transactions) का अध्ययन करके उसकी ऋण क्षमता का अनुमान लगाया जा सकता है।

अतः बैंक उपरोक्त स्रोतों से ऋणी की ऋण ग्राह्यता का अनुमान लगा सकता है।

(3) लाभदायकता (Profitability)—बैंक ऋण प्रदान करने का कार्य लाभ के लिये करते हैं। ऋण प्रदान करते समय केवल उन्हीं साधनों (Projects) में ऋण प्रदान किया जाना चाहिये जिनमें बैंक को आय अर्जित होती है। लाभ के पहलू को ध्यान में रखते हुए ऋण की सुरक्षा एवं तरलता के पहलू को भी ध्यान में रखना चाहिये। परन्तु नवीन बैंकिंग पद्धति के अन्तर्गत बैंकों के सामाजिक दायित्व पर विशेष बल दिया गया है। अतः लाभ प्राप्त करने के लिये ऋणों का उचित मिश्रण (Mix) होना चाहिये अर्थात् ऋण विभिन्न कार्यों के लिये दिये जाने चाहियें।

(4) तरलता अथवा अर्थ सुलभता (Liquidity)—बैंक ऋण प्रदान करते समय दो प्रकार के ऋण प्रदान करते हैं। प्रथम, माँग पर देय ऋण (Demand Loan) इन ऋणों का भुगतान माँगने पर तुरन्त किया जाता है। व्यवहार में, माँग पर देय ऋण एक बैंक द्वारा दूसरे बैंकों को दिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त बैंक, सावधि जमा रसीद की प्रतिभूति पर ऋणी को माँग पर देय ऋण प्रदान करता है। एक अनुमान के अनुसार बैंक ऋणों का बहुत बड़ा भाग सावधि ऋण के रूप में प्रदान किया जाता है। इससे बैंकों के ऋण की तरलता बनी रहती है और बैंकों को बहुत अधिक मात्रा में नकद कोष रखने की आवश्यकता कम हो जाती है। द्वितीय, सावधि ऋण (Term Loan)। इन ऋणों में बैंक अल्पकालीन, मध्यकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण प्रदान करते हैं। अल्पकालीन ऋण एक वर्ष की अवधि से तीन वर्ष तक के लिये प्रदान किये जाते हैं तथा मध्यकालीन ऋण 5 वर्ष की अवधि तक देय होते हैं। 5 वर्ष से लम्बी अवधि के ऋण दीर्घकालीन ऋण समझे जाते हैं। बैंक को ऋण प्रदान करते समय तरलता को ध्यान में रखना चाहिये अर्थात्, आवश्यकता पड़ने पर ऋण तुरन्त वसूल किये जा सकें। अतः बैंक को दीर्घकालीन ऋणों की तुलना में, अल्पकालीन एवं मध्यकालीन ऋण ही प्रदान करने चाहियें। इसके अतिरिक्त बैंक जिन प्रतिभूतियों की जमानत पर ऋण प्रदान करते हैं, वे प्रतिभूतियाँ बिक्री साध्य होनी चाहियें।

(5) उद्देश्य (Object)—बैंक ऋण प्रदान करते समय ऋण लेने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हैं। ऋण केवल उत्पादक कार्यों अथवा सेवाओं के लिये दिये जाने चाहियें। ऋण का उद्देश्य बैंक के लिये अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है।

शील पूंजी (Working Capital) के लिये प्राप्त किया जाता है तब बैंक सरलता से ऋण प्रदान कर सकते हैं चूंकि इसमें ऋण की वसूली सरलता से हो सकती है। कार्यशील पूंजी के लिये ऋण व्यवसाय को चलाने के लिये प्राप्त किया जाता है। इसके विपरीत स्थायी प्रकृति के ऋण प्रदान करते समय बैंक अनेक सावधानियों को ध्यान में रखते हैं चूंकि इसमें ऋण प्राप्ति का उद्देश्य मशीनरी, भवन आदि क्रय करना होता है। इसमें ऋण लम्बी अवधि के लिये प्रदान किये जाते हैं तथा ये ऋण सावधि ऋण (Term Loan) समझे जाते हैं। इसके अतिरिक्त, ऋण का उद्देश्य वैधानिक एवं स्वीकार्य होना चाहिये। ऋण असामाजिक अथवा अवैधानिक कार्य के लिये प्रदान नहीं किया जाना चाहिए।

(6) **जोखिम (Risks)**—व्यवसाय का मूल स्वरूप जोखिम पर निर्भर करता है। बैंक का व्यवसाय भी जोखिम से परिपूर्ण होता है। जोखिम के अभाव में लाभ की आशा करना मात्र कल्पना साबित होती है। अतः व्यवसाय में लाभ उसी स्थिति में प्राप्त किया जा सकता है जबकि व्यवसाय में जोखिम होता है। बैंक को ऋण प्रदान करते समय अनेक जोखिम वहन करने होते हैं। अतः जोखिम को कम करने के उद्देश्य से बैंक को अपने ऋण एक ही संस्थान में नहीं लगाने चाहियें। बैंकों को सुरक्षा ध्यान में रखते हुए ऋणों की **विविधता** (Diversification) ध्यान में रखनी चाहिये और ऋण अनेक संस्थानों को प्रदान करने चाहियें। उपरोक्त नीति को ध्यान में रखते हुए बैंक अपना जोखिम कम कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, ऋणी से पर्याप्त मात्रा में प्रतिभूतियाँ (Securities) प्राप्त करके ऋण की सुरक्षा को मजबूत किया जा सकता है।

(7) **सरकारी निर्देश (Government's Directives)**—आधुनिक युग में बैंकों पर सामाजिक उत्तरदायित्व होता है। सरकार द्वारा समय-समय पर बैंक को निर्देश दिये जाते हैं कि ऋण का अमुक भाग **प्राथमिकता** (Priority) के आधार पर दिया जाये एवं अमुक भाग **कृषि विकास** (Agriculture Development) के लिये दिया जाये। सरकार द्वारा ऋण नीति के सम्बन्ध में अनेक निर्देश जारी किये जाते हैं। बैंकों को ऋण प्रदान करते समय सरकार द्वारा जारी किये गये निर्देशों को ध्यान में रखना चाहिये।

सरकारी नीतियों के अतिरिक्त रिजर्व बैंक की नीतियों को भी ऋण प्रदान करते समय ध्यान में रखना आवश्यक होता है। उदाहरणार्थ—तरल कोषानुपात, वैधानिक नकद कोष एवं ऋण प्राधिकरण योजना द्वारा रिजर्व बैंक ऋणों पर प्रतिबन्ध लगाता है।

(8) **उपक्रम (Project)**—बैंक द्वारा उपरोक्त समस्त तत्वों का अध्ययन करने के पश्चात् उपक्रम की तकनीकी, प्रबन्धकीय वित्तीय एवं आर्थिक क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। इसमें उपक्रम का अध्ययन करते समय विपणन, शक्ति (Power) एवं यातायात सुविधाओं को ध्यान में रखा जाता है। इसके द्वारा बैंक ऋण

की सुरक्षा एवं उद्देश्य का अध्ययन भी करते हैं। अतः ऋण प्रदान करने से पूर्व उस उपक्रम का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना चाहिए जिसमें ऋण लगाया जा रहा है। उपक्रम के सम्बन्ध में निर्णय के समय ऋणी उद्देश्य, ऋण की अवधि, ऋण की राशि आदि तत्वों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। उपक्रम के सम्बन्ध में उचित निर्णय लेने पर ऋण को नियमित अदायगी (Repayment) एवं उससे आय (Income) प्राप्ति सम्भव होती है। उपक्रम के आधार पर ही ऋण की राशि (Quantam of Loan) एवं अवधि (Period) का अनुमान लगाया जाता है। यदि उपक्रम में अधिक वित्त की आवश्यकता है और बैंक द्वारा ऋण उचित सीमा में स्वीकृत नहीं किया जाता है तब उपक्रम बीमार इकाई (Sick Unit) की ओर अग्रसर होने लगेगा। इससे उपक्रम में अल्पपूँजीकरण की समस्यायें उत्पन्न हो जायेंगी। इसके विपरीत, यदि उपक्रम में बैंक द्वारा अधिक ऋण प्रदान किया जाता है तब उपक्रम में अतिपूँजीकरण की स्थिति होगी और बैंक द्वारा कम ब्याज दर पर अधिक ऋण प्रदान करने से, बैंक को आय की हानि वहन करनी पड़ेगी। अतः उपक्रम में ऋण की आवश्यकता का सही अनुमान लगाना अनिवार्य होता है। बैंक द्वारा ऋण का अनुमान वित्तीय विवरणों के आधार पर लगाया जाता है। उपक्रम की आवश्यकता के अनुसार ही ऋण की अवधि का अनुमान लगाया जाता है।

अतः ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंकों द्वारा उपरोक्त समस्त सिद्धान्तों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। यदि उपरोक्त समस्त तथ्य सन्तोषजनक पाये जाते हैं तब बैंक ऋण प्रदान करने का निश्चय करते हैं। ऋण प्रदान करते समय बैंक ऋणी से प्रतिभूति (Security) प्राप्त करते हैं। ऋणी की प्रतिभूति ऋण का बीमा (Insurance) समझी जाती है। अतः प्रतिभूति विपणन योग्य होनी चाहिये जिसका मूल्य सरलता से ज्ञात किया जा सकता हो और प्रतिभूति का मूल्य स्थिर होना चाहिये। इसके अतिरिक्त प्रतिभूति का स्वामित्व अन्तरणीय (Transferable) होना चाहिये अर्थात् प्रतिभूति बैंक के हित में अन्तरण हो सकती हो। ऋण प्रदान करने के पश्चात् बैंकों को मूल्यांकन (Evaluation) करना चाहिए। इसके लिये ऋण का निरीक्षण एवं अनुवर्तन (Inspection and Followup) किया जाता है। अतः ऋण की वसूली के लिये ऋण प्रदान करने के पश्चात् भी बैंकों के लिये निश्चित सिद्धान्तों का पालन करना अनिवार्य होता है।

बैंकों द्वारा उपरोक्त समस्त सिद्धान्तों का पालन करते हुये ऋण प्रदान करना असम्भव समझा जाता है। अतः बैंक एक आदर्श ऋण प्रदान करते हैं। आदर्श ऋण से अभिप्राय उस ऋण से होता है जो विश्वसनीय ऋणी को पूर्वनिश्चित उद्देश्य के लिये उस कार्य के लिये प्रदान किया जाता है जिसके सम्बन्ध में ऋणी को पूर्ण अनुभव प्राप्त है तथा ऋण उस विधि से प्रदान किया जाता है जिससे ऋण का लक्ष्य प्राप्त हो सकता है। ऋण की अदायगी एक उचित अवधि के पश्चात देय होती है।

अतः स्पष्ट होता है कि बैंक अपने ऋण प्रदान करते समय विभिन्न सिद्धान्तों

को ध्यान में रखते हैं। उपरोक्त सिद्धान्तों के अतिरिक्त वैंक की ऋण प्रक्रिया (Lending Activity) को प्रभावित करने वाले तत्वों में रिजर्व बैंक की नीति, सरकारी नीति, निक्षेपों का मांग पर देय होना तथा बैंक की स्वायत्त नीतियाँ महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। वैंकों द्वारा इन नीतियों का पालन करना अनिवार्य होता है। अतः वैंकों को ऋण प्रदान करते समय विभिन्न सिद्धान्तों एवं नीतियों का पालन करना चाहिए।

प्रश्न
(Questions)

1. वैंकों को ऋण प्रदान करते समय किन-किन सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए ?

What are the principles that should be taken by the bank in granting a loan ?

2. उन सिद्धान्तों को समझाइये जो वैंकों को ऋण एवं अग्रिम प्रदान करते समय मार्गदर्शित करते हैं।

Explain the principles that guide the banks in granting loans and advances. *(Madras B. Com.)*

3. "वर्तमान समय में ऋणों की सुरक्षा का सिद्धान्त अत्यन्त महत्वपूर्ण नहीं रहा है। अब ऋणों के सामाजिक पहलू को ध्यान में रखा जाता है।" इस कथन की विवेचना कीजिये।

"The principle of safety of loan is not more important nowadays. Now there is a great emphasises on social aspect of loans." Discuss this statement.

4. वैंक के ऋण सिद्धान्तों की आवश्यकता की विवेचना कीजिये।

Discuss the necessity of Principles of Banks' lending.

5. वैंकों द्वारा ऋण व अग्रिम प्रदान करने में उनका मार्गदर्शन करने वाले सिद्धान्तों को समझाइये।

Explain the principles that guide the banks for granting loan and advances. *(Gorakhpur B. Com. 1984)*

□□□

15 बैंकों के कोष
(BANKS' FUNDS)

बैंक कोषों का स्रोत
(Sources of Bank Funds)

आधुनिक युग में बैंको का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है। आज देश का आर्थिक विकास बैंकिंग प्रणाली पर निर्भर करता है। बैंक किसी भी राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक स्तर को ऊपर उठाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। राष्ट्र द्वारा निर्धारित नीतियों एवं लक्ष्यों को परिपूर्ण करने में बैंको की भूमिका प्रशंसनीय है। बैंक से आशय उस संस्थान से है जो जनता से निक्षेप (Deposits) स्वीकार करने एवं ऋण (Loans) प्रदान करने का कार्य करते हैं। बैंको में कोष प्राप्त करने का मुख्य स्रोत जनता के निक्षेप होते हैं। एक अनुमान के अनुसार, बैंको के कुल कोषों में लगभग 85 प्रतिशत भाग जनता के निक्षेपों द्वारा प्राप्त किया जाता है। साधारणतः बैंकों के कोषों के स्रोतों में बैंक की दत्त पूंजी (Paid Up Capital), जनता के निक्षेप (Deposits) तथा अन्य बैंकिंग संस्थाओं से ऋण (Borrowings from Other Banks) सम्मिलित किये जाते हैं। इन स्रोतों में सर्वाधिक योगदान जनता के निक्षेपों का होता है। समस्त बैंकिंग पद्धति इसी के ऊपर आश्रित करती है। भारतवर्ष में व्यापारिक एवं अनुसूचित बैंको के सितम्बर 1985 तक कुल निक्षेप लगभग 77,910 करोड़ रुपये के थे। बैंक जनता के निक्षेप विभिन्न प्रकार के खातों (Accounts) में स्वीकार करते हैं, उदाहरणार्थ—बचत खाता (Saving Account), चालू खाता (Current Account), सावधि जमा खाता (Term Deposit Account) आदि। इसके अतिरिक्त, बैंक रिजर्व बैंक अथवा राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक अथवा औद्योगिक विकास बैंक से पुनर्वित्त की सुविधायें प्राप्त करके भी कोष प्राप्त करने का कार्य सम्पन्न करते हैं।

बैंक का मुख्य कार्य जनता से निक्षेप स्वीकार करके ऋण प्रदान करना है। बैंक उन संसाधनों से निक्षेप स्वीकार करते हैं जिनको धन की तुरन्त आवश्यकता नहीं होती है तथा इस धन का प्रयोग उन संसाधनों में करते हैं जिनमें धन की आवश्यकता अनुभव की जाती है। बैंक ऋण प्रदान करने का कार्य पूर्ण सावधानी ध्यान में रखते हुये करते हैं तथा यह कार्य सुनिश्चित सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुये किया जाता है। अतः बैंकों के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि वे बैंक कोषों का प्रबन्ध निर्धारित नियमों के अधीन करें।

वैंक कोषों का प्रयोग
(Uses of Bank Funds)

वैंक अपने कोषों का प्रयोग निर्धारित नीतियों एवं नियमों के अधीन करते हैं। कोषों का प्रयोग करते समय, वैंक कोषों की तरलता, सुरक्षा एवं अपनी आय का विशेष ध्यान रखते हैं। सामान्यतः वैंक अपने कोषों का प्रयोग निम्नलिखित साधनों में करते हैं—

(1) तरल आस्तियाँ,

(2) ऋण एवं अग्रिम,

(3) स्थायी आस्तियाँ ।

तरल आस्तियाँ
(Liquid Assets)

वैंकों के लिये तरलता का विशेष महत्व होता है। वैंक जनता के निक्षेप का धारक होता है और यह निक्षेप जनता द्वारा माँगने पर व्याज सहित तुरन्त देय होता है। अतः वैंकों को अपने कोषों का एक महत्वपूर्ण भाग तरल कोषों में रखना पड़ता है। इसके लिये वैंक तरल आस्तियों (Current Assets) में अपने कोष विनियोजित करते हैं। तरल आस्तियों में निम्नलिखित आस्तियाँ सम्मिलित की जाती हैं—

(i) नकद कोष (Cash Reserve),

(ii) माँग अथवा अल्पकालीन सूचना पर देय धन (Money at Call and Short Notice),

(iii) निवेश अथवा विनियोग (Investments)।

नकद कोष
(Cash Reserve)

वैंक अपनी तरल सम्पत्ति का एक महत्वपूर्ण भाग नकदी के रूप में अपने पास रखते हैं जिससे वैंक दिन-प्रतिदिन के लेन-देनों का निपटारा कर सकें। यह नकद अथवा रोकड़ कोष वैंक अपने पास अथवा स्टेट वैंक अथवा किसी अन्य वैंक में रखते हैं। नकद कोष का वैंकों के लिये व्यापक महत्व है। वैंकों की शोधन क्षमता इसी पर निर्भर करती है। परन्तु आवश्यकता से अधिक नकद कोष रखने की स्थिति में वैंकों को उस राशि पर व्याज की हानि होती है जिससे वैंकों को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। अतः वैंक अपनी दूरदर्शिता एवं अनुभव के आधार पर सन्तुलित रोकड़ कोष रखते हैं। रोकड़ कोष का आकार निम्नलिखित तत्वों पर निर्भर करता है—

(i) वैंकों का वैधानिक अस्तित्व होने के कारण, उन्हें निश्चित विधिक आवश्यकतायें (Legal Requirements) पूरी करना अनिवार्य होता है। भारतवर्ष

में नकद कोष के सम्बन्ध मे कोई अनिवार्यता नहीं है परन्तु तरल आस्तियों के सम्बन्ध में निम्नलिखित दो आवश्यकतायें पूर्ण करना अनिवार्य होता है—

(a) नकद कोषानुपात (Cash Reserve Ratio—CRR)—इसमे प्रत्येक बैंक को अपनी कुल मांग एवं सावधि देयताओं का कुछ न्यूनतम भाग रिजर्व बैंक के पास नकदी के रूप में रखना अनिवार्य है। यह न्यूनतम राशि 3 प्रतिशत से लेकर 15 प्रतिशत तक हो सकती है। वर्तमान समय मे यह दर 9 प्रतिशत है। परन्तु 11 नवम्बर, 1983 के पश्चात मांग एव सावधि देयताओं में वृद्धि पर 10 प्रतिशत अतिरिक्त नकद कोष (Incremental Cash Reserve) रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया के पास जमा किया जायेगा। इस अतिरिक्त नकद कोष पर रिजर्व बैंक द्वारा ब्याज का भुगतान किया जाता है। 14 नवम्बर, 1984 से यह ब्याज दर 10 प्रतिशत वार्षिक है।

(b) वैधानिक तरल कोषानुपात (Statutory Liquidity Ratio)—इसके अन्तर्गत प्रत्येक बैंक को अपनी कुल मांग एवं समय देयताओं का एक निश्चित प्रतिशत भाग तरल कोषो में रखना अनिवार्य होता है। तरल कोषो मे नकद कोष, सोना तथा सरकारी प्रतिभूतियो मे विनियोग सम्मिलित किया जाता है। रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया को यह अधिकार प्राप्त है कि वह यह प्रतिशत निर्धारित करता है तथा यह 25 प्रतिशत से 40 प्रतिशत तक निर्धारित किया जा सकता है। 6 जुलाई, 1985 से यह 37 प्रतिशत निर्धारित किया गया है। इस सम्बन्ध मे यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि वैधानिक तरल कोषानुपात मे रिजर्व बैंक के पास जमा नकद शेष उस सीमा तक सम्मिलित नही किये जाते हैं जिस सीमा तक नकद शेष जमा करवाना अनिवार्य होता है। यदि निर्धारित समय से अधिक रिजर्व बैंक में जमा है तब उस आधिक्य को तरल कोष मे सम्मिलित किया जायेगा।

अतः स्पष्ट होता है कि नकद कोष को प्रभावित करने वाले घटको में विधिक आवश्यकता के घटक का नकद कोष पर अप्रत्यक्ष प्रभाव होता है चूंकि मात्र नकद कोष के सम्बन्ध मे कोई अनिवार्यता नही है वरन् नकद कोष को प्रभावित करने वाले तत्वों के सम्बन्ध में अनिवार्यतायें निश्चित की गयी हैं।

(ii) बैंकों के ग्राहकों की आदत (Habit) तथा व्यवसाय की प्रकृति रोकड़ कोष का आकार निर्धारित करने मे सहायक सिद्ध होती है। यदि ग्राहक चैक सुविधा का अधिक प्रयोग करते हैं तब कम नकद कोष की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार व्यस्तता की अवधि (Busy Season) मे नकद कोष की अधिक आवश्यकता अनुभव होती है चूंकि इसमे कृषि के लिये अधिक धन की आवश्यकता होती है।

(iii) यदि उस स्थान पर समाशोधन गृह (Clearing House) की व्यवस्था है जहाँ पर बैंक व्यवसाय कर रहा है तब उस क्षेत्र के बैंकों को अपेक्षाकृत कम कोष की आवश्यकता पड़ती है चूंकि उनके अधिकांश लेन-देन आपसी लेन देन से समाप्त हो जाते हैं।

(iv) नकद कोष का आकार जमा खातों के आकार एवं स्वभाव (Size and Nature of Deposit Account) पर निर्भर करता है। यदि बैंक में चालू खाते अधिक संख्या में पाये जाते हैं तब उस बैंक को नकद कोष अधिक रखना पड़ता है। इसके विपरीत, यदि बैंक में सावधि जमा खाते अधिक हैं तब बैंक को कम मात्रा में नकद कोष रखना पड़ता है। इसी प्रकार, नकद कोष का आकार खातों के आकार पर निर्भर करता है। यदि बैंक में छोटी-छोटी रकम के अधिक खाते हैं तब बैंक को कम रोकड़ कोष की आवश्यकता अनुभव होती है। इसके विपरीत, यदि बैंक में बड़ी रकम के खाते हैं तब बैंक को उनकी माँग की पूर्ति करने के लिये अधिक नकद कोष की आवश्यकता पड़ती है।

(v) बैंकों को अग्रिमों तथा भुनाये गये विपत्रों की प्रत्याभूति पर रिजर्व बैंक से ऋण सुविधा प्राप्त हो सकती है। यदि रिजर्व बैंक की पुनर्वित्त सुविधा (Refinance Facility) सरलता से प्राप्त हो जाती है तब बैंकों को कम मात्रा में नकद कोष रखने की आवश्यकता पड़ती है।

(vi) रिजर्व बैंक द्वारा प्रमुख स्थानों पर मुद्रा तिजोरी (Currency Chest) की सुविधायें प्रदान की जाती हैं। यदि किसी स्थान पर रिजर्व बैंक की शाखा नहीं है तब उस स्थान पर स्टेट बैंक अथवा राष्ट्रीयकृत बैंक मुद्रा तिजोरी का कार्य करते हैं। इसके अन्तर्गत प्रत्येक बैंक को रुपया निकालने अथवा जमा कराने का अधिकार प्राप्त होता है। नकद कोष के आकार को प्रभावित करने में मुद्रा कक्ष का बहुमूल्य योगदान है। जिन स्थानों पर यह सुविधा प्राप्त होती है वहाँ पर बैंकों को अधिक मात्रा में नकद कोष की आवश्यकता नहीं पड़ती है चूँकि आवश्यकतानुसार इन मुद्रा तिजोरियों से रुपया निकाला जा सकता है।

माँग अथवा अल्पकालीन सूचना पर देय धन
(Money at Call and Short Notice)

माँग अथवा अल्पकालीन सूचना पर देय धन बैंक की तरल सम्पत्ति समझा जाता है तथा सुरक्षा के दृष्टिकोण से यह द्वितीय पंक्ति में रखा जाता है। इसमें एक बैंक अपने आधिक्य कोष अन्य बैंक को ऋणस्वरूप प्रदान करता है जिसका भुगतान माँग पर अथवा अल्पकालीन सूचना पर देय होता है। इस पर बैंक साधारणतः ब्याज वसूल नहीं करते हैं परन्तु अल्पकालीन सूचना पर देय ऋण की स्थिति में बैंक ब्याज वसूल करते हैं। यह ब्याज **10** प्रतिशत से अधिक वसूल नहीं किया जा सकता है। व्यवहार में, बैंकों के पास अल्पकालीन सूचना पर देय धन कुल कोषों की तुलना में कम होते हैं। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, जीवन बीमा निगम आदि वित्तीय संस्थायें इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान अदा करती हैं।

निवेश अथवा विनियोग
(Investment)

विनियोग अथवा निवेश बैंक की तरल सम्पत्ति समझे जाते हैं। इसमें बैंक

अपने कोष सरकारी प्रतिभूतियों, अर्द्ध सरकारी प्रतिभूतियों तथा संयुक्त पूंजी कम्पनी के अंश व ऋण पत्रो में निवेश करते हैं। इसमें सरकारी तथा अर्द्ध सरकारी प्रतिभूतियाँ श्रेष्ठ प्रतिभूतियाँ (Gilt-Edged Securities) समझी जाती हैं चूंकि ये सुरक्षा के दृष्टिकोण से श्रेष्ठ मानी जाती हैं। इसीलिये, बैंकों के निवेश का अधिकांश भाग सरकारी प्रतिभूतियों में विनियोजित होता है। सरकारी तथा अर्द्ध सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश के निम्नलिखित कारण होते हैं—

(1) रिजर्व बैंकों के निर्देशों के अधीन प्रत्येक बैंक को अपनी कुल माँग तथा सावधि निक्षेप का न्यूनतम 25 प्रतिशत भाग अर्थ सुलभ अथवा तरल सम्पत्तियों में रखना अनिवार्य होता है।

(2) इन प्रतिभूतियो मे धन निवेश करने पर बैंको को नियमित आय प्राप्त होती है।

(3) इन प्रतिभूतियो के मूल्य में स्थिरता रहती है जिससे बैंको को जोखिम वहन नही करना पड़ता है।

(4) इन प्रतिभूतियों की जमानत पर रिजर्व बैंक से पुनर्वित्त की सुविधा प्राप्त हो सकती है।

अतः बैंकों के लिये सरकारी प्रतिभूतियाँ श्रेष्ठ समझी जाती हैं। इनके अन्तर्गत, बैंक अल्पकालीन प्रतिभूतियों मे निवेश करना अधिक पसन्द करते हैं चूंकि इनकी बिक्री साध्यता अधिक होती है। सरकारी प्रतिभूतियो मे राजकोषीय बिल (Treasury Bills) महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं। ये बिल अल्पावधि के लिये सरकार द्वारा धन जुटाने के उद्देश्य से जारी किये जाते हैं तथा इन पर 4·6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज देय होता है। इसके अतिरिक्त, ये बिल रिजर्व बैंक से भुनाये (Discount) जा सकते है। अतः बैंक राजकोषीय बिलो में धन विनियोजित करना श्रेष्ठ समझते हैं।

सरकारी तथा अर्द्ध सरकारी प्रतिभूतियो मे निवेश के अतिरिक्त बैंक संयुक्त पूंजी कम्पनी के अंशों व ऋणपत्रों में भी निवेश करते हैं। इन प्रतिभूतियों मे निवेश करने से पूर्व बैंक को निम्नलिखित सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए—

(i) बैंकों को केवल उन्हीं अंशो व ऋणपत्रों में धन विनियोजित करना चाहिये जो सुरक्षा के दृष्टिकोण से श्रेष्ठ समझे जाते हैं। इसके लिये उन प्रतिभूतियों में धन विनियोजित करना चाहिये जिनके मूल्यों मे उतार-चढ़ाव नहीं होता है तथा जिनकी कम्पनियों का पूर्व के वर्षों मे लाभप्रद व्यवसाय रहा है और भविष्य मे भी अच्छे व्यवसाय की सम्भावनायें हैं।

(ii) बैंकों को केवल उन्हीं अंशों व ऋणपत्रों में धन विनियोजित करना चाहिये जो अंश अथवा ऋणपत्र आवश्यकता पड़ने पर बाजार में सरलतापूर्वक बेचे जा सकते हैं अर्थात् जिनकी विक्रय साध्यता उच्च श्रेणी की होती है।

(iii) बैंकों को निवेश करते समय लाभदायकता के सिद्धान्त को ध्यान में

रखना चाहिये। बैंकों को केवल उन्हीं प्रतिभूतियों में धन विनियोजित करना चाहिये जिनसे बैंकों को नियमित आय होती है।

संक्षेप में, कहा जा सकता है कि बैंकों की तरल सम्पत्तियाँ उनके लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं। बैंक दूरदर्शिता एवं अनुभव के आधार पर इन सम्पत्तियों से आय प्राप्त करने में समर्थ होते हैं।

ऋण तथा अग्रिम
(Loans and Advances)

बैंक की आय प्राप्त करने का मुख्य स्रोत ऋण व अग्रिम हैं। इसके अन्तर्गत बैंक अपने कोषों का प्रयोग विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखते हुये करते हैं। बैंक ऋण प्रदान करने से पूर्व सुरक्षा (Safety) लाभदायकता (Profitability), ऋण का उद्देश्य (Object), जोखिम (Risk), विविधता (Diversification), सरकारी नीतियां (Government Policies) तथा ऋणी की योग्यता (Ability) आदि अनेक महत्वपूर्ण सिद्धान्त ध्यान में रखते हैं। बैंकों की ऋण प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले तत्वों में रिजर्व बैंक की नीति, सरकारी नीति, बैंक की अपनी नीतियाँ तथा निक्षेपों की प्रकृति आदि अनेक तत्व सम्मिलित किये जाते हैं। इन समस्त तत्वों एवं सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए बैंक अपने ऋण एवं अग्रिम प्रदान करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंक विनिमय विपत्रों का क्रय करना अथवा भुनाना (Purchase or Discount of Bills of Exchange), ऋण अथवा अधिविकर्ष (Overdraft) नकद साख सुविधा (Cash Credit Facility) आदि विभिन्न साधनों से ऋण प्रदान करते हैं।

प्रत्येक बैंक के ऋण योग्य कोष सीमित होते हैं। बैंक अपने समस्त कोषों को ऋणस्वरूप प्रदान नहीं कर सकते हैं। इसके लिये बैंकों को अपने कुल कोषों का निर्धारित प्रतिशत तरल कोष में, रिजर्व बैंक के पास जमा नकद शेष में तथा अपने प्रयोग के लिये स्थायी आस्तियों (Fixed Assets) में विनियोजित करना पड़ता है। उदाहरणार्थ—एक बैंक के कुल उपलब्ध कोष 1,000 करोड़ रुपये के हैं। इसका 9 प्रतिशत रिजर्व बैंक के पास रखा जायेगा तथा 37 प्रतिशत तरल कोषों में रखा जायेगा। अतः बैंक को कुल 54 प्रतिशत भाग ऋण कोष के रूप में प्राप्त हो सकता है। इस ऋण योग्य भाग का कुछ प्रतिशत स्थायी आस्तियों के क्रय में प्रयोग किया जाता है। बैंकों को स्थायी सम्पत्ति अथवा आस्ति (Assets) के क्रय के लिये प्रतिबन्धित किया गया है परन्तु वे व्यक्तिगत प्रयोग के लिये सम्पत्ति क्रय कर सकते हैं।

बैंक ऋण प्रदान करने का कार्य स्वेच्छित नीतियों से नहीं कर सकते हैं। इसमें सरकारी नीतियों एवं रिजर्व बैंक की नीतियों का विशेष योगदान होता है। उदाहरणार्थ—भारतवर्ष में कुल ऋण योग्य कोषों का 40 प्रतिशत भाग प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में प्रदान करना अनिवार्य होता है। इसी प्रकार, बड़े पैमाने के ऋणों पर ऋण प्राधिकरण योजना (Credit Authorisation Scheme) लागू होती है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि बैंकों को ऋण व अग्रिम प्रदान करते समय अनेक नीतियों एवं सिद्धान्तो का पालन करना आवश्यक होता है तथा बैंक अपने ऋण योग्य कोषों का अधिकतम लाभप्रद प्रयोग करते हैं।

स्थायी आस्तियां
(Fixed Assets)

बैंकों को स्थायी आस्तियों के क्रय करने के लिये बैंकिंग विनिमय अधिनियम की धारा 9 के अन्तर्गत वर्जित किया गया है। वे कोई भी सम्पत्ति 7 वर्ष से अधिक की अवधि के लिये प्राप्त नही कर सकते हैं। रिजर्व बैंक की पूर्वानुमति से यह अवधि 5 वर्ष के लिये बढ़ायी जा सकती है। परन्तु बैंक व्यक्तिगत प्रयोग के लिये स्थायी आस्तियां क्रय कर सकते हैं। इसमें बैंक भूमि, भवन एवं फर्नीचर आदि क्रय करते हैं।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) बैंक अपने कोषो का प्रयोग तरल आस्तियो, स्थायी आस्तियों एव ऋण व अग्रिमों में करते हैं।

(2) बैंक की तरल आस्तियों में नकद शेष, माग एवं अल्पकालीन सूचना पर देय ऋण एवं निवेश सम्मिलित किये जाते हैं।

(3) नकद शेष को प्रभावित करने वाले तत्वों में विधिक आवश्यकता, ग्राहकों की आदत, जमा खातों के आकार व स्वभाव समाशोधन ग्रहों की सुविधा आदि सम्मिलित होते हैं।

प्रश्न
(Questions)

1. बैंक की शाखा मे नकद शेष के रखरखाव को प्रभावित करने वाले कौन-कौन से तत्व हैं ?

What are the factors determining the maintenance of cash balances in a branch of the bank ?

2. बैंक अपने कोषों का प्रयोग किन-किन साधनों में करते हैं ?

What are the sources in which banks employ their funds.

3. बैंक मे तरल आस्तियों का क्या महत्व है ?

What is the importance of Liquid Assets in Banks.

4. बैंक विनियोग के लिये प्रतिभूतियों का मूल्यांकन करने मे प्रयुक्त सिद्धान्तों की विवेचना कीजिये।

Discuss the principles used in the rating of securities for bank investment. *(Gorakhpur B. Com.)*

□□□

16 विभिन्न प्रकार के ऋण

(DIFFERENT TYPE OF LOANS)

बैंकों का मुख्य व्यवसाय जनता से निक्षेप स्वीकार करना तथा उन निक्षेपों को ऋणस्वरूप प्रदान करके आय प्राप्त करना होता है। बैंक द्वारा ऋण प्रदान करने का कार्य पूर्ण सावधानी ध्यान में रखते हुये किया जाता है तथा ऋण की सुरक्षा एवं तरलता के दृष्टिकोण के अतिरिक्त ऋणी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये प्रदान किया जाता है। बैंक द्वारा अधिविकर्ष, ऋण, नकद साख सुविधा एवं विनिमय विपत्रों को भुनाकर अथवा क्रय करके ऋण सुविधायें प्रदान की जाती हैं। बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण सुरक्षित अथवा असुरक्षित होता है तथा ये ऋण माँग पर अथवा एक निश्चित अवधि के पश्चात देय होते हैं। बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण सुविधायें निम्नलिखित होती हैं—

ऋण
(Loan)

बैंकों द्वारा ऋणी को ऋण की सुविधा उसकी व्यक्तिगत जमानत अथवा समर्थक प्रतिभूतियों की जमानत पर प्रदान की जाती है। समर्थक प्रतिभूतियों (Collateral Securities) में अंश व ऋण पत्र सावधि जमा रसीद (Fixed Deposit Receipts), सरकारी प्रतिभूतियां जीवन बीमा पालिसी अथवा स्थायी आस्तियां (Fixed Assets) सम्मिलित की जाती हैं। बैंक ऋणी को एकमुश्त समस्त ऋण का भुगतान करते हैं तथा ऋण की अदायगी (Repayment) माँग पर अथवा किश्तों में होती है। ऋण खाते पर निर्धारित ब्याज दर से ब्याज वसूल किया जाता है। ऋण दो प्रकार का हो सकता है। प्रथम, माँग पर देय ऋण जिसका भुगतान माँग पर तुरन्त देय होता है। यदि ऋण की माँग से 3 वर्ष के भीतर ऋण की अदायगी नहीं की जाती है तब ऋण कलातीत ऋण (Time Barred Loan) समझा जाता है जिसका भुगतान विधि (Law) द्वारा भी सम्भव नहीं होता है। द्वितीय सावधि ऋण (Term Loan) जिसमें ऋण की अदायगी किश्तों में की जाती है तथा किश्तें मासिक, तिमाही, छमाही अथवा वार्षिक हो सकती हैं। सावधि ऋण अल्पकालीन, मध्यकालीन अथवा दीर्घकालीन हो सकते हैं।

अधिविकर्ष
(Overdrafts)

इसके अन्तर्गत बैंक ऋण को अल्प अवधि के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। यह सुविधा चालू खाते (Current Account) में प्रदान की जाती है। इसमें ऋणी को ऋण की सुविधा अनेक बार प्रदान की जा सकती है। इसमें ऋणी के

चालू खाते में रुपया कम होने की स्थिति में भी उसके द्वारा अधिक रकम के जारी किये गये चैकों का भुगतान किया जाता है। यह सुविधा अस्थायी प्रकृति की होती है। बैंकों द्वारा यह सुविधा निरन्तर अवधि के लिये प्रदान नहीं की जानी चाहिये। यह सुविधा ऋणी की व्यक्तिगत जमानत अथवा समर्थक प्रतिभूतियों की जमानत पर प्रदान की जाती है।

नकद साख सुविधा
(Cash Credit Facilities)

इसके अन्तर्गत बैंकों द्वारा ऋणी की कार्यशील पूंजी (Working Capital) के लिये ऋण की सुविधा प्रदान की जाती है। इसमें ऋणी को ऋण खाते से नियमित रुपया निकालने अथवा जमा करने का अधिकार होता है। यह सुविधा ऋणी की चल सम्पत्तियों (Current Assets) की जमानत पर प्रदान की जाती है। इसमें बैंक व्यापारी के स्टाक (Stock), सावधि जमा निक्षेप (Fixed Deposits) आदि की जमानत प्राप्त करते हैं। इसमें ऋणी के खाते में एक निश्चित सीमा तक ऋणी को वित्त निकालने की सुविधायें प्रदान की जाती हैं। निश्चित सीमा का निर्धारण ऋणी द्वारा प्रदत्त चल सम्पत्ति के आधार पर किया जाता है। इसमें ऋणी को सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि ऋण की उसी राशि पर ब्याज की गणना की जाती है जिस सीमा तक ऋणी द्वारा वास्तव में ऋण प्राप्त किया जाता है। ऋणी अपने खाते से सुविधाजनक रुपया निकालता एवं जमा करवाता है। इसमें ऋण माँग पर देय होते हैं। बैंक नकद साख की स्थिति में निर्धारित सीमा तक पर्याप्त कोष अथवा निधि (Funds) अपने पास जमा रखते हैं। इसमें ग्राहक को समय-समय पर ऋण उपलब्ध करवाया जाता है।

नकद साख व्यवस्था का महत्वपूर्ण दोष यह है कि इसमें ऋण की सीमा निर्धारित होती है और ऋणी द्वारा धोखे की सम्भावना रहती है। इसमें ऋण स्टाक (Stock) की जमानत पर दिये जाने की स्थिति में व्यापारी द्वारा स्टाक को बेचने का भय रहता है चूंकि बैंक एक निश्चित अवधि में स्टाक की जांच करता है व्यापारी इसमें पूर्व स्टाक को समाप्त करके बैंक कोषो (Funds) का दुरुपयोग कर सकते हैं। नकद साख सुविधा का एक दोष यह भी है कि इसमें ऋण सीमा तथा प्रयुक्त सीमा (Used Limits) में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है जिससे बैंक के कोष निष्क्रिय रहते हैं।

नकद साख सुविधा में ऋण खाता अनियमित (Irregular) हो सकता है। ऋण खाता उस समय अनियमित समझा जाता है जबकि ऋणी द्वारा ऋण सीमा का पूर्ण प्रयोग कर लिया गया है तथा इसके पश्चात् खाते में कोई लेन-देन नहीं होता है और ऋण खाते पर ब्याज लगातार डेबिट हो रहा है अथवा ऋणी द्वारा निर्धारित अवधि पर स्टाक विवरण प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है। इस स्थिति में बैंक को यह अधिकार होता है, कि वह ऋणी के गोदाम का तुरन्त निरीक्षण करके स्टाक

16 विभिन्न प्रकार के ऋण
(DIFFERENT TYPE OF LOANS)

वैंकों का मुख्य व्यवसाय जनता से निक्षेप स्वीकार करना तथा उन निक्षेपों को ऋणस्वरूप प्रदान करके आय प्राप्त करना होता है। वैंक द्वारा ऋण प्रदान करने का कार्य पूर्ण सावधानी ध्यान में रखते हुये किया जाता है तथा ऋण की सुरक्षा एवं तरलता के दृष्टिकोण के अतिरिक्त ऋणी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये प्रदान किया जाता है। वैंक द्वारा अधिविकर्ष, ऋण, नकद साख सुविधा एवं विनिमय विपत्रों को भुनाकर अथवा क्रय करके ऋण सुविधायें प्रदान की जाती हैं। वैंक द्वारा प्रदत्त ऋण सुरक्षित अथवा असुरक्षित होता है तथा ये ऋण माँग पर अथवा एक निश्चित अवधि के पश्चात देय होते हैं। वैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण सुविधायें निम्नलिखित होती हैं—

ऋण
(Loan)

वैंकों द्वारा ऋणी को ऋण की सुविधा उसकी व्यक्तिगत जमानत अथवा समर्थक प्रतिभूतियों की जमानत पर प्रदान की जाती है। समर्थक प्रतिभूतियों (Collateral Securities) में अंश व ऋण पत्र सावधि जमा रसीद (Fixed Deposit Receipts), सरकारी प्रतिभूतियाँ जीवन वीमा पालिसी अथवा स्थायी आस्तियाँ (Fixed Assets) सम्मिलित की जाती हैं। वैंक ऋणी को एकमुश्त समस्त ऋण का भुगतान करते हैं तथा ऋण की अदायगी (Repayment) माँग पर अथवा किश्तों में होती है। ऋण खाते पर निर्धारित व्याज दर से व्याज वसूल किया जाता है। ऋण दो प्रकार का हो सकता है। प्रथम, माँग पर देय ऋण जिसका भुगतान माँग पर तुरन्त देय होता है। यदि ऋण की माँग से 3 वर्ष के भीतर ऋण की अदायगी नहीं की जाती है तव ऋण कलातीत ऋण (Time Barred Loan) समझा जाता है जिसका भुगतान विधि (Law) द्वारा भी सम्भव नहीं होता है। द्वितीय सावधि ऋण (Term Loan) जिसमें ऋण की अदायगी किश्तों में की जाती है तथा किश्तें मासिक, तिमाही, छमाही अथवा वार्षिक हो सकती हैं। सावधि ऋण अल्पकालीन, मध्यकालीन अथवा दीर्घकालीन हो सकते हैं।

अधिविकर्ष
(Overdrafts)

इसके अन्तर्गत वैंक ऋण को अल्प अवधि के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। यह सुविधा चालू खाते (Current Account) में प्रदान की जाती है। इसमें ऋणी को ऋण की सुविधा अनेक वार प्रदान की जा सकती है। इसमें ऋणी के

संघीय ऋण
(Consortium Advances)

संघीय ऋण की स्थिति में अनेक बैंक मिलकर किसी एक ऋणी को संयुक्त रूप में ऋण प्रदान करते हैं। इनमें एक बैंक अग्र बैंक के रूप में ऋण के प्रस्ताव को स्वीकार करने, ऋण के प्रपत्र पूर्ण करने एवं वसूली आदि का कार्य करता है तथा शेष बचे हुये बैंक वित्त प्रदान करने का कार्य करते हैं। यदि एक ऋणी को किसी बैंक के समस्त निक्षेपों से 1·5 प्रतिशत से अधिक ऋण दिया जाता है तब ऋण संघीय ऋण के रूप में दिया जाना चाहिये। प्रारम्भ में, संघीय ऋण सुविधायें सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत खाद्य ऐजेन्सीज को उपलब्ध करायी जाती थीं। परन्तु वर्तमान समय में, ये सुविधायें राज्य सरकार सहकारी विपणन समितियाँ संस्थानों को भी उपलब्ध करवायी जाती हैं। इन ऋणों का मुख्य उद्देश्य साख नियन्त्रण एवं बैंक के जोखिम को कम करना है। इससे बैंक अपने ऋणों का विकेन्द्रीकरण करने में समर्थ होते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में, संयुक्त ऋण सुविधा का व्यापक महत्व है। इसको प्रभावी बनाने के उद्देश्य से वर्ष 1973 में एक समिति का गठन किया गया था जिसने अनेक बहुमूल्य सुझाव दिये। इसमें बीमार इकाइयों (Sick Units) को भी सम्मिलित किया गया है और उनकी पुनः स्थापना (Rehabiliation) के लिये बल दिया गया है। यदि किसी ऋणी को अनेक बैंकों से कार्यशील पूँजी के लिये ऋण प्राप्त होता है तथा यह ऋण संघीय ऋण के रूप में प्रदान नहीं किया जाता है तब उन बैंकों को आपस में ऋणी की महत्वपूर्ण सूचनाओं का आदान-प्रदान करना चाहिये तथा ऋणी की आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में समय-समय पर आपस में सभायें (Meetings) करनी चाहिये। इसके अतिरिक्त ऋण के नवीनीकरण (Renewal) के समय समस्त बैंकों को मिलाकर वित्त की आवश्यकता का पुनरीक्षण (Review) करना चाहिये।

भागीदारी प्रमाण-पत्र
(Participation Certificates)

इस योजना का प्रारम्भ 1970 में किया गया। इसके अन्तर्गत बैंक अल्पकालीन सुविधायें प्राप्त करते हैं। इसमे बैंक अपने ऋणियों को ऋण देने के प्रमाण-पत्र के आधार पर, अन्य बैंकों से अल्पकालीन ऋण प्राप्त कर लेते हैं। इसमें, किसी बैंक द्वारा भागीदारी प्रमाण-पत्र के आधार पर अन्य व्यापारिक बैंकों, जीवन बीमा निगम, यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया, औद्योगिक साख एवं विनियोग निगम आदि से ऋण प्राप्त किया जा सकता है। इसमें ऋण की अवधि 30 दिन से कम तथा 180 दिन से अधिक नहीं हो सकती है। इसमें ब्याज दर 10 प्रतिशत तक निर्धारित की गयी है। परन्तु ऋण की अवधि एवं ब्याज दर की सीमा उस स्थिति में लागू नहीं समझी जाती है जबकि यह सुविधा एक व्यापारिक बैंक द्वारा अन्य व्यापारिक बैंक से प्राप्त की जाती है। इसमें प्रमाण-पत्रों की परिपक्वता की तिथि से पूर्व भुगतान (Prematured Payment) की सुविधायें भी प्रदान की गयी हैं परन्तु किसी भी स्थिति में, यह अवधि 30 दिन से कम नहीं हो सकती है।

विवरण तैयार करे और गोदाम के माल के अनुसार नयी ऋण सीमा (Limit) का निर्धारण करे।

नकद साख सुविधा में बैंक को पूर्ण अधिकार होता है कि वह ऋणी का आचरण संदेहजनक प्रगट होने पर अथवा खाते में अनियमितता होने पर ऋणी को पूर्व सूचना देकर ऋण सुविधा समाप्त कर सकता है। आधुनिक समय में, बैंक ऋण सुविधा प्रदान करते समय ऋणी से अनुवन्ध करते हैं कि यह ऋण सीमा सूचना के अभाव में भी समाप्त की जा सकती है। अतः यदि बैंक ऋणी की नकद साख सुविधा पूर्व सूचना दिये विना समाप्त कर देता है तब यह न्यायोचित कार्य होगा चूंकि अनुवन्धों की शर्तों के अधीन बैंक को यह अधिकार प्राप्त होता है।

विनिमय विपत्रों का भुनाना अथवा क्रय करना
(Discounting Or Purchasing of Bills)

बैंक द्वारा ऋण प्रदान करने की यह एक महत्वपूर्ण पद्धति है। इसमें बैंक माँग पर देय ऋण अथवा अल्पकालीन ऋण प्रदान करते हैं। इसमें बैंक का ऋण सुरक्षित होता है तथा ऋण का भुगतान निश्चित तिथि पर देय होता है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि बैंक को इसमें पुर्नवित (Refinance) की सुविधायें प्राप्त होती हैं और प्रत्याभूति का मूल्य स्थिर होता है। विपत्र माँग पर देय (On Demand) होने की स्थिति में बैंक विपत्र को क्रय (Purchase) करने की सुविधायें प्रदान करते हैं। इसमें बैंक अपने व्यय (Charges) काटकर ऋणी के खाते को क्रेडिट (Credit) कर देते हैं। विपत्र अनादृत होने की स्थिति में बैंक विपत्र को वापस करके ऋणी का खाता डेबिट (Debit) कर देते हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि बैंक ग्राहक का खाता विपत्र वापस करने के पश्चात् ही डेबिट कर सकते हैं। इस निर्णय की पुष्टि देना बैंक बनाम एम० पी० नेशनल टेक्सटाइल कारपोरेशन लिमिटेड नामक विवाद[1] में की गई है।

अवधि विपत्र (Usance Bills) की स्थिति में बैंक विपत्र को भुनाने (Discount) की सुविधायें प्रदान करते हैं। इसमें बैंक निश्चित दर से अपनी छूट तथा व्यय काटकर ऋणी के खाते को क्रेडिट करते हैं। यह छूट दर माँग पर देय विपत्र की छूट से अधिक होती है चूंकि इसमें अवधि का ब्याज भी सम्मिलित किया जाता है। यह सुविधा ग्राहकों की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर प्रदान की जाती है। यदि विपत्र के साथ माल के अधिकार पत्र भी संलग्न किये गये हैं तब बैंकों को उनकी शुद्धता, माल का, विवरण विपत्रों का बैंक के हित में परक्रामण आदि अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिये। बैंक विपत्रों को भुनाने अथवा क्रय करने के अतिरिक्त उनके संग्रहण का कार्य भी सम्पन्न करते हैं। इस स्थिति में बैंक ग्राहक के अभिकर्त्ता के रूप में कार्य करते हैं तथा विपत्रों की राशि वसूल होने के पश्चात् ग्राहक के खाते में जमा की जाती है।

---

1. Dena Bank Vs. M. P. National Textiles Corporation Ltd.

संघीय ऋण
(Consortium Advances)

संघीय ऋण की स्थिति में अनेक बैंक मिलकर किसी एक ऋणी को संयुक्त रूप में ऋण प्रदान करते हैं। इनमें एक बैंक अग्र बैंक के रूप में ऋण के प्रस्ताव को स्वीकार करने, ऋण के प्रपत्र पूर्ण करने एवं वसूली आदि का कार्य करता है तथा शेष बचे हुये बैंक वित्त प्रदान करने का कार्य करते हैं। यदि एक ऋणी को किसी बैंक के समस्त निक्षेपों से 1·5 प्रतिशत से अधिक ऋण दिया जाता है तब ऋण संघीय ऋण के रूप मे दिया जाना चाहिये। प्रारम्भ में, संघीय ऋण सुविधायें सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत खाद्य ऐजेन्सीज को उपलब्ध करायी जाती थी। परन्तु वर्तमान समय में, ये सुविधायें राज्य सरकार सहकारी विपणन समितियाँ संस्थानों को भी उपलब्ध करवायी जाती हैं। इन ऋणों का मुख्य उद्देश्य साख नियन्त्रण एवं बैंक के जोखिम को कम करना है। इससे बैंक अपने ऋणों का विकेन्द्रीकरण करने मे समर्थ होते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में, संयुक्त ऋण सुविधा का व्यापक महत्व है। इसको प्रभावी बनाने के उद्देश्य से वर्ष 1973 में एक समिति का गठन किया गया था जिसने अनेक बहुमूल्य सुझाव दिये। इसमें बीमार इकाइयों (*Sick Units*) को भी सम्मिलित किया गया है और उनकी पुनः स्थापना (Rehabiliation) के लिये बल दिया गया है। यदि किसी ऋणी को अनेक बैंकों से कार्यशील पूंजी के लिये ऋण प्राप्त होता है तथा यह ऋण संघीय ऋण के रूप में प्रदान नहीं किया जाता है तब उन बैंकों को आपस में ऋणी की महत्वपूर्ण सूचनाओं का आदान-प्रदान करना चाहिये तथा ऋणी की आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में समय-समय पर आपस में सभायें (Meetings) करनी चाहिये। इसके अतिरिक्त ऋण के नवीनीकरण (Renewal) के समय समस्त बैंकों को मिलाकर वित्त की आवश्यकता का पुनरीक्षण (Review) करना चाहिये।

भागीदारी प्रमाण-पत्र
(Participation Certificates)

इस योजना का प्रारम्भ 1970 में किया गया। इसके अन्तर्गत बैंक अल्पकालीन सुविधायें प्राप्त करते हैं। इसमे बैंक अपने ऋणियों को ऋण देने के प्रमाण-पत्र के आधार पर, अन्य बैंकों से अल्पकालीन ऋण प्राप्त कर लेते हैं। इसमें, किसी बैंक द्वारा भागीदारी प्रमाण-पत्र के आधार पर अन्य व्यापारिक बैंकों, जीवन बीमा निगम, यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया, औद्योगिक साख एवं विनियोग निगम आदि से ऋण प्राप्त किया जा सकता है। इसमें ऋण की अवधि 30 दिन से कम तथा 180 दिन से अधिक नहीं हो सकती है। इसमे ब्याज दर 10 प्रतिशत तक निर्धारित की गयी है। परन्तु ऋण की अवधि एवं ब्याज दर की सीमा उस स्थिति में लागू नहीं समझी जाती है जबकि यह सुविधा एक व्यापारिक बैंक द्वारा अन्य व्यापारिक बैंक से प्राप्त की जाती है। इसमें प्रमाण-पत्रों की परिपक्वता की तिथि से पूर्व भुगतान (Prematured Payment) की सुविधायें भी प्रदान की गयी हैं परन्तु किसी भी स्थिति में, यह अवधि 30 दिन से कम नहीं हो सकती है।

बैंक अपने ऋणियों के बेजमानती ऋण (Clean Advance) तथा **उपभोग ऋण** (Consumer Loan) प्रदान करते हैं। साधारणत: बैंक द्वारा सुरक्षित ऋण (Secured Loan) प्रदान किये जाते हैं जिसमें ऋणी की जमानत के अतिरिक्त अन्य प्रतिभूतियों की जमानत भी प्राप्त की जाती है। परन्तु कुछ परिस्थितियों में बैंक ऋणी को व्यक्तिगत जमानत पर ही असुरक्षित ऋण (Unsecured Loan) प्रदान करते हैं जिसमें अधिविकर्ष एवं **बेजमानती नकद साख** सुविधायें (Clean Cash Credit Facilities) सम्मिलित की जाती हैं। बेजमानती नकद साख सुविधा में ऋणी की प्रतिभूति माल के रूप में स्वीकार की जाती है जिस पर बैंक का **प्राधीयन** अथवा **दृष्टिबन्धक** (Hypothecation) होता है। इसके अन्तर्गत बैंक का ऋण उस समय तक असुरक्षित समझा जाता है जब तक कि बैंक द्वारा **गिरवी** (Pledge) के अधिकार को प्रयुक्त नहीं किया जाता है।

बैंक द्वारा अपने ऋणियों को ऋण सुविधायें **अग्रिम** (Advance) अथवा **ऋण** (Loan) स्वरूप प्रदान की जाती हैं। ऋण एक निश्चित अनुबन्ध के अधीन प्रदान किया जाता है जिसकी अदायगी सुनिश्चित होती है अर्थात् ऋण पूर्व निर्धारित किश्तों (Instalments) में देय होता है। ऋण का उद्देश्य प्रतिभूतियों का सर्जन होता है अर्थात् ऋण किसी विशिष्ट सम्पत्ति अथवा प्रतिभूति प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रदान किया जाता है। इसके विपरीत, **अग्रिम** एक निरन्तर अवधि (Continuous Period) के लिये प्रदान किया जाता है जिसका भुगतान माँग पर देय होता है। वास्तव में दोनों शब्दों में अत्यन्त सूक्ष्म अन्तर है।

प्रश्न
(Questions)

1. बैंक ऋणों के विभिन्न प्रारूप क्या हैं? उन सिद्धान्तों की विवेचना कीजिये जो सुरक्षित ऋणों को नियमित करते हैं।

What are the different forms of bankers advances? Discuss the principles which govern secured advances.

2. उन विभिन्न तरीकों की विवेचना कीजिये जिनमें एक व्यापारिक बैंक व्यवसाय को वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

Discuss the various ways in which a commercial bank renders financial assistance to business. (*Delhi B. Com.*)

3. संघीय ऋण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

Write a short note on consortium advance.

(*C. A. I. I. B. Part II, Jan., 1985*)

4. बैंक कोषों के विनियोजन के सिद्धान्तों की विवेचना कीजिये।

Discuss the principles of Employment of Bank's funds.

(*Gorakhpur B. Com. 9185*)

□□□

17 विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियाँ
(DIFFERENT TYPE OF SECURITIES)

प्रतिभूति का अभिप्राय
(Meaning of Security)

बैंकों द्वारा प्रत्येक ऋण प्रतिभूति की जमानत पर प्रदान किया जाता है। प्रतिभूति से अभिप्राय उस बीमित हित (Insurable Interest) से होता है जो ऋण के भुगतान न होने की स्थिति में उत्पन्न होता है अर्थात् प्रतिभूति ऋण का बीमा होती है। बैंकों के लिये प्रतिभूति का विशिष्ट महत्व होता है। कोई भी ऋण प्रतिभूति के अभाव में प्रदान नहीं किया जाना चाहिये अन्यथा ऋण के प्राप्य होने की सम्भावनायें धूमिल हो जाती हैं। बैंकों द्वारा ऋणी को व्यक्तिगत अथवा दृश्य प्रतिभूति की जमानत पर ऋण प्रदान किया जाता है। व्यक्तिगत प्रतिभूति (Personal Security) के अन्तर्गत व्यक्ति ऋण के लिये स्वयं उत्तरदायी होता है। इसमें ऋणी का चरित्र, उसकी सम्पत्ति (Assets) तथा क्षमता (Capacity) को ध्यान में रखा जाता है। चरित्र (Character) के अन्तर्गत व्यक्ति दिवालिया नहीं होना चाहिये तथा ऋण भुगतान करने की उसकी इच्छा को विशेष महत्व दिया जाता है। ऋणी को क्षमता के सम्बन्ध में उसकी तकनीकी एवं प्रबन्धकीय क्षमता का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। अतः ऋण की व्यक्तिगत प्रतिभूति ऋण प्रक्रिया में सर्वोच्च स्थान रखती है। प्रत्येक ऋण ऋणी की व्यक्तिगत प्रतिभूति को ध्यान में रखकर ही प्रदान किया जाता है। व्यक्तिगत प्रतिभूति के अतिरिक्त बैंकों द्वारा मूर्त अथवा मूर्त प्रतिभूति (Tangible Security) को भी विशेष महत्व दिया जाता है। इसमें ऋण की वसूली प्रतिभूति बेचकर की जा सकती है। दृश्य प्रतिभूति में अंश, ऋणपत्र, सरकारी प्रतिभूति, माल (Goods) एवं जीवन बीमा पालिसी आदि सम्मिलित की जाती हैं। बैंकों द्वारा सर्वप्रथम दृश्य प्रतिभूतियों को बेचकर ऋण वसूल किया जाता है और यदि ऋण का कोई भाग शेष बचता है तब ऋणी की व्यक्तिगत सम्पत्ति से वसूल किया जाता है।

प्रतिभूतियाँ दो प्रकार की होती हैं। प्रथम, प्राथमिक प्रतिभूति (Primary Security) एवं द्वितीय, संपार्श्विक प्रतिभूति (Collateral Security)। प्राथमिक प्रतिभूति से अभिप्राय उस प्रतिभूति से होता है जो ऋण को मुख्यतः सुरक्षित करती है तथा यह प्रतिभूति ऋणी द्वारा प्रदत्त की जाती है। प्राथमिक प्रतिभूति ऋण द्वारा उत्पन्न की जाती है। अतः प्राथमिक प्रतिभूति वह प्रतिभूति होती है जिसको

द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसके विपरीत, संपार्श्विक प्रतिभूति (Collateral Security) ऋण की सुरक्षा के दृष्टिकोण से प्राथमिक प्रतिभूति के अतिरिक्त ऋणी से प्राप्त की जाती है। यह प्रतिभूति तृतीय पक्षकार द्वारा उसकी जमानत (Guarantee) स्वरूप अथवा ऋणी द्वारा अन्य प्रतिभूतियाँ प्रदान करके प्राप्त की जाती हैं। ऋणी की अन्य सम्पत्ति पर गिरवी, प्राधीयन अथवा दृष्टिबन्धक, ग्रहणाधिकार अथवा बन्धक द्वारा संपार्श्विक प्रतिभूति पर प्रभार का निर्माण किया जा सकता है। अतः बैंकों के लिये संपार्श्विक प्रतिभूति अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं।

आदर्श प्रतिभूति की विशेषतायें
(Characteristics of an Ideal Security)

बैंकों के लिये प्रतिभूति का विशेष महत्व होता है। बैंकों को प्रतिभूति प्राप्त करते समय विशेष सावधानियां ध्यान में रखनी चाहियें। बैंकों को केवल उन प्रतिभूतियों को प्राप्त करना चाहिये जो विक्री योग्य होती हैं तथा जिनका मूल्य सरलता से ज्ञात किया जा सकता है एवं उनका मूल्य स्थिर रहता है। साधारणतः एक आदर्श प्रतिभूति में **निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहियें**—

(1) **विक्रीयोग्यता** (Marketability)—प्रतिभूति का प्रमुख उद्देश्य ऋण प्राप्त न होने की स्थिति में उसको बेचकर ऋण वसूल करना होता है। अतः बैंक द्वारा प्रतिभूति प्राप्त करते समय उन्हीं प्रतिभूतियों को प्राप्त किया जाना चाहिये जिन्हें आवश्यकता की स्थिति में शीघ्र ही बाजार में बेचा जा सकता है। उदाहरणार्थ—निर्मित अथवा कच्चा माल बाजार में शीघ्र ही बेचा जा सकता है परन्तु अर्द्धनिर्मित माल बेचने में अत्यन्त कठिनाई होती है। इसी प्रकार स्थायी सम्पत्ति को बेचने में अनेक जटिलतायें अनुभव की जाती हैं चूंकि इनके उचित मूल्य का निर्धारण एवं उसकी प्राप्ति में विशेष कठिनाई होती है। अतः बैंकों द्वारा उन्हीं प्रतिभूतियों को प्राप्त किया जाना चाहिये जिन्हें बेचकर रुपया वसूल किया जा सकता है।

(2) **मूल्य स्थिरता** (Stability of Value)—एक आदर्श प्रतिभूति की द्वितीय विशेषता यह होनी चाहिये कि उसके मूल्य में अधिक उतार-चढ़ाव नहीं होना चाहिये। साधारणतः पेपर, सूत आदि वस्तुओं के मूल्य में सट्टे के कारण अधिक उतार-चढ़ाव पाये जाते हैं। अतः इन वस्तुओं को प्रतिभूति के रूप में स्वीकार नहीं करना चाहिये।

(3) **हस्तान्तरणशीलता** (Transferability)—आदर्श प्रतिभूति की अनिवार्य विशेषता यह है कि आवश्यकता पड़ने पर उसका स्वामित्व सरलता से हस्तान्तरित किया जा सकता है। बैंक द्वारा प्रतिभूति प्राप्त करते समय यह आवश्यक है कि बैंक को प्रतिभूति के स्वामित्व का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये अर्थात् प्रतिभूति प्रदत्त करने वाले व्यक्ति का प्रतिभूति पर विधिक स्वामित्व होना चाहिये तथा वह

प्रतिभूति हस्तान्तरित करने के योग्य होना चाहिये अर्थात् वह व्यक्ति वयस्क, स्वस्थ मस्तिष्क का तथा विधि द्वारा अनुबन्ध के अयोग्य घोषित नहीं होना चाहिये। बैंक स्वामित्व प्राप्त करने के दृष्टिकोण से प्रतिभूति पर प्रभार उत्पन्न करता है। प्रतिभूति पर प्रभार ग्रहणाधिकार, गिरवी, दृष्टिबन्धक (Hypothecation) अथवा बन्धक आदि विधियों से किया जा सकता है। साधारणतः स्थायी सम्पत्ति के स्वामित्व हस्तान्तरण में अनेक कठिनाइयाँ एवं अधिक लागत आती है। अतः इस पर साम्यिक बन्धक (Equitable Mortgage) का निर्माण किया जाता है। इस दृष्टिकोण से स्थायी सम्पत्ति को एक आदर्श प्रतिभूति नहीं समझा जा सकता है। इसके विपरीत, माल व अंश आदि को स्थायी सम्पत्ति की तुलना में एक आदर्श प्रतिभूति समझा जा सकता है चूँकि इसमें स्वामित्व हस्तान्तरण का कार्य सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

(4) निश्चितता (Ascertainability)—एक आदर्श प्रतिभूति के लिये यह नितान्त आवश्यक होता है कि प्रतिभूति का मूल्य सरलता से निश्चित किया जा सकता हो। बैंक द्वारा उन्हीं प्रतिभूतियों को प्राप्त किया जाना चाहिये जिनका मूल्य निर्धारण सम्भव है। उदाहरणार्थ—बैंक द्वारा मान्यता प्राप्त स्टाक एक्सचेंज की सहायता से अंशों का मूल्य ज्ञात किया जा सकता है। इसी प्रकार अन्न व अन्य खाद्य पदार्थों के मूल्य का निर्धारण स्थानीय मण्डियों से किया जा सकता है। अतः बैंक को मूल्य निर्धारण करते समय उचित स्रोत से प्रतिभूति का मूल्य ज्ञात करना चाहिये।

(5) यातायात योग्य (Transportability)—प्रतिभूति के लिये यह आवश्यक होता है कि वह एक स्थान से अन्यत्र स्थान को सुविधापूर्वक लायी व ले जायी जा सके। इससे प्रतिभूति की बिक्री सरलतापूर्वक उचित मूल्य पर की जा सकती है। इसके विपरीत स्थायी प्रकृति की वस्तुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना कठिन होता है जिससे उनका उचित मूल्य प्राप्त करने में अनेक कठिनाइयाँ होती हैं।

(6) भण्डारण क्षमता (Storability)—आदर्श प्रतिभूति की विशेषताओं में एक विशेषता यह भी होनी चाहिये कि प्रतिभूति की प्रकृति तुरन्त क्षयशील वाली नहीं होनी चाहिये। इससे प्रतिभूति को लम्बे समय तक भण्डार में रखा जा सकता है। इसी प्रकार कुछ प्रतिभूतियाँ निर्धारित समय के पश्चात खराब हो जाती हैं अथवा उन्हें भण्डार करने में अधिक लागत आती है। अतः प्रतिभूति कम लागत पर भण्डार योग्य होनी चाहिये।

(7) आय (Income)—यद्यपि साधारणतः ऐसी प्रतिभूति प्राप्त करने में कठिनाई होती है जिससे नियमित आय प्राप्त होती हो तथापि आय का गुण होना एक आदर्श प्रतिभूति के लिये वांछनीय समझा जाता है। इससे ऋण की अदायगी एवं ब्याज के भुगतान में सरलता रहती है। अतः बैंक को उन प्रतिभूतियों को प्राप-

मिकता प्रदान करनी चाहिये जिनसे नियमित आय प्राप्त होती है। उदाहरणार्थ अंश व ऋण पत्र, स्थायी सम्पत्ति जिसे किराये पर उठाया गया है अथवा सावधि जमा रसीद (Fixed Deposit Receipt) जिस पर मासिक, तिमाही अथवा छमाही ब्याज देय होता है।

(8) स्थायित्व (Durable)—आदर्श प्रतिभूति के लिये यह अनिवार्य है कि वह स्थायी प्रकृति की होनी चाहिये। कुछ वस्तुयें, उदाहरणार्थ—फल आदि शीघ्र क्षयशील होने वाली प्रकृति की होती हैं जिन्हें प्रतिभूति के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार कुछ वस्तुयें निरन्तर ह्रासित होती हैं तथा कुछ वस्तुओं का अधिक समय तक भण्डार करने पर उनके गुण में कमी आती है अतः एक आदर्श प्रतिभूति के लिये यह आवश्यक है कि वह प्रतिभूति अपने गुण समाप्त किये बिना अधिक समय तक भण्डार में रखी जा सकती है, उदाहरणार्थ—स्टील आयरन आदि वस्तुओं को अधिक समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

(9) भारमुक्त (Free from Liability)—एक आदर्श प्रतिभूति के लिये यह आवश्यक है कि उस पर कोई कर भार अथवा पूर्व प्रभार नहीं होना चाहिये अन्यथा सम्पत्ति से रुपया वसूल करते समय सर्वप्रथम पूर्व, कर भारों अथवा अन्य लेन-दारों का रुपया भुगतान किया जायेगा और बाद में वर्तमान ऋण का भुगतान किया जायेगा। अतः आदर्श प्रतिभूति के लिये यह आवश्यक है कि वह भारमुक्त होनी चाहिये।

अतः उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि एक आदर्श प्रतिभूति में विभिन्न विशेषतायें होनी चाहियें। वैंक द्वारा ऋण प्रदान करते समय यह कठिन है कि वह ऐसी प्रतिभूति प्राप्त करे जिसमें समस्त विशेषतायें विद्यमान हों। परन्तु वैंक को उस प्रतिभूति की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान कर देना चाहिये जिसमें **बिक्रीयोग्यता** (Marketability), **निश्चितता** (Ascertainability), **स्थायित्व** (Stability) तथा **हस्तान्तरणशीलता** (Transferability) के गुण पाये जाते हैं। संक्षेप में, वैंक को प्रतिभूति प्राप्त करते समय **MAST** (Marketability, Ascertainability, Stability, Transferability) शब्द को ध्यान में रखना चाहिये जिसमें उपरोक्त चारों विशेषतायें प्रकट होती हैं।

विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियाँ
(Different Type of Securities)

वैंक अपने ऋणियों को विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियों के विरुद्ध ऋण प्रदान करता है। इन प्रतिभूतियों में माल, माल के हक विलेख, जीवन बीमा पॉलिसी, अंश, सावधि जमा रसीद आदि सम्मिलित की जाती हैं।

माल की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan Against Goods)

वैंक ऋण प्रदान करते समय अनेक प्रकार की प्रतिभूतियाँ प्राप्त करता है।

प्रतिभूतियाँ प्राप्त करने का मुख्य उद्देश्य ऋण को सुरक्षा प्रदान करना है। बैंक माल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करता है। माल के अन्तर्गत खाद्य सामग्री, व्यापारिक एवं निर्माण योग्य माल सम्मिलित किया जाता है। इसमें मुख्यतः गुड़, चीनी, चावल, दालें, सूत, कपास, बादाम, चाय, कॉफी तिलहन, सीमेंट, कोयला (Coal) इन्जीनियरिंग वस्तुयें, लोहा व स्टील, जूट, मशीनरी, खनिज पदार्थ, पेपर, रबर (Rubber), चांदी, सोना, टिम्बर (Timber), तम्बाकू, ऊन (Wool) आदि अनेक वस्तुयें सम्मिलित की जाती हैं। इन वस्तुओं की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक पृथक्-पृथक् वस्तुओं के लिये विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखते हैं। वस्तुओं की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक मार्जिन (Margin) राशि अधिक रखते हैं चूंकि इनके मूल्य में अधिक उतार-चढ़ाव होते हैं। माल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करने पर बैंक को अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। इसमें ऋण सुरक्षित समझा जाता है चूंकि माल मूर्त सम्पत्ति (Tangible Security) होती है तथा माल का मूल्य स्थिर रहता है। अतः आवश्यकता पड़ने पर बैंक माल को बेचकर अपना ऋण वसूल कर सकता है। इसमें बैंक अल्पकालीन (Short Term) ऋण प्रदान करता है। माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को निम्नलिखित जोखिम वहन करने पड़ते हैं—

(i) माल की प्रकृति क्षयशील होती है। बैंक को सदैव जोखिम रहता है कि माल शीघ्र ही नष्ट न हो जाये।

(ii) माल की कीमतों में देश की अर्थव्यवस्था का व्यापक महत्व होता है। माल की माँग कम होने पर माल की कीमतें घट जाती हैं। अतः माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को बाजार की अनिश्चितता का जोखिम भी वहन करना पड़ता है।

(iii) माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक पर स्टाक के मूल्यांकन एवं सत्यापन (Verification) का कार्यभार बढ़ जाता है।

(iv) माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करने में सबसे अधिक कपट (Fraud) की सम्भावना होती है। ऋणी के अधिकार में माल रहने की स्थिति में, बैंक ऋणी द्वारा भेजे गये विवरण पत्र पर ही विश्वास करता है और निश्चित अवधि के पश्चात् स्टाक का सत्यापन करता है। इस समय के बीच की अवधि में ऋणी द्वारा धोखे की सम्भावना रहती है कि ऋणी गलत विवरण पत्र (Statement) बनाकर बैंक में जमा करे और माल को बेचकर रुपया वसूल कर ले।

माल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय, बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ (Precautions) ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) इसमें ऋण केवल ख्याति प्राप्त (Credit Worthy) ग्राहकों को दिया जाना चाहिये। बैंक को ऋण देने से पूर्व, ऋणी की आर्थिक स्थिति का गहन अध्ययन करना चाहिये।

मिकता प्रदान करनी चाहिये जिनसे नियमित आय प्राप्त होती है। उदाहरणार्थ अंश व ऋण पत्र, स्थायी सम्पत्ति जिसे किराये पर उठाया गया है अथवा सावधि जमा रसीद (Fixed Deposit Receipt) जिस पर मासिक, तिमाही अथवा छमाही ब्याज देय होता है।

(8) स्थायित्व (Durable)—आदर्श प्रतिभूति के लिये यह अनिवार्य है कि वह स्थायी प्रकृति की होनी चाहिये। कुछ वस्तुयें, उदाहरणार्थ—फल आदि शीघ्र क्षयशील होने वाली प्रकृति की होती हैं जिन्हें प्रतिभूति के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार कुछ वस्तुयें निरन्तर ह्रासित होती हैं तथा कुछ वस्तुओं का अधिक समय तक भण्डार करने पर उनके गुण में कमी आती है अतः एक आदर्श प्रतिभूति के लिये यह आवश्यक है कि वह प्रतिभूति अपने गुण समाप्त किये विना अधिक समय तक भण्डार में रखी जा सकती है, उदाहरणार्थ—स्टील आयरन आदि वस्तुओं को अधिक समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

(9) भारमुक्त (Free from Liability)—एक आदर्श प्रतिभूति के लिये यह आवश्यक है कि उस पर कोई कर भार अथवा पूर्व प्रभार नहीं होना चाहिये अन्यथा सम्पत्ति से रुपया वसूल करते समय सर्वप्रथम पूर्व, कर भारों अथवा अन्य लेनदारों का रुपया भुगतान किया जायेगा और वाद में वर्तमान ऋण का भुगतान किया जायेगा। अतः आदर्श प्रतिभूति के लिये यह आवश्यक है कि वह भारमुक्त होनी चाहिये।

अतः उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि एक आदर्श प्रतिभूति में विभिन्न विशेपतायें होनी चाहियें। वैंक द्वारा ऋण प्रदान करते समय यह कठिन है कि वह ऐसी प्रतिभूति प्राप्त करे जिसमें समस्त विशेषतायें विद्यमान हों। परन्तु वैंक को उस प्रतिभूति की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान कर देना चाहिये जिसमें **बिक्रीयोग्यता** (Marketability), **निश्चितता** (Ascertainability), **स्थायित्व** (Stability) तथा **हस्तान्तरणशीलता** (Transferability) के गुण पाये जाते हैं। संक्षेप में, वैंक को प्रतिभूति प्राप्त करते समय **MAST** (Marketability, Ascertainability, Stability, Transferability) शब्द को ध्यान में रखना चाहिये जिसमें उपरोक्त चारों विशेपतायें प्रकट होती है।

विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियाँ
(Different Type of Securities)

वैंक अपने ऋणियों को विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियों के विरुद्ध ऋण प्रदान करता है। इन प्रतिभूतियों में माल, माल के हल विलेख, जीवन बीमा पॉलिसी, अंश, सावधि जमा रसीद आदि सम्मिलित की जाती हैं।

माल की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan Against Goods)

वैंक ऋण प्रदान करते समय अनेक प्रकार की प्रतिभूतियाँ प्राप्त करता है।

प्रतिभूतियाँ प्राप्त करने का मुख्य उद्देश्य ऋण को सुरक्षा प्रदान करना है। बैंक माल को जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करता है। माल के अन्तर्गत खाद्य सामग्री, व्यापारिक एवं निर्माण योग्य माल सम्मिलित किया जाता है। इसमें मुख्यतः गुड़, चीनी, चावल, दालें, सूत, कपास, बादाम, चाय, कॉफी तिलहन, सीमेंट, कोयला (Coal) इन्जीनियरिंग वस्तुयें, लोहा व स्टील, जूट, मशीनरी, खनिज पदार्थ, पेपर, रबर (Rubber), चांदी, सोना, टिम्बर (Timber), तम्बाकू, ऊन (Wool) आदि अनेक वस्तुयें सम्मिलित की जाती हैं। इन वस्तुओं की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक पृथक्-पृथक् वस्तुओं के लिये विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखते हैं। वस्तुओं की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक मार्जिन (Margin) राशि अधिक रखते हैं चूँकि इनके मूल्य में अधिक उतार-चढ़ाव होते हैं। माल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करने पर बैंक को अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। इसमें ऋण सुरक्षित समझा जाता है चूँकि माल मूर्त सम्पत्ति (Tangible Security) होती है तथा माल का मूल्य स्थिर रहता है। अतः आवश्यकता पड़ने पर बैंक माल को बेचकर अपना ऋण वसूल कर सकता है। इसमें बैंक अल्पकालीन (Short Term) ऋण प्रदान करता है। माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को निम्नलिखित जोखिम वहन करने पड़ते हैं—

(i) माल की प्रकृति क्षयशील होती है। बैंक को सदैव जोखिम रहता है कि माल शीघ्र ही नष्ट न हो जाये।

(ii) माल की कीमतों में देश की अर्थव्यवस्था का व्यापक महत्व होता है। माल की माँग कम होने पर माल की कीमतें घट जाती हैं। अतः माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को बाजार की अनिश्चितता का जोखिम भी वहन करना पड़ता है।

(iii) माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक पर स्टाक के मूल्यांकन एवं सत्यापन (Verification) का कार्यभार बढ़ जाता है।

(iv) माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करने में सबसे अधिक कपट (Fraud) की सम्भावना होती है। ऋणी के अधिकार में माल रहने की स्थिति में, बैंक ऋणी द्वारा भेजे गये विवरण पत्र पर ही विश्वास करता है और निश्चित अवधि के पश्चात् स्टाक का सत्यापन करता है। इस समय के बीच की अवधि में ऋणी द्वारा धोखे की सम्भावना रहती है कि ऋणी गलत विवरण पत्र (Statement) बनाकर बैंक में जमा करे और माल को बेचकर रुपया वसूल कर ले।

माल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय, बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ (Precautions) ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) इसमें ऋण केवल ख्याति प्राप्त (Credit Worthy) ग्राहकों को दिया जाना चाहिये। बैंक को ऋण देने से पूर्व, ऋणी की आर्थिक स्थिति का गहन अध्ययन करना चाहिये।

(2) कम्पनी को ऋण देते समय माल पर प्रभार (Charge) का निर्माण किया जाना चाहिये तथा प्रभार कम्पनी रजिस्ट्रार के पास रजिस्टर्ड होनी चाहिये। माल पर प्रभार की प्राथमिकता रजिस्ट्रेशन की तिथि से प्रभावी समझी जाती है।

(3) इसमें माल के गोदाम का बीमा (Insurance) कराया जाना चाहिये तथा बैंक को समय-समय पर गोदाम का निरीक्षण करना चाहिये। गोदाम की स्थिति शहर के बीच में होनी चाहिये।

(4) इसमें ऋणी द्वारा स्टॉक विवरण-पत्र (Statement) निश्चित अवधि पर जमा किया जाना चाहिये।

(5) इसमें माल की विक्रय साध्यता को ध्यान में रखकर ऋण दिया जाना चाहिये तथा ऋण राशि एवं माल के बाजार मूल्य में उचित मार्जिन होना चाहिये।

(6) माल क्षयशील प्रकृति का नहीं होना चाहिये।

(7) माल के मूल्य में अधिक उतार-चढ़ाव नहीं होना चाहिये।

(8) माल के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय उन वस्तुओं को ध्यान में रखना चाहिये जिन्हें रिजर्व बैंक द्वारा विशिष्ट साख नियन्त्रण (Selective Credit Control) में सम्मिलित किया गया है। उदाहरणार्थ—तिलहन, चावल आदि।

(9) ऋणी द्वारा बिक्री की राशि ऋण खाते में जमा की जानी चाहिये तथा ऋणी को अधिक बिक्री के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये।

(10) यदि ऋण की राशि स्थिर (Stagnant) है तब माल को तुरन्त बेचकर ऋण समायोजित करना चाहिये। ऋण का स्थिर होना खाते के व्यवहार तथा माल की प्रकृति (Nature of Goods) पर निर्भर करता है।

(11) बैंक द्वारा ऋण प्रदान करने पर बैंक के प्रभार की सूचना नोटिस बोर्ड पर लगाई जानी चाहिये।

(12) ऋणी द्वारा गोदाम से माल निकालते समय उसका लेखा स्टॉक रजिस्टर में किया जाना चाहिये तथा माल का उचित निरीक्षण करना चाहिये।

(13) बैंक को माल के स्वामित्व, उसके भण्डारण की अवधि तथा ऋण का उद्देश्य ज्ञात करना चाहिये। ऋण का उद्देश्य माल का संग्रहण करके सट्टे के कार्य को सम्पन्न करना नहीं होना चाहिये। ऋणी को माल में व्यवहार करने के उद्देश्य से सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त होनी चाहिये।

अतः उपरोक्त सावधानियों को ध्यान में रखते हुये बैंक द्वारा माल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान किया जा सकता है। इसमें केवल चल प्रकृति (Movable Nature) के माल के विरुद्ध ही ऋण प्रदान किया जाता है तथा ऋण कार्यशील पूंजी (Working Capital) के लिये प्रदान किया जाता है। यह ऋण नकद साख एवं ऋण अथवा विपत्रों के क्रय द्वारा प्रदान किया जाता है। नकद साख में ऋण गिरवी (Pledge) अथवा प्राधीयन अथवा दृष्टिबंधक (Hypothecation) द्वारा माल पर प्रभार उत्पन्न करके प्रदान किया जाता है।

माल पर गिरवी (Pledge) रखने की स्थिति में बैंक का माल पर अधिकार होता है *तथा स्वामित्व ऋणी का रहता है।* इसमे माल का निक्षेप (Bailment) ऋण की जमानत के लिये बैंक को किया जाता है। अतः गिरवी की स्थिति में गोदाम की चाबी बैंक के पास होती है। माल की सुपुर्दगी रचनात्मक अथवा वास्तविक हो सकती है। इस स्थिति में बैंक तथा ऋणी के सम्बन्ध गिरवीगृहीता (Pledgee) तथा गिरवीकर्त्ता (Pledger) के होते हैं। इसमें बैंक निम्नलिखित कर्त्तव्य (Duties) हैं—

(1) बैंक द्वारा माल की उचित देखभाल की जानी चाहिये।

(2) बैंक को माल का रख-रखाव पूर्ण सावधानी से करना चाहिये।

(3) *बैंक को माल का बीमा करवाना चाहिये जिससे माल की क्षति की* स्थिति मे बीमा कम्पनी से क्षतिपूर्ति की राशि प्राप्त हो सके।

(4) ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान करने पर बैंक को माल की वापसी ऋणी को करनी चाहिये।

माल गिरवी रखने की स्थिति में बैंक को निम्नलिखित अधिकार (Rights) प्राप्त होते हैं—

(1) बैंक को माल पर कब्जा (Possession) प्राप्त होता है।

(2) बैंक को उचित समयावधि का नोटिस देकर माल बेचने (Sale after *Notice of Reasonable Period) का अधिकार प्राप्त होता है।*

(3) बैंक माल को उस समय तक रोके रखने (Retain) का अधिकार रखता है जब तक कि उसे ऋण व उस पर ब्याज एव व्यय का भुगतान नही किया जाता है।

बैंक द्वारा माल पर प्राधीयन अथवा दृष्टिबंधक (Hypothecation) की सहायता से भी प्रभार उत्पन्न किया जा सकता हैं। इसमे माल पर स्वामित्व एवं कब्जा ऋणी का होता है परन्तु लेनदार (बैंक) के पक्ष में साम्यिक प्रभार निर्मित किया जाता है, जिसमे लेनदार कभी भी माल पर अपने अधिकार का प्रयोग कर सकता है। यह प्रभार वर्तमान एवं भावी वस्तुओं के लिये लागू समझा जाता है। इसमें बैंक संपार्श्विक प्रतिभूतियो की माँग करता है चूँकि यह बेज़मानती ऋण समझा जाता है।

बैंक द्वारा माल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करने के पश्चात् बाजार मूल्य का रजिस्टर तैयार किया जाता है जिसमे प्रत्येक सप्ताह माल के बाजार मूल्य को दर्शाया जाता है। इससे माल के बाजार मूल्य मे होने वाले परिवर्तनों का ज्ञान प्राप्त होता है। बैंक को स्टाक रजिस्टर की जाँच अनियमित समयावधि पर करनी चाहिये तथा माह मे एक बार जाँच का कार्य अवश्य किया जाना चाहिये। बैंक द्वारा माल की मात्रा (Quantity) एवं गुण (Quality) की नियमित जाँच की जानी चाहिये।

माल के हक विलेख के विरुद्ध ऋण
(Loan Against Document of Title to Goods)

माल के हक विलेख से आशय उस प्रपत्र से है जिसका धारक माल का वास्तविक स्वामी समझा जाता है। इसमें माल का हस्तान्तरण प्रपत्रों की सुपुर्दगी (Delivery) अथवा पृष्ठांकन (Endorsement) द्वारा किया जाता है। माल के हक विलेख में मुख्यतः लदान बिल (Bill of Lading), रेलवे रसीद (Railway Receipt), मोटर ट्रांसपोर्ट रसीद (Motor Transport Receipt), गोदाम रसीद (Ware-house Receipts) आदि सम्मिलित की जाती हैं, जो व्यवसाय के सामान्य उपक्रम में प्रयोग की जाती हैं तथा जिनसे माल पर अधिकार का साक्ष्य प्रगट होता है अथवा जिनका धारक उनकी सुपुर्दगी अथवा पृष्ठांकन से माल प्राप्त करने अथवा अन्तरित करने का अधिकार रखता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य विशेष महत्वपूर्ण है कि लॉरी रसीद (Lorry Receipt) को हक विलेख नहीं समझा गया है। इस निर्णय की पुष्टि रामचन्द्र गणपति प्रभु नामक विवाद[1] में की गयी है। प्रस्तुत विवाद में वादी बैंक द्वारा प्रतिवादी को लॉरी रसीद की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान किया गया। प्रतिवादी ने लॉरी कम्पनी से माल की सुपुर्दगी क्षतिपूरक बांड के आधार पर प्राप्त कर ली। बैंक ने प्रतिवादी के विरुद्ध इस आधार पर वाद प्रस्तुत किया कि लॉरी रसीद माल का हक विलेख है एवं इसका परक्रामण बैंक के हित में किया है। अतः बैंक को माल पर गिरवी का अधिकार प्राप्त है। बैंक का वाद लारी कम्पनी के विरुद्ध रद्द कर दिया गया परन्तु प्रतिवादी (ऋणी) के विरुद्ध स्वीकार किया गया। बैंक द्वारा मैसूर हाई कोर्ट में अपील की गयी। इसमें न्यायालय ने बैंक के विरुद्ध अपील रद्द कर दी तथा निर्णय में कहा गया कि लॉरी रसीद माल का हक विलेख नहीं है।

मान्यता प्राप्त लॉरी कम्पनी की लॉरी रसीद के विरुद्ध ऋण प्रदान किया जा सकता है। इण्डियन बैंक एसोसिएशन (I. B. A.) द्वारा कुछ ट्रांसपोर्ट कम्पनियों को मान्यता प्रदान की गई है जिनको लारी रसीद की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान किया जा सकता है। इसमें लॉरी रसीद बैंक के नाम में जारी की जाती है तथा बिल का भुगतान होने पर बैंक क्रेता के नाम में लॉरी रसीद परक्रामित करता है जिससे माल को प्राप्त करने का अधिकारी क्रेता हो जाता है। लदान बिल के सम्बन्ध में यह तथ्य विचारणीय है कि यदि जहाजी कम्पनी द्वारा माल लादन से पूर्व ही लदान रसीद जारी कर दी जाती है तब माल के अन्तरिती अथवा गिरवीग्रहीता को माल पर कोई अधिकार नहीं होता है परन्तु जहाजी कम्पनी क्षतिपूर्ति के लिये पूर्ण उत्तर-दायी होती है।

हक विलेखों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को अनेक

---

1. The Canara Industrial & Banking Syndicate Ltd Vs. Ram Chandra Ganapathy Prabhu. (A. I. R. 1968. Mysore 133)

जोखिम वहन करने पड़ते हैं। उदाहरणार्थ—हक विलेखो में कपट एवं बेईमानी की सम्भावनायें अधिक होती हैं तथा ये विलेख परक्राम्य प्रपत्र (Negotiable Instruments) नहीं होते हैं। अतः बैंक को अन्तरणकर्त्ता से अच्छा अधिकार नहीं मिल सकता है। रेलवे रसीद की स्थिति मे, ऋणी रेलवे कम्पनी से क्षतिपूरक बॉण्ड के आधार पर माल प्राप्त कर सकता है। अतः हक विलेख की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान मे रखनी चाहियें—

(1) इसमें ऋणी द्वारा कपट (Fraud) की सम्भावनायें अधिक होती हैं। अतः ऋण केवल ख्याति प्राप्त ग्राहकों को ही प्रदान किया जाना चाहिये।

(2) ऋण प्रदान करने से पूर्व अधिकार प्रपत्र की विशुद्धता (Genuineness) की पूर्ण जाँच करनी चाहिये। अधिकार प्रपत्रों पर माल की सुपुर्दगी के सम्बन्ध में कोई विपरीत तथ्य प्रकट नहीं होना चाहिये कि माल दूषित होने का भय है। ऐसे प्रपत्रों की जमानत पर ऋण प्रदान नहीं करना चाहिये।

(3) हक विलेख में माल का पूर्ण विवरण (Full Particulars), तिथि आदि होनी चाहिये तथा इसमें बीजक (Invoice) भी संलग्न होना चाहिये।

(4) माल का अग्नि, चोरी आदि के विरुद्ध बीमा (Insurance) होना चाहियें तथा बीमा माल की लागत मूल्य से अधिक होना चाहियें।

(5) ऋण प्रदान करने से पूर्व, बैंक को हक विलेख अपने कब्जे (Possession) में लेने चाहियें तथा प्रपत्रों पर बैंक के हित में पृष्ठांकन होना चाहिये जिससे ऋण का भुगतान न करने की स्थिति में बैंक माल प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त कर सके। अतः अधिकार विलेख बैंक के हित में पृष्ठांकित होने अनिवार्य हैं।

(6) बैंक को अधिकार प्रपत्रों के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय माल के वाहक (Carrier) को सूचित करना चाहिये कि अमुक माल अधिकार प्रपत्रों के प्रस्तुत करने पर ही सुपुर्द किया जाये और प्रपत्रों पर बैंक की विमुक्ति (Discharge) होनी चाहिये चूँकि इन परिस्थितियों में वाहक से माल क्षतिपूरक बन्धक के आधार पर भी प्राप्त किया जा सकता है।

(7) बैंक को ऋणी से उसकी लागत पर माल को छुड़ाने, बीमा कराने तथा गोदाम मे रखने के लिये अधिकार प्रपत्र (Letter of Authority) प्राप्त करना चाहिये।

(8) बैंक को माल वाहक की विश्वसनीयता (Genuineness) के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त करनी चाहिये।

(9) बैंक को माल पर प्रभार (Charge) निर्मित करना चाहिये। इसके लिये ऋण का भुगतान न होने पर, बैंक माल पर गिरवी रखता है जिसमें बैंक को माल बेचने का अधिकार प्राप्त होता है।

अतः बैंक को उपरोक्त सावधानियाँ ध्यान मे रखते हुए अधिकार प्रपत्रों को जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करना चाहिये। साधारणतः बैंक निम्नलिखित अधिकार प्रपत्रों को जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते हैं—

लदान बिल (Bill of Lading)—लदान रसीद जहाजी कम्पनी द्वारा माल

प्राप्ति की रसीद होती है जिसमें माल का पूर्ण विवरण, लदान की तिथि, माल पहुंचने का स्थान आदि तथ्यों का विवरण होता है। जहाजी कम्पनी माल की विषय-सामग्री (Contents) के लिये उत्तरदायी नहीं होती है। लदान रसीद स्वच्छ (Clean) होनी चाहिये अर्थात् उसमें कोई शर्त अथवा दूषित माल का विवरण नहीं होना चाहिये। जहाजी कम्पनी माल की सुपुर्दगी लदान रसीद के प्रस्तुत करने पर करती है तथा लदान रसीद पर पृष्ठांकन (Endorsement) होता है। लदान रसीद सुपुर्दगी एवं पृष्ठांकन द्वारा परक्रामित की जा सकती है तथा रसीद का अन्तरिती (Transferee) अपने नाम से माल पर अधिकार रख सकता है। लदान रसीद विनिमय साध्य प्रपत्र नहीं होती है जिससे अन्तरिती को अन्तरणकर्त्ता से अच्छा स्वामित्व प्राप्त नहीं होता है। परन्तु यदि माल के अभिकर्त्ता ने मालिक की सहमति के बिना माल अथवा अधिकार प्रपत्र बेच दिये हैं अथवा अन्तरित कर दिये हैं तब अन्तरिती को माल पर अच्छा अधिकार प्राप्त होता है यदि उसने माल का क्रय पूर्ण सद्भाव एवं मूल्य के बदले किया है।[1] इसी प्रकार माल का वह विक्रेता जिसने माल बेच दिया है परन्तु माल अथवा अधिकार प्रपत्र उसके कब्जे में हैं, माल को पुनः बेचता है तब माल के अन्तरिती को माल के विक्रेता से अच्छा स्वामित्व प्राप्त होगा बशर्ते उसने माल मूल्य के बदले एवं सद्भाव से प्राप्त किया है।[2] माल के अदत्त विक्रेता (Unpaid seller) को उस समय तक माल को मार्ग में रोकने का अधिकार प्राप्त है जब तक कि उसके माल का भुगतान नहीं किया जाता है अर्थात् क्रेता के दिवालिया होने पर वह माल मार्ग में रोक सकता है। परन्तु इससे पूर्व माल के प्रेपिती (Consignees) द्वारा माल अथवा माल के अधिकार प्रपत्र मूल्य के बदले बेचने पर माल के अदत्त विक्रेता के अधिकार समाप्त हो जाते हैं बशर्ते माल मूल्य के बदले एवं सद्भाव से प्राप्त किया गया है।

रेलवे रसीद (Railway Receipt)—रेलवे रसीद रेलवे कम्पनी द्वारा जारी प्रमाण-पत्र होता है जिसमें एक स्थान से अन्यत्र स्थान को माल ले जाने का अनुबन्ध होता है। यह माल का अधिकार प्रपत्र समझी जाती है। इसमें माल के स्वामित्व का हस्तान्तरण रेलवे रसीद के पृष्ठांकन अथवा सुपुर्दगी द्वारा सम्भव होता है। बैंक द्वारा रेलवे रसीद की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय रेलवे कम्पनी को माल पर बैंक की गिरवी के सम्बन्ध में सूचित करना चाहिये। रेलवे रसीद पर माल की मात्रा, विवरण, माल पहुंचाने का स्थल आदि तथ्यों का विवरण होता है। यदि रेलवे कम्पनी द्वारा माल क्षतिग्रस्त होता है तब बैंक को माल की पूर्ण कीमत से रेलवे कम्पनी के विरुद्ध वाद प्रस्तुत करने का अधिकार है चूंकि रेलवे रसीद पृष्ठांकन सहित बैंक को सुपुर्द करने की स्थिति में माल की गिरवी बैंक के हित में समझी जाती है। इस निर्णय की पुष्टि मूर्वी मर्केन्टाइल बैंक बनाम भारतीय संघ नामक विवाद में की गई है।

1. Sec. 27 of Sales of Goods Act, 1930.
2. Sec. 30 of Sales of Goods Act, 1930.

इस सम्बन्ध मे यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि पृष्ठांकिकी (Endorsee) को रेलवे कम्पनी के विरुद्ध उसी स्थिति मे वाद प्रस्तुत करने का अधिकार प्राप्त होता है जबकि उसके हित मे रेलवे रसीद का पृष्ठांकन मूल्य के बदले किया गया है। इस निर्णय की पुष्टि रोहतास इण्डस्ट्रीज बनाम भारतीय संघ नामक विवाद[1] में की गई है।

लॉरी रसीद (Lorry Receipt)—बैंक केवल मान्यता प्राप्त ट्रान्सपोर्ट कम्पनी की लॉरी रसीद के विरुद्ध ही ऋण प्रदान करते है। इसके अन्तर्गत बैंक द्वारा माल की लॉरी रसीद बैंक के नाम में जारी करवाई जाती है। इससे माल की सुपुर्दगी बैंक अथवा उसके आदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को होती है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि लॉरी रसीद माल के अधिकार प्रपत्रों मे सम्मिलित नहीं कि जाती है परन्तु उसके आधार पर ऋण प्रदान किया जा सकता है लॉरी रसीद के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान मे रखनी चाहिये—

(i) रसीद मान्यता प्राप्त ट्रान्सपोर्ट कम्पनी द्वारा जारी की जानी चाहिये।

(ii) रसीद माल के प्रेषक अथवा बैंक के हित मे होनी चाहिए।

(iii) रसीद प्रेषक के हित में होने की स्थिति में प्रेषक द्वारा रसीद पर बैंक के हित में पृष्ठांकन किया जाना चाहिए।

(iv) रसीद गतावधि (Stale) अथवा परिवर्तित नहीं होनी चाहिए।

(v) बैंक को ट्रान्सपोर्ट कम्पनी को सूचित करना चाहिए कि उक्त रसीद के माल पर बैंक का ग्रहणाधिकार है।

पोस्ट पार्सल (Post Parcel)—इसके अन्तर्गत ऋणी द्वारा बैंक से पार्सल की लागत का कुछ भाग ऋणस्वरूप पहले प्राप्त कर लिया जाता है और इसके पश्चात् पार्सल डाक अथवा हवाई जहाज द्वारा बैंक को प्रेषित किया जाता है जिसे बैंक प्रेषिती (Consignee) के रूप मे अपने पास रखता है। इसके पश्चात् ऋणी भाड़े (Freight) की रसीद तथा विनिमय विपत्र (Bill of Exchange) बैंक को भेजता है जिसमें विपत्र उस व्यक्ति के नाम में लिखा जाता है जिसे पार्सल सुपुर्द किया जाता है। पार्सल की सुपुर्दगी विपत्र के भुगतान के पश्चात् देय होती है। इस स्थिति में बैंक द्वारा ऋण माल के अधिकार प्रपत्रों की जमानत के विरुद्ध नहीं दिया जाता है वरन् यह ऋण माल की जमानत के विरुद्ध होता है।

गोदाम रसीद (Warehouse Receipt)—गोदाम रसीद हस्तान्तरण योग्य नहीं होती है परन्तु विशेष विधि (Law) द्वारा इसे हस्तान्तरण योग्य बनाया जा सकता है। जिन स्थानों पर यह हस्तान्तरण योग्य नहीं है वहाँ पर बैंक को रसीद अपने नाम में जारी करवानी चाहिये। यह रसीद इस बात का प्रमाण होती है कि गोदाम मे माल अमुक व्यक्ति की ओर से जमा किया गया है। इस रसीद को माल के अधिकार प्रपत्रों में शामिल किया गया है। बैंक को रसीद की विशुद्धता की पूर्ण

1. Rohtas Industries Vs. Union of India

जाँच करनी चाहिये तथा समय-समय पर गोदाम का निरीक्षण भी करना चाहिये। ऋण प्रदान करने से पूर्व माल का बीमा करवाया जाना चाहिये तथा माल के अन्य आवश्यक प्रपत्र बैंक के कब्जे में होने चाहियें।

साधारणत: बैंक उपरोक्त माल के अधिकार प्रपत्रों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करता है परन्तु इनके अतिरिक्त सुपुर्दगी आदेश (Delivery Order), डॉक वारन्ट (Dock Warrent) आदि भी माल के अधिकार प्रपत्रों में सम्मिलित किये जाते हैं।

जीवन बीमा पालिसी के विरुद्ध ऋण
(Loan against Life Insurance Policy)

जीवन बीमा पालिसी को एक अच्छी प्रतिभूति समझा जाता है। बैंक इसकी प्रतिभूति के विरुद्ध सरलता से ऋण प्रदान कर देते हैं। इसमें ऋणी अपना हित बैंक को हस्तान्तरित करने में समर्थ होते हैं तथा पालिसी का समर्पण मूल्य (Surrender Value) निश्चित होता है। इस सम्बन्ध में विशेष महत्वपूर्ण तथ्य यह होता है कि पालिसी का अभिहस्तांकन (Assignment) केवल पालिसी का स्वामी कर सकता है। पालिसी में नामांकित व्यक्ति (Nominee) पालिसी का अभिहस्तांकन नहीं कर सकता है चूंकि वह मृतक के उत्तराधिकारियों का ट्रस्टी समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि भारतीय जीवन बीमा निगम बनाम यूनाइटिड बैंक ऑफ इण्डिया नामक विवाद[1] में की गयी। जीवन बीमा पालिसी के अन्तर्गत अनेक प्रकार की पालिसियाँ प्रचलित हैं। परन्तु बैंक सुरक्षा के दृष्टिकोण से सावधि बीमा पालिसी (Endowment Insurance Policy) को महत्व प्रदान करता है। इसमें पालिसी का समर्पण मूल्य एक निश्चित तिथि पर देय होता है।

जीवन बीमा पालिसी की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करने का महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि बीमा पालिसी का तृतीय पक्ष के हित में अभिहस्तांकन हो सकता है। अत: बैंक के हित में बीमा पालिसी का विधिक अन्तरण किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, बीमा पालिसी का समर्पण मूल्य देय तिथि से पूर्व ही ज्ञात किया जा सकता है। यदि किसी कारणवश बीमा पालिसी पूर्ण अवधि के लिये चालू नहीं की जाती है तब बैंक अवधि से पूर्व ही बीमा कम्पनी से पालिसी का समर्पण मूल्य प्राप्त कर सकता है। परन्तु समर्पण मूल्य उसी तिथि में देय होता है जबकि बीमा पालिसी एक न्यूनतम अवधि के लिये चालू रही है। अत: बैंक को उसी बीमा पालिसी को जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करना चाहिये जिसका समर्पण मूल्य ज्ञात किया जा सकता हो अर्थात् पालिसी न्यूनतम अवधि के लिये चालू रही है।

बीमा पालिसी की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करने में बैंक को अनेक जोखिम वहन करने पड़ते है। बीमा पालिसी का दावा उस स्थिति में नहीं किया जा

1. Life Insurance Corporation of India Vs. United Bank of India Ltd. and others.

सकता है जबकि बीमाकृत व्यक्ति द्वारा कोई महत्वपूर्ण तथ्य छिपाया गया है अथवा गलत प्रकट किया गया है। इसके अतिरिक्त, प्रीमियम की राशि देय तिथि पर नियमित भुगतान न करने की स्थिति में भी बीमा पालिसी का दावा समाप्त हो जाता है। अतः जीवन बीमा पालिसी के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहिये—

(1) इसमें ऋणी की आयु का प्रमाण-पत्र (Birth Certificate) प्राप्त करना चाहिये और इस तथ्य का अध्ययन करना चाहिये कि जीवन बीमा निगम द्वारा सही आयु पालिसी में लिखी गयी है, चूँकि पालिसी का प्रीमियम आयु के अनुसार निर्धारित किया जाता है।

(2) बीमा पालिसी मे ऋणी का बीमित हित (Insurable Interest) होना चाहिये। बीमित हित से आशय उस मौद्रिक हित से है जो व्यक्ति के जीवन में निश्चित होता है। ऋण के लिये आवेदन करते समय व्यक्ति का हित होना अनिवार्य होता है।

(3) इसमें बैंक को ऋण प्रदान करने से पूर्व पालिसी का समर्पण मूल्य (Surrender Value) ज्ञात करना चाहिये तथा ऋण समर्पण मूल्य से 10 से 20 प्रतिशत से कम होना चाहिये। समर्पण मूल्य प्रारम्भ के तीन वर्षों में शून्य होता है तथा इसके पश्चात् जमा राशि का 30% से 80% तक होता है। पालिसी समर्पण मूल्य उस स्थिति में अधिक होता है जब पालिसी लम्बी अवधि से चालू रहती है। समर्पण मूल्य में पालिसी के अंशदान में उस अवधि का बोनस भी जोड़ा जाता है जिस अवधि के लिये पालिसी चालू रहती है।

(4) इसमे ऋण केवल सावधि बीमा पालिसी (Endowment Insurance Policy) के विरुद्ध दिया जाना चाहिये।

(5) इसमें ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक को बीमा पालिसिओं पर प्रभार (Charge) का निर्माण करना चाहिये। प्रभार का निर्माण पालिसी के अभिस्तांकन अथवा साम्यिक बन्धक द्वारा किया जा सकता है। अभिहस्तांकन प्रपत्र पर उचित स्टाम्प लगाये जाते हैं।

(6) इसमें ऋणी द्वारा बीमा पालिसी की प्रीमियम का नियमित भुगतान करने का वचन (Undertaking) प्राप्त करना चाहिये।

(7) विवाहित स्त्री अधिनियम (Married Woman Act) की धारा 6 के अनुसार स्त्री अथवा बच्चों के हित के लिये. जमा धन का अभिहस्तांकन नहीं किया जा सकता है। अतः अवयस्क अथवा विवाहित स्त्री के नाम में जारी बीमा पालिसी पर ऋण प्रदान नहीं किया जाना चाहिये।

(8) बीमा पालिसी का हस्तान्तरण अथवा अभिहस्तांकन (Assignment) होने पर वर्तमान स्थित नामांकन समाप्त हो जाता है। अतः पालिसी पर कोई ऐसी शर्त नहीं होनी चाहिये जो अभिहस्तांकन को प्रतिबन्धित (Restricted) करती है।

(9) बीमा पालिसी की जमानत पर ऋण उसी स्थिति में प्रदान किया जाना चाहिये जबकि बीमा कम्पनी द्वारा बैंक के हित में पालिसी पर अभिहस्तांकन कर लिया गया है तथा इसकी सूचना बैंक को दी जा चुकी है। बैंक को पालिसी पर पूर्व प्रभार (Prior Charge) के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी चाहिये और इस आशय का पुष्टिकरण बीमा कम्पनी से प्राप्त करना चाहिये कि पालिसी पर कोई पूर्व प्रभार निर्मित नहीं किया गया है।

(10) बैंकों को ऋणी से प्रीमियम भुगतान की रसीद (Payment Receipt) नियमित रूप में प्राप्त करनी चाहिये।

(11) ऋण का भुगतान होने पर बैंक को बीमा पालिसी बीमा कम्पनी को भेजनी चाहिये तथा पालिसी पर पुनः अभिहस्तांकन (Reassignment) किया जाना चाहिये।

अतः बैंकों को बीमा पालिसी की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय उपरोक्त समस्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

सरकारी प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan against Government Securities)

सरकारी प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध बैंक सरलता से ऋण प्रदान कर सकते हैं चूंकि इसमें सरकारी प्रतिभूतियों का मूल्य स्थिर रहता है तथा सरकारी प्रतिभूतियाँ सुरक्षित समझी जाती हैं। इन प्रतिभूतियों में सरकारी प्रतिज्ञा-पत्र (Government Promissory Notes), वाहक बन्धक-पत्र (Bearer Bonds) आदि सम्मिलित किये जाते हैं। बैंक को इन प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंक को सरकारी प्रतिभूतियाँ अपने कब्जे (Possession) में प्राप्त करनी चाहियें।

(2) प्रतिभूतियों का पृष्ठांकन (Endorsement) बैंक के हित में होना चाहिये तथा प्रतिभूतियों पर प्रभार का निर्माण किया जाना चाहिये।

(3) प्रतिभूतियों के मूल्य एवं ऋण की राशि में 10 से 25 प्रतिशत का मार्जिन (Margin) होना चाहिये।

(4) बैंक को प्रतिभूतियाँ प्राप्त करके रिजर्व बैंक के सार्वजनिक ऋण विभाग (Public Debt Department) में जाँच एवं लेखन के उद्देश्य से भेजना चाहिये जहाँ पर प्रतिभूतियों के पृष्ठांकन की जाँच करके उसका रिकार्ड में लेखा किया जाता है।

(5) इसमें ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक को माँग पर वचन-पत्र (DPN) गिरवी-प्रपत्र (Letter of Pledge) एवं सरकारी प्रतिभूतियाँ (Government Securities) प्राप्त होनी चाहियें।

(6) प्रतिभूतियों पर बैंक का प्रभार (Charge) होता है। ऋणी की अदायगी के पश्चात् प्रतिभूतियाँ सार्वजनिक ऋण विभाग में भेजी जाती हैं जहाँ पर बैंक का प्रभार समाप्त किया जाता है।

अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan Against Shares)

साधारणतः बैंक लिमिटेड कम्पनी के अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं करते हैं। इसमें अंश अंशतः दत्त (Partly Paid-up) हो सकते हैं अथवा अंशों पर कम्पनी का ग्रहणाधिकार (Lien) होता है। अंश परक्राम्य प्रपत्र नहीं होते हैं जिससे कम्पनी के अंशों पर शुद्ध अधिकार प्राप्त नहीं होता है। अतः बैंक को अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंकों को पूर्णतः दत्त अंशों (Fully Paid up Shares) की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करना चाहिये। अंशतः दत्त अंशों (Partly Paid up Shares) प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करने से पूर्व रिजर्व बैंक की सहमति आवश्यक होती है। इसके अतिरिक्त अंशतः दत्त अंशों की स्थिति में सम्बद्ध कम्पनी को अंशों पर ग्रहणाधिकार प्रयोग करने का अधिकार होता है। अतः अंशतः दत्त अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त अंशों के सम्बन्ध में कपट की सम्भावनायें अधिक होती हैं। अतः ऋण प्रदान करने से पूर्व सम्बन्धित अंश प्रमाण-पत्र की वैधता एवं शुद्धता का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

(2) बैंकों को ऋण प्रदान करते समय अंशों का चयन (Selection) पूर्ण सावधानी से करना चाहिये। अंशों का चयन करते समय कम्पनी की ख्याति, व्यवसाय का स्वरूप, प्रबन्धकों की कार्य-कुशलता तथा कम्पनी की गत वर्षों में वित्तीय स्थिति का अध्ययन किया जाना चाहिये।

(3) बैंको को केवल उन्हीं अंशों की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करना चाहिये जिन अंशों का बाजार मूल्य स्थिर (Stable) रहता है। ऋण प्रदान करते समय अंशों के अंकित मूल्य को ध्यान में रखा जाता है। अतः बैंक को उन अंशों की जमानत पर ऋण प्रदान करना चाहिये जिनका अंकित मूल्य बाजार मूल्य से कम होता है अर्थात् बाजार मूल्य अधिक होता है।

(4) इसमें ऋण केवल ख्याति प्राप्त व्यक्ति (Credit Worthy) को ही प्रदान किया जाना चाहिये तथा ऋण अल्पकालीन अवधि के लिये प्रदान किया जाना चाहिये।

(5) इसमें बैंक को अंशों पर प्रभार (Charge) निर्मित करना चाहिये। बैंक अंशों पर प्रभार उत्पन्न करने के लिये विभिन्न पद्धतियों का प्रयोग कर सकता है। बैंक वैधानिक स्वामित्व उत्पन्न करके, साम्यिक स्वामित्व उत्पन्न करके अथवा

(9) बीमा पालिसी की जमानत पर ऋण उसी स्थिति में प्रदान किया जान चाहिये जबकि बीमा कम्पनी द्वारा बैंक के हित में पालिसी पर अभिहस्तांकन कर लिया गया है तथा इसकी सूचना बैंक को दी जा चुकी है। बैंक को पालिसी पर पूर्व प्रभार (Prior Charge) के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी चाहिये और इस आशय का पुष्टिकरण बीमा कम्पनी से प्राप्त करना चाहिये कि पालिसी पर कोई पूर्व प्रभार निर्मित नहीं किया गया है।

(10) बैंकों को ऋणी से **प्रीमियम भुगतान की रसीद** (Payment Receipt) नियमित रूप में प्राप्त करनी चाहिये।

(11) ऋण का भुगतान होने पर बैंक को बीमा पालिसी बीमा कम्पनी को भेजनी चाहिये तथा पालिसी पर पुनः अभिहस्तांकन (Reassignment) किया जाना चाहिये।

अतः बैंकों को बीमा पालिसी की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय उपरोक्त समस्त सावधानियां ध्यान में रखनी चाहियें।

सरकारी प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan against Government Securities)

सरकारी प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध बैंक सरलता से ऋण प्रदान कर सकते हैं चूंकि इसमें सरकारी प्रतिभूतियों का मूल्य स्थिर रहता है तथा सरकारी प्रतिभूतियाँ सुरक्षित समझी जाती हैं। इन प्रतिभूतियों में सरकारी **प्रतिज्ञा-पत्र** (Government Promissory Notes), **वाहक बन्धक-पत्र** (Bearer Bonds आदि सम्मिलित किये जाते हैं। बैंक को इन प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय **निम्नलिखित सावधानियाँ** ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंक को सरकारी प्रतिभूतियाँ अपने **कब्जे** (Possession) में प्राप्त करनी चाहियें।

(2) प्रतिभूतियों का **पृष्ठांकन** (Endorsement) बैंक के हित में होना चाहिये तथा प्रतिभूतियों पर प्रभार का निर्माण किया जाना चाहिये।

(3) प्रतिभूतियों के मूल्य एवं ऋण की राशि में **10 से 25 प्रतिशत** का मार्जिन (Margin) होना चाहिये।

(4) बैंक को प्रतिभूतियाँ प्राप्त करके रिजर्व बैंक के **सार्वजनिक ऋण विभाग** (Public Debt Department) में जाँच एवं लेखन के उद्देश्य से भेजना चाहि जहाँ पर प्रतिभूतियों के पृष्ठांकन की जाँच करके उसका रिकार्ड में लेखा किया जाता है।

(5) इसमें ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक को **मांग पर वचन-पत्र** (DPN **गिरवी-प्रपत्र** (Letter of Pledge) एवं **सरकारी प्रतिभूतियाँ** (Government Securities) प्राप्त होनी चाहियें।

(6) प्रतिभूतियों पर बैंक का प्रभार (Charge) होता है। ऋणी की अदायगी के पश्चात् प्रतिभूतियाँ सार्वजनिक ऋण विभाग में भेजी जाती हैं जहाँ पर बैंक का प्रभार समाप्त किया जाता है।

अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan Against Shares)

साधारणतः बैंक लिमिटेड कम्पनी के अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं करते हैं। इसमें अंश अंशतः दत्त (Partly Paid-up) हो सकते हैं अथवा अंशों पर कम्पनी का ग्रहणाधिकार (Lien) होता है। अंश परक्राम्य प्रपत्र नहीं होते हैं जिससे कम्पनी के अंशों पर शुद्ध अधिकार प्राप्त नहीं होता है। अतः बैंक को अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंकों को पूर्णतः दत्त अंशों (Fully Paid up Shares) की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करना चाहिये। अंशतः दत्त अंशों (Partly Paid up Shares) प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करने से पूर्व रिजर्व बैंक की सहमति आवश्यक होती है। इसके अतिरिक्त अंशतः दत्त अंशों की स्थिति में सम्बद्ध कम्पनी को अंशों पर ग्रहणाधिकार प्रयोग करने का अधिकार होता है। अतः अंशतः दत्त अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त अंशों के सम्बन्ध में कपट की सम्भावनायें अधिक होती हैं। अतः ऋण प्रदान करने से पूर्व सम्बन्धित अंश प्रमाण-पत्र की वैधता एवं शुद्धता का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

(2) बैंकों को ऋण प्रदान करते समय अंशों का चयन (Selection) पूर्ण सावधानी से करना चाहिये। अंशों का चयन करते समय कम्पनी की ख्याति, व्यवसाय का स्वरूप, प्रबन्धकों की कार्य-कुशलता तथा कम्पनी की गत वर्षों में वित्तीय स्थिति का अध्ययन किया जाना चाहिये।

(3) बैंकों को केवल उन्हीं अंशों की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करना चाहिये जिन अंशों का बाजार मूल्य स्थिर (Stable) रहता है। ऋण प्रदान करते समय अंशों के अंकित मूल्य को ध्यान में रखा जाता है। अतः बैंक को उन अंशों की जमानत पर ऋण प्रदान करना चाहिये जिनका अंकित मूल्य बाजार मूल्य से कम होता है अर्थात् बाजार मूल्य अधिक होता है।

(4) इसमें ऋण केवल ख्याति प्राप्त व्यक्ति (Credit Worthy) को ही प्रदान किया जाना चाहिये तथा ऋण अल्पकालीन अवधि के लिये प्रदान किया जाना चाहिये।

(5) इसमें बैंक को अंशों पर प्रभार (Charge) निर्मित करना चाहिये। बैंक अंशों पर प्रभार उत्पन्न करने के लिये विभिन्न पद्धतियों का प्रयोग कर सकता है। बैंक वैधानिक स्वामित्व उत्पन्न करके, साम्यिक स्वामित्व उत्पन्न करके अथवा

(9) बीमा पालिसी की जमानत पर ऋण उसी स्थिति में प्रदान किया जाना चाहिये जबकि बीमा कम्पनी द्वारा बैंक के हित में पालिसी पर अभिहस्तांकन कर लिया गया है तथा इसकी सूचना बैंक को दी जा चुकी है। बैंक को पालिसी पर पूर्व प्रभार (Prior Charge) के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी चाहिये और इस आशय का पुष्टिकरण बीमा कम्पनी से प्राप्त करना चाहिये कि पालिसी पर कोई पूर्व प्रभार निर्मित नहीं किया गया है।

(10) बैंकों को ऋणी से प्रीमियम भुगतान की रसीद (Payment Receipt) नियमित रूप में प्राप्त करनी चाहिये।

(11) ऋण का भुगतान होने पर बैंक को बीमा पालिसी बीमा कम्पनी को भेजनी चाहिये तथा पालिसी पर पुनः अभिहस्तांकन (Reassignment) किया जाना चाहिये।

अतः बैंकों को बीमा पालिसी की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय उपरोक्त समस्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

सरकारी प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan against Government Securities)

सरकारी प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध बैंक सरलता से ऋण प्रदान कर सकते हैं चूंकि इसमें सरकारी प्रतिभूतियों का मूल्य स्थिर रहता है तथा सरकारी प्रतिभूतियाँ सुरक्षित समझी जाती हैं। इन प्रतिभूतियों में सरकारी प्रतिज्ञा-पत्र (Government Promissory Notes), वाहक बन्धक-पत्र (Bearer Bonds) आदि सम्मिलित किये जाते हैं। बैंक को इन प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंक को सरकारी प्रतिभूतियाँ अपने कब्जे (Possession) में प्राप्त करनी चाहियें।

(2) प्रतिभूतियों का पृष्ठांकन (Endorsement) बैंक के हित में होना चाहिये तथा प्रतिभूतियों पर प्रभार का निर्माण किया जाना चाहिये।

(3) प्रतिभूतियों के मूल्य एवं ऋण की राशि में 10 से 25 प्रतिशत का मार्जिन (Margin) होना चाहिये।

(4) बैंक को प्रतिभूतियाँ प्राप्त करके रिजर्व बैंक के सार्वजनिक ऋण विभाग (Public Debt Department) में जाँच एवं लेखन के उद्देश्य से भेजना चाहिये जहाँ पर प्रतिभूतियों के पृष्ठांकन की जाँच करके उसका रिकार्ड में लेखा किया जाता है।

(5) इसमें ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक को माँग पर वचन-पत्र (DPN) गिरवी-प्रपत्र (Letter of Pledge) एवं सरकारी प्रतिभूतियाँ (Government Securities) प्राप्त होनी चाहियें।

(6) प्रतिभूतियों पर बैंक का प्रभार (Charge) होता है। ऋणी की अदायगी के पश्चात् प्रतिभूतियाँ सार्वजनिक ऋण विभाग में भेजी जाती हैं जहाँ पर बैंक का प्रभार समाप्त किया जाता है।

अंशों को जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan Against Shares)

साधारणतः बैंक लिमिटेड कम्पनी के अंशों को जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं करते हैं। इसमें अंश अंशतः दत्त (Partly Paid-up) हो सकते हैं अथवा अंशों पर कम्पनी का ग्रहणाधिकार (Lien) होता है। अंश परक्राम्य प्रपत्र नहीं होते हैं जिससे कम्पनी के अंशों पर शुद्ध अधिकार प्राप्त नहीं होता है। अतः बैंक को अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंकों को पूर्णतः दत्त अंशों (Fully Paid up Shares) की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करना चाहिये। अंशतः दत्त अंशों (Partly Paid up Shares) प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करने से पूर्व रिजर्व बैंक की सहमति आवश्यक होती है। इसके अतिरिक्त अंशतः दत्त अंशों की स्थिति में सम्बद्ध कम्पनी को अंशों पर ग्रहणाधिकार प्रयोग करने का अधिकार होता है। अतः अंशतः दत्त अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त अंशों के सम्बन्ध में कपट की सम्भावनायें अधिक होती हैं। अतः ऋण प्रदान करने से पूर्व सम्बन्धित अंश प्रमाण-पत्र की वैधता एवं शुद्धता का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

(2) बैंकों को ऋण प्रदान करते समय अंशों का चयन (Selection) पूर्ण सावधानी से करना चाहिये। अंशों का चयन करते समय कम्पनी की ख्याति, व्यवसाय का स्वरूप, प्रबन्धकों की कार्य-कुशलता तथा कम्पनी की गत वर्षों में वित्तीय स्थिति का अध्ययन किया जाना चाहिये।

(3) बैंकों को केवल उन्हीं अंशों की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करना चाहिये जिन अंशों का बाजार मूल्य स्थिर (Stable) रहता है। ऋण प्रदान करते समय अंशों के अंकित मूल्य को ध्यान में रखा जाता है। अतः बैंक को उन अंशों की जमानत पर ऋण प्रदान करना चाहिये जिनका अंकित मूल्य बाजार मूल्य से कम होता है अर्थात् बाजार मूल्य अधिक होता है।

(4) इसमें ऋण केवल ख्याति प्राप्त व्यक्ति (Credit Worthy) को ही प्रदान किया जाना चाहिये तथा ऋण अल्पकालीन अवधि के लिये प्रदान किया जाना चाहिये।

(5) इसमें बैंक को अंशों पर प्रभार (Charge) निर्मित करना चाहिये। बैंक अंशों पर प्रभार उत्पन्न करने के लिये विभिन्न पद्धतियों का प्रयोग कर सकता है। बैंक वैधानिक स्वामित्व उत्पन्न करके, साम्यिक स्वामित्व उत्पन्न क[illegible]

कोरे अन्तरण (Blank Transfer) द्वारा अंशों पर प्रभार उत्पन्न कर सकता है। कोरे अन्तरण पत्र पर तिथि व स्टाम्प नहीं होता है।

(6) ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक को सम्बन्धित कम्पनी को सूचित करना चाहिये कि अमुक अंशों पर कम्पनी का प्रभार (Charge) है।

(7) बैंक अपनी दत्त पूँजी एवं संचय (Capital and Reserve) के 30 प्रतिशत से अधिक किसी एक कम्पनी के अंशों के क्रय में विनियोग नहीं कर कर सकता है और न ही बैंक किसी कम्पनी की अंश पूंजी का 30 प्रतिशत से अधिक भाग क्रय कर सकता है।

(8) अंशों का 50,000 रुपये से अधिक का ऋण प्रदान करने की स्थिति में अंश बैंकों के नाम में हस्तांतरित (Transferred) होने चाहियें तथा बैंकों को कम्पनी में मताधिकार के प्रयोग का अधिकार होना चाहिये।

(9) बैंक को अंशों तथा कम्पनी की सम्पत्तियों की संयुक्त जमानत के आधार पर कोई ऋण प्रदान नहीं करना चाहिये और न ही पूर्व ऋण का नवीनीकरण करना चाहिये।

(10) बैंक द्वारा अंशों को गिरवी रखने की स्थिति में अंशों के लिये वोट देने के अधिकार (Voting Right) का प्रयोग रिज़र्व बैंक के निर्देशों के अधीन, उसकी पूर्व अनुमति से किया जायेगा।

(11) बैंक को केवल उसी कम्पनी के अंशों पर ऋण प्रदान करना चाहिये जिसके अंश व ऋण-पत्र स्कन्ध बाजार (Stock Exchange) में नियमित रूप से प्रकाशित होते हैं अर्थात् उनका मूल्य प्रतिदिन स्कन्ध बाजार में प्रकाशित किया जाता है तथा कम्पनी द्वारा पूर्व 3 वर्षों से लगातार लाभांश घोषित किया जा रहा है।

(12) बैंक को निजी कम्पनी (Private Company) के अंशों के विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं करना चाहिये चूंकि उनका हस्तान्तरण नहीं किया जा सकता है।

(13) कम्पनी के अंश व ऋण-पत्र कटे-फटे (Mutilated) अथवा परिवर्तित (Changed) नहीं होने चाहियें। अंशों में किया गया परिवर्तन कम्पनी द्वारा प्रमाणित होना चाहिये।

(14) ऋण का भुगतान न करने की स्थिति में, बैंक को ऋणी को उचित समयावधि का नोटिस देकर अंश बेच देने (Sell) चाहियें।

अतः बैंक को अंशों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय उपरोक्त समस्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

बहीगत ऋण की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan against Book Debts)

बहीगत ऋणों का तृतीय पक्षकार को अभिहस्तांकन (Assignment) किया जाता है। बहीगत ऋण से अभिप्राय चल सम्पत्ति में लाभकारी हित से होता है।

बहीगत ऋण की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहिये—

(1) बहीगत ऋण वैधानिक (Legal) होने चाहियें तथा ऋण की शोधन क्षमता अच्छी होनी चाहिये।

(2) बहीगत ऋण का अभिहस्तांकन लिखित (Written) होना चाहिये।

(3) अभिहस्तांकन की सूचना (Notice) ऋणी के समस्त देनदारों को दी जानी चाहिये।

(4) इसमें हस्तांतरिती को बहीगत ऋणों का अभिहस्तांकन दायित्वों (Equities) के साथ होता है।

(5) बहीगत ऋण की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करने से पूर्व ऋणी की वित्तीय स्थिति (Financial Condition) का अध्ययन करना चाहिये।

अतः बैंक को उपरोक्त सावधानियाँ ध्यान में रखते हुए ऋण प्रदान करना चाहिये।

वास्तविक सम्पत्तियों की जमानत के विरुद्ध ऋण (Loan against Real Estate)

वास्तविक सम्पत्तियों की जमानत के विरुद्ध सावधि ऋण (Term Loan) प्रदान किये जाते हैं। बैंक ऋण प्रदान करने से पूर्व सम्पत्ति का मूल्यांकन करवाता है तथा सम्पत्ति के वास्तविक स्वामी से सम्पत्ति का अपने पक्ष में साम्यिक बन्धक करवाता है। बन्धक रजिस्टर्ड होना चाहिये। वास्तविक सम्पत्तियों की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) सम्पत्ति के हक विलेखों (Title Documents) का अध्ययन करना चाहिये कि स्वामित्व प्रपत्र ऋणी के नाम में है अथवा नहीं। इसके अतिरिक्त, सम्पत्ति पर पूर्व प्रभार (Prior Charge) की जाँच करनी चाहिये। बैंक द्वारा जाँच का कार्य रजिस्ट्री कार्यालय की सहायता से किया जा सकता है जहाँ पर सम्पत्ति अन्तरण का विवरण प्राप्त होता है। इसकी सहायता से विशिष्ट सम्पत्ति के 13 वर्ष पूर्व का विवरण प्राप्त करके सम्पत्ति के सम्बन्ध में यह जानकारी प्राप्त की जा सकती है कि सम्पत्ति पर पूर्व प्रभार है अथवा नहीं तथा सम्पत्ति का वास्तविक स्वामी कौन है? यदि सम्पत्ति पर पूर्व प्रभार है तब बैंक को ऋण प्रदान नहीं करना चाहिये।

(2) ऋणी की आर्थिक स्थिति (Financial Condition) सुदृढ़ होनी चाहिये।

(3) ऋण प्रदान करने से पूर्व सम्पत्ति का पुनर्मूल्यांकन करवाना चाहिये। पुनर्मूल्यांकन करते समय सम्पत्ति के वसूली मूल्य (Realisable Value) को ध्यान में रखना चाहिये।

(4) सम्पत्ति बीमित (Insured) होनी चाहिये।

(5) सम्पत्ति पर बैंक के हित में बन्धक (Mortgage) होना चाहिये तथा बन्धक रजिस्टर्ड होना चाहिये।

(6) वास्तविक सम्पत्ति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को सम्पत्ति मूल्य पर पर्याप्त मार्जिन रखते हुए ऋण राशि (Amount of Loan) का निर्धारण करना चाहिये। यह मार्जिन **30** से **50** प्रतिशत तक हो सकता है।

अत: बैंक को उपरोक्त सावधानियाँ ध्यान में रखते हुए ऋण प्रदान करना चाहिये।

सावधि जमा रसीद की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan against Fixed Deposit Receipt)

सावधि जमा रसीद की जमानत के विरुद्ध माँग पर देय ऋण (Demand Loan) प्रदान किये जाते हैं। इसमें ऋणी नकद साख अथवा ऋण खाते के रूप में ऋण प्राप्त करते हैं। बैंक अपने द्वारा अथवा अपनी शाखा द्वारा जारी सावधि जमा रसीद की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान कर सकता है। ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंक को केवल उन्हीं जमा रसीदों की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करने चाहियें जो बैंक द्वारा अथवा बैंक की अन्य शाखा द्वारा जारी की गई हैं। अन्य बैंक द्वारा जारी जमा रसीद की जमानत पर ऋण प्रदान नहीं करना चाहिये, चूंकि अन्य बैंक दूसरे बैंक का ग्रहणाधिकार अथवा लियन (Lien) स्वीकार नहीं करता है तथा वह बैंक जमा रसीद की राशि देय तिथि पर ऋण प्रदान करने वाले बैंक को भेजने के लिये बाध्य नहीं है। अत: अन्य बैंक द्वारा जारी जमा रसीद पर ऋण प्रदान नहीं करना चाहिये। इस पर बेजमानती ऋण (Clean Loan) प्रदान किया जा सकता है जिसमें ऋणी की व्यक्तिगत जमानत तथा तृतीय पक्षकार की जमानत की माँग की जा सकती है। अन्य बैंक द्वारा जारी रसीद के आधार पर उसी स्थिति में ऋण प्रदान किया जाता है जबकि जमा रसीद जारी करने वाला बैंक अपनी पुस्तकों में ऋण प्रदान करने वाले बैंक के ग्रहणाधिकार का पुष्टिकरण कर देता है तथा देय तिथि पर जमा रसीद की राशि ऋण प्रदान करने वाले बैंक को भेजने की सहमति प्रगट कर देता है। इसी प्रकार विदेशों में स्थित शाखा द्वारा जारी जमा रसीद की जमानत पर ऋण प्रदान करने से पूर्व दोनों देशों के केन्द्रीय बैंकों की पूर्वानुमति आवश्यक होती है।

(2) बैंक को ऋण प्रदान करते समय **25** प्रतिशत का मार्जिन (Margin) रखना चाहिये अर्थात् ऋण राशि सावधि जमा रसीद का **75** प्रतिशत होनी चाहिये।

(3) ऋण उसी व्यक्ति को प्रदान करना चाहिये जिसके नाम में जमा रसीद

जारी की गई है। यदि जमा रसीद एक से अधिक व्यक्ति के नाम में जारी की गई है तब समस्त व्यक्तियों के द्वारा बैंक के पक्ष में उन्मुक्ति (Discharge) के लिये जमा रसीद पर हस्ताक्षर किये जाने चाहियें। यह बैंक का सामान्य ग्रहणाधिकार होता है। इस स्थिति में ऋण केवल एक व्यक्ति के नाम में भी दिया जा सकता है।

(4) अवयस्क (Minor) के नाम में जारी जमा रसीद की प्रतिभूति पर प्रदान किया गया ऋण अवयस्क के हित में प्रयोग के लिये दिया जाना चाहिये। इस स्थिति में ऋण प्राप्त करने का अधिकार अवयस्क के अभिभावक को होता है।

(5) जमा रसीद की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान करते समय बैंक ब्याज दर से 2 प्रतिशत अधिक ऋण दर का निर्धारण करता है। यदि ऋण व्यापारिक उद्देश्य के लिये लिया गया है तब ऋण का निर्धारण ऋण के उद्देश्य के अनुसार किया जाता है।

(6) जमा रसीद की देय तिथि (Maturity Date) पर ऋण का समायोजन (Adjustment) कर देना चाहिये।

(7) ऋण प्रदान करने से पूर्व ग्राहक की जमा रसीद एवं जमा खाते पर ग्रहणाधिकार (Lien) शब्द लिख देना चाहिये। बैंक का ग्रहणाधिकार सामान्य ग्रहणाधिकार होता है।

(8) अन्य शाखा द्वारा जमा रसीद की प्रतिभूति पर ऋण उसी स्थिति में प्रदान किया जाता चाहिये जबकि सम्बन्धित शाखा को ग्रहणाधिकार के लिये जमा रसीद भेज दी जाये और शाखा से ग्रहणाधिकार का पुष्टिकरण प्राप्त हो जाये। इस स्थिति में देय तिथि पर जारी करने वाली शाखा को जमा रसीद की धनराशि ऋण प्रदान करने वाली शाखा को भेज देनी चाहिये।

(9) यदि सावधि जमा रसीद के आधार पर किसी तृतीय पक्षकार (Third Party) को ऋण प्रदान किया जाता है तब ऋण पर ब्याज की दर का निर्धारण ऋण के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। (विस्तार के लिये देखिये अध्याय 5, सावधि जमा खाता)

अतः बैंक को सावधि जमा रसीद के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय उपरोक्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें।

राष्ट्रीय बचत प्रमाण-पत्र की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Loan against National Saving Certificate)

राष्ट्रीय बचत प्रमाण-पत्र सरकार द्वारा जारी प्रतिज्ञा-पत्र होते हैं जिनका भुगतान 6 वर्ष बाद देय होता है तथा इन पर 12 प्रतिशत की दर से ब्याज प्रदान किया जाता है। इन प्रमाण-पत्रों में नामांकन की सुविधा उपलब्ध होती है तथा आवश्यकता पड़ने पर इनका 3 वर्ष पश्चात् परिपक्वता की तिथि से पूर्व भुगतान भी प्राप्त किया जा सकता है। इस स्थिति में ब्याज दर पृथक होती है। सरकार द

बैंकों को प्रमाण-पत्र की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करने के निर्देश दिये गये हैं। ये प्रमाण-पत्र धन कर (Wealth Tax) से मुक्त होते हैं तथा इनमें लगाई गई राशि आयकर में करदाता को 80 C के अन्तर्गत छूट प्रदान करने के उद्देश्य से अधिकतम राशि (Qualifying Amount) में सम्मिलित की जाती है अर्थात करदाता को इस राशि पर छूट प्रदान की जाती है।

बैंकों द्वारा राष्ट्रीय बचत प्रमाण-पत्र की जमानत के ऋण विरुद्ध प्रदान करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) इनके विरुद्ध माँग पर देय ऋण (Demand Loan) अथवा नकद साख सुविधा (Cash Credit Facilities) प्रदान की जा सकती है जिसका भुगतान अधिकतम 36 माह में देय होता है। ऋण की राशि बराबर किश्तों में भुगतान की जाती है। इसी प्रकार नकद साख की स्थिति ऋण सीमा (Loan Limit) निरन्तर किश्त की राशि से घटती रहती है।

(2) ऋण पर 17·5% की दर से ब्याज वसूल किया जाता है।

(3) ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक को निम्नलिखित कार्यवाही करनी चाहिये—

(i) राष्ट्रीय बचत प्रमाण-पत्र को सम्बद्ध डाकखाने (Post Office) में बैंक के हित में प्रभार (Charge) के उद्देश्य से भेजना चाहिये। प्रमाण-पत्रों को डाक द्वारा भेजा जाना चाहिये।

(ii) डाकखाने से प्रमाण-पत्रों का बैंक के हित में अन्तरण होने के पश्चात् बैंक उनकी जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान कर सकता है। इस उद्देश्य से डाकखाने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करना चाहिये कि बैंक का प्रभार रिकार्ड (Record) कर लिया गया है।

(4) बैंक द्वारा ऋणी से प्रमाण-पत्र, हस्ताक्षर की रसीद (जो डाकखाने द्वारा प्रमाणित होती है तथा इसके प्रस्तुत किये जाने पर ही प्रमाण-पत्रों का भुगतान प्राप्त किय जा सकता है), माँग वचन-पत्र (Demand Promissory Note) आदि प्रपत्र प्राप्त करने चाहियें।

(5) डाकखाने द्वारा दो प्रकार के प्रमाण-पत्र जारी किये जाते हैं। **प्रथम**, **VI Issue**, जिसमें ब्याज देय तिथि पर भुगतान किया जाता है तथा द्वितीय **VII Issue**, जिसमें ब्याज छमाही देय होता है। VII Issue में बैंक को ऋणी से अधिकार-पत्र प्राप्त करना चाहिये कि बैंकों को ब्याज वसूल करने का अधिकार है और यह ब्याज ऋण खाते में जमा किया जाना चाहिये।

इस सम्बन्ध में यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि बैंक को राष्ट्रीय बचत प्रमाण-पत्रों का अपने हित में अन्तरण करवाना चाहिये और ऋणी से हस्ताक्षर रसीद अवश्य प्राप्त करनी चाहिये अन्यथा ऋणी क्षतिपूरक बॉण्ड के आधार पर हस्ताक्षर

रसीद प्रस्तुत करके भुगतान प्राप्त कर सकता है। बैंकों को राष्ट्रीय बचत प्रमाण-पत्र के विरुद्ध ऋण प्रदान करने मे सरलता रहती है चूँकि यह प्रतिभूति सुरक्षित समझी जाती है।

परन्तु इन प्रमाण-पत्रों के विरुद्ध ऋण प्रदान करने में बैंकों को सबसे अधिक हानि यह होती है इनका भुगतान 3 वर्ष के बाद ही सम्भव होता है जिससे बैंकों की तरलता इस अवधि के लिये खत्म हो जाती है। इस अवधि मे बैंक प्रतिभूतियों को बेचकर रुपया वसूल नहीं कर सकते हैं। अतः बैंकों को अपनी शोधन क्षमता बनाये रखने के लिये इन प्रतिभूतियों मे निश्चित सीमा से अधिक धन विनियोजित नहीं करना चाहिये।

पूर्ति बिल की जमानत के विरुद्ध ऋण
(Advance against Supply Bills)

पूर्ति बिल से आशय उन बिलों से होता है जो सरकारी अथवा अर्द्ध-सरकारी विभागों मे माल भेजने अथवा माल भेजने के अनुबन्ध से सम्बन्धित होते हैं। इसके अन्तर्गत माल भेजने वाले ठेकेदार का एक निश्चित अवधि में अनुबन्ध पूरा करना अनिवार्य होता है। अनुबन्ध पूरा करने के पश्चात् अनुबन्ध का ठेकेदार अनुबन्ध की शर्तों के अधीन तय मूल्य का एक विपत्र सरकारी विभाग के हित मे लिखता है और इस विपत्र को पूर्ति बिल (Supply Bill) समझा जाता है। सरकार द्वारा कुछ समय पश्चात् विपत्र का भुगतान कर दिया जाता है। भुगतान करने से पूर्व बिल की जाँच की जाती है कि कार्य ठीक प्रकार से समाप्त कर दिया गया है अथवा नहीं। इस जाँच के पश्चात् जाँच अधिकारी विपत्र को पास करता है जिसका लगभग 80 प्रतिशत भाग तुरन्त भुगतान कर दिया जाता है और शेष रकम कार्य पूर्ण होने के पश्चात् भुगतान की जाती है। इस बिल के साथ रेलवे रसीद अथवा लदान रसीद भी संलग्न की जाती है जो माल भेजने का प्रमाण-पत्र होती है। अतः पूर्ति बिल के साथ रेलवे रसीद एवं जाँच अधिकारी का प्रमाण-पत्र होना आवश्यक होता है कि माल की मात्रा एवं गुण अनुबन्ध के अधीन निर्धारित शर्तों के अनुसार है। बैंक के माध्यम से इस पूर्ति बिल की जमानत पर ऋण प्राप्त किया जा सकता है। यद्यपि पूर्ति बिल माल के अधिकार प्रपत्रों मे सम्मिलित नहीं किये जाते हैं तथापि इनके संलग्न रेलवे रसीद व जाँच अधिकारी का प्रमाण-पत्र होता है। पूर्ति बिल विनिमय साध्य विपत्र नहीं हैं परन्तु ये भावी देय राशि को प्रगट करते हैं जो कि सरकारी विभाग से वसूल की जाती है। अतः पूर्ति बिल को पुस्तकीय ऋण समझा जाता है तथा इसका अभिहस्तांकन किया जा सकता है। इसमें पूर्ति बिल बैंक को पृष्ठांकित किये जाते हैं तथा इनके साथ एक प्रमाण-पत्र संलग्न होता है जिसमें सरकारी अथवा अर्द्ध-सरकारी विभाग को निर्देश दिये जाते हैं कि अमुक बिल का भुगतान बैंक को किया जाये। पूर्ति बिल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को अग्रलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) ऋणी की क्षमता (Capacity) के सम्बन्ध में बैंक को पूर्ण जानकारी प्राप्त करनी चाहिये तथा ऋणी को सम्बन्धित ठेके का अनुभव होना चाहिये।

(2) बैंक को ठेके के अनुबन्ध की पूर्ण जाँच (Inquiry) करनी चाहिये तथा ठेके के अनुबन्ध में तथा शर्तों के अधीन ही ठेकेदार द्वारा माल की सुपुर्दगी की जानी चाहिये।

(3) ऋणी द्वारा बैंक के हित में मुख्तारनामा (Power of Attorny) लिखा जाना चाहिये जिसमें बैंक को ऋणी की ओर से बिल की राशि प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त होता है।

(4) बैंक द्वारा पूर्ति बिल के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय उचित मार्जिन रखना चाहिये तथा मार्जिन (Margin) की राशि बिल राशि के 80% से 85% मूल्य के आधार पर ज्ञात करनी चाहिये चूंकि पूर्ति बिल में माल की पूर्ति सामान्यतः 80% से 85% तक ही होती है तथा बिल तैयार कर लिया जाता है।

(5) पूर्ति बिल बैंक के हित में पृष्ठांकित (Endorse) होने चाहियें तथा बैंक द्वारा अपना प्रभार निर्मित करने के उद्देश्य से पूर्ति बिल सम्बन्धित सरकारी विभाग को भेजने चाहियें जिसमें स्पष्ट होता है कि अमुक विपत्रों का भुगतान निश्चित बैंक द्वारा किया गया है। अतः सरकारी विभाग को उसी बैंक को विपत्र का भुगतान करना चाहिये। इस आशय के लिये बैंक को सरकारी विभाग से पुष्टिकरण प्राप्त करना चाहिये। यदि इन बिलों का भुगतान ऋणी को कर दिया जाता है तब सरकारी विभाग उत्तरदायी नहीं होता है तथा बैंक को पूर्ति बिल की राशि वसूल करने का अधिकार ऋणी से होता है। अतः बैंक को केवल विश्वसनीय ग्राहकों के पूर्ति बिल पर ही ऋण प्रदान करना चाहिये।

अतः बैंक द्वारा पूर्ति बिल की जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय उपरोक्त सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें। □

(SOLVED PROBLEMS)

1. आप सर्विस बैंक लि० के प्रबन्धक हैं। श्री वैलऑफ एक निवृत व्यक्ति हैं जो पूर्व के कई वर्षों से आपके बैंक में सन्तोषजनक चालू खाते रखे हुए हैं। वे आपसे 10,000 रुपये की सावधि जमा रसीद की जमानत के विरुद्ध 6,000 रुपये के ऋण के लिये आवेदन करते हैं। जमा रसीद अन्य ख्याति प्राप्त एवं सुदृढ़ वित्तीय स्थिति वाले बैंक द्वारा जारी की गयी है। प्रतिभूति के रूप में प्रदत्त जमा रसीद अब से एक वर्ष पश्चात् देय है। श्री वैलऑफ आपसे कहते हैं कि उन्हें सामाजिक दायित्व पूर्ण करने के लिये ऋण की तुरन्त आवश्यकता है तथा वह बैंक जिसके पास 10,000 रुपये की जमा रसीद रखी हुयी है दूर के स्थान पर स्थित है। अतः उन्हें ऋण के लिये सम्पर्क स्थापित करना कठिन है। यह समझा जाता है कि आप ऋण देने के लिये सहमत

हैं जैसा कि श्री वैलऑफ प्रार्थना करते हैं। स्पष्ट कीजिये कि आप क्या सावधानियाँ एवं प्रलेख प्राप्त करेंगे ?

You are the manager of Service Bank Ltd. Shri Welloff is retired gentleman who maintains a satisfactorily Conducted Current account with your bank for the past several years. He approaches you for a loan of Rs. 6,000 against the security of a Fixed Deposit of Rs. 10,000 kept with another bank of a good repute and financial standing. The Fixed Deposit offered as security is due to mature a year here after. Shri Welloff tells you that he requires the loan urgently to meet same social obligation and that the bank where he has kept his fixed Deposit for Rs. 10,000 is located in a far away place so that it is difficult to approach them for the loan. It is supposed that you are inclined to grant the loan as requested by Shri Welloff. State what precautions and documents you will take?

(C. A. I. I. B. Part II, Oct, 1985)

हल—उपरोक्त परिस्थिति में साधारणतः बैंक अन्य बैंक द्वारा जारी जमा रसीद की जमानत पर ऋण प्रदान नहीं करते हैं। परन्तु इसके अन्तर्गत बैंक द्वारा ऋण प्रदान करने का निश्चय किया गया है। यह ऋण केवल ख्याति प्राप्त ग्राहकों को ही प्रदान किया जा सकता है, चूंकि इसमें अन्य बैंक द्वारा ऋण प्रदान करने वाले बैंक का प्रभार स्वीकार न करने की स्थिति में बैंक की स्थिति दुविधापूर्ण हो जाती है। अतः बैंक द्वारा ऋण प्रदान करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक द्वारा जमा रसीद जारी करने वाले बैंक से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास किया जायेगा कि जमा रसीद पर उस बैंक का प्रभार है अथवा नहीं तथा जमा रसीद का देय तिथि से पूर्व भुगतान किया गया है अथवा नहीं। ऋण प्रदान करने वाले बैंक द्वारा इस तथ्य का पुष्टिकरण प्राप्त करने के पश्चात् ऋणी को जमा रसीद की जमानत पर ऋण प्रदान किया जा सकता है। यदि बैंक द्वारा उपरोक्त पुष्टिकरण प्राप्त नहीं हो पाता है तब ऋणी को बेजमानती ऋण (Clean Loan) प्रदान किया जायेगा तथा जमा रसीद [illegible] प्रतिभूति (Collateral Security) के रूप में बैंक के पास जमा रहेगी [illegible] स्थिति में ऋणी से तृतीय पक्षकार की जमानत (Guarantee) को [illegible] जा सकती है।

(2) ऋणी द्वारा जमा रसीद पर प्रभार के उद्देश्य से [illegible] पत्र (Letter of Lien) प्राप्त करना चाहिये जो जमा

वैंक के नाम में लिखा जाता है। इसके अतिरिक्त, ऋणी से जमा रसीद का देय तिथि पर संग्रहण करने के उद्देश्य से अधिकार प्रपत्र प्राप्त किया जायेगा। इस पत्र की एक प्रति जमा रसीद जारी करने वाले वैंक को भेजी जायेगी कि देय तिथि पर अमुक जमा रसीद की राशि ऋण प्रदान करने वाले बैंक को भेजी जाये। ग्रहणाधिकार पत्र की प्रति भी जारी करने वाले वैंक को भेजी जायेगी जिसके पश्चात् उस बैंक की पुस्तकों में ऋण प्रदान करने वाले वैंक का प्रभार निर्मित किया जायेगा।

ऋण प्रदान करने वाले वैंक द्वारा ऋण **प्रदान करते समय निम्नलिखित प्रपत्र प्राप्त किये जायेंगे—**

(1) माँग प्रतिज्ञा पत्र (Demand Promissory Note),

(2) ग्रहणाधिकार प्रपत्र (Letter of Lien),

(3) शाश्वत्ता दायित्व का परिपत्र (Letter of Continuity) [यदि ऋण नकद साख सुविधा के रूप में प्रदान किया जाता है।]

उपरोक्त प्रपत्रों के अतिरिक्त ऋणी से जमा रसीद की राशि की वसूली के लिये अधिकार प्रपत्र भी प्राप्त किया जायेगा।

2. वैंक माल की जमानत के विरुद्ध 1 लाख रुपये का ऋण प्रदान करता है तथा गोदाम की चाबियाँ वैंक के पास हैं। ऋणी द्वारा गोदाम से माल चोरी होने की सूचना बैंक को दी जाती है तथा ऋणी बैंक से चोरी किये गये माल का दावा करता है। इस स्थिति में वैंक क्या करेगा ?

A Bank sanction a loan of Rs. 1 Lac against the goods and the keys of Godown are kept with the bank. Borrower informs the bank about the theft in the Godown and made the claim for loss of goods. What action would be taken by the bank ?

(*Based on. C. A. I. I. B. Nov., 1981*)

हल—इस स्थिति में वैंक को चोरी की सूचना निकटतम पुलिस चौकी (Police Station) में करनी चाहिये। इसके पश्चात् वैंक को बीमा कम्पनी में चोरी के माल का दावा प्रस्तुत करना चाहिये जिससे बीमा कम्पनी से माल की क्षतिपूर्ति प्राप्त की जा सकती है। यदि बीमा कम्पनी द्वारा सम्पूर्ण दावा स्वीकार नहीं किया जाता है तब शेष राशि के दायित्व का निर्धारण मामले की स्थिति के अनुसार निर्धारित किया जाता है। इस स्थिति में गोदाम की चाबी वैंक के पास है। अतः वैंक को गिरवी में माल का निक्षेप किया गया है। वैंक के अधिकार निक्षेपगृहीता (Bailee) के अधिकार के समान होंगे। इस स्थिति में, यदि वैंक लापरवाही का दोषी पाया गया है तब, ऋणी अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। विपरीत परिस्थितियों में ऋणी माल की क्षति के लिये स्वयं उत्तरदायी होता है।

3. निम्नलिखित परिस्थिति में आप क्या करेंगे ?

What will you do in the following Condition—

You have granted a clean overdraft limit of Rs. 20,000 to one Mr. D. B. Malhotra, a partner in the firm of M/s Malhotra Brothers dealing in auto spare parts in Bombay in 1977. The Account of Mr. Malhotra has been showing a debit balance of Rs. 18,000 since 1st June 1978. On being pressed by you to adjust the overdraft account, on 1st June 1980, Mr. Malhotra requests you to allow him time upto 31st December 1980 to adjust the entire outstanding balance amount including interest due thereon Mr. Malhotra shows his readiness to offer the following as a security to cover the advance :—

(1) A life insurance policy for Rs. 50,000 which matures on 2nd March 1981.

(2) A fixed deposit receipt of Rs. 25,000 jointly held by him with his elder brother and issued by another bank. It matures on 1st January 1981.

(3) A guarantee to be executed by the firm of M/s Malhotra Brothers of which Mr. Malhotra is a partner.

Which of the above securities would you accept ? Give reasons for your answer. *(C. A. I. I. B. Part II, Nov., 1981)*

हल—उपरोक्त परिस्थिति में बैंक को जीवन बीमा पालिसी ऋण की जमानत-स्वरूप स्वीकार करनी चाहिए चूंकि पालिसी का अभिहस्तांकन बैंक के हित में हो सकता है तथा पालिसी का मूल्य 50,000 रुपये है। अन्य बैंक द्वारा जारी जमा रसीद को एक आदर्श प्रतिभूति नहीं समझा जा सकता है चूंकि जारी करने वाला बैंक ऋण प्रदान करने वाले बैंक का प्रभार स्वीकार करने के लिये बाध्य नहीं है। इसी प्रकार फर्म की जमानत स्वीकार करने में अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। उदाहरणार्थ—समस्त साझेदारों द्वारा प्रत्याभूति अनुबन्ध पर हस्ताक्षर न करना अथवा फर्म का दिवालिया होना अथवा फर्म की संवैधानिक स्थिति में परिवर्तन होना। इन परिस्थितियों में प्रत्याभूति समाप्त समझी जाती है। अतः बैंक को जीवन बीमा पालिसी ऋण की जमानतस्वरूप प्राप्त करनी चाहिए।

प्रश्न
(Questions)

1. बैंक माल के हक विलेख के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखता है ?

What are the precautions to be followed by the Bank while granting a loan against documents of Title to Goods ?

2. माल के हक विलेख क्या हैं ? संक्षेप में कुछ मुख्य प्रपत्रों का वर्णन कीजिये । माल के हक विलेख की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखता है ?

What are the documents to Title to Goods ? Indicate briefly some important documents of title to goods. What precautions should a banker take while making advances against the securities represented by the documents of title to goods ?

(*C. A. I. I. B. May, 1983*)

3. जीवन बीमा पालिसी के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक को किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए ?

What precaution should be borne by the Bank while granting a loan against Life Insurance Policy ?

4. व्यक्ति 10,000 रुपये की पूंजी से अपना व्यापार प्रारम्भ करना चाहता है । वह 10,000 रुपये का ऋण अपनी व्यक्तिगत जीवन बीमा पालिसी के विरुद्ध प्राप्त करने के लिये बैंक में आवेदन करता है । पालिसी 20 वर्ष के लिये 20,000 रुपये की है जिस पर पूर्व के 12 वर्षों में 11,000 रुपये की प्रीमियम का भुगतान किया जा चुका है । ऋण प्रदान करने से पूर्व आप क्या औपचारिकतायें पूरी करेंगे ?

A person intends to start a retail shop with an initial investment of Rs. 10,000.

For the investment he approches a bank to grant him a loan of Rs. 10,000 against the security of his L. I. C. Policy.

The policy is 20 year Endowment L. I. C. Policy for Rs. 20,000 on which premium of Rs. 11,000 is paid regularly during past 12 years. How will you process the loan application and what formalities will be necessary before disbursement of the loan ?

(*C. A. I. I. B. May., 1984*)

5. माल की प्रतिभूति के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय बैंक किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखता है ?

What are the precautions to be followed by the bank while granting loan against goods ?

6. एक लिमिटेड कम्पनी जो प्लास्टिक वस्तुओं का निर्माण करती है, बैंक से 2 लाख रुपये ऋण के लिये आवेदन करती है। ऋण की प्रतिभूति में कच्चा माल, अर्द्ध-निर्मित माल तथा तैयार माल होगा। एक बैंकर के रूप मे आप क्या-क्या सावधानियाँ ध्यान में रखेंगे ? आप किन प्रपत्रो को प्राप्त करेंगे ?

A Limited Company, manufacturing Plastic goods (consumer's items) approaches you as a Banker for an advance of Rs. 2 Lakhs against hypothecation of raw materials, finished goods and stock in process. What precaution would you take as a Banker in regarding this advance ? What documents would you obtained—

(C. A. I I. B May, 1976)

7. बैंक निम्नलिखित प्रतिभूतियों की जमानत के विरुद्ध ऋण देते समय किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखता है—

What precautions should be taken by the bank while granting a loan against the following securities ?

(i) सरकारी प्रतिभूतियाँ।
(Government Securities) *(C. A. I. I. B. May, 1980)*

(ii) लिमिटेड कम्पनी के अंश।
(Shares of Limited Company)
(C. A. I. I. B. May, 1980)

(iii) बहीगत ऋण।
(Book Debts) *(C. A. I. I. B. May, 1976; 77)*

(iv) वास्तविक सम्पत्ति।
(Real Estate) *(C. A. I. I. B. May, 1981)*

(v) सावधि रसीद।
(Fixed Deposit Receipt) *(C. A. I. I. B. Dec., 1977)*

8. एक आदर्श प्रतिभूति की क्या विशेषतायें हैं ?

What are the characteristics of an ideal security ?

9. एक बैंक द्वारा निम्नलिखित के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय प्रयोग की जाने वाली सावधानियों का संक्षेप मे वर्णन कीजिये—

State briefly the precaution that a bank should take in granting advances against —

(i) Government Securities,
(ii) Shares of Joint Stock Company, and
(iii) National Saving Certificates.

10. बैंक ऋण प्रदान करते समय भूमिगत सम्पत्ति की तुलना में अंशों को क्यों प्राथमिकता प्रदान करते हैं ?

Why does a banker prefer shares to landed property while sanctioning a loan ? (*Rajasthan B. Com.*)

11. आपकी शाखा का एक ग्राहक अन्य बैंक द्वारा उसके हित में जारी 5,000 रुपये की सावधि जमा रसीद के विरुद्ध ऋण प्रदान करने की प्रार्थना करता है। आप किस प्रकार व्यवहार करेंगे ?

A Customer of your branch approaches you for a loan facility against Fixed Deposit Receipt for Rs. 5,000 of another bank issued in his favour. How would you deal ?

(*C. A. I. I. B. May, 1977*)

□□□

18

..भार निर्माण की विधियाँ
(MODE OF CREATING CHARGE)

बैंक अपने ग्राहकों को विविध रूपों में वित्तीय सुविधायें ऋणस्वरूप प्रदान करते हैं। साधारणतः बैंक सुरक्षित ऋण की सुविधायें प्रदान करते हैं जिसमें बैंक ऋणियों से ऋण की जमानतस्वरूप विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियाँ प्राप्त करते हैं। इन प्रतिभूतियों पर ऋण सुरक्षित करने के उद्देश्य से प्रभार निर्मित किया जाता है। प्रभार निर्मित करने का प्रमुख उद्देश्य प्रतिभूति पर स्वामित्व प्राप्त करना होता है। यह स्वामित्व ऋण की अदायगी न करने की स्थिति में प्राप्त किया जाता है। बैंक व्यवहार में गिरवी, लियन, दृष्टिबन्ध, साम्यिक बन्धक आदि अनेक विधियों के माध्यम से प्रतिभूतियों पर प्रभार उत्पन्न करते हैं।

गिरवी का आशय
(Meaning of Pledge)

भारतीय अनुबन्ध अधिनियम 1872 की धारा 172 के अनुसार, गिरवी का आशय ऋण के भुगतान की सुरक्षा अथवा वचन के निष्पादन के लिये माल का निक्षेप समझा जाता है।[1] गिरवी में ऋणी द्वारा ऋणदाता को माल की सुपुर्दगी इस आशय से की जाती है कि ऋणदाता ऋण के भुगतान होने तक माल को अपनी सुरक्षा में रखेगा और ऋण का भुगतान होने पर माल वापस कर दिया जायेगा। माल की सुपुर्दगी रचनात्मक अथवा वास्तविक हो सकती है। रचनात्मक सुपुर्दगी में माल गिरवीकर्त्ता (Pledger) के पास रहता है परन्तु माल पर वास्तविक अधिकार गिरवीगृहीता (Pledgee) का होता है तथा गिरवीकर्त्ता को माल का निक्षेप (Bailment) समझा जाता है। इसके अतिरिक्त रचनात्मक सुपुर्दगी में माल तृतीय पक्षकार के कब्जे में हो सकता है परन्तु माल का वास्तविक अधिकारी गिरवीगृहीता ही होता है।

गिरवीगृहीता द्वारा माल के अधिकार प्रपत्रों पर कब्जा करके रचनात्मक गिरवी का निर्माण किया जा सकता है। माल के अधिकार प्रपत्र (Title Deeds) में लदान रसीद, डाक वारन्ट (Dock Warrant), रेलवे रसीद आदि सम्मिलित किये जाते हैं। इंगलिश लॉ (English Law) में माल के अधिकार प्रपत्रों की सुपुर्दगी को गिरवी नहीं समझा जाता है परन्तु वहाँ पर लदान रसीद को इससे मुक्त रखा गया है

1. The bailment of goods as security for payment of a debt or performance of promise is called pledge. —Sec. 172, Indian Contract Act

अर्थात लदान रसीद सुपुर्दगी को गिरवी समझा जाता है। माल की सुपुर्दगी ऋण राशि की सुरक्षा के उद्देश्य से की जाती है। यदि ऋणदाता के पास माल भूल से रह जाता है तब यह गिरवी नहीं समझा जाता है।

ऋणी द्वारा बैंक के पक्ष में रेलवे रसीद का पृष्ठांकन गिरवी समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि मुर्वी मर्केनटाइल बैंक लि० बनाम भारतीय संघ नामक **विवाद**[1] में की गयी है। प्रस्तुत वाद में फर्म ने रेलवे रसीद बैंक के हित में पृष्ठांकित करके, बैंक से 20,000 रुपये का ऋण प्राप्त किया। रेलवे रसीद में कुल माल थाना से ओकला तक पहुँचना था। परन्तु रेलवे कम्पनी माल पहुँचाने में असमर्थ रही। बैंक द्वारा रेलवे कम्पनी के विरुद्ध भारतीय संघ पर वाद प्रस्तुत किया गया जिसमें माल की कीमत की क्षतिपूर्ति के लिये 35,500 रुपये का दावा किया गया है। बम्बई हाईकोर्ट में बैंक को केवल 20,000 रुपये की क्षतिपूर्ति का वाद स्वीकार किया चूंकि बैंक को गिरवी गृहीता के रूप में केवल 20 000 रुपये की क्षति हुई थी। बैंक द्वारा सर्वोच्च न्यायालय में अपील की गई। सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि बैंक के हित में रेलवे रसीद का पृष्ठांकन बैंक को गिरवी समझा जाता है तथा गिरवी की स्थिति में माल के निक्षेपगृहीता को वे समस्त अधिकार प्राप्त होते हैं जो माल के स्वामी को होते हैं। अतः बैंक कम्पनी से माल की कुल कीमत प्राप्त करने का अधिकारी है।

गिरवी रखने के लिये अधिकृत व्यक्ति
(Who can Pledge the Goods)

गिरवी रखने का अधिकार निम्नलिखित व्यक्तियों को प्राप्त होता है—

(1) माल का वास्तविक स्वामी (Owner)।

(2) माल के व्यापारिक अभिकर्त्ता (Mercantile Agent), बशर्ते गिरवी गृहीता (Pledgee) ने माल सद्भाव से प्राप्त किया हो तथा यह जानते हुये प्राप्त किया हो कि अभिकर्त्ता को माल गिरवी रखने का अधिकार प्राप्त है।

(3) माल का सह-स्वामी (Co-owner)।

(4) माल का ऐसा धारक जिसने माल धोखे, कपट अथवा अनुचित प्रभाव के द्वारा प्राप्त किया है परन्तु गिरवीगृहीता को इस आशय की सूचना प्राप्त नहीं होनी चाहिए।

(5) गिरवीगृहीता द्वारा पुनः गिरवी रखना।

(6) यदि किसी व्यक्ति का गिरवी की वस्तु में सीमित हित है तब सीमित हित तक गिरवी वैध समझी जायेगी।

---

1. Moorvi Mercantile Bank Ltd. Vs. Union of India. (A. I. R. 1965 Sc 1954)

गिरवी गृहीता के अधिकार
(Rights of Pledgee)

गिरवीगृहीता को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं—

(1) गिरवीकर्त्ता (Pledger) के स्वामित्व में दोष होने के कारण यदि गिरवीगृहीता को कोई क्षति वहन करनी पड़ती है तब वह क्षतिपूर्ति का अधिकारी होता है।

(2) गिरवी रखे गये माल में वृद्धि पर गिरवीगृहीता का कोई अधिकार नहीं होता है। गिरवी गृहीता का माल में वृद्धि पर उसी स्थिति में अधिकार होता है जबकि गिरवी अनुबन्ध में इस आशय के लिये स्पष्ट प्रावधान किया गया हो। उदाहरणार्थ—गिरवी रखे गये अंशों पर, घोषित लाभांश पर गिरवी गृहीता का कोई अधिकार नहीं होता है। इस निर्णय की पुष्टि एम० आर० धवन बनाम मदन मोहन व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी है।

(3) भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 173 के अनुसार, गिरवीगृहीता को माल उस समय समय तक अपने कब्जे में रखने का अधिकार होता है जब तक कि उसके ऋण का भुगतान नहीं किया जाता है। इसके अतिरिक्त, गिरवीगृहीता ऋण पर ब्याज तथा गिरवी रखे गये माल के रख-रखाव के आवश्यक व्ययों की वसूली के लिये भी माल को अपने कब्जे में रोक सकता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि गिरवी गृहीतागिरवी माल को किसी अन्य ऋण के लिये नहीं रोक सकता है। परन्तु यदि पुनः कोई ऋण प्रदान किया जाता है तब विपरीत अनुबन्ध के अभाव में यह समझा जायेगा कि ऋण गिरवीगृहीता द्वारा माल की जमानत पर दिया गया है।

(4) भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 176 के अनुसार, गिरवीकर्त्ता द्वारा ऋण का भुगतान न करने की स्थिति में गिरवीगृहीता ऋण राशि के लिये वाद प्रस्तुत कर सकता है अथवा गिरवीकर्त्ता को पर्याप्त सूचना देकर गिरवी रखे गये माल का विक्रय कर सकता है। माल का विक्रय करने की स्थिति में इस आशय की सूचना देना अनिवार्य होता है यद्यपि अनुबन्ध में विपरीत आशय के लिये प्रावधान किया गया है। इस निर्णय की पुष्टि इलाहाबाद बैंक नामक विवाद[2] में की गयी है।

(5) गिरवीगृहीता को गिरवी रखे गये माल पर पूर्ण अधिकार प्राप्त होता है। यह अधिकार असुरक्षित लेनदारों के प्रति भी लागू समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद बनाम सुशीला व अन्य नामक विवाद[3] में की

1. M. R. Dhawan Vs. Madan Mohan and others. (A. I. R. 1969, Delhi 3 B)
2. Hulas Kunwar Vs Allahabad Bank Limited.
3. State Bank of Hyderabad Vs. Susheela and others. (A. I. R. 1980, A. P. 1)

गयी है। प्रस्तुत विवाद में वादी बैंक ने **7,500** रुपये का माल के दृष्टिबन्धक (Hypothecation) के विरुद्ध ऋण प्रदान किया। ऋणी द्वारा सन्तोषजनक व्यवसाय न करने की स्थिति में बैंक ने माल पर गिरवी का अनुबन्ध किया तथा माल अपने गोदाम में स्थानान्तरित कर दिया। ऋणी के लेनदारों द्वारा ऋणी के माल पर वाद प्रस्तुत किया गया तथा ऋणी के विरुद्ध दिवालिया घोषित करवाने का आवेदन किया गया। कोर्ट द्वारा मनोनीत सरकारी प्रापक ने माल को बेचकर **4,000** रुपये सिविल कोर्ट में जमा किये। एक लेनदार द्वारा प्रतिभूति के आधार पर **4,000** रुपये कोर्ट से प्राप्त कर लिये गये। बैंक ने ऋणी के विधिक उत्तराधिकारियों एवं ऋणी के लेनदार के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय (Trial Court) द्वारा बैंक का वाद इस आधार पर रद्द कर दिया कि बैंक ने सरकारी प्रापक द्वारा माल बेचते समय कोई विरोध नहीं किया है। अतः बैंक को यह कार्य स्वीकार्य था। बैंक ने आन्ध्र प्रदेश हाई कोर्ट में अपील प्रस्तुत की। हाई कोर्ट द्वारा निर्णय दिया गया कि सरकारी प्रापक द्वारा न्यायालय की सहमति से माल बेचने पर अथवा अन्य लेनदार द्वारा विक्रय राशि प्राप्त करने पर सुरक्षित लेनदार के अधिकार प्रभावित नहीं होते हैं। गिरवीगृहीता को माल पर उस समय तक अधिकार प्राप्त होता है जब तक कि उसके ऋण का भुगतान नहीं किया जाता है। अतः हाई कोर्ट द्वारा बैंक के पक्ष में निर्णय दिया गया।

(6) यदि गिरवी रखे गये माल का क्रय मूल्य नहीं चुकाया गया है तथा गिरवीगृहीता ने क्रेता से माल पूर्ण सद्भाव एवं दोष का ज्ञान न रखते हुये प्राप्त किया है तब माल के अदत्त विक्रेता को गिरवीगृहीता के विरुद्ध कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है। इस निर्णय की पुष्टि **पंजाब नेशनल बैंक बनाम मैसर्स लक्ष्मी कार्ड क्लोथिंग लि०** नामक विवाद[1] में की गयी है।

गिरवीगृहीता के दायित्व
(Duties of Pledgee)

गिरवीगृहीता के **निम्नलिखित दायित्व** हैं—

(1) गिरवीगृहीता गिरवी के माल की उचित देखभाल करता है। यदि माल में कोई क्षति अथवा कमी होती है तब वह उसकी क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है। परन्तु यदि यह क्षति किसी ऐसे कारण से होती है जो गिरवीगृहीता के नियन्त्रण से बाहर है तब गिरवीगृहीता क्षति के लिये उत्तरदायी नहीं होता है। इस निर्णय की पुष्टि **गोपाल सिंह हीरा सिंह बनाम पंजाब नेशनल बैंक व अन्य** नामक **विवाद** में की गयी है।

(2) ऋण का भुगतान अथवा वचन का निष्पादन होने पर गिरवीगृहीता माल की वापसी के लिये उत्तरदायी होता है।

---

1. Panjab National Bank Vs. M/s Lakshmi Cards Clothing Mfg. Ltd. (1978)

(3) भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 163 के अनुसार निक्षेप के माल में हुई वृद्धि पर गिरवीकर्त्ता का अधिकार होता है। विपरीत अनुबन्ध के अभाव में, गिरवीगृहीता माल की वृद्धि को लौटाने के लिये उत्तरदायी होता है।

(4) गिरवीगृहीता को माल का प्रयोग अनुबन्धों की शर्तों के अधीन करना चाहिये। यदि वह अनुबन्ध की शर्तों की अवहेलना करता है तब गिरवीकर्त्ता को अनुबन्ध व्यर्थ समझने का अधिकार होता है। इसके अतिरिक्त यदि गिरवीगृहीता माल का अनाधिकृत प्रयोग करता है तथा इससे माल को कोई क्षति होती है तब वह क्षतिपूर्ति के लिये स्वयं उत्तरदायी समझा है।

अतः गिरवीगृहीता के गिरवी अनुबन्ध में अनेक दायित्व होते हैं। बैंक की स्थिति गिरवीगृहीता के समान होती है। बैंक को माल की गिरवी के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय अनेक सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें। बैंक को गिरवी-गृहीता के रूप में माल की बिक्री पर पूर्व (Prior) अधिकार प्राप्त होता है। इस सम्बन्ध में अन्य कोई भी दावा असुरक्षित लेनदार के रूप में तय किया जाता है। इस निर्णय की पुष्टि बैंक ऑफ बिहार बनाम बिहार राज्य व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी है।

प्रस्तुत विवाद में मैसर्स जगदीश जमींदारी कम्पनी ने 6,239 चीनी के बोरे बैंक को ऋण की जमानत स्वरूप निक्षेप किये। माल बैंक के गोदाम में रखा गया। बिहार राज्य सरकार के आदेशाधीन जिला मजिस्ट्रेट ने 1818 बोरों पर कब्जा करके बेच दिया तथा विक्रय की राशि सरकारी खजाने में जमा की गयी। बैंक ने राज्य सरकार के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया। सर्वोच्च न्यायालय ने इस विवाद में निर्णय दिया कि राज्य सरकार को गिरवी रखे गये माल पर उस समय तक कोई अधिकार प्राप्त नहीं है जब तक कि माल के गिरवीगृहीता के ऋण का पूर्ण भुगतान नहीं किया जाता है। गिरवीगृहीता को माल पर विशेष लियन का अधिकार प्राप्त होता है तथा उसकी सम्पत्ति विशेष सम्पत्ति होती है। अतः अन्य किसी भी लेनदार को माल पर उस समय तक कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है जब तक कि गिरवी-गृहीता का पूर्ण भुगतान नहीं किया जाता है। अतः राज्य सरकार द्वारा मात्र माल पर कब्जा करने का अधिकार बैंक को अपने अधिकार से वंचित नहीं करता है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा राज्य सरकार को उत्तरदायी ठहराया गया।

प्राधीयन अथवा दृष्टिबन्धक ✓
(Hypothecation)

बैंक ऋण प्रदान करते समय सम्पत्ति की जमानत प्राप्त करता है। अचल सम्पत्तियों (Fixed Assets) की जमानत पर प्रदान किया गया ऋण सम्पत्तियों पर बन्धक (Mortgage) समझा जाता है। इसके विपरीत चल सम्पत्तियों (Current

1. Bank of Bihar Vs. State of Bihar and othtrs.

गयी है। प्रस्तुत विवाद में वादी बैंक ने 7,500 रुपये का माल के दृष्टिबन्धक (Hypothecation) के विरुद्ध ऋण प्रदान किया। ऋणी द्वारा सन्तोषजनक व्यवसाय न करने की स्थिति में बैंक ने माल पर गिरवी का अनुबन्ध किया तथा माल अपने गोदाम में स्थानान्तरित कर दिया। ऋणी के लेनदारों द्वारा ऋणी के माल पर वाद प्रस्तुत किया गया तथा ऋणी के विरुद्ध दिवालिया घोषित करवाने का आवेदन किया गया। कोर्ट द्वारा मनोनीत सरकारी प्रापक ने माल को बेचकर 4,000 रुपये सिविल कोर्ट में जमा किये। एक लेनदार द्वारा प्रतिभूति के आधार पर 4,000 रुपये कोर्ट से प्राप्त कर लिये गये। बैंक ने ऋणी के विधिक उत्तराधिकारियों एवं ऋणी के लेनदार के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय (Trial Court) द्वारा बैंक का वाद इस आधार पर रद्द कर दिया कि बैंक ने सरकारी प्रापक द्वारा माल बेचते समय कोई विरोध नहीं किया है। अतः बैंक को यह कार्य स्वीकार्य था। बैंक ने आन्ध्र प्रदेश हाई कोर्ट में अपील प्रस्तुत की। हाई कोर्ट द्वारा निर्णय दिया गया कि सरकारी प्रापक द्वारा न्यायालय की सहमति से माल बेचने पर अथवा अन्य लेनदार द्वारा विक्रय राशि प्राप्त करने पर सुरक्षित लेनदार के अधिकार प्रभावित नहीं होते हैं। गिरवीगृहीता को माल पर उस समय तक अधिकार प्राप्त होता है जब तक कि उसके ऋण का भुगतान नहीं किया जाता है। अतः हाई कोर्ट द्वारा बैंक के पक्ष में निर्णय दिया गया।

(6) यदि गिरवी रखे गये माल का क्रय मूल्य नहीं चुकाया गया है तथा गिरवीगृहीता ने क्रेता से माल पूर्ण सद्भाव एवं दोष का ज्ञान न रखते हुये प्राप्त किया है तब माल के अदत्त विक्रेता को गिरवीगृहीता के विरुद्ध कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है। इस निर्णय की पुष्टि **पंजाब नेशनल बैंक बनाम मैसर्स लक्ष्मी कार्ड क्लोथिंग लि० नामक विवाद**[1] में की गयी है।

गिरवीगृहीता के दायित्व
(Duties of Pledgee)

गिरवीगृहीता के **निम्नलिखित दायित्व हैं**—

(1) गिरवीगृहीता गिरवी के माल की उचित देखभाल करता है। यदि माल में कोई क्षति अथवा कमी होती है तब वह उसकी क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी होता है। परन्तु यदि यह क्षति किसी ऐसे कारण से होती है जो गिरवीगृहीता के नियन्त्रण से बाहर है तब गिरवीगृहीता क्षति के लिये उत्तरदायी नहीं होता है। इस निर्णय की पुष्टि **गोपाल सिंह हीरा सिंह बनाम पंजाब नेशनल बैंक व अन्य नामक विवाद** में की गयी है।

(2) ऋण का भुगतान अथवा वचन का निष्पादन होने पर गिरवीगृहीता माल की वापसी के लिये उत्तरदायी होता है।

---

1. Panjab National Bank Vs. M/s Lakshmi Cards Clothing Mfg. Ltd. (1978)

(3) भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 163 के अनुसार निक्षेप के माल में हुई वृद्धि पर गिरवीकर्त्ता का अधिकार होता है। विपरीत अनुबन्ध के अभाव में, गिरवीगृहीता माल की वृद्धि को लौटाने के लिये उत्तरदायी होता है।

(4) गिरवीगृहीता को माल का प्रयोग अनुबन्धों की शर्तों के अधीन करना चाहिये। यदि वह अनुबन्ध को शर्तों की अवहेलना करता है तब गिरवीकर्त्ता को अनुबन्ध व्यर्थ समझने का अधिकार होता है। इसके अतिरिक्त यदि गिरवीगृहीता माल का अनाधिकृत प्रयोग करता है तथा इससे माल को कोई क्षति होती है तब वह क्षतिपूर्ति के लिये स्वयं उत्तरदायी समझा है।

अतः गिरवीगृहीता के गिरवी अनुबन्ध में अनेक दायित्व होते हैं। बैंक की स्थिति गिरवीगृहीता के समान होती है। बैंक को माल की गिरवी के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय अनेक सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें। बैंक को गिरवी-गृहीता के रूप में माल की बिक्री पर पूर्व (Prior) अधिकार प्राप्त होता है। इस सम्बन्ध में अन्य कोई भी दावा असुरक्षित लेनदार के रूप में तय किया जाता है। इस निर्णय की पुष्टि बैंक ऑफ बिहार बनाम बिहार राज्य व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी है।

प्रस्तुत विवाद में मैसर्स जगदीश जमींदारी कम्पनी ने 6,239 चीनी के बोरे बैंक को ऋण की जमानत स्वरूप निक्षेप किये। माल बैंक के गोदाम में रखा गया। बिहार राज्य सरकार के आदेशाधीन जिला मजिस्ट्रेट ने 1818 बोरों पर कब्जा करके बेच दिया तथा विक्रय की राशि सरकारी खजाने में जमा की गयी। बैंक ने राज्य सरकार के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया। सर्वोच्च न्यायालय ने इस विवाद में निर्णय दिया कि राज्य सरकार को गिरवी रखे गये माल पर उस समय तक कोई अधिकार प्राप्त नहीं है जब तक कि माल के गिरवीगृहीता के ऋण का पूर्ण भुगतान नहीं किया जाता है। गिरवीगृहीता को *माल पर विशेष लियन का अधिकार प्राप्त* होता है तथा उसकी सम्पत्ति विशेष सम्पत्ति होती है। अतः अन्य किसी भी लेनदार को माल पर उस समय तक कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है जब तक कि गिरवी-गृहीता का पूर्ण भुगतान नहीं किया जाता है। अतः राज्य सरकार द्वारा मात्र माल पर कब्जा करने का अधिकार बैंक को अपने अधिकार से वंचित नहीं करता है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा राज्य सरकार को उत्तरदायी ठहराया गया।

प्राधीयन अथवा दृष्टिबन्धक
(Hypothecation)

बैंक ऋण प्रदान करते समय सम्पत्ति की जमानत प्राप्त करता है। अचल सम्पत्तियों *(Fixed Assets)* की जमानत पर प्रदान किया गया ऋण सम्पत्तियों पर बन्धक (Mortgage) समझा जाता है। इसके विपरीत चल सम्पत्तियों (Current

1. Bank of Bihar Vs. State of Bihar and othtrs.

Assets) की जमानत पर प्रदान किया गया ऋण सम्पत्तियों पर प्राधीयन अथवा दृष्टिबन्धक (Hypothecation) समझा जाता है। अतः प्राधीयन में ऋण की जमानत स्वरूप चल सम्पत्तियों की प्रतिभूति प्रदान की जाती है। इसमें सम्पत्ति पर कब्जा (Possession) एवं स्वामित्व (Ownership) ऋणी का ही रहता है तथा ऋणी को सम्पत्ति का प्रयोग करने का अधिकार होता है। अतः प्राधीयन गिरवी से पृथक् समझा जाता है चूंकि इसमें हित (Interest) अथवा सम्पत्ति का अन्तरण नहीं होता है।[1] परन्तु ऋण प्राप्त करते समय ऋणी घोषणा करता है कि आवश्यकता के समय ऋणदाता को सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त होगा और वह सम्पत्ति बेचकर ऋण की वसूली कर सकता है। अतः प्राधीयन के अन्तर्गत ऋण उस समय तक बेजमानती (Clean) समझा जाता है जब तक कि ऋणदाता द्वारा अपने अधिकार का प्रयोग नहीं किया जाता है। ऋणदाता द्वारा माल पर अपने अधिकार का प्रयोग करने पर प्राधीयन गिरवी (Pledge) में बदल जाता है। अतः सम्पत्ति पर प्राधीयन गर्भित गिरवी समझा जाता है और बैंक को गिरवीगृहीता के अधिकार प्राप्त होते हैं। इस निर्णय की पुष्टि मैसर्स गोपाल सिंह हीरा सिंह बनाम पंजाब नेशनल बैंक नामक विवाद[2] में की गई है जिसमें प्राधीयन के अन्तर्गत माल पर बैंक का वास्तविक एवं रचनात्मक अधिकार समझा गया है।

प्राधीयन में बैंक का अधिकार सर्वप्रथम एवं सर्वमान्य होता है। बैंक द्वारा अपना अधिकार अन्य लेनदारों से पूर्व प्रयोग में लाया जा सकता है। इस निर्णय की पुष्टि स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद बनाम सुशीला व अन्य नामक विवाद[3] में की गई है। इसमें सरकारी देय कर की वसूली से पूर्व बैंक ऋणी की वसूली को प्राथमिकता प्रदान की गई। ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान न किये जाने की स्थिति में ऋणदाता को माल पर अधिकार प्राप्त होता है और ऋणदाता न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना माल को बेचकर ऋण वसूल कर सकता है। प्राधीयन की स्थिति में बैंक द्वारा ऋण प्रदान करते समय दोहरी वित्त सुविधा (Double Financing) को ध्यान में रखना चाहिये कि ऋणी द्वारा एक ही सम्पत्ति की जमानत पर दो बैंकों से ऋण प्राप्त न किया जाये अथवा ऋणी को एक ही सम्पत्ति पर उसी बैंक से पुनः वित्त सुविधा प्राप्त न हो जाये। इसके लिये ऋणी द्वारा घोषणा-पत्र प्राप्त किया जाना चाहिये कि माल पर पुनः प्राधीयन नहीं किया जायेगा और बैंक को समय-समय पर माल का निरीक्षण करना चाहिये।

प्राधीयन में बैंकों को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) इसमें माल का बीमा (Insurance) करवाया जाना चाहिये।

---

1. Union of India Vs. C. T. Shenthipanathan.
2. M/s Copal Singh Hira Singh Vs. Punjab National Bank.
3. State Bank of India Vs. C. T. Susheela and others.

(2) इसमें माल के स्टॉक (Stock) की जाँच समय-समय पर की जानी चाहिये परन्तु जाँच अनियमित एवं आश्चर्यजनक होनी चाहिये।

(3) इसमे माल के स्टॉक का विवरण-पत्र (Statement) निश्चित अवधि के पश्चात् नियमित रूप में प्राप्त किया जाना चाहिये।

(4) संयुक्त पूँजी कम्पनी की स्थिति में कम्पनी अधिनियम की धारा 125 के अन्तर्गत प्रभार रजिस्टर्ड (Registered) होना चाहिये चूंकि प्रभार की प्राथमिकता रजिस्ट्रेशन की तिथि से ही मान्य होती है। कम्पनी को प्राधीयन के विरुद्ध ऋण प्रदान करते समय संचालकों की व्यक्तिगत जमानत भी स्वीकार करनी चाहिये जिससे ऋण का भुगतान न होने की स्थिति में उन्हें व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी ठहराया जा सके।

(5) इसमें ऋण की सुविधा केवल ख्याति प्राप्त ऋणियों को ही दी जानी चाहिये चूँकि इसमें धोखे व कपट (Fraud) की सम्भावना अधिक होती है।

(6) प्राधीयन में साम्यिक प्रभार (Equitable Charge) का निर्माण किया जाना चाहिये, जिसमें वर्तमान एवं भावी माल पर बैंक का गिरवी का अधिकार होता है।

(7) कम्पनी की स्थिति में प्रभार का रजिस्ट्रेशन 30 दिन के भीतर होना चाहिये तथा प्रभार की शर्तों में कोई भी परिवर्तन (Change) होने पर उसकी सूचना रजिस्ट्रार को दी जानी चाहिये।

(8) पुस्तकीय ऋणों (Book Debts) की जमानत पर प्रभार का निर्माण किया जा सकता है। बैंक व्यवहार में केवल ख्याति प्राप्त कम्पनी अथवा फर्म के पुस्तकीय ऋणों पर प्राधीयन निर्मित करते हैं। इसमें बैंक द्वारा उन देनदारों को सम्मिलित नहीं किया जाता है जिनके खातों में लम्बी अवधि से देय राशि शेष हैं। इसमें देनदारों का एक विवरण निर्धारित अवधि पर बैंक में प्रस्तुत किया जाता है जिसमें बैंक गहन छानबीन करता है और देनदारों की शोधन क्षमता का ज्ञान प्राप्त करता है। पुस्तकीय ऋणों में देनदार एवं विनिमय विपत्र सम्मिलित किये जाते हैं। बैंक द्वारा पुस्तकीय ऋणों के प्रभार पर ऋण प्रदान करते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिये कि ऋणी द्वारा देनदारों से विनिमय विपत्र प्राप्त करके अन्य बैंक से विपत्रों को न भुनाया जाये अन्यथा ऋणी को एक ही सम्पत्ति के विरुद्ध दोहरी वित्त सुविधा प्राप्त हो सकती है। इस आशय के लिये बैंक को ऋणी से एक घोषणा-पत्र प्राप्त करना चाहिये कि वह अन्य बैंक से विनिमय विपत्र नहीं भुनायेगा। इसके अतिरिक्त, बैंक को ऋणी से देनदारों की वसूली के लिये मुख्तारनामा (Power of Attorney) प्राप्त करना चाहिये।

ग्रहणाधिकार अथवा लियन (Lien)

ग्रहणाधिकार से आशय ऋणदाता के उस अधिकार से होता है जिसमें ऋण

दाता को अपने कब्जे में प्राप्त सम्पत्ति उस समय तक रोके रखने का अधिकार होत
है जब तक कि ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान नहीं कर दिया जाता है। ग्रहणाधिका
चालू अथवा तरल सम्पत्तियों (Current Assets) पर प्राप्त होता है। भारतीय
संविदा अधिनियम की **धारा 171** के अनुसार, बैंकों को ग्रहणाधिकार विपरीत आशय
के अभाव में, सामान्य ग्रहणाधिकार समझा जाता है। बैंकों को यह सामान्य ग्रहणा-
धिकार प्रतिभूति के विक्रय पर आधिक्य (Surplus) पर भी लागू समझा जाता है।
(विस्तार के लिये कृपया देखिये अध्याय 4—बैंकों के अधिकार)

निषेधात्मक ग्रहणाधिकार
(Negative Lien)

ग्रहणाधिकार के अन्तर्गत, ऋणदाता को उस समय तक, माल को अपने
कब्जे में रखने का अधिकार होता है जब तक कि उसके ऋण का भुगतान नहीं किया
जाता है। इसमें माल का स्वामित्व ऋणी के पास ही रहता है। इसके विपरीत,
निषेधार्थक ग्रहणाधिकार में माल ऋणी के कब्जे में ही रहता है तथा ऋण प्राप्त
करते समय ऋणी घोषणा करता है कि माल पर कोई अन्य ग्रहणाधिकार अ—
गिरवी नहीं है एवं भविष्य में ऋणदाता को सूचित किये बिना कोई प्रभार नि
नहीं करेगा।

अभिहस्तांकन
(Assignment)

सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 130 के अनुसार, आकस्मिक दावों व
भिहस्तांकन किया जा सकता है। आकस्मिक दावों से अभिप्राय ऋण के उन दाव
है जिनमें ऋण स्थायी सम्पत्ति तथा चालू सम्पत्ति (Current Assets) की गिरवी
वा प्राधीयन से सुरक्षित नहीं हैं अथवा जिसमें चालू सम्पत्ति में हितकारी के
कार में कोई सम्पत्ति नहीं है। ये दावे अथवा हित वर्तमान, भावी, शर्तसहित
वा सम्भाव्य (Contingent) हो सकते हैं। बैंक से ऋण प्राप्त करते समय ऋणी
गत ऋण (Book Debts), सरकारी अथवा अर्द्ध-सरकारी विभागों से देय राशि
जीवन बीमा पालिसी का अभिहस्तांकन कर सकता है। अभिहस्तांकन विधिक
ा साम्यिक (Equitable) हो सकता है। विधिक अभिहस्तांकन में आकस्मिक
का पूर्ण अन्तरण किया जाता है तथा यह लिखित एवं अभिहस्तांकनकर्त्ता द्वारा
क्षरित होता है। इसके पश्चात् अभिहस्तांकनकर्त्ता (Assignor) देनदार
otors) को लिखित रूप में सूचना देता है कि किस व्यक्ति को अभिहस्तांकन
गया है। अभिहस्तांकिती (Assignee) भी अभिहस्तांकनकर्त्ता के देनदार —
भेजता है और ऋण के शेष का पुष्टिकरण प्राप्त करता है। यदि अभिहस्तांक
क विधि से नहीं किया गया है तब यह साम्यिक अभिहस्तांकन (Equitabl
nment) समझा जाता है। विनिमय विपत्र पर पृष्ठांकन के साथ बैंक के हित
ारनामा साम्यिक अभिहस्तांकन समझा जायेगा तथा यह अभि...

ऋणों पर भी वैध माना जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि भारत निधि लिमिटेड बनाम ताकतमल व अन्य नामक विवाद[1] में की गई है। इस विवाद मे भारत निधि लिमिटेड ने श्री मल्होत्रा को सरकारी विभाग पर देय पूर्ति बिल की जमानत पर ऋण प्रदान करने की सहमति प्रदान की। ऋणी द्वारा बैंक के हित मे मुख्तारनामा लिखा गया जिसके अनुसार बैंक को पूर्ति बिल की राशि वसूल करके ऋण समायोजन का अधिकार प्रदान किया गया। ऋणी ने सरकारी विभाग पर 19 जौलाई 1948 को 49,633·87 रुपये का बिल लिखा तथा बैंक के हित मे बिल पृष्ठांकित किया। बैंक द्वारा बिल वसूली के लिये सम्बद्ध विभाग में भेजा गया। परन्तु भुगतान प्राप्त करने से पूर्व ताकत मल द्वारा डिग्री के निष्पादन मे बिल की राशि कुर्क करा ली गयी। बैंक द्वारा वाद प्रस्तुत करने पर जिला न्यायालय ने निर्णय दिया कि बैंक को बिल की राशि का अभिहस्तांकन (Assignment) किया गया है तथा ताकतमल को बिल की राशि पर कोई अधिकार प्राप्त नही है। ताकत मल द्वारा मध्य प्रदेश हाई कोर्ट मे अपील करने पर, हाई कोर्ट ने जिला न्यायालय का निर्णय गलत ठहराया और ताकतमल के हित मे निर्णय दिया। परन्तु बैंक ने हाई कोर्ट के निर्णय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया कि इसमें बैंक तथा ऋणी के सम्बन्ध देनदार एवं लेनदार के हैं तथा बैंक द्वारा पूर्ति बिल की जमानत पर ऋण प्रदान किया गया है। बैंक के हित में मुख्तारनामा अप्रतिसंहार्य समझा जायेगा तथा बिल पर किया गया पृष्ठाकन स्पष्टतः बैंक के हित में अभिहस्तांकन समझा जायेगा। अतः न्यायालय द्वारा बैंक के हित में निर्णय दिया गया।

इस सम्बन्ध मे यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि मुख्तारनामा बैंक के हित मे इसलिये लिखा गया है कि बैंक अपने ऋण का समायोजन कर सके तब यह मुख्तारनामा स्पष्ट अनुबन्ध के अभाव मे, बैंक की सहमति के अभाव मे निरस्त अथवा समाप्त नही किया जा सकता है। इसमे अभिकरण का अनुबन्ध अभिकर्त्ता के हित के लिये किया गया। अतः ऐसी स्थिति मे, अभिकर्ता की सहमति के बिना अनुबन्ध समाप्त नही किया जा सकता है। (भारतीय संविदा अधिनियम, धारा 202)।

दाता को अपने कब्जे में प्राप्त सम्पत्ति उस समय तक रोके रखने का अधिकार होता है जब तक कि ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान नहीं कर दिया जाता है। ग्रहणाधिकार चालू अथवा तरल सम्पत्तियों (Current Assets) पर प्राप्त होता है। **भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 171** के अनुसार, बैंकों को ग्रहणाधिकार विपरीत आशय के अभाव में, सामान्य ग्रहणाधिकार समझा जाता है। बैंकों को यह सामान्य ग्रहणाधिकार प्रतिभूति के विक्रय पर आधिक्य (Surplus) पर भी लागू समझा जाता है। (विस्तार के लिये कृपया देखिये अध्याय 4—बैंकों के अधिकार)

निषेधात्मक ग्रहणाधिकार
(Negative Lien)

ग्रहणाधिकार के अन्तर्गत, ऋणदाता को उस समय तक, माल को अपने कब्जे में रखने का अधिकार होता है जब तक कि उसके ऋण का भुगतान नहीं किया जाता है। इसमें माल का स्वामित्व ऋणी के पास ही रहता है। इसके विपरीत, निषेधार्थक ग्रहणाधिकार में माल ऋणी के कब्जे में ही रहता है तथा ऋण प्राप्त करते समय ऋणी घोषणा करता है कि माल पर कोई अन्य ग्रहणाधिकार अथवा गिरवी नहीं है एवं भविष्य में ऋणदाता को सूचित किये विना कोई प्रभार निर्मित नहीं करेगा।

अभिहस्तांकन
(Assignment)

सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 130 के अनुसार, आकस्मिक दावों का अभिहस्तांकन किया जा सकता है। आकस्मिक दावों से अभिप्राय ऋण के उन दावों से है *जिनमें ऋण स्थायी सम्पत्ति तथा चालू सम्पत्ति (Current Assets)* की गिरवी अथवा प्राधीयन से सुरक्षित नहीं है अथवा जिसमें चालू सम्पत्ति में हितकारी के अधिकार में कोई सम्पत्ति नहीं है। ये दावे अथवा हित वर्तमान, भावी, शर्तसहित अथवा सम्भाव्य (Contingent) हो सकते हैं। बैंक से ऋण प्राप्त करते समय ऋणी वहीगत ऋण (Book Debts), सरकारी अथवा अर्द्ध-सरकारी विभागों से देय राशि तथा जीवन बीमा पालिसी का अभिहस्तांकन कर सकता है। अभिहस्तांकन विधिक अथवा साम्यिक (Equitable) हो सकता है। **विधिक अभिहस्तांकन** में आकस्मिक दावों का पूर्ण अन्तरण किया जाता है तथा यह लिखित एवं अभिहस्तांकनकर्त्ता द्वारा हस्ताक्षरित होता है। इसके पश्चात् अभिहस्तांकनकर्त्ता (Assignor) देनदार (Debtors) को लिखित रूप में सूचना देता है कि किस व्यक्ति को अभिहस्तांकन किया गया है। अभिहस्तांकिकी (Assignee) भी अभिहस्तांकनकर्त्ता के देनदार को सूचना भेजता है और ऋण के शेष का पुष्टिकरण प्राप्त करता है। यदि अभिहस्तांकन उपरोक्त विधि से नहीं किया गया है तब यह **साम्यिक अभिहस्तांकन** (Equitable Assignment) समझा जाता है। विनिमय विपत्र पर पृष्ठांकन के साथ बैंक के हित में मुख्तारनामा साम्यिक अभिहस्तांकन समझा जायेगा तथा यह अभिहस्तांकन भावी

ऋणों पर भी वैध माना जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि भारत निधि लिमिटेड बनाम ताकतमल व अन्य नामक विवाद[1] में की गई है। इस विवाद मे भारत निधि लिमिटेड ने श्री मल्होत्रा को सरकारी विभाग पर देय पूर्ति बिल की जमानत पर ऋण प्रदान करने की सहमति प्रदान की। ऋणी द्वारा बैंक के हित मे मुख्तारनामा लिखा गया जिसके अनुसार बैंक को पूर्ति बिल की राशि वसूल करके ऋण समायोजन का अधिकार प्रदान किया गया। ऋणी ने सरकारी विभाग पर 19 जौलाई 1948 को 49,633·87 रुपये का बिल लिखा तथा बैंक के हित मे बिल पृष्ठांकित किया। बैंक द्वारा बिल वसूली के लिये सम्बद्ध विभाग मे भेजा गया। परन्तु भुगतान प्राप्त करने से पूर्व ताकत मल द्वारा डिग्री के निष्पादन मे बिल की राशि कुर्क करायी गयी। बैंक द्वारा वाद प्रस्तुत करने पर जिला न्यायालय ने निर्णय दिया कि बैंक को बिल की राशि का अभिहस्तांकन (Assignment) किया गया है तथा ताकतमल को बिल की राशि पर कोई अधिकार प्राप्त नही है। ताकत मल द्वारा मध्य प्रदेश हाई कोर्ट में अपील करने पर, हाई कोर्ट ने जिला न्यायालय का निर्णय गलत ठहराया और ताकतमल के हित मे निर्णय दिया। परन्तु बैंक ने हाई कोर्ट के निर्णय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया कि इसमें बैंक तथा ऋणी के सम्बन्ध देनदार एवं लेनदार के हैं तथा बैंक द्वारा पूर्ति बिल की जमानत पर ऋण प्रदान किया गया है। बैंक के हित मे मुख्तारनामा अप्रतिसंहार्य समझा जायेगा तथा बिल पर किया गया पृष्ठांकन स्पष्टतः बैंक के हित मे अभिहस्ताकन समझा जायेगा। अतः न्यायालय द्वारा बैंक के हित मे निर्णय दिया गया।

इस सम्बन्ध मे यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि मुख्तारनामा बैंक के हित मे इसलिये लिखा गया है कि बैंक अपने ऋण का समायोजन कर सके तब यह मुख्तारनामा स्पष्ट अनुबन्ध के अभाव में, बैंक की सहमति के अभाव मे निरस्त अथवा समाप्त नही किया जा सकता है। इसमे अभिकरण का अनुबन्ध अभिकर्त्ता के हित के लिये किया गया। अतः ऐसी स्थिति में, अभिकर्त्ता की सहमति के बिना अनुबन्ध समाप्त नही किया जा सकता है। (भारतीय संविदा अधिनियम, धारा 202)।

अभिहस्ताकिकी को ऋण की वसूली पर पूर्ण अधिकार प्राप्त होता है तथा अन्य कोई लेनदार अभिहस्ताकिकी की तुलना में प्राथमिकता प्राप्त नही कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि हिन्दुस्तान कामिशयल बैंक लि० बनाम भारतीय संघ व अन्य[2] नामक विवाद मे की गई है। पुस्तकीय ऋण अथवा वर्तमान व भावी आकस्मिक दावों का विधिक अभिहस्तांकन ऋण की प्रतिभूति के रूप मे प्राप्त करते समय बैंक को निम्नलिखित सावधानियां ध्यान मे रखनी चाहियें—

(1) बैंक द्वारा ऋणी से अप्रतिसंहार्य पत्र (Irrevocable Letter) प्राप्त करना चाहिये कि देनदारी वसूल करने का अधिकार बैंक को है। इसके पश्चात्

1. Bharat Nidhi Ltd. Vs. Takhatmal and others (1969)
2. Hindustan Commercial Bank Ltd. Vs. Union of India & Others.

ऋणी के देनदार को सूचित करना चाहिये कि अमुक ऋण का अभिहस्तांकन बैंक को कर दिया गया है। इसके लिये बैंक को ऋणी के देनदार से ऋण का पुष्टिकरण एवं पत्र प्राप्ति की पावती रसीद (Acknowledgement Receipt) प्राप्त करनी चाहिये।

(2) पूर्ति बिल के अभिहस्तांकन की स्थिति में बैंक को ऋणी से मुख्तारनामा (Power of Attorny) प्राप्त करना चाहिये तथा इसकी मूल प्रति सम्बन्धित सरकारी विभाग को भेजनी चाहिये जिससे उसका रजिस्ट्रेशन हो सके।

(3) देनदार को इस तथ्य का पुष्टिकरण करना चाहिये कि उसे इस अभि-हस्तांकन से पूर्व किसी अभिहस्तांकन का ज्ञान नहीं है तथा उसे अभिहस्तांकनकर्त्ता के विरुद्ध मुजराई (Setoff) का कोई अधिकार नहीं है।

(4) बैंक को ऋणी के देनदार की वित्तीय स्थिति (Financial Position) का नियमित ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

(5) बैंक द्वारा सम्पूर्ण देनदारी (Full Receivable) का अभिहस्तांकन प्रतिभूति के रूप में प्राप्त करना चाहिये। अभिहस्तांकन आंशिक राशि के लिये नहीं किया जाना चाहिये।

बन्धक का आशय

(Meaning of Mortgage)

सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 58 के अनुसार ऋण की सुरक्षा के लिये, स्थायी सम्पत्ति में हित का हस्तान्तरण 'बन्धक' कहलाता है। अतः बन्धक में एक निश्चित सम्पत्ति में हित का हस्तान्तरण होता है तथा सम्पत्ति स्थायी प्रकृति की होती है। बन्धक में हित का हस्तान्तरण का मुख्य उद्देश्य ऋण सुरक्षा होता है। संयुक्त स्वामी (Co-owner) की स्थिति में, अपने हित के लिये कोई भी स्वामी बन्धक कर सकता है। ऋण का भुगतान होने पर बन्धककर्त्ता को सम्पत्ति पर पुनः अधिकार प्राप्त हो जाता है। बन्धक की निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं—

(1) बन्धक में विशिष्ट स्थायी सम्पत्ति (Specific Fixed Assets) में हित का अन्तरण किया जाता है।

(2) यदि सम्पत्ति के एक से अधिक स्वामी हैं तब प्रत्येक स्वामी को अपने हित का बन्धक रखने का अधिकार होता है।

(3) बन्धक में यह आवश्यक नहीं होता है कि सम्पत्ति की वास्तविक सुपुर्दगी **बन्धकदार** (Mortgagee) को की जाये।

(4) बन्धक निम्नलिखित उद्देश्यों (Purposes) के लिये किया जाता है—

(i) किसी ऐसे धन की सुरक्षा के लिये जो दिया जा चुका है, अथवा

(ii) किसी ऐसे ऋण के लिये जो प्रदान किया जाना है अथवा जो प्रदान किया जा चुका है, अथवा

(iii) किसी ऐसे वचन के निष्पादन के लिये जिससे धन सम्बन्धी दायित्व उत्पन्न होता है।

(5) बन्धक राशि (Mortgage Money) का भुगतान करने पर बन्धककर्त्ता (Mortgagor) को सम्पत्ति का हित पुनः वापिस प्राप्त करने का अधिकार होता है। बन्धक राशि मे ऋण व उस पर देय ब्याज सम्मिलित किया जाता है।

बन्धक के प्रकार
(Type of Mortgage)

सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 58 के अन्तर्गत निम्नलिखित रूपों मे सम्पत्ति का बन्धक किया जा सकता है—

(1) सादा बन्धक (Simple Mortgage)—सादे बन्धक से आशय उस बन्धक से होता है जिसमे सम्पत्ति के अधिकार का अन्तरण नही किया जाता है परन्तु बन्धककर्त्ता बन्धक राशि के भुगतान के लिये व्यक्तिगत रूप मे उत्तरदायी होता है। इसमे बन्धककर्त्ता स्पष्टतः अथवा गर्भित रूप मे इस बात से सहमत होता है कि अनुबन्ध के अनुसार धन की अदायगी न करने की स्थिति में बन्धकदार की सम्पत्ति बेचकर अपने ऋण की वसूली का अधिकार प्राप्त होता है। अतः इसमें सम्पत्ति का वास्तविक अन्तरण नही किया जाता है परन्तु लिखित अथवा मौखिक अनुबन्ध के आधीन ऋण का भुगतान न करने की स्थिति मे, बन्धकदार को सम्पत्ति बेचकर ऋण वसूल करने का अधिकार प्राप्त होता है। अतः इसमे बन्धककर्त्ता ऋण के भुगतान के लिये व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी होता है।

(2) शर्तसहित विक्रय द्वारा बन्धक (Mortgage by Conditional Sale)—इसमें बन्धककर्त्ता सम्पत्ति को इस शर्त पर बेचता है कि यदि निश्चित अवधि में बन्धक राशि का भुगतान कर दिया जायेगा तब विक्रय व्यर्थ समझा जायेगा और सम्पत्ति के क्रेता द्वारा सम्पत्ति का अन्तरण विक्रेता को कर दिया जायेगा। इसके विपरीत, यदि निश्चित तिथि पर बन्धक राशि का भुगतान नहीं किया जाता है तब विक्रय पूर्ण (Absolute) समझा जाता है। इस सम्बन्ध मे यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है कि शर्तसहित विक्रय द्वारा बन्धक उसी स्थिति मे वैध समझा जाता है जब यह शर्त बन्धक पत्र मे स्पष्टतः सन्निविष्ट हो। शर्तसहित विक्रय द्वारा बन्धक पुनः क्रय की शर्त के साथ वास्तविक विक्रय (Real Sale with Condition to Repurchase) से पृथक होता है। कोई भी विक्रय बन्धक समझा जाये अथवा वास्तविक विक्रय, इस तथ्य का निर्धारण विपरीत आशय के अभाव मे, विक्रय मूल्य के आधार पर किया जाता है। विपरीत आशय से अभिप्रायः यह होता है कि यदि विक्रय से सम्बन्धित विपत्र मे यह स्पष्ट किया गया है कि यह बन्धक है तब बन्धक ही समझा जायेगा। इसके विपरीत, यदि ऐसा आशय स्पष्ट नही है तब विक्रय अथवा बन्धक का निर्धारण सम्पत्ति के प्राप्त मूल्य (Value Received) के आधार पर किया जाता है। यदि

सम्पत्ति का प्राप्त मूल्य सम्पत्ति के वास्तविक मूल्य से अत्यन्त कम है तब इसे वन्धक समझा जायेगा।

(3) भोग बन्धक (Usufructuary Mortgage)—इसमें सम्पत्ति का वन्धककर्त्ता सम्पत्ति का कब्जा वन्धकदार को प्रदान करता है अथवा स्पष्टतः या गर्भित रूप में प्रदान करने का वचन देता है तथा सम्पत्ति को उस समय तक अपने कब्जे में रखने के लिये अधिकृत करता है जब तक कि वन्धक राशि का भुगतान नहीं किया जाता है। भोग बन्धक की निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं—

(1) इसमें बन्धककर्त्ता सम्पत्ति का वास्तविक कब्जा बन्धकदार को प्रदत्त करता है अथवा प्रदत्त करने का वचन देता है।

(2) वन्धकदार सम्पत्ति पर उस समय तक कब्जा रखने का अधिकारी होता है जब तक वन्धक राशि का भुगतान नहीं किया जाता है।

(3) वन्धकदार सम्पत्ति पर किराया अथवा लाभ पूर्णतः अथवा अंशतः प्राप्त करने के लिये अधिकृत होता है जिससे वह इस किराये अथवा लाभ से निम्नलिखित विनियोजन (Appropriation) कर सके—

(i) वन्धक राशि पर ब्याज, अथवा

(ii) वन्धक राशि का भुगतान, अथवा

(iii) अंशतः वन्धक राशि पर ब्याज तथा अंशतः वन्धक राशि का भुगतान।

अतः भोग बन्धक में सम्पत्ति का वास्तविक कब्जा बन्धकदार को प्रदान किया जाता है और वन्धकदार सम्पत्ति का प्रयोग करने का अधिकारी होता है।

(4) अंग्रेजी बन्धक (English Mortgage)—अंग्रेजी बन्धक में वन्धककर्त्ता वन्धक राशि का निश्चित तिथि पर भुगतान करने का वचन देता है और वन्धक सम्पत्ति का अन्तरण पूर्णतः वन्धकदार को कर देता है। वन्धक राशि का भुगतान किये जाने पर सम्पत्ति का पुनः अन्तरण वन्धककर्त्ता के हित में हो जाता है। अंग्रेजी वन्धक तथा सादा वन्धक में मुख्यतः अन्तर यह पाया जाता है कि सादा वन्धक में सम्पत्ति का अन्तरण वन्धकदार को नहीं किया जाता है। अंग्रेजी वन्धक में यदि वन्धक राशि का भुगतान नहीं किया जाता है तब वन्धकदार को विशेष परिस्थितियों में न्यायालय की पूर्व अनुमति के अभाव में सम्पत्ति वेचने का अधिकार होता है।

(5) हक विलेख के निक्षेप द्वारा बन्धक (Mortgage by Deposit of Title Deeds)—इसके अन्तर्गत कलकत्ता, मद्रास तथा बम्बई अथवा राज्य सरकार द्वारा शासकीय राजपत्र में इस आशय के लिये घोषित अन्य किसी शहर में, कोई व्यक्ति अपने लेनदार अथवा उसके अभिकर्त्ता को स्थायी सम्पत्ति के हक विलेख उस सम्पत्ति पर प्रतिभूति निर्मित करने के उद्देश्य से प्रदान करता है तब इस वन्धक को हक विलेख के निक्षेप द्वारा वन्धक समझा जाता है। अतः इसमें सम्पत्ति के हक विलेख की सुपुर्दगी करने से ही बन्धक समझा जाता है तथा इस वन्धक का प्रयोग विशिष्ट

स्थानो पर ही किया जाता है। बैंक में हक विलेख के निक्षेप द्वारा सम्पत्ति पर बन्धक को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। ऋण देने से पूर्व, बैंक को सम्पत्ति के सम्बन्ध मे कानूनी सलाह प्राप्त करनी चाहिये कि इस पर पूर्व के 13 वर्षों में अन्य कोई प्रभार अथवा अन्तरण नही किया गया है। इसके अतिरिक्त, सम्पत्ति का मूल्यांकन मान्यता प्राप्त इन्जीनियर से करवाना चाहिये और उसमें से सम्पत्ति की बिक्री पर अनुमानित मूल्य में कमी को घटाकर सम्पत्ति की कीमत का अनुमान लगाया जाना चाहिए। ऋण प्रदान करने से पूर्व ऋणी से हक विलेख के निक्षेप का ज्ञापन (Memorandum) प्राप्त किया जाता है तथा सम्पत्ति का बीमा करवाया जाता है। इस सम्बन्ध मे यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि इसमें सम्पत्ति किसी भी स्थान पर स्थित हो सकती है परन्तु सम्पत्ति के हक विलेखों का निक्षेप मद्रास, कलकत्ता तथा बम्बई एव राज्य सरकार द्वारा इस आशय के लिये घोषित राज्य में ही हो सकता है।

(6) विलक्षण बन्धक (Anomalous Mortgage)—यदि किसी सम्पत्ति पर बन्धक उपरोक्त पाँच बन्धको के अतिरिक्त किसी अन्य रूप मे किया जाता है तब उसे विश्लेषण बन्धक समझा जाता है। विलक्षण बन्धक में पक्षकारों के अधिकार व दायित्व बन्धक विलेख से निर्धारित होते हैं। बन्धक विलेख के अभाव मे ये अधिकार व दायित्व स्थानीय परम्पराओ के अनुसार तय किये जाते हैं।

अतः स्थायी सम्पत्ति की प्रत्याभूति पर विभिन्न रूपों में सम्पत्ति पर बन्धक द्वारा प्रभार निर्मित किया जा सकता है।

बन्धककर्त्ता के अधिकार
(Rights of Mortgagor)

सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम के अन्तर्गत बन्धककर्त्ता को विभिन्न अधिकार प्रदान किये गये हैं। ये अधिकार निम्नलिखित हैं—

(1) बन्धककर्त्ता को बन्धक राशि देय होने के पश्चात् बन्धक ऋण व उस पर ब्याज का भुगतान करके सम्पत्ति को पुनः अपने हित मे अन्तरित करवाने का अधिकार प्राप्त है तथा सम्पत्ति के हक विलेख जो बन्धकदार के कब्जे में हैं, प्राप्त करने के लिये अधिकृत है। बन्धककर्त्ता का यह अधिकार विमोचन का अधिकार (Right to Redeem) समझा जाता है तथा यह उस समय तक प्रभावी समझा जाता है जब तक कि यह पक्षकारों के कार्यों द्वारा अथवा न्यायालय के आदेशानुसार समाप्त नहीं किया गया हो।

(2) बन्धककर्त्ता बन्धक सम्पत्ति का अन्तरण किसी तृतीय पक्षकार को करने का अधिकारी है। इसमें बन्धककर्त्ता बन्धक सम्पत्ति को बन्धक ऋण (Mortgage Money) के साथ अन्तरित करने का अधिकारी होता है। यह अन्तरण बन्धकदार पर बाध्य होता है।

(3) वन्धककर्त्ता सम्पत्ति का उस समय तक निरीक्षण कर सकता है अथवा सम्पत्ति के प्रपत्रों की सत्य-प्रतियाँ (True Copies) प्राप्त कर सकता है जब तक कि उसे विमोचन का अधिकार प्राप्त होता है।

(4) वन्धककर्त्ता विपरीत अनुवन्ध के अभाव में सम्पत्ति में हुई वृद्धि प्राप्त करने का अधिकारी होता है। परन्तु यदि सम्पत्ति में वृद्धि वन्धकदार की लागत पर हुई है तथा वृद्धि को पृथक किया जा सकता है तव वन्धककर्त्ता सम्पत्ति की वृद्धि वन्धकदार की लागत का भुगतान करके प्राप्त करने का अधिकारी होता है। यदि सम्पत्ति की वृद्धि को पृथक नहीं किया जा सकता है तथा सम्पत्ति में वृद्धि सम्पत्ति की सुरक्षा के लिये आवश्यक है अथवा वन्धककर्त्ता की सहमति से की गयी है तव वन्धककर्त्ता वृद्धि की उचित लागत वन्धक राशि एवं लागत पर व्याज का भुगतान करने के लिये उत्तरदायी होता है। लागत पर व्याज की गणना उसी दर से की जाती है जिस दर पर वन्धक ऋण पर व्याज लगाया जाता है। यदि कोई दर स्पष्ट नहीं की गई है तव व्याज की दर 9 प्रतिशत लागू समझी जाती है।

(5) सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 64 के अनुसार, यदि वन्धक सम्पत्ति पट्टे (Lease) की है तथा वन्धकदार द्वारा सम्पत्ति के वन्धक की अवधि में पट्टे का नवीनीकरण कराया गया है तव वन्धककर्त्ता विमोचन पर नवीन पट्टे का लाभ प्राप्त करने का अधिकारी होता है।

(6) सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 65 A के अनुसार, वन्धककर्त्ता, जिसके अधिकार में सम्पत्ति का कब्जा है विपरीत अनुवन्ध के अभाव में सम्पत्ति पर पट्टा करने का अधिकारी होता है तथा यह पट्टा वन्धकदार पर वाध्यकारी होता है। परन्तु यह पट्टा निम्नलिखित शर्तों के अधीन किया जाना चाहिये—

(i) यह पट्टा सम्पत्ति प्रवन्ध के साधारण उपक्रम में किया जाना चाहिये तथा यह स्थानीय रीति-रिवाजों व कानूनों के अन्तर्गत किया जाना चाहिये।

(ii) ऐसे पट्टे में नवीनीकरण के लिये प्रसंविदा अन्तर्विष्ट नहीं होना चाहिये।

(iii) यह पट्टा किये जाने की तिथि के 6 माह पश्चात् लागू नहीं होना चाहिये।

(iv) भवन की स्थिति में पट्टा 3 वर्ष से अधिक की अवधि के लिये नहीं किया जा सकता है।

वन्धकदार के अधिकार
(Rights of Mortgagee)

वन्धक सम्पत्ति के सम्वन्ध में वन्धकदार अथवा वन्धकगृहीता को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं—

(1) वन्धकदार विपरीत अनुवन्ध के अभाव में, वन्धक राशि देय होने के पश्चात् तथा वन्धककर्त्ता को कोर्ट विमोचन का आदेश प्राप्त होने से पूर्व न्यायालय

से विमोचन निषेध (Suit for Foreclosure) अथवा सम्पत्ति को बेचने का अधिकार प्राप्त कर सकता है। विमोचन निषेध का आदेश बन्धककर्त्ता को विमोचन का आदेश प्राप्त करने से प्रतिबन्धित करता है। बन्धकदार द्वारा इस अधिकार का प्रयोग *उस स्थिति में नहीं किया जा सकता है जबकि बन्धककर्त्ता बन्धक राशि न्यायालय में* जमा कर चुका है।

(2) बन्धकदार निम्नलिखित परिस्थितियों में बन्धक राशि की वसूली के लिये वाद (Suit for Mortgage Money) प्रस्तुत कर सकता है—

(i) सादा बन्धक की स्थिति में जहाँ बन्धककर्त्ता ऋण के भुगतान के लिये व्यक्तिगत रूप में दायित्व वहन करता है।

(ii) जब बन्धककर्त्ता अथवा बन्धकदार के दोष के बिना बन्धक सम्पत्ति पूर्णतः अथवा अंशतः क्षतिग्रस्त हो गयी है तथा बन्धकदार ने नयी प्रतिभूति प्रस्तुत करने के लिये बन्धककर्त्ता को उचित अवसर दिया है और बन्धककर्त्ता नयी प्रतिभूति प्रदान करने में असमर्थ रहा है।

(iii) जहाँ बन्धककर्त्ता के दोष के कारण बन्धकदार बन्धक सम्पत्ति से वंचित हो जाता है।

(iv) जहाँ बन्धकदार बन्धक सम्पत्ति अपने कब्जे में लेने के लिये अधिकृत है परन्तु बन्धककर्त्ता ने सम्पत्ति का कब्जा नहीं दिया है।

उपरोक्त स्थिति में बन्धकदार ऋण की वसूली के लिये वाद प्रस्तुत कर सकता है।

(3) सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 69 के अनुसार, बन्धकदार निम्नलिखित परिस्थितियों में न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना विक्रय का अधिकार (Sale without Intervention of the Court) रखता है जबकि—

(i) बन्धक-पत्र में विक्रय का अधिकार स्पष्टतः प्रदान किया गया है तथा बन्धकदार स्वयं सरकार (Government) है।

(ii) अंग्रेजी बन्धक द्वारा सम्पत्ति पर प्रभार निर्मित किया गया है।

(iii) न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना सम्पत्ति विक्रय का अधिकार स्पष्टतः बन्धक-पत्र (Mortgage Deed) में है तथा बन्धक-पत्र लिखने की तिथि पर बन्धक सम्पत्ति अथवा उसका कोई भाग कलकत्ता, मद्रास, बम्बई या राज्य सरकार द्वारा इस आशय के लिये राजपत्र में घोषित अन्य किसी शहर में स्थित है। परन्तु यह अधिकार उसी स्थिति में प्रयोग किया जा सकता है जबकि बन्धक ऋण के भुगतान के लिये बन्धककर्त्ता को नोटिस भेजा जा चुका है तथा नोटिस भेजने के बाद 3 माह का समय व्यतीत हो चुका है तथा ऋण का भुगतान नहीं किया गया है अथवा बन्धक राशि पर कम से कम 500 रुपये का ब्याज देय है और यह ब्याज 3 माह से अधिक की अवधि से भुगतान नहीं किया गया है।

बन्धकदार द्वारा सम्पत्ति बेचने की स्थिति में क्रेता के अधिकार प्रभावित

नहीं होते हैं तथा विक्रय से प्राप्त राशि का विनियोजन (Appropriation) वन्धक धन की वसूली के लिये किया जायेगा और वन्धककर्त्ता विक्रय का आधिक्य (Surplus) प्राप्त करने का अधिकारी होता है।

(4) वन्धकदार को सम्पत्ति में हुई वृद्धि (Accession to Property) प्राप्त करने का अधिकार होता है। परन्तु यह अधिकार उसी स्थिति में लागू समझा जाता है जबकि सम्पत्ति में वृद्धि वन्धक अनुवन्ध की तिथि के वाद हुई है तथा इस आशय के विरुद्ध कोई अनुवन्ध नहीं किया गया है। **वृद्धि पर अधिकार केवल ऋण की प्रतिभूति के लिये लागू समझा जाता है।** वन्धककर्त्ता वृद्धि की लागत का भुगतान करके वृद्धि प्राप्त करने का अधिकारी होता है।

(5) यदि वन्धककर्त्ता द्वारा वन्धक सम्पत्ति के पट्टे का **नवीनीकरण** (Renewal of Lease) कराया गया है तव विपरीत अनुवन्ध के अभाव में वन्धकदार नये पट्टे का ऋण की प्रतिभूति के लिये अधिकारी होता है।

(6) **सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम** की धारा **72** के अनुसार यदि वन्धकदार द्वारा वन्धक सम्पत्ति पर कोई राशि निम्नलिखित उद्देश्य के लिये व्यय की गयी है (Expenses incurred on Mortgage Property for the following purposes)—

(i) सम्पत्ति के रख-रखाव (Maintenance) के लिये,

(ii) वन्धककर्त्ता के स्वत्व की रक्षा (Protection of Title) करने के लिये,

(iii) वन्धकदार द्वारा स्वयं अपने स्वत्व (Title) अथवा हक को वन्धककर्त्ता के विरुद्ध पक्का कराने के लिये,

(iv) वन्धक सम्पत्ति का पुनः पट्टा (Sub Lease) कराने के लिये, यदि वन्धक सम्पत्ति पट्टे की है,

तव वन्धकदार व्यय की गयी राशि वन्धक राशि के साथ प्राप्त करने का अधिकारी होता है तथा इस राशि का वन्धक ऋण के व्याज की दर से ही व्याज वसूल किया जायेगा। यदि कोई व्याज दर नहीं है तव 9 प्रतिशत की दर से व्याज वसूल किया जायेगा।

अतः वन्धकदार को वन्धक अनुवन्ध में विभिन्न अधिकार प्राप्त हैं।

गिरवी एवं वन्धक में अन्तर
(Difference between Pledge and Mortgage)

गिरवी एवं वन्धक में निम्नलिखित अन्तर पाये जाते हैं—

(1) विक्रय का अधिकार (Right to Sale)—गिरवी में ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान न करने की स्थिति में ऋणदाता को माल वेचने का अधिकार प्राप्त होता है। इसके विपरीत, वन्धक में ऋणदाता को न्यायालय की पूर्वानुमति के अभाव में माल विक्रय का अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

(2) सम्पत्ति की प्रकृति (Nature of Security)—गिरवी में ऋण की

प्रतिभूति के रूप में चल सम्पत्ति (Current Assets) प्रदान की जाती है। परन्तु बन्धक में अचल सम्पत्ति (Fixed Assets) की जमानत पर ऋण प्रदान किया जाता है।

(3) अनुबन्ध (Contract)—गिरवी में ऋणी एवं ऋणदाता के बीच पृथक लिखित अनुबन्ध आवश्यक नहीं होता है। इसके विपरीत बन्धक में लिखित अनुबन्ध अनिवार्य होता है तथा बन्धक का रजिस्ट्रेशन करवाना अनिवार्य होता है।

(4) सुपुर्दगी (Delivery)—गिरवी में माल की वास्तविक सुपुर्दगी आवश्यक होती है। परन्तु, बन्धक में सम्पत्ति की वास्तविक अथवा रचनात्मक सुपुर्दगी हो सकती है। उदाहरणार्थ सादे बन्धक में सम्पत्ति की वास्तविक सुपुर्दगी नहीं की जाती है।

अतः गिरवी एवं बन्धक में पर्याप्त अन्तर पाये जाते है।

विधिक एवं साम्यिक बन्धक में अन्तर ✓

(Difference between Legal and Equitable Mortgage)

विधिक बन्धक में सम्पत्ति के अधिकार-पत्र ऋणदाता को पृथक् अनुबन्ध के अधीन प्रदान किये जाते हैं। इसमें अनुबन्ध लिखित एवं रजिस्टर्ड होता है। बन्धक ऋण का मूल्य 100 रुपये से अधिक होने पर, बन्धक का रजिस्टर्ड होना अनिवार्य समझा जाता है। बन्धक राशि का भुगतान करने पर, बन्धक सम्पत्ति का पुनः अन्तरण बन्धककर्त्ता को हो जाता है। इसके विपरीत साम्यिक बन्धक में बन्धककर्त्ता बन्धक सम्पत्ति के हक विलेख बन्धकदार को बन्धक सम्पत्ति में साम्यिक हित निर्मित करने के उद्देश्य से अन्तरित करता। इसमें एक पृथक् विपत्र द्वारा बन्धककर्त्ता यह दायित्व स्वीकार करता है कि बन्धक धन का भुगतान न करने की स्थिति में, बन्धककर्त्ता बन्धकदार के हित में विधिक बन्धक लिखेगा। साम्यिक बन्धक में बन्धकदार को पूर्ण सावधानी रखनी चाहिये। यदि उसकी लापरवाही से अन्य कोई व्यक्ति सम्पत्ति पर ऋण प्रदान करता है तब बाद वाला बन्धकदार पूर्व के बन्धकदार की तुलना मे प्राथमिकता प्राप्त कर लेता है।

विधिक बन्धक एवं साम्यिक बन्धक में निम्नलिखित अन्तर पाये जाते हैं—

(1) स्थान (Place —साम्यिक बन्धक बम्बई, मद्रास कलकत्ता एवं राज्य सरकार द्वारा इस आशय के लिये घोषित किसी भी स्थान पर किया जा सकता है। इसके विपरीत, विधिक बन्धक किसी भी स्थान पर किया जा सकता है।

(2) अनुबन्ध (Contract)—साम्यिक बन्धक में सम्पत्ति के हक विलेख (Title Deed) ऋणदाता को सुपुर्द कर दिये जाते हैं। इसमें पृथक् अनुबन्ध की आवश्यकता नहीं होती है। इसके विपरीत विधिक बन्धक मे पृथक् अनुबन्ध किया जाता है तथा ऋण 100 रुपये से अधिक होने की स्थिति में, बन्धक का रजिस्ट्रेशन करवाया जाता है।

(3) स्टाम्प कर (Stamp Duty)—साम्यिक बन्धक में स्टाम्प कर नहीं

चुकाया जाता है। परन्तु, विधिक बन्धक में स्टाम्प कर चुकाना पड़ता है चूंकि इसमें पृथक् अनुबन्ध के प्रपत्र निष्पादित किये जाते हैं।

साम्यिक बन्धक
(Equitable Mortgage)

बन्धक का आशय ऋण के भुगतान की सुरक्षा के लिये स्थायी सम्पत्ति में हित का हस्तान्तरण करना है। साम्यिक बन्धक के अन्तर्गत, सम्पत्ति के अधिकार, पत्र अथवा हक विलेख (Title of Deeds) ऋणदाता को दे दिये जाते हैं और सम्पत्ति पर कब्जा ऋणी का होता है। साम्यिक बन्धक बम्बई, कलकत्ता व मद्रास तथा राज्य सरकार द्वारा घोषित विशिष्ट स्थानों पर हो सकता है। साम्यिक बन्धक के अन्तर्गत, ऋणदाता के कब्जे में केवल सम्पत्ति के अधिकार-पत्र रहते हैं। ऋण प्रदान करते समय अधिकार-पत्रों की शुद्धता की जाँच की जानी चाहिये। यदि सम्पत्ति के अधिकार-पत्र ऋणदाता के अभिकर्त्ता को अघोषित स्थानों पर इस आशय से सुपुर्द किये जाते हैं कि ये प्रपत्र घोषित स्थानों पर रह रहे ऋणदाता को प्राप्त हो जायें तब इसे साम्यिक बन्धक समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि सुलोचना व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी है। इस विवाद में वादी ने बैंक के हित में हक विलेख के निक्षेप द्वारा प्रभार निर्मित किया। हक विलेख का निक्षेप बैंक की अन्य शाखा के स्थान पर किया गया चूंकि ऋण प्रदान करने वाली शाखा के स्थान पर यह बन्धक नहीं किया जा सकता था। बैंक द्वारा बन्धक धन की वसूली के लिये वाद प्रस्तुत किया गया। वादी ने तर्क प्रस्तुत किया कि उसने हक विलेख का निक्षेप बन्धक करने वाली शाखा के अतिरिक्त अन्य शाखा को किया है तथा प्रतिज्ञा-पत्र उसकी अवयस्क पुत्री द्वारा निष्पादित किया गया है। अतः बैंक को ऋण की वसूली का अधिकार प्राप्त नहीं है। न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया कि हक विलेख का निक्षेप ऋण प्रदान करने वाली शाखा की ओर से इस उद्देश्य से किया गया है कि अन्य शाखा पर हक विलेख के निक्षेप द्वारा साम्यिक बन्धक का निर्माण किया जा सके। अतः यह बन्धक न्यायोचित है।

अधिकार-प्रपत्रों की सुपुर्दगी वास्तविक अथवा रचनात्मक हो सकती है। यदि ऋणदाता के कब्जे में हक विलेख उपलब्ध है तब साम्यिक बन्धक का निर्माण रचनात्मक सुपुर्दगी से हो सकती है। इस निर्णय की पुष्टि के० जे० नाथन बनाम एस० वी० मारुथि राव नामक विवाद[2] में की गयी है। इस विवाद में ऋणी द्वारा विधिक बन्धक के आधार पर कुछ निश्चित ऋण प्राप्त किया गया। हक विलेख बैंक के कब्जे में थे। इसके पश्चात् ऋणी ने 15,000 रुपये के ऋण का श्री नाथन से पृथक् अनुबन्ध किया। ऋणी ने बैंक के ऋण का कुछ भाग भुगतान कर दिया। ऋणी ने बैंक को लिखित सूचना भेजी कि ऋण का पूर्ण भुगतान करने पर सम्पत्ति के

1. Sulochana and others Vs. The Pandyan Bank Ltd. (A. I. R. 1975, Mad. 70)

2. K. J. Nathan Vs. S. V. Maruthi Rao. (A. I. R. 1965, S. C. 430)

हक विलेख श्री नाथन अथवा उसके प्रतिनिधि को सुपुर्द कर दिये जायें। श्री नाथन ने बैंक के ऋण का पूर्ण भुगतान कर दिया तथा बैंक से हक विलेख अपने प्रतिनिधि के माध्यम से एकत्र कर लिये। इसके पश्चात् ऋणी ने श्री नाथन के हित में हक विलेख के निक्षेप द्वारा बन्धक निर्मित करने की सहमति प्रगट कर दी। श्री नाथन द्वारा ऋण की वसूली के लिये वाद प्रस्तुत करने पर प्रतिवादी द्वारा तर्क प्रस्तुत किया गया कि उसने ऋणदाता को हक विलेख सुपुर्द नहीं किये हैं। अतः यह साम्यिक बन्धक नहीं समझा जा सकता है।

प्रस्तुत विवाद में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि ऋणी द्वारा ऋण दाता के कब्जे में पहले से ही प्राप्त हक विलेख ऋण को जमानतस्वरूप प्रदान करने के लिये सहमत होने की स्थिति में, हक विलेख के निक्षेप द्वारा बन्धक समझा जायेगा। हक विलेख के निक्षेप द्वारा बन्धक की स्थिति में हक विलेख की सुपुर्दगी वास्तविक अथवा रचनात्मक हो सकती है। इस सम्बन्ध में ऋणी की सहमति पर्याप्त होती है कि ऋणदाता ऋण को जमानत के लिये हक विलेख पर अधिकार रख सकता है। अतः न्यायालय ने श्री नाथन के हित में साम्यिक बन्धक का पुष्टिकरण कर दिया।

उपबन्धक
(Sub Mortgage)

बन्धकधारी (Mortgagee) द्वारा सम्पत्ति को पुनः बन्धक करने की स्थिति में उपबन्धक समझा जाता है। इसमें बैंक ऋण प्रदान करते समय बन्धकधारी से प्रतिभूति के रूप में बन्धक सम्पत्ति (Mortgaged Property) प्राप्त करता है। इससे पूर्व बैंक को बन्धककर्त्ता (Mortgagor) को उपबन्धक की सूचना देनी चाहिये तथा बन्धककर्त्ता को सूचित करना चाहिये कि भविष्य में किसी भी ऋण का भुगतान बैंक को किया जाये। बैंक को बन्धककर्त्ता एवं बन्धकधारी के बीच मूल अनुबन्ध की शर्तों का अध्ययन करना चाहिये चूंकि बन्धकधारी को पुनः बन्धक का अधिकार अनुबन्ध की मूल शर्तों के अधीन ही होता है। यदि उसे यह अधिकार प्रदान नहीं किया गया है तब वह उपबन्धक नहीं कर सकता है। अतः उपबन्धक की स्थिति में बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिये।

(SOLVED PROBLEMS)

1. एक देनदार द्वारा एक लिमिटेड कम्पनी के कुछ निश्चित अंश बैंक को ऋण की प्रतिभूति के लिये गिरवी रखे गये। इसके पश्चात् कम्पनी ने अंशों पर लाभांश घोषित किया और बोनस अंश भी जारी किये। बैंक ने दावा किया कि वह लाभांश की राशि तथा बोनस अंश प्राप्त करने का अधिकारी है। बैंक के दावे की विवेचना कीजिये।

Certain shares in a Limited Company were pledged by debtor with a Bank as security for the loan advanced by the B to him. Subsequently, the Company declare dividead on the

चुकाया जाता है। परन्तु, विधिक बन्धक में स्टाम्प कर चुकाना पड़ता है चूंकि इसमें पृथक् अनुबन्ध के प्रपत्र निष्पादित किये जाते हैं।

साम्यिक बन्धक
(Equitable Mortgage)

बन्धक का आशय ऋण के भुगतान की सुरक्षा के लिये स्थायी सम्पत्ति में हित का हस्तान्तरण करना है। साम्यिक बन्धक के अन्तर्गत, सम्पत्ति के अधिकार-पत्र अथवा हक विलेख (Title of Deeds) ऋणदाता को दे दिये जाते हैं और सम्पत्ति पर कब्जा ऋणी का होता है। साम्यिक बन्धक बम्बई, कलकत्ता व मद्रास तथा राज्य सरकार द्वारा घोषित विशिष्ट स्थानों पर हो सकता है। साम्यिक बन्धक के अन्तर्गत, ऋणदाता के कब्जे में केवल सम्पत्ति के अधिकार-पत्र रहते हैं। ऋण प्रदान करते समय अधिकार-पत्रों की शुद्धता की जाँच की जानी चाहिये। यदि सम्पत्ति के अधिकार-पत्र ऋणदाता के अभिकर्त्ता को अघोषित स्थानों पर इस आशय से सुपुर्द किये जाते हैं कि ये प्रपत्र घोषित स्थानों पर रह रहे ऋणदाता को प्राप्त हो जायें तब इसे साम्यिक बन्धक समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि सुलोचना व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी है। इस विवाद में वादी ने बैंक के हित में हक विलेख के निक्षेप द्वारा प्रभार निर्मित किया। हक विलेख का निक्षेप बैंक की अन्य शाखा के स्थान पर किया गया चूंकि ऋण प्रदान करने वाली शाखा के स्थान पर यह बन्धक नहीं किया जा सकता था। बैंक द्वारा बन्धक धन की वसूली के लिये वाद प्रस्तुत किया गया। वादी ने तर्क प्रस्तुत किया कि उसने हक विलेख का निक्षेप बन्धक करने वाली शाखा के अतिरिक्त अन्य शाखा को किया है तथा प्रतिज्ञा-पत्र उसकी अवयस्क पुत्री द्वारा निष्पादित किया गया है। अतः बैंक को ऋण की वसूली का अधिकार प्राप्त नहीं है। न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया कि हक विलेख का निक्षेप ऋण प्रदान करने वाली शाखा की ओर से इस उद्देश्य से किया गया है कि अन्य शाखा पर हक विलेख के निक्षेप द्वारा साम्यिक बन्धक का निर्माण किया जा सके। अतः यह बन्धक न्यायोचित है।

अधिकार-प्रपत्रों की सुपुर्दगी वास्तविक अथवा रचनात्मक हो सकती है। यदि ऋणदाता के कब्जे में हक विलेख उपलब्ध है तब साम्यिक बन्धक का निर्माण रचनात्मक सुपुर्दगी से हो सकती है। इस निर्णय की पुष्टि के० जे० नाथन बनाम एस० वी० मारुथि राव नामक विवाद[2] में की गयी है। इस विवाद में ऋणी द्वारा विधिक बन्धक के आधार पर कुछ निश्चित ऋण प्राप्त किया गया। हक विलेख बैंक के कब्जे में थे। इसके पश्चात् ऋणी ने 15,000 रुपये के ऋण का श्री नाथन से पृथक् अनुबन्ध किया। ऋणी ने बैंक के ऋण का कुछ भाग भुगतान कर दिया। ऋणी ने बैंक को लिखित सूचना भेजी कि ऋण का पूर्ण भुगतान करने पर सम्पत्ति के

1. Sulochana and others Vs. The Pandyan Bank Ltd. (A. I. R. 1975, Mad. 70)
2. K. J. Nathan Vs. S. V. Maruthi Rao. (A. I. R. 1965, S. C. 430)

हक विलेख भी नाथन अथवा उसके प्रतिनिधि को सुपुर्द कर दिये जायें। श्री नाथन ने बैंक के ऋण का पूर्ण भुगतान कर दिया तथा बैंक से हक विलेख अपने प्रतिनिधि के माध्यम से एकत्र कर लिये। इसके पश्चात् ऋणी ने श्री नाथन के हित में हक विलेख के निक्षेप द्वारा बन्धक निर्मित करने की सहमति प्रगट कर दी। श्री नाथन द्वारा ऋण की वसूली के लिये वाद प्रस्तुत करने पर प्रतिवादी द्वारा तर्क प्रस्तुत किया गया कि उसने ऋणदाता को हक विलेख सुपुर्द नहीं किये हैं। अतः यह साम्यिक बन्धक नहीं समझा जा सकता है।

प्रस्तुत विवाद में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि ऋणी द्वारा ऋण दाता के कब्जे में पहले से ही प्राप्त हक विलेख ऋण की जमानतस्वरूप प्रदान करने के लिये सहमत होने की स्थिति में, हक विलेख के निक्षेप द्वारा बन्धक समझा जायेगा। हक विलेख के निक्षेप द्वारा बन्धक की स्थिति में हक विलेख की सुपुर्दगी वास्तविक अथवा रचनात्मक हो सकती है। इस सम्बन्ध में ऋणी की सहमति पर्याप्त होती है कि ऋणदाता ऋण को जमानत के लिये हक विलेख पर अधिकार रख सकता है। अतः न्यायालय ने श्री नाथन के हित में साम्यिक बन्धक का पुष्टिकरण कर दिया।

उपबन्धक
(Sub Mortgage)

बन्धकधारी (Mortgagee) द्वारा सम्पत्ति को पुनः बन्धक करने की स्थिति में उपबन्धक समझा जाता है। इसमें बैंक ऋण प्रदान करते समय बन्धकधारी से प्रतिभूति के रूप में बन्धक सम्पत्ति (*Mortgaged Property*) प्राप्त करता है। इससे पूर्व बैंक को बन्धककर्त्ता (Mortgagor) को उपबन्धक की सूचना देनी चाहिये तथा बन्धककर्त्ता को सूचित करना चाहिये कि भविष्य में किसी भी ऋण का भुगतान बैंक को किया जाये। बैंक को बन्धककर्त्ता एवं बन्धकधारी के बीच मूल अनुबन्ध की शर्तों का अध्ययन करना चाहिये चूंकि बन्धकधारी को पुनः बन्धक का अधिकार अनुबन्ध की मूल शर्तों के अधीन ही होता है। यदि उसे यह अधिकार प्रदान नहीं किया गया है तब वह उपबन्धक नहीं कर सकता है। अतः उपबन्धक की स्थिति में बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिये।

(SOLVED PROBLEMS)

1. एक देनदार द्वारा एक लिमिटेड कम्पनी के कुछ निश्चित अंश बैंक को ऋण की प्रतिभूति के लिये गिरवी रखे गये। इसके पश्चात् कम्पनी ने अंशों पर लाभांश घोषित किया और बोनस अंश भी जारी किये। बैंक ने दावा किया कि वह लाभांश की राशि तथा बोनस अंश प्राप्त करने का अधिकारी है। बैंक के दावे की विवेचना कीजिये।

***Certain shares* in a Limited Company were pledged by the debtor with a Bank as security for the loan advanced by the Bank to him. Subsequently, the Company declare dividead on the shares**

also issued bonus shares. The Bank claimed that it was entitled to recieve the amount of the dividend declared also the bonus share issued by the Company. Discuss the claim of the Bank.

(C. A. I. I. B. Part II, May 1979)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक को लाभांश एवं बोनस अंशों को प्राप्त करने का अधिकार नहीं है। इस निर्णय की पुष्टि एम० आर० धवन बनाम मदन मोहन व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी। इसमें बैंक की स्थिति गिरवीगृहीता के समान होती है तथा गिरवीगृहीता माल की वृद्धि एवं लाभ प्राप्त करने का अधिकारी नहीं होता है।

2. निम्नलिखित परिस्थितियों में बैंक की स्थिति बतलाइये —

(a) कुछ धन कम्पनी द्वारा बैंक से चल मशीनरी की गिरवी के विरुद्ध लिया गया। बैंक ने मशीनरी पर वास्तविक कब्जा प्राप्त नहीं किया तथा कम्पनी को बैंक की ओर से मशीन रखने के लिये अधिकृत कर दिया। मशीनरी अतिरिक्त तहसीलदार द्वारा वसूली की कार्यवाही में कुर्क कर ली गयी। वसूली का कार्य कम्पनी के मजदूरों की देय मजदूरी के कारण तहसीलदार द्वारा किया जा रहा था। बैंक प्रतिवाद करता है कि मशीनरी की कुर्की उसके दावे को सन्तुष्ट किये बिना नहीं हो सकती है।

(b) एक बन्धक हक विलेख के निक्षेप द्वारा मई, 1979 में किया जाता है। इसी सम्पत्ति पर एक रजिस्टर्ड बन्धक जुलाई, 1979 में किया जाता है। रजिस्टर्ड बन्धकदार को पूर्व बन्धक का कोई ज्ञान नहीं है। दोनों बन्धकों में किस बन्धक को प्राथमिकता का अधिकार प्राप्त है ?

(c) रमेश ब्रादर्स का नकद साख खाता माल की गिरवी के विरुद्ध है। उन्होंने 2 लाख रुपये की कपड़े की गाँठें बैंक को गिरवी की हुई हैं। गोदाम का ताला एवं चाबी बैंक के पास हैं। एक दिन सुबह पाया गया कि गोदाम का ताला टूटा हुआ है तथा 1 लाख रुपये का माल गायब है।

Please discuss the position of Bank in the following conditions—

(a) Certain monies were borrowed by the company from the Bank against pledge of movable machinery. Bank did not take actual possession of the movable machinery, but permitted the company to retain possession for and on behalf of the Bank. The movables were attached by the additional Tehsildar in the recovery proceedings initiated by him for recovery of the amount of wages due to the workers of the company. The Bank raised an objection that without satisfying its claim the movable machinery could not be attached.

(C. A. I. I. B. Part II, 1978)

1. M. R. Dhawan Vs. Madan Mohan & others.

(b) Mortgage by deposit of the title deeds was created in May, 1979. A registered mortgage over the same property was executed in July 1979. The registered mortgagee did not have any knowledge of the earlier mortgage. As between the two mortgage which is entitled to priority. *(C. A. I. I. B. Part II, May., 1980)*

(c) Ramesh Brothers had cash credit account against pledge of goods. They have pledged cloth bales worth Rs. 2 Lacs with the bank Lock and key of the godown are with the bank. One morning it was found that the godown was burgled, i. e. lock was broken and some goods worth Rs. 1 Lac were found missing.

(C. A. I. I. B. Part II, May., 1980)

हल—(a) उपरोक्त स्थिति में बैंक की स्थिति गिरवीगृहीता के समान है तथा बैंक को मशीनरी पर पूर्ण अधिकार प्राप्त है। बैंक का दावा सर्वप्रथम समायोजित किया जायेगा तथा तहसीलदार का दावा असुरक्षित लेनदार के रूप में विचारणीय होगा। अतः असुरक्षित लेनदार का दावा गिरवीगृहीता की तुलना में प्राथमिकता प्राप्त नहीं कर सकता है।

(b) उपरोक्त स्थिति में हक विलेख के निक्षेप द्वारा बन्धक को प्राथमिकता प्रदान की जायेगी। बन्धक के रजिस्टर्ड होने अथवा न होने का प्राथमिकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इस निर्णय की पुष्टि स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया बनाम केरल *वित्त निगम नामक विवाद*[1] *में की गयी है। परन्तु यदि बाद का रजिस्टर्ड बन्धक* पूर्व के बन्धकदार (Mortgagee) के कपट अथवा मिथ्या वर्णन के आधार पर किया गया है तब बाद के बन्धकदार को पूर्व के बन्धकदार की तुलना में प्राथमिकता प्राप्त हो जाती है।

(c) इस स्थिति मे बैंक की स्थिति गिरवीगृहीता के समान है। बैंक गोदाम से हुई चोरी के लिये उसी स्थिति में उत्तरदायी ठहराया जा सकता है जबकि बैंक ने गिरवी के माल की उचित देखभाल नहीं की है और बैंक लापरवाही का दोषी है। उपरोक्त स्थिति में बैंक की लापरवाही के विषय में कुछ नहीं बतलाया गया है। साधारणतः गोदाम का बीमा कराया जाता है। यदि गोदाम बीमित है तब बीमा कम्पनी से रुपया वसूल किया जा सकता है। अतः यदि माल का बीमा नहीं है तथा बैंक लापरवाही का दोषी भी नहीं पाया गया है तब देनदार (Debtor) अर्थात् रमेश ब्रादर्स स्वयं ही उत्तरदायी ठहराये जायेंगे।

3. निम्नलिखित परिस्थिति में बैंक की स्थिति बतलाइये—

Discuss the bank's Position in the following Situations—

1. State Bank of India Vs. Kerala Financial Corporation, (1983)

Project Corporation Limited has 3 directors. The quorum at the Board Meeting is 2 directors. The Articles of the Company also provide that no directors shall vote in respect of any contract or matter in which he is interested.

The Company enjoys Cash Credit limit of Rs. 10 lacs which is secured by hypothecation of stocks and also by personal guarantee of 2 directors.

Company approaches the Bank for additional facility of Rs. 10 lacs to fulfil some contracts. On reviewing the position, Bank feels that it will be necessary to insist on additional security by way of equitable mortgage of the property of the Company valued at Rs. 20 lacs.

Can the Company pass a Board Resoulution authorising creation of equitable mortgage of the property ? If not, what procedure should be followed ?

हल—उपरोक्त स्थिति में, कम्पनी को प्रदत्त ऋण में दो संचालकों की व्यक्तिगत जमानत एवं स्टाक की प्रतिभूति प्राप्त की गयी है । कम्पनी द्वारा अतिरिक्त ऋण सीमा की माँग की जाती है जिसके लिये बैंक कम्पनी की 20 लाख की स्थायी सम्पत्ति पर साम्यिक बन्धक प्राप्त करना चाहता है। इस स्थिति में, कम्पनी के संचालक प्रस्ताव पारित नहीं कर सकते हैं चूंकि कम्पनी की संचालक सभा में केवल 3 संचालक है तथा संचालक सभा में कोई भी प्रस्ताव 2 संचालकों की सहमति से पारित किया जा सकता है। बैंक के साथ ऋण अनुबन्ध में 2 संचालकों की व्यक्तिगत जमानत है। अतः वे प्रस्ताव में वोट नहीं दे सकते हैं।

इस स्थिति में, कम्पनी को पार्षद अन्तर्नियम में परिवर्तन करने हेतु अंशधारियों की साधारण सभा बुलानी चाहिए तथा कम्पनी के उक्त प्रावधान में, अनुबन्ध में हित रखने वाले संचालक वोट नहीं देंगे, परिवर्तन करना चाहिए अथवा संचालक मण्डल में संचालकों की संख्या में वृद्धि करनी चाहिये।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) बैंक द्वारा ऋण की प्रतिभूति पर प्रभार निर्मित करने की विभिन्न विधियाँ हैं। उदाहरणार्थ गिरवी, लियन, प्राधीयन अथवा दृष्टि बन्धक, अभिहस्तांकन, बन्धक आदि।

(2) स्थायी सम्पत्ति की जमानत के विरुद्ध बन्धक के माध्यम से प्रभार निर्मित किया जाता है। बन्धक विभिन्न प्रकार का होता है। उदाहरणार्थ —सादा बन्धक, शर्तसहित विक्रय द्वारा बन्धक, भोग बन्धक, अंग्रेजी बन्धक, हक विलेखों के निक्षेप द्वारा बन्धक।

प्रश्न
(Questions)

1. गिरवी, प्राधीयन तथा लियन में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

Distinguish between Pledge, Hypothecation and Lien.

2. निषेधात्मक लियन से क्या आशय है ?

What is meant by Negative Line ? *(C.A.I I.B. Part II)*

3. बैंक का लियन क्या है ? उन परिस्थितियों का वर्णन कीजिये जिनमें लियन का प्रयोग किया जा सकता है।

What is Banker's Lien ? Describe the circumstances under which the lien can be exercised. *(Banglore B. Com.)*

4. प्रत्येक का उदाहरण देते हुए बन्धक, गिरवी तथा लियन में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

Distinguish between a mortgage, a pledge and a lien giving examples of each.

5. गिरवी एवं प्राधीयन में मुख्यतः क्या अन्तर है ?

What is the main difference between Pledge and Hypothecation ? *(C.A.I.I.B. May, 1982)*

6. साम्यिक बन्धक से क्या अभिप्राय है। यह विधिक बन्धक से किस प्रकार भिन्न है ?

What is meant by equitable mortgage ? How is it differ from legal mortgage.

7. साम्यिक बन्धक पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

Write a short note on Equitable Mortgage.

(C.A.I.I.B. May, 1982; 1980; 1977)

□□□

Project Corporation Limited has 3 directors. The quorum at the Board Meeting is 2 directors. The Articles of the Company also provide that no directors shall vote in respect of any contract or matter in which he is interested.

The Company enjoys Cash Credit limit of Rs. 10 lacs which is secured by hypothecation of stocks and also by personal guarantee of 2 directors.

Company approaches the Bank for additional facility of Rs. 10 lacs to fulfil some contracts. On reviewing the position. Bank feels that it will be necessary to insist on additional security by way of equitable mortgage of the property of the Company valued at Rs. 20 lacs.

Can the Company pass a Board Resoulution authorising creation of equitable mortgage of the property ? If not, what procedure should be followed ?

हल—उपरोक्त स्थिति में, कम्पनी को प्रदत्त ऋण में दो संचालकों की व्यक्तिगत जमानत एवं स्टाक की प्रतिभूति प्राप्त की गयी है । कम्पनी द्वारा अतिरिक्त ऋण सीमा की माँग की जाती है जिसके लिये बैंक कम्पनी की 20 लाख की स्थायी सम्पत्ति पर साम्यिक बन्धक प्राप्त करना चाहता है। इस स्थिति में, कम्पनी के संचालक प्रस्ताव पारित नहीं कर सकते हैं चूंकि कम्पनी की संचालक सभा में केवल 3 संचालक है तथा संचालक सभा में कोई भी प्रस्ताव 2 संचालकों की सहमति से पारित किया जा सकता है । बैंक के साथ ऋण अनुबन्ध में 2 संचालकों की व्यक्तिगत जमानत है । अतः वे प्रस्ताव में वोट नहीं दे सकते हैं।

इस स्थिति में, कम्पनी को पार्षद अन्तर्नियम में परिवर्तन करने हेतु अंशधारियों की साधारण सभा बुलानी चाहिए तथा कम्पनी के उक्त प्रावधान में, अनुबन्ध में हित रखने वाले संचालक वोट नहीं देंगे, परिवर्तन करना चाहिए अथवा संचालक मण्डल में संचालकों की संख्या में वृद्धि करनी चाहिये ।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य
(Important Points to be Remembered)

(1) बैंक द्वारा ऋण की प्रतिभूति पर प्रभार निर्मित करने की विभिन्न विधियाँ हैं । उदाहरणार्थ गिरवी, लियन, प्राधीयन अथवा दृष्टि बन्धक, अभिहस्तांकन, बन्धक आदि ।

(2) स्थायी सम्पत्ति की जमानत के विरुद्ध बन्धक के माध्यम से प्रभार निर्मित किया जाता है । बन्धक विभिन्न प्रकार का होता है । उदाहरणार्थ —सादा बन्धक, शर्तसहित विक्रय द्वारा बन्धक, भोग बन्धक, अंग्रेजी बन्धक, हक विलेखों के निक्षेप द्वारा बन्धक ।

प्रश्न
(Questions)

1. गिरवी, आधीयन तथा लियन में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

Distinguish between Pledge, Hypothecation and Lien.

2. निषेधात्मक लियन से क्या आशय है ?

What is meant by Negative Line ? *(C.A.I.I.B Part II)*

3. बैंक का लियन क्या है ? उन परिस्थितियों का वर्णन कीजिये जिनमें लियन का प्रयोग किया जा सकता है।

What is Banker's Lien ? Describe the circumstances under which the lien can be exercised. *(Banglore B. Com.)*

4. प्रत्येक का उदाहरण देते हुए बन्धक, गिरवी तथा लियन में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

Distinguish between a mortgage, a pledge and a lien giving examples of each.

5. गिरवी एवं आधीयन में मुख्यतः क्या अन्तर है ?

What is the main difference between Pledge and Hypothecation ? *(C.A.I.I.B. May, 1982)*

6. साम्यिक बन्धक से क्या अभिप्राय है। यह विधिक बन्धक से किस प्रकार भिन्न है ?

What is meant by equitable mortgage ? How is it differ from legal mortgage..

7. साम्यिक बन्धक पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

Write a short note on Equitable Mortgage.

(C.A.I.I.B. May, 1982; 1980; 1977)

□□□

19 प्रत्याभूतियाँ (GUARANTEES)

बैंक ऋण प्रदान करते समय ऋण की सुरक्षा के लिये विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियाँ (Securities) प्राप्त करते हैं। प्रत्याभूति (Guarantee) के अन्तर्गत बैंक तृतीय पक्षकार से ऋण की जमानत प्राप्त करते हैं। प्रत्याभूति ऋण को सुरक्षा प्रदान करती है।

प्रत्याभूति अनुबन्ध का आशय
(Meaning of Contract of Guarantee)

भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 126 के अनुसार[1], प्रत्याभूति अनुबन्ध से आशय ऐसे अनुबन्ध से है जिसमें वचनदाता किसी तीसरे व्यक्ति की त्रुटि की दशा में उसके वचन का निष्पादन करने अथवा उसके दायित्वों को पूरा करने का वचन देता है। इसमें जो व्यक्ति प्रत्याभूति पूरा करने का वचन देता है उसे प्रतिभू (Guarantor) अथवा जमानतदार (Surety) तथा जिस व्यक्ति के लिये वचन दिया जाता है उसे ऋणी (Debtor) कहा जाता है। प्रतिभू का दायित्व पूर्ण समझा जाता है तथा ऋणी एवं ऋणदाता के बीच उत्पन्न विवाद से प्रतिभू के दायित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इस निर्णय की पुष्टि **मैसर्स हर प्रसाद एण्ड कम्पनी वनाम सुदर्शन स्टील रोलिंग मिल व अन्य नामक विवाद**[2] में की गई है। इस विवाद में पंजाब नेशनल बैंक द्वारा मैसर्स हर प्रसाद एण्ड क० के हित में मैसर्स सुदर्शन स्टील रोलिंग मिल की प्रार्थना पर बैंक गारंटी जारी की गयी। सुदर्शन स्टील कम्पनी ने हर प्रसाद एण्ड कम्पनी के विरुद्ध गारन्टी माँगने के लिये स्थायी व्यादेश (Injunction) की माँग की। न्यायालय ने निर्णय दिया कि हर प्रसाद को न्यायालय की पूर्वानुमति से गारन्टी माँगने का अधिकार है। परन्तु हर प्रसाद द्वारा दिल्ली हाई कोर्ट में अपील करने पर न्यायालय ने निर्णय दिया कि गारन्टी में पंचानिर्णय की शर्त (Arbitration Clause) होने पर वादी को गारन्टी की माँग करने से नहीं रोका जा सकता है। गारन्टी से सम्बन्धित पक्षकारों के बीच विवाद उत्पन्न होने पर, बैंक गारन्टी में अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है और बैंक को वादी के विरुद्ध उत्तरदायी ठहराया गया। प्रत्याभूति का अनुबन्ध **लिखित** अथवा **मौखिक** हो सकता

1. A contract of guarantee is a contract to perform the promise or discharge the liability of a third person in case of his default.

—Sec. 126, India Contract Act

2. M/s Har Prasad and Co. Ltd. New Delhi Vs. M/s Sudarsan Steel Rolling Mills and others. (A. I. R. 1903, Delhi 128)

है। इसके अतिरिक्त प्रतिभू का दायित्व ऋणी के सह-विस्तृत (Co-extensive) होता है अर्थात् जिस सीमा तक ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान कर दिया जाता है उस सीमा तक प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। प्रतिभू का दायित्व उसी स्थिति में उत्पन्न होता है जबकि मूल ऋणी ऋण का भुगतान करने में असमर्थ समझा जाता है। परन्तु ऋणदाता को यह अधिकार है कि वह ऋणी पर वाद प्रस्तुत किये बिना प्रतिभू से ऋण की वसूली कर सकता है। इस स्थिति में प्रतिभू को ऋण-दाता के अधिकारों का प्रत्यास्थापन (Subrogation) हो जाता है। प्रत्याभूति अनुबन्ध में ऋणदाता के इस अधिकार को प्रतिबन्धित किया जा सकता है। विपरीत अनुबन्ध के अभाव में ऋणदाता ऋणी की सम्पत्ति से रुपया वसूल किये बिना प्रतिभू को उत्तरदायी बना सकता है और उसकी सम्पत्ति से रुपया वसूल कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि बुद्धसिंह बनाम मुकुन्द मुरली नामक विवाद[1] में की गई है।

प्रत्याभूति अनुबन्ध के योग्य पक्षकार
(Parties Eligible for Contract of Guarantee)

भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 11 के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति जो वयस्क आयु का है, स्वस्थ मस्तिष्क का है एवं किसी विधि द्वारा संविदा करने से स्पष्टतः नहीं रोका गया है, अनुबन्ध करने के सक्षम है। प्रत्याभूति का अनुबन्ध प्रत्येक वह व्यक्ति कर सकता है जो अनुबन्ध करने से सक्षम है। अतः अवयस्क एवं पागल व्यक्ति प्रत्याभूति का अनुबन्ध नहीं कर सकता है। विवाहित स्त्री (Married Woman) की प्रत्याभूति प्राप्त करते समय बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। विवाहित स्त्री को निःसन्देह अनुबन्ध करने के सक्षम समझा गया है और उसकी स्त्री सम्पत्ति (Stridhan) को पृथक् समझा गया है। विवाहित स्त्री किसी व्यक्ति की प्रत्याभूति दे सकती है। परन्तु बैंक को प्रत्याभूति प्राप्त करते समय विशेष सावधानी रखनी चाहिये कि विवाहित स्त्री ने अनुचित दबाव में प्रत्याभूति नहीं दी है और उसने प्रत्याभूति अनुबन्ध की समस्त जानकारी प्राप्त कर ली है। इसी प्रकार, संयुक्त पूँजी कम्पनी (Joint Stock Company) की स्थिति में, कम्पनी उसी दशा में प्रत्याभूति दे सकती है जबकि कम्पनी को पार्षद सीमा नियम में स्पष्टतः यह अधिकार प्रदान किया गया है और कम्पनी रजिस्टर्ड है। बैंक द्वारा प्रत्याभूति प्राप्त करते समय विशेष सावधानी रखनी चाहिये कि प्रत्याभूति कम्पनी की ओर से (On Behalf of) दी जानी चाहिये। साझेदारी फर्म (Partnership Firm) की स्थिति में कोई भी साझेदार केवल फर्म की ओर से उसी दशा में प्रत्याभूति दे सकता है जबकि फर्म इस प्रकृति का व्यवसाय करती है अथवा अन्य साझेदारों ने उसे स्पष्टतः अधिकृत किया है। इस सम्बन्ध में बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिये कि प्रत्याभूति फर्म की ओर से प्रदान की गई है अन्यथा वह साझेदार प्रत्याभूति के लिये व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी होता है।

1. Budh Singh Vs. Mukund Murali.

प्रत्याभूति अनुबन्ध का प्रतिफल
(Consideration of Contract of Guarantee)

भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 127 के अनुसार, प्रत्याभूति अनुबन्ध का प्रतिफल मूल ऋणी के लाभार्थ किया गया कोई भी कार्य अथवा वचन होता है। यह कार्य अथवा वचन प्रतिभू के लिये प्रत्याभूति दिये जाने का पर्याप्त प्रतिफल समझा जाता हैं। अतः प्रत्याभूति अनुबन्ध में प्रतिभू के लिये प्रत्यक्षतः प्रतिफल होना आवश्यक नहीं समझा जाता है।

प्रतिभू के दायित्व
(Liabilities of Guarantor)

विपरीत अनुबन्ध के अभाव में, **प्रतिभू का दायित्व मूल ऋणी के सह-विस्तृत** होता है। ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान न करने पर अथवा ऋणी के दिवालिया होने पर प्रतिभू का दायित्व उत्पन्न हो जाता है। परन्तु ऋणदाता ऋण की वसूली के लिये ऋणी पर वाद प्रस्तुत किये बिना प्रतिभू पर वाद प्रस्तुत कर सकता है। यदि प्रतिभूति आंशिक ऋण के लिये प्रदान की गई है तव प्रतिभू आनुपातिक राशि के लिये उत्तरदायी समझा जायेगा। ऋणी द्वारा ऋण राशि का जिस सीमा तक भुगतान कर दिया जाता है उस सीमा तक प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। यदि ऋणदाता प्रतिभूतियों को नष्ट करता है अथवा नष्ट होने देता है तव प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। इस सम्वन्ध में यह तथ्य **महत्वपूर्ण** है कि प्रतिभू का दायित्व उसी स्थिति में उत्पन्न होता है जबकि ऋणदाता द्वारा अपने वचन का निष्पादन कर दिया गया है। प्रतिभू को **अनुग्रहित देनदार(Favoured Debtor)** समझा जाता है।

प्रतिभू के दायित्वों का समापन **निम्नलिखित परिस्थितियों** में समझा जाता है—

(i) प्रतिभू की मृत्यु अथवा दिवालिया होने पर,
(ii) ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान करने पर,
(iii) ऋणी एवं ऋणदाता के वीच समझोता होने पर,
(iv) ऋणदाता द्वारा मुक्त करने पर,
(v) ऋणदाता द्वारा प्रतिभूतियाँ नष्ट करने अथवा नष्ट होने देने पर।

अतः उपरोक्त परिस्थितियों में प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है।

क्षतिपूर्ति का अनुबन्ध
(Contract of Indemnity)

भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 124 के अनुसार, क्षतिपूर्ति अनुबन्ध से आशय उस अनुवन्ध अथवा संविदा से होता है जिसमें एक पक्षकार दूसरे पक्षकार को स्वयं वचनदाता के आचरण से अथवा किसी अन्य व्यक्ति के आचरण से होने

वाली क्षति को पूरा करने का वचन देता है। यह अनुबन्ध स्पष्ट अथवा गर्भित हो सकता है।

प्रत्याभूति एवं क्षतिपूर्ति के अनुबन्ध में अन्तर ✓
(Difference between Contract of Guarantee and Contract of Indemnity)

प्रत्याभूति एवं क्षतिपूर्ति के अनुबन्ध में निम्नलिखित अन्तर है—

(1) अनुबन्धों की संख्या (Number of Contracts)—प्रत्याभूति अनुबन्ध में तीन अनुबन्ध होते हैं। प्रथम, देनदार एवं लेनदार के बीच। द्वितीय, लेनदार एवं प्रतिभू के बीच तथा तृतीय देनदार एवं प्रतिभू के बीच। इसके विपरीत, क्षतिपूर्ति अनुबन्ध में केवल एक अनुबन्ध होता है। यह अनुबन्ध क्षतिपूर्ति करने वाले तथा क्षतिपूर्ति कराने वाले व्यक्ति के बीच होता है।

(2) उत्तरदायित्व (Liabilities)—प्रत्याभूति अनुबन्ध में प्रतिभू का दायित्व गौण (Secondary) माना जाता है। यह दायित्व मूल ऋणी द्वारा वचन का निष्पादन न करने की स्थिति में उत्पन्न होता है। इसके विपरीत, क्षतिपूर्ति अनुबन्ध में क्षतिपूर्ति करने वाले (Indemnifier) व्यक्ति का दायित्व प्रमुख होता है। वह स्वयं के आचरण से अथवा अन्य व्यक्ति के आचरण से उत्पन्न क्षति की पूर्ति करने के लिये उत्तरदायी होता है।

(3) अधिकार (Rights)—प्रत्याभूति अनुबन्ध में प्रतिभू ऋणदाता को ऋण का भुगतान करके उसके अधिकारों का प्रस्थापन (Subrogation) प्राप्त कर लेता है अर्थात् प्रतिभू को ऋणी से ऋण वसूल करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। इसके विपरीत, क्षतिपूर्ति अनुबन्ध में क्षतिपूर्ति करने वाले व्यक्ति को यह अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

(4) हित (Interest)—प्रत्याभूति अनुबन्ध में प्रतिभू का हित सम्मिलित नहीं होता है। इसके विपरीत, क्षतिपूर्ति अनुबन्ध में क्षतिपूर्ति करने वाले व्यक्ति का हित सम्मिलित होता है।

(5) उद्देश्य (Object)—प्रत्याभूति अनुबन्ध में अनुबन्ध का मुख्य उद्देश्य ऋण के भुगतान का दायित्व वहन करना होता है। इसके विपरीत, क्षतिपूर्ति अनुबन्ध का उद्देश्य भावी एवं अनिश्चित घटनाओं से बचना होता है।

अतः प्रत्याभूति एवं क्षतिपूर्ति अनुबन्ध में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है।

प्रत्याभूति अनुबन्ध का क्षेत्र
(Scope of Contract of Guarantee)

प्रत्याभूति अनुबन्ध का क्षेत्र निर्धारित करते समय यह तथ्य महत्वपूर्ण होता है कि प्रत्याभूति विशिष्ट (Specific) है अथवा चलत (Continuous)। विशिष्ट प्रत्याभूति के अन्तर्गत प्रतिभू एक विशिष्ट लेन-देन के लिये ही प्रत्याभूति प्रदान करता है। इसके विपरीत, चलत प्रत्याभूति के अन्तर्गत प्रतिभू का दायित्व विभिन्न कार्यों

अथवा वचनों के लिये चालू रहता है। वह उस अवधि में हुये समस्त लेन-देनों के लिये उत्तरदायी होता है जिस अवधि में प्रत्याभूति चालू रहती है। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 130 में प्रतिभू को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वह लेनदार को सूचना देकर भविष्य में हुये लेन-देनों के प्रति अपनी प्रत्याभूति समाप्त कर सकता है। परन्तु प्रतिभू इससे पूर्व के हुये लेन-देनों के प्रति पूर्णतः उत्तरदायी होता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि फर्म के संविधान (Constitution) अर्थात् साझेदारी विलेख में कोई परिवर्तन होने की स्थिति में फर्म द्वारा अथवा फर्म के लिये दी गयी चलत प्रत्याभूति भविष्य के लेन-देनों के लिये समाप्त समझी जाती है। प्रतिभू की मृत्यु पर चलत प्रत्याभूति समाप्त हो जाती है।

प्रत्याभूति अनुबन्ध में छिपाव अथवा मिथ्यावर्णन का प्रभाव (Effects of Concealment or Misrepresentation on Contract of Guarantee)

भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 142 के अनुसार, यदि प्रतिभू से लेनदार द्वारा प्रत्याभूति अनुबन्ध का कोई महत्वपूर्ण तथ्य छिपाया गया है अथवा प्रतिभू से मिथ्यावर्णन के आधार पर प्रत्याभूति प्राप्त की गई है तब प्रत्याभूति का अनुबन्ध व्यर्थ समझा जायेगा।[1] भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 143 के अनुसार, यदि लेनदार द्वारा कोई प्रत्याभूति महत्वपूर्ण विषय पर मौन रहकर प्राप्त की गई है तब वह अनुबन्ध व्यर्थ समझा जायेगा।[2] इन परिस्थितियों में प्रतिभू को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। इसमें प्रतिभू की स्वतन्त्र सहमति नहीं समझी जायेगी।

अतः लेनदार को ऋण प्रदान करते समय प्रतिभू को समस्त महत्वपूर्ण तथ्य बतलाने चाहिये। बैंक ऋण प्रदान करते समय ऋणी (Debtor) तथा प्रतिभू (Guarantor) को बैंक में उपस्थित होने के लिये बाध्य करता है और प्रतिभू को समस्त आवश्यक सूचनाओं से अवगत करवाता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रतिभू से समस्त प्रपत्रों पर उन्हें पूर्ण करने के पश्चात् हस्ताक्षर करने चाहियें और यथासम्भव उन प्रपत्रों को प्रतिभू द्वारा ही भरना चाहिये।

प्रतिभू के अधिकार एवं दायित्व (Rights and Liabilities of Guarantor)

भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 128 के अनुसार, विपरीत अनुबन्ध के अभाव में प्रतिभू का दायित्व मूल ऋणी के दायित्व के साथ सह-विस्तृत होता है।

---

1. Any guarantee which has been obtained by means of misrepresentation made by the creditor or with his knowledge and assent, concerning a material part of the transaction, is invalid." —Indian Contract Act, Sec. 142

2. "Any guarantee which the creditor has obtained by means of keeping silence to material is invalid." —Indian Contract Act, Sec. 143

प्रतिभू ऋण की समस्त राशि के लिये अथवा आंशिक राशि के लिये प्रत्याभूति प्रदान कर सकता है। इसी प्रकार एक ही ऋण के लिये अनेक प्रतिभू प्रत्याभूति प्रदान कर सकते हैं। इस स्थिति मे, विपरीत अनुबन्ध के अभाव मे, प्रत्येक प्रतिभू समान (Equal) राशि के लिये उस सीमा तक उत्तरदायी होता है जिस सीमा तक ऋण का भुगतान नहीं किया गया है अथवा जिस सीमा तक उन्होने प्रत्याभूति प्रदान की है (जो दोनों में कम हो)। निम्नलिखित परिस्थितियो मे प्रतिभू अपने दायित्व (Liabilities) से मुक्त समझा जाता है—

(1) भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 134 के अनुसार, यदि लेनदार द्वारा मूल ऋणी को मुक्त कर दिया जाता है अथवा वह कोई ऐसा कार्य करता है जिसका विधिक परिणाम देनदार को मुक्त कर देता है तब प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है परन्तु सह-प्रतिभू (Co-surety) की स्थिति में लेनदार द्वारा किसी एक प्रतिभू को मुक्त करने की स्थिति मे अन्य प्रतिभू लेनदार व मुक्त किये गये प्रतिभू के प्रति अपने दायित्व से मुक्त नहीं समझे जाते हैं।

(2) भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 135 के अनुसार, यदि लेनदार मूल ऋणी के साथ कोई समझौता करता है अथवा उसे अतिरिक्त समय प्रदान करने या वाद प्रस्तुत न करने का वचन देता है और ऐसा कार्य प्रतिभू की सहमति के अभाव में किया जाता है तब प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। परन्तु इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि लेनदार द्वारा मूल ऋणी को अतिरिक्त समय प्रदान करने का अनुबन्ध किसी तृतीय पक्षकार से किया गया है तब प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त नहीं समझा जाता है।

(3) यदि लेनदार कोई ऐसा कार्य करता है जिससे प्रतिभू के अधिकार प्रभावित होते हैं अथवा मूल ऋणी के विरुद्ध प्रतिभू के उपचार में कोई कमी आती है तब प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है।

(4) भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 133 के अनुसार, यदि प्रतिभू की सहमति के अभाव में मूल ऋणी एवं लेनदार के बीच अनुबन्ध की शर्तों में कोई परिवर्तन किया जाता है तब प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया नामक विवाद[1] में की गयी है।

(5) यदि लेनदार की लापरवाही से ऋण को प्रतिभूति (Securities) में कोई क्षति होती है तब प्रतिभू क्षति की सीमा तक मुक्त हो जाता है। इस निर्णय की पुष्टि स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया नामक विवाद[2] में की गई। परन्तु यदि ऋणी की सम्पत्ति किसी विधिक कार्यवाही के अन्तर्गत सरकार द्वारा प्राप्त की गई है तब प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त नहीं समझा जाता है। इस निर्णय की पुष्टि बैंक ऑफ

1. State Bank of India Vs. Machine Well Industries & others (1983)
2. State Bank of Inbia Vs. M/s Quality Bread Factory.

इण्डिया बनाम अहमदाबाद जुपीटर स्पिनिंग कम्पनी नामक विवाद[1] में की गई है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि प्रत्याभूति अनुबन्ध में इस आशय के विपरीत कोई शर्त लगाई गई है कि प्रतिभूति लापरवाही से नष्ट होने की स्थिति में प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त नहीं होगा तब यह शर्त व्यर्थ समझी जायेगी और प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जायेगा। अतः लेनदार द्वारा प्रतिभूति को लापरवाही से नष्ट करने पर प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है।

लेनदार द्वारा किसी अन्य ऋण की प्रतिभूतियां मुक्त करने की स्थिति में प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त नहीं समझा जायेगा। इस निर्णय की पुष्टि बैंक ऑफ बड़ौदा बनाम कृष्णा व अन्य नामक विवाद[2] में की गई है। इस विवाद में स्पष्ट किया गया है कि प्रतिभू का दायित्व उसी स्थिति में समाप्त समझा जाता है जबकि उसी ऋण की प्रतिभूतियाँ (Securities of Same Debt) मुक्त अथवा नष्ट होती हैं जिसके लिये अनुबन्ध किया गया है। लेनदार द्वारा किसी अन्य ऋण की प्रतिभूतियाँ मुक्त करने पर प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त नहीं समझा जाता है। इस विवाद में एकल व्यापारी फर्म ने बैंक ऑफ बड़ौदा से नकद साख की ऋण सुविधा प्राप्त की हुई थी। फर्म के स्वामी ने अपनी व्यक्तिगत जमा रसीद पर ऋण प्राप्त करके बैंक ऋण का भुगतान कर दिया और बैंक द्वारा गिरवी रखा गया माल मुक्त कर दिया गया। एक वर्ष बाद फर्म के स्वामी द्वारा बैंक के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया गया कि उसका फर्म के ऋण में प्रतिभू के रूप में दायित्व समाप्त हो गया है चूंकि बैंक ने ऋण की प्रतिभूति स्वरूप जमा माल को छोड़ दिया है तथा वह सावधि जमा राशि का वह रुपया प्राप्त करने का अधिकारी है जो ऋण के समायोजन के लिये बैंक द्वारा वसूल किया गया है। राजस्थान हाई कोर्ट ने निर्णय दिया कि जमा रसीद के विरुद्ध ऋण एवं फर्म का ऋण पृथक-पृथक ऋण खाते हैं। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 141 केवल एक ऋण पर लागू होती है। यदि दो या दो से अधिक ऋण दो पृथक-पृथक प्रतिभूतियों की जमानत पर प्रदान किये गये हैं तब ऋण का प्रतिभू लेनदार द्वारा अन्य ऋण की प्रभूतियाँ मुक्त करने पर अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है।

लेनदार द्वारा प्रतिभूतियों की राशि वसूल न करने की स्थिति में प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है। इस निर्णय की पुष्टि कर्नाटक बैंक लिमिटेड नामक विवाद[3] में की गयी है। प्रस्तुत वाद में बैंक ने ऋणी को तृतीय पक्षकार की जमानत एवं ट्रक की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान किया। ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान न करने की स्थिति में बैंक ने ऋणी एवं प्रतिभू पर वाद प्रस्तुत किया। प्रतिभू द्वारा

1. Bank of Baroda Vs. Ahmedabad Jupiter Spinning Weaving & Mfg. Co Ltd.

2. Bank of India Vs. Krishna Ballabh & others. (1975)

3. Karnataka Bank Ltd. Vs. Gajanan Shankararao Kulkarni and others. (A. I. R. 1977, Karnataka, 14)

प्रतिवाद में इस तथ्य पर बल दिया गया कि बैंक ने ट्रक की प्रतिभूति को बेचकर रुपया वसूल नहीं किया है। अतः प्रतिभू अपने उत्तरदायित्व से मुक्त समझा जाना चाहिये। बैंक द्वारा कर्नाटक हाई कोर्ट में अपील करने पर न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया कि इस विवाद में लेनदार को प्रतिभूति नष्ट करने अथवा नष्ट होने देने के लिये लापरवाही का दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। लेनदार द्वारा अपने हित में प्रतिभूति की राशि वसूल न करने पर प्रतिभू को उसके उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं समझा जा सकता है। अतः प्रतिभू को ऋण के प्रति उत्तरदायी ठहराया गया।

इसी प्रकार लेनदार के हित में ऋणी की सम्पत्ति पर डिग्री (Degree) प्राप्त होने की स्थिति में प्रतिभू उस समय तक अपने उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं होता है जब तक कि डिग्री निष्पादित नहीं हो जाती है।

प्रतिभू के अधिकार (Rights of Guarantor)—प्रत्याभूति के अनुबन्ध में प्रतिभू को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं—

(1) प्रतिभू लेनदार से ऋण के सम्बन्ध में अपनी प्रत्याभूति की सीमा तक समस्त सूचनायें मांगने का अधिकारी है। प्रतिभू ऋणी का खाता देखने के लिये अधिकृत है।

(2) प्रतिभू लेनदार को सूचना देकर अपनी प्रत्याभूति समाप्त अथवा प्रतिसंहरण कर सकता है। परन्तु प्रतिभू उन समस्त लेनदारों के प्रति उत्तरदायी रहता है जो लेनदेन सूचना देने से पूर्व किये जा चुके हैं। यदि किसी लेनदेन में सम्भाव्य दायित्व (Contingent Liability) उत्पन्न होता है अर्थात् बैंक द्वारा विनिमय-पत्र भुनाया जाता है अथवा बैंक (लेनदार) ऋणी के हित में साख पत्र (Letter of Credit) खोलता है तब प्रतिभू इनसे उत्पन्न सम्भाव्य दायित्व के लिये उत्तरदायी होता है जिनका दायित्व सूचना प्राप्ति के पश्चात् निर्धारित हो सकेगा। अतः प्रतिभू द्वारा सूचना देने पर लेनदार को उस तिथि से कोई लेनदेन नहीं करना चाहिये अन्यथा प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जायेगा। प्रतिभू द्वारा प्रत्याभूति प्रतिसंहरण का नोटिस एक निश्चित अवधि के लिये दिया जाता है जिसमें निश्चित तिथि के पश्चात् प्रत्याभूति समाप्त समझी जाती है। यह नोटिस तुरन्त लागू होने के लिये भी दिया जा सकता है।

(3) प्रतिभू की मृत्यु अथवा पागल होने के पश्चात् प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त समझा जाता है और इसकी सूचना लेनदार को मिलने की तिथि से प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है।

(4) भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 140 के अनुसार, प्रतिभू द्वारा देय तिथि पर लेनदार को ऋण की राशि भुगतान करने पर अथवा देनदार को उस वचन का निष्पादन करने पर जिसके लिये वह उत्तरदायी है, प्रतिभू को लेनदार के वे समस्त अधिकार प्राप्त हो जाते हैं जो लेनदार को मूल देनदार के प्रति प्राप्त होते हैं। अतः प्रतिभू को लेनदार के अधिकारों का प्रस्थापन (

और प्रतिभू को देनदार के प्रति वे समस्त उपचार प्राप्त हो जाते हैं जो कि लेनदार को प्राप्त होते हैं।[1]

(5) प्रतिभू को लेनदार से वे समस्त प्रतिभूतियाँ प्राप्त करने का अधिकार होता है जो प्रत्याभूति अनुबन्ध के समय लेनदार अपने देनदार से प्राप्त करता है। इन प्रतिभूतियों में वे प्रतिभूतियाँ भी सम्मिलित की जाती हैं जिनका ज्ञान प्रतिभू को नहीं होता है कि देनदार द्वारा अमुक प्रतिभूतियाँ लेनदार को दी गई हैं। **भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 141** के अनुसार, यदि लेनदार इन प्रतिभूतियों को नष्ट करता है अथवा प्रतिभू की सहमति के अभाव में मुक्त करता है तब प्रतिभू उस सीमा तक अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाता है जिस सीमा तक प्रतिभूतियाँ नष्ट अथवा मुक्त की गई हैं।

(6) **भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 145** के अनुसार, प्रत्याभूति के अनुबन्ध में प्रतिभू को देनदार से वह समस्त राशि प्राप्त करने का अधिकार होता है जो कि उसने विधिवत् रूप में अपने अनुबन्ध में भुगतान की हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है प्रत्याभूति अनुबन्ध में देनदार का प्रतिभू को यह **गर्भित वचन** होता है कि वह प्रतिभू की उस राशि की क्षतिपूर्ति करेगा जो प्रतिभू ने प्रत्याभूति अनुबन्ध में विधिवत् भुगतान की है।

अतः स्पष्ट होता है कि प्रत्याभूति अनुबन्ध में प्रतिभू के अधिकार एवं दायित्व अत्यन्त विस्तृत हैं।

प्रत्याभूति अनुबन्ध में बैंकर के अधिकार एवं दायित्व
(Banker's Rights and Liabilities in Contract of Guarantee)

प्रत्याभूति अनुबन्ध में बैंकर की स्थिति लेनदार के समान होती है। इसमें **बैंक के निम्नलिखित कर्त्तव्य हैं—**

(1) बैंक को अनुबन्ध की शर्तों में परिवर्तन नहीं करना चाहिये। प्रत्येक परिवर्तन प्रतिभू की सहमति से ही किया जाना चाहिये।

(2) बैंक को मूल ऋणी को उसके दायित्व से मुक्त नहीं करना चाहिये अन्यथा प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि सह-प्रतिभू (Co-Surety) की स्थिति में एक प्रतिभू को उसके दायित्व से मुक्त करने पर अन्य प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है।

(3) बैंक को ऋणी से प्राप्त प्रतिभूतियों (Securities) की देखभाल में उचित सावधानी बरतनी चाहिये। प्रतिभूतियाँ नष्ट होने अथवा मुक्त करने की स्थिति में प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है।

(4) बैंक को मूल ऋणी को ऋण की अदायगी के लिये अतिरिक्त समय प्रदान नहीं करना चाहिये अथवा ऋणी के विरुद्ध वाद प्रस्तुत न करने का अनुबन्ध

1. Union of India Vs. Official Liquidator,

नहीं करना चाहिये। इस स्थिति में प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है।

अतः बैंक को प्रत्याभूति अनुबन्ध में विशेष सावधानी बरतनी चाहिये। इसमें बैंक को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं —

(1) बैंक मूल ऋणी के विरुद्ध वाद प्रस्तुत करने से पूर्व ही प्रतिभू के विरुद्ध ऋण की वसूली का वाद प्रस्तुत कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि बुद्ध सिंह बनाम मुकुन्द मुरली नामक विवाद[1] में की गई है। प्रस्तुत विवाद मे मुकुन्द मुरली ने ऋणी एवं प्रतिभू बुद्ध सिंह के विरुद्ध डिग्री प्राप्त कर ली। मूल ऋणी के विरुद्ध डिग्री निष्पादित करने से पूर्व प्रतिवादी (Respondent) ने प्रतिभू के विरुद्ध डिग्री निष्पादित करवायी। इसके विरुद्ध प्रतिभू द्वारा वाद प्रस्तुत किया गया कि लेनदार को सर्वप्रथम देनदार के विरुद्ध डिग्री निष्पादित करवानी चाहिये। इलाहाबाद हाई कोर्ट द्वारा निर्णय दिया गया कि प्रतिभू को लेनदार के विरुद्ध यह उपचार प्राप्त नहीं है कि लेनदार को उसके विरुद्ध ऋण की वसूली करने से पूर्व मूल ऋणी की सम्पत्ति से रुपया वसूल करना चाहिये।

(2) बैंक को प्रतिभू के खाते पर ग्रहणाधिकार (Lien) प्राप्त होता है और वह कालातीत दावे के लिये भी अपना अधिकार प्रयोग कर सकता है। बैंक अपने इस अधिकार का प्रयोग उसी स्थिति मे कर सकता है जबकि देनदार (ऋणी) द्वारा भुगतान मे त्रुटि की गई है।

(3) बैंक दिवालिया प्रतिभू की सम्पत्ति से अपने ऋण की वसूली का दावा प्रस्तुत कर सकता है। इस स्थिति में बैंक को ऋण खाता बन्द कर देना चाहिये और ऋणी का दायित्व निर्धारित करना चाहिये। इसके पश्चात् ऋण की अदायगी की माँग देनदार से करनी चाहिये। देनदार द्वारा भुगतान में त्रुटि करने पर प्रतिभू की सम्पत्ति से ऋण की वसूली की जा सकती है। अतः इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि प्रतिभू के विरुद्ध वाद प्रस्तुत करने से पूर्व मूल ऋणी से ऋण की अदायगी की माँग की जानी चाहिये और मूल ऋणी द्वारा ऋण के भुगतान मे त्रुटि (Default) की जानी चाहिये। इसके पश्चात् बैंक प्रतिभू अथवा देनदार के विरुद्ध वाद प्रस्तुत कर सकता है।

बैंक को गारन्टी प्राप्त करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ (Precautions) ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंक को उसी व्यक्ति से प्रत्याभूति प्राप्त करनी चाहिये जो ख्याति प्राप्त एवं साख योग्य (*Credit Worthy*) व्यक्ति हैं।

(2) बैंक को ऋणी एवं प्रतिभू की आर्थिक स्थिति का मूल्यांकन नियमित अवधि पर करना चाहिये।

(3) बैंक को किसी भी व्यक्ति पर प्रत्याभूति प्रदान करने के लिये दबाव नहीं डालना चाहिये।

1. Budh Singh Vs. Mukund Murali, (A. I. R. 1975 Allahabad 201)

(4) संयुक्त प्रतिभूति की स्थिति में समस्त प्रतिभू प्रदान करने वाले व्यक्तियों से गारन्टी प्राप्त करनी चाहिये तथा गारन्टी प्रपत्र सबके द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिये।

(5) बैंक को प्रतिभू से गारन्टी प्रपत्र बैंक अधिकारी की उपस्थिति में हस्ताक्षरित करवाना चाहिये।

(6) बैंक द्वारा प्रतिभू से कोई भी राशि प्राप्त करने पर उस राशि को ऋण खाते में क्रेडिट नहीं करना चाहिये जिससे ऋणी की सम्पत्ति पर वाद प्रस्तुत करते समय कुल ऋण का अनुमान लगाया जा सके। प्रतिभू से प्राप्त राशि पृथक खाते में जमा करनी चाहिये।

(7) प्रत्याभूति अनुबन्ध ऋण की मांग के पश्चात् 3 वर्ष के बाद कालातीत (Time Barred) हो जाता है। अतः बैंक को ऋण खाते के शेष का पुष्टिकरण-पत्र ऋणी एवं प्रतिभू से सामयिक अवधि पर प्राप्त करते रहना चाहिये।

(8) बैंक को ऋण प्रदान करते समय प्रतिभू की जमानत के अतिरिक्त ऋणी की व्यक्तिगत क्षमता को ध्यान में रखना चाहिये।

(9) प्रत्याभूति अनुबन्ध कुछ परिस्थितियों में समाप्त हो जाता है जिसमें बैंक को ऋण खाते का संचालन रोक देना चाहिये चूंकि इसके पश्चात् किये गये संव्यवहारों के लिये प्रतिभू उत्तरदायी नहीं होता है तथा पूर्व व्यवहारों के लिये प्रतिभू का दायित्व निर्धारित करने में सरलता रहती है। यदि ऋण खाता चालू रहता है तब उस पर क्लेटन विवाद के अनुसार ऋण का समायोजन समझा जाता है और प्रतिभू का दायित्व घटता जाता है। प्रत्याभूति अनुबन्ध **निम्नलिखित परिस्थितियों में समाप्त समझा जाता है—**

(i) ऋणी अथवा प्रतिभू की मृत्यु होने पर प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त समझा जाता है।

(ii) प्रतिभू के दिवालिया घोषित होने की तिथि के पश्चात् किये गये व्यवहारों के लिये प्रतिभू उत्तरदायी नहीं होता है।

(iii) विपरीत अनुबन्ध के अभाव में ऋणी अथवा लेनदार की संवैधानिक स्थिति में परिवर्तन होने पर प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त हो जाता है।

(iv) लेनदार द्वारा प्रतिभू को ऋण वसूली का नोटिस भेजने पर प्रतिभू उस तिथि के पश्चात् किये गये संव्यवहारों के लिये अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। इस स्थिति में ऋण स्थिर (Crystallised) हो जाता है।

(v) प्रतिभू द्वारा प्रत्याभूति के प्रतिसंहार्य का नोटिस भेजने पर प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त समझा जाता है।

SOLVED PROBLEMS

1. माडर्न एडवरटाइजर्स, साझेदारी संस्था में दो साझेदार श्री जय किशोर तथा श्री मोहन किशोर हैं जो दो भाई हैं तथा विज्ञापन एवं प्रचार के व्यवसाय में

लगे हुये हैं, को 50,000 रुपये का बेजमानती ओवरड्राफ्ट व्यवसाय के विस्तार के लिये प्रदान किया जाता है। यह ऋण सीमा जनवरी 1979 में स्वीकृत की गयी। ऋण फर्म में साझेदारों के पिता की व्यक्तिगत जमानत पर सुरक्षित है। 1 जून, 1980 को खाते में 30,000 रुपये का डेबिट शेष है। 2 जून 1980 को आप प्रतिभू से एक पत्र प्राप्त करते हैं जिसमें निम्नलिखित सूचनायें माँगी जाती हैं—

Q. 1. Modern Advertisers, a partnership firm, consisting of 2 partners, viz. Shri Jay Kishore and Shri Mohan Kishore, who are two brothers, engaged in the business of advertising and publicity, have been sanctioned a clean overdraft limit of Rs. 50,000 for expansion of their business. This limit sanctioned in January 1979. The limit is secured by a personal guarantee of the father of the patners in the firm. On 1st June 1980, the account shows a debit balance of Rs. 30,000. On 2nd June 1980, you receive a letter from the guarantor asking from you the following information—

(i) The outstanding balance in the account of the firm as on 1st June 1980.

(ii) Interest, if any, due on the account.

(iii) The credit balance in the personal Current Account of Shri Jay Kishore and Shri Mohan Kishore as on 1st June 1980.

(iv) Average debit balance in the account during the last 6 months.

He further, informs that he wants this information because he wants to revoke his guarantee after getting the information. Would you be justified in disclosing this information to the guarantor as requested by him? Give reasons for your answer. In case Guarantor gives notice of revokation of his guarantee after some times as indicated by him, what steps would you take to safe guard the interest of the bank?

(C. A. I. I. B. Part II, Nov., 1980)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक को प्रतिभू की प्रार्थना स्वीकार करनी चाहिए कि प्रतिभू को ऋण खाते एवं उस पर ब्याज के सम्बन्ध में सम्पूर्ण सूचनायें देनी चाहियें। प्रतिभू को प्रत्याभूति अनुबन्ध में ऋणी के ऋण खाते के सम्बन्ध में सम्पूर्ण सूचनायें प्राप्त करने का अधिकार होता है। परन्तु बैंक को ऋणी के व्यक्तिगत खाते की सूचना नहीं देनी चाहिए चूंकि बैंक का खातों की गोपनीयता बनाये रखने का प्रमुख दायित्व होता है। प्रतिभू द्वारा प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त करने की स्थिति

(4) संयुक्त प्रतिभूति की स्थिति में समस्त प्रतिभू प्रदान करने वाले व्यक्तियों से गारन्टी प्राप्त करनी चाहिये तथा गारन्टी प्रपत्र सबके द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिये।

(5) बैंक को प्रतिभू से गारन्टी प्रपत्र बैंक अधिकारी की उपस्थिति में हस्ताक्षरित करवाना चाहिये।

(6) बैंक द्वारा प्रतिभू से कोई भी राशि प्राप्त करने पर उस राशि को ऋण खाते में क्रेडिट नहीं करना चाहिये जिससे ऋणी की सम्पत्ति पर वाद प्रस्तुत करते समय कुल ऋण का अनुमान लगाया जा सके। प्रतिभू से प्राप्त राशि पृथक खाते में जमा करनी चाहिये।

(7) प्रत्याभूति अनुबन्ध ऋण की माँग के पश्चात् 3 वर्ष के बाद कालातीत (Time Barred) हो जाता है। अतः बैंक को ऋण खाते के शेष का पुष्टिकरण-पत्र ऋणी एवं प्रतिभू से सामयिक अवधि पर प्राप्त करते रहना चाहिये।

(8) बैंक को ऋण प्रदान करते समय प्रतिभू की जमानत के अतिरिक्त ऋणी की व्यक्तिगत क्षमता को ध्यान में रखना चाहिये।

(9) प्रत्याभूति अनुबन्ध कुछ परिस्थितियों में समाप्त हो जाता है जिसमें बैंक को ऋण खाते का संचालन रोक देना चाहिये चूंकि इसके पश्चात् किये गये संव्यवहारों के लिये प्रतिभू उत्तरदायी नहीं होता है तथा पूर्व व्यवहारों के लिये प्रतिभू का दायित्व निर्धारित करने में सरलता रहती है। यदि ऋण खाता चालू रहता है तब उस पर क्लेटन विवाद के अनुसार ऋण का समायोजन समझा जाता है और प्रतिभू का दायित्व घटता जाता है। प्रत्याभूति अनुबन्ध **निम्नलिखित परिस्थितियों में समाप्त समझा जाता है—**

(i) ऋणी अथवा प्रतिभू की मृत्यु होने पर प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त समझा जाता है।

(ii) प्रतिभू के दिवालिया घोषित होने की तिथि के पश्चात् किये गये व्यवहारों के लिये प्रतिभू उत्तरदायी नहीं होता है।

(iii) विपरीत अनुबन्ध के अभाव में ऋणी अथवा लेनदार की संवैधानिक स्थिति में परिवर्तन होने पर प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त हो जाता है।

(iv) लेनदार द्वारा प्रतिभू को ऋण वसूली का नोटिस भेजने पर प्रतिभू उस तिथि के पश्चात् किये गये संव्यवहारों के लिये अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। इस स्थिति में ऋण स्थिर (Crystallised) हो जाता है।

(v) प्रतिभू द्वारा प्रत्याभूति के प्रतिसंहार्य का नोटिस भेजने पर प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त समझा जाता है।

SOLVED PROBLEMS

1. माडर्न एडवरटाइजर्स, साझेदारी संस्था में दो साझेदार श्री जय किशोर तथा श्री मोहन किशोर हैं जो दो भाई हैं तथा विज्ञापन एवं प्रचार के व्यवसाय में

लगे हुये हैं, को 50,000 रुपये का बेजमानती ओवरड्राफ्ट व्यवसाय के विस्तार के लिये प्रदान किया जाता है। यह ऋण सीमा जनवरी 1979 में स्वीकृत की गयी। ऋण फर्म में साझेदारों के पिता की व्यक्तिगत जमानत पर सुरक्षित है। 1 जून, 1980 को खाते में 30,000 रुपये का डेबिट शेष है। 2 जून 1980 को आप प्रतिभू से एक पत्र प्राप्त करते हैं जिसमें निम्नलिखित सूचनायें मांगी जाती हैं—

Q. 1. Modern Advertisers, a partnership firm, consisting of 2 partners, viz. Shri Jay Kishore and Shri Mohan Kishore, who are two brothers, engaged in the business of advertising and publicity, have been sanctioned a clean overdraft limit of Rs. 50,000 for expansion of their business. This limit sanctioned in January 1979. The limit is secured by a personal guarantee of the father of the patners in the firm. On 1st June 1980, the account shows a debit balance of Rs. 30,000. On 2nd June 1980, you receive a letter from the guarantor asking from you the following information—

(i) The outstanding balance in the account of the firm as on 1st June 1980.

(ii) Interest, if any, due on the account.

(iii) The credit balance in the personal Current Account of Shri Jay Kishore and Shri Mohan Kishore as on 1st June 1980.

(iv) Average debit balance in the account during the last 6 months.

He further informs that he wants this information because he wants to revoke his guarantee after getting the information. Would you be justified in disclosing this information to the guarantor as requested by him? Give reasons for your answer. In case Guarantor gives notice of revokation of his guarantee after some times as indicated by him, what steps would you take to safe guard the interest of the bank?

(C. A. I. I. B. Part II, Nov., 1980)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक को प्रतिभू की प्रार्थना स्वीकार करनी चाहिए कि प्रतिभू को ऋण खाते एवं उस पर ब्याज के सम्बन्ध में सम्पूर्ण सूचनायें देनी चाहियें। प्रतिभू को प्रत्याभूति अनुबन्ध में ऋणी के ऋण खाते के सम्बन्ध में सम्पूर्ण सूचनायें प्राप्त करने का अधिकार होता है। परन्तु बैंक को ऋणी के व्यक्तिगत खाते की सूचना नहीं देनी चाहिए चूंकि बैंक का खातों की गोपनीयता बनाये रखने का प्रमुख दायित्व होता है। प्रतिभू द्वारा प्रत्याभूति अनुबन्ध समाप्त करने की स्थिति

में बैंक को ऋण खाते में कुल दायित्व का निर्धारण करना चाहिए तथा प्रतिभू को इससे सूचित करनी चाहिए जिससे प्रतिभू के दायित्व का निर्धारण किया जा सकता है। प्रत्याभूति समाप्ति की तिथि से ऋण खाते में लेनदेन पर रोक लगानी चाहिए।

2. आप एक बैंक के प्रबन्धक हैं जिसमें A 50,000 रुपये का ऋण B की प्रत्याभूति के विरुद्ध प्राप्त करता है। A देय तिथि पर रुपये का भुगतान करने में असमर्थ रहता है तथा उसके पास कोई सम्पत्ति नहीं है। आप B को बुलवाते हैं तथा उसे उसका दायित्व प्रत्याभूति अनुबन्ध में पूर्ण करने के लिये कहते हैं। B अपने दायित्व से इन्कार करता है कि उसने A की प्रत्याभूति पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं। वह प्रत्याभूति पर अपने हस्ताक्षर स्वीकार करता है परन्तु कहता है कि A ने यह हस्ताक्षर बीमे के प्रस्ताव पर कहकर प्राप्त किये थे। B के पास पर्याप्त साधन हैं परन्तु वह कम पढ़ा-लिखा है। इस ऋण की B से प्रतिभू के रूप में वसूली की क्या सम्भावना है? प्रत्याभूति प्रपत्र A द्वारा B के हस्ताक्षर करने के लिये लिया गया था।

You are the Manager of a Bank from which A had taken a loan of Rs. 50,000 against the guarantee of B. A fails in repaying the loan on due time and he has no assets. You have called upon B to meet his obligation under the guarantee. B denies his liability stating that he had not signed any guarantee for A. He owns his signature on the guarantee but says that A had obtained his signature on this form representing it to be an insurance proposal. B is a man of large means but of little education. Discuss your chance of recovery of this loan from B as guarantor. The guarantee form was taken by A to be signed by B. (*C. A. I. I. B. Part II, Jan., 1985*)

हल—उपरोक्त स्थिति में प्रतिभू को भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 142 व 143 में कोई विधिक संरक्षण प्राप्त नहीं हो सकता है चूंकि इसमें लेनदार द्वारा मिथ्या वर्णन अथवा छिपाव के लिये प्रतिभू को उसके दायित्व से मुक्त समझा गया है। इस स्थिति में मूल ऋणी द्वारा प्रतिभू से मिथ्या वर्णन किया गया है जिससे लेनदार एवं प्रतिभू के बीच का संविदा व्यर्थ नहीं माना जा सकता है। अतः प्रतिभू बैंक के प्रति उत्तरदायी हो सकता है। परन्तु इसमें बैंक लापरवाही का दोषी पाया गया है, चूंकि बैंक ने प्रतिभू से प्रपत्रों पर हस्ताक्षर अपनी उपस्थिति में प्राप्त नहीं किये हैं तथा मूल ऋणी को बैंक से बाहर प्रपत्र ले जाने की अनुमति प्रदान कर दी है। अतः उपरोक्त स्थिति में प्रतिभू बैंक के ऋण के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। परन्तु प्रतिभू एक ख्याति प्राप्त व्यक्ति है। अतः उस पर नैतिक दबाव डालकर रुपया वसूल करने का प्रयास करना चाहिये।

3. निम्नलिखित परिस्थिति में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situation—

(a) A bank issued a guarantee by which it agreed unequivocally and unconditionally to pay within 48 hours on demand in writing from the beneficiary of the guarantee, an amount upto and not exceeding Rs. 50,000 on behalf of a company, which had tendered and/or contracted or may tender or contract' thereinafter or supply materials, to the beneficiary. The guarantee was in lieu of permanent cash deposit of Rs. 50,000 which the company was required to make to the beneficiary. Later on, the High Court ordered the winding up of the company and directed the Official Liquidator to take charge of its affairs. In the meantime, the beneficiary called upon the Bank to pay the guarantee amount of Rs. 50,000. The Bank wrote to the Official Liquidator that the company in liquidation was liable to the Bank for payment of the amount demanded by the beneficiary. Thereupon, the Official Liquidator applied to the Court for an order restraining the beneficiary from realising the guarantee amount on the ground that since the company had been orderd to be wound up the beneficiary could not claim the amount of the guarantee from the Bank. Discuss the stand taken by the Official Liquidator.

(b) A Bank issued a guarantee on behalf of its constituent; as security it took possession of a fixed deposit receipt issued by it in his favour by way of lien. The constituent signed a printed form which contained a clause that the bank would be entitled to retain all moneys of the constituent so long any sums were due to the bank. The dealing officer of the bank made an endorsement on the reverse of the F. D. Receipt, "Subject to lien for bank guarantee." The fixed deposit was attached by a creditor of the constituent. The bank opposed the attachment on the ground that it had a lien on the fixed deposit for money due by the constituent under an overdraft account.

On these facts, discuss the following—

(i) Would the bank have a lien on the fixed deposit on account of the overdraft account ?

में वैंक को ऋण खाते में कुल दायित्व का निर्धारण करना चाहिए तथा प्रतिभू को इससे सूचित करनी चाहिए जिससे प्रतिभू के दायित्व का निर्धारण किया जा सकता है। प्रत्याभूति समाप्ति की तिथि से ऋण खाते में लेनदेन पर रोक लगानी चाहिए।

2. आप एक वैंक के प्रबन्धक हैं जिसमें A 50,000 रुपये का ऋण B की प्रत्याभूति के विरुद्ध प्राप्त करता है। A देय तिथि पर रुपये का भुगतान करने में असमर्थ रहता है तथा उसके पास कोई सम्पत्ति नहीं है। आप B को बुलवाते हैं तथा उसे उसका दायित्व प्रत्याभूति अनुबन्ध में पूर्ण करने के लिये कहते हैं। B अपने दायित्व से इन्कार करता है कि उसने A की प्रत्याभूति पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं। वह प्रत्याभूति पर अपने हस्ताक्षर स्वीकार करता है परन्तु कहता है कि A ने यह हस्ताक्षर वीमे के प्रस्ताव पर कहकर प्राप्त किये थे। B के पास पर्याप्त साधन हैं परन्तु वह कम पढ़ा-लिखा है। इस ऋण की B से प्रतिभू के रूप में वसूली की क्या सम्भावना है ? प्रत्याभूति प्रपत्र A द्वारा B के हस्ताक्षर करने के लिये लिया गया था।

You are the Manager of a Bank from which A had taken a loan of Rs. 50,000 against the guarantee of B. A fails in repaying the loan on due time and he has no assets. You have called upon B to meet his obligation under the guarantee. B denies his liability stating that he had not signed any guarantee for A. He owns his signature on the guarantee but says that A had obtained his signature on this form representing it to be an insurance proposal. B is a man of large means but of little education. Discuss your chance of recovery of this loan from B as guarantor. The guarantee form was taken by A to be signed by B. (*C. A. I. I. B. Part II, Jan., 1985*)

हल—उपरोक्त स्थिति में प्रतिभू को भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 142 व 143 में कोई विधिक संरक्षण प्राप्त नहीं हो सकता है चूंकि इसमें लेनदार द्वारा मिथ्या वर्णन अथवा छिपाव के लिये प्रतिभू को उसके दायित्व से मुक्त समझा गया है। इस स्थिति में मूल ऋणी द्वारा प्रतिभू से मिथ्या वर्णन किया गया है जिससे लेनदार एवं प्रतिभू के बीच का संविदा व्यर्थ नहीं माना जा सकता है। अतः प्रतिभू वैंक के प्रति उत्तरदायी हो सकता है। परन्तु इसमें वैंक लापरवाही का दोषी पाया गया है, चूंकि वैंक ने प्रतिभू से प्रपत्रों पर हस्ताक्षर अपनी उपस्थिति में प्राप्त नहीं किये हैं तथा मूल ऋणी को वैंक से बाहर प्रपत्र ले जाने की अनुमति प्रदान कर दी है। अतः उपरोक्त स्थिति में प्रतिभू वैंक के ऋण के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। परन्तु प्रतिभू एक ख्याति प्राप्त व्यक्ति है। अतः उस पर नैतिक दबाव डालकर रुपया वसूल करने का प्रयास करना चाहिये।

3. निम्नलिखित परिस्थिति में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situation—

(a) A bank issued a guarantee by which it agreed unequivocally and unconditionally to pay within 48 hours on demand in writing from the beneficiary of the guarantee, an amount upto and not exceeding Rs. 50,000 on behalf of a company, which had tendered and/or contracted or may tender or contract' thereinafter or supply materials, to the beneficiary. The guarantee was in lieu of permanent cash deposit of Rs. 50,000 which the company was required to make to the beneficiary. Later on, the High Court ordered the winding up of the company and directed the Official Liquidator to take charge of its affairs. In the meantime, the beneficiary called upon the Bank to pay the guarantee amount of Rs. 50,000. The Bank wrote to the Official Liquidator that the company in liquidation was liable to the Bank for payment of the amount demanded by the beneficiary. Thereupon, the Official Liquidator applied to the Court for an order restraining the beneficiary from realising the guarantee amount on the ground that since the company had been ordered to be wound up the beneficiary could not claim the amount of the guarantee from the Bank. Discuss the stand taken by the Official Liquidator.

(b) A Bank issued a guarantee on behalf of its constituent; as security it took possession of a fixed deposit receipt issued by it in his favour by way of lien. The constituent signed a printed form which contained a clause that the bank would be entitled to retain all moneys of the constituent so long any sums were due to the bank. The dealing officer of the bank made an endorsement on the reverse of the F. D. Receipt, "Subject to lien for bank guarantee." The fixed deposit was attached by a creditor of the constituent. The bank opposed the attachment on the ground that it had a lien on the fixed deposit for money due by the constituent under an overdraft account.

On these facts, discuss the following—

(i) Would the bank have a lien on the fixed deposit on account of the overdraft account ?

में बैंक को ऋण खाते में कुल दायित्व का निर्धारण करना चाहिए तथा प्रतिभू क इससे सूचित करनी चाहिए जिससे प्रतिभू के दायित्व का निर्धारण किया ज सकता है। प्रत्याभूति समाप्ति की तिथि से ऋण खाते में लेनदेन पर रोक लगानी चाहिए।

2. आप एक बैंक के प्रबन्धक हैं जिसमें A 50,000 रुपये का ऋण B की प्रत्याभूति के विरुद्ध प्राप्त करता है। A देय तिथि पर रुपये का भुगतान करने में असमर्थ रहता है तथा उसके पास कोई सम्पत्ति नहीं है। आप B को बुलवाते हैं तथा उसे उसका दायित्व प्रत्याभूति अनुबन्ध में पूर्ण करने के लिये कहते हैं। B अपने दायित्व से इन्कार करता है कि उसने A की प्रत्याभूति पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं। वह प्रत्याभूति पर अपने हस्ताक्षर स्वीकार करता है, परन्तु कहता है कि A ने यह हस्ताक्षर बीमे के प्रस्ताव पर कहकर प्राप्त किये थे। B के पास पर्याप्त साधन हैं परन्तु वह कम पढ़ा-लिखा है। इस ऋण की B से प्रतिभू के रूप में वसूली की क्या सम्भावना है? प्रत्याभूति प्रपत्र A द्वारा B के हस्ताक्षर करने के लिये लिया गया था।

You are the Manager of a Bank from which A had taken a loan of Rs. 50,000 against the guarantee of B. A fails in repaying the loan on due time and he has no assets. You have called upon B to meet his obligation under the guarantee. B denies his liability stating that he had not signed any guarantee for A. He owns his signature on the guarantee but says that A had obtained his signature on this form representing it to be an insurance proposal. B is a man of large means but of little education. Discuss your chance of recovery of this loan from B as guarantor. The guarantee form was taken by A to be signed by B. *(C. A. I. I. B. Part II, Jan., 1985)*

हल—उपरोक्त स्थिति में प्रतिभू को भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 142 व 143 में कोई विधिक संरक्षण प्राप्त नहीं हो सकता है चूंकि इसमें लेनदार मिथ्या वर्णन अथवा छिपाव के लिये प्रतिभू को उसके दायित्व से मुक्त समझा है। इस स्थिति में मूल ऋणी द्वारा प्रतिभू से मिथ्या वर्णन किया गया है जिससे लेनदार एवं प्रतिभू के बीच का संविदा व्यर्थ नहीं माना जा सकता है। अतः प्रतिभू बैंक के प्रति उत्तरदायी हो सकता है। परन्तु इसमें बैंक लापरवाही का दोषी पाया है, चूंकि बैंक ने प्रतिभू से प्रपत्रों पर हस्ताक्षर अपनी उपस्थिति में प्राप्त नहीं किये हैं तथा मूल ऋणी को बैंक से बाहर प्रपत्र ले जाने की अनुमति प्रदान कर दी है। अतः उपरोक्त स्थिति में प्रतिभू बैंक के ऋण के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। परन्तु प्रतिभू एक ख्याति प्राप्त व्यक्ति है। अतः उस पर नैतिक दबाव डालकर रुपया वसूल करने का प्रयास करना चाहिये।

3. निम्नलिखित परिस्थिति में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situation—

(a) A bank issued a guarantee by which it agreed unequivocally and unconditionally to pay within 48 hours on demand in writing from the beneficiary of the guarantee, an amount upto and not exceeding Rs. 50,000 on behalf of a company, which had tendered and/or contracted or may tender or contract thereinafter or supply materials, to the beneficiary. The guarantee was in lieu of permanent cash deposit of Rs. 50,000 which the company was required to make to the beneficiary. Later on, the High Court ordered the winding up of the company and directed the Official Liquidator to take charge of its affairs. In the meantime, the beneficiary called upon the Bank to pay the guarantee amount of Rs. 50,000. The Bank wrote to the Official Liquidator that the company in liquidation was liable to the Bank for payment of the amount demanded by the beneficiary. Thereupon, the Official Liquidator applied to the Court for an order restraining the beneficiary from realising the guarantee amount on the ground that since the company had been orderd to be wound up the beneficiary could not claim the amount of the guarantee from the Bank. Discuss the stand taken by the Official Liquidator.

(b) A Bank issued a guarantee on behalf of its constituent; as security it took possession of a fixed deposit receipt issued by it in his favour by way of lien. The constituent signed a printed form which contained a clause that the bank would be entitled to retain all moneys of the constituent so long any sums were due to the bank. The dealing officer of the bank made an endorsement on the reverse of the F. D. Receipt, "Subject to lien for bank guarantee." The fixed deposit was attached by a creditor of the constituent. The bank opposed the attachment on the ground that it had a lien on the fixed deposit for money due by the constituent under an overdraft account.

On these facts, discuss the following—

(i) Would the bank have a lien on the fixed deposit on account of the overdraft account ?

(ii) What would be the legal position if the officer of the bank had not made the endorsement in question ?

(C. A. I. I. B. Part II, May, 1984)

हल—(a) उपरोक्त स्थिति में सरकारी प्रापक को कोई विधिक अधिकार प्राप्त नहीं है तथा बैंक लेनदार (Beneficiary) के प्रति प्रत्याभूति की सीमा तक अपने दायित्व का भुगतान करने के लिये उत्तरदायी है। कम्पनी का परिसमापन (Liquidation) होने की स्थिति में प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता है। इस निर्णय की पुष्टि महाराष्ट्र राज्य विद्युत बोर्ड नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमें बैंक द्वारा जारी प्रत्याभूति को प्रत्याभूति का अनुवन्ध समझा गया तथा कम्पनी के परिसमापन की स्थिति में परिसमापन का प्रतिभू के उत्तरदायित्व पर कोई प्रभाव नहीं माना गया। अतः बैंक हिताधिकारी (Beneficiary) के प्रति पूर्णतः उत्तरदायी है।

(b) (i) इस स्थिति में बैंक को अधिविकर्ष के खाते के लिये सावधि जमा रसीद पर ग्रहणाधिकार प्राप्त नहीं हो सकता है, चूंकि इसमें बैंक ने प्रत्याभूति प्रदान करते समय जमा रसीद के ऊपर विशिष्ट ग्रहणाधिकार कर दिया है।[2] अतः इस स्थिति में बैंक का सामान्य ग्रहणाधिकार समाप्त समझा जायेगा।

(ii) यदि बैंक अधिकारी द्वारा जमा रसीद की पीठ पर कोई पृष्ठांकन नहीं किया जाता है तब बैंक को जमा रसीद पर सामान्य ग्रहणाधिकार प्राप्त होता है और बैंक इसका प्रयोग अधिविकर्ष के खाते के लिये कर सकता है। इसीलिये व्यवहार में बैंक जमा रसीद के ऊपर ऋण संख्या अथवा अन्य विशिष्ट निर्देश नहीं लिखते हैं, चूंकि इसमें बैंक का ग्रहणाधिकार विशिष्ट ग्रहणाधिकार बन जाता है।

4. एक सार्वजनिक कम्पनी बैंक में चालू खाता खोलती है। बाद में चालू खाता अधिविकर्ष खाते में परिवर्तित कर दिया जाता है जिसकी अधिकतम सीमा 25,000 रुपये है। यह ऋण सीमा बाद में बढ़कर 10 लाख रुपये कर दी जाती है। C, जो कम्पनी का संचालक है, 10 लाख रुपये का प्रतिज्ञा-पत्र भरता है। C तथा श्रीमती C भी एक प्रत्याभूति बॉण्ड बैंक के हित में भरते हैं।

A public limited Company opend a current account with a Bank. The current account was later on converted into an overdraft account with a maximum limit of Rs. 25,000. The limit was subsequently increased to Rs. 10 lakhs. C, one of the directors of the Company, executed a promissory note for Rs. 10 lakhs. C and Mrs. C also executed a guarantee Bond in favour of the Bank.

---

1. Maharashtra State Electricity Board, Bombay Vs. The Official Liquidator, High Court Ernakulam and Canara Bank (1982).
2. Vijay Kumar Vs. Ms. Jullunder Body Builders and others.

It was stated in the guarantee bond that it was a continuing guarantee and that Mrs. C undertook to pay any amount that might be due by the Company at the foot of the general balance of its account or any account whatever. On 30th June 1946, the Company ceased to carry on business. By an Irrevocable power of attorney, the Bank was authorised to receive all amounts due to the Company and to appropriate the same towards its dues. C died on 27th April 1951. By her letter dated 2nd February 1952, Mrs. C acknowledged her personal guarantee to repay the Bank the balance stated to be due therein from the bank as on 31st December 1951. On 8th November 1954, the bank filed a suit against Mrs. C to enforce the guarantee bond. In denying liability, Mrs. C contended that the suit was barred by limitation as every item of and overdraft account was an independent loan and limitation for its recovery started to run from the date of each loan.

Discuss the liability of Mrs. C.

हल—उपरोक्त स्थिति में चलत प्रत्याभूति (Continuous Guarantee) बैंक के हित मे प्रदान की गई है। प्रतिभू द्वारा प्रत्याभूत ऋण को कालातीत ऋण बतलाया गया है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित तथ्य महत्वपूर्ण हैं कि यदि

(i) प्रत्याभूति चलत प्रत्याभूति है,

(ii) वह खाता जिसके लिये प्रत्याभूति दी गई चलत खाता (Live Account) है,

(iii) प्रतिभू द्वारा प्रत्याभूति का प्रतिसहरण नहीं किया गया है तब प्रतिभू के विरुद्ध समय परिसीमा नियम प्रथम माँग से लागू समझा जाता है।

उपरोक्त स्थिति में श्रीमती C द्वारा 2 फरवरी, 1952 को प्रत्याभूति की अभिस्वीकृति की गई है तथा बैंक द्वारा 8 नवम्बर 1954 को वाद प्रस्तुत किया गया है। यह वाद उचित समय परिसीमा में किया गया है। इसके अतिरिक्त, कम्पनी का ऋण खाता चलता खाता है जिसमें बैंक को मुख्तारनामा प्राप्त है कि वह कम्पनी को समस्त देय राशि कम्पनी की ओर से प्राप्त करेगा। अतः इस स्थिति में प्रतिभू उस समय तक उत्तरदायी समझा जाता है, जब तक कि उसके द्वारा प्रत्याभूति का प्रतिसग्रहण नहीं किया गया है।[1] अतः श्रीमती C बैंक के प्रति पूर्ण उत्तरदायी हैं।

5. बैंक ने A को एक फसली ऋण 15,000 रुपये का प्रदान किया। बैंक कहता है कि B ने ऋण की देय अदायगी की प्रत्याभूति दी है और B सहमत था कि उसका दायित्व मूल ऋणी, A के सह-विस्तृत है। B बैंक

1. Margaret Lalitha Samuel Vs. Indo Commercial

विरोध करता है कि उसने कोई प्रत्याभूति नहीं दी है तथा वह प्रत्याभूति की तिथि पर अस्पताल में भरती था तथा उसने जिन प्रपत्रों पर हस्ताक्षर किये हैं वह मुख्तारनामा कहा गया था। B पुनः कहता है कि प्रत्याभूति में रिक्त स्थान थे जो हस्ताक्षर करने के बाद भरे गये हैं। इस तथ्य के साक्ष्य हैं कि रिक्त स्थान B के हस्ताक्षर करने के बाद भरे गये हैं।

Bank granted crop loan facility to A for Rs. 15,000. Bank alleged that B had executed a guarantee guaranteing the due repayment of the loan and that B had agreed that his liability would be co-extensive with that of the principal debtor, A. B disputed the Bank's claim by contending that he did not execute any guarantee, that on the material date he was in the hospital and that he had signed a document which was stated to be a power of attorney. B further contended that there were blank spaces in the guarantee, which were filled in after his signature was obtained. It was in evidence that the blank spaces were filled in after obtaining the signature of B.

Discuss the validity of the contenions stating whether the Bank was entitled to enforce its claim against B under the guarantee.

(C. A. I. I. B. Part II, May, 1983)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक लापरवाही का दोषी है चूंकि प्रत्याभूति अनुबन्ध में अनुबन्ध की शर्तें आदि प्रतिभू की सहमति के अभाव में भरी गई हैं। इसमें प्रत्याभूति के प्रपत्र प्रतिभू के हस्ताक्षर के बाद भरे गये हैं तथा प्रतिभू द्वारा बैंक मैनेजर के समक्ष हस्ताक्षर नहीं किये गये हैं। इसके अतिरिक्त प्रतिभू अनुबन्ध की तिथि पर अस्पताल (Hospital) में भरती था और उससे देनदार द्वारा धोखे से हस्ताक्षर कराये गये हैं। अतः इस स्थिति में बैंक लापरवाही का दोषी समझा जायेगा। बैंक को B के प्रति कोई उपचार प्राप्त नहीं है।

6. मैसर्स A, B, C & Co. को एक बैंक द्वारा माल की गिरवी एवं D की व्यक्तिगत प्रत्याभूति पर 42 लाख रुपये की नकद साख की सुविधा प्रदान की गई। D फर्म का साझेदार नहीं है। इसके पश्चात् बैंक ऋण के भुगतान की मांग करता है तथा ऋणी एवं प्रतिभू से अदायगी की मांग की जाती है। बैंक को कोई प्रत्युत्तर न मिलने पर वह गिरवी का माल सार्वजनिक नीलामी में 1,30,000 रुपये में बेच देता है तथा नकद साख खाते में शेष धन की वसूली के लिये ऋणी फर्म एवं प्रतिभू पर वाद प्रस्तुत करता है। D अपना दायित्व इस आधार पर अस्वीकार करता है कि गिरवी का माल उसकी जानकारी एवं सहमति के अभाव में बेचा गया है और ऐसा करने में उसके अधिकारों के विरुद्ध कार्य किया गया है।

M/s A, B, C & Co. was sanctioned a cash credit facility of Rs. 42 lacs by a Bank against pledge of goods and personal guarantee of Mr. D who is not a partner in the firm. The Bank subsequently recalled the advance and demanded repayment of the amount both from the borrowing firm and the guarantor. As there was no response the Bank sold the pledged stocks by public auction for Rs. 1,30,000 and filed suit against the borrowing firm and the guarantor for the balance amount due in the cash credit A/c Mr. D denies his liability on the ground that the pledge stocks were sold without his knowledge or consent and in doing so the Bank has prejudiced his rights as a guarantor.

Examine the above situations.

(C A. I. I. B. Part II, May, 1982)

हल—भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 141 के अनुसार, यदि लेनदार प्रतिभू की सहमति के अभाव मे ऋणी की कोई प्रत्याभूति नष्ट कर देता है या बेच देता है तब प्रतिभू उस सीमा तक अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है। इस स्थिति में प्रतिभू माल के मूल्य की सीमा तक अपने दायित्व से मुक्त समझा जायेगा चूंकि माल उसको नोटिस दिये बिना बेचा गया है। उपरोक्त समस्या मे ऋणी के खाते का दायित्व निर्धारित नही है चूंकि 42 लाख रुपये की कुल ऋण सीमा है। इसके अतिरिक्त माल की जमानत के विरुद्ध ऋण की स्थिति मे यह समझा जायेगा कि बैंक द्वारा माल के मूल्य को ध्यान मे रखते हुए ऋण प्रदान किया गया होगा।

7. निम्नलिखित स्थिति में आप क्या करेंगे—

What will you do in the following situation—

Wellknown Traders are enjoying an overdraft facility upto Rs. 50,000 against guarantee given on 1st January 1980 by Sohan Lal Gupta who is the father of the proprietor of the firm. The guarantee stipulates that the guarantor will have to give 3 month's notice to the bank for cancellation of the guarantee. You receive a notice on 15th February 1980 from Shri Sohan Lal Gupta cancelling his guarantee. The balance in the account is Debit Rs. 5,000 on the date. Would you allow the account to be operated for 3 months in terms of guarantee? *(C. A. I. I. B. Part II, May, 1980)*

हल—उपरोक्त स्थिति मे बैंक 3 महीने की अवधि के लिये प्रत्याभूति ऋण खाता चालू रख सकता है तथा फर्म द्वारा सूचना प्राप्ति से पूर्व जारी किये [illegible] अथवा बिलों का भुगतान कर सकता है। सूचना प्राप्ति के [illegible]

होने की तिथि तक के लेन-देनों के लिये प्रतिभू उत्तरदायी होता है। परन्तु इस सम्बन्ध में बैंक को यह विशेष सावधानी रखनी चाहिये कि प्रत्याभूति समाप्ति की तिथि के पश्चात् हुए लेन-देनों के लिये प्रतिभू को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। अतः बैंक को इस अवधि में ऋण खाते के समायोजन का प्रयास करना चाहिये। इसके लिये ऋण का निर्धारण करके उसकी मांग प्रतिभू से करनी चाहिये।

8. ऋणी कम्पनी से आप किस प्रकार व्यवहार करेंगे—

Please discuss how will you deal with the borrowing company—

Jayant Chemicals Pvt. Ltd. is a newly formed company proposing to manufacture fine chemicals. Their paid up capital is Rs. 1 lac. They require a term loan of Rs. 6 lacs and other working capital facilities.

On your pointing out that paid up capital is too low, you are informed that two Directors of the company have placed a deposit of Rs. 3 lacs with the company and they agree not to withdraw the deposit until Bank loan is repaid. On this understanding and after taking an undertaking from the two Directors not to withdraw their deposit, you grant the term loan and other working capital facilities requested by the company.

After one year's working, you find from the balance sheet of the Company that the company has made good profit but repaid the deposit of the Directors. *(C. A. I. I. B.-Part II, May, 1981)*

हल—उपरोक्त परिस्थिति में बैंक द्वारा कम्पनी को ऋण प्रदान किया गया है जिसमें कम्पनी के संचालकों ने अपनी 3 लाख रुपये का कम्पनी में जमा निक्षेप वापिस प्राप्त न करने का उत्तरदायित्व स्वीकार किया है। परन्तु संचालकों द्वारा अपना रुपया निकाल लिया गया है। बैंक को कम्पनी के विरुद्ध कोई उपचार प्राप्त नहीं है चूंकि बैंक ने कम्पनी से इस आशय का कोई अनुबन्ध नहीं किया था कि कम्पनी बैंक की सहमति के अभाव में संचालकों का जमा निक्षेप भुगतान नहीं करेगी। अतः बैंक को कम्पनी के विरुद्ध कोई उपचार प्राप्त नहीं है। परन्तु बैंक को कम्पनी पर दबाव डालकर संचालकों से कम्पनी में जमा निक्षेप पुनः प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये।

9. आपके बैंक द्वारा A को 1,00,000 रुपये का ऋण B की जमानत पर स्वीकार किया जाता है। 6 माह बाद B सूचना देता है कि वह अपनी ज़मानत पत्र में लिखित तिथि से समाप्त करना चाहता है। यह पत्र बैंक में प्राप्त होता है परन्तु

इसके लिये कोई कार्य नहीं किया जाता है। पत्र की पावक रसीद नहीं है। कुछ दिनों बाद आपको ज्ञात होता है कि A का ऋण वसूल नहीं हो रहा है। इसलिये आप B को एक पत्र भेजते हैं जिसमें प्रतिभू के रूप में B से ऋण की मांग की जाती है। B अपने पत्र का सन्दर्भ देते हुये ऋण का भुगतान करने से मना करता है। आपके बैंक की क्या स्थिति होगी ?

Your Bank sanctioned a limit of Rs 1,00,000 to A against the guarantee of B. After about six months B writes to you saying that he wishes to terminate his gurantee on a date mentioned in his letter. This letter is received at your Bank but is misfiled and hence no action is taken on it. The letter is not even acknowledged. Sometime after the date mentioned by B in the letter you find that the advance cannot be recovered from A and hence send a notice to B asking him to repay the advance as the guarantor. B calls your attention to his letter and refuses to pay. What is the position of your Bank ? (*C. A. I. I. B. May, 1981*)

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक लापरवाही का दोषी है। अत. B द्वारा लिखे गये पत्र की तिथि के बाद प्रदान किये गये ऋणों की वसूली, B से नहीं की जा सकती है। परन्तु B पत्र की तिथि से पूर्व प्रदान किये गये ऋणों के सम्बन्ध में अपने उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं हो सकता है। अतः पत्र की तिथि तक, A के ऋण खाते में प्रदान की गयी ऋण राशि के लिये, B पूर्णतः उत्तरदायी समझा जायेगा।

ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य

(Important Points to be Remembered)

(1) प्रत्याभूति अनुबन्ध मे प्रतिभू तीसरे पक्षकार को त्रुटि की दशा में उसके वचन का निष्पादन अथवा उसके दायित्वों को पूरा करने का वचन देता है।

(2) प्रत्येक वह व्यक्ति जो अनुबन्ध योग्य है, प्रत्याभूति अनुबन्ध करने के सक्षम समझा गया है।

(3) प्रतिभू की मृत्यु, दिवालिया, ऋणी द्वारा ऋण का भुगतान अथवा ऋणदाता द्वारा मुक्त करने पर प्रतिभू अपने दायित्व से मुक्त समझा जाता है।

(4) प्रत्याभूति अनुबन्ध मे लेनदार द्वारा महत्वपूर्ण तथ्यों का छिपाव अथवा मिथ्या वर्णन करने पर प्रत्याभूति अनुबन्ध व्यर्थ समझा जाता है।

(5) लेनदार ऋणी के विरुद्ध वाद प्रस्तुत करने से पूर्व प्रतिभू पर रुपया वसूली का वाद प्रस्तुत कर सकता है।

प्रश्न
(Questions)

1. क्षतिपूर्ति अनुबन्ध व प्रत्याभूति अनुबन्ध में अन्तर स्पष्ट कीजिये ।

Explain the difference between a Contract of Indemnity and a Contract of Guarantee. *(C. A. I. I. B. Part II, May, 1984)*

2. प्रत्याभूति अनुबन्ध से आपका क्या आशय है ? यह क्षतिपूरक अनुबन्धों से किस प्रकार भिन्न है ? विस्तारपूर्वक समझाइये ।

What do you mean by Contract of Guarantee ? How it differs from Contract of Indemnity ? Explain in detail.

3. प्रत्याभूति प्रपत्र एवं क्षतिपूरक प्रपत्र में अन्तर स्पष्ट कीजिये ।

Distinguish between a Letter of Credit and a Letter of Indemnity. *(C. A. I. I. B. Nov., 1976; Aug., 1978)*

4. "प्रतिभू का दायित्व मूल ऋणी के सह-विस्तृत होता है ।" समझाइये ।

"The Surety's liability is co-extensive with that of the principal debtors." Discuss. *(C. A. I. I. B. Part II)*

5. प्रत्याभूति अनुबन्ध में बैंक के अधिकार एवं उत्तरदायित्व समझाइये ।

Discuss the rights and responsibilities of a banker in a Contract of Guarantee.

6. प्रत्याभूति अनुबन्ध में प्रतिभू के दायित्व किन परिस्थितियों में समाप्त समझे जाते हैं ?

In what conditions, is the liabilities of a surety extinguish ?

□□□

20 बिलों का क्रय करना एवं भुनाना
(PURCHASE AND DISCOUNTING OF BILLS)

बिलों का क्रय करना एवं भुनाना
(Purchase and Discounting of Bills)

वर्तमान समय में बिलो को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि अत्यन्त महत्वपूर्ण समझी जाती है। इसके अन्तर्गत बैंक जमानती अथवा बेजमानती ऋण प्रदान करते हैं। यह सुविधा ऋण स्वरूप अथवा नकद साख सुविधा के रूप मे प्रदान की जा सकती है। इसमे ऋण का मुख्य उद्देश्य माल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाना होता है तथा ऋण का भुगतान बिल के स्वीकारक (Acceptor) अथवा देनदार (Debtor) द्वारा किया जाता है। बैंक अपने ऋण की वसूली ऋणी अथवा बिल के देनदार से कर सकते हैं। बैंकों द्वारा मांग पर देय (on Demand) बिलों को क्रय किया जाता है जिसमें बैंक ऋणी से मार्ग की अवधि (Transit Period) का ब्याज व डाक व्यय (Postage Charge) वसूल करते हैं। बिल से संलग्न माल के अधिकार प्रपत्र भी होते हैं जिनकी सुपुर्दगी क्रेता को बिल का भुगतान करने पर की जाती है। इस स्थिति में बैंकों का ऋण सुरक्षित ऋण समझा जाता है, चूंकि बैंक का माल के अधिकार प्रपत्रों पर कब्जा होता है जिससे बिल का भुगतान न करने की स्थिति में बैंक माल को छुड़ाकर एवं विक्रय करके अपना ऋण वसूल कर सकते हैं।

इसके विपरीत, सावधि बिलों (Usance Bills) की स्थिति में बैंक बिलों को भुनाकर (Discount) ऋण प्रदान करते हैं। इसमें बिलों का भुगतान एक निश्चित अवधि के पश्चात् देय होता है जिस अवधि के लिये बैंक ऋणी से ब्याज वसूल करते हैं। इसमें बिल के साथ माल के अधिकार प्रपत्र सम्मिलित हो सकते हैं। इस स्थिति में बिल प्रलेखीय बिल (documentary Bill) समझा जाता है। प्रलेखीय बिल दो प्रकार के होते हैं—प्रथम भुगतान के विरुद्ध बिल (*Document against* Payment)—जिसमे माल के अधिकार प्रपत्रों की सुपुर्दगी बिल के भुगतान के पश्चात् की जाती है। इसमें बैंक का ऋण सुरक्षित ऋण समझा जाता है। द्वितीय, स्वीकृति के विरुद्ध बिल (Document against Acceptance), जिसमे माल के प्रपत्रों की सुपुर्दगी बिल की स्वीकृति पर की जाती है। इस स्थिति में बैंक का ऋण उस समय तक सुरक्षित ऋण समझा जाता है जब तक कि माल के अधिकार प्रपत्र उसके कब्जे में होते हैं और माल के क्रेता अथवा बिल के स्वीकारक द्वारा बिल स्वीकार

प्रश्न
(Questions)

1. क्षतिपूर्ति अनुवन्ध व प्रत्याभूति अनुवन्ध में अन्तर स्पष्ट कीजिये ।

Explain the difference between a Contract of Indemnity and a Contract of Guarantee. *(C. A. I. I. B. Part II, May, 1984)*

2. प्रत्याभूति अनुवन्ध से आपका क्या आशय है ? यह क्षतिपूरक अनुबन्धों से किस प्रकार भिन्न है ? विस्तारपूर्वक समझाइये ।

What do you mean by Contract of Guarantee ? How it differs from Contract of Indemnity ? Explain in detail.

3. प्रत्याभूति प्रपत्र एवं क्षतिपूरक प्रपत्र में अन्तर स्पष्ट कीजिये ।

Distinguish between a Letter of Credit and a Letter of Indemnity. *(C. A. I. I. B. Nov., 1976; Aug., 1978)*

4. "प्रतिभू का दायित्व मूल ऋणी के सह-विस्तृत होता है ।" समझाइये ।

"The Surety's liability is co-extensive with that of the principal debtors." Discuss. *(C. A. I. I. B. Part II)*

5. प्रत्याभूति अनुवन्ध में वैंक के अधिकार एवं उत्तरदायित्व समझाइये ।

Discuss the rights and responsibilities of a banker in a Contract of Guarantee.

6. प्रत्याभूति अनुवन्ध में प्रतिभू के दायित्व किन परिस्थितियों में समाप्त समझे जाते हैं ?

In what conditions, is the liabilities of a surety extinguish ?



कालीन प्रयोग लाभप्रद स्रोतों में करते हैं। बैंकों के दृष्टिकोण से यह पद्धति विशेष महत्वपूर्ण होती है।

(5) मूल्य स्थिरता (Price Stability) – बैंकों को बिल क्रय करने अथवा भुनाने में मूल्य सम्बन्धी जोखिम को वहन नहीं करना पड़ता है। इसके विपरीत, माल एवं अन्य प्रतिभूतियों की स्थिति में प्रत्याभूतियों का मूल्य परिवर्तनशील होता है। बिलों को स्थिति में इनका देय तिथि पर अदाकर्ता (Drawee) द्वारा निश्चित राशि का भुगतान किया जाता है। अतः बिलों का मूल्य निश्चित होता है।

अतः बैंकों द्वारा बिलों का क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। इसमें बैंक ऋणी को ऋण सीमा वार्षिक अवधि के आधार पर भी स्वीकृत करते हैं। परन्तु इसके आधार पर ऋण सीमा स्वीकृत करते समय बैंक ऋणी की ऋण क्षमता (Credit Worthiness) का विशेष ध्यान रखते हैं। इसमें बैंक दो प्रकार के बिल भुनाते हैं – प्रथम, अप्रलेखीय बिल (Clean Bills)। इसमें बैंक असुरक्षित ऋण प्रदान करते हैं, चूंकि इसमें ऋणी की व्यक्तिगत प्रत्याभूति पर ऋण प्रदान किया जाता है। द्वितीय, प्रलेखीय बिल (Documentary Bills) ये बैंक के सुरक्षित ऋण समझे जाते हैं। इसमें माल के हक विलेख भी बिल के साथ संलग्न होते हैं। बिल का अनादरण होने की स्थिति में बिलों से संलग्न हक विलेख से सम्बन्धित माल बेचकर, बैंक अपना रुपया वसूल कर सकते हैं। बैंकों को ऋण सीमा की स्वीकृति करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंकों को ऋण सीमा ऋणी की ऋण क्षमता तथा व्यवसाय की प्रकृति के आधार पर निर्धारित करनी चाहिये।

(2) बैंकों को अदाकर्ता (Drawee) की ऋण क्षमता का ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिये।

(3) बैंकों को ऋण सीमा स्वीकृत करते समय ऋणी के व्यवसाय के आधार को ध्यान में रखना चाहिये।

(4) बैंक को ऋण सीमा की स्वीकृति विभिन्न चरणों में करनी चाहिये तथा इस अवधि के दौरान ऋण खाते का सावधानीपूर्वक अध्ययन करना चाहिये कि ऋणी के बिल अनादृत होने की क्या प्रकृति है? प्रारम्भिक अवस्था में प्रलेखीय बिलों को क्रय करने की सुविधा ही उपलब्ध करवानी जानी चाहिये।

(5) प्रलेखीय बिल में मोटर ट्रांसपोर्ट की रसीद (Motor Transport Receipt) संलग्न होने की स्थिति में बैंकों को विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिये चूंकि, यह रसीद हक विलेख नहीं होती है तथा ट्रांसपोर्ट कम्पनी क्षतिपूरक बन्धक (Bond) के आधार पर माल की सुपुर्दगी प्रदान कर देती है।

अतः बैंक को बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में ऋणी की क्षमता एवं बिल से सम्बन्धित प्रलेखों की प्रकृति पर विशेष ध्यान

नहीं किया गया है। बिल स्वीकार करने के पश्चात् बैंक का ऋण असुरक्षित ऋण समझा जाता है चूंकि ऋण की वसूली बिल के देनदार अथवा ऋणी की व्यक्तिगत जमानत पर निर्भर करती है।

अतः बैंक द्वारा बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की सुविधा आधुनिक युग में व्यापक महत्व रखती है। इसके द्वारा बैंक माल के उत्पादकों को माल क्रेता तक पहुँचाने में सहायता प्रदान करते हैं और माल का भुगतान होने से पूर्व विक्रेता अथवा उत्पादक को वित्त सुविधा उपलब्ध करवाकर माल को सुपुर्दगी योग्य स्थिति तक पहुँचाने में सहायता करते हैं। इसमें बैंक ऋणी को सुरक्षित अथवा असुरक्षित ऋण प्रदान कर सकते हैं।

बिलों के भुनाने के लाभ
(Advantages of Discounting of Bills)

बैंकों द्वारा बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि दिन-प्रतिदिन महत्वपूर्ण हो रही है। इसमें ऋणी को माल एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने में सुविधा होती है तथा माल का भुगतान सुरक्षित समझा जाता है। इसके विपरीत, बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि बैंकों के दृष्टिकोण से भी लाभप्रद समझी जाती है। इसमें बैंक को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं—

(1) सुरक्षा (Safety)—बिलों को भुनाकर अथवा क्रय करके वित्त प्रदान करने में बैंक के ऋण की सुरक्षा रहती है। इसमें बिल के आहर्ता की व्यक्तिगत जमानत पर ऋण प्रदान किया जाता है तथा बिल के देनदार (Drawee) की प्रत्याभूति होती है कि वह बिल का माँग पर अथवा देय तिथि पर भुगतान करेगा। बिल अनादृत होने की स्थिति में बैंक ऋणी (Borrower) का खाता डेबिट करके रुपया वसूल कर सकते हैं।

(2) पुनर्वित्त की सुविधा (Facility of Refinance)—बैंकों को बिल क्रय करने अथवा मितीकाटे पर भुगतान करने का महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि इस स्थिति में बैंक निश्चित बिलों की जमानत पर रिजर्व बैंक अथवा औद्योगिक विकास बैंक से पुनः भुनाकर ऋण प्राप्त कर सकते हैं। विस्तार के लिये देखिये **अध्याय 3** रिजर्व बैंक की बिल भुनाने की नयी नीति, 1970)

(3) भुगतान की निश्चतता (Certainty of Payment)—इसमें बिलों के भुगतान की तिथि निश्चित होती है। इसमें भुगतान अल्पकालीन अवधि के पश्चात् देय होते हैं। बैंक अपने तरल कोषों का विनियोजन लाभकारी स्रोतों में कर सकते हैं। अतः बैंक अपने धन का कम जोखिम पर अधिक-लाभ के लिये विनियोग करने में समर्थ होते हैं।

(4) लाभदायकता (Profitability)—बैंकों के दृष्टिकोण से बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि लाभप्रद होती है। इसमें बैंक बिलों पर ब्याज एवं कमीशन वसूल करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंक अपने कोषों का अल्प-

कालीन प्रयोग लाभप्रद स्रोतों में करते है। बैंकों के दृष्टिकोण से यह पद्धति विशेष महत्वपूर्ण होती हैं।

(5) मूल्य स्थिरता (Price Stability) – बैंकों को बिल क्रय करने अथवा भुनाने में मूल्य सम्बन्धी जोखिम को वहन नहीं करना पड़ता है। इसके विपरीत, माल एवं अन्य प्रतिभूतियों की स्थिति में प्रत्याभूतियों का मूल्य परिवर्तनशील होता है। बिलों की स्थिति में इनका देय तिथि पर अदाकर्त्ता (Drawee) द्वारा निश्चित राशि का भुगतान किया जाता है। अतः बिलों का मूल्य निश्चित होता है।

अतः बैंकों द्वारा बिलों का क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। इसमें बैंक ऋणी की ऋण सीमा वार्षिक अवधि के आधार पर भी स्वीकृत करते हैं। परन्तु इसके आधार पर ऋण सीमा स्वीकृत करते समय बैंक ऋणी को ऋण क्षमता (Credit Worthiness) का विशेष ध्यान रखते हैं। इसमें बैंक दो प्रकार के बिल भुनाते हैं – प्रथम, अप्रलेखीय बिल (Clean Bills)। इसमें बैंक असुरक्षित ऋण प्रदान करते हैं, चूंकि इसमें ऋणी की व्यक्तिगत प्रत्याभूति पर ऋण प्रदान किया जाता है। द्वितीय, प्रलेखीय बिल (Documentary Bills) ये बैंक के सुरक्षित ऋण समझे जाते हैं। इसमें माल के हक विलेख भी बिल के साथ संलग्न होते हैं। बिल का अनादरण होने की स्थिति में बिलों से संलग्न हक विलेख से सम्बन्धित माल बेचकर, बैंक अपना रुपया वसूल कर सकते हैं। बैंकों को ऋण सीमा की स्वीकृति करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंकों को ऋण सीमा ऋणी की ऋण क्षमता तथा व्यवसाय की प्रकृति के आधार पर निर्धारित करनी चाहिये।

(2) बैंकों को अदाकर्त्ता (Drawee) की ऋण क्षमता का ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिये।

(3) बैंकों को ऋण सीमा स्वीकृत करते समय ऋणी के व्यवसाय के आधार को ध्यान में रखना चाहिये।

(4) बैंक को ऋण सीमा की स्वीकृति विभिन्न चरणों में करनी चाहिये तथा इस अवधि के दौरान ऋण खाते का सावधानीपूर्वक अध्ययन करना चाहिये कि ऋणी के बिल अनादृत होने की क्या प्रकृति है ? प्रारम्भिक अवस्था में प्रलेखीय बिलों को क्रय करने की सुविधा ही उपलब्ध करवायी जानी चाहिये।

(5) प्रलेखीय विपत्र में मोटर ट्रांसपोर्ट की रसीद (Motor Transport Receipt) संलग्न होने की स्थिति में बैंकों को विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिये चूंकि, यह रसीद हक विलेख नहीं होती है तथा ट्रांसपोर्ट कम्पनी क्षतिपूरक बन्धक (Bond) के आधार पर माल की सुपुर्दगी प्रदान कर देती है।

अतः बैंक को बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में ऋणी की क्षमता एवं बिल से सम्बन्धित प्रलेखों की प्रकृति पर विशेष ध्यान

नहीं किया गया है। बिल स्वीकार करने के पश्चात् बैंक का ऋण असुरक्षित ऋण समझा जाता है चूंकि ऋण की वसूली बिल के देनदार अथवा ऋणी की व्यक्तिगत जमानत पर निर्भर करती है।

अतः बैंक द्वारा बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की सुविधा आधुनिक युग में व्यापक महत्व रखती है। इसके द्वारा बैंक माल के उत्पादकों को माल क्रेता तक पहुँचाने में सहायता प्रदान करते हैं और माल का भुगतान होने से पूर्व विक्रेता अथवा उत्पादक को वित्त सुविधा उपलब्ध करवाकर माल को सुपुर्दगी योग्य स्थिति तक पहुँचाने में सहायता करते हैं। इसमें बैंक ऋणी को सुरक्षित अथवा असुरक्षित ऋण प्रदान कर सकते हैं।

बिलों के भुनाने के लाभ
(Advantages of Discounting of Bills)

बैंकों द्वारा बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि दिन-प्रतिदिन महत्वपूर्ण हो रही है। इसमें ऋणी को माल एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने में सुविधा होती है तथा माल का भुगतान सुरक्षित समझा जाता है। इसके विपरीत, बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि बैंकों के दृष्टिकोण से भी लाभप्रद समझी जाती है। इसमें बैंक को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं—

(1) सुरक्षा (Safety)—बिलों को भुनाकर अथवा क्रय करके वित्त प्रदान करने में बैंक के ऋण की सुरक्षा रहती है। इसमें बिल के आहर्ता की व्यक्तिगत जमानत पर ऋण प्रदान किया जाता है तथा बिल के देनदार (*Drawee*) की प्रत्याभूति होती है कि वह बिल का माँग पर अथवा देय तिथि पर भुगतान करेगा। बिल अनादृत होने की स्थिति में बैंक ऋणी (Borrower) का खाता डेबिट करके रुपया वसूल कर सकते हैं।

(2) पुनर्वित्त की सुविधा (Facility of Refinance)—बैंकों को बिल क्रय करने अथवा मितीकाटे पर भुगतान करने का महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि इस स्थिति में बैंक निश्चित बिलों की जमानत पर रिजर्व बैंक अथवा औद्योगिक विकास बैंक से पुनः भुनाकर ऋण प्राप्त कर सकते हैं। विस्तार के लिये देखिये अध्याय 3 रिजर्व बैंक की बिल भुनाने की नयी नीति, 1970)

(3) भुगतान की निश्चतता (Certainty of Payment)—इसमें बिलों के भुगतान की तिथि निश्चित होती है। इसमें भुगतान अल्पकालीन अवधि के पश्चात् देय होते हैं। बैंक अपने तरल कोषों का विनियोजन लाभकारी स्रोतों में कर सकते हैं। अतः बैंक अपने धन का कम जोखिम पर अधिक लाभ के लिये विनियोग करने में समर्थ होते हैं।

(4) लाभदायकता (Profitability)—बैंकों के दृष्टिकोण से बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि लाभप्रद होती है। इसमें बैंक बिलों पर ब्याज एवं कमीशन वसूल करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंक अपने कोषों का अल्प-

कालीन प्रयोग लाभप्रद स्रोतों में करते हैं। बैंकों के दृष्टिकोण से यह पद्धति विशेष महत्वपूर्ण होती हैं।

(5) मूल्य स्थिरता (Price Stability) – बैंकों को बिल क्रय करने अथवा भुनाने में मूल्य सम्बन्धी जोखिम को वहन नहीं करना पड़ता है। इसके विपरीत, माल एवं *अन्य प्रतिभूतियों की स्थिति में प्रत्याभूतियों का* मूल्य परिवर्तनशील होता है। बिलों की स्थिति मे इनका देय तिथि पर अदाकर्त्ता (Drawee) द्वारा निश्चित राशि का भुगतान किया जाता है। अतः बिलों का मूल्य निश्चित होता है।

अतः बैंको द्वारा बिलों का क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। इसमें बैंक ऋणी को ऋण सीमा वार्षिक अवधि के आधार पर भी स्वीकृत करते हैं। परन्तु इसके आधार पर ऋण सीमा स्वीकृत करते समय बैंक ऋणी की ऋण क्षमता (Credit Worthiness) का विशेष ध्यान रखते हैं। इसमें बैंक दो प्रकार के बिल भुनाते हैं – प्रथम, अप्रलेखीय बिल (Clean Bills)। इसमें बैंक असुरक्षित ऋण प्रदान करते हैं, चूंकि इसमे ऋणी की व्यक्तिगत प्रत्याभूति पर ऋण प्रदान किया जाता है। द्वितीय, प्रलेखीय बिल (Documentary Bills) ये बैंक के सुरक्षित ऋण समझे जाते हैं। इसमें माल के हक विलेख भी बिल के साथ संलग्न होते हैं। बिल का अनादरण होने की स्थिति में बिलो से संलग्न हक विलेख से सम्बन्धित माल बेचकर, बैंक अपना रुपया वसूल कर सकते हैं। बैंकों को ऋण सीमा की स्वीकृति करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंको को ऋण सीमा ऋणी की ऋण क्षमता तथा व्यवसाय की प्रकृति के आधार पर निर्धारित करनी चाहिये।

(2) बैंकों को अदाकर्त्ता (Drawee) की ऋण क्षमता का ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिये।

(3) बैंकों को ऋण सीमा स्वीकृत करते समय ऋणी के व्यवसाय के आधार को ध्यान में रखना चाहिये।

(4) बैंक को ऋण सीमा की स्वीकृति विभिन्न चरणो मे करनी चाहिये तथा इस अवधि के दौरान ऋण खाते का सावधानीपूर्वक अध्ययन करना चाहिये कि ऋणी के बिल अनादृत होने की क्या प्रकृति है? प्रारम्भिक अवस्था में प्रलेखीय बिलों को क्रय करने की सुविधा ही उपलब्ध करवायी जानी चाहिये।

(5) प्रलेखीय विपत्र में मोटर ट्रांसपोर्ट की रसीद (*Motor Transport* Receipt) संलग्न होने की स्थिति मे बैंकों को विशेष सावधानी ध्यान मे रखनी चाहिये चूंकि, यह रसीद हक विलेख नही होती है तथा ट्रासपोर्ट कम्पनी क्षतिपूरक बन्धक (Bond) के आधार पर माल की सुपुर्दगी प्रदान कर देती है।

अतः बैंक को बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में ऋणी की क्षमता एवं बिल से सम्बन्धित प्रलेखों की प्रकृति पर विशेष ध्यान

नहीं किया गया है। बिल स्वीकार करने के पश्चात् बैंक का ऋण असुरक्षित ऋण समझा जाता है चूंकि ऋण की वसूली बिल के देनदार अथवा ऋणी की व्यक्तिगत जमानत पर निर्भर करती है।

अतः बैंक द्वारा बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की सुविधा आधुनिक युग में व्यापक महत्व रखती है। इसके द्वारा बैंक माल के उत्पादकों को माल क्रेता तक पहुँचाने में सहायता प्रदान करते हैं और माल का भुगतान होने से पूर्व विक्रेता अथवा उत्पादक को वित्त सुविधा उपलब्ध करवाकर माल को सुपुर्दगी योग्य स्थिति तक पहुँचाने में सहायता करते हैं। इसमें बैंक ऋणी को सुरक्षित अथवा असुरक्षित ऋण प्रदान कर सकते हैं।

बिलों के भुनाने के लाभ
(Advantages of Discounting of Bills)

बैंकों द्वारा बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि दिन-प्रतिदिन महत्वपूर्ण हो रही है। इसमें ऋणी को माल एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने में सुविधा होती है तथा माल का भुगतान सुरक्षित समझा जाता है। इसके विपरीत, बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि बैंकों के दृष्टिकोण से भी लाभप्रद समझी जाती है। इसमें बैंक को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं—

(1) सुरक्षा (Safety)—बिलों को भुनाकर अथवा क्रय करके वित्त प्रदान करने में बैंक के ऋण की सुरक्षा रहती है। इसमें बिल के आहर्ता की व्यक्तिगत जमानत पर ऋण प्रदान किया जाता है तथा बिल के देनदार (Drawee) की प्रत्याभूति होती है कि वह बिल का माँग पर अथवा देय तिथि पर भुगतान करेगा। बिल अनादृत होने की स्थिति में बैंक ऋणी (Borrower) का खाता डेबिट करके रुपया वसूल कर सकते हैं।

(2) पुनर्वित्त की सुविधा (Facility of Refinance)—बैंकों को बिल क्रय करने अथवा मितीकाटे पर भुगतान करने का महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि इस स्थिति में बैंक निश्चित बिलों की जमानत पर रिजर्व बैंक अथवा औद्योगिक विकास बैंक से पुनः भुनाकर ऋण प्राप्त कर सकते हैं। विस्तार के लिये देखिये अध्याय 3 रिजर्व बैंक की बिल भुनाने की नयी नीति, 1970)

(3) भुगतान की निश्चतता (Certainty of Payment)—इसमें बिलों के भुगतान की तिथि निश्चित होती है। इसमें भुगतान अल्पकालीन अवधि के पश्चात् देय होते हैं। बैंक अपने तरल कोषों का विनियोजन लाभकारी स्रोतों में कर सकते हैं। अतः बैंक अपने धन का कम जोखिम पर अधिक लाभ के लिये विनियोग करने में समर्थ होते हैं।

(4) लाभदायकता (Profitability)—बैंकों के दृष्टिकोण से बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि लाभप्रद होती है। इसमें बैंक बिलों पर ब्याज एवं कमीशन वसूल करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंक अपने कोषों का अल्प-

कालीन प्रयोग लाभप्रद स्रोतों में करते हैं। बैंको के दृष्टिकोण से यह पद्धति विशेष महत्वपूर्ण होती हैं।

(5) मूल्य स्थिरता (Price Stability) – बैंकों को बिल क्रय करने अथवा भुनाने मे मूल्य सम्बन्धी जोखिम को वहन नहीं करना पड़ता है। इसके विपरीत, माल एवं अन्य प्रतिभूतियो की स्थिति में प्रत्याभूतियों का मूल्य परिवर्तनशील होता है। बिलों की स्थिति मे इनका देय तिथि पर अदाकर्त्ता (Drawee) द्वारा निश्चित राशि का भुगतान किया जाता है। अतः बिलों का मूल्य निश्चित होता है।

अतः बैंको द्वारा बिलों का क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। इसमें बैंक ऋणी की ऋण सीमा वार्षिक अवधि के आधार पर भी स्वीकृत करते हैं। परन्तु इसके आधार पर ऋण सीमा स्वीकृत करते समय बैंक ऋणी की ऋण क्षमता (Credit Worthiness) का विशेष ध्यान रखते हैं। इसमें बैंक दो प्रकार के बिल भुनाते हैं – प्रथम, अप्रलेखीय बिल (Clean Bills)। इसमें बैंक असुरक्षित ऋण प्रदान करते हैं, चूंकि इसमे ऋणी की व्यक्तिगत प्रत्याभूति पर ऋण प्रदान किया जाता है। द्वितीय, प्रलेखीय बिल (Documentary Bills) ये बैंक के सुरक्षित ऋण समझे जाते हैं। इसमें माल के हक विलेख भी बिल के साथ संलग्न होते हैं। बिल का अनादरण होने की स्थिति में बिलों से संलग्न हक विलेख से सम्बन्धित माल बेचकर, बैंक अपना रुपया वसूल कर सकते हैं। बैंकों को ऋण सीमा की स्वीकृति करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंको को ऋण सीमा ऋणी की ऋण क्षमता तथा व्यवसाय की प्रकृति के आधार पर निर्धारित करनी चाहिये।

(2) बैंको को अदाकर्त्ता (Drawee) की ऋण क्षमता का ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिये।

(3) बैंकों को ऋण सीमा स्वीकृत करते समय ऋणी के व्यवसाय के आधार को ध्यान में रखना चाहिये।

(4) बैंक को ऋण सीमा की स्वीकृति विभिन्न चरणों में करनी चाहिये तथा इस अवधि के दौरान ऋण खाते का सावधानीपूर्वक अध्ययन करना चाहिये कि ऋणी के बिल अनादृत होने की क्या प्रकृति है? प्रारम्भिक अवस्था में प्रलेखीय बिलों को क्रय करने की सुविधा ही उपलब्ध करवायी जानी चाहिये।

(5) प्रलेखीय विपत्र में मोटर ट्रांसपोर्ट की रसीद (Motor Transport Receipt) संलग्न होने की स्थिति में बैंकों को विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिये चूंकि, यह रसीद हक विलेख नहीं होती है तथा ट्रांसपोर्ट कम्पनी क्षतिपूरक बन्धक (Bond) के आधार पर माल की सुपुर्दगी प्रदान कर देती है।

अतः बैंक को बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में ऋणी की क्षमता एवं बिल से सम्बन्धित प्रलेखों की प्रकृति पर विशेष ध्यान

नहीं किया गया है। बिल स्वीकार करने के पश्चात् बैंक का ऋण असुरक्षित ऋण समझा जाता है चूंकि ऋण की वसूली बिल के देनदार अथवा ऋणी की व्यक्तिगत जमानत पर निर्भर करती है।

अतः बैंक द्वारा बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की सुविधा आधुनिक युग में व्यापक महत्व रखती है। इसके द्वारा बैंक माल के उत्पादकों को माल क्रेता तक पहुँचाने में सहायता प्रदान करते हैं और माल का भुगतान होने से पूर्व विक्रेता अथवा उत्पादक को वित्त सुविधा उपलब्ध करवाकर माल को सुपुर्दगी योग्य स्थिति तक पहुँचाने में सहायता करते हैं। इसमें बैंक ऋणी को सुरक्षित अथवा असुरक्षित ऋण प्रदान कर सकते हैं।

बिलों के भुनाने के लाभ
(Advantages of Discounting of Bills)

बैंकों द्वारा बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि दिन-प्रतिदिन महत्वपूर्ण हो रही है। इसमें ऋणी को माल एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने में सुविधा होती है तथा माल का भुगतान सुरक्षित समझा जाता है। इसके विपरीत, बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि बैंकों के दृष्टिकोण से भी लाभप्रद समझी जाती है। इसमें बैंक को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं—

(1) सुरक्षा (Safety)—बिलों को भुनाकर अथवा क्रय करके वित्त प्रदान करने में बैंक के ऋण की सुरक्षा रहती है। इसमें बिल के आहर्ता की व्यक्तिगत जमानत पर ऋण प्रदान किया जाता है तथा बिल के देनदार (Drawee) की प्रत्याभूति होती है कि वह बिल का माँग पर अथवा देय तिथि पर भुगतान करेगा। बिल अनादृत होने की स्थिति में बैंक ऋणी (Borrower) का खाता डेबिट करके रुपया वसूल कर सकते हैं।

(2) पुनर्वित्त की सुविधा (Facility of Refinance)—बैंकों को बिल क्रय करने अथवा मितीकाटे पर भुगतान करने का महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि इस स्थिति में बैंक निश्चित बिलों की जमानत पर रिजर्व बैंक अथवा औद्योगिक विकास बैंक से पुनः भुनाकर ऋण प्राप्त कर सकते हैं। विस्तार के लिये देखिये अध्याय 3 रिजर्व बैंक की बिल भुनाने की नयी नीति, 1970)

(3) भुगतान की निश्चतता (Certainty of Payment)—इसमें बिलों के भुगतान की तिथि निश्चित होती है। इसमें भुगतान अल्पकालीन अवधि के पश्चात् देय होते हैं। बैंक अपने तरल कोषों का विनियोजन लाभकारी स्रोतों में कर सकते हैं। अतः बैंक अपने धन का कम जोखिम पर अधिक लाभ के लिये विनियोग करने में समर्थ होते हैं।

(4) लाभदायकता (Profitability)—बैंकों के दृष्टिकोण से बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की विधि लाभप्रद होती है। इसमें बैंक बिलों पर ब्याज एवं कमीशन वसूल करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंक अपने कोषों का अल्प-

कालीन प्रयोग लाभप्रद स्रोतों में करते है। बैंकों के दृष्टिकोण से यह पद्धति विशेष महत्वपूर्ण होती हैं।

(5) मूल्य स्थिरता (Price Stability) – बैंको को बिल क्रय करने अथवा भुनाने मे मूल्य सम्बन्धी जोखिम को वहन नहीं करना पड़ता है। इसके विपरीत, माल एवं अन्य प्रतिभूतियों की स्थिति मे प्रत्याभूतियों का मूल्य परिवर्तनशील होता है। बिलों की स्थिति मे इनका देय तिथि पर अदाकर्त्ता (Drawee) द्वारा निश्चित राशि का भुगतान किया जाता है। अतः बिलों का मूल्य निश्चित होता है।

अत: बैंकों द्वारा बिलों का क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। इसमें बैंक ऋणी की ऋण सीमा वार्षिक अवधि के आधार पर भी स्वीकृत करते हैं। परन्तु इसके आधार पर ऋण सीमा स्वीकृत करते समय बैंक ऋणी को ऋण क्षमता (Credit Worthiness) का विशेष ध्यान रखते हैं। इसमें बैंक दो प्रकार के बिल भुनाते हैं – प्रथम, अप्रलेखीय बिल (Clean Bills)। इसमे बैंक असुरक्षित ऋण प्रदान करते हैं, चूंकि इसमे ऋणी की व्यक्तिगत प्रत्याभूति पर ऋण प्रदान किया जाता है। द्वितीय, प्रलेखीय बिल (Documentary Bills) ये बैंक के सुरक्षित ऋण समझे जाते हैं। इसमें माल के हक विलेख भी बिल के साथ संलग्न होते हैं। बिल का अनादरण होने की स्थिति में बिलों से सलग्न हक विलेख से सम्बन्धित माल बेचकर, बैंक अपना रुपया वसूल कर सकते हैं। बैंकों को ऋण सीमा की स्वीकृति करते समय निम्नलिखित सावधानियां ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) बैंको को ऋण सीमा ऋणी की ऋण क्षमता तथा व्यवसाय की प्रकृति के आधार पर निर्धारित करनी चाहिये।

(2) बैंकों को अदाकर्त्ता (Drawee) की ऋण क्षमता का ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिये।

(3) बैंको को ऋण सीमा स्वीकृत करते समय ऋणी के व्यवसाय के आधार को ध्यान में रखना चाहिये।

(4) बैंक को ऋण सीमा की स्वीकृति विभिन्न चरणों में करनी चाहिये तथा इस अवधि के दौरान ऋण खाते का सावधानीपूर्वक अध्ययन करना चाहिये कि ऋणी के बिल अनादृत होने की क्या प्रकृति है? प्रारम्भिक अवस्था मे प्रलेखीय बिलों को क्रय करने की सुविधा ही उपलब्ध करवायी जानी चाहिये।

(5) प्रलेखीय विपत्र में मोटर ट्रांसपोर्ट की रसीद (Motor Transport Receipt) संलग्न होने की स्थिति मे बैंकों को विशेष सावधानी ध्यान मे रखनी चाहिये चूंकि, यह रसीद हक विलेख नहीं होती है तथा ट्रांसपोर्ट कम्पनी क्षतिपूरक बन्धक (Bond) के आधार पर माल की सुपुर्दगी प्रदान कर देती है।

अत: बैंक को बिलों को क्रय करके अथवा भुनाकर ऋण प्रदान करने की स्थिति में ऋणी की क्षमता एवं बिल से सम्बन्धित प्रलेखों की प्रकृति पर विशेष ध्यान

रखना चाहिये। (विस्तार के लिये देखिये, अध्याय 17—माल के हक विलेखों के विरुद्ध ऋण) ?

आहर्ता विपत्र एवं देनदार विपत्र की वित्त सुविधा
(Drawer Bill and Drawee Bill Finance Facility)

आहर्ता विपत्र की वित्त सुविधा के अन्तर्गत बैंक द्वारा माल के विक्रेता अथवा उत्पादक की ओर से लिखा गया विनिमयपत्र क्रय अथवा भुनाया जाता है। इसमें माल का उत्पादक अथवा विक्रेता माल के क्रेता पर एक विनिमयपत्र लिखता है जो माँग पर अथवा निश्चित अवधि के पश्चात् देय होता है। इन विपत्रों के साथ माल के अधिकार प्रलेख भी संलग्न हो सकते हैं। इस स्थिति में यह प्रलेखीय विनिमयपत्र समझा जाता है। इसमें बैंक विपत्र के आहर्ता की प्रार्थना पर विनिमयपत्र भुनाता अथवा क्रय करता है।

देनदार विपत्र की स्थिति में बैंक विपत्र के देनदार अथवा अदाकर्त्ता (Drawee) की ओर से विपत्र को स्वीकृत करके अथवा विपत्र का भुगतान करके ऋण सुविधा प्रदान करता है। इस स्थिति में माल के विक्रेता अथवा उत्पादक द्वारा माल के क्रेता पर विनिमयपत्र लिखा जाता है जिसे क्रेता का बैंकर क्रेता की ओर से स्वीकार करता है अथवा विपत्र का भुगतान करता है। इस स्थिति में विनिमयपत्र क्रेता के बैंक पर भी लिखा जा सकता है। इसमें क्रेता द्वारा क्रय किये गये माल का पृथक विवरण (Statement) बनाया जाता है तथा यह सुविधा नकद साख (Cash Credit) की ऋण सीमा के रूप में प्रदान की जाती है। देनदार विपत्र की स्थिति में बैंक द्वारा पूर्ण सावधानी से वित्त प्रदान किया जाता है, चूंकि इस स्थिति में दोहरी वित्त सुविधा का भय रहता है। यदि ऋणी द्वारा माल के स्टाक के विरुद्ध नकद साख की सुविधा प्राप्त की जाती है तथा ऋणी देनदार विपत्र के क्रय द्वारा भी ऋण सुविधा प्राप्त करता है तब ऋणी एक ही माल के विरुद्ध बैंक से पुनः ऋण प्राप्त कर सकता है। अतः बैंक द्वारा विपत्र को स्वीकार करके क्रय किये गये माल को कुल माल से पृथक करना चाहिये और शेष माल की जमानत के विरुद्ध नकद साख की ऋण सीमा का निर्धारण करना चाहिये।

देनदार विपत्रों को क्रय करके अथवा स्वीकार करके (सावधि विपत्र की स्थिति में) बैंक द्वारा वित्त प्रदान करने का महत्वपूर्ण लाभ यह होता है कि माल के विक्रेता को माल के मूल्य के भुगतान की सुरक्षा रहती है और बैंक को माल पर कब्जा प्राप्त होता है। इसमें बैंक का ऋण सुरक्षित समझा जाता है।

SOLVED PROBLEMS

1. मैसर्स शारदा टैक्सटाइल को 1 वर्ष के लिये 2 लाख रुपये की स्वच्छ बिल क्रय की स्वीकृति प्रदान की गई तथा 7 लाख रुपये के ऐसे माँग पर देय प्रपत्रीय बिल क्रय की स्वीकृति प्रदान की गई जिनके साथ रेलवे रसीद अथवा मोटर ट्रान्सपोर्ट रसीद हैं, जिसमें सूती माल की गाँठें हैं। अवधि समाप्त होने से पूर्व वे आप से शाखा

प्रबन्धक के रूप में ऋण सीमा को एक वर्ष के लिये - नवीनीकरण की प्रार्थना करते हैं। ऋण सीमा के नवीनीकरण से पूर्व आप किन-किन तत्वों को ध्यान में रखेंगे ?

M/s Sharda Textile have been sanctioned a clean Bills purchase limit of Rs 2 lakhs and a demand documentary Bills purchase limit of Rs. 7 lakhs for purchase of Bills accompanied by Railway Receipts or Motor Transport Receipts covering textile piece of goods for a period of one year. Before the expiry of the period, they approach you as Branch Manager for renewal of the said facilities for a period of one year.

What are the various points, you will consider before renewing the limits ?

हल—इस स्थिति मे ऋणी (Debtor) द्वारा ऋण सीमा के लिये नवीनीकरण की प्रार्थना की गई है। अतः इसमें ऋणी के पूर्व वर्ष के सव्यवहारों (Transactions) को ध्यान में रखकर ही ऋण सीमा का नवीनीकरण किया जायेगा। बैंक को नवीनीकरण से पूर्व निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान मे रखनी चाहियें—

(1) ऋणी द्वारा पूर्व वर्ष की अवधि में ऋण सीमा का कितना उपयोग किया गया है। ऋणी के खाते में औसत रूप में कितनी राशि के विपत्र क्रय किये गये हैं अथवा भुनाये गये हैं।

(2) विपत्र के अदाकर्त्ता (Drawee) का नाम तथा उसके हित मे देय विपत्र की राशि क्या है ? बैंक को निभाव विपत्र (Accommodation Bills) स्वीकार नहीं करने चाहियें।

(3) विपत्रों से सम्बन्धित हक विलेखों मे माल की प्रकृति तथा मात्रा के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

(4) पूर्व वर्ष की अवधि में अनादृत विपत्रों की राशि एवं अनादरण के कारणों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

(5) पूर्व वर्ष की अवधि मे भुगतान किये गये विपत्रों की राशि एवं भुगतान की अवधि क्या रही है ? इसके लिये विपत्रो के अदाकर्त्ताओं की ऋण क्षमता का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

(6) फर्म की पूर्व वर्ष की आर्थिक स्थिति एवं फर्म की लाभ-हानि क्षमता का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

(7) फर्म से प्राप्त आय की राशि कितनी है (विपत्रों को भुनाकर), इसका ज्ञान भी बैंक को प्राप्त करना चाहिये।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान मे रखते हुये विपत्रों को भुनाकर ऋण प्राप्त करने की ऋण सीमा का नवीनीकरण किया जाता है। बैंक को फर्म के अप्रपत्रीय विपत्रों

(Clean Bills) को क्रय की ऋण सीमा को जारी रखने के कारणों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये तथा इसे कम करने का प्रयास करना चाहिये। प्रपत्रीय विपत्रों (Documentary Bills) की स्थिति में प्रपत्रों की शुद्धता एवं माल के विवरण को ध्यान में रखते हुये ऋण सीमा का नवीनीकरण किया जाना चाहिये।

2. बम्बई की ओनेस्टी एण्ड कम्पनी 4,000 रुपये का विपत्र रेलवे रसीद के साथ आपकी हुबली शाखा पर संग्रहण के लिये भेजती है तथा विपत्र की राशि ड्राफ्ट द्वारा बम्बई भेजने की प्रार्थना करती है। विपत्र प्रस्तुत करने पर विपत्र का देनदार कहता है कि विपत्र 3,000 रुपये का होना चाहिये। विपत्र के लेखक को सूचना देने पर लेखक फर्म कहती है कि 3,000 रुपये पूर्ण भुगतान में प्राप्त कर लिये जायें। परन्तु पत्र की जाँच करने पर ज्ञात होता है कि पत्र पर उस व्यक्ति के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति ने हस्ताक्षर किये हैं जिसने बिल भेजने वाले पत्र पर हस्ताक्षर किये थे। माल पर विलम्ब शुल्क व्यय किये गये। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

Honesty & Company, Bombay have sent a bill for Rs. 4,000 accompanied by a Railway Receipt to your branch at Hubli for collection and remittance of proceeds by a draft on Bombay. On presentation of the bill, the drawee says that the bill should be for Rs. 3,000. On referring to the drawer, the drawer firm writes to you to accept Rs. 3,000 in full payment of the bill. However, on scrutinising the letter, it is found that the letter is signed as proprietor by some one other than the person who had signed the letter forwarding the bill. The goods are incurred demurrage. How would you deal with the above case ? *(C. A. I. I. B. Nov., 1981)*

हल—उपरोक्त स्थिति में बैंक द्वितीय व्यक्ति का विपत्र वसूली के लिये प्राप्त कर सकता है और विपत्र की राशि ड्राफ्ट द्वारा भेज सकता है। परन्तु व्यवहार में बैंक अन्य बैंक के माध्यम से प्राप्त विपत्रों का ही संग्रहण करता है। इसमें बैंक को परक्राम्य प्रपत्र अधिनियम की धारा 131 के अन्तर्गत संरक्षण प्राप्त नहीं होगा चूंकि विपत्र का संग्रहण ग्राहक के लिये नहीं किया गया है। बैंक द्वारा विपत्र के अंशतः भुगतान की प्राप्ति वैधानिक है चूंकि इसके लिये लेखक की स्वीकृति प्राप्त की गई है। परन्तु इस स्थिति में, विपत्र के लेखक के हस्ताक्षर विपत्र भेजने वाले व्यक्ति से पृथक् हैं। अतः बैंक को यह भुगतान स्वीकार नहीं करना चाहिये था। इसमें बैंक लापरवाही का दोषी माना जायेगा।

3. बैंक 90 दिन की अवधि का एक D/A विपत्र भुनाता है जिसे फर्म 'अ' द्वारा लिखा तथा विदेश में स्थित फर्म 'ब' द्वारा स्वीकार किया गया है। बाद की तिथि पर फर्म 'अ' बैंक से विपत्र वापिस प्राप्त करने का आवेदन करती है तथा विपत्र

का भुगतान देय तिथि पर बैंक व्यय व ब्याज सहित भुगतान करने की प्रार्थना करती है। इस स्थिति में आप क्या करेंगे ?

A 90 days D/A bill drawn by firm A and accepted by an upcountry drawee firm B is purchased discounted by a Bank. At a later date the firm appraoaches the Bank with a request to recall the bill and debit amount of the bill as also other Bank charges, interest etc. to drawer's (Firm A) account ON DUE DATE OF THE BILL. How will you deal with the situation ?

हल—इस स्थिति मे बैंक विपत्र की वापसी की मांग (recall) नहीं कर सकता है चूंकि ऐसा करने पर बैंक का देनदार (Drawee) के विरुद्ध अधिकार समाप्त हो जायेगा। परन्तु फर्म 'अ' द्वारा विपत्र का तुरन्त भुगतान करने पर (व्यय सहित) बैंक विपत्र की वापसी की मांग कर सकता है।

4. निम्नलिखित परिस्थितियों में बैंक की स्थिति बतलाइये—

Discuss the position of Bank in the following conditions—

(a) A sold 43 bales of cloth to B. The consignment of cloth was booked by road. A handed over to the Bank 24 bills relating to the said consignment, worth Rs 77,975·50 and the Motor Transport Receipts, alongwith Demand Drafts, duly endorsed in favour of the Bank. Bank accepted the documents and credited the sum of Rs. 77,975·50 to the account of A. On failure to realise amount of the bills, the Bank advised A that it was reversing the credit entry and debiting the amount of the bills to A's account. A protested and contended that the Bank had purchased the documents and had no such right as it claimed unless the documents or the goods covered by them were returned to A. In defending a suit filed by A against the Bank, the Bank contended that it did not purchase the bills, but had acted as a collecting agent merely earning commission and handling charges, that the bills were endorsed merely to facilitate collection, that the documents were sent to the drawee under instructions of A and that the Bank had no freedom to sell the goods covered by Transport Receipts. Discuss the validity of the Bank.

(C. A. I. I. B. Part II, May, 1983)

(b) A sent by Railway a consignment of goods worth Rs. 50,000 A Railway Receipt was issued by the Railway in his favour. A then obtained from the bank an advance of Rs. 20,000 and as

security endorsed the Railway Receipt in favour of the Bank and delivered it to the bank. On the failure of the Railway to deliver the goods at the destination, a suit is filed by the Bank against the Railway for Rs. 50,000 being the value of goods.

(*C. A. I. I. B. Part II. May, 1982*)

हल—(a) उपरोक्त स्थिति में बैंक का प्रतिवाद उचित नहीं है। बैंक ने विपत्रों का क्रय किया है चूंकि इसमें बैंक ने विपत्र की राशि तुरन्त ही ग्राहक के खाते में जमा कर दी है। बैंक मूल्य के लिये धारक समझा जायेगा। अतः यह बैंक का उत्तरदायित्व है कि वह विपत्र का मूल्य वसूल करे। यदि विपत्र का देनदार अथवा अदाकर्ता (Drawee) विपत्र का भुगतान करने में असमर्थ रहता है तब बैंक ग्राहक का खाता विपत्र वापिस करके ही डेबिट कर सकता है। इस निर्णय की पुष्टि देना बैंक बनाम एम० पी० नेशनल टैक्सटाइल कारपोरेशन लिमिटेड नामक विवाद[1] में की गयी है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि यदि भुनाये गये विपत्र ग्राहक के निर्देशानुसार भेजे जाते हैं तब विपत्रों का रुपया वसूल न होने की स्थिति में बैंक ग्राहक से रुपया वसूल कर सकता है तथा इसमें बैंक विपत्र लौटाने के लिये उत्तरदायी नहीं होता है।

(b) इस स्थिति में रेलवे रसीद पर बैंक के हित में पृष्ठांकन किया गया है। इसमें बैंक के हित में माल की गिरवी समझी जायेगी। बैंक रेलवे कम्पनी से माल के कुल मूल्य की वसूली करने का अधिकारी है। इस निर्णय की पुष्टि मूर्वी मर्केन्टाइल बैंक बनाम भारतीय संघ नामक विवाद[2] में की गयी है।

5. निम्नलिखित स्थितियों में बैंक की स्थिति बतलाइये—

State the Bank's position in the following cases—

Shree Ranganathan Chemical (P) Ltd. enjoys a Bills discounting facility upto Rs. 2 lacs for demand bills as well as 60 days sight bills drawn on various parties. The Company has not been doing well and they are experiencing financial difficulties. The following bills drawn on and accepted by various parties have been returned unpaid—

(a) A 60 days Bill for Rs. 50,000 drawn on and accepted by "A Chettiar and Sons". On sending legal notice to 'A Chettiar and Sons' you are informed that the bill was an accommodation bill and accepted only to enable the party to raise finance but A Chettiar and Sons had not received equivalent consideration in the form of

---

1. Dena Bank Vs. M. P. National Textile Corp. Ltd.
2. Moori Mercantile Bank Vs. Union of India (1965)

goods or deposits from the drawers. Hence they are not liable on the bill.

(b) In another case 60 days bill for Rs. 35,000 drawn on and accepted by M/s. Automobile Parts Manufacturing Co. Ltd., had remained unpaid. In response to your inquiry, you are informed that the drawers have already settled the account with the Company by accepting payment of Rs. 20,000 and therefore drawee Company is not liable on the bill. *(C. A. I. I. B. May., 1978)*

हल—उपरोक्त स्थितियों में विपत्रों का आहर्ता (Drawer) अर्थात् रसायन कैमिकल्स (प्रा०) लिमिटेड कम्पनी विपत्र के अनादरण के लिये उत्तरदायी है। इसमें बैंक द्वारा कम्पनी को विपत्र भुनाकर ऋण सुविधा प्रदान की गयी है। बैंक और कम्पनी के बीच अनुबन्ध मान्य है। विपत्र के अदाकर्ता (Drawee) द्वारा विपत्र का भुगतान न किये जाने की स्थिति में बैंक विपत्र के आहर्ता से रुपया वसूल करने का अधिकारी होता है। इसके अतिरिक्त दोनों ही परिस्थितियों में बैंक विपत्र के अदाकर्ता (Drawee) से भी रुपया वसूल करने का अधिकारी है चूंकि इन परिस्थितियों में बैंक ने विपत्रों का क्रय किया है और वह मूल्य के लिये धारक के रूप में रुपया वसूल कर सकता है। निभाव विपत्र की स्थिति में विपत्र का अदाकर्ता विपत्र के लेखक से रुपया वसूल करने का अधिकारी होता है।

6. ABC सिन्थेटिक लि० अपनी नकद साख सुविधा 100 लाख रुपये से 150 लाख रुपये बढ़ाने की प्रार्थना करते हैं। वे 30 लाख रुपये के अतिरिक्त ऋण सीमा माल क्रय के लिये प्रार्थना करते हैं जिसमें 45 दिन की अवधि का बिल साख पत्र में लिखा जायेगा। कम्पनी ठीक प्रकार नहीं चल रही है परन्तु आप सहायता करना चाहते हैं चूंकि कम्पनी आपकी पुरानी ग्राहक है। पक्षकार से बात करते समय आपके सहायक द्वारा सूचित किया गया कि इसमें दोहरी वित्त सुविधा का भय है चूंकि विपत्रों द्वारा क्रय किया गया माल प्राधोयन विवरण में सम्मिलित हो सकता है। विवेचना कीजिये कि क्या यह भय उचित है? यदि हाँ, तब आप दोहरी वित्त सुविधा से बचने के लिये क्या-क्या सावधानियां ध्यान में रखेंगे?

ABC Synthetics Ltd. request you for increasing their Cash Credit limit from Rs. 100 lacs to Rs. 150 lacs. They also request for sanction of a separate limit of Rs. 30 lacs for purchase of raw materials under D/A letter of credit under which drafts will be drawn payable 45 days after sight. The company is not doing well but as it is your old customer, you would like to assist it. However, during discussion with the party, it is pointed out by one of your assistants that there is risk of double financing as

under letters of credit will be included in the hypothecation statement and party will draw against the same. Discuss if this fear is correct and if so, what precautions you would like to take for avoiding double finance. *(C. A. I. I. B. Part II, Oct., 1985)*

हल—उपरोक्त स्थिति में दोहरी वित्त सुविधा का भय पूर्णतः उचित है चूंकि इसमें कम्पनी देनदार बिल (Drawee Bill) की जमानत के विरुद्ध स्टाक क्रय कर सकती है तथा यह स्टाक कम्पनी के स्टाक विवरण में सम्मिलित किया जायेगा जिसके विरुद्ध कम्पनी पुनः नकद साख की सुविधा प्राप्त कर सकती है। इस स्थिति में बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) ऋणी द्वारा स्टाक विवरण बनाते समय पृथक-पृथक विवरण बनाया जाना चाहिये जिसमें विपत्रों की स्वीकृति के अधीन क्रय माल का पृथक विवरण बनाना चाहिए तथा नकद माल क्रय एवं उधार माल क्रय का पृथक विवरण बनाना चाहिए।

(2) यदि ऋणी द्वारा स्टाक विवरण में माल का विभक्तिकरण (Division) नहीं किया गया है तब स्टाक से लेनदार (Creditors) की राशि घटाकर नकद क्रय की राशि ज्ञात की जा सकती है।

(3) बैंक द्वारा नकद साख की ऋण सीमा का निर्धारण करते समय कुल नकद स्टाक एवं विपत्रों के विरुद्ध क्रय के स्टाक से निर्धारित मार्जिन घटा देना चाहिये एवं इसके पश्चात् उस स्टाक को घटा देना चाहिये जो विपत्रों को स्वीकार करके क्रय किया गया है। इस प्रकार शेष राशि नकद साख की अधिकतम ऋण सीमा होगी। उदाहरणार्थ—उपरोक्त समस्या में यदि कम्पनी के स्टाक विवरण में 25 लाख का माल विपत्रों की स्वीकृति के विरुद्ध क्रय किया गया है तथा 300 लाख का माल नकद क्रय किया गया है जिस पर बैंक को 40 प्रतिशत मार्जिन रखना है। इस स्थिति में नकद साख की ऋण सीमा निम्नलिखित विधि से ज्ञात की जायेगी—

	रुपये
कुल माल क्रय की राशि	325 लाख
(घटाया) मार्जिन 40 प्रतिशत	130 लाख
कुल ऋण सीमा	195 लाख
(घटाया) विपत्रों की स्वीकृति के विरुद्ध माल	25 लाख
माल के विरुद्ध नकद साख की ऋण सीमा	170 लाख

परन्तु ऋण स्वीकृति की अधिकतम सीमा 150 लाख हो सकती है।

(4) बैंक को क्रय किये गये माल पर अपना प्रभार निर्मित करना चाहिये।

अतः उपरोक्त सावधानियों को ध्यान में रखते हुये दोहरी वित्त सुविधा के भय को समाप्त किया जा सकता है।

प्रश्न
(Questions)

1. विनिमय पत्र को भुनाने से आप क्या समझते हैं ? एक बैंक इसमें अपने कोष क्यों विनियोजित करता है ?

What do you mean by Discounting of Bill of Exchange ? Why does a banker invest his funds in them ?

2. आहर्ता बिल एवं देनदार बिल की वित्त सुविधा पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

Write a short note on Drawer Bill and Drawee Bill Finance.
(C. A. I. I. B. Nov., 1983; Oct, 1985)

3. विनिमय पत्रों को भुनाने एवं क्रय करने में क्या अन्तर है ?

What is the difference between discounting and purchasing of Bill of Exchange.

□□□

21 निर्यात वित्त सुविधा [EXPORT CREDIT]

बैंक अपने ग्राहकों को विभिन्न प्रकार की सेवायें उपलब्ध कराते हैं। इसमें निर्यात वित्त की सुविधा विशेष महत्वपूर्ण होती है। इसके अन्तर्गत बैंक माल के आयात-निर्यात के उद्देश्य से वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवाते हैं।

साखपत्र का आशय एवं महत्व
(Meaning and Importance of Letter of Credit)

आज के आधुनिक युग में व्यवसाय का स्वरूप राष्ट्रीय सीमाओं को लांघ कर अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं में प्रवेश कर चुका है। व्यवसाय का यह विराट स्वरूप आधुनिक बैंकिंग पद्धति के महत्वपूर्ण योगदान से सम्भव हो सका है। आज के युग में एक वस्तु का उत्पादक एक ही स्थान पर बैठकर अपना माल विभिन्न राष्ट्रों में बेच सकता है। विदेशी व्यापार में सबसे महत्वपूर्ण समस्या वित्त प्रबन्धन की होती है। माल लदान करने के पश्चात् माल से सम्बन्धित अधिकार प्रपत्र एवं माल के मूल्य के विनिमय विपत्र माल के क्रेता के पास भेजे जाते हैं। विनिमय-पत्र के अन्तर्गत माल के अधिकार प्रपत्रों की सुपुर्दगी विपत्र की स्वीकृति (Acceptance) अथवा भुगतान (Payment) पर की जाती है। ये प्रलेख माल के विक्रेता द्वारा अपने मध्यस्थ के माध्यम से भेजे जाते हैं तथा मध्यस्थ का कार्य आधुनिक युग में व्यापारिक बैंक अथवा अन्य एजेन्सियों द्वारा किया जाता है। बैंक इन विपत्रों अथवा प्रलेखों को संग्रहण (Collection) हेतु अथवा क्रय करके अथवा भुनाकर (Purchase or Discount) प्राप्त करते हैं। बैंक द्वारा उन विपत्रों का क्रय किया जाता है जिनमें विनिमय-पत्र का भुगतान माँग पर देय होता है तथा उन विपत्रों को भुनाया जाता है जिन विपत्रों का भुगतान निश्चित अवधि के पश्चात् देय होता है। इस अवधि के लिये बैंक विपत्र की राशि पर ब्याज वसूल करते हैं। बैंक द्वारा उन्हीं विपत्रों को क्रय अथवा भुनाया जाता है जिसमें क्रेता के सम्बन्ध में बैंक को पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। यदि बैंक को क्रेता के सम्बन्ध में कोई जानकारी प्राप्त नहीं है तब माल के निर्यातक द्वारा आयातकर्त्ता से साख पत्र (Letter of Credit) की माँग की जाती है जिसमें आयातकर्त्ता का बैंक निर्यातक के हित में निश्चित धनराशि के विपत्र भुगतान करने अथवा स्वीकार करने का दायित्व स्वीकार करता है।

साख पत्र में माल का नाम, मात्रा एवं अन्य आवश्यक विवरण होते हैं। साख-पत्र जिस व्यक्ति के नाम में जारी किया जाता है उसे हितग्राही (Beneficiary)

कहा जाता है। यह व्यक्ति माल का निर्यातक होता है। साख-पत्र जारी करने के पश्चात् जारी करने वाला बैंक निर्यातक के देश में स्थित अपनी शाखा अथवा प्रतिनिधि को साख-पत्र भेजता है जिसे सूचित करने वाला बैंक (Advising Bank) कहा जाता है। निर्यातक द्वारा अपने बैंक के माध्यम से भेजे गये माल के सम्बन्ध में विनिमय-पत्र का परक्रामण किया जाता है जिसे परक्रामण करने वाला बैंक (Negotiating Bank) कहा जाता है। सामान्यतः परक्रामण करने वाला बैंक तथा सूचित करने वाला बैंक एक ही बैंक होता है। परन्तु कुछ दशाओं में ये बैंक पृथक्-पृथक् हो सकते हैं। परक्रामण करने वाला बैंक प्रलेखों का गहन अध्ययन करता है तथा ये प्रलेख (Documents) साख-पत्रों की शर्तों के अनुरूप होने चाहियें। इसके पश्चात् परक्रामण करने वाला बैंक निर्यातक को साख-पत्र की सीमा तक भुगतान कर देता है और प्रपत्रों को साख पत्र जारी करने वाले बैंक के पास भेज देता है जहाँ पर आयातक प्रपत्रों का भुगतान करके अपना माल प्राप्त कर सकता है। यदि साख-पत्र जारी करने वाले बैंक द्वारा प्रपत्रों तथा साख-पत्र की शर्तों में कोई अनियमितता (Discrepancy) अथवा अन्तर पाया जाता है तब वह तुरन्त तार द्वारा परक्रामण करने वाले बैंक को सूचित करता है और माल के आयातक से सम्पर्क स्थापित करके उसका पुष्टिकरण प्राप्त करता है। पुष्टिकरण प्राप्त न होने की स्थिति में जारी करने वाला बैंक प्रपत्रों को परक्रामण करने वाले बैंक के पास भेज देता है।

कुछ दशाओं में परक्रामण करने वाला बैंक ही माल के प्रपत्रों तथा साख-पत्र की शर्तों में अन्तर पाता है। इस स्थिति में निर्यातक को विपत्रों का भुगतान नहीं करना चाहिये अन्यथा परक्रामण करने वाला बैंक स्वयं उत्तरदायी होता है। इस स्थिति में निर्यातक के जोखिम पर विपत्रों का पराक्रमण किया जा सकता है तथा निर्यातक को सुरक्षित भुगतान (Payment Under Reserve) अथवा उसकी प्रत्याभूति पर भुगतान किया जाता है। अतः परक्रामण करने वाले बैंक को विशेष सावधानी बरतनी चाहिये और माल के प्रपत्रों का भुगतान उसी स्थिति में करना चाहिये जबकि माल का निर्यात साख-पत्रों की शर्तों के अनुरूप किया गया है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि बैंक प्रपत्रों में व्यवहार करता है, प्रपत्रों से सम्बन्धित माल में नहीं। इस निर्णय की पुष्टि रोशनलाल आनन्द व अन्य बनाम मर्केन्टाइल बैंक लि० नामक विवाद[1] में की गयी है। इसके अतिरिक्त प्रपत्रीय साख के लिये समान रीतियाँ एवं व्यवहार (Uniform Customs and Practice for Documentary Credits) संहिता (Code) के अनुच्छेद (Articale) 8 में इस आशय की पुष्टि की गई है कि प्रपत्रीय साख से सम्बन्धित समस्त पक्षकार प्रपत्रों में व्यवहार करते हैं, माल में नहीं।

1. Roshanlal Anand and others Vs. Mercantile Bank Ltd.

व्यापारिक साख-पत्र जारी करने के अनेक महत्व हैं। इसमें निर्यातक को भुगतान की सुरक्षा रहती है तथा भुगतान से सम्बन्धित जोखिम को वहन नहीं करना पड़ता है। निर्यातक के विनिमय-पत्र तुरन्त परक्रामित किये जाते हैं जिससे उसको भुगतान शीघ्र ही प्राप्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त, पैकिंग साख (Packing Credit) में निर्यातक को माल तैयार करने के लिये पूर्व भुगतान की सुविधा भी प्राप्त रहती है अतः व्यापारिक साख-पत्र का विदेशी व्यापार में अमूल्य योगदान है।

साख पत्र जारी करने वाले बैंक का दायित्व
(Liabilities of the Issuing Bank)

साख-पत्र जारी करने वाला बैंक साख-पत्र के हितग्राही द्वारा लिखे गये विपत्रों का भुगतान करने के लिये बाध्य होता है। यह दायित्व जारी करने वाले बैंक तथा हितग्राही के बीच हुए अनुवन्ध के कारण उत्पन्न होता है। यह अनुवन्ध निर्यातक तथा आयातक के बीच अनुवन्ध से पृथक् होता है। यदि आयातक एवं निर्यातक के बीच हुआ अनुवन्ध समाप्त होता है तब बैंक एवं निर्यातक (हितग्राही) के बीच हुए अनुवन्ध पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इस निर्णय की पुष्टि तारापोर एण्ड कं० बनाम टेक्टर एक्सपोर्ट, मोस्को व अन्य नामक विवाद[1] में की गयी है। इसमें साख-पत्र को विक्रय के अनुवन्ध से पृथक् समझा गया है तथा माल के क्रेता को माल खराब होने की स्थिति में, साख-पत्र में व्यवहार करने वाले विक्रेता के विरुद्ध साख पत्र का प्रयोग करने के लिये प्रतिवन्धित करने का अधिकार नहीं दिया गया है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि साख पत्र जारी करने वाला बैंक प्रपत्रों में व्यवहार करता है, उसका माल से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। अतः माल के निर्यातक अथवा विक्रेता साख-पत्र की शर्तों को पूर्ण करने पर बैंक का यह प्रमुख दायित्व है कि वह उसे भुगतान करे। इस स्थिति में माल चोरी होने अथवा खोने का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इस निर्णय की पुष्टि लक्ष्मी कामर्शियल बैंक लि० बनाम हीरा लाल व अन्य नामक विवाद[2] में की गयी है इसमें विक्रेता द्वारा साख-पत्र की समस्त शर्तें पूर्ण करने पर बैंक को भुगतान के लिये पूर्ण उत्तरदायी बतलाया गया है। यदि साख-पत्र में जारी किये गये प्रपत्र अस्पष्ट (Ambiguous) हैं तब बैंक द्वारा उचित सावधानी रखते हुए विपत्र का भुगतान किये जाने पर बैंक लापरवाही का दोषी नहीं होता है।[3]

अतः साख पत्र जारी करने वाले बैंक का दायित्व अत्यन्त विस्तृत होता है। उसे साख पत्र की शर्तों के आधीन ही विपत्रों का भुगतान करना चाहिये।

साख पत्र में विपत्रों का परक्रामण करते समय **परक्रामण करने वाले बैंक को निम्नलिखित सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें—**

1. Tarapore & Co. Vs. Tractor Export, Moscow and Others.
2. Lakshmi Commercial Bank Ltd Vs. Hira Lal & Sons.
3. Commercial Banking Co. of Sydney Ltd. Vs. Jalsard Pvt. Ltd.

(1) साख पत्र में विपत्रों का परक्रामण निर्धारित समयावधि के अन्तर्गत किया जाना चाहिए।

(2) विपत्रों का परक्रामण निर्धारित मूल्य के लिये किया जाना चाहिए। यदि साख पत्र में मूल्य के सम्बन्ध में अनुमानित मूल्य दर्शाया गया है तब इस मूल्य के 10 प्रतिशत कम या अधिक के विपत्र स्वीकार किये जा सकते हैं। इसी प्रकार माल की मात्रा के सम्बन्ध मे 3 प्रतिशत कम या अधिक की मात्रा के विपत्र स्वीकार किये जा सकते हैं।

(3) परक्रामण करने वाले बैंक को साख पत्र की शुद्धता का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। शुद्धता की जाँच करने के लिये बैंक अपने पास उपलब्ध नमूने के हस्ताक्षर से साख पत्र भेजने वाले बैंक के साख पत्र पर हस्ताक्षर की तुलना कर सकता है। परन्तु यदि साख पत्र जारी करने वाला बैंक अन्य कोई बैंक है तब निर्यातक की विश्वसनीयता पर ही विश्वास किया जाता है।

(4) विपत्रों का परक्रामण करते समय समस्त आवश्यक प्रलेख संलग्न होने चाहियें। उदाहरणार्थ—माल का बीजक, विनिमय विपत्र, लदान रसीद, जहाजी बीमा पॉलिसी, उद्गम का प्रमाण-पत्र, पैंकिंग सूची आदि।

(5) साख पत्र में कोई परिवर्तन अथवा विशेष निर्देश को ध्यान मे रखना चाहिए।

(6) अंशत: माल का लदान (Shipment) उसी स्थिति मे स्वीकार किया जाना चाहिए जबकि साख पत्र मे स्पष्टत: अस्वीकार नही किया गया है।

अत: विपत्रो का परक्रामण करते समय बैंक को विशेष सावधानियाँ ध्यान में रखनी चाहियें। विपत्रों का परक्रामण करते समय बैंक के दायित्व अत्यधिक विस्तृत होते हैं।

विभिन्न प्रकार के साख-पत्र
(Different Type of Letter of Credit)

बैंक अपने ग्राहकों की वित्तीय सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से साखपत्र जारी करते हैं। इसके अन्तर्गत बैंक निर्यातक के हित में साख पत्र जारी करते हैं जिसमे निर्यातक द्वारा माल लदान करने के पश्चात्, उसे माल का मूल्य अदा कर दिया जाता है। बैंक ग्राहकों को विभिन्न प्रकार के साख पत्र जारी करते हैं। इन साख पत्रों में निम्नलिखित साख पत्र प्रमुख हैं—

लदान से पूर्व एवं लदान के पश्चात् वित्त सुविधा
(Preshipment.and Postshipment Finace Facility)

लदान से पूर्व वित्त सुविधा को पैंकिंग साख (Packing Credit) समझा जाता है। इसमे माल का निर्यातक (Importer) माल के आयातक (Exporter) ... को माल तैयार करवाने के उद्देश्य से ऋण सुविधायें उपलब्ध निर्यातक को माल निर्यात करने मे जोखिम कम रहता है

रहती है। इसमें साख पत्र जारी करने वाला बैंक (Issuing Bank) निर्यातक के विल स्वीकार करता है और उन्हें आयातक को भेजता है। साख पत्र में शर्तें लिखित एवं स्पष्ट होती हैं और वैंक उन्हीं के अनुरूप कार्य करता है। पैंकिंग साख के अन्तर्गत निर्यातक को माल निर्मित एवं तैयार करने के उद्देश्य से माल निर्यात करने से पूर्व ही वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवायी जाती हैं। यह सुविधा उसी स्थिति में प्रदान की जाती हैं जवकि आयातकर्त्ता द्वारा साख-पत्र जारी करने वाले वैंक को यह निर्देश दिया जाता है। इसमें यह। निर्देश (Clause) लाल स्याही (Red Ink) में लिखा जाता है। अतः इसे महत्त्वपूर्ण खड वाली साख पत्र (Red Clause Letter of Credit) भी कहा जाता है। इस साख पत्र की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

(1) यह सुविधा माल के निर्यातक को माल तैयार करने के उद्देश्य से दी जाती है।

(2) यह सुविधा अधिकतम 180 दिन के लिये प्रदान की जा सकती है। यह अवधि रिजर्व वैंक की पूर्व अनुमति से वढ़ायी जा सकती है।

(3) इस पर रियायती ब्याज दर से ब्याज वसूल किया जाता है। वर्तमान समय में ब्याज दर **12 प्रतिशत** से **14 प्रतिशत** तक है।

(4) साख पत्र की राशि निर्यात के आदेश के अनुसार निश्चित होती है।

(5) यह सुविधा माल निर्यात करने पर समाप्त हो जाती है।

(6) यह सुविधा माल पर गिरवी अथवा प्राधीयन रखकर अथवा तृतीय पक्षकार की जमानत पर प्रदान की जा सकती है।

लदान के पश्चात् वित्त सुविधा के अन्तर्गत माल के निर्यातक को माल लदान करने के पश्चात् माल की राशि वसूल होने तक वित्तीय सुविधा उपलब्ध करवायी जाती है। इसके अन्तर्गत माल का निर्यातक साख पत्र की शर्तों के अधीन माल के प्रपत्र प्रस्तुत करने पर तुरन्त भुगतान प्राप्त कर लेता है। यदि आयातक द्वारा साख पत्र की सुविधा प्रदान नहीं की जाती है तव माल का निर्यातक माल के प्रपत्रों को अपने वैंक के माध्यम से वसूली के लिये भेजता है अथवा वैंक उन प्रपत्रों का क्रय करता है।

प्रतिबन्धित साख पत्र
(Restricted Letter of Credit)

प्रतिवन्धित साख पत्र के अन्तर्गत जारी करने वाला वैंक निर्यातक को यह निर्देश देता है कि अमुक साख पत्र में विपत्रों का परक्रामण एक विशिष्ट वैंक के माध्यम से ही किया जायेगा। यदि निर्यातक द्वारा किसी अन्य बैंक के माध्यम से विपत्रों का परक्रामण किया जाता है तव यह साख पत्र व्यर्थ समझी जाती है। अतः प्रतिवन्धित साख पत्र में परक्रामण करने वाले वैंक के सम्बन्ध में साख पत्र में प्रतिबन्ध लगाया जाता है। यदि साख पत्र में ऐसा प्रतिवन्ध नहीं लगया गया है तव उसे खुली साख पत्र (Open Letter of Credit) समझा जाता है।

पुष्टिकृत एवं अपुष्टिकृत साख पत्र
(Confirmed and Unconfirmed Letter of Credit)

पुष्टिकृत साख पत्र में जारी करने वाले बैंक के अतिरिक्त सूचना देने वाला बैंक (Advising Bank) साख पत्र के भुगतान या स्वीकृति की पुष्टि करता है। इस स्थिति में साख पत्र पर दो बैंको का दायित्व हो जाता है। वह बैंक जो साख पत्र पर पुष्टिकरण कर देता है उसे पुष्टिकर्ता बैंक (Confirming Bank) कहा जाता है। यह पुष्टिकरण अप्रतिसंहार्य साख पत्र (Irrevocable Letter of Credit) की स्थिति में ही दिया जाता है, चूंकि इसमें साख पत्र का प्रतिसंहार (Revocation) हितग्राही की सहमति से ही हो सकता है।

यदि साख पत्र में सूचना देने वाले बैंक का पुष्टिकरण प्राप्त नहीं होता है तब उसे अपुष्टिकृत साख पत्र (Unconfirmed Letter of Credit) समझा जाता है।

परिक्रामी अथवा आवर्ती साख पत्र
(Revolving Letter of Credit)

इसमें साख पत्र की निर्धारित सीमा तक एक समय में अनेक विपत्र स्वीकार किये जा सकते हैं। यदि किसी विपत्र का भुगतान आयातक द्वारा कर दिया जाता है तब उतनी राशि के पुनः विपत्र स्वीकार किये जा सकते हैं। अतः इसमें साख पत्र में अधिकतम सीमा निर्धारित होती है जिसके अधीन कितने ही विपत्र स्वीकार किये जा सकते हैं।

अन्तरणीय साख पत्र
(Transferable Letter of Credit)

यह साख पत्र उन निर्यातको के लिये लाभप्रद होती है जो माल का स्वयं उत्पादन नहीं करते हैं वरन् वे माल अन्य निर्माताओं से क्रय करके सुपुर्दगी करते हैं। इस स्थिति में निर्यातक अन्तरणीय साख पत्र जारी करने की प्रार्थना करते हैं। इसमें निर्यातक अपने हित में जारी साख पत्र का अन्तरण अन्य व्यक्ति को कर देता है जिसमें वह अन्तरिती साख पत्र में विपत्र का भुगतान प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है। यह अन्तरण आंशिक राशि के लिये भी किया जा सकता है तथा अन्तरण अनेक व्यक्तियों को किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में यह तथ्य विशेष महत्वपूर्ण है कि साख पत्र का अन्तरिती (Transferee) पुनः साख पत्र का अन्तरण करने का अधिकारी नहीं होता है।

इसमें साख पत्र व्यापारी (Merchant) के हित में खोली जाती है जो द्वितीय हितग्राही को अन्तरित कर देता है। दूसरा हितग्राही वह व्यक्ति होता है जो माल का मूल प्रेषक (Original Supplier) होता है। बैंक को अन्तरणीय साख पत्र में व्यवहार करते समय विशेष सावधानी ध्यान में रखनी चाहिए कि अन्तरण का

अधिकार स्पष्ट हो तथा सम्पूर्ण साख पत्र की शर्तों के साथ अन्तरण का अधिकार प्रयोग किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त वैंक को माल के वास्तविक क्रेता को अन्तरिती (Transferee) का नाम नहीं वतलाना चाहिये अन्यथा साख पत्र के अन्तरणकर्त्ता के लाभ पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है।

साख पत्र के विरुद्ध साखपत्र (Back to Back Letter of Credit)

इसमें साख पत्र का हितग्राही साख पत्र खोलने अथवा पुष्टिकरण करने वाले वैंक से अथवा अपने वैंक से अपने हित में जारी साख पत्र की गारन्टी पर माल के मूल प्रेषक के हित में साख पत्र खोलने की प्रार्थना करता है। इसमें प्रथम साख पत्र की जमानत के आधार पर दूसरी साख पत्र खोली जाती है तथा खोलने वाला वैंक प्रथम साख पत्र जमानत के स्वरूप अपने पास सुरक्षित जमा रखता है। इस स्थिति में वैंक को निम्नलिखित सावधानियां ध्यान में रखनी चाहियें—

(1) वैंक को केवल अप्रतिसंहार्य साख पत्र (Irrevocable Letter of Credit) की जमानत पर दूसरी साख पत्र खोलनी चाहिये।

(2) वैंक द्वारा दूसरी साख पत्र खोलते समय पर्याप्त मार्जिन रखा जाना चाहिये अर्थात् दूसरी साख पत्र की राशि प्रथम साख पत्र से कम होनी चाहिये।

(3) वैंक को प्रथम साख पत्र की शर्तों को ध्यान में रखते हुये ही दूसरी साख पत्र में आवश्यक प्रपत्रों की माँग करनी चाहिये।

(4) वैंक को दूसरा साख पत्र प्रथम साख पत्र के समाप्त होने से पूर्व की अवधि के लिये खोलनी चाहिये।

(5) वैंक को दूसरी साख पत्र में प्राप्त प्रपत्रों का गहन अध्ययन करना चाहिए कि वे मूल शर्तों को पूर्णतः सन्तुष्ट करते हैं।

स्थगित भुगतान गारन्टी (Deferred Payment Guarantee)

यह योजना वर्ष 1965 में भारतीय औद्योगिक विकास वैंक (IDBI) द्वारा स्वदेशी तकनीक को वढ़ावा देने के उद्देश्य से लागू की गयी है। इसके अन्तर्गत पूंजीगत एवं इन्जीनियरिंग मशीनरी एवं औजारों के उत्पादकों को निर्यात के लिये प्रयोत्साहित करने के उद्देश्य से लम्बी अवधि के लिये ऋण सुविधा प्रदान की जाती है। इसमें ऋण 3 वर्ष से लेकर 5 वर्ष की अवधि के लिये उपलब्ध करवाया जाता है। यह अवधि रिजर्व वैंक की पूर्वानुमति से 7 वर्ष तक वढ़ायी जा सकती है तथा विशेष परिस्थितियों में यह अवधि 10 वर्ष तक हो सकती है। पूंजीगत वस्तुओं (Capital Goods) में जेनरेटर, ट्रान्सफॉर्मर, गैस प्लाण्ट, रेल के डिव्वे (Railway Wagons) आदि मशीनरी सम्मिलित की जाती हैं। इसके अन्तर्गत आयातक का वैंक साख पत्र खोलता है अथवा स्थगित भुगतान की गारण्टी देता है। इसमें निर्यात किये

गये माल के मूल्य का एक निश्चित भाग एकमुश्त (Lump Sum) प्राप्त होता है तथा शेष भाग छमाही अथवा वार्षिक बराबर किश्तों में देय होता है जिसके लिये विनिमयपत्र अथवा प्रतिज्ञापत्र लिखे जाते हैं एवं उनका भुगतान किश्त की देय तिथि पर देय होता है। निर्यातक का बैंक इन प्रतिज्ञापत्रों अथवा विनिमयपत्रों को क्रय करके निर्यातक को वित्त सुविधा प्रदान करता है अर्थात् सावधि ऋण प्रदान करता है जिसका भुगतान किश्तों में देय होता है। यदि अनुबन्ध की राशि अत्यधिक बड़ी है तब बैंक भारतीय औद्योगिक विकास बैंक के साथ मिलकर संयुक्त रूप में ऋण प्रदान करते हैं। इसमें क्रेता के साथ अनुबन्ध की एक प्रमाणित प्रति रिजर्व बैंक के पास भेजी जाती है जिसमें कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों का विवरण होता है। उदाहरणार्थ—अनुबन्ध को मूल शर्तों में क्या परिवर्तन हुआ है अथवा अनुबन्ध में कोई ऐसी शर्त है जिसके लिये रिजर्व बैंक की पूर्वानुमति आवश्यक होती है। इसके अतिरिक्त, औद्योगिक विकास बैंक से प्रत्यक्ष ऋण सुविधा अथवा पुनर्वित्त सुविधा प्राप्त की गयी है अथवा नहीं तथा आयातक बैंक द्वारा गारण्टी दी गयी है अथवा साख पत्र खोली गयी है, इस सम्बन्ध में भी रिजर्व बैंक को सूचित किया जाता है।

निर्यात साख एवं गारण्टी निगम
(Export Credit and Guarantee Corporation)

निर्यात साख एवं गारण्टी निगम की स्थापना वर्ष 1954 में की गयी। इसकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य विदेशी व्यापार में संवर्द्धन करना था। निगम वित्त प्रदान करने वाले बैंकों को गारण्टी प्रदान करती है तथा निर्यातकों का जोखिम बीमित करती है। निगम व्यापारिक एवं राजनीतिक जोखिम बीमित करती है परन्तु निगम माल की किस्म एवं प्रकृति, विनिमय-दर में परिवर्तन, क्रेता द्वारा माल स्वीकार न करना अथवा क्रेता को माल आयात करने की आज्ञा प्राप्त न होना आदि जोखिमों को बीमित नहीं करती है। निगम बैंकों द्वारा प्रदत्त माल लदान से पूर्व एवं बाद (Pre and Post Shipment) की वित्त सुविधाओं के प्रति प्रत्याभूति प्रदान करने का कार्य करती है जिससे बैंकों को ऋण सुविधायें प्रदान करने में सरलता होती है। इसके अतिरिक्त, निगम विशेष नीतियों की घोषणा करती है जिसमें विपणन विकास नीतियाँ, विदेशी विनिमय सुविधायें एवं निर्यातक अथवा निर्माणकर्ता को साख बीमा नीतियाँ आदि सम्मिलित की जाती हैं।

निगम द्वारा जारी पालिसियों में प्रमापित पालिसी, वित्तीय गारण्टी तथा विशेष पालिसी सम्मिलित की जाती हैं। प्रमापित पालिसी में व्यापारिक एवं राजनीतिक जोखिम वहन किये जाते हैं। व्यापारिक जोखिम (Commercial Risks) में निम्नलिखित जोखिम सम्मिलित होते हैं:—

(1) क्रेता द्वारा माल स्वीकार न करने पर,

(2) क्रेता के दिवालिया होने पर,

(3) क्रेता द्वारा देय तिथि से 6 माह के भीतर भुगतान करने पर।

इसके अतिरिक्त, राजनीतिक जोखिम (Political Risks) में निम्नलिखित जोखिम सम्मिलित किये जाते हैं—

(1) क्रेता के देश में युद्ध, क्रान्ति अथवा सिविल दंगे होने पर उत्पन्न जोखिम,

(2) क्रेता के देश से धन के आगमन पर रोक अथवा अन्य कोई सरकारी कार्य जिससे भुगतान में देरी हो,

(3) क्रेता के देश में वर्तमान आयात लाइसेन्स समाप्त होना अथवा नये लाइसेन्स जारी करने पर रोक,

(4) भारतवर्ष में निर्यात लाइसेन्स जारी करने पर रोक अथवा निर्यात लाइसेन्स समाप्त करना,

(5) यातायात अथवा वीमा व्यय में वह वृद्धि जो मार्ग में बाधा उत्पन्न होने से हुई है तथा जिसे क्रेता से वसूल नहीं किया जा सकता है,

(6) भारतवर्ष से बाहर अन्य कोई हानि जिसका वीमा नहीं किया गया है तथा जो निर्यातक अथवा क्रेता के नियन्त्रण से बाहर होती है।

निगम द्वारा व्यापारिक एवं राजनीतिक जोखिम का 90 प्रतिशत तक जोखिम वहन किया जाता है। स्थगित भुगतान अनुबन्ध के अधीन निगम द्वारा राजनीतिक जोखिम का 95 प्रतिशत तक का भाग वहन किया जाता है।

निगम द्वारा व्यापारिक वैंकों को वित्तीय गारन्टी (Financial Guarantees) जारी की जाती है जिससे उन्हें निर्यात ऋण सुविधा प्रदान करने के लिये प्रोत्साहन मिलता है। इसमें निगम ऋण देने वाले वैंक के साथ मिलकर निर्यातक को वित्त सुविधा प्रदान करती है तथा उससे उत्पन्न हानियों की गारन्टी प्रदान करती है। इसमें निगम द्वारा निम्नलिखित प्रकार की गारन्टी प्रदान की जाती हैं—

(1) पैंकिंग साख गारन्टी (Packing CreditGua rantee)—इसमें निर्यातक को माल तैयार करने के उद्देश्य से माल निर्यात करने से पूर्व ही ऋण उपलब्ध करवाया जाता है। इसमें निगम निर्यातक द्वारा ऋण का अंशतः अथवा पूर्ण भुगतान न करने अथवा माल की सही सुपुर्दगी न करने पर ऋण की गारन्टी प्रदान करती है तथा उत्पन्न हुई हानि का $66\frac{2}{3}$ प्रतिशत भाग वहन करती है।

(2) लदान के पश्चात निर्यात साख गारन्टी (Post Shipment Export Credit Guarantee)—इसमें माल निर्यात करने के पश्चात् वैंक द्वारा माल के प्रपत्रों को क्रय करने, भुनाने अथवा परक्रामित करने में उत्पन्न हुयी हानि के विरुद्ध निगम द्वारा गारन्टी प्रदान की जाती है। यह गारन्टी केवल उन्हीं निर्यातकों को प्रदान की जाती हैं जिन्होंने व्यापक जहाजी पालिसी (Comprehensive Shipment Policy) प्राप्त की है। इसमें निगम हानि का $66\frac{2}{3}$ प्रतिशत भाग वहन करती है।

(3) निर्यात वित्त गारन्टी (Export Finance Guarantee)—इसके अन्तर्गत निर्यातकों को उनके माल की घरेलू कीमत (Domestic Price) के आधार पर लदान के पश्चात वित्त सुविधा प्रदान की जाती है। इसमें वैंक निर्यात किये गये

माल के प्रपत्रों की कीमत का 125 प्रतिशत भाग तक ऋणस्वरूप प्रदान कर सकते हैं। निगम द्वारा प्रपत्रों के मूल्य तथा वास्तविक ऋण राशि का मार्जिन प्रत्याभूत किया जाता है तथा इसमें बैंकों को निर्यातक के दिवालिया होने अथवा माल निर्यात न करने से उत्पन्न हुई हानि का 75 प्रतिशत भाग निगम से प्राप्त हो जाता है।

(4) निर्यात उत्पादन वित्त गारन्टी (Export Production Finance Guarantee)—इसमें निर्यातकों को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से उन्हें माल की जहाज पर कीमत (Free On Board—F.O.B.) की तुलना में 50 प्रतिशत अधिक तक ऋण प्रदान किया जाता है। यह ऋण माल लदान से पूर्व तथा पश्चात् की स्थिति पर प्रदान किया जा सकता है। इसमें निगम द्वारा निर्यातक के कारण हुई हानि का 66⅔ प्रतिशत भाग वहन किया जाता है।

(5) निर्यात निष्पादन गारन्टी (Export Performance Guarantee)—इसमें निगम बैंक द्वारा प्रदत्त गारन्टी का जोखिम 66⅔ प्रतिशत भाग तक वहन करता है। बैंक निर्यातक की ओर से निम्नलिखित कार्यों के लिये गारन्टी प्रदान करते हैं—

(i) माल का तटकर (Custom Duty) भुगतान किये बिना माल आयात करने के लिये,

(ii) उत्पादन शुल्क भुगतान किये बिना माल निर्यात करने के लिये,

(iii) माल के आयातक द्वारा अग्रिम भुगतान के उद्देश्य से,

(iv) निर्यातक द्वारा अनुबन्ध के निष्पादन के लिये आयातक को बैंक गारन्टी देने के उद्देश्य से,

(v) विदेशी निविदा में अग्रिम धन के रूप में प्रदत्त बैंक गारन्टी।

अतः निगम द्वारा वित्तीय गारन्टी में विभिन्न प्रकार की गारन्टी प्रदान की जाती हैं जो निर्यात व्यवसाय को अत्यधिक प्रोत्साहित करती हैं। इनके अतिरिक्त निगम विशेष पालिसी जारी करता है जिसमें बाजार विकास पालिसी, आवर्ती विदेशी विनिमय सुविधा, उत्पादक ऋण बीमा पालिसी तथा निर्यातक ऋण बीमा पालिसी सम्मिलित की जाती हैं।

प्रश्न
(Questions)

1. साख-पत्र से आपका क्या अभिप्राय है? विदेशी व्यवसाय में इसके महत्व की विवेचना कीजिये।

What do you mean by Letter of Credit? Discuss its importance in foreign trade.

2. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये—

Write a short note on the followings—

(i) स्थगित भुगतान गारन्टी
(Deferred Payment Guarantee) (*C. A. I. I. B. Feb., 1983*)

(ii) लदान से पूर्व एवं पश्चात् वित्त सुविधा
(Pre and Post Shipment Credit) (*C. A. I. I. B. Nov., 1983*)

3. निर्यात साख एवं गारन्टी निगम द्वारा जारी पालिसियों का संक्षिप्त वर्णन कीजिये।

Discuss in short the policies issued by Export Credit and Guarantee Corporation.



22 वित्तीय विवरणों का विश्लेषण एवं व्याख्या
(ANALYSIS AND INTERPRETATION OF FINANCIAL STATEMENTS)

व्यवसाय के वित्तीय विवरणों में लाभहानि खाता, आधिक्य विवरण (Surplus Statement) तथा आर्थिक चिट्ठा सम्मिलित किया जाता है। आधिक्य विवरण में स्थायी सम्पत्ति, सचिति एवं देनदारों व लेनदारों की अनुसूचियाँ आदि सम्मिलित की जाती हैं। वित्तीय विवरणों का विश्लेषण करने में इन अनुसूचियों का व्यापक महत्व है।

आर्थिक चिट्ठे का अभिप्राय
(Meaning of Balance Sheet)

आर्थिक चिट्ठे से अभिप्राय उस विवरण-पत्र से होता है जो एक निश्चित तिथि पर व्यापारी की आर्थिक स्थिति दर्शाता है। व्यवसाय में वर्ष के दौरान हुये समस्त लेन-देनों से उत्पन्न वित्तीय स्थिति का सही अनुमान आर्थिक चिट्ठे की सहायता से लगाया जाता है। आर्थिक चिट्ठा व्यापारी के वास्तविक खातों (Real Accounts) एवं व्यक्तिगत खातों (Personal Accounts) का शेष एक निश्चित तिथि पर दर्शाता है जिसकी सहायता से व्यापारी यह अनुमान लगाने में समर्थ होता है कि उसे किन-किन व्यक्तियों को रुपया देना है तथा किन किन व्यक्तियों से रुपया वसूल करना है। इसके अतिरिक्त, उसके व्यवसाय में कितनी सम्पत्तियाँ हैं तथा कितने दायित्व हैं एवं उसका अपना अंशदान कितना है, इन समस्त तथ्यों का ज्ञान आर्थिक चिट्ठे द्वारा ही सम्भव होता है। आर्थिक चिट्ठा एक स्थिर विवरण-पत्र (Static Statement) होता है। यह व्यापारी की समस्त स्थायी एवं चालू सम्पत्तियाँ तथा पूंजी एवं दायित्वों को दर्शाता है। इसके दांयी ओर सम्पत्तियाँ तथा बांयी ओर दायित्व दर्शाये जाते हैं। आर्थिक चिट्ठे की सहायता से व्यापारी अपनी कार्यशील पूंजी (Working Capital) का ज्ञान प्राप्त करता है। कार्यशील पूंजी चालू सम्पत्तियों में से चालू दायित्व घटाकर ज्ञात की जाती है। इसकी सहायता से व्यापारी अपनी पूंजी एवं संचय का ज्ञान प्राप्त करता है और बाह्य दायित्वों का अनुमान लगाने में समर्थ होता है। अतः आर्थिक चिट्ठा व्यापारी को आर्थिक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

आर० एन० एन्थोनी के अनुसार, "आर्थिक चिट्ठा एक विशेष क्षण पर व्यवसाय की आर्थिक स्थिति प्रगट करता है जो कि लेखाविधि की संख्या

सम्भव हो सकता है।"[1]

अत: आर्थिक चिट्ठा एक निश्चित तिथि पर व्यापारी की आर्थिक स्थिति प्रगट करता है।

श्री जानसन के अनुसार, "किसी व्यवसाय की सम्पत्तियों, दायित्वों और स्वामित्व का लिखित रिपोर्ट के रूप में क्रमबद्ध विवरण ही आर्थिक चिट्ठा होता है।"[2]

श्री कार्लसन के अनुसार, "आर्थिक चिट्ठा व्यवसाय के एक प्रपत्र को कहते हैं जो यह दर्शाता है कि व्यापार पर कितना ऋण है और व्यापार के स्वामी की सामर्थ्य कितनी है।"[3]

अत: आर्थिक चिट्ठे से अभिप्राय एक स्थिर प्रलेख से होता है जो एक निश्चित तिथि पर व्यवसाय की सम्पत्तियों एवं दायित्वों को दर्शाता है।

आर्थिक चिट्ठे का महत्व
(Importance of Balance Sheet)

व्यापारी के लिये आर्थिक चिट्ठा अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। यह व्यवसाय की शोधन क्षमता को प्रगट करता है कि व्यवसाय अपने दायित्वों का भुगतान करने में समर्थ है अथवा नहीं। आर्थिक चिट्ठा निम्नलिखित व्यक्तियों के लिये महत्वपूर्ण होता है—

(1) स्वामी (Owner)—व्यवसाय के स्वामी के लिये यह अत्यन्त आवश्यक होता है। इसकी सहायता से स्वामी व्यवसाय में अपनी पूंजी एवं उस पर लाभांश का अनुपात ज्ञात करता है तथा व्यवसाय के कुल दायित्वों एवं सम्पत्तियों का अनुमान लगता है।

(2) विनियोगकर्त्ता (Investors)—आर्थिक चिट्ठा विनियोगकर्त्ताओं के लिये मार्गदर्शक होता है। इसकी सहायता से वे प्रति अंश आय, व्यवसाय की कार्यशील पूंजी का अनुपात, व्यवसाय की कुल स्थायी सम्पत्ति आदि अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों का अनुमान लगाते हैं।

(3) प्रबन्धक (Management)—आर्थिक चिट्ठा प्रबन्धकों के लिये विशेष महत्वपूर्ण होता है। इसकी सहायता से प्रबन्धकों को नियोजन (Planning), समन्वय (Co-ordination), संगठन (Organisation) एवं नियन्त्रण (Control) करने में सुविधा होती है।

(4) लेनदार (Creditors)—लेनदारों के लिये आर्थिक चिट्ठा विशेष

---

1. "Balance Sheet show the status of the business as at given moment of time in so far as figures shows its status." —R. N. Anthony

2. "The Balance Sheet is simply an orderly presentation in the form of a written report of the assets, liabilities and net worth accounts of a business." —Johnson

3. "A Business Form showing what is owed and what is proprietor's worth is called a Balance Sheet." —Carlson

महत्वपूर्ण होता है। इसकी सहायता से लेनदार व्यवसाय की शोधन-क्षमता का अनुमान लगाते हैं जिसमे व्यवसाय की चालू सम्पत्तियों एवं दायित्वों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

(5) विशेषज्ञ (Experts)—आर्थिक चिट्ठा विशेषज्ञों के लिये भी महत्वपूर्ण होता है, चूंकि यह व्यवसाय में विकास की प्रगति को स्पष्ट करता है। यह उनकी शिक्षा एवं जाँच व अनुसंधान कार्य में सहायता प्रदान करता है।

अतः आर्थिक चिट्ठे का महत्व विभिन्न व्यक्तियों के लिये आवश्यक समझा गया है। इसकी सहायता से वे आवश्यकतानुसार तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने मे समर्थ होते हैं।

आर्थिक चिट्ठे की सीमायें
(Limitations of Balance Sheet)

आर्थिक चिट्ठा विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों के लिये महत्वपूर्ण सूचनायें उपलब्ध करवाता है। परन्तु आर्थिक चिट्ठे की कुछ सीमायें हैं जिनके परिणाम-स्वरूप यह मात्र अनुमान प्रगट करता है। इसकी सहायता से व्यापार की सही स्थिति का अनुमान नही लगाया जा सकता है। आर्थिक चिट्ठे की सीमायें (Limits) निम्नलिखित हैं—

(1) स्थिर प्रलेख (Static Document)—आर्थिक चिट्ठा एक स्थिर प्रलेख है जो एक निश्चित तिथि पर व्यवसाय की आर्थिक स्थिति प्रगट करता है। यह वर्ष के दौरान हुए परिवर्तनो को नही दर्शाता है।

(2) ऐतिहासिक लागत (Historical Cost)—आर्थिक चिट्ठा ऐतिहासिक लागत पर तैयार किया जाता है। इसमें स्थायी सम्पत्तियों को पुस्तक-मूल्य पर दर्शाया जाता है तथा सम्पत्ति के बाजार मूल्य को ध्यान मे नहीं रखा जाता है। अतः यह सम्पत्तियों का वास्तविक मूल्य नहीं दर्शाता है।

(3) प्रबन्धकीय क्षमता (Managerial Efficiency)—आर्थिक चिट्ठे की सहायता से प्रबन्धकीय क्षमता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है।

(4) दिखावटीपन (Window Dressing)—आर्थिक चिट्ठे मे दिखावटीपन अथवा सजावट की सम्भावना रहती है। उदाहरणार्थ—चिट्ठे की तिथि पर ऋण प्राप्त करके नकद शेष की स्थिति सन्तोषजनक प्रगट करना, दीर्घकालीन ऋणों की सहायता से चालू सम्पत्तियों को क्रय करना, चिट्ठे की तिथि पर बड़ी राशि के अनुबन्ध करना, ह्रास की राशि का कम मात्रा मे निर्धारण करना आदि। इनकी सहायता से व्यापारी आर्थिक चिट्ठे की तिथि पर सन्तोषजनक स्थिति प्रगट करने में समर्थ होता है।

अतः स्पष्ट होता है कि आर्थिक चिट्ठे की सहायता से व्यवसाय की वास्तविक स्थिति का अनुमान लगाना विकट होता है। परन्तु अनुभव एवं योग्यता के आधार पर इन तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है और आर्थिक चिट्ठे की

सम्भव हो सकता है।"[1]

अतः आर्थिक चिट्ठा एक निश्चित तिथि पर व्यापारी की आर्थिक स्थिति प्रगट करता है।

श्री जानसन के अनुसार, "किसी व्यवसाय की सम्पत्तियों, दायित्वों और स्वामित्व का लिखित रिपोर्ट के रूप में क्रमबद्ध विवरण ही आर्थिक चिट्ठा होता है।"[2]

श्री कार्लसन के अनुसार, "आर्थिक चिट्ठा व्यवसाय के एक प्रपत्र को कहते हैं जो यह दर्शाता है कि व्यापार पर कितना ऋण है और व्यापार के स्वामी की सामर्थ्य कितनी है।"[3]

अतः आर्थिक चिट्ठे से अभिप्राय एक स्थिर प्रलेख से होता है जो एक निश्चित तिथि पर व्यवसाय की सम्पत्तियों एवं दायित्वों को दर्शाता है।

आर्थिक चिट्ठे का महत्व
(Importance of Balance Sheet)

व्यापारी के लिये आर्थिक चिट्ठा अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। यह व्यवसाय की शोधन क्षमता को प्रगट करता है कि व्यवसाय अपने दायित्वों का भुगतान करने में समर्थ है अथवा नहीं। आर्थिक चिट्ठा निम्नलिखित व्यक्तियों के लिये महत्वपूर्ण होता है—

(1) स्वामी (Owner)—व्यवसाय के स्वामी के लिये यह अत्यन्त आवश्यक होता है। इसकी सहायता से स्वामी व्यवसाय में अपनी पूंजी एवं उस पर लाभांश का अनुपात ज्ञात करता है तथा व्यवसाय के कुल दायित्वों एवं सम्पत्तियों का अनुमान लगता है।

(2) विनियोगकर्त्ता (Investors)—आर्थिक चिट्ठा विनियोगकर्त्ताओं के लिये मार्गदर्शक होता है। इसकी सहायता से वे प्रति अंश आय, व्यवसाय की कार्यशील पूंजी का अनुपात, व्यवसाय की कुल स्थायी सम्पत्ति आदि अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों का अनुमान लगाते हैं।

(3) प्रबन्धक (Management)—आर्थिक चिट्ठा प्रबन्धकों के लिये विशेष महत्वपूर्ण होता है। इसकी सहायता से प्रबन्धकों को नियोजन (Planning), समन्वय (Co-ordination), संगठन (Organisation) एवं नियन्त्रण (Control) करने में सुविधा होती है।

(4) लेनदार (Creditors)—लेनदारों के लिये आर्थिक चिट्ठा विशेष

---

1. "Balance Sheet show the status of the business as at given moment of time in so far as figures shows its status." —R. N. Anthony

2. "The Balance Sheet is simply an orderly presentation in the form of a written report of the assets, liabilities and net worth accounts of a business." —Johnson

3. "A Business Form showing what is owed and what is proprietor's worth is called a Balance Sheet." —Carlson

महत्वपूर्ण होता है। इसकी सहायता से लेनदार व्यवसाय की शोधन-क्षमता का अनुमान लगाते हैं जिसमे व्यवसाय की चालू सम्पत्तियों एवं दायित्वों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

(5) विशेषज्ञ (Experts)—आर्थिक चिट्ठा विशेषज्ञों के लिये भी महत्वपूर्ण होता है, चूँकि यह व्यवसाय मे विकास की प्रगति को स्पष्ट करता है। यह उनको शिक्षा एवं जांच व अनुसंधान कार्य में सहायता प्रदान करता है।

अतः आर्थिक चिट्ठे का महत्व विभिन्न व्यक्तियों के लिये आवश्यक समझा गया है। इसकी सहायता से वे आवश्यकतानुसार तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने मे समर्थ होते है।

आर्थिक चिट्ठे की सीमायें
(Limitations of Balance Sheet)

आर्थिक चिट्ठा विभिन्न वर्ग के व्यक्तियो के लिये महत्वपूर्ण सूचनायें उपलब्ध करवाता है। परन्तु आर्थिक चिट्ठे की कुछ सीमायें हैं जिनके परिणाम-स्वरूप यह मात्र अनुमान प्रगट करता है। इसकी सहायता से व्यापार की सही स्थिति का अनुमान नही लगाया जा सकता है। आर्थिक चिट्ठे की सीमायें (Limits) निम्नलिखित है—

(1) स्थिर प्रलेख (Static Document)—आर्थिक चिट्ठा एक स्थिर प्रलेख है जो एक निश्चित तिथि पर व्यवसाय की आर्थिक स्थिति प्रगट करता है। यह वर्ष के दौरान हुए परिवर्तनों को नहीं दर्शाता है।

(2) ऐतिहासिक लागत (Historical Cost)—आर्थिक चिट्ठा ऐतिहासिक लागत पर तैयार किया जाता है। इसमें स्थायी सम्पत्तियो को पुस्तक-मूल्य पर दर्शाया जाता है तथा सम्पत्ति के बाजार मूल्य को ध्यान में नहीं रखा जाता है। अतः यह सम्पत्तियों का वास्तविक मूल्य नही दर्शाता है।

(3) प्रबन्धकीय क्षमता (Managerial Efficiency)—आर्थिक चिट्ठे की सहायता से प्रबन्धकीय क्षमता का अनुमान नही लगाया जा सकता है।

(4) दिखावटीपन (Window Dressing)—आर्थिक चिट्ठे मे दिखावटीपन अथवा सजावट की सम्भावना रहती है। उदाहरणार्थ—चिट्ठे की तिथि पर ऋण प्राप्त करके नकद शेष की स्थिति सन्तोषजनक प्रगट करना, दीर्घकालीन ऋणों की सहायता से चालू सम्पत्तियों को क्रय करना, चिट्ठे की तिथि पर बड़ी राशि के अनुबन्ध करना, ह्रास की राशि का कम मात्रा मे निर्धारण करना आदि। इनकी सहायता से व्यापारी आर्थिक चिट्ठे की तिथि पर सन्तोषजनक स्थिति प्रगट करने में समर्थ होता है।

अतः स्पष्ट होता है कि आर्थिक चिट्ठे की सहायता से व्यवसाय की वास्तविक स्थिति का अनुमान लगाना विकट होता है। परन्तु अनुभव एवं योग्यता के आधार पर इन तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है और आर्थिक चिट्ठे की

सम्भव हो सकता है।"[1]

अतः आर्थिक चिट्ठा एक निश्चित तिथि पर व्यापारी की आर्थिक स्थिति प्रगट करता है।

श्री जानसन के अनुसार, "किसी व्यवसाय की सम्पत्तियों, दायित्वों और स्वामित्व का लिखित रिपोर्ट के रूप में क्रमवद्ध विवरण ही आर्थिक चिट्ठा होता है।"[2]

श्री कार्ल्सन के अनुसार, "आर्थिक चिट्ठा व्यवसाय के एक प्रपत्र को कहते हैं जो यह दर्शाता है कि व्यापार पर कितना ऋण है और व्यापार के स्वामी की सामर्थ्य कितनी है।"[3]

अतः आर्थिक चिट्ठे से अभिप्राय एक स्थिर प्रलेख से होता है जो एक निश्चित तिथि पर व्यवसाय की सम्पत्तियों एवं दायित्वों को दर्शाता है।

आर्थिक चिट्ठे का महत्व
(Importance of Balance Sheet)

व्यापारी के लिये आर्थिक चिट्ठा अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। यह व्यवसाय की शोधन क्षमता को प्रगट करता है कि व्यवसाय अपने दायित्वों का भुगतान करने में समर्थ है अथवा नहीं। आर्थिक चिट्ठा निम्नलिखित व्यक्तियों के लिये महत्वपूर्ण होता है—

(1) स्वामी (Owner)—व्यवसाय के स्वामी के लिये यह अत्यन्त आवश्यक होता है। इसकी सहायता से स्वामी व्यवसाय में अपनी पूंजी एवं उस पर लाभांश का अनुपात ज्ञात करता है तथा व्यवसाय के कुल दायित्वों एवं सम्पत्तियों का अनुमान लगता है।

(2) विनियोगकर्त्ता (Investors)—आर्थिक चिट्ठा विनियोगकर्त्ताओं के लिये मार्गदर्शक होता है। इसकी सहायता से वे प्रति अंश आय, व्यवसाय की कार्यशील पूंजी का अनुपात, व्यवसाय की कुल स्थायी सम्पत्ति आदि अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों का अनुमान लगाते हैं।

(3) प्रबन्धक (Management)—आर्थिक चिट्ठा प्रबन्धकों के लिये विशेष महत्वपूर्ण होता है। इसकी सहायता से प्रबन्धकों को नियोजन (Planning), समन्वय (Co-ordination), संगठन (Organisation) एवं नियन्त्रण (Control) करने में सुविधा होती है।

(4) लेनदार (Creditors)—लेनदारों के लिये आर्थिक चिट्ठा विशेष

---

1. "Balance Sheet show the status of the business as at given moment of time in so far as figures shows its status." —R. N. Anthony
2. "The Balance Sheet is simply an orderly presentation in the form of a written report of the assets, liabilities and net worth accounts of a business." —Johnson
3. "A Business Form showing what is owed and what is proprietor's worth is called a Balance Sheet." —Carlson

महत्वपूर्ण होता है। इसकी सहायता से लेनदार व्यवसाय की शोधन-क्षमता का अनुमान लगाते हैं जिसमें व्यवसाय की चालू सम्पत्तियों एवं दायित्वों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

(5) विशेषज्ञ (Experts)—आर्थिक चिट्ठा विशेषज्ञों के लिये भी महत्वपूर्ण होता है, चूंकि यह व्यवसाय में विकास की प्रगति को स्पष्ट करता है। यह उनको शिक्षा एवं जाँच व अनुसंधान कार्य में सहायता प्रदान करता है।

अत: आर्थिक चिट्ठे का महत्व विभिन्न व्यक्तियों के लिये आवश्यक समझा गया है। इसकी सहायता से वे आवश्यकतानुसार तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने में समर्थ होते हैं।

आर्थिक चिट्ठे की सीमायें
(Limitations of Balance Sheet)

आर्थिक चिट्ठा विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों के लिये महत्वपूर्ण सूचनायें उपलब्ध करवाता है। परन्तु आर्थिक चिट्ठे की कुछ सीमायें हैं जिनके परिणाम-स्वरूप यह मात्र अनुमान प्रगट करता है। इसकी सहायता से व्यापार की सही स्थिति का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। आर्थिक चिट्ठे की सीमायें (Limits) निम्नलिखित हैं—

(1) स्थिर प्रलेख (Static Document)—आर्थिक चिट्ठा एक स्थिर प्रलेख है जो एक निश्चित तिथि पर व्यवसाय की आर्थिक स्थिति प्रगट करता है। यह वर्ष के दौरान हुए परिवर्तनों को नहीं दर्शाता है।

(2) ऐतिहासिक लागत (Historical Cost)—आर्थिक चिट्ठा ऐतिहासिक लागत पर तैयार किया जाता है। इसमें स्थायी सम्पत्तियों को पुस्तक-मूल्य पर दर्शाया जाता है तथा सम्पत्ति के बाजार मूल्य को ध्यान में नहीं रखा जाता है। अतः यह सम्पत्तियों का वास्तविक मूल्य नहीं दर्शाता है।

(3) प्रबन्धकीय क्षमता (Managerial Efficiency)—आर्थिक चिट्ठे की सहायता से प्रबन्धकीय क्षमता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है।

(4) दिखावटीपन (Window Dressing)—आर्थिक चिट्ठे में दिखावटीपन अथवा सजावट की सम्भावना रहती है। उदाहरणार्थ—चिट्ठे की तिथि पर ऋण प्राप्त करके नकद शेष की स्थिति सन्तोषजनक प्रगट करना, दीर्घकालीन ऋणों की सहायता से चालू सम्पत्तियों को क्रय करना, चिट्ठे की तिथि पर बड़ी राशि के अनुबन्ध करना, ह्रास की राशि का कम मात्रा में निर्धारण करना आदि। इनकी सहायता से व्यापारी आर्थिक चिट्ठे की तिथि पर सन्तोषजनक स्थिति प्रगट करने में समर्थ होता है।

अत: स्पष्ट होता है कि आर्थिक चिट्ठे की सहायता से व्यवसाय की वास्तविक स्थिति का अनुमान लगाना विकट होता है। परन्तु अनुभव एवं योग्यता के आधार पर इन तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है और आर्थिक चिट्ठे की

सहायता से व्यवसाय की सही स्थिति का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। संक्षेप में, आर्थिक चिट्ठा व्यवसाय का महत्वपूर्ण प्रलेख होता है।

आर्थिक चिट्ठे की मदें
(Items of Balance Sheet)

आर्थिक चिट्ठे का मुख्यतः दो भागों में विभक्तीकरण किया जाता है। इसमें बांयीं ओर (Left Hand Side) दायित्व (Liabilities) तथा दाहिनी ओर (Right Hand Side) सम्पत्तियाँ (Assets) होती हैं। सम्पत्तियों में व्यवसाय के कोष विनियोजित होते हैं तथा दायित्व व्यवसाय के कोषों के स्रोतों को प्रगट करते हैं। सम्पत्ति से अभिप्राय भौतिक वस्तु (Physical Object) अथवा स्वत्व (Right) से होता है जिनका मौद्रिक मूल्य होता है। आर्थिक चिट्ठे के सम्पत्ति पक्ष में निम्नलिखित मदों को दर्शाया जाता है—

(1) स्थायी सम्पत्तियाँ (Fixed Assets)—स्थायी सम्पत्तियों से आशय उन सम्पत्तियों से होता है जो व्यापार में उत्पादन कार्यों के लिये प्रयुक्त की जाती हैं तथा इनका उद्देश्य पुनः विक्रय द्वारा लाभ कमाना नहीं होता है।

फिनले एवं मिलर के अनुसार, "स्थायी सम्पत्तियाँ व्यवसाय में प्रयुक्त स्थायी प्रकृति की सम्पत्तियाँ होती हैं तथा ये विक्रय के लिये नहीं होती हैं।"[1] स्थायी सम्पत्तियों का प्रयोग अनेक वर्षों तक किया जाता है।

स्थायी सम्पत्तियों की मुख्य विशेषता यह होती है कि ये स्थायी प्रकृति की होती हैं तथा इनका व्यवसाय में निरन्तर प्रयोग किया जाता है। यदि कोई सम्पत्ति स्थायी प्रकृति की है परन्तु वह व्यवसाय में प्रयुक्त नहीं होती है तब उस व्यवसाय के लिये वह सम्पत्ति स्थायी सम्पत्तियों में सम्मिलित नहीं की जाती है। इसके अतिरिक्त स्थायी सम्पत्तियों के क्रय का उद्देश्य उन्हें बेचकर लाभ कमाना नहीं होता है। यदि किसी व्यवसाय में फर्नीचर का क्रय-विक्रय होता है तब उस व्यवसाय में फर्नीचर को स्थायी सम्पत्तियों में शामिल नहीं किया जाता है। स्थायी सम्पत्तियों में निम्नलिखित सम्पत्तियाँ सम्मिलित की जाती हैं—

(i) भूमि व भवन (Land and Building)
(ii) प्लान्ट व मशीनरी (Plant and Machinery)
(iii) फर्नीचर व फिक्चर (Furniture and Fixture)
(iv) दीर्घकालीन विनियोग (Long Term Investments)
(v) कार व अन्य स्थायी प्रकृति की सम्पत्ति (Car and other Fixed Assets)।

(2) चालू सम्पत्तियाँ (Current Assets)—चालू सम्पत्तियों से अभिप्राय उन सम्पत्तियों से होता है जो व्यवसाय की सामान्य प्रक्रिया में एक वर्ष की अवधि

---

1. "Fixed Assets are assets of a relatively permanent nature used in the operation of business and not intended for sale." —Finley & Miller

में रोकड़ में परिवर्तित हो जाती है। ये अस्थायी प्रकृति की होती हैं। इन सम्पत्तियों को पुनः विक्रय द्वारा लाभ कमाने के उद्देश्य से क्रय किया जाता है। चालू सम्पत्तियों को व्यापार वर्ष की अवधि मे ही समाप्त कर लिया जाता है अर्थात् इन सम्पत्तियो का लाभ एक ही वर्ष मे प्राप्त कर लिया जाता है। चालू सम्पत्तियो में निम्नलिखित सम्पत्तियों को सम्मिलित किया जाता है—

(i) नकदी (Cash),

(ii) बैंक शेष व बैंकों में सावधि जमा निक्षेप (Bank Balance and Fixed Deposits),

(iii) विनियोग (Investment), परन्तु इसमे उन विनियोगों को सम्मिलित नही किया जाता है जो व्यवसाय की सहायक संस्था (Sister Concern) मे विनियोजित किय गये हैं तथा इसमें अल्पकालीन विनियोगों को ही सम्मिलित किया जाता है,

(iv) देनदार एव प्राप्य विपत्र (Debtors and Bills Receivables),

(v) स्टाक (Stock),

(vi) पूर्वदत्त व्यय (Prepaid Expenses),

(vii) उपार्जित आय (Accrued Income) आदि।

चालू सम्पत्तियों मे देनदारों को सम्मिलित किया जाता है परन्तु इसमें संदिग्ध एवं अप्राप्य (Doubtful and Bad Debts) ऋणों को सम्मिलित नही किया जाता है, चूंकि देनदारो को यह राशि घटाकर दर्शाया जाता है। इसी प्रकार कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत 6 माह से अधिक अवधि के देनदारों को पृथक से दर्शाया जाता है। ये विविध सम्पत्तियों मे सम्मिलित होते हैं। इसी प्रकार स्टाक में कच्चे माल का स्टाक, अर्द्ध-निर्मित एवं निर्मित माल का स्टाक सम्मिलित किया जाता है। पूर्वदत्त व्ययों से अभिप्राय उन व्ययों से होता है जिनका भुगतान अग्रिम किया गया है अर्थात् जिन व्ययों का लाभ अथवा सेवायें आगामी वर्षों में प्राप्त की जाती हैं। इसी प्रकार उपार्जित आय से अभिप्राय उस आय से है जिसका उपार्जन किया जा चुका है परन्तु वह आय प्राप्त नही की गई है अर्थात जिनके लिये सेवायें प्रदान की जा चुकी हैं परन्तु उन सेवाओं के बदले आय आगामी वर्ष में प्राप्त होती है।

(3) विविध सम्पत्तियां (Miscellaneous Assets)—विविध सम्पत्तियों में उन सम्पत्तियों को सम्मिलित किया जाता है जो स्थायी अथवा चालू सम्पत्तियो में सम्मिलित नहीं होती हैं। उदाहरणार्थ—6 माह से अधिक की अवधि के लिये देय देनदार, सहायक संस्था में ऋण अथवा विनियोग, संचालकों को ऋण आदि।

(4) अमूर्त सम्पत्तियां (Intangible Assets)—अमूर्त सम्पत्तियों से अभिप्राय उन सम्पत्तियों से होता है जिनका व्यवसाय मे भौतिक अस्तित्व नही होता है

परन्तु उन्हें मूल्य के बदले प्राप्त किया जाता है। इन सम्पत्तियों का मूल्य व्यवसाय चालू रहने की अवधि तक रहता है तथा व्यवसाय की समाप्ति पर ये स्वतः समाप्त हो जाती हैं। बैंक इनकी जमानत के विरुद्ध ऋण प्रदान नहीं करते हैं। ये सम्पत्तियाँ स्थगित आयगत व्यय (Deferred Revenue Expenditure) तथा नामात्र की सम्पत्तियों (Fictitious Assets) से पृथक् होती हैं। स्थगित आयगत व्ययों से अभिप्राय उन व्ययों से होता है जो आयगत व्यय के रूप में खर्च किये जाते हैं परन्तु इनका लाभ अनेक वर्षों तक प्राप्त होता है। अतः उन व्ययों को जिनका लाभ प्राप्त नहीं किया गया है, आर्थिक चिटठे में सम्पत्ति के रूप में दर्शाया जाता है। उदाहरणार्थ—प्रारम्भिक व्यय (Preliminary Expenses)। नामात्र की सम्पत्तियों से अभिप्राय उन सम्पत्तियों से होता है जिनका उपक्रम में कोई मूल्य नहीं होता है। उदाहरणार्थ—लाभ-हानि खाते का डेबिट शेष आदि। इसके विपरीत, अमूर्त सम्पत्तियों (Intangible Assets) का व्यवसाय में मौद्रिक मूल्य होता है परन्तु यह मूल्य व्यवसाय के चालू रहने की अवधि तक होता है। इसमें ख्याति (Goodwill), पेटेन्ट (Patents), ट्रेड मार्क (Trade Mark), कॉपीराइट (Copy Rights) आदि सम्पत्तियाँ सम्मिलित की जाती हैं।

अतः स्पष्ट होता है कि आर्थिक चिट्ठे के सम्पत्ति पक्ष में विभिन्न प्रकार की सम्पत्तियाँ दर्शायी जाती हैं। आर्थिक चिट्ठे में बांयी ओर दायित्व पक्ष को दर्शाया जाता है। दायित्व पक्ष में निम्नलिखित मदें सम्मिलित की जाती हैं—

(1) शुद्ध स्वामित्व (Net Worth)—शुद्ध स्वामित्व को मालिक का अंशदान अथवा स्थिर स्वामित्व (Notional Liabilities) समझा जाता है। इसमें व्यवसाय के स्वामी की पूंजी, संचय एवं प्रावधान तथा व्यवसाय के लाभ सम्मिलित किये जाते हैं। ये व्यवसाय के लिये स्थिर दायित्व समझे जाते हैं। शुद्ध स्वामित्व की गणना निम्नलिखित विधि से की जाती है—

Net Worth = Capital + Reserve and Surplus + Retained Earning

Or Net worth = Total Assets − Outside Liabilities

Or Tangible Net Worth = Net Worth − Intangible Assets

(2) वाह्य दायित्व (Outside Liabilities)—व्यवसाय के वाह्य दायित्वों में चालू दायित्व तथा दीर्घकालीन दायित्व सम्मिलित किये जाते हैं। इसमें व्यवसाय की सम्पत्ति पर वाह्य व्यक्तियों का अधिकार होता है। वाह्य दायित्वों को निम्नलिखित दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—

(i) चालू दायित्व (Current Liabilities)—चालू दायित्वों से अभिप्राय उन दायित्वों से होता है जो चिट्ठे की तिथि से 12 माह की अवधि में भुगतान के लिये देय होते हैं। साधारणतः इसमें मांग पर देय ऋण एवं व्यापारिक लेनदार सम्मिलित किये जाते हैं। ऋणों में एक वर्ष के भीतर देय ऋण, सावधि ऋण की

चालू वर्ष की देय किश्तें एवं उस पर ब्याज सम्मिलित होता है। इसके अतिरिक्त चालू दायित्वों में अदत्त व्यय (जिनकी लाभ अथवा सेवायें प्राप्त कर ली हैं परन्तु उनका भुगतान नहीं किया गया है), घोषित लाभांश (Dividend Declared) जिसका भुगतान नहीं किया गया है, व्यापारिक लेनदार (Trade Creditors), जन-निक्षेप (Public Deposit) जिनका भुगतान एक वर्ष में देय हो, ग्राहकों से अग्रिम प्राप्त राशि (Advance Payment from Customers), कर के लिये प्रावधान (Provision for Taxation) आदि सम्मिलित किये जाते हैं।

(ii) दीर्घकालीन दायित्व (Long Term Liabilities)—ये स्थगित दायित्व समझे जाते हैं जिनका भुगतान एक वर्ष की अवधि के पश्चात् देय होता है। इसमें बैंक का मियादी ऋण (एक वर्ष मे देय ऋण छोड़कर), जननिक्षेप, ऋण-पत्र (Debentures), शोध्य पूर्वाधिकार अंश (Redeemable Preference Share) जिनका भुगतान आगामी 12 वर्षों में देय होता है (परन्तु इसमें वे शोध्य पूर्वाधिकार अंश चालू दायित्वों मे सम्मिलित किये जाते हैं जिनका भुगतान एक वर्ष की अवधि मे देय होता है) तथा साझेदारों द्वारा प्रदत्त ऋण जिसकी अदायगी पूर्व निश्चित होती है, आदि दायित्व सम्मिलित किये जाते हैं। यदि साझेदारों के ऋणों की अदायगी पूर्व निश्चित नहीं है तब इस ऋण को पूंजी में सम्मिलित किया जाता है।

(3) सम्भाव्य दायित्व (Contingent Liabilities)—सम्भाव्य दायित्वों को आर्थिक चिट्ठे मे सम्मिलित नही किया जाता है परन्तु ये व्यवसाय के लिए भावी दायित्व बन सकते हैं। इन्हें आर्थिक चिट्ठे से संलग्न सूची में पृथक से दर्शाया जाता है। सम्भाव्य दायित्वों से अभिप्राय उन दायित्वों से होता है जो चिट्ठे की तिथि पर सुनिश्चित नहीं होते हैं परन्तु वास्तव में ये आकस्मिक दायित्व होते हैं जिनका दायित्व किसी भी समय उत्पन्न हो सकता है। सम्भाव्य दायित्वों में विवादास्पद दावे, अधूरे ठेके (जिनके लिये दायित्व का निर्माण नहीं किया गया है) आकस्मिक दायित्व, व्यवसायी द्वारा प्रदत्त गारन्टियां सम्मिलित की जाती हैं। सम्भाव्य दायित्वों को आर्थिक चिट्ठे में भी दर्शाया जा सकता है परन्तु इन्हें दायित्वों में शामिल नहीं किया जाता है। अतः सामान्य दायित्व व्यवसाय में महत्वपूर्ण दायित्व होते हैं [illegible] आधार पर व्यवसाय की शोधन क्षमता प्रभावित हो सकती है। बैंक ऋण [illegible] प्रदान करते समय इन दायित्वों पर विशेष ध्यान दिया जाता है

जिसमें स्थायी सम्पत्ति, संचित एवं देनदारों व लेनदारों की अनुसूचियाँ आदि सम्मिलित की जाती हैं। वित्तीय विवरणों का विश्लेपण करने में इन अनुसूचियों का व्यापक महत्व है। विश्लेपण करते समय वित्तीय विवरणों की सीमाओं के कारण सही एवं सच्चे निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते हैं। वित्तीय विवरण ऐतिहासिक लागत पर तैयार किये जाते हैं तथा इसमें उपक्रमी की योग्यता एवं सेवाओं का मूल्यांकन नहीं किया जाता है जो कि उपक्रम में विशेष महत्व रखता है। इसके अतिरिक्त दो समान प्रकृति के व्यावसायिक संस्थानों के वित्तीय विवरणों का तुलनात्मक अध्ययन नहीं किया जा सकता है। अतः बैंक द्वारा वित्तीय विवरणों का विश्लेपण करते समय विशेप सावधानी का प्रयोग किया जाना चाहिये।

वित्तीय विवरणों का सही विश्लेषण करने पर व्यवसाय की वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है कि व्यवसाय में उन्नति की दर क्या है? इसके द्वारा बैंकों से ऋण प्राप्त करने में सहायता मिलती है तथा उपक्रम की भावी नीतियों का निर्धारण पूर्व वर्ष के अनुभवों के आधार पर किया जा सकता है। बैंकों द्वारा वित्तीय विवरणों का विश्लेपण करने में मुख्यतः निम्नलिखित दो विधियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं—

(1) कोष प्रवाह विवरण विश्लेपण।

(2) अनुपात विश्लेषण।

(1) कोष प्रवाह विवरण विश्लेषण (Funds Flow Statement Analysis)—यह विवरण उपक्रम की कार्यशील पूंजी मे हुए परिवर्तन दर्शाता है। यह दो तिथियों पर तैयार किये गये आर्थिक चिट्ठे में हुए परिवर्तनों को प्रगट करता है। इसके अन्तर्गत बैंक यह तथ्य ज्ञात करता है कि अल्पकालीन साधनों का प्रयोग किन-किन मदों में किया गया है तथा दीर्घकालीन साधनों का प्रयोग किन-किन मदों में। इसकी सहायता से व्यवसाय की वित्तीय स्थिति का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। व्यवसाय के अल्पकालीन स्रोतों (Sources) का प्रयोग अल्पकालीन साधनों (Uses) की पूर्ति के लिये किया जाना चाहिये तथा दीर्घकालीन स्रोतों (Sources) का प्रयोग दीर्घकालीन साधनों की पूर्ति में किया जाना चाहिये।

(2) अनुपात वि लेषण (Ratio Analysis)—इसके अन्तर्गत बैंक विभिन्न प्रकार के अनुपातों की सहायता से उपक्रम की आर्थिक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करता है। इसमें बैंक उपक्रम की निम्नलिखित स्थितियाँ ज्ञात करता है—

(i) परिचालन योग्यता अथवा निष्पादन अनुपात (Operational Efficiency or Performance Ratio),

(ii) वित्तीय सुदृढ़ता (Financial Stability),

(iii) उपार्जन क्षमता अथवा लाभदायकता का अनुपात (Earning Capacity),

(iv) पूंजी संरचना (Capital Structure),

(v) भावी विनियोक्ताओं के लिये (For Future Investors)।

बैंक अग्रांकित अनुपातों की सहायता से उपक्रम की आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करता है—

निष्पादन अनुपात
(Performance Ratio)

इसके अन्तर्गत बैंक उपक्रम की कार्यक्षमता का ज्ञान प्राप्त करता है। इसमें निम्नलिखित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(1) स्टॉक बिक्री अनुपात (Stock Turn Over Ratio)—इसमें स्टॉक की बिक्री से तुलना की जाती है कि स्टॉक कितनी बार विक्रय में बदल जाता है।

$$\text{Stock Turn Over Ratio} = \frac{\text{Cost of Goods Sold}}{\text{Average Inventory at Cost}}$$

Or

$$= \frac{\text{Net Sales}}{\text{Average Stock at Seling Price}}$$

Cost of Goods Sold = Purchases + Manufacturing Expenses + Direct Expenses + Opening Stock − Closing Stock

इसमें स्टॉक रखने की अवधि की गणना भी की जाती है।

No. of Days Stock of

$$\text{Finished Goods} = \frac{\text{Stock of Finished Goods}}{\text{Average Daily Sales}}$$

इसमें माह की कुल खपत (Consumption) ज्ञात की जा सकती है।

$$\text{Period of Months Consumption} = \frac{\text{Stock}}{\text{Monthly Consumption}}$$

$$\text{Monthly Consumption} = \frac{\text{Total Consumption}}{12}$$

स्टॉक का बिक्री अनुपात व्यवसाय की प्रकृति एवं विक्रय शर्तों पर निर्भर करता है। यह अनुपात पूर्व वर्षों की तुलना में बढ़ना चाहिये तथा यह जितना अधिक होता है उतना ही व्यवसाय के लिये अच्छा समझा जाता है। परन्तु यह एक सीमा के बाद अधिक नहीं होना चाहिये अन्यथा माल की कम कीमत के कारण बाजार में व्यवसाय की साख पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है। अतः कम विक्रय मूल्य रखकर स्टॉक बिक्री अनुपात बढ़ाने का प्रयास नहीं करना चाहिये। यह अनुपात अधिक होने पर प्रगट करता है कि व्यवसाय में विक्रय अधिक हो रहा है।

(2) कार्यशील पूंजी बिक्री अनुपात (Working Capital Turn Over Ratio)—इसमें विनियोजित कार्यशील पूंजी का विक्रय के साथ अनुपात ज्ञात किया जाता है कि पूंजी के रुपये को इकाई का कितनी बार विक्रय किया गया है।

$$\text{Working Capital Turn Over Ratio} = \frac{\text{Cost of Sales or Net Sales}}{\text{Net Working Capital}}$$

Cost of Sales = Opening Stock + Purchases − Closing Stock

Net Working Capital = Current Assets − Current Liabilities

जिसमें स्थायी सम्पत्ति, संचित एवं देनदारों व लेनदारों की अनुसूचियाँ आदि सम्मिलित की जाती हैं। वित्तीय विवरणों का विश्लेषण करने में इन अनुसूचियों का व्यापक महत्व है। विश्लेषण करते समय वित्तीय विवरणों की सीमाओं के कारण सही एवं सच्चे निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते हैं। वित्तीय विवरण ऐतिहासिक लागत पर तैयार किये जाते हैं तथा इसमें उपक्रमी की योग्यता एवं सेवाओं का मूल्यांकन नहीं किया जाता है जो कि उपक्रम में विशेष महत्व रखता है। इसके अतिरिक्त दो समान प्रकृति के व्यावसायिक संस्थानों के वित्तीय विवरणों का तुलनात्मक अध्ययन नहीं किया जा सकता है। अतः वैंक द्वारा वित्तीय विवरणों का विश्लेषण करते समय विशेष सावधानी का प्रयोग किया जाना चाहिये।

वित्तीय विवरणों का सही विश्लेषण करने पर व्यवसाय की वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है कि व्यवसाय में उन्नति की दर क्या है? इसके द्वारा वैंकों से ऋण प्राप्त करने में सहायता मिलती है तथा उपक्रम की भावी नीतियों का निर्धारण पूर्व वर्ष के अनुभवों के आधार पर किया जा सकता है। वैंकों द्वारा वित्तीय विवरणों का विश्लेषण करने में मुख्यतः निम्नलिखित दो विधियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं—

(1) कोष प्रवाह विवरण विश्लेषण।

(2) अनुपात विश्लेषण।

(1) कोष प्रवाह विवरण विश्लेषण (Funds Flow Statement Analysis)—यह विवरण उपक्रम की कार्यशील पूंजी मे हुए परिवर्तन दर्शाता है। यह दो तिथियों पर तैयार किये गये आर्थिक चिट्ठे में हुए परिवर्तनों को प्रगट करता है। इसके अन्तर्गत वैंक यह तथ्य ज्ञात करता है कि अल्पकालीन साधनों का प्रयोग किन-किन मदों में किया गया है तथा दीर्घकालीन साधनों का प्रयोग किन-किन मदों में। इसकी सहायता से व्यवसाय की वित्तीय स्थिति का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। व्यवसाय के अल्पकालीन स्रोतों (Sources) का प्रयोग अल्पकालीन साधनों (Uses) की पूर्ति के लिये किया जाना चाहिये तथा दीर्घकालीन स्रोतों (Sources) का प्रयोग दीर्घकालीन साधनों की पूर्ति में किया जाना चाहिये।

(2) अनुपात वि लेषण (Ratio Analysis)—इसके अन्तर्गत वैंक विभिन्न प्रकार के अनुपातों की सहायता से उपक्रम की आर्थिक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करता है। इसमें वैंक उपक्रम की निम्नलिखित स्थितियाँ ज्ञात करता है—

(i) परिचालन योग्यता अथवा निष्पादन अनुपात (Operational Efficiency or Performance Ratio),

(ii) वित्तीय सुदृढ़ता (Financial Stability),

(iii) उपार्जन क्षमता अथवा लाभदायकता का अनुपात (Earning Capacity),

(iv) पूंजी संरचना (Capital Structure),

(v) भावी विनियोक्ताओं के लिये (For Future Investors)।

वैंक अग्रांकित अनुपातों की सहायता से उपक्रम की आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करता है—

निष्पादन अनुपात
(Performance Ratio)

इसके अन्तर्गत बैंक उपक्रम की कार्यक्षमता का ज्ञान प्राप्त करता है। इसमें निम्नलिखित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(1) स्टॉक विक्री अनुपात (Stock Turn Over Ratio)—इसमें स्टॉक की बिक्री से तुलना की जाती है कि स्टॉक कितनी बार विक्रय में बदल जाता है।

$$\text{Stock Turn Over Ratio} = \frac{\text{Cost of Goods Sold}}{\text{Average Inventory at Cost}}$$

Or

$$= \frac{\text{Net Sales}}{\text{Average Stock at Seling Price}}$$

Cost of Goods Sold = Purchases + Manufacturing Expenses + Direct Expenses + Opening Stock − Closing Stock

इसमें स्टॉक रखने की अवधि की गणना भी की जाती है।

$$\text{No. of Days Stock of Finished Goods} = \frac{\text{Stock of Finished Goods}}{\text{Average Daily Sales}}$$

इसमें माह की कुल खपत (Consumption) ज्ञात की जा सकती है।

$$\text{Period of Months Consumption} = \frac{\text{Stock}}{\text{Monthly Consumption}}$$

$$\text{Monthly Consumption} = \frac{\text{Total Consumption}}{12}$$

स्टॉक का विक्री अनुपात व्यवसाय की प्रकृति एवं विक्रय शर्तों पर निर्भर करता है। यह अनुपात पूर्व वर्षों की तुलना में बढ़ना चाहिये तथा यह जितना अधिक होता है उतना ही व्यवसाय के लिये अच्छा समझा जाता है। परन्तु यह एक सीमा के बाद अधिक नहीं होना चाहिये अन्यथा माल की कम कीमत के कारण बाजार में व्यवसाय की साख पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है। अतः कम विक्रय मूल्य रखकर स्टॉक विक्री अनुपात बढ़ाने का प्रयास नहीं करना चाहिये। यह अनुपात अधिक होने पर प्रगट करता है कि व्यवसाय में विक्रय अधिक हो रहा है।

(2) कार्यशील पूंजी बिक्री अनुपात (Working Capital Turn Over Ratio)—इसमें विनियोजित कार्यशील पूंजी का विक्रय के साथ अनुपात ज्ञात किया जाता है कि पूंजी के रुपये की इकाई का कितनी बार विक्रय किया गया है।

$$\text{Working Capital Turn Over Ratio} = \frac{\text{Cost of Sales or Net Sales}}{\text{Net Working Capital}}$$

Cost of Sales = Opening Stock + Purchases − Closing Stock

Net Working Capital = Current Assets − Current Liabilities

(3) स्थायी सम्पत्ति बिक्री अनुपात (Fixed Assets Turn Over Ratio)—इसमें उपक्रम की स्थायी सम्पत्तियों की तुलना विक्रय से की जाती है। इस अनुपात में वृद्धि उपक्रम की निष्पादन क्षमता में कमी को प्रगट करती है।

$$\text{Fixed Assets Turn Over Ratio} = \frac{\text{Cost of Sales or Net Sales}}{\text{Net Fixed Assets}}$$

(4) देनदार अनुपात (Debtors Turn Over Ratio)—इसमें उधार विक्रय की तुलना देनदारों से की जाती है तथा यह ज्ञात किया जाता है कि उपक्रम के देनदारों से कितने दिनों में रुपया वसूल हो जाता है अथवा देनदार कितने दिनों तक रुपये का भुगतान नहीं करते हैं।

Debtor Turn Over Ratio

Or

$$\text{Average Collection Period} = \frac{\text{Total Debtors (Including B/R)}}{\text{Average Daily Credit Sales}}$$

इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि कुल देनदारों में से अशोध्य ऋण के लिये संचय (Reserve for Bad Debts) की राशि नहीं घटायी जाती है अन्यथा प्राप्त की गई राशि की सही अवधि ज्ञात नहीं होती है।

$$\text{Average Daily Credit Sales} = \frac{\text{Net Credit Sales}}{365}$$

व्यवसाय की बिक्री बढ़ाने के उद्देश्य से उधार विक्रय की अवधि अधिक हो सकती है। व्यवसाय में यह अवधि 2 माह तक उचित समझी जाती है परन्तु मौसमी प्रकृति के व्यवसाय में यह अवधि अधिक भी हो सकती है। देनदारों की राशि विक्रय नीति पर निर्भर करती है।

(5) लेनदार अनुपात (Creditors Turn Over Ratio)—यह अनुपात उपक्रम के व्यापारिक लेनदारों एवं उधार क्रय के बीच के सम्बन्ध को प्रकट करता है।

$$\text{Creditors Turn Over Ratio} = \frac{\text{Total Creditors}}{\text{Average Credit Purchase}}$$

यह अनुपात क्रय के भुगतान में लगने वाला समय दर्शाता है।

वित्तीय स्थिति की सुदृढ़ता सम्बन्धी अनुपात
(Ratio Relating to Financial Stability)

इसके अन्तर्गत उन अनुपातों का अध्ययन किया जाता है जो व्यवसाय की तरलता (Liquidity) एवं शोधन-क्षमता (Solvency) को प्रगट करते हैं। इसमें उपक्रम की चालू वित्तीय स्थिति, कार्यशील पूंजी का प्रयोग तथा उसकी अल्पकालीन ऋणों के भुगतान की शोधन-क्षमता का अध्ययन किया जाता है। अल्पकालीन शोधक्षन मता (Short Term Solvency) ज्ञात करने के लिये अग्रांकित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(1) चालू अनुपात (Current Ratio)—इसमें चालू सम्पत्तियों की तुलना चालू दायित्वों से की जाती है। यह अनुपात 2 : 1 का अच्छा समझा जाता है।

$$\text{Current Ratio} = \frac{\text{Current Assets}}{\text{Current Liabilities}}$$

Current Assets = Cash + Bank + Debtors + Bills Receivables + Stock + Prepaid Exps + Short Term Investment

Current Liabilities = Creditors + Bills Payable + Outstanding & Accrued Exps. + Short Term Liabilities

चालू अनुपात अधिक होने पर व्यवसाय में उच्च तरलता समझी जाती है जो यह प्रकट करता है कि व्यवसाय मे चालू सम्पत्तियाँ निष्क्रिय हैं तथा लाभ का प्रतिशत कम प्राप्त हो रहा है। इसके विपरीत चालू अनुपात कम होने पर व्यवसाय की शोधन क्षमता कमजोर समझी जाती है और व्यवसाय के चालू दायित्वों का भुगतान स्थायी सम्पत्तियों से किया जाता है। यह स्थिति सर्वथा अनुचित होती है। अतः व्यवसाय में चालू अनुपात 1 से 2 तक होना चाहिये अर्थात् चालू सम्पत्तियाँ चालू दायित्वों की तुलना मे उनके बराबर अथवा उनके दुगुने तक होनी चाहियें। टण्डन कमेटी रिपोर्ट के अनुसार चालू अनुपात 1·79 : 1 होना चाहिये।

(2) तरलता अनुपात (Liquidity Ratio)—इसमें तरल सम्पत्तियो की तुलना चालू दायित्वों से की जाती है। यह अनुपात 1 : 1 का अच्छा समझा जाता है।

$$\text{Liquidity Ratio or Quick Ratio} = \frac{\text{Liquid Assets}}{\text{Liquid Liabilities}}$$

Liquid Assets = Current Assets − Stock − Prepaid Exps.

Liquid Liabilities = Current Liabilities − Bank Overdraft

तरल दायित्वों में से बैंक अधिविकर्ष को घटा दिया जाता है, चूँकि यह स्थायी प्रकृति का समझा जाता है।

(3) स्थायी सम्पत्ति अनुपात (Fixed Assets Ratio)—इसमे स्थायी सम्पत्तियों की तुलना व्यवसाय की पूँजी एवं दीर्घकालीन दायित्वों से की जाती है।

$$\text{Fixed Assets Ratio} = \frac{\text{Total Fixed Assets}}{\text{Long Term Loans + Net Worth}}$$

Total Fixed Assets = Fixed Assets − Depreciation

Net Worth = Capital + Reserve + Profits

यह अनुपात दीर्घकालीन स्रोतों के स्थायी सम्पत्तियों मे प्रयोग को दर्शाता है। यह अनुपात 1 से कम होना चाहिये, चूँकि व्यवसायी अपनी पूँजी का एक निश्चित प्रतिशत भाग चालू सम्पत्तियों में विनियोजित करता है। यदि यह अनुपात एक से

(3) स्थायी सम्पत्ति बिक्री अनुपात (Fixed Assets Turn Over Ratio)—इसमें उपक्रम की स्थायी सम्पत्तियों की तुलना विक्रय से की जाती है। इस अनुपात में वृद्धि उपक्रम की निष्पादन क्षमता में कमी को प्रगट करती है।

$$\text{Fixed Assets Turn Over Ratio} = \frac{\text{Cost of Sales or Net Sales}}{\text{Net Fixed Assets}}$$

(4) देनदार अनुपात (Debtors Turn Over Ratio)—इसमें उधार विक्रय की तुलना देनदारों से की जाती है तथा यह ज्ञात किया जाता है कि उपक्रम के देनदारों से कितने दिनों में रुपया वसूल हो जाता है अथवा देनदार कितने दिनों तक रुपये का भुगतान नहीं करते हैं।

Debtor Turn Over Ratio

Or

$$\text{Average Collection Period} = \frac{\text{Total Debtors (Including B/R)}}{\text{Average Daily Credit Sales}}$$

इस सम्बन्ध में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि कुल देनदारों में से अशोध्य ऋण के लिये संचय (Reserve for Bad Debts) की राशि नहीं घटायी जाती है अन्यथा प्राप्त की गई राशि की सही अवधि ज्ञात नहीं होती है।

$$\text{Average Daily Credit Sales} = \frac{\text{Net Credit Sales}}{365}$$

व्यवसाय की बिक्री बढ़ाने के उद्देश्य से उधार विक्रय की अवधि अधिक हो सकती है। व्यवसाय में यह अवधि 2 माह तक उचित समझी जाती है परन्तु मौसमी प्रकृति के व्यवसाय में यह अवधि अधिक भी हो सकती है। देनदारों की राशि विक्रय नीति पर निर्भर करती है।

(5) लेनदार अनुपात (Creditors Turn Over Ratio)—यह अनुपात उपक्रम के व्यापारिक लेनदारों एवं उधार क्रय के बीच के सम्बन्ध को प्रकट करता है।

$$\text{Creditors Turn Over Ratio} = \frac{\text{Total Creditors}}{\text{Average Credit Purchase}}$$

यह अनुपात क्रय के भुगतान में लगने वाला समय दर्शाता है।

वित्तीय स्थिति की सुदृढ़ता सम्बन्धी अनुपात
(Ratio Relating to Financial Stability)

इसके अन्तर्गत उन अनुपातों का अध्ययन किया जाता है जो व्यवसाय की तरलता (Liquidity) एवं शोधन-क्षमता (Solvency) को प्रगट करते हैं। इसमें उपक्रम की चालू वित्तीय स्थिति, कार्यशील पूंजी का प्रयोग तथा उसकी अल्पकालीन ऋणों के भुगतान की शोधन-क्षमता का अध्ययन किया जाता है। अल्पकालीन शोधक्षमता (Short Term Solvency) ज्ञात करने के लिये अग्रांकित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(1) चालू अनुपात (Current Ratio)—इसमें चालू सम्पत्तियों की तुलना चालू दायित्वों से की जाती है। यह अनुपात 2 : 1 का अच्छा समझा जाता है।

$$\text{Current Ratio} = \frac{\text{Current Assets}}{\text{Current Liabilities}}$$

Current Assets = Cash + Bank + Debtors + Bills Receivables + Stock + Prepaid Exps + Short Term Investment

Current Liabilities = Creditors + Bills Payable + Outstanding & Accrued Exps. + Short Term Liabilities

चालू अनुपात अधिक होने पर व्यवसाय में उच्च तरलता समझी जाती है जो यह प्रकट करता है कि व्यवसाय में चालू सम्पत्तियाँ निष्क्रिय हैं तथा लाभ का प्रतिशत कम प्राप्त हो रहा है। इसके विपरीत चालू अनुपात कम होने पर व्यवसाय की शोधन क्षमता कमजोर समझी जाती है और व्यवसाय के चालू दायित्वों का भुगतान स्थायी सम्पत्तियों से किया जाता है। यह स्थिति सर्वथा अनुचित होती है। अतः व्यवसाय में चालू अनुपात 1 से 2 तक होना चाहिये अर्थात् चालू सम्पत्तियाँ चालू दायित्वों की तुलना में उनके बराबर अथवा उनके दुगुने तक होनी चाहियें। टण्डन कमेटी रिपोर्ट के *अनुसार चालू अनुपात 1·79 : 1 होना चाहिये।*

(2) तरलता अनुपात (Liquidity Ratio)—इसमें तरल सम्पत्तियों की तुलना चालू दायित्वों से की जाती है। यह अनुपात 1 : 1 का अच्छा समझा जाता है।

$$\text{Liquidity Ratio or Quick Ratio} = \frac{\text{Liquid Assets}}{\text{Liquid Liabilities}}$$

Liquid Assets = Current Assets − Stock − Prepaid Exps.

Liquid Liabilities = Current Liabilities − Bank Overdraft

तरल दायित्वों में से बैंक अधिविकर्ष को घटा दिया जाता है, चूँकि यह स्थायी प्रकृति का समझा जाता है।

(3) स्थायी सम्पत्ति अनुपात (Fixed Assets Ratio)—इसमें स्थायी सम्पत्तियों की तुलना व्यवसाय की पूँजी एवं दीर्घकालीन दायित्वों से की जाती है।

$$\text{Fixed Assets Ratio} = \frac{\text{Total Fixed Assets}}{\text{Long Term Loans + Net Worth}}$$

Total Fixed Assets = Fixed Assets − Depreciation

Net Worth = Capital + Reserve + Profits

यह अनुपात दीर्घकालीन स्रोतों के स्थायी सम्पत्तियों में प्रयोग को दर्शाता है। यह अनुपात 1 से कम होना चाहिये, चूँकि व्यवसायी अपनी पूँजी का एक निश्चित प्रतिशत भाग चालू सम्पत्तियों में विनियोजित करता है। यदि यह अनुपात एक से

अधिक है तब यह प्रगट करता है कि स्थायी सम्पत्तियों को प्राप्त करने में चालू सम्पत्तियों का प्रयोग किया गया है। यह स्थिति सर्वथा अनुचित होती है।

अल्पकालीन शोधन क्षमता ज्ञात करने के लिये उपरोक्त अनुपातों के अतिरिक्त स्टॉक विक्री अनुपात (Stock Turn Over Ratio) तथा देनदार अनुपात (Debtor Turn Over Ratio) भी ज्ञात किया जाता है जिसका वर्णन निष्पादन अनुपात में किया गया है। व्यवसाय की दीर्घकालीन शोधन क्षमता (Long Term Solvency) ज्ञात करने के लिये निम्नलिखित अनुपातों को ज्ञात किया जाता है—

(1) ऋण समता अनुपात (Debt Equity Ratio)—इसमें बाह्य दायित्वों की तुलना अंशधारियों के फण्ड अथवा आन्तरिक दायित्वों से की जाती है। इसकी सहायता से व्यवसाय की सम्पत्तियों पर बाह्य दायित्वों एवं आन्तरिक दायित्वों के दावों का अनुपात ज्ञात होता है कि सम्पत्ति पर बाह्य दायित्वों का कितना प्रतिशत अधिकार है और व्यवसायी की स्वयं पूंजी का कितना प्रतिशत अधिकार है। यह अनुपात 1 : 1 का अच्छा समझा जाता है, परन्तु छोटे उद्योग में यह 3 : 1 तक का भी मान्य होता है। यह व्यवसाय की प्रकृति एवं वित्तीय आवश्यकता पर निर्भर करता है।

$$\text{Debt Equity Ratio} = \frac{\text{Total Outside Liabilities}}{\text{Shareholder's Fund}}$$

सावधि ऋण की आवश्यकता का अनुमान लगाते समय ऋण समता अनुपात में बाह्य दायित्वों में केवल दीर्घकालीन ऋणों को ही सम्मिलित किया जा सकता है। अंशधारियों के फण्ड अथवा आन्तरिक समताओं (Internal Equities) में अंश पूंजी, संचय व प्रावधान एवं लाभों को सम्मिलित किया जाता है।

(2) स्वामित्व अनुपात (Proprietory Ratio)—यह अनुपात ऋण समता अनुपात को ही प्रगट करता है। इसकी सहायता से उपक्रम की सम्पत्तियों में अंशधारियों का प्रतिशत ज्ञात किया जाता है। इसमें निम्नलिखित अनुपात सम्मिलित होते हैं—

(i) स्थायी सम्पत्तियों का स्वामित्व कोषों से अनुपात (Ratio of Fixed Assets to Proprietor's Funds)—इसमें स्थायी सम्पत्तियों की तुलना स्वामित्व कोषों से की जाती है। यह अनुपात 70 प्रतिशत तक अच्छा समझा जाता है।

$$\text{Ratio of Fixed Assets to Proprietor's Funds} = \frac{\text{Total Fixed Assets after Depreciation}}{\text{Proprietor's Funds}}$$

(ii) चालू सम्पत्तियों का स्वामित्व कोषों से अनुपात (Ratio of Current Assets to Proprietor's Funds)—इसमें चालू सम्पत्तियों की तुलना स्वामित्व कोषों से की जाती है। यह अनुपात स्वामित्व कोषों के चालू सम्पत्तियों में विनियोग को दर्शाता है।

Ratio of Current Assests to

$$\text{Proprietor's Funds} = \frac{\text{Total Current Assets}}{\text{Proprietor's Funds}}$$

(iii) कुल सम्पत्तियों का स्वामित्व कोषों से अनुपात (Ratio of Total Assets to Proprietor's Funds) —इसमें कुल सम्पत्तियों की तुलना स्वामित्व कोषों से की जाती है।

Ratio of Total Assets to

$$\textit{Proprietor's Funds} = \frac{\text{Total Assets}}{\text{Proprietor's Funds}}$$

(3) ब्याज सुरक्षा अनुपात (Interest Coverage Ratio)—यह अनुपात ऋण सेवा अनुपात भी कहा जाता है। इसमें स्थिर ब्याज प्रभार की तुलना कम्पनी के शुद्ध लाभों से की जाती है।

$$\text{Interest Coverage Ratio} = \frac{\text{Net Profit before Interest and Tax}}{\text{Fixed Interest Charges}}$$

यह अनुपात 6 से 7 गुना तक अच्छा समझा जाता है। कुछ विद्वानों के अनुसार शुद्ध लाभ कर (Tax) घटाने के पश्चात् लिया जाना चाहिये। परन्तु कर का भुगतान ब्याज का भुगतान करने के पश्चात् किया जाता है। अतः शुद्ध लाभ कर घटाने से पूर्व के लिये जाने चाहियें।

लाभदायकता का अनुपात
(Profitability Ratio)

इसमें निम्नलिखित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(1) सकल लाभ का अनुपात (Gross Profit Ratio)—इसमें सकल लाभ की तुलना से विक्री की जाती है।

$$\text{Gross Profit Ratio} = \frac{\text{Gross Profit}}{\text{Net Sales}} \times 100$$

सकल लाभ से अभिप्राय कुल विक्रय एवं विक्रय किये गये माल की लागत (Cost of Goods Sold) का अन्तर होना है। कुल विक्रय में से ग्राहकों द्वारा वापिस किया गया माल घटा दिया जाता है। सकल लाभ माल की लागत, मजदूरी तथा विक्रय मूल्य पर आधारित होता है। सकल लाभ व्यवसाय के परिचालन व्यय एवं स्थायी प्रभारों की पूर्ति के लिये पर्याप्त होना चाहिये। सकल लाभ में वृद्धि विक्रय की लागत घटाकर अथवा विक्रय मूल्य बढ़ाकर सम्भव होती है। अन्तिम रहतिये (Closing Stock) का पुस्तक मूल्य अधिक दर्शाकर अथवा विक्रय में कृत्रिम वृद्धि द्वारा (अनुबन्ध सम्मिलित करके) सकल लाभ बढ़ाया जा सकता है। अतः व्यवसाय में सकल लाभ की दर मे वृद्धि अथवा कमी होने पर उसके कारणों की गहन जाँच करनी चाहिये।

(2) शुद्ध लाभ अनुपात (Net Profit Ratio)—इसमें शुद्ध लाभ की तुलना कुल विक्रय से की जाती है। इसमें शुद्ध लाभ आयकर घटाने के पश्चात् प्राप्त किया जाता है। यह अनुपात परिचालन लाभ के अनुपात से पृथक होता है, चूंकि इसमें व्यवसाय के गैर व्यापारिक व्ययों को भी लाभ में से घटाया जाता है। यह अनुपात व्यवसाय की समस्त लाभदायकता को दर्शाता है।

$$\text{Net Profit Ratio} = \frac{\text{Net Profit}}{\text{Net Sales}} \times 100$$

(3) परिचालन अनुपात (Oprating Ratio)—इसमें विक्रय की तुलना माल की लागत एवं परिचालन व्ययों से की जाती है। इसकी सहायता से परिचालन लाभ का विक्रय से अनुपात ज्ञात किया जा सकता है। परिचालन अनुपात को 100 में से घटाकर परिचालन लाभ का अनुपात ज्ञात कर सकते हैं। परिचालन व्ययों में विक्रय एवं वितरण के व्यय तथा प्रबन्धकीय एवं प्रशासकीय व्यय सम्मिलित किये जाते हैं।

$$\text{Operating Ratio} = \frac{\text{Cost of Goods Sold} + \text{Operating Exps.}}{\text{Net Sales}} \times 100$$

यह अनुपात व्यवसाय की प्रबन्धकीय नीतियों एवं माल की क्रय लागत तथा व्ययों पर आधारित होता है। व्यवसाय के व्यय बढ़ने पर यह अनुपात भी बढ़ जाता है तथा व्यवसाय के लाभ कम हो जाते हैं। साधारणतः यह अनुपात जितना कम होता है व्यवसाय के लिये उतना ही अच्छा समझा जाता है। एक उत्पादन करने वाली संस्था में यह अनुपात 70 से 85 प्रतिशत तक हो सकता है।

(4) व्यय अनुपात (Expenses Ratio)—इसमें प्रत्येक व्यय का विक्रय के साथ अनुपात ज्ञात किया जाता है। इसकी सहायता से व्ययों का विक्री बढ़ने अथवा घटने पर तुलनात्मक अध्ययन सम्भव होता है। इसमें स्थिर प्रकृति के व्ययों पर ही विक्रय का प्रभाव पड़ता है, चूंकि विक्रय बढ़ने के स्थिर व्ययों का अनुपात कम हो जाता है। इसके विपरीत, परिवर्तनशील प्रकृति के व्ययों पर विक्रय में परिवर्तन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

$$\text{Expenses Ratio} = \frac{\text{Particular Type of Expenses}}{\text{Net Sales}} \times 100$$

उपरोक्त अनपात व्यवसाय की सामान्य लाभदायकता (General Profitability) को दर्शाते हैं। व्यवसाय की पूर्ण लाभदायकता (Overall Profitability) ज्ञात करने के उद्देश्य से निम्नलिखित अनुपातों की गणना की जाती है—

(1) अंशधारियों के विनियोग पर प्रत्याय (Return on Shareholders' Investment)—अंशधारियों के विनियोग में समस्त प्रकार की पूंजी, संचय एवं प्रावधान (पूंजीगत एवं आयगत संचय) तथा लाभ सम्मिलित किये जाते हैं। इसमें

अंशधारियों का औसत विनियोग भी लिया जाता है, जिसमें वर्ष के प्रारम्भ व अन्त में विनियोग का औसत लिया जाता है। शुद्ध लाभों में से कर व ब्याज घटाया जाता है, चूंकि अंशधारियों को लाभ का वितरण कर व ब्याज घटाने के पश्चात् किया जाता है।

Return on Shareholder's

$$\text{Investment} = \frac{\text{Net Profit after Tax}}{\text{Shareholder's Fund}} \times 100$$

यह अनुपात अंशधारियों की पूंजी पर औसत प्रत्याय प्रगट करता है। इसकी सहायता से उसी प्रकृति के व्यवसाय की आय से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है तथा यह व्यवसाय की पूर्ण लाभदायकता को दर्शाता है।

(2) समता पूंजी पर प्रत्याय (Return on Equity Capital)—इसमें समता पूंजी के अंशधारियों को प्राप्त शुद्ध लाभ का अनुमान लगाया जाता है। इसमें समता अंश पर प्रति अंश आय भी ज्ञात की जाती है, जिसमें समता अंश पूंजी के धारकों को देय शुद्ध लाभ की तुलना समता अंश की संख्या से की जाती है। समता अंश पूंजी पर प्रत्याय ज्ञात करते समय कुल विनियोजित समता पूंजी में समता अंश पूंजी (Equity Share Capital), आयगत संचय (Revenue Reserve) तथा समायोजित लाभ (Appropriation of Profits) भी सम्मिलित किया जाता है।

Return on Equity Capital

$$= \frac{\text{Net Profit} - \text{Dividend on Preference Shares}}{\text{Equity Capital}} \times 100$$

Or Earning Per Equity Share

$$= \frac{\text{Net Profit after Dividend on Preference Shares}}{\text{No. of Equity Shares}}$$

इस अनुपात की सहायता से व्यवसाय के पूर्व वर्षों की लाभदायकता एवं उसी प्रकृति के अन्य व्यवसायों की लाभदायकता का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

(3) विनियोजित पूंजी पर प्रत्याय (Return on Capital Employed)—इसमें व्यवसाय की पूर्ण क्षमता का अध्ययन किया जाता है। विनियोजित पूंजी से अभिप्राय व्यवसाय की कुल सकल विनियोजित पूंजी (Gross Capital Employed) अथवा शुद्ध विनियोजित पूंजी (Net Capital Employed) से होता है। यदि वित्तीय विवरणों का विश्लेषण अंशधारियों द्वारा प्रत्याय ज्ञात करने के उद्देश्य से किया जाता है तब इसमें शुद्ध विनियोजित पूंजी ली जाती है, जिसमें अंशधारियों का विनियोग पर्याप्त समझा जाता है। इसके विपरीत, जब अर्थशास्त्रियों द्वारा उसी प्रकृति के व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है तब सकल अथवा शुद्ध विनियोजित पूंजी का महत्व होता है। सकल विनियोजित पूंजी से अभिप्राय कुल सम्पत्तियों (Total Assets) से होता है। इसके विपरीत, शुद्ध विनियोजित पूंजी की गणना कुल सम्पत्तियों में से चालू दायित्व घटाकर की जाती है। कुछ

विद्वानों द्वारा शुद्ध विनियोजित पूंजी की गणना में कुल सम्पत्तियों में से वाह्य दायित्वों (ऋण-पत्रों को छोड़कर) को घटाया जाता है। अतः विनियोजित पूंजी की गणना विश्लेषण के उद्देश्य के आधार पर की जाती है। विनियोजित पूंजी की गणना में निम्नलिखित तथ्यों का ध्यान रखा जाता है—

(i) कुल सम्पत्तियों की गणना में निष्क्रिय (Idle) तथा अमूर्त व कृत्रिम (Intangible and Fictitious) सम्पत्तियों को सम्मिलित नहीं किया जाना है।

(ii) कुल सम्पत्तियों में स्टॉक का मूल्यांकन लागत पर किया जाता है तथा देनदारों से अशोध्य ऋण के लिये प्रावधान घटाकर सम्मिलित किया जाता है।

(iii) व्यवसाय में विनियोजित पूंजी पर प्रत्याय ज्ञात करने के लिये औसत विनियोजित पूंजी को भी लिया जा सकता है।

Average Capital Employed

$$= \frac{\text{Capital Employed at Beginning} + \text{Capital Employed at End}}{2}$$

इसके अतिरिक्त पूंजी में आधे वर्ष (Half Year) के लाभ (कर व ब्याज के बाद) सम्मिलित करके औसत विनियोजित पूंजी ज्ञात की जा सकती है।

(iv) विनियोजित पूंजी पर प्रत्याय ज्ञात करते समय शुद्ध लाभ में उस पूंजी का लाभ सम्मिलित किया जाता है जिस पूंजी को विनियोजित पूंजी में सम्मिलित किया गया है। उदाहरणार्थ—ऋण-पत्रों को विनियोजित पूंजी में सम्मिलित करने पर शुद्ध लाभ में से ऋण-पत्रों पर ब्याज नहीं घटाया जाता है।

Return on Capital Employed

$$= \frac{\text{Net Profit before Interest and Tax}}{\text{Capital Employed}} \times 100$$

Capital Employed = Fixed Assets + Investment in Business + Current Assets − Current Liabilities (Creditors + Bank Overdraft)

Or **Capital Employed** = Issued Share Capital + Capital Reserve + Revenue Reserve + Profit + Debentures

विनियोजित पूंजी पर प्रत्याय प्रवन्धकीय निर्णयों पर निर्भर करता है। इसकी सहायता से अनुमान लगाया जाता है कि व्यवसाय के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त किया गया है अथवा नहीं। इसके द्वारा व्यवसाय की पूर्ण लाभदायकता का सही अनुमान लगाया जा सकता है।

पूंजी संरचना के अनुपात
(Ratio of Capital Structure)

इसमें अग्रलिखित अनुपातों की सहायता से व्यवसाय की पूंजी संरचना का अनुमान लगाया जाता है—

(1) पूंजी दन्तिकरण अनुपात (Capital Gearing Ratio)—यह अनुपात कम्पनी की समता अंश पूंजी एवं स्थायी प्रभार वाली प्रतिभूतियों के बीच का सम्बन्ध दर्शाता है। यदि व्यवसाय मे स्थायी प्रभार वाली प्रतिभूतियां समता अंश पूंजी की तुलना मे अत्यधिक है तब व्यवसाय में उच्च दन्तिकरण होता है। परन्तु दन्तिकरण अनुपात निम्न होता है। इसके विपरीत, समता अंश पूंजी का अंशदान अधिक होने पर निम्न दन्तिकरण होता है, परन्तु पूंजी दन्तिकरण अनुपात अधिक होता है।

$$\text{Capital Gearing Ratio} = \frac{\text{Equity Share Capital}}{\text{Fixed Charges Securities}}$$

Equity Share Capital = Equity Share Capital + Revenue Reserve + Profits

Fixed Charges Securities = Preference Share Capital + Debentures (Or Long Term Loans)

पूंजी दन्तिकरण अनुपात व्यवसाय के प्रबन्धकों एवं भावी विनियोक्ताओं के लिये अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। प्रबन्धक इसकी सहायता से लाभांश घोषणा की नीति, संचय बनाने की नीति आदि निर्धारित करते हैं।

(2) चालू दायित्वों का स्वामित्व कोषों से अनुपात (Ratio of Current Liabilities to Proprietor's Funds)—इसमे चालू दायित्वों की तुलना स्वामित्व कोषो से की जाती है। यह अनुपात 35 प्रतिशत का अच्छा समझा जाता है। यदि व्यवसाय में चालू दायित्व स्वामित्व कोषो की तुलना में अधिक है तब यह समझा जाता है कि व्यवसाय की पूंजी चालू दायित्वों का भुगतान करने में असमर्थ है और इसको व्यवसाय मे दीर्घकालीन ऋणदाता ऋण प्रदान करने मे संकोच करते हैं। अतः यह अन्तर अल्पकालीन स्रोतों से पूरा करना चाहिये।

$$\text{Current Liabilities to Proprietors' Fund Ratio} = \frac{\text{Current Liabilities}}{\text{Proprietors' Funds}}$$

(3) संचयों का समता पूंजी से अनुपात (Ratio to Reserves to Equity Capital)—यह अनुपात व्यवसाय के संचय एवं समता पूंजी के बीच अनुपात को प्रकट करता है। इसकी सहायता से अनुमान लगाया जाता है कि समता अंश की कीमत लाभों का संचय मे समायोजन करने पर कितनी अधिक हुई है। यदि व्यवसाय में लाभांश की घोषणा कम दर पर की जाती है तब यह अनुपात अधिक होता है, चूंकि संचय की राशि अधिक होती जाती है।

$$\text{Reserves to Equity Capital Ratio} = \frac{\text{Total Reserve}}{\text{Equity Share Capital}}$$

भावी विनियोक्ताओं के लिये अनुपात
(Ratio for Future Investors)

इसमें निम्नलिखित अनुपातों की गणना की जाती है—

(1) प्रति अंश आय (Earning Per Share)—इसमें शुद्ध लाभों की तुलना समता अंशों की संख्या से की जाती है।

$$\text{Earning Per Share} = \frac{\text{Net Profit}}{\text{Number of Equity Shares}}$$

(2) प्रति अंश पुस्तकीय मूल्य (Book Value Per Share)—इसमें अंशधारियों के कोषों की तुलना अंशों की संख्या से की जाती है।

$$\text{Book Value Per Share} = \frac{\text{Shreholder's Funds}}{\text{Number of Shares}}$$

प्रति अंश पुस्तकीय मूल्य निकालते समय समता अंशों एवं अधिमान अंशों (Preference Shares) का पृथक-पृथक मूल्य ज्ञात किया जा सकता है। अधिमान अंशों का पुस्तकीय मूल्य निकालते समय अंशधारियों के कोष में समता अंश पूंजी को सम्मिलित नहीं किया जाता है।

(3) कीमत आय अनुपात (Price Earning Ratio)—इसमें अंश की बाजार कीमत की तुलना प्रति अंश आय से की जाती है।

$$\text{Price Earning Retio} = \frac{\text{Market Price Per Share}}{\text{Earning Per Share}}$$

(4) पूंजीकरण अनुपात (Capitalisation Ratio)—इसमें प्रति अंश आय की तुलना अंश के बाजार मूल्य से ज्ञात की जाती है।

$$\text{Capitalisation Ratio} = \frac{\text{Earning Per Share}}{\text{Market Price Per Share}}$$

(5) लाभांश प्राप्ति अनुपात (Dividend Yield Ratio)—इसमें प्रति अंश लाभांश की तुलना अंश की बाजार कीमत से की जाती है।

$$\text{Dividend Yield Ratio} = \frac{\text{Dividend Per Share}}{\text{Market Price Per Share}}$$

अतः उपरोक्त अनुपातों की सहायता से व्यवसाय की वित्तीय स्थिति का सही अनुमान लगाया जा सकता है। इन अनुपातों का प्रयोग विशेष सावधानी से करना चाहिये, चूंकि वित्तीय विवरणों में दिखावटीपन (Window Dressing) की सम्भावनायें अधिक होती हैं। अनुपात विश्लेषण की निम्नलिखित सीमायें हैं—

(i) अनुपात विश्लेषण के द्वारा तुलनात्मक अध्ययन सम्भव होता है। तुलना करते समय यह तथ्य ध्यान रखना चाहिये कि दोनों व्यवसाय समान प्रकृति के हों तथा दोनों में अपनाये जाने वाले सिद्धान्तों में समानता होनी चाहिये।

(ii) अनुपात विश्लेषण में केवल उन्हीं अनुपातों को ज्ञात करना चाहिये जो आवश्यक होते हैं।

(iii) मूल्य परिवर्तन के कारण सम्पत्तियों का मूल्य परिवर्तित नहीं करना चाहिये।

(iv) वित्तीय विवरणों में प्रस्तुत आंकड़े शुद्ध न होने की स्थिति में अनुपात विश्लेषण द्वारा प्राप्त निष्कर्ष अशुद्ध होते हैं।

अतः व्यवसाय की वित्तीय स्थिति का अनुपात विश्लेषण करते समय उपरोक्त सीमाओं को ध्यान में रखना चाहिये।

(SOLVED PROBLEMS)

1. A B C Co (P) Ltd स्टील के बर्तनों का निर्माण करती है जिसकी बाजार में अच्छी ख्याति है तथा वर्तमान प्रबन्ध के अधीन विकसित है। कम्पनी का आर्थिक चिट्ठा 31 दिसम्बर, 1982 को निम्नलिखित है—

A B C Co. (Private) Ltd. manufacturers of Stainless Steel Utensils, is an old established undertaking, enjoys good reputation in the market and has prospered under present management. The Company's summarised Balance Sheet as on 31st December, 1982 appears as under—

(Rs. in Thousands)

Liabilities	Amount	Assets	Amount
Capital	10,000	Cash	2,528
Reserve	5,280	Debtors	5,620
Profit & Loss A/c	9,250	Stock	11,078
		Investments	2,500
Creditors	3,281	Free hold Property	3,520
Provision for Taxation	2,515	Plant & Machinery	5,930
Provision for Dividend	850		
Total	31,176	Total	31

	Rs.
Sales (1985)	**52,000**
Profit (1982) After Tax	**3,540**
Depreciation Directors	**980**
Remuneration	**230**

The Company has been dealing with your bank for the last about 25 years. The bank is requested to renew an unsecured overdraft limit of Rs. 20 lacs for use in case of need. No substantial capital expenditure is contemplated and the facility, if drawn upon will be used to finance trading. The account has been all along conducted satisfactorily and very often the account runs in good credit. Please give your comments on the Balance Sheet of the Company and explain how you will deal with the request of the Company.

हल—किसी भी व्यापारिक संस्थान को ऋण प्रदान करने से पूर्व बैंक संस्थान की आर्थिक स्थिति, लाभोपार्जन क्षमता, संस्थान की ख्याति एवं प्रबन्ध को ध्यान में रखता है। उपरोक्त स्थिति में, कम्पनी की ख्याति एवं प्रबन्ध कुशल है तथा कम्पनी के बैंक के साथ पूर्व वर्षों में लेन-देन अत्यन्त सन्तोषजनक रहे हैं। कम्पनी को 20 लाख की अधिविकर्ष की ऋण सुविधा प्रदान की जा सकती है। बैंक को कम्पनी के स्टॉक (Stock) की प्रतिभूति प्राप्त करने के लिये कम्पनी को सुझाव देना चाहिये, चूंकि रिजर्व बैंक के निर्देशों के अधीन बैंक एक ही ग्राहक को इतनी बड़ी राशि बिना प्रतिभूति के प्रदान नहीं कर सकता है। परन्तु यदि कम्पनी स्टॉक की प्रतिभूति के लिये तैयार नहीं होती है तब भी कम्पनी का ऋण स्वीकार किया जा सकता है, चूंकि कम्पनी का पूर्व वर्षों का लेन-देन सन्तोषजनक रहा है।

कम्पनी की आर्थिक स्थिति का अध्ययन निम्नलिखित अनुपातों (Ratios) की सहायता से किया जायेगा—

(1) तरलता अनुपात (Liquidity Ratio)—इसके अन्तर्गत कम्पनी की शोधन क्षमता ज्ञात की जाती है। इनमें निम्नलिखित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(i) चालू अनुपात (Current Ratio)—यह अनुपात चल सम्पत्ति एवं चल देयताओं के सम्बन्ध को दर्शाता है। यह 2 : 1 का अनुपात अच्छा समझा जाता है अर्थात् यदि कम्पनी की चल सम्पत्ति कम्पनी के चल दायित्वों की तुलना में दुगुनी है तब कम्पनी की शोधन क्षमता अच्छी समझी जाती है।

$$\text{Current Ratio} = \frac{\text{Current Assets}}{\text{Current Liabilities}}$$

$$= \frac{21,726}{5,796} = 3{\cdot}5 : 1$$

अतः कम्पनी का चालू अनुपात अत्यन्त सन्तोषजनक है।

(ii) तरल अनुपात (Liquid Ratio)—इसमें तरल सम्पत्तियों की तुलना चालू देयतायों से की जाती है। तरल सम्पत्तियाँ चालू सम्पत्तियों में से स्टॉक (Stock) घटाकर निकाली जाती हैं। यह अनुपात 1 : 1 का अच्छा समझा जाता है।

$$\text{Liquid Ratio} = \frac{\text{Liquid Assets}}{\text{Liquid Liabilities}}$$

$$= \frac{10{,}648}{5{,}796} = 1{\cdot}8 : 1$$

अतः कम्पनी का तरल अनुपात सन्तोषजनक है।

(iii) रोकड़ अनुपात (Cash Ratio)—इसमें रोकड़ व बैंक की तुलना तरल देयताओं से की जाती है। तरल देयतायें चालू देयताओं में से बैंक में अधिविकर्ष घटाकर ज्ञात की जाती है।

$$\text{Cash Ratio} = \frac{\text{Cash \& Bank}}{\text{Liquid Liabilities}}$$

$$= \frac{2{,}528}{3{,}281} = {\cdot}78 : 1$$

अतः कम्पनी का रोकड़ अनुपात सन्तोषजनक है।

(iv) स्थायी सम्पत्ति अनुपात (Fixed Assets Ratio)—इसमें स्थायी सम्पत्तियों की तुलना कम्पनी की पूंजी एवं दीर्घकालीन दायित्व से की जाती है।

$$\text{Fixed Assets Ratio} = \frac{\text{Fixed Assets}}{\text{Capital + Long Term Funds}}$$

$$= \frac{9{,}450}{24{,}530} = {\cdot}38 : 1$$

अतः कम्पनी का स्थायी सम्पत्ति अनुपात सन्तोषजनक है।

(v) ऋण समता अनुपात (Debit Equity Ratio)—इसमें बाह्य दायित्वों की तुलना अंशधारियों के कोषों से की जाती है।

$$\text{Debit Equity Ratio} = \frac{\text{Total Outside Liabilities}}{\text{Shareholder's Funds}}$$

$$= \frac{3{,}281}{24{,}530} = {\cdot}13 : 1$$

यह अनुपात सन्तोषजनक कहा जा सकता है।

(vi) कुल सम्पत्तियों का स्वामित्व कोष से अनुपात (Total Assets to Proprietor's Funds Ratio)—

$$= \frac{\text{Total Assets}}{\text{Proprietor's Funds}} = \frac{31{,}176}{24{,}530}$$

अतः यह अनुपात सन्तोषजनक है।

(2) लाभदायक अनुपात (Profitability Ratio)—इसकी सहायता से कम्पनी की लाभोपार्जन क्षमता का अध्ययन किया जाता है। इसमें निम्नलिखित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(i) Profit Ratio $=\frac{\text{Profit}}{\text{Sales}}\times 100$

$$=\frac{3,540}{52,000}\times 100=6\cdot8\%$$

(ii) Expenses Ratio $=\frac{\text{Total Expenses}}{\text{Total Sales}}\times 100$

यह अनुपात जितना कम होता है उतना ही अच्छा समझा जाता है।

(iii) Operating Ratio

$$=\frac{\text{Cost of Sales}+\text{Operating Expenses}}{\text{Total Sales}}\times 100$$

उपरोक्त दोनों अनुपात आंकड़ों के अभाव में ज्ञात नहीं किये जा सकते हैं।

अतः स्पष्ट होता है कि कम्पनी की आर्थिक स्थिति अत्यन्त सन्तोषप्रद है और कम्पनी की लाभार्जन क्षमता उचित है। बैंक कम्पनी को निःसन्देह 20 लाख की अधिविकर्ष की सुविधा प्रदान कर सकता है।

2. एक फर्म का आर्थिक चिट्ठा 31 मार्च, 1985 को निम्नलिखित है—

Following is the Balance Sheet of a firm as on 31st March, 1985—

(Amount '000 omitted)

Liabilities	Amount	Assets	Amount
Capital	850	Fixed Assets	600
Bank Loan (Cash Credit)	1,500	Stock	1,60(
Term Loan from Bank	100	Debtors	1,00(
		Other Current Assets	20(

Creditors	300		
Other Outside Liabilities	650		
	3,400		3,400

Total Sales during the year is Rs. 1·1 Crores and Gross profit is Rs. 20 Lacs. Total purchases is Rs. 75 Lacs. Monthly material consumed during the year is Rs. 7 Lacs. Now, firm wants to expand its business and it approach to its Bank for renewal of its limits in the following manner—

(i) Cash Credit Rs. 25,00,000

(ii) Term Loan Rs. 4,00,000

Firm submitted the following Balance Sheet (Projected) for the current year—

(Amount '000 omitted)

Liabilities	Amount	Assets	Amount
Capital	1,650	Fixed Assets	1,100
Bank Loan (Cash Credit)	2,500	Stock	3,300
Bank Loan (Term)	500	Debtors	1,500
Creditors	600	Other Current Assets	100
Other outside Liabilities	750		
	6,000		6,000

Following figure is estimated for the current year—

Sales Rs. 2 Crores, Purchases 150 Lacs, Gross Profit 40 Lacs.

How would you consider in the above case.

हल—उपरोक्त स्थिति में, बैंकर के रूप में, फर्म के आर्थिक चिट्ठे का विश्लेषण अग्रलिखित विधि से किया जा सकता है—

अतः यह अनुपात सन्तोषजनक है ।

(2) लाभदायक अनुपात (Profitability Ratio)—इसकी सहायता से कम्पनी की लाभोपार्जन क्षमता का अध्ययन किया जाता है । इसमें निम्नलिखित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(i) **Profit Ratio** $= \frac{\text{Profit}}{\text{Sales}} \times 100$

$$= \frac{3,540}{52,000} \times 100 = 6 \cdot 8\%$$

(ii) **Expenses Ratio** $= \frac{\text{Total Expenses}}{\text{Total Sales}} \times 100$

यह अनुपात जितना कम होता है उतना ही अच्छा समझा जाता है ।

(iii) **Operating Ratio**

$$= \frac{\text{Cost of Sales} + \text{Operating Expenses}}{\text{Total Sales}} \times 100$$

उपरोक्त दोनों अनुपात आंकड़ों के अभाव में ज्ञात नहीं किये जा सकते हैं ।

अतः स्पष्ट होता है कि कम्पनी की आर्थिक स्थिति अत्यन्त सन्तोषप्रद है और कम्पनी की लाभार्जन क्षमता उचित है । बैंक कम्पनी को निःसन्देह 20 लाख की अधिविकर्ष की सुविधा प्रदान कर सकता है ।

2. एक फर्म का आर्थिक चिट्ठा 31 मार्च, 1985 को निम्नलिखित है—

Following is the Balance Sheet of a firm as on 31st March, 1985—

(Amount '000 omitted)

Liabilities	Amount	Assets	Amount
Capital	850	Fixed Assets	60(
Bank Loan (Cash Credit)	1,500	Stock	1,60
Term Loan from Bank	100	Debtors	1,00
		Other Current Assets	20

Creditors	300		
Other Outside Liabilities	650		
	3,400		3,400

Total Sales during the year is Rs. 1·1 Crores and Gross profit is Rs. [illegible] Lacs. Total purchases is Rs. 75 Lacs. Monthly material consumed during the year is Rs. 7 Lacs. Now, firm wants to expand its business and it approach to its Bank for renewal of its limits in the following manner—

(i) Cash Credit Rs. 25,00,000

(ii) Term Loan Rs. 4,00,000

Firm submitted the following Balance Sheet (Projected) for the current year—

(Amount '000 omitted)

Liabilities	Amount	Assets	Amount
Capital	1,650	Fixed Assets	1,100
Bank Loan (Cash Credit)	2,500	Stock	3,300
Bank Loan (Term)	500	Debtors	1,500
Creditors	600	Other Current Assets	100
Other outside Liabilities	750		
	6,000		6,000

Following figure is estimated for the current year—

Sales Rs. 2 Crores, Purchases 150 Lacs, Gross Profit 40 Lacs.

How would you consider in the above case.

हल—उपरोक्त स्थिति में, बैंकर के रूप में, फर्म के आर्थिक चिट्ठे का विश्लेषण अग्रलिखित विधि से किया जा सकता है—

अतः यह अनुपात सन्तोषजनक है।

(2) लाभदायक अनुपात (Profitability Ratio)—इसकी सहायता से कम्पनी की लाभोपार्जन क्षमता का अध्ययन किया जाता है। इसमें निम्नलिखित अनुपात ज्ञात किये जाते हैं—

(i) **Profit Ratio** $= \frac{\text{Profit}}{\text{Sales}} \times 100$

$$= \frac{3,540}{52,000} \times 100 = 6{\cdot}8\%$$

(ii) **Expenses Ratio** $= \frac{\text{Total Expenses}}{\text{Total Sales}} \times 100$

यह अनुपात जितना कम होता है उतना ही अच्छा समझा जाता है।

(iii) **Operating Ratio**

$$= \frac{\text{Cost of Sales} + \text{Operating Expenses}}{\text{Total Sales}} \times 100$$

उपरोक्त दोनों अनुपात आंकड़ों के अभाव में ज्ञात नहीं किये जा सकते हैं।

अतः स्पष्ट होता है कि कम्पनी की आर्थिक स्थिति अत्यन्त सन्तोषप्रद है और कम्पनी की लाभार्जन क्षमता उचित है। बैंक कम्पनी को निःसन्देह 20 लाख की अधिविकर्ष की सुविधा प्रदान कर सकता है।

2. एक फर्म का आर्थिक चिट्ठा 31 मार्च, 1985 को निम्नलिखित है—

Following is the Balance Sheet of a firm as on 31st March, 1985—

(Amount '000 omitted)

Liabilities	Amount	Assets	Amount
Capital	850	Fixed Assets	600
Bank Loan (Cash Credit)	1,500	Stock	1,600
Term Loan from Bank	100	Debtors	1,000
		Other Current Assets	200

(10) Net Working Capital (5)−(9)	1,000	1,800
(11) Current Ratio $= \frac{\text{Current Assets}}{\text{Current Liabilities}}$	$\frac{2,800}{1,800}$ =1 55 : 1	$\frac{4,900}{3,100}$ =1 58 : 1
(12) Net Worth (Capital + Reserve)	850	1,650
(i) Total Outside Liabilities to Net Worth	$\frac{2,550}{850}$ =3 : 1	$\frac{4,350}{1,550}$ =2·6 : 1
(ii) Total Term Liabilities to Net Worth	$\frac{750}{850}$ =·9 : 1	$\frac{1,250}{1,650}$ =·8 : 1
(iii) Bank Borrowings to Total Outside Liabilities	$\frac{1,500}{2,550}$ =·6 : 1	$\frac{2,500}{4,350}$ =·6 : 1

उपरोक्त विवेचन से निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं—

(1) फर्म की स्थायी सम्पत्ति मे वृद्धि 5 लाख रुपये की है, जिसमे फर्म बैंक से 4 लाख रुपये का ऋण चाहती है। फर्म की कुल सम्पत्ति 11 लाख की होगी तथा बैंक का कुल ऋण 5 लाख रुपये का होगा। अतः बैंक फर्म की सम्पत्ति पर अपना बन्धक रखकर 4 लाख रुपये का ऋण प्रदान कर सकता है। यह ऋण प्लान्ट व मशीनरी के क्रय के लिये दिया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त, बैंक को फर्म से संपार्श्विक प्रतिभूति प्राप्त करनी चाहिये।

(2) फर्म की नकद साख की सुविधा में वृद्धि करने के लिये निम्नांकित पहलुओं पर ध्यान देना चाहिये—

(i) फर्म के सकल लाभ के प्रतिशत में लगभग 2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यह वृद्धि क्रय की लागत में कमी के कारण हो सकती है अथवा अन्तिम स्टॉक का अधिक मूल्यांकन करने पर हो सकती है। इस सम्बन्ध में व्यापारी से स्पष्टीकरण मांगना चाहिये।

(ii) फर्म का स्टॉक पूर्व वर्ष में 2·3 माह में समाप्त

वर्ष फर्म 3 माह का स्टॉक रखना चाहती है। बैंक द्वारा यह मान्य हो सकता है यदि व्यापारी का उद्देश्य अधिक क्रय करके माल की लागत घटाना है।

(iii) देनदारों से वसूली की अवधि घटकर 27 दिन हो जायेगी। लेनदार से वसूली पूर्व वर्ष के समान ही रहेगी। यह तथ्य भी स्वीकार्य है।

(iv) कम्पनी का चालू अनुपात सन्तोषजनक है।

(v) फर्म में कुल 43 लाख रुपये की कार्यशील पूंजी की आवश्यकता है जिसमें फर्म 25 लाख रुपये बैंक से ऋण प्राप्त करना चाहती है तथा 18 लाख रुपये फर्म का स्वयं का अंशदान रहेगा। यह अंशदान पूंजी में वृद्धि 8 लाख रुपये तथा बाह्य साधनों से ऋणों में 1 लाख रुपये है। अतः शेष 9 लाख रुपये का अंशदान फर्म द्वारा अपने साधनों से किया जाना चाहिये। इसके लिये फर्म से स्पष्टीकरण माँगना चाहिये।

उपरोक्त पहलुओं को ध्यान में रखते हुये बैंक नकद साख-सुविधा में वृद्धि करने से पूर्व ऋण की राशि का निर्धारण निम्नलिखित विधि से कर सकता है—

(1) फर्म का सम्भाव्य स्टॉक 33 लाख रुपये का है तथा फर्म के लेनदार 6 लाख रुपये के हैं। अतः फर्म का अपना स्टॉक 27 लाख रुपये है जिस पर 25 प्रतिशत मार्जिन रखना आवश्यक होता है। अतः फर्म को 20 लाख रुपये की नकद साख-सुविधा प्रदान की जा सकती है।

(2) फर्म को 20 लाख रुपये की नकद साख प्रदान करने पर फर्म 2 करोड़ की विक्री करने में समर्थ हो सकेगी। अतः बैंक के रुपये की 10 बार आवृत्ति (Circulation or Turnover) हो सकती है। यह आवृत्ति अत्यधिक सन्तोषजनक समझी जायेगी।

अतः बैंक द्वारा फर्म को नकद साख-सुविधा एवं दीर्घकालीन ऋण की सुविधा प्रदान की जा सकती है।

3. मॉडर्न इन्जीनियरिंग कं० प्रा० लि० के संचालक आपसे मशीन टूल के निर्माण के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं। उनके अनुसार संयन्त्र की कुल लागत 12 लाख रुपये अनुमानित किये गये, जो इस प्रकार हैं—

The Directors of the Modern Engineering Co. Pvt. Ltd. approach you with a request to grant them Credit facilities for manufacturing of machine tools.

They estimate that the total cost to the project would be about Rs. 12 lacs as detailed below :—

		Rs.
Land & Buildings	...	2,00,000
Plant & Machinery	...	7,00,000
Electrical Installations etc.	...	15,000

Dies & Moulds	...	30,000
Preliminary expenses etc.	...	20,000
Margin for working capital	...	2,35,000
Total	...	12,00,000

You are further informed by the Directors as under—

(i) The Company has a paid up capital of Rs. 3 lacs.

(ii) Mr. Bharat Jhaveri, Managing Director of the Company is a technically qualified and experienced mechanical engineer.

(iii) They desire that facilities be sanctioned to them against their fixed assets and also for working capital.

What facilities would you recommend ? Would it be possible for you to obtain any cover from any other organisation in case you decide to sanction credit facilities to them ?

(C.A.I.I.B. Part II, Nov., 1980)

हल--उपरोक्त स्थिति मे कम्पनी के संयन्त्र की लागत 20 लाख रुपये से कम है। अतः यह कम्पनी लघुस्तरीय उद्योगों (Small Scale Industries) में सम्मिलित की जायेगी। इस कम्पनी को ऋण प्रदान करने की स्थिति में बैंक को ऋण गारण्टी निगम (DICGC) से ऋण की प्रत्याभूति प्राप्त होगी जो 2 लाख से अधिक ऋण की स्थिति में रोकी गयी राशि (Default Amount) के 60 प्रतिशत के बराबर होती है। परन्तु निगम से प्राप्त प्रत्याभूति में एक ऋणी के लिये अधिकतम दावे की राशि 10 लाख रुपया होती है। यह सीमा एक ऋणी के लिये समस्त वित्तीय संस्थाओं पर लागू होती है अर्थात् समस्त वित्तीय संस्थायें एक ऋणी के लिये कुल मिलाकर 10 लाख रुपये का दावा निगम से कर सकती हैं।

बैंक को कम्पनी का प्रस्ताव स्वीकार करना चाहिये, चूंकि कम्पनी का एक संचालक तकनीकी योग्यता प्राप्त है तथा उसे इन्जीनियरिंग का अनुभव भी प्राप्त है। इसके अतिरिक्त कम्पनी की दत्त पूंजी 3 लाख रुपये है। बैंक प्लाण्ट एवं मशीनरी के लिये सावधि ऋण भी प्रदान कर सकता है। इस स्थिति में कम्पनी को 9·65 लाख रुपये की आवश्यकता है जिसमें से कम्पनी के पास 3 लाख रुपये उपलब्ध हैं। अतः शेष 6·5 लाख रुपये की राशि के लिये कम्पनी को सावधि ऋण प्रदान किया जा सकता है। परन्तु इससे पूर्व कम्पनी से संपार्श्विक प्रत्याभूतियों की मांग की जा सकती है तथा भूमि भवन पर बन्धक किया जाना चाहिये।

कम्पनी को कार्यशील पूंजी के लिये 5 लाख से 6 लाख रुपये का ऋण

वर्ष फर्म 3 माह का स्टॉक रखना चाहती हैं। बैंक द्वारा यह मान्य हो सकता है यदि व्यापारी का उद्देश्य अधिक क्रय करके माल की लागत घटाना है।

(iii) देनदारों से वसूली की अवधि घटकर 27 दिन हो जायेगी। लेनदार से वसूली पूर्व वर्ष के समान ही रहेगी। यह तथ्य भी स्वीकार्य है।

(iv) कम्पनी का चालू अनुपात सन्तोषजनक है।

(v) फर्म में कुल 43 लाख रुपये की कार्यशील पूँजी की आवश्यकता है जिसमें फर्म 25 लाख रुपये बैंक से ऋण प्राप्त करना चाहती है तथा 18 लाख रुपये फर्म का स्वयं का अंशदान रहेगा। यह अंशदान पूंजी में वृद्धि 8 लाख रुपये तथा वाह्य साधनों से ऋणों में 1 लाख रुपये है। अतः शेष 9 लाख रुपये का अंशदान फर्म द्वारा अपने साधनों से किया जाना चाहिये। इसके लिये फर्म से स्पष्टीकरण मांगना चाहिये।

उपरोक्त पहलुओं को ध्यान में रखते हुये बैंक नकद साख-सुविधा में वृद्धि करने से पूर्व ऋण की राशि का निर्धारण निम्नलिखित विधि से कर सकता है—

(1) फर्म का सम्भाव्य स्टॉक 33 लाख रुपये का है तथा फर्म के लेनदार 6 लाख रुपये के हैं। अतः फर्म का अपना स्टॉक 27 लाख रुपये है जिस पर 25 प्रतिशत मार्जिन रखना आवश्यक होता है। अतः फर्म को 20 लाख रुपये की नकद साख-सुविधा प्रदान की जा सकती है।

(2) फर्म को 20 लाख रुपये की नकद साख प्रदान करने पर फर्म 2 करोड़ की विक्री करने में समर्थ हो सकेगी। अतः बैंक के रुपये की 10 बार आवृत्ति (Circulation or Turnover) हो सकती है। यह आवृत्ति अत्यधिक सन्तोषजनक समझी जायेगी।

अतः बैंक द्वारा फर्म को नकद साख-सुविधा एवं दीर्घकालीन ऋण की सुविधा प्रदान की जा सकती है।

3. मॉडर्न इन्जीनियरिंग कं० प्रा० लि० के संचालक आपसे मशीन टूल के निर्माण के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं। उनके अनुसार संयन्त्र की कुल लागत 12 लाख रुपये अनुमानित किये गये, जो इस प्रकार हैं—

The Directors of the Modern Engineering Co. Pvt. Ltd. approach you with a request to grant them Credit facilities for manufacturing of machine tools.

They estimate that the total cost to the project would be about Rs. 12 lacs as detailed below :—

		Rs.
Land & Buildings	...	2,00,000
Plant & Machinery	...	7,00,000
Electrical Installations etc.	...	15,000

Current Liabilities = Sundry Creditors + Deposit from Firms + Borrowings from Banks

कम्पनी का चालू अनुपात सन्तोषजनक नहीं है।

(2) Liquid Ratio $= \dfrac{\text{Liquid Assets}}{\text{Liquid Liabilities}}$

$= \dfrac{1,25,000}{1,50,000} = \cdot 83:1$

Liquid Assets = Current Assets − Stock − Prepaid Expenses

Liquid Liabilities = Current Liabilities − Bank overdraft

कम्पनी का तरलता अनुपात सन्तोषजनक समझा जा सकता है।

(3) Fixed Assets Ratio $= \dfrac{\text{Total Fixed Assets}}{\text{Long Term Fund + Net Worth}}$

$= \dfrac{3,00,000}{4,00,000} = 75:1$

यह अनुपात सन्तोषजनक है।

(4) Debit Equity-Ratio $= \dfrac{\text{External Equities}}{\text{Internal Equities}}$

$= \dfrac{3,75,000}{2,75,000} = 1\cdot 4:1$

यह अनुपात सन्तोषजनक है।

(5) Fixed Assets to Proprietor's Funds $= \dfrac{\text{Fixed Assets}}{\text{Proprietor's Funds}}$

$= \dfrac{3,00,000}{2,75,000} = 1\cdot 1:1$

(6) Current Assets to Proprietor's Funds

$= \dfrac{\text{Current Assets}}{\text{Proprietor's Funds}}$

$= \dfrac{2,80,000}{2,75,000} = 1\cdot 03 : 1$

(7) Return on Tangible Net Worth $= \dfrac{\text{Profit}}{\text{Tangible Net Worth}}$

$= \dfrac{1,00,000}{2,40,000} \times 100 = 41\cdot 67\%$

प्रदान किया जा सकता है। यह ऋण स्टॉक की प्रतिभूति पर प्रदान करना चाहिये तथा इसमें यथासम्भव विपत्र भुनाने अथवा क्रय करने की ऋण सीमा को महत्व प्रदान करना चाहिये।

4. एक कम्पनी का आर्थिक चिट्ठा निम्नलिखित है—

Following is the Balance Sheet of a Company—

Rs.

Liabilities	Amount	Assets	Amount
Partner's Capital	2 00,000	Land & Building	2,00,000
Sundry Creditors	1,00,000	Machinery	1,00,000
Deposit from Firms	50,000	Goodwill	25,000
Borrowings from Bank	1,00,000	Trade Mark	10,000
		Stock	1,50,000
Term Loan	1,25,000	Debtors (out of which Rs. 20,000 Considered Doubtful)	70,000
Loan from Partners	75,000	Advance to Staff	10,000
		Electricity Deposit	5,000
		Prepaid Expenses	5,000
		Bank Balance	75,000
	6,50,000		6,50,000

Sales Rs. 8,00,000, Purchases Rs. 6,00,000, Net Profit Rs. 1,00,000.

You are required to calculate some important ratios which show the liquidity and profitability of the Company.

हल—कम्पनी की शोधन क्षमता का अनुमान लगाने के उद्देश्य से निम्नलिखित अनुपात ज्ञात किये जायेंगे—

(1) $\text{Current Ratio} = \dfrac{\text{Current Assets}}{\text{Current Liabilities}}$

$$= \frac{2{,}80{,}000}{2{,}50{,}000} = 1{\cdot}12 : 1$$

Current Assets = Stock + Debtors (Excluding Doubtful Debts) + Bank Balance + Prepaid Expenses

Current Liabilities = Sundry Creditors + Deposit from Firms + Borrowings from Banks

कम्पनी का चालू अनुपात सन्तोषजनक नहीं है।

(2) Liquid Ratio $= \frac{\text{Liquid Assets}}{\text{Liquid Liabilities}}$

$= \frac{1,25,000}{1,50,000} = \cdot 83:1$

Liquid Assets = Current Assets − Stock − Prepaid Expenses

Liquid Liabilities = Current Liabilities − Bank overdraft

कम्पनी का तरलता अनुपात सन्तोषजनक समझा जा सकता है।

(3) Fixed Assets Ratio $= \frac{\text{Total Fixed Assets}}{\text{Long Term Fund + Net Worth}}$

$= \frac{3,00,000}{4,00,000} = 75:1$

यह अनुपात सन्तोषजनक है।

(4) Debit Equity Ratio $= \frac{\text{External Equities}}{\text{Internal Equities}}$

$= \frac{3,75,000}{2,75,000} = 1 \; 4 \; 1$

यह अनुपात सन्तोषजनक है।

(5) Fixed Assets to Proprietor's Funds $= \frac{\text{Fixed Assets}}{\text{Proprietor's Funds}}$

$= \frac{3,00,000}{2,75,000} = 1 \; 1:1$

(6) Current Assets to Proprietor's Funds

$= \frac{\text{Current Assets}}{\text{Proprietor's Funds}}$

$= \frac{2,80,000}{2,75,000} = 1 \cdot 03 : 1$

(7) Return on Tangible Net Worth $=$ Tr

$= \frac{1,00,000}{2,40,000} \times$

Tangible Net Worth = Capital + Partner's Loan (as it is not schedule to be repaid) − Intangible Assets (Goodwill + Trade Mark)

(8) No. of Days Stock of Finished Goods

$$= \frac{\text{Finished Goods}}{\text{Average Daily Sales}}$$

$$= \frac{1,50,000}{8,00,000} \times 365 = 68{\cdot}3 \text{ Days}$$

(9) No. of Days Credit given or Debtors Turnover Ratio

$$= \frac{\text{Total Debtors}}{\text{Average Daily Credit Sales}}$$

$$= \frac{70,000}{8,00,000} \times 365 = 31{\cdot}9 \text{ Days}$$

(10) No. of Days Credit taken or Creditors Turnover Ratio

$$= \frac{\text{Total Creditors for Goods}}{\text{Average Daily Credit Purchase}}$$

$$= \frac{1,00,000}{6,00,000} \times 365 = 60{\cdot}8 \text{ Days}$$

(11) Sales to Net Worth $= \frac{\text{Sales}}{\text{Net Worth}}$

$$= \frac{8,00,000}{2,75,000} = 2{\cdot}9:1$$

(12) Stock Turnover Ratio $= \frac{\text{Total Sales}}{\text{Average Stock}}$

$$= \frac{8,00,000}{1,50,000} = 5{\cdot}33 \text{ Times}$$

5. एक फर्म का परिचालन विवरण-पत्र व आर्थिक चिट्ठा निम्नलिखित है—

Following is the Operating Statement and Balance Sheet of the Firm—

Operating Statement

Particulars	Last Year 1983–84	(Actual) 1984–85	Current Year (Estimated) 1985–86	Following Year Projection
1. Gross Sales	80,000	1,15,000	2,00,000	3,00,000
2. (Less) Excise duty	—	—	—	—
3. Net Sales	80,000	1,15,000	2,00,000	3,00,000
4. Cost of Sales				
(i) Raw Material	69,000	75,000	1,50,000	2,25,000
(ii) Other Spares	400	400	800	11,200
(iii) Power and Fuel	450	500	1,000	1,500
(iv) Direct Labour	700	800	1,000	1,400
(v) Manufacturing Expenses	10,900	11,000	20,000	30,000
(vi) Sub Total (i to v)	81,450	87,700	1,72,800	2,59,100
(Add) Opening Stock in Process	2,400	5,000	2,000	11,000
Sub Total	83,850	92,700	1,74,800	2,70,100
(Less) Closing Stock in Process	5,000	2,000	11,000	25,000
Sub Total	78,850	90,700	1,63,800	2,45,100
(Add) Opening Stock of Finished Goods	5,000	20,000	14,000	26,000
Sub Total	83,850	1,10,700	1,77,800	2,71,100
(Less) Closing Stock of Finished Goods	20,000	14,000	26,000	30,000
Sub Total (Cost of Goods Sold)	63,850	96,700	1,51,800	2,41,100
5. Gross Profit (Item 3 – 4)	16,150	18,300	48,200	58,900
6. Selling and General Expenses	8,000	10,000	32,000	38,000
7. Operating Profit (5 – 6) or Net Profit	8,150	8,300	16,200	20,900

Balance Sheet

Liabilities	1983–84	1984–85	Estimates 1985–86	Projection 1986–87
A. Current Liabilities				
1. Bank Borrowing	11,000	15,000	30,000	50,000
2. Sundry Creditors	7,800	3,000	6,000	10,000
3. Other Current Liabilities	4,000	1,600	3,000	5,000
Total Current Liabilities	22,800	19,600	39,000	65,000
B. Term Liabilities				
4. Bank Loan (Term)	—	1,530	4,800	3,700
5. Term Deposit	9,000	8,300	9,500	10,000
Total Term Liabilities	9,000	9,530	14,300	13,700
Total Outside Liabilities	31,800	29,130	53,300	78,700
C. Net Worth				
Capital	6,000	7,500	15,000	26,000
Reserve	1,000	1,200	1,200	1,200
Total Net Worth	7,000	8,700	16,200	27,200
Total Liabilities (A+B+C)	38,800	37,830	69,500	1,05,900
ASSETS				
A. Current Assets				
Cash & Bank Balance	1,500	1,700	2,000	2,500
Debtors	4,000	9,000	17,000	33,000
Stock—Semi Finished Goods	5,000	2,000	11,000	25,000
Finished Goods	20,000	14,000	26,000	30,000
Total Current Assets	30,500	26,700	56,000	90,500
B. Fixed Assets (Building & Machinery)	7,300	10,130	12,500	11,400
C. Non Current Assets				
Intangible Assets (Goodwill)	1,000	1,000	1,000	4,000
Total Assets (A+B+C)	38,800	37,830	69,500	1,05,900

Firm requests to increase Working Capital Loan from Rs. 15,000 to Rs 30,000 and a fresh Term Loan of Rs. 4,500. Evaluate to Company's finanacal position

हल Assessment of Working Capital Requirement

Particulars	1983–84	1984–85	1985–86	1986–87
A Current Assets				
Stock– Semi Finished Goods	5,000	2,000	11,000	25,000
Finished Goods	20,000	14,000	26,000	30,000
Debtors	4,000	9,000	17,000	33 000
Other Current Assets (Cash + Bank)	1,500	1,700	2,000	2,500
Total Current Assets	30,500	26,700	56,000	90,500
B. Current Liabilities				
Creditors	7,800	3,000	6,000	10,000
Other Current Liabilities	4,000	1,600	3,000	5,000
Term Loan (Payable within one year)	—	500	730	1,100
Total Current Liabilities	11,800	5,100	9,730	16,100
C. Working Capital Gap Borrowings	18,700	21,600	46,270	74,400
D. Actual Projected Bank (A+D)	11,000	15,000	30,000	50,000
E. Total Current Liabilities	22,800	20,100	39,730	66,100
F. Net Working Capital (A—E)	7,700	6 600	16,270	24,400
Maximum Permissible Bank Finance				
1. Working Capital Gap	18,700	21,600	46,270	74,400
2. Margin Required (25%)	4,675	5,400	11,568	18,600
3. Net Working Capital	7,700	6,600	16,270	24,400
4. Item 1–2	14,025	16,200	34,702	55,800
5. Item 1–3	11,000	15,000	30,000	50,000
Permissible Bank Finance (4 or 5 Which ever is less)	11,000	15,000	30,000	50,000

Balance Sheet

Liabilities	1983–84	1984–85	Estimates 1985–86	Projection 1986–87
A. Current Liabilities				
1. Bank Borrowing	11,000	15,000	30,000	50,000
2. Sundry Creditors	7,800	3,000	6,000	10,000
3. Other Current Liabilities	4,000	1,600	3,000	5,000
Total Current Liabilities	22,800	19,600	39,000	65,000
B. Term Liabilities				
4. Bank Loan (Term)	—	1,530	4,800	3,700
5. Term Deposit	9,000	8,300	9,500	10,000
Total Term Liabilities	9,000	9,530	14,300	13,700
Total Outside Liabilities	31,800	29,130	53,300	78,700
C. Net Worth				
Capital	6,000	7,500	15,000	26,000
Reserve	1,000	1,200	1,200	1,200
Total Net Worth	7,000	8,700	16,200	27,200
Total Liabilities (A+B+C)	38,800	37,830	69,500	1,05,900
ASSETS				
A. Current Assets				
Cash & Bank Balance	1,500	1,100	2,000	2,500
Debtors	4,000	9,000	17,000	33,000
Stock—Semi Finished Goods	5,000	2,000	11,000	25,000
Finished Goods	20,000	14,000	26,000	30,000
Total Current Assets	30,500	26,700	56,000	90,500
B. Fixed Assets (Building & Machinery)	7,300	10,130	12,500	11,400
C. Non Current Assets				
Intangible Assets (Goodwill)	1,000	1,000	1,000	4,000
Total Assets (A+B+C)	38,800	37,830	69,500	1,05,900

Firm requests to increase Working Capital Loan from Rs. 15,000 to Rs 30,000 and a fresh Term Loan of Rs. 4,500. Evaluate to Company's finanacal position.

हल - Assessment of Working Capital Requirement

Particulars	1983–84	1984–85	1985–86	1986–87
A Current Assets				
Stock– Semi Finished Goods	5,000	2,000	11,000	25,000
Finished Goods	20,000	14,000	26,000	30,000
Debtors	4,000	9,000	17,000	33,000
Other Current Assets (Cash + Bank)	1,500	1,700	2,000	2,500
Total Current Assets	30,500	26,700	56,000	90,500
B. Current Liabilities				
Creditors	7,800	3,000	6,000	10,000
Other Current Liabilities	4,000	1,600	3,000	5,000
Term Loan (Payable within one year)	—	500	730	1,100
Total Current Liabilities	11,800	5,100	9,730	16,100
C. Working Capital Gap Borrowings	18,700	21,600	46,270	74,400
D. Actual Projected Bank (A+D)	11,000	15,000	30,000	50,000
E. Total Current Liabilities	22,800	20,100	39,730	66,100
F. Net Working Capital (A—E)	7,700	6 600	16,270	24,400
Maximum Permissible Bank Finance				
1. Working Capital Gap	18,700	21,600	46,270	74,400
2. Margin Required (25%)	4,675	5,400	11,568	18,600
3. Net Working Capital	7,700	6,600	16,270	24,400
4. Item 1–2	14,025	16,200	34,702	55,800
5. Item 1–3	11,000	15,000	30,000	50,000
Permissible Bank Finance (4 or 5 Which ever is less)	11,000	15,000	30,000	50,000

Ratios Analysis

Particulars	1983–84	1984–85	1985–86	1986–87
1. Net Sales	80,000	1,15,000	2,00,000	3,00,000
2. % Rise or short fall in net sales	—	(+)43·75	(+)73·9	(+)50·0
3. Stock Requirement				
Semi Finished Goods				
= Average stock of Semi Finished Stock / Average Monthly Cost of Production	3,700 / 78,850/12 =·56M.	3,500 / 90,700/12 =·46 M.	6,500 / 163,800/12 =·47M.	18,000 / 2,45,100/12 =·88M.
Finished Goods				
= Average Stock / Monthly Cost of Goods Sold	12,500 / 63,850/12 =2·34 M.	17,000 / 96,700/12 =2·10M.	20,000 / 1,51800/12 =1.58 M	28,000 / 2,41,100/12 =1·39M.
4. Debtors Turn over				
= Debtors / Average Credit Sales	4,000 / 80,000 ×365 =18·25 Days	9,000 / 1,15,000 ×365 =28·56 Days	17,000 / 2,00,000 ×365 =31 Days	33,000 / 3,00,000 ×365 =40 15 Days
5. Creditors Turn Over				
= Creditors / Average Credit Purchase	7,800 / 69,000 ×365 =41·26D	3,000 / 75,000 ×365 =14·6 D.	6,000 / 1,50,000 ×365 =14 6D.	10,000 / 2,25,000 ×365 =16·2D.
6. Current Ratio				
= Current Assets / Current Liabilities	30,500 / 22,800 1·3 : 1	26,700 / 19,600 1·4 : 1	56,000 / 39,000 1·4 : 1	90,500 / 65,000 1·4 : 1
7. Tangible Net Worth = Net Worth – Intangibie Assets	6,000	7,700	15,200	23,200
8. Net Working Capital	7,700	6,600	16,270	24,400

9. Total Outside Liabilities	31,800	29,130	53,300	78,700
= Tangible Net Worth	6,000	7,700	15,200	23,200
	5·3 T	3·78 T.	3·50 T.	3·4 T.
10. Total Term Liabilities[1]	9,000	9,030	13,570	12,600
= Tangible Net Worth	6,000	7,700	15,200	23,200
	1 5 T.	1·2 T.	·89 T.	·54 T.
11. Bank Borrowing	11,00	15,000	30,000	50,000
Total Outside Liabilities	31,800	29,130	53,300	78,700
	·35T	56 T.	56 T.	·63 T.

Funds Flow Statement

Particulars	1984–85	1985–86	1986–87
SOURCES OF FUNDS			
A. Profit (Operating)	8,300	16,200	20,900
(Less) Dividend Paid/Drawings	6,600	8,700	9,900
Net Funds Generated	1,700	7,500	11,000
B. Increase in Term Loan	1,530	4,500	—
Increase in Term Deposit	—	1,500	500
Decrease in Fixed Assets	—	—	1,100
Sub Total	1,530	6,000	1,600
C. Increase in Short Term Bank Borrowings	4,000	15,000	20,000
Increase in Creditors	—	3,000	4,000
Increase in Other Current Liabilities	-	1,400	2,000
Decrease in Semi Finished Stock	3,000	—	—
Decrease in Finished Stock	6,000	—	—
Sub. Total	13,000	19,400	26,000
Total Funds Available (A+B+C)	16,230	32,900	38,600

1. Term Liabilities is shown after deducting the Term Loan Payable with in one year.

2. T. denotes times, M. denotes Months.

USES OF FUNDS			
Increase in Fixed Assets	2,830	2,370	—
Decrease in Term Loan	—	1,230	1,100
(Repayment of Term Loan)	—	—	—
Decrease in Term Deposit	1,000	—	—
Sub Total (D)	3,830	3,600	1,100
E. Increase in Semi Finished Stock	—	9,000	14,000
Increase in Finished Stock	—	12,000	4,000
Increase in Debitors	5,000	8,000	16,000
Increase in Cash & Bank Balance	200	300	500
Decrease in Sundry Creditors	4,800	—	—
Decrease in Other Current Liabilities	2,400	—	—
Increase in Goodwill	—	—	3,000
Sub Total	12,400	29,300	37,500
Total Uses of Funds (D+E)	16,230	32,900	38,600

विश्लेषण (Analysis)—उपरोक्त अनुपातों एवं फण्ड प्रवाह विवरण की सहायता से 1985–86 के लिये निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं—

(1) फर्म का वर्ष 1985–86 के लिये कार्यशक्ति पूंजी का अन्तर 46,270 रुपये है तथा बैंक द्वारा स्वीकृति योग्य ऋण 30,000 रुपये हो सकता है। ऋणी फर्म का स्वयं का अंशदान 16,270 रुपये होगा। ऋणी के पास उपलब्ध शुद्ध कार्यशील पूंजी 6,600 रुपये है। अतः ऋणी को 9,670 रुपये अतिरिक्त मार्जिन राशि व्यापार में लगानी होगी। इसके लिये ऋणी से स्पष्टीकरण प्राप्त करना चाहिये कि वह किन स्रोतों से ऋण प्राप्त करेगा अथवा अपनी पूंजी लायेगा। यह मार्जिन दीर्घकालीन स्रोतों से प्राप्त करना चाहिये।

(2) ऋणी द्वारा लगभग 15 दिन का अर्द्धनिर्मित माल का स्टॉक तथा 45 दिन का निर्मित माल का स्टॉक रखा जाता है। यह अवधि उचित समझी जा सकती है। ऋणी द्वारा नकद साख के ऋण के लिये अपना स्टॉक प्रतिभूति के रूप में प्रदान किया जा सकता है। यह स्टॉक कुल 37,000 रुपये का है जिसमें व्यापारिक लेनदार 6,000 रुपये के हैं। अतः ऋणी को 31,000 रुपये के स्टॉक की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान किया जा सकता है। बैंक इस पर 25 प्रतिशत का मार्जिन रखता है। अतः बैंक द्वारा स्टॉक की जमानत पर प्रदत्त ऋण अधिकतम 23,250 रुपये हो सकता है। यह ऋण नकद साख (Cash Credit) के रूप में प्रदान किया जा सकता है।

(3) देनदारों से वसूली की अवधि 28.5 दिन से बढ़कर 31 दिन हो गयी है। यह वृद्धि नाममात्र की है तथा देनदारों की वसूली अवधि सामान्य है।

(4) फर्म का चालू अनुपात (Current Ratio) 1·4 : 1 है तथा यह सन्तोषजनक समझा जायेगा।

(5) फर्म के मूर्त शुद्ध स्वामित्व (Tangible Net Worth) की तुलना में बाह्य ऋण 3·5 Times है। इसमे पूर्व वर्ष की तुलना में अत्यधिक वृद्धि नहीं हुई है।

(6) फर्म के कोष प्रवाह विवरण से स्पष्ट होता है कि फर्म में अल्पकालीन स्रोतों से 19,400 रुपये के कोष प्राप्त होते हैं तथा 29,300 रुपये के कोषों का अल्पकालीन प्रयोग किया जायेगा। अतः दीर्घकालीन स्रोतों का कुछ भाग अल्पकालीन स्रोतों में प्रयोग किया गया है। यह स्थिति सन्तोषजनक समझी जाती है।

(7) फर्म की स्थायी सम्पत्तियों में वृद्धि 2,370 रुपये की हुई है। यह वृद्धि सम्भवतः ह्रास (Depreciation) घटाकर दर्शायी गयी है। फर्म में कुल स्थायी सम्पत्तियाँ 12,500 रुपये की प्रगट की गयी हैं। अतः अनुमानित ह्रास लगभग 1,000 रुपये होगा। स्थायी सम्पत्तियों में वास्तविक वृद्धि 3,370 रुपये की है। इस पर ऋण प्रदान करते समय बैंक 25 प्रतिशत का मार्जिन रखता है। अतः ऋणी को सावधि ऋण 1,780 रुपये प्रदान किया जा सकता है।

संक्षेप में, बैंक द्वारा वर्ष 1985–86 में 23,250 रुपये का कार्यशक्ति पूंजी के लिये ऋण तथा 1,780 रुपये का सावधि ऋण प्रदान किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, फर्म के देनदार 17,000 रुपये के हैं जिनके विरुद्ध विपत्र भुनाने अथवा क्रय करने की ऋण सीमा प्रदान की जा सकती है। यह ऋण सीमा अधिकतम 12,750 रुपये की हो सकती है।

प्रश्न
(Questions)

1. वित्तीय विवरणों का विश्लेषण करने की विधि विस्तारपूर्वक समझाइये।

Discuss in detail, the method of analysing the Financial Statements.

2. एक बैंक द्वारा संस्थागत ऋणी के वित्तीय विवरणों का विश्लेषण करते समय किन-किन महत्वपूर्ण लेखा अनुपातों का प्रयोग किया जाता है? आप उनकी व्याख्या किस प्रकार करेंगे?

Discuss various acconting ratios of importance to a banker while analysing the Financial statements of a corporat[illegible] How will you interpret them? (*C.A.I.I.B. Part II,*

3. ऋण विश्लेषण का क्या अभिप्राय है ? आर्थिक चिट्ठा किस प्रकार वित्तीय ऋण विश्लेषण के महत्वपूर्ण यन्त्र के रूप में प्रयुक्त किया जाता है ?

What is meant by Credit Analysis ? How does the Balance Sheet serve as a good tool of Financial Credit analysis ?

4. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये—

Write short note on the followings—

(i) आर्थिक चिट्ठा (Balance Sheet)।

(C. A. I. I. B. Jan., 1985)

(ii) स्थायी सम्पत्तियाँ (Fixed Assets)।

(C. A. I. I. B., May, 1984)

(iii) चालू सम्पत्तियाँ (Current Assets)।

(C. A. I. I. B. May, 1984)

(iv) सम्भाव्य दायित्व (Contingent Liabilities)।

(C. A. I. I. B. Jan., 1985; Nov., 1983)

(v) ऋण समता अनुपात (Debt. Equity Ratio)।

(C. A. I. I. B., Nov., 1983)

□□□

वैंकिग विनियमन अधिनियम
(BANKING REGUTION.ACT)

आधुनिक अर्थव्यवस्था मे बैंकिग पद्धति का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। बैंकिग व्यवस्था का स्वरूप अत्यन्त व्यापक हो गया है। बैंक मात्र रुपये में लेन-देन करने वाली संस्था ही नही समझे जाते हैं वरन् इनका सामाजिक दायित्व अत्यन्त महत्वपूर्ण है। बैंकों पर उचित नियमन एवं नियन्त्रण के उद्देश्य से वर्ष 1949 मे बैंकिग विनियमन अधिनियम, 1949 पारित किया गया। इस अधिनियम का प्रमुख उद्देश्य बैंको पर समान नीतियाँ एव नियन्त्रण लागू करना था। इसके माध्यम से बैंकों को सरकारी नियन्त्रण में लाने के लिये विशेष योगदान मिला है। इससे पूर्व, भारतवर्ष मे बैंकों पर नियन्त्रण करने के उद्देश्य से विशेष प्रावधान लागू किये जाते थे। बैंकों का विस्तृत आकार होने के साथ-साथ इन प्रावधानों का महत्व धीरे-धीरे घटता गया और देश मे व्यापक नियन्त्रण के उद्देश्य से एक सुसंगठित अधिनियम की आवश्यकता अनुभव की गयी। बैंकिग विनियमन अधिनियम में आवश्यकतानुसार अनेक परिवर्तन किये गये हैं।

वैंकिग विनियमन अधिनियम की मुख्य विशेषतायें
(Main Characteristics of Banking Regulation Act)

यह अधिनियम 16 मार्च, 1949 से लागू किया गया है। यह समस्त व्यापारिक एवं सहकारी बैंको पर लागू होता है। परन्तु वर्ष 1969 मे 14 बड़े व्यापरिक बैंको का राष्ट्रीयकरण होने के पश्चात् यह अधिनियम पूर्ण रूप मे राष्ट्रीयकृत बैंको पर लागू नही होता है। राष्ट्रीयकृत बैंकों पर केवल अधिनियम की मुख्य धारायें लागू समझी जाती हैं। उदाहरणार्थ–धारा 5, 6, 10, 13, 14, 15, 17, 19, 20, 21, 23, से 28, तक, 29 (परन्तु इसमें उपधारा 3 सम्मिलित नही है), 31, 34, 34 A, 35, 35 A, 36 (इसमे उपधारा। (a) लागू नही होगी) 36 AD, 46, 47, 48, 50, 52, तथा 53 समस्त व्यापारिक बैंकों पर लागू होती हैं। बैंकिग विनियमन अधिनियम की निम्नलिखित मुख्य विशेषतायें हैं—

(1) बैंकों की परिभाषा (Definition of Banks)—बैंक से अभिप्राय उस संस्था से होता है जो बैंकिग प्रकृति का व्यापार करती है। (बैंकों की परिभाषा एव कार्यों के लिये कृपया देखिये, अध्याय 1)।

प्रत्येक बैंकिग कम्पनी को अपने नाम के साथ बंक, बैंकर, बैंकिग आदि शब्दों का प्रयोग अनिवार्य है तथा अन्य कोई भी कम्पनी अथवा संस्था अपने नाम के साथ अथवा अपने व्यवसाय मे इन शब्दो का प्रयोग नही कर सकती है।

(2) न्यूनतम दत्त पूंजी एवं संचय (Minimum Paid-up Capital and Reserves)— वैंकिग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 11 के अन्तर्गत देशी एवं विदेशी वैंकों के लिये न्यूनतम दत्त पूंजी एवं संचय की राशि निर्धारित की गयी है। विदेशी वैंक के लिये न्यूनतम पूंजी एवं संचय की राशि 15 लाख रुपये निर्धारित की गयी है तथा यदि विदेशी वैंक की शाखा वम्वई अथवा कलकत्ता अथवा दोनों स्थानों पर स्थिति है तब यह राशि 20 लाख रुपये निर्धारित की गयी है इन वैंकों को प्रत्येक वर्ष अपने लाभों का 20% भाग रिजर्व वैंक में जमा करना अनिवार्य होता है। केन्द्रीय सरकार रिजर्व वैंक की सलाह से विदेशी वैंक के लिये लाभ का निश्चित प्रतिशत भाग रिजर्व वैंक में जमा करने से मुक्त कर सकती है।

भारतीय वैंकों के लिये प्रदत्त पूंजी एवं संचय की न्यूनतम राशि निम्नलिखित है—

	रुपये
(i) वैंक का व्यवसाय एक से अधिक राज्यों में होने की स्थिति में	5 लाख
(ii) वैंक का व्यवसाय वम्वई अथवा कलकत्ता अथवा दोनों स्थानों पर होने की स्थिति में	10 लाख
(iii) वैंक का व्यवसाय एक ही राज्य में स्थित है तथा इसकी कोई भी शाखा वम्वई अथवा कलकत्ता में नहीं है	
(a) व्यवसाय के मुख्य स्थान के लिये	1 लाख एवं
(b) मुख्य व्यवसाय वाले जिले में प्रत्येक शाखा के लिये	10 हजार एवं
(c) अन्य स्थानों पर स्थित शाखाओं के लिये	25 हजार
(iv) यदि वैंक का एक ही स्थान पर व्यवसाय है	50 हजार
(v) वैंक का व्यवसाय एक ही राज्य में स्थित है तथा इसमें कोई एक अथवा एक से अधिक शाखा वम्बई अथवा कलकत्ता में है	5 लाख एवं
तथा वम्बई अथवा कलकत्ता के वाहर स्थित प्रत्येक शाखा के लिये	25 हजार

इसमें अधिकतम् राशि 10 लाख रुपये निर्धारित की गयी है। यह सीमा 16 सितम्वर, 1962 से पूर्व स्थापित वैंकों के लिये लागू होती है। इसके पश्चात् स्थापित वैंकों के लिये न्यूनतम सीमा 5 लाख रुपये निर्धारित की गयी है।

वैंकिग विनियमन अधिनियम की धारा 12 के अनुसार प्रत्येक वैंक की निर्गमित पूंजी अधिकृत पूंजी के 50% से कम नहीं होनी चाहिए तथा दत्त पूंजी (Paid-up Capital), निर्गमित पूंजी (Issued Capital) के 50% से कम नहीं होनी चाहिए।

(3) मतदान का अधिकार (Voting Rights)—वैंकिग कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को 1% से अधिक का मतदान देने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

(4) प्रभार निर्मित करने पर प्रतिबन्ध (Probibition on Creating Charge)—प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को किसी भी कम्पनी की पूंजी पर प्रभार निर्मित करने के लिये प्रतिबन्धित किया गया है। इसके अतिरिक्त, बैंकिंग कम्पनी को अपनी सम्पत्ति पर अथवा किसी अन्य कम्पनी की सम्पत्ति पर रिजर्व बैंक की पूर्वानुमति के बिना चल प्रभार (Floating Charge) निर्मित करने के लिये प्रतिबन्धित किया गया है।

(5) लाइसेन्स जारी करना (To Issue License) – रिजर्व बैंक कम्पनी की पुस्तकों की जाँच करके लाइसेन्स जारी करने के लिये अधिकृत किया गया है। कोई भी बैंक रिजर्व बैंक से लाइसेन्स प्राप्त किये बिना अपनी शाखा नहीं खोल सकता है।

(6) लाभांश पर सीमा (Limit on Dividend)—अधिनियम की धारा 15 के अन्तर्गत बैंकिंग कम्पनी को उस समय तक लाभांश घोषित करने के लिये वर्जित किया गया है जब तक कि बैंक के समस्त पूँजीगत व्ययों एवं हानियों को समाप्त नहीं कर दिया जाता है। पूँजीगत व्ययों में प्रारम्भिक व्यय, कमीशन, हानि आदि अमूर्त सम्पत्तियाँ सम्मिलित की जाती हैं।

(7) सुरक्षित कोष (Reserve Fund)—प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी के लिये जमाकर्त्ताओं के हितों की रक्षा के दृष्टिकोण से यह अनिवार्य किया गया है कि वह अपने लाभों का 20% भाग संचय कोषों में जमा करेगी। यह प्रावधान भारतवर्ष से बाहर निर्गमित (Incorporated) बैंकों पर लागू नहीं होता है।

(8) नकद कोष व तरल सम्पत्तियाँ (Cash Reserve or Liquid Assets)—कृपया देखिये, अध्याय 3 रिजर्व बैंक द्वारा साख नियन्त्रण।

(9) भारतवर्ष में सम्पत्तियों का रख-राव (Maintenance of Assets in India)—अधिनियम की धारा 25 के अनुसार प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को अपनी माँग एवं समय देयताओं का 75% भाग सम्पत्तियों के रूप में भारतवर्ष में रखना अनिवार्य होता है। यह प्रावधान विदेशी बैंकों के लिये आवश्यक था, चूंकि वे भारतीय स्रोतों का प्रयोग विदेशों में करते थे।

(10) विवरण प्रस्तुत करना (Submission of Returns)—प्रत्येक बैंक के लिये अपनी तरल सम्पत्तियों एवं देयताओं की प्रत्येक माह की विवरणी, सम्पत्तियों एवं देयताओं की तिमाही विवरणी, अयाचित निक्षेप विवरणी को आदि रिजर्व बैंक के पास प्रस्तुत करना अनिवार्य होता है।

(11) वार्षिक खाते एवं आर्थिक चिट्ठा (Annual Accounts and Balance Sheet)—अधिनियम की धारा 29 के अनुसार प्रत्येक बैंक को अन्तिम खाते 31 दिसम्बर को तैयार करने एवं अंकेक्षित करवाने इन खातों की 3 प्रतियाँ रिजर्व बैंक में भेजनी आवश्यक हों

(2) न्यूनतम दत्त पूंजी एवं संचय (Minimum Paid-up Capital and Reserves)—वैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 11 के अन्तर्गत देशी एवं विदेशी वैंकों के लिये न्यूनतम दत्त पूंजी एवं संचय की राशि निर्धारित की गयी है। विदेशी वैंक के लिये न्यूनतम पूंजी एवं संचय की राशि 15 लाख रुपये निर्धारित की गयी है तथा यदि विदेशी वैंक की शाखा वम्बई अथवा कलकत्ता अथवा दोनों स्थानों पर स्थित है तव यह राशि 20 लाख रुपये निर्धारित की गयी है इन वैंकों को प्रत्येक वर्ष अपने लाभों का 20% भाग रिजर्व वैंक में जमा करना अनिवार्य होता है। केन्द्रीय सरकार रिजर्व वैंक की सलाह से विदेशी वैंक के लिये लाभ का निश्चित प्रतिशत भाग रिजर्व वैंक में जमा करने से मुक्त कर सकती है।

भारतीय वैंकों के लिये प्रदत्त पूंजी एवं संचय की न्यूनतम राशि निम्नलिखित है—

	रुपये
(i) वैंक का व्यवसाय एक से अधिक राज्यों में होने की स्थिति में	5 लाख
(ii) वैंक का व्यवसाय वम्बई अथवा कलकत्ता अथवा दोनों स्थानों पर होने की स्थिति में	10 लाख
(iii) वैंक का व्यवसाय एक ही राज्य में स्थित है तथा इसकी कोई भी शाखा वम्बई अथवा कलकत्ता में नहीं है	
(a) व्यवसाय के मुख्य स्थान के लिये	1 लाख एवं
(b) मुख्य व्यवसाय वाले जिले में प्रत्येक शाखा के लिये	10 हजार एवं
(c) अन्य स्थानों पर स्थित शाखाओं के लिये	25 हजार
(iv) यदि वैंक का एक ही स्थान पर व्यवसाय है	50 हजार
(v) वैंक का व्यवसाय एक ही राज्य में स्थित है तथा इसमें कोई एक अथवा एक से अधिक शाखा वम्बई अथवा कलकत्ता में है	5 लाख एवं
तथा वम्बई अथवा कलकत्ता के वाहर स्थित प्रत्येक शाखा के लिये	25 हजार

इसमें अधिकतम् राशि 10 लाख रुपये निर्धारित की गयी है। यह सीमा 16 सितम्बर, 1962 से पूर्व स्थापित वैंकों के लिये लागू होती है। इसके प्रश्चात् स्थापित वैंकों के लिये न्यूनतम सीमा 5 लाख रुपये निर्धारित की गयी है।

वैंकिग विनियमन अधिनियम की धारा 12 के अनुसार प्रत्येक वैंक की निर्गमित पूंजी अधिकृत पूंजी के 50% से कम नहीं होनी चाहिए तथा दत्त पूंजी (Paid-up Capital), निर्गमित पूंजी (Issued Capital) के 50% से कम नहीं होनी चाहिए।

(3) मतदान का अधिकार (Voting Rights)—वैंकिंग कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को 1% से अधिक का मतदान देने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

(4) प्रभार निर्मित करने पर प्रतिबन्ध (Probibition on Creating Charge)—प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को किसी भी कम्पनी की पूँजी पर प्रभार निर्मित करने के लिये प्रतिबन्धित किया गया है। इसके अतिरिक्त, बैंकिंग कम्पनी को अपनी सम्पत्ति पर अथवा किसी अन्य कम्पनी की सम्पत्ति पर रिजर्व बैंक की पूर्वानुमति के बिना चल प्रभार (Floating Charge) निर्मित करने के लिये प्रतिबन्धित किया गया है।

(5) लाइसेन्स जारी करना (To Issue License) – रिजर्व बैंक कम्पनी की पुस्तकों की जाँच करके लाइसेन्स जारी करने के लिये अधिकृत किया गया है। कोई भी बैंक रिजर्व बैंक से लाइसेन्स प्राप्त किये बिना अपनी शाखा नहीं खोल सकता है।

(6) लाभांश पर सीमा (Limit on Dividend)—अधिनियम की धारा 15 के अन्तर्गत बैंकिंग कम्पनी को उस समय तक लाभांश घोषित करने के लिये वर्जित किया गया है जब तक कि बैंक के समस्त पूँजीगत व्ययों एवं हानियों को समाप्त नहीं कर दिया जाता है। पूँजीगत व्ययों में प्रारम्भिक व्यय, कमीशन, हानि आदि अमूर्त सम्पत्तियाँ सम्मिलित की जाती हैं।

(7) सुरक्षित कोष (Reserve Fund)—प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी के लिये जमाकर्त्ताओं के हितों की रक्षा के दृष्टिकोण से यह अनिवार्य किया गया है कि वह अपने लाभों का 20% भाग संचय कोषों में जमा करेगी। यह प्रावधान भारतवर्ष से बाहर निर्गमित (Incorporated) बैंकों पर लागू नहीं होता है।

(8) नकद कोष व तरल सम्पत्तियाँ (Cash Reserve or Liquid Assets)—कृपया देखिये, अध्याय 3 रिजर्व बैंक द्वारा साख नियन्त्रण।

(9) भारतवर्ष में सम्पत्तियों का रख-रखाव (Maintenance of Assets in India)—अधिनियम की धारा 25 के अनुसार प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को अपनी माँग एवं समय देयताओं का 75% भाग सम्पत्तियों के रूप में भारतवर्ष में रखना अनिवार्य होता है। यह प्रावधान विदेशी बैंकों के लिये आवश्यक था, चूँकि वे भारतीय स्रोतों का प्रयोग विदेशों में करते थे।

(10) विवरण प्रस्तुत करना (Submission of Returns)—प्रत्येक बैं[illegible] के लिये अपनी तरल सम्पत्तियों एवं देयताओं की प्रत्येक माह की विवरणी, [illegible] एवं देयताओं की तिमाही विवरणी, यथाचित विशेष विवरणी को [illegible] पास प्रस्तुत करना अनिवार्य होता है।

(11) वार्षिक खाते एवं आर्थिक चिट्ठा (Annual [illegible] Balance Sheet)—अधिनियम की धारा 29 के [illegible] अन्तिम खाते 31 दिसम्बर को तैयार करने एव[illegible] इन खातों की 3 प्रतियाँ रिजर्व बैंक ने भेजनी [illegible]

(2) न्यूनतम दत्त पूंजी एवं संचय (Minimum Paid-up Capital and Reserves)—वैंकिग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 11 के अन्तर्गत देशी एवं विदेशी वैंकों के लिये न्यूनतम दत्त पूंजी एवं संचय की राशि निर्धारित की गयी है। विदेशी वैंक के लिये न्यूनतम पूंजी एवं संचय की राशि 15 लाख रुपये निर्धारित की गयी है तथा यदि विदेशी वैंक की शाखा वम्वई अथवा कलकत्ता अथवा दोनों स्थानों पर स्थित है तव यह राशि 20 लाख रुपये निर्धारित की गयी है इन वैंकों को प्रत्येक वर्ष अपने लाभों का 20% भाग रिजर्व वैंक में जमा करना अनिवार्य होता है। केन्द्रीय सरकार रिजर्व वैंक की सलाह से विदेशी वैंक के लिये लाभ का निश्चित प्रतिशत भाग रिजर्व वैंक में जमा करने से मुक्त कर सकती है।

भारतीय वैंकों के लिये प्रदत्त पूंजी एवं संचय की न्यूनतम राशि निम्नलिखित है—

	रुपये
(i) वैंक का व्यवसाय एक से अधिक राज्यों में होने की स्थिति में	5 लाख
(ii) वैंक का व्यवसाय वम्वई अथवा कलकत्ता अथवा दोनों स्थानों पर होने की स्थिति में	10 लाख
(iii) वैंक का व्यवसाय एक ही राज्य में स्थित है तथा इसकी कोई भी शाखा वम्वई अथवा कलकत्ता में नहीं है	
(a) व्यवसाय के मुख्य स्थान के लिये	1 लाख एवं
(b) मुख्य व्यवसाय वाले जिले में प्रत्येक शाखा के लिये	10 हजार एवं
(c) अन्य स्थानों पर स्थित शाखाओं के लिये	25 हजार
(iv) यदि वैंक का एक ही स्थान पर व्यवसाय है	50 हजार
(v) वैंक का व्यवसाय एक ही राज्य में स्थित है तथा इसमें कोई एक अथवा एक से अधिक शाखा वम्वई अथवा कलकत्ता में है	5 लाख एवं
तथा वम्वई अथवा कलकत्ता के वाहर स्थित प्रत्येक शाखा के लिये	25 हजार

इसमें अधिकतम् राशि 10 लाख रुपये निर्धारित की गयी है। यह सीमा 16 सितम्बर, 1962 से पूर्व स्थापित वैंकों के लिये लागू होती है। इसके पश्चात् स्थापित वैंकों के लिये न्यूनतम सीमा 5 लाख रुपये निर्धारित की गयी है।

वैंकिग विनियमन अधिनियम की धारा 12 के अनुसार प्रत्येक वैंक की निर्गमित पूंजी अधिकृत पूंजी के 50% से कम नहीं होनी चाहिए तथा दत्त पूंजी (Paid-up Capital), निर्गमित पूंजी (Issued Capital) के 50% से कम नहीं होनी चाहिए।

(3) मतदान का अधिकार (Voting Rights)—वैंकिग कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को 1% से अधिक का मतदान देने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

(4) प्रभार निर्मित करने पर प्रतिबन्ध (Probibition on Creating Charge)—प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को किसी भी कम्पनी की पूँजी पर प्रभार निर्मित करने के लिये प्रतिबन्धित किया गया है। इसके अतिरिक्त, बैंकिंग कम्पनी को अपनी सम्पत्ति पर अथवा किसी अन्य कम्पनी की सम्पत्ति पर रिजर्व बैंक की पूर्वानुमति के बिना चल प्रभार (Floating Charge) निर्मित करने के लिये प्रतिबन्धित किया गया है।

(5) लाइसेन्स जारी करना (To Issue License) – रिजर्व बैंक कम्पनी की पुस्तकों की जाँच करके लाइसेन्स जारी करने के लिये अधिकृत किया गया है। कोई भी बैंक रिजर्व बैंक से लाइसेन्स प्राप्त किये बिना अपनी शाखा नहीं खोल सकता है।

(6) लाभांश पर सीमा (Limit on Dividend)— अधिनियम की धारा 15 के अन्तर्गत बैंकिंग कम्पनी को उस समय तक लाभांश घोषित करने के लिये वर्जित किया गया है जब तक कि बैंक के समस्त पूँजीगत व्ययों एवं हानियों को समाप्त नहीं कर दिया जाता है। पूँजीगत व्ययों में प्रारम्भिक व्यय, कमीशन, हानि आदि अमूर्त सम्पत्तियाँ सम्मिलित की जाती हैं।

(7) सुरक्षित कोष (Reserve Fund)—प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी के लिये जमाकर्त्ताओं के हितों की रक्षा के दृष्टिकोण से यह अनिवार्य किया गया है कि वह अपने लाभों का 20% भाग संचय कोषों में जमा करेंगी। यह प्रावधान भारतवर्ष से बाहर निर्गमित (Incorporated) बैंकों पर लागू नहीं होता है।

(8) नकद कोष व तरल सम्पत्तियाँ (Cash Reserve or Liquid Assets)—कृपया देखिये, अध्याय 3 रिजर्व बैंक द्वारा साख नियन्त्रण।

(9) भारतवर्ष में सम्पत्तियों का रख-रखाव (Maintenance of Assets in India)—अधिनियम की धारा 25 के अनुसार प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को अपनी माँग एवं समय देयताओं का 75% भाग सम्पत्तियों के रूप में भारतवर्ष में रखना अनिवार्य होता है। यह प्रावधान विदेशी बैंकों के लिये आवश्यक था, चूंकि वे भारतीय स्रोतों का प्रयोग विदेशों में करते थे।

(10) विवरण प्रस्तुत करना (Submission of Returns)—प्रत्येक बैंक के लिये अपनी तरल सम्पत्तियों एवं देयताओं की प्रत्येक माह की विवरणी, सम्पत्तियों एवं देयताओं की तिमाही विवरणी, अयाचित निक्षेप विवरणी की आदि रिजर्व बैंक के पास प्रस्तुत करना अनिवार्य होता है।

(11) वार्षिक खाते एवं आर्थिक चिट्ठा (Annual Account Balance Sheet)—अधिनियम की धारा 29 के अनुसार प्रत्येक अन्तिम खाते 31 दिसम्बर को तैयार करने एवं अंकेक्षित करवाने इन खातों की 3 प्रतियाँ रिजर्व बैंक में भेजनी आवश्यक होती

है। ये प्रतिवन्ध रिजर्व वैंक के संचालक अथवा विदेशों में समामेलित वैंकिग कम्पनियों के संचालकों पर लागू नहीं होते हैं।

प्रत्येक वैंकिग कम्पनी के लिये अपने संचालक मण्डल हेतु एक चैयरमैन की नियुक्ति अनिवार्य है जो संचालक मण्डल के नियन्त्रण एवं निर्देशन के अधीन अपने अधिकारों का प्रयोग करता है। वह **5 वर्ष** से अधिक की अवधि के लिये नियुक्त नहीं किया जा सकता है। निम्नलिखित व्यक्ति चैयरमैन के रूप में नियुक्त नहीं किये जा सकते हैं यदि वे—

(i) किसी अन्य कम्पनी में संचालक हैं,

(ii) किसी ऐसी फर्म में साझेदार हैं जो व्यापार, वाणिज्य अथवा उद्योग का कार्य करती है,

(iii) किसी अन्य कम्पनी अथवा फर्म में महत्वपूर्ण हित रखते हैं,

(iv) किसी अन्य व्यवसाय अथवा पेशे में लगे हुये हैं,

(v) किसी औद्योगिक संस्थान में संचालक, प्रवन्धक अथवा साझेदार हैं।

चैयरमैन के रूप में नियुक्त व्यक्ति को वैंकिग क्षेत्र में विशेष ज्ञान प्राप्त होना चाहिए। रिजर्व वैंक ऐसे व्यक्ति से संतुष्ट होना चाहिए। यदि रिजर्व वैंक चैयरमैन की नियुक्ति से सन्तुष्ट नहीं है तव वह वैंक को उचित व्यक्ति नियुक्त करने का निर्देश दे सकता है। यदि वैंक **2** माह की अवधि में ऐसा करने से असमर्थ रहता है तव रिजर्व वैंक चैयरमैन की नियुक्ति स्वयं कर सकता है।

संक्षेप में रिजर्व वैंक का प्रत्येक वैंकिग कम्पनी के संचालक मण्डल पर पूर्ण नियन्त्रण होता है।

अतः भारतीय वैंकिग विनियमन अधिनियम, **1949** के अन्तर्गत वैंकों की प्रणाली एवं पद्धति पर विभिन्न प्रावधान किये गये हैं। प्रत्येक वैंकिग कम्पनी लिये इन प्रावधानों का पालन करना अनिवार्य होता है। इस अधिनियम में अर्थव्यवस्था की आवश्यकतानुसार समय-समय में विभिन्न संशोधन किये जाते हैं। उदाहरणार्थ—वैंकों में नामांकन की सुविधा आदि।

संक्षेप में, वैंकिग अधिनियम देश में वैंकों पर नियन्त्रण करने के लिये महत्व-पूर्ण अधिनियम है।

प्रश्न
(Questions)

1. वैंकिग विनिमयन अधिनियम 1949 के प्रावधानों का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिये।

Critically analyse the Provisions of Banking Regulation Act, 1949.

(*Ragisthan B. Com.*)

2. तरल सम्पत्तियों को वनाये रखने के सम्वन्ध में भारतीय वैंकिग विनियमन अधिनियम, 1949 में वर्णित प्रावधानों को समझाइये।

Explain the provisions of the Banking Regulation Act, 1949 *relating of the maintenance of a Percentage of Liquid Assets.* .

3. निम्नलिखित के सम्बन्ध मे बैंकिंग विनियमन अधिनियम के मुख्य प्रावधानों को समझाइये—

Explain the provisions of Banking Regulation Act, regarding to—

(i) Liquidity, (ii) Reserve, (iii) Capital, (iv) Loan and Advances, (v) Management.

4. रिजर्व बैंक को बैंकिंग विनियमन अधिनियम में क्या अधिकार प्राप्त हैं ?

What are the powers granted to Reserve Bank under the Banking Regulation Act

□□□